फल-तरकारी परिरक्षण प्रौद्योगिकी

[भारतीय कृषि अनुसन्धान परिषद् द्वारा
डॉ० राजेन्द्र प्रसाद पुरस्कार–1982
(प्रथम पुरस्कार) से अलंकृत]

लेखक
एस० सदाशिवन नायर
डॉ० हरीशचन्द्र शर्मा
उद्यान विज्ञान विभाग,
श्री कर्ण नरेन्द्र कृषि महाविद्यालय
(सुखाड़िया विश्वविद्यालय)
जोबनेर (जयपुर)



राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी
जयपुर

मानव संसाधन विकास मन्त्रालय, भारत सरकार की विश्वविद्यालय स्तरीय ग्रन्थ-निर्माण योजना के अन्तर्गत, राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी द्वारा प्रकाशित ।

प्रथम संस्करण : 1981
द्वितीय संशोधित संस्करण : 1986
Phal-Tarkari Parirakshana
Proudyogiki

मूल्य : 43.00

प्रकाशक :
राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी,
ए–26/2, विद्यालय मार्ग, तिलक नगर,
जयपुर–302 004

मुद्रक :
भूलेलाल प्रिन्टर्स,
जयपुर

भारत सरकार द्वारा रियायती मूल्य पर उपलब्ध कराये गये कागज पर मुद्रित ।

प्राक्कथन

राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी अपनी स्थापना के 16 वर्ष पूरे करके 15 जुलाई, 1985 को 17वें वर्ष में प्रवेश कर चुकी है। इस अवधि में विश्व साहित्य के विभिन्न विषयों के उत्कृष्ट ग्रन्थों के हिन्दी अनुवाद तथा विश्वविद्यालय के शैक्षणिक स्तर के मौलिक ग्रन्थों को हिन्दी में प्रकाशित कर अकादमी ने हिन्दी-जगत् के शिक्षकों, छात्रों एवं अन्य पाठकों की सेवा करने का महत्त्वपूर्ण कार्य किया है और इस प्रकार विश्वविद्यालय-स्तर पर हिन्दी में शिक्षा के मार्ग को सुगम बनाया है।

अकादमी की नीति हिन्दी में ऐसे ग्रन्थों का प्रकाशन करने की रही है जो विश्वविद्यालय के स्नातक और स्नातकोत्तर पाठ्यक्रमों के अनुकूल हों। विश्वविद्यालय-स्तर के ऐसे उत्कृष्ट मानक ग्रन्थ जो उपयोगी होते हुए भी पुस्तक प्रकाशन की व्यावसायिकता की दौड़ में अपना समुचित स्थान नहीं पा सकते हों और ऐसे ग्रन्थ भी जो अंग्रेजी की प्रतियोगिता के सामने टिक नहीं पाते हों, अकादमी प्रकाशित करती है। इस प्रकार अकादमी ज्ञान-विज्ञान के हर विषय में उन दुर्लभ मानक ग्रन्थों को प्रकाशित करती रही है और करेगी जिनको पाकर हिन्दी के पाठक लाभान्वित ही नहीं गौरवान्वित भी हो सकें। हमें यह कहते हुए हर्ष होता है कि अकादमी ने 325 से भी अधिक ऐसे दुर्लभ और महत्त्वपूर्ण ग्रन्थों का प्रकाशन किया है जिनमें से एकाधिक केन्द्र, राज्यों के बोर्डों एवं अन्य संस्थाओं द्वारा पुरस्कृत किये गये हैं तथा अनेक विभिन्न विश्वविद्यालयों द्वारा अनुशंसित।

राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी को अपने स्थापना-काल से ही भारत सरकार के शिक्षा मंत्रालय से प्रेरणा और सहयोग प्राप्त होता रहा है तथा राजस्थान सरकार ने इसके पल्लवन में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई है, अतः अकादमी अपने लक्ष्यों की प्राप्ति में उक्त सरकारों की भूमिका के प्रति कृतज्ञता व्यक्त करती है।

'फल तथा तरकारी-परिरक्षण प्रौद्योगिकी' नामक प्रस्तुत ग्रन्थ विश्वविद्यालय-स्तर का हिन्दी में संभवतः प्रथम प्रयास है। इसमें परिरक्षण के सैद्धान्तिक विवेचन के अतिरिक्त

अनेक परिरक्षण-विधियों एवं तद्विषयक यंत्रों का वर्णन सुग्राह्य एवं सरल भाषा में किया गया है, जो छात्रों के लिए ही नहीं, अपितु सामान्य-जन के लिए भी लाभदायक सिद्ध होगा। आशा है कि हिन्दी भाषा में इस विषय के पाठक इसका स्वागत करेंगे।

अकादमी इसके लेखकद्वय श्री सदाशिवन नायर तथा डॉ० हरीशचन्द्र शर्मा के प्रति आभारी है, जिन्होंने कठिन श्रम एवं निष्ठा से इसे तैयार किया है।

इस पुस्तक का द्वितीय संशोधित संस्करण पाठकों के समक्ष प्रस्तुत करते हुए हार्दिक प्रसन्नता है।

हीरालाल देवपुरा
अध्यक्ष, राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी एवं
शिक्षा मंत्री, राजस्थान सरकार, जयपुर

डॉ० राघव प्रकाश
निदेशक
राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी,
जयपुर

प्रस्तावना

विभिन्न प्रकार की जलवायु एवं भौगोलिक स्थितियों से सम्पन्न भारत मे नाना प्रकार के फल तथा तरकारियाँ पैदा की जाती है, जो शीत, ऊष्ण एवं समशीतोष्ण तीनो ही प्रकार की होती है। दुर्भाग्यवश इस पोषक सामग्री का एक बड़ा समुचित संचयन, विपणन एव संसाधन की जानकारी के अभाव मे खराब हो जाता है। फसलोपरान्त पैकिंग, परिवहन, संचयन, विपणन एवं परिरक्षण प्रौद्योगिकी के वैज्ञानिक विकास से उक्त क्षति को कम किया जाकर, बागवानी उद्योग के विकास द्वारा तद्जनित आय एव पोषण को उन्नत किया जा सकता है।

अनादिकाल से हमारे देश मे रेत और खड्डों मे संचयन, लवणयुक्त अथवा लवण-रहित, धूप मे सुखाना, अचार, परिरक्षण (मुरब्बा) किण्वितोत्पादन (आसव, अरिष्ट, सिरका) इत्यादि उद्यान-उत्पादन के अधिशेषो को अभावक्रम मे उपलब्ध कराने हेतु उपर्युक्त विभिन्न प्रकार की परिरक्षण तकनीक का प्रचलन रहा है। कभी तो परिणाम अभिकाम्य और कभी पूर्णतः असफल एवं निराशाजनक होते थे। रसायन-विज्ञान, जीव-विज्ञान एव अभियांत्रिकी के क्षेत्र मे हुई अभिनव प्रगति, फल-परिरक्षण की प्रक्रिया को पूरी तरह समझने मे सहायक सिद्ध हुई है। इस ज्ञान के प्रयोग द्वारा हमे ऐसी तकनीक का विकास करना है जो हमारी सामाजिक एवं आर्थिक परिस्थितियो के परिप्रेक्ष्य मे हो तथा हम जिसके द्वारा सर्वसुलभ और ऊर्जा से अधिकाधिक लाभ उठा सकें।

हमारा फल तथा तरकारी-संसाधन उद्योग अभी भी शैशव अवस्था मे है और बड़ी मुश्किल से सम्पूर्ण फल-तरकारी उत्पादन का केवल 0 5 प्रतिशत ही उपयोग कर पा रहे हैं। इसके विपरीत बागवानी क्षेत्र मे, विकसित देशो में, 40 प्रतिशत तक का उपयोग कर लिया जाता है। इस प्रकार कृषि-आधारित इस उद्योग के विकास की पर्याप्त सम्भावनाएँ हैं। इस दिशा मे निश्चित सफलता प्राप्त करने हेतु एक समुचित संसाधन तकनीक का विकास आवश्यक है जो कतिपय सम्पन्न व्यक्तियो की अपेक्षा साधारण जनसमुदाय के बहुत बडे भाग की आवश्यकताओ की परिपूर्ति कर सकता है।

फल तथा तरकारी संसाधन पर भारतीय एवं विदेशी लेखको की अनेक अच्छी पुस्तकें अंग्रेजी भाषा में उपलब्ध हैं। उल्लेखनीय है कि भारतीय भाषा मे सर्वप्रथम मलयालम में फल तथा तरकारी परिरक्षण पर श्री सदाशिवन नायर द्वारा लिखित विश्वविद्यालय

स्तर की पाठ्यपुस्तक का प्रकाशन सन् 1979 में हुआ, साथ ही भारतीय लेखको द्वारा विश्वविद्यालय-स्तर की द्वितीय पुस्तक का हिन्दी मे प्रकाशन सम्भवतः सर्वप्रथम प्रयास है। लेखकों ने इसमें मौलिक और प्रायोगिक सभी पहलुओ का समावेश किया है। उक्त पुस्तक इस क्षेत्र के बुनियादी ज्ञान का प्रसार हिन्दी-भाषी विश्वविद्यालयों के विद्यार्थियो मे ही नहीं अपितु प्रसार-कार्यकर्त्ताओं तथा संसाधन कारखानों द्वारा उत्पादन के गुणात्मक नियन्त्रण में भी सहायक सिद्ध होगी। मैं आशा करता हूँ कि श्री सदाशिवन एवं डॉ० हरीश का यह संयुक्त प्रयास अन्य भारतीय भाषाओं मे भी इस प्रकार के प्रकाशन को प्रोत्साहित एवं प्रेरित करेगा। अतः श्री सदाशिवन एवं डॉ० हरीश हमारे अभिनन्दन एवं धन्यवाद के पात्र हैं।

एम० एस० स्वामीनाथन
भूतपूर्व सचिव, भारत सरकार
कृषि तथा सिंचाई मन्त्रालय
(कृषि विभाग तथा ग्रामीण विकास विभाग)
कृषि भवन, नई दिल्ली—110001.

दो शब्द

संशोधित द्वितीय संस्करण

'फल तथा तरकारी परिरक्षण प्रौद्योगिकी' नामक ग्रन्थ की प्रबुद्ध पाठक द्वारा की गई सराहना हमें प्रेरणाप्रद रही। फलस्वरूप भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद् ने हमें डॉ० राजेन्द्रप्रसाद पुरस्कार (प्रथम) प्रदान कर अनुगृहीत किया। पुस्तक को प्रस्तुत करने का श्रेय राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी को जाता है जिनके भी हृदय से आभारी हैं।

इस पुस्तक की समीक्षा "इण्डियन फूड पैकर" एवं जर्नल ऑफ फूड साइन्स एण्ड टकनॉलोजी" ने की इसके लिए हम उनके व उनके समीक्षक डा० डी. एस. खुरेडिया (आई. ए. आर आई नई दिल्ली) एवं डॉ० अनुराधा (सी. एफ टी. आर. आई. मैसूर) के भी आभारी हैं जिन्होने रचनात्मक आलोचना कर हमें प्रोत्साहित किया।

हम श्री रामप्रसाद, फूड एण्ड न्यूट्रीशन बोर्ड, चण्डीगढ़ के भी आभारी है, जिन्होने निजी तौर पर सुझाव भेज कर पुस्तक के संशोधन में हमें मदद की।

हम जगदीश प्रसाद लखेरा, बिहारीलाल छीपा एवं एस वेणुगोपाल (स्नातकोत्तर विद्यार्थी) के भी आभारी हैं, जिन्होंने संशोधन कार्य में भी सहयोग दिया।

हमें हर्ष है कि बंशीधर (नगरपालिका, जोबनेर) की सेवाएँ संशोधन कार्य में भी पुनः हमें प्राप्त हुई, हम उनके भी हृदय से आभारी है।

जितना सम्भव हुआ, त्रुटियाँ दूर करने का प्रयास किया गया है। हम पुनः पाठकों से आग्रह करेंगे कि जो भी त्रुटियाँ लगें तो तथा यथा-समय सुझावों सहित भेजने का कष्ट करें ताकि पुस्तक को भविष्य में और उपयोगी बनाया जा सके।

—

एस० सदाशिवन् नायर
डॉ० हरीशचन्द्र शर्मा

भूमिका

(प्रथम संस्करण)

'फल तथा तरकारी परिरक्षण प्रौद्योगिकी' नामक ग्रन्थ विश्वविद्यालय स्तर का भारतीय भाषाओं में सम्भवतः सर्वप्रथम प्रयास है। इसमें भारत सरकार के शिक्षा मंत्रालय द्वारा प्रकाशित पारिभाषिक शब्द-संग्रह से तकनीकी शब्दों का चयन किया गया है। जहाँ आवश्यकता महसूस की गई, वहाँ हमने नये शब्दों का प्रयोग भी किया है जैसे—कैनीकरण, भवनताप, इत्यादि, डिब्बाबंदी, कमरे का तापमान आदि शब्दों से अधिक अर्थयुक्त तथा तकनीकी हैं। फिर भी इसमें त्रुटियाँ रह जाना स्वाभाविक है, क्योंकि यह हमारा हिन्दी भाषा में प्रथम प्रयास है। प्रबुद्ध पाठकों से हम आग्रह करते हैं कि त्रुटियों को यथासमय सुझावों सहित हमारे पास पहुँचाने का कष्ट करें ताकि भविष्य में पुस्तक को अधिकाधिक उपयोगी बनाने में मदद मिल सके।

हम उन सभी पूजनीय महानुभावों और संस्थाओं के हृदय से आभारी हैं जिनके आशीर्वाद तथा ज्ञान-स्रोत इस ग्रन्थ को तैयार करने में सहायक रहे हैं, जिनमें हमारे पूज्य माता-पिता एवं गुरुजन विशेषतः उल्लेखनीय हैं। हम डॉ० एम० एस० स्वामीनाथन, सदस्य, योजना आयोग (भूतपूर्व कृषि सचिव, भारत सरकार) के हृदय से आभारी हैं, जिन्होंने हमारी इस पुस्तक के लिए प्रस्तावना प्रदान कर हमें अनुगृहीत किया।

हम माननीय डॉ० आर० एन० सिंह, उपकुलपति, उदयपुर विश्वविद्यालय तथा डॉ० एम० एन० सक्सेना, सह-अधिष्ठाता, जोबनेर, परिसर के आभारी हैं, जिन्होंने पुस्तक लेखन में समुचित सुविधा तथा समय-समय पर प्रोत्साहन देकर हमें ग्रन्थ-रचना की प्रेरणा दी। कृषि महाविद्यालय, जोबनेर, के समस्त पदाधिकारियों के भी हम आभारी हैं, जिन्होंने प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्ष, इसे ग्रन्थाकार देने में हमें यथासम्भव सहयोग दिया, जिनमें सर्वश्री त्रिलोचन पंत, आर० एस० ढाका, श्री रामसिंह यादव, एस० जी० नानीवाडेकर, सत्यनारायण शर्मा, हनुमानप्रसाद, बंशीधर जाजपुरा एवं शिवकुमार शर्मा विशेषतः उल्लेखनीय हैं।

हम उन सभी संस्थाओं के आभारी हैं जिन्होंने इस ग्रन्थ के लिए पर्याप्त चित्र तथा साहित्य प्रदान कर हमें प्रोत्साहित किया है। इनमें निदेशक, केन्द्रीय खाद्य प्रौद्योगिक अनुसंधान संस्थान, मैसूर, सी० एस० आई० आर० ओ० (आस्ट्रेलिया), कृषि-विभाग, संयुक्त राज्य अमेरिका, निदरलैंण्ड के कृषि विभाग (होलेण्ड), रयोन मैटल वर्क्स, नारंग कारपोरेशन, भारतीय मैटलबोक्स, बी० वेरी एण्ड कम्पनी इत्यादि उल्लेखनीय हैं। हम राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी के आभारी हैं, जिसने इस ग्रन्थ-रचना का अवसर प्रदान कर हमें अनुगृहीत किया।

हम श्री वंशीधर, नगरपालिका, जोबनेर के सर्वाधिक आभारी हैं जो पाण्डुलिपि के लेखन कार्य को सम्पन्न कराने में आरम्भ से अन्त तक हमारे साथ जुटे रहे। हम श्री सीताराम पारीक एम० ए० (हिन्दी) तथा श्री रूपनारायण काबरा एम० ए०, बी० एड० (अंग्रेजी), राजकीय उच्च माध्यमिक विद्यालय जोबनेर के भी बहुत आभारी हैं जिन्होने पाण्डुलिपि को सुधारने में हमें सहयोग दिया।

डॉ० आर० के० सिंह (आगरा), भूतपूर्व-कुलपति, हिमाचल प्रदेश विश्वविद्यालय, डॉ० आर० एम० सिंह (निदेशक), डॉ० आर० एस० रावत, अधिष्ठाता एवं डा० मानसिंह मनोहर, प्रोफेसर, उद्यान विज्ञान विभाग (उदयपुर विश्वविद्यालय) राजस्थान कृषि महाविद्यालय, उदयपुर के भी आभारी हैं जिनका आशीर्वाद एव प्रोत्साहन इस ग्रन्थ-रचना मे हमे समय-समय पर मिलता रहा है।

एस० सदाशिवन नायर
डॉ० हरीशचन्द्र शर्मा

तिरुपति श्री बालाजी के चरणों में
अर्पित

विषय-सूची

भाग 1

परिरक्षण सिद्धान्त

भाग–2

परिरक्षण प्रणालियां

अल्प ताप परिरक्षण

भाग–3

ऊष्मा-प्रयोग परिरक्षण

(ऊष्मा-संसाधन)

भाग-4

□□□

भाग–1

परिरक्षण सिद्धान्त

अध्याय 1

परिरक्षण--एक परिचय

उत्पत्ति

परिरक्षण का इतिहास, भूखे मानव द्वारा उसके खाने के लिए की गई खोज की कहानी है। भूख ने उसे कई सबक सिखाये, इनमें से एक है खाद्य परिरक्षण विज्ञान—अकाल में भूख से बचने का एक उपाय। फल तथा तरकारी परिरक्षण इस विज्ञान का एक मुख्य अंग है।

हजारों साल पहले मनुष्य पशु तुल्य था। वह आज की तरह खाद्य पदार्थों का उत्पादन नहीं करता था, अपने लिए वह यह सामग्री जंगलों में भटकते हुए एकत्र करता था। धीरे-धीरे मनुष्यों की संख्या बढ़ती गई, जीवन-यापन करना एक समस्या बन गई। खाद्यान्न की तरह उसे कई समस्याओं का सामना करना पड़ा। आखिर वह एक जंगल को छोड़, जंगल-जंगल भटकने लगा।

किसी जंगल में उसे सूखे फलों का आहार मात्र ही उपलब्ध हुआ। सुकाल में फलों को सुखाने की तकनीक का उसे आभास हुआ और इसका उसे एक सबक मिला।

दूसरा सबक उसे तब मिला जब वह शीत प्रदेशीय जंगलों में पहुँचा और उसने पिघलते हुए बर्फ के बीच में पड़े फलों तथा मरे हुए जानवरों को बिना सड़े-गले पाया। उसने अनुभव किया कि हिमपात से पूर्व गिरे फल और मरे हुए जानवर हिमपात में बर्फ की तहों में दबे रहे, इनमें किसी तरह की विकार-क्रिया नहीं हुई; तब उसे पता लगा कि बर्फ की गुफाओं में, जहाँ बर्फ कभी नहीं पिघलती, फल तथा मांस को सुरक्षित रखा जा सकता है।

आहार के लिए उसका देश-विदेश भ्रमण होता ही रहा। एक दिन जंगल की आग में झुलसे हुए कन्दमूल फल उसे प्राप्त हुए, साथ ही आग और धुएँ से सूखा झुलसा मांस भी। यह उन्हीं जानवरों का था जिनका वह शिकार कर अपना निर्वाह करता था। उसने इन चीजों को खाकर अनुभव किया कि झुलसे मांस व फलों का स्वाद कच्चे फलों तथा मांस से भिन्न था। उसे उस दिन आग का एक दूसरा उपयोग मालूम हुआ। खाद्य पदार्थों को इसी प्रकार आग में भून कर तथा धुआँ लगा कर रखना भी उसने सीखा।

समस्याओं का अन्त यहीं नहीं हुआ। घूमते-फिरते वह थक गया और जहाँ वह 10,000 एकड़ में घूम कर खाद्य पदार्थ एकत्रित करता होगा, वहाँ यह क्षेत्र 1000 एकड़ ही रह गया। इस काल में ही उसने तय किया कि खाद्य सामग्री का उत्पादन करना ही होगा। इसके लिए उसने कुछ भूमि को घेर लिया। उसने यह तय किया कि उसके द्वारा घेरे गये क्षेत्र में किसी अन्य व्यक्ति का अधिकार नहीं होगा। इसी प्रकार उसने सीमित भूमि से जीवन निर्वाह करना सीखा। खाने तथा कृषि उत्पादन के लिए जंगल में से जानवरों को लाया गया। यह जीवन के लिए संघर्ष का काल था। इस काल में कितने ही कमजोर जन भूख से तड़प-तड़प कर मर गये होंगे। इस प्रकार वह जरूरी चीजों का सीमित क्षेत्र में उत्पादन कर निर्वाह करने लगा।

प्रा.र. जे. ब्राइडवुड के कथनानुसार "आजकल के ईराकी लोग ईसा से 6000 वर्ष पूर्व इसी प्रकार बसे थे, अर्थात् उत्पादक बने थे," मगर संस्कृति केवल 3000 वर्ष ही पुरानी है।

बचा हुआ खाद्य पदार्थ कैसे परिरक्षित करना है, यह अपने बीते हुए काल की याद दिलाता रहा।

इस प्रकार व्यवस्थित तथा अव्यवस्थित रूप से विकसित, संग्रह-उत्पादन-परिरक्षण पद्धतियाँ इस जगत् के कौनसे भाग से कब शुरू हुई, यह कहना असम्भव है। आवश्यकता आविष्कार की जननी है। उस समय भाषा इतनी विकसित नहीं थी। पैतृक सम्पत्ति के रूप में पूर्वजों द्वारा प्राप्त अनुभवों से मानव लाभ उठाता आ रहा था। इसमें कहीं-कहीं सुधार भी लाये गये। चटनी, मुरब्बा, शर्बत, दही, मक्खन, घी आदि के अलावा सेला चावल, चिवड़ा, सूखे हुए फल आदि परिरक्षण किये गये पदार्थ ही हैं जिनका हम लम्बे समय तक उपयोग कर सकते हैं।

आयुर्वेद तथा परिरक्षण विज्ञान

एलोपैथी चिकित्सा का इतिहास भारत में करीब 300 वर्ष पुराना है, इससे पहले ही यहाँ आयुर्वेद का आज से भी कहीं अधिक प्रचार था। फल तथा तरकारियों का अनाज की तरह केवल आहार के रूप में ही नहीं, बल्कि मनुष्य को स्वस्थ रखने के लिए भी सेवन जरूरी है, यह उस काल के आयुर्वेदाचार्य भली-भाँति जानते थे। तत्कालीन आयुर्वेदाचार्य फलों में जड़ी-बूटियाँ मिला, परिरक्षण कर, रोग निदान हेतु रोगियों को आवश्यकता के समय में दिया करते थे। यह प्रथा आज भी प्रचलित है।

चीन में बहुत पहले ही फलों का शहद में परिरक्षण करने की प्रथा थी। उस समय भारत में नमक, तेल, गन्ने के रस, गुड़, सिरके, नीबू के रस आदि से फलों का परिरक्षण किया जाता था।

मदिरा तथा वैदिक भारत

पूर्व-पश्चिम देशों में आज भी मदिरा का प्रचार प्रचुर मात्रा में देखने को मिलता है। इतिहासकारों के अनुसार अंगूर के रस से मदिरा बनाने का इतिहास 4000 वर्ष पुराना है। मगर भारत में वैदिक काल में इसका अधिक प्रचार था। इन तथ्यों के वेद साक्षी हैं।

परिरक्षण विज्ञान का इतिहास

नव इतिहास के पन्ने 17वीं शताब्दी के अन्त से या 18वीं शताब्दी से प्रारम्भ होते हैं। 1790 ई० में जब फ्रांस में युद्ध अपनी चरम सीमा पर था, उस समय सेनाओं तथा फ्रांसिसियों को अकाल का सामना करना पड़ा। अचार तथा सूखे खाद्य पदार्थ के अधिक सेवन से लोग बहुत ऊबने लगे, साथ ही इन पदार्थों की कमी होती रही। फ्रांस की सीमाओं पर युद्ध काल में खाद्य पदार्थ भेजना भी आसान काम नहीं था। अतः उन्होंने तय किया कि अधिक भोजन की मात्रा बार-बार भेजने से बचने का एक मात्र उपाय परिरक्षण ही है। इसलिए नैपोलियन बोनापार्ट ने घोषणा की कि जो व्यक्ति नई परिरक्षण विधि की खोज करेगा उसे 12,000 फ्रैंक का पुरस्कार दिया जावेगा।

अपर्टीकरण (Appertizing)

खाद्य पदार्थों को बर्तन में रख कर उसे वायुरोधी अवस्था में बन्द कर पकाया जाय तथा उन्हें उपयोग में लेने से पूर्व खोला न जाय, तो वे उस समय तक सुरक्षित अवस्था में

रहेंगे। इस तकनीक का अनुभव फ्रांस के एक हलवाई (अपार्ट) ने अपने रसोईघर में काम करते समय किया। इसी प्रकार के प्रयोग को उसने अपर्टीकरण का नाम दिया। इस खोज के लिए 1805 में उसने नैपोलियन से उक्त पुरस्कार प्राप्त किया। उसके मतानुसार खाद्य पदार्थों को वायुरोधी डिब्बों में भर कर पकाया जाय तो उसके अन्दर का आहार परिरक्षित हो जायेगा। सन् 1795 में अपार्ट ने यह प्रयोग प्रारम्भ किया, लेकिन ऊष्मा-प्रयोग से खाद्य-पदार्थ खराब नहीं होगा, इस तथ्य को अपार्ट के पहले स्पलनजीनी ने सिद्ध किया था। इसलिए खाद्य-पदार्थो की डिब्बाबन्दी का पाश्चात्य देशों में प्रचार होने लगा। 50 साल इस तरह बीत गये।

ड्यूरेन्डे का योगदान

अंग्रेज पीटर ड्यूरेन्डा ने डिब्बों की चद्दरों में कई सुधार किये तथा डिब्बो के अलावा, बोतलों में भी परिरक्षण के कार्य को सिद्ध करके बतलाया। सन् 1810 में ड्यूरेन्डे ने सरकार से इस कार्य का अधिकार सुरक्षित (पेटेण्ट) करवा लिया। सन् 1824 में अपार्ट ने 50 विभिन्न खाद्य पदार्थों की केनीकरण (डिब्बा-बन्दी) की तकनीक तैयार की।

"प्रैशर कूकर" का आविष्कार

1851 में अपार्ट के पुत्र कैवेलियन अपार्ट ने प्रैशर कूकर (Pressure Cooker) का आविष्कार किया। इसकी वजह से डिब्बा-बन्दी सरल हो गई। साथ ही कई नये पदार्थों का परिरक्षण भी सम्भव हो सका।

लुई पाश्च्यर का योगदान

सन् 1862 में फ्रांस की विज्ञान अकादमी में प्रस्तुत की गई रिपोर्ट में लुई पाश्च्यर ने सिद्ध किया कि मदिरा (वाईन) बियर आदि के खराब होने के कारण उसमें लगने वाले सूक्ष्म पौधे हैं जो कि हमें नग्न नयनों से दिखाई नहीं देते। मदिरा, बियर आदि तैयार करके शुद्ध बोतलों में भर कर गर्म की जाय तो वे खराब नहीं होती हैं, क्योंकि उसमें प्रविष्ट हुए सूक्ष्म पौधे ऊष्मा के कारण या तो नष्ट हो जाते है या उनकी कार्यक्षमता कम हो जाती है। वायु में भिन्न-भिन्न जाति व उपजाति के करोड़ो सूक्ष्म पौधे तैरते रहते हैं। इसी प्रकार लुई पाश्च्यर ने यह सिद्ध किया कि निकोला अपार्ट की जादूगरी से नहीं, बल्कि सूक्ष्म-जीवियों के नष्ट होने से ही खाद्य पदार्थ खराब नहीं होते है। लुई पाश्च्यर ने निकोला अपार्ट के 50 साल बाद इसे सिद्ध किया। यह आविष्कार केवल खाद्य परिरक्षण के लिए ही नहीं, बल्कि शल्य चिकित्सा (Surgery) आदि के लिए भी महत्वपूर्ण योगदान था। यही कारण था कि रोगजनक सूक्ष्म पौधे तथा रोगाणुओं को नष्ट करने के लिए जो ऊष्मा-प्रयोग लुई पाश्च्यर ने किये, उन्हें उस महान् वैज्ञानिक की याद में पास्तुरीकरण (Pasturization) के नाम से जाना जाता है।

रासायनिक परिरक्षक (Chemical Preservative)

सन् 1874 में श्रीवर ने स्टीम प्रैसर रिटोर्ट (Steam pressure retort) का आविष्कार किया। जिस समय अपार्ट, उसके पुत्र तथा लुई पाश्च्यर के आविष्कारों में छोटे और बड़े कई सुधार लाये जा रहे थे, उस समय दुनियाँ के कई अन्य देशों में खाद्य-पदार्थों को, रासायनिक पदार्थों की मदद से परिरक्षित करने के प्रयोग भी चल रहे थे। पाश्चात्य देशों के लोगों ने यह अनुभव किया कि अण्डे को "सोडियम सिलिकेट" घोल (Sodium Silicate Solution) में रखा जाय तो खराब नहीं होगा। इसी प्रकार कुछ

अन्य पाश्चात्य लोग बोरिक अम्ल (Boric acid), बोरेक्स, सैलीसिलिक ऐसिड (Salicylic acid), फार्मलडीहाईड (Formaldehyde), बैंजोईक अम्ल (Benzoic acid), तथा सोडियम बेनजोएट (Sodium Benzoate) काम मे लेते थे। मगर इसमें कई रासायनिक मनुष्यों को अस्वस्थ बनाने वाले विषाक्त पदार्थ थे। अतः खाद्य पदार्थों में इनके प्रयोग करने की प्रथा को सरकार ने अवैध घोषित कर दिया।

युद्ध एक आशीर्वाद

प्रथम विश्व-युद्ध मे फल तरकारी परिरक्षण मे आम तौर पर विशेष विकास हुआ। सन् 1947 में अकेले जर्मनी मे ही 30,000 टन आलू सुखाये गये थे। स्वचालित यन्त्रों की सहायता से परिरक्षित पदार्थों के विटामिन्स का नाश नही होता। ऐसी पद्धतियों के विकास से परिरक्षण-जगत् मे सराहनीय कार्य हुआ।

भारत एक शाकाहारी देश है। फिर भी यहां फल तथा तरकारी परिरक्षण मे कोई विशेष कार्य नही हुआ था। इस कार्य का उल्लेख आगे के अध्याय मे किया गया है।

ऊर्जा तथा फल तरकारियां

"भारत मे फलो की खेती" नामक पुस्तक के रचयिता डब्लू० यू० बी० हेस ने अपनी पुस्तक में लिखा है कि गेहूँ की तुलना मे फलों से ऊर्जा, प्रति एकड़ की दर से अधिक प्राप्त होती है, जो कि निम्न सारणी से स्पष्ट है :—

सारणी—1

	फसलों के नाम	प्राप्त ऊर्जा (कैलोरी) (प्रति एकड़ की दर से)
1.	गेहूँ	1,034,880
2.	केला	15,411,200
3.	अमरूद	1,511,532
4.	पपीता	18,923,520
5.	आम	2,688,000

उपर्युक्त सारणी से स्पष्ट है कि भारत मे स्वतः प्रचुर मात्रा मे पैदा होने वाले फलो मे पपीता, केला तथा आम की क्रमशः प्रथम, द्वितीय तथा तृतीय श्रेणी है।

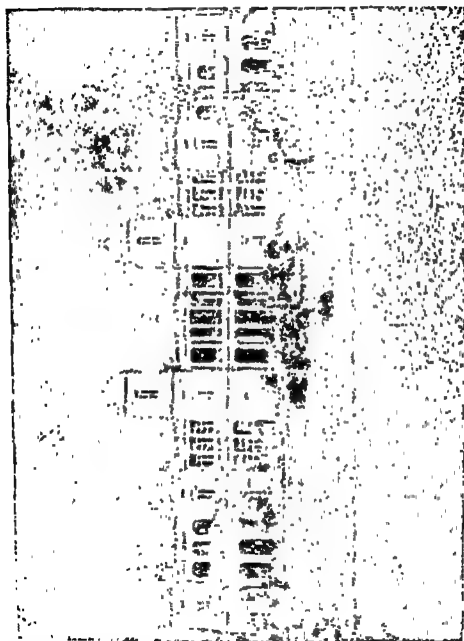
भारत में फल परिरक्षण व्यवसाय

अचार, मुरब्बा आदि डालने की प्रथा भारत मे पीढ़ी दर पीढ़ी चली आ रही है। मगर यह सब देशी प्रथा से ही परिरक्षित किया जाता रहा है। द्वितीय विश्व-युद्ध के बाद इनका परिरक्षण वैज्ञानिक तथा सुव्यवस्थित ढंग से आरम्भ किया गया। भारत मे अंग्रेजी शासकों ने कुछ खाद्य परिरक्षण शालायें प्रारम्भ तो की थी, मगर उनका लाभ केवल सैनिको के लिए ही उपलब्ध होता था। सन् 1935 मे बम्बई मे प्रथम व्यावसायिक कारखाने का निर्माण हुआ। उसके अनुसरण मे मद्रास, कलकत्ता, उत्तरप्रदेश तथा पंजाब मे भी कारखाने स्थापित किये गये।

स्वतन्त्र भारत में फल-परिरक्षण काल

सन् 1947 में भारत स्वतन्त्र हुआ। जन-साधारण के लिए कई कार्य किये गये। अन्य राष्ट्रों के समान आर्थिक, सामुदायिक एवं वैज्ञानिक क्षेत्रो में प्रगति करने की उमग

लोगों में उभर आई। इस क्रम मे सन् 1950 मे केन्द्र सरकार ने कर्नाटक (मैसूर) राज्य मे केन्द्रीय खाद्य प्रौद्योगिक अनुसन्धान संस्थान की स्थापना की।



चित्र 1—केन्द्रीय खाद्य प्रौद्योगिक अनुसन्धान संस्थान, मैसूर

खाद्य परिरक्षण के अतिरिक्त, आमतौर पर फल-परिरक्षण पर कई अनुसन्धान वहाँ किये जा रहे हैं, जो देश और देशवासियों के हित मे सफलता प्राप्त कर रहे है। इसके अतिरिक्त लखनऊ, नागपुर, बम्बई, त्रिचुर, चण्डीगढ़, त्रिवेन्द्रम आदि प्रदेशीय अनुसधान-शालायें कार्यरत है। इनका उद्देश्य वहाँ के व्यवसाय विकास, उचित तकनीकी ज्ञान तथा

वहाँ उपलब्ध कच्चे माल का अन्वेषण करना है। भारत की आर्थिक स्थिति व जन-कल्याण को ध्यान मे रखते हुए सन् 1958 मे सरकार ने खाद्य परिरक्षण व्यवसाय विकास संस्थान की स्थापना की, जिसका उद्देश्य इस व्यवसाय के लिए उपयुक्त कच्चा माल एवं यन्त्र सामग्री आदि प्राप्त करना, उत्पादित खाद्य-सामग्री को निर्यात करना तथा साथ ही निजी क्षेत्रों मे इस व्यवसाय को बढाने का उपाय ढूंढ़ना तथा समय-समय पर सरकार को अपने कार्य से अवगत करना है। इस संस्थान को सचिवालय, वाणिज्य-व्यवसाय मन्त्रालय के साथ जोड़ा गया।

1960 में केन्द्रीय खाद्य-प्रौद्योगिक अनुसन्धान-संस्थान (Central Food Technology Research Laboratory) के तीन प्रमुख वैज्ञानिकों (डॉ गिरिधारी लाल, डॉ. जी. एस. सिद्दप्पा तथा जी. एम. टण्डन) ने मिलकर सर्व-प्रथम एक अंग्रेजी पुस्तक लिखी, जो आज भी भारत मे फल तथा तरकारी परिरक्षण की मान्यता प्राप्त पुस्तक मानी जाती है। इससे फल परिरक्षण व्यवसाय के प्रसार मे काफी योगदान मिला। इस क्षेत्र के एक प्रसिद्ध तथा अग्रगण्य वैज्ञानिक को हम भुला नहीं सकते, वे हैं श्री लाल सिंह, जिन्होंने विश्व-विख्यात वैज्ञानिक क्रुस (Cruess) के साथ मिलकर भी फल परिरक्षण क्षेत्र मे काफी काम किये हैं। इसके अलावा डॉ० वि० सुब्रमण्यम् केन्द्रीय खाद्य प्रौद्योगिक अनुसन्धान-संस्थान के सर्व प्रथम निदेशक तथा भूतपूर्व निदेशकों मे डॉ. एच. ए. बी. पारपीया तथा डॉ० बी० एल० आंवला एव वर्तमान निदेशक श्री सी० पी० नटराजन आदि उल्लेखनीय वैज्ञानिको में से प्रमुख हैं, जिन्होने खाद्य परिरक्षण विज्ञान के क्षेत्र मे काफी योगदान दिया है।

खाद्य तथा पोषण बोर्ड (Food and Nutrition Board)

जुलाई 1973 मे उपर्युक्त कार्यों के लिए खाद्य परिरक्षण तथा खाद्य परिरक्षण व्यवसायों को अधिकार पत्र (Licence) देने से सम्बन्धित कार्यों के लिए इस बोर्ड की स्थापना की गई। यह विभाग खाद्य, कृषि, सामुदायिक विकास तथा सहकारिता मन्त्रालय विभाग के साथ जोड दिया गया। नये कारखानो की स्थापना के लिए उचित सलाह प्राप्त करना, फल उत्पादन नियम (Fruit Product Order) प्राप्त कराना आदि कार्य इस बोर्ड के अधीन हैं।

आज भारत मे 2624 फल परिरक्षण कारखाने कार्य कर रहे हैं, जिन्हें इस बोर्ड द्वारा अधिकार-पत्र प्राप्त है। भारत मे खाद्य परिरक्षण कारखानों की अपेक्षा फल-परिरक्षण कारखानों की संख्या अधिक है। सन् 1984 मे एक लाख मैट्रिक टन फल-तरकारी उत्पादों का उत्पादन हुआ था।

इन कारखानो मे मुख्यतः कार्बनीकृत (Carbonated) फल वर्ग पेय पदार्थ, अचार व अकार्बनीकृत फल पेय आदि तैयार किये जाते हैं। यह तथ्य सारणी-2 से स्पष्ट होता है।

मगर सन् 1984–85 के आंकडो के अनुसार 5238 लाख रुपये मूल्य की संसाधित (Processed) फल तथा तरकारियाँ निर्यात की गई। अब भारत मे 46 मीट्रिक टन मे अधिक मात्रा में फल तथा तरकारियाँ उत्पादित किये जाते है। आजकल लगभग तेरह लाख हैक्टर मे फलों की खेती तथा बीस लाख हैक्टर मे तरकारी की खेती की जाती है। जहाँ इन फसलों की अधिकता होती है, वहाँ से अन्य प्रदेशो मे इसे भेजा जाता है। कई प्रदेशो मे माल का मूल्य इतना अधिक हो जाता है कि वहाँ के लोगों की क्रय-शक्ति मे बाहर

सारणी–2

1980 में भारत में उत्पादित फल तरकारी उत्पादों का विवरण

क्रम	उत्पाद का नाम	वजन (मीट्रिक टन में)
1	कैनीकृत/बोतलीकृत फलोत्पाद	4901
2	कैनीकृत/बोतलीकृत तरकारी उत्पाद	5379
3	जेम, जेली, मारमलेड़	3484
4	फल रस	14511
5	फल गूदा (लुगदी)	10911
6	स्क्वैश, क्रश, कोरडियल	5712
7.	फल शर्बत (फ्रूट सिरप)	200
8	फल मकरन्द (फ्रूट नेक्टर)	183
9	आर. टी. एस. फल पेय (आर. टी. एस. बिवरेज)	8587
10	सान्द्रीकृत फल रस	635
11	चटनी	1781
12	विभिन्न प्रकार के आचार	14292
13	आम की फाँकें (लवण घोल में)	5842
14	विभिन्न मुरब्बे	3449
15	फल, मिश्री एवं मणिभम फल (फल एवं छिलके)	1409
16	निर्जलीकृत फल	32
17	निर्जलीकृत तरकारियाँ	1227
18	हिमीकृत फल (फ्रोजन फ्रूट)	[illegible]
19.	हिमीकृत फल उत्पाद (फ्रोजन फ्रूट प्रोडक्ट)	264
20	हिमीकृत तरकारियाँ	367
21.	टमाटर उत्पाद (टमाटो प्रोडक्ट)	5629
22.	सॉस (टमाटर रहित)	1033

हो जाता है। कई प्रदेशों में माल परिवहन एवं शीतागारों की कमी होने के कारण अधिकतर उत्पाद सड़-गल कर नष्ट हो जाते हैं। कई बार तो किसान को अपनी फसल पर किये गये व्यय से वंचित रहना पड़ता है। ऐसी परिस्थितियों में फलों तथा तरकारियों का परिरक्षण ही एक श्रेष्ठ उपाय है, जिससे हम फलों तथा तरकारियों को ज्यों की त्यों या अन्य पदार्थों में परिणत कर परिरक्षित कर सकते हैं, जिन्हें कुछ समय बाद भी बेचा जा सकता है। परिरक्षित उत्पाद बहुत समय तक सड़े-गले बिना रह सकते हैं। परिरक्षित किये गये पदार्थ उसके कच्चे माल से कम जगह भी घेरते हैं, जिससे गोदामों में काफी मात्रा में परिरक्षित उत्पाद संग्रहीत किये जा सकते हैं। उदाहरणार्थ बीस हजार टन आलू को सुखायें तो करीब चार हजार टन ही रह जायेंगे। वे आलू न तो खराब होंगे और न उनमें अंकुरण होगा, तथा सूखने के बाद जगह भी कम घेरेंगे। इस तरह परिरक्षित पदार्थों से किसान तथा उपभोक्ता दोनों को लाभ होगा। इतना उपयोगी व्यवसाय फल तथा तरकारी-परिरक्षण। अकाल तथा युद्ध-काल में, राहत कार्य के लिए ... में अनिवार्य खाद्य पदार्थ के रूप में, आज विश्व-भर में परिरक्षित उत्पाद ही काम में आ जाते हैं।

फल तथा तरकारियाँ, उगाने से लेकर पकने तक, प्रकृति मे आँधी तथा वर्षा के कारण झड़ते रहते है। इन्हे सुचारू रूप से काम में लिया जाय तो स्वादिष्ट व्यंजनों का रूप दिया जा सकता है। जैसे —अचार, सिरका (चुक्र) इत्यादि और उचित लाभ उठाया जा सकता है।

फल-तरकारी उत्पादन

भारत एक ऐसा देश है जहाँ शीतोष्ण जलवायु उपोष्ण तथा ऊष्ण कटिबन्ध तीनों पाये जाते हैं। उत्तर भारत के काश्मीर, कुल्लू, कांगरा, पंजाब, कोटागढ़, हिमाचल प्रदेश, उत्तर प्रदेश, कुमायूँ पहाड़ियाँ शीतोष्ण कटिबन्ध मे आते हैं। वहाँ सेब, आड़ू, नाशपाती, अखरोट, बादाम और चेरी (Cherry) अधिक पैदा होते हैं। जहाँ परिरक्षण की बहुत कमी है किसानों को अपनी उत्पाद सामग्री कम दामो में बेचनी पड़ती है।

इसी प्रकार पंजाब, उत्तर प्रदेश, बिहार, मध्य प्रदेश, आसाम, राजस्थान व पश्चिम बंगाल के कुछ भाग उपोष्ण कटिबन्ध में आते हैं, जहाँ सन्तरा, चकोतरा, लीची, अनार, बेर तथा उष्ण कटिबन्धो के आम, केला, बेर आदि भी उगाये जाते हैं, जो देश के अन्य भागों मे पहुँचते-पहुँचते काफी महँगे हो जाते हैं।

मध्य प्रदेश व पश्चिमी बंगाल के दक्षिणी जिले तथा बम्बई, आसाम, आन्ध्र प्रदेश, कर्नाटक, तमिलनाडु, केरल आदि प्रदेश उष्ण कटिबन्ध प्रदेश में आते हैं। इसी प्रकार दक्षिण भारत मे आम, केला, चीकू, पपीता, अनन्नास, सन्तरा, काजू, नारियल आदि की खेती अधिक की जाती है, जो दुनिया के किसी भी अन्य देश में इतनी विभिन्न फल-तरकारियाँ पैदा नहीं होती। अतः भारत मे विभिन्न जलवायु के फल तथा साग-सब्जियाँ पैदा की जा सकती हैं। अगर फल दूसरे प्रदेश मे भेजा जाय और उसके दाम न बढ़े तो माँग अधिक हो सकती है। यह तभी सम्भव हो सकता है जबकि परिरक्षण विज्ञान का विकास हो। कुछ फल तथा तरकारियाँ ऐसी होती हैं जिनकी उपज प्रदेशों में भरपूर होती है और खपत उतनी नहीं होती, लेकिन अन्य प्रदेशों मे उसकी माँग अधिक होती है। ऐसी फसल के व्यापार से उन प्रदेशो की आय मे तथा राष्ट्रीय आय मे वृद्धि की जा सकती है जैसे अनन्नास भारत के आसाम, केरल, मैसूर आदि प्रदेशो मे भरपूर पैदा होता है। वहाँ एक किलो का दाम 60 पैसे होता है, जबकि भारत के उत्तरी भागों मे करीब 2.50 रुपये किलो के भाव मे बेचा जाता है। अनन्नास का यदि परिरक्षण कर प्रदेशों मे भेजा जाय तो यह कम मूल्य मे उपभोक्ताओं को प्राप्त होगा।

आज इसके लिए जिन वस्तुओं की आवश्यकता है, जैसे—बिजली, उपकरण, चीनी तथा अन्य कच्चा माल वे भारत मे सुलभता से प्राप्त होते हैं। तकनीकी ज्ञान की भी कमी नहीं है। लेकिन आम जनता में इस विज्ञान के प्रचार की कमी है। फिर भी भारत-सरकार इस व्यवसाय के विकास की दशा में तथा इस व्यवसाय से होने वाले उत्पाद को निर्यात करने के क्रम मे कदम उठा रही है, ताकि इस व्यवसाय की दिन-प्रति-दिन प्रगति हो सके। आज भारत मे परिवहन व्यवस्था भी बढ रही है, भारत के एक कोने से दूसरे कोने तक शीघ्रगामी गाड़ियाँ भी शुरू हो चुकी हैं, जिससे एक प्रदेश का माल कम समय मे दूसरे प्रदेश को पहुँचाया जा सके।

सन् 1961 मे 26,08,48,824 रुपये मूल्य के परिरक्षित फल तथा तरकारियाँ निर्यात की गईं (मगर सन् 1984–85 मे यह 5,238 लाख रुपये मूल्य की रही) उसी

काल मे हमने 20,38,67,091 रुपये के मूल्य की सामग्री आयात की, जबकि 1947 तक उपर्युक्त सामग्री के लिए भारत को विदेश के आयात पर निर्भर रहना पड़ता था। यह स्वतन्त्रता के बाद व्यावसायिक तथा सरकार द्वारा विदेशो मे मिलकर किये गये सर्वेक्षण तथा प्रयासों का फल था। इसके अलावा सरकार नये कारखाने खोलने तथा पुराने कारखानों को नया रूप देने के लिए यथेष्ठ मात्रा में धन देकर प्रोत्साहित कर रही है। यह राशि व्यवसायियों को ऋण के रूप मे, डिब्बा बन्दी की चद्दरों मे रियायत के रूप मे चीनी के अधिभार से मुक्त रूप में दी जाती है।

इन कारणों से इस व्यवसाय का विकास तो हो ही रहा है, साथ ही टिन एवं प्लास्टिक व्यवसाय, मुद्रणालय, चीनी व्यवसाय आदि भी सुचारू रूप से विकसित हो रहे हैं और अधिक लोगों को रोजगार प्राप्त होता है, अतः यह देश और देशवासियों के हित में अत्यन्त उपयोगी व्यवसाय रहा है।

फल तथा तरकारी परिरक्षण विज्ञान, रसायन, भौतिकी, प्राणि-जीवी एवं सूक्ष्म जीव आदि विज्ञान पर आश्रित है। इस विज्ञान के साथ अभियान्त्रिकी का और समावेश किया जाय तो यह प्रौद्योगिकी (Technology) हो जाता है।

सन् 2000 तक भारत में फल-तरकारियों की पैदावार तथा उनके उत्पादों के उपभोग की स्थिति — एक अवलोकन—

भारत में करीब 16.9 करोड़ हेक्टर भूमि में खेती होती है। मगर फल तरकारियो की खेती केवल 1.1 करोड़ हेक्टर में ही की जाती है। तदनुसार हमारे देश में 4.6 करोड़ टन फल तरकारियां पैदा की जाती हैं। इसमे फल 2.9 करोड़ टन एवं तरकारी केवल 1.7 टन ही है।

सन् 1981 के जनगणना के अनुसार भारत की कुल आबादी 68.3 करोड़ है। अगर हम मानलें कि 68.3 आबादी सारी की सारी वयस्क पुरुष है जो सामान्य श्रम करने वाले हैं तो हमें करीब 10.7 करोड़ टन फल तरकारियाँ प्रति वर्ष चाहिए, क्योंकि औसतन एक व्यक्ति को कम से कम 300 ग्राम तथा 30 ग्राम साग फल प्रतिदिन खाने चाहिये। परन्तु हम केवल 4.6 करोड़ टन फल तरकारियां ही पैदा करते हैं। फलस्वरूप 6.1 करोड टन फल तरकारियों का कम उत्पादन हो रहा है। इसलिये एक भारतीय औसतन प्रतिदिन 30 ग्राम तरकारी तथा 80 ग्राम फल खाता है, जबकि उद्यानिक क्षेत्र में विकसित देशो मे प्रतिदिन प्रति व्यक्ति की खपत 362 ग्राम तरकारी तथा 316 ग्राम फल है। हमारे देश में तरकारी कम पैदा की जाती है जबकि फलों की पैदावार अधिक है। इसलिये ये सारे भारत में फल सस्ते एव तरकारियां महगी बिकती है।

सन् 2000 में फल तरकारियों की हमारी आवश्यकता इससे भी अधिक होगी क्योंकि उस समय तक हमारे देश की आबादी 100 करोड़ हो जाने की संभावना है। अगर आबादी पर नियंत्रण नहीं रखा गया तो इसमे भी परिवर्तन आ सकता है।

अगर मानलें कि हमारे फल तरकारी उत्पादन की गति 1975 से 1981 तक की तरह बढ़ती रहे तथा विशेष परिवर्तन नही आए तो सन् 2000 में 80 मिलियन टन फल तरकारियाँ ही पैदा होगी, यानि तब तक 7.7 करोड़ टन कम हो जायेगी। दूसरे शब्दो मे हमारी कुल फल तरकारियों की आवश्यकता 15.6 करोड़ टन लगभग होगी और हम सिर्फ इस आवश्यकता का आधा भाग ही पैदा करते होंगे।

फल तरकारी संसाधन पर एक अवलोकन

भारत में कुल पैदावार, फल तरकारियों का 0.72 प्रतिशत ही संसाधन के लिए काम में आता है, तदानुसार 1984 में भारत में एक लाख मैट्रिक टन फल तरकारियाँ संसाधन की गई। इसमे अधिकांश फलोत्पाद है। तरकारी उत्पाद केवल 6606 मैट्रिक टन थे। इसमें भी अधिकांश कैनीकृत, बोतलीकृत तरकारियाँ एवं निर्जलीकृत तरकारियाँ थी जो निर्यात की जाती है। अधिक जानकारी के लिए इसी अध्याय में सारणी संख्या 2 का अवलोकन करें।

इसको मद्दे नजर रखते हुए अनुमान लगाया जा सकता है कि सन् 2000 तक भारत केवल 250350 मैट्रिक टन फल तरकारी संसाधित कर पायेगा।

भारत में संसाधित फल तरकारी की खपत

आज संसाधित फल तरकारियों में से करीब 39 प्रतिशत निर्यात की जाती है जो 1984-85 मे करीब 5238 लाख रुपयें की थी, जिसमे 611 लाख रुपये का आमरस, 3633 लाख रुपये की अन्य कैनीकृत, बोतलीकृत फल पदार्थ, 115 लाख रुपये की कैनीकृत तरकारियाँ, 336 लाख रुपयें की निर्जलीकृत तरकारियाँ एवं 543 लाख रुपये की आचार एवं चटनियाँ निर्यात की गई थी।

करीब 30 प्रतिशत संसाधित फल तरकारियाँ सैनिकों के लियें, सुरक्षा विभाग एवं देश के पाच सितारा होटलों द्वारा खरीदी जाती है। केवल 31 प्रतिशत संसाधित फल तरकारियाँ देश के साधारण बाजारो मे बिक्री के लिये आती है। इनका उपयोग अधिकतर देश में सम्पन्न लोगों द्वारा ही किया जाता है।

देश के विभिन्न नगरों मे रहने वाले अधिकांश मध्यवर्गीय लोग ताजा फल तरकारी ही खाना पसन्द करते हैं, क्योंकि संसाधित फल तरकारियाँ उनके खरीदने की क्रय शक्ति के बाहर है। संसाधित फल तरकारियो को सरकार द्वारा भोग-विलास के पदार्थों में रखा गया हैं। फलस्वरूप विभिन्न प्रकार के कर वसूल किये जाते हैं, जबकि रेडियों ही नही दूरदर्शन को भी भोग विलास से साधनो से बाहर रखा गया है। जब तक ससाधित फल तरकारियों को अत्यावश्यक साधनों में नहीं रखा जावेगा तब तक संसाधित फल तरकारी उत्पादन में बढोतरी होना संभव नही होगा

जबकि संसाधित फल तरकारियों को विदेशों मे एक अतिआवश्यक वस्तु माना गया है, फलस्वरुप वहाँ संसाधित फल तरकारियो का दाम आम जनता की क्रय शक्ति के अनुकूल रहते हैं। तथा कई ताजा तरकारियो के दामों से सस्ते भी रहते हैं। इसलिये उनके देश की पैदावार करीब 40 से 70 प्रतिशत फल तरकारियाँ विभिन्न उत्पादो के लिए काम मे ली जाती है। वहाँ फल तरकारियों की तुडाई के बाद, अपने देश की भांति सड़गल कर उतनी मात्रा में नष्ट नहीं होती। भारत में 20 से 30 प्रतिशत फल तरकारियाँ तुडाई के उपरान्त, उपभोक्ताओं तक पहुँचने के पहले, सड़गल कर नष्ट हो जाती है, इन्हें विभिन्न उत्पादों में संसाधित कर सकते हैं। लेकिन प्रोत्साहन की कमी के कारण 20-30 प्रतिशत नष्ट हो रही है। फलस्वरूप करीब 1.5 करोड़ टन फल तरकारियाँ प्रतिवर्ष सड़गल कर नष्ट हो जाती है जिसका मूल्य करीब 10 अरब रुपये आंका जाता है।

हमारी ग्रामीण अर्थ व्यवस्था

हमारी ग्रामीण अर्थ व्यवस्था कमजोर है। हमारी आबादी की 75 प्रतिशत जनसंख्या गांवों में रहती है। वे अधिकांश कृषि मजदूर एवं कारीगर है, जो फल तरकारियाँ

खरीदने की क्षमता ही नही रखते । क्योंकि वे निम्न आय वर्ग के है । इसके अलावा उन्हें फल तरकारियों के गुण-दोष की जानकारी भी नहीं है । जब तक ग्रामीण आर्थिक परिस्थिति एवं शिक्षा पद्धति में सुधार गति और तीव्र नही की जायेगी तब तक तरकारी–फलोत्पादन होना असंभव होगा ।

इसके लिए पैदावार केन्द्रो मे ही अर्थ संसाधित फल तरकारी उत्पाद तैयार कराकर फिर कारखानों में भिजवाया जाय तो नगर का प्रदुषण ही नही अपितु गांवों में रोजगार उपलब्ध कराकर ग्रामीणो के शहर की ओर हो रहे पलायन को भी रोका जा सकेगा ।

सरकार को चाहिए कि ग्रामीण क्षेत्रों मे सार्वजनिक क्षेत्र की भूमि में वहाँ के विद्यार्थियों एवं अध्यापको द्वारा फल तरकारियो की खेती कराई जाये तथा इसकी पैदावार को विद्यार्थियों मे ही बाँटा जाय ।

भारत में फल तरकारियो की पैदावार बढ़ाने एवं फसल कटाई के उपरान्त होने वाली क्षतियों को रोक कर फल तरकारी संसाधन में बढ़ावा देने के वास्ते विभिन्न कारणों पर चर्चा करने तथा उसके उपाय खोजने के लिए सरकार ने एक बोर्ड का गठन किया.... यह है....राष्ट्रीय उद्यानिका बोर्ड (हार्टीकल्चरल बोर्ड) । यह बोर्ड कृषि एवं ग्रामीण विकास मंत्रालय के अधिनस्थ है । राष्ट्रीय उद्यानिका बोर्ड हरियाणा राज्य के गुड़गांव मे स्थापित किया गया है । इसका मुख्य कार्य राष्ट्रीय स्तर पर एक मंच तैयार करना, समन्वयन, फल-तरकारी उत्पादन एवं संसाधनो पर आवश्यक नियन्त्रण रखना होगा जिससे कि राष्ट्रीय स्तर पर आय एवं रोजगार की सुविधाएँ एवं खाद्य सामग्री उपलब्ध हो सके ।

उपरोक्त बातों को मद्दे नजर रखते हुए हम कह सकते हैं कि सन् 2000 तक उद्यानिका क्षेत्र मे एवं संसाधन क्षेत्र मे आश्चर्यजनक वृद्धि होगी । इसलिए भारत मे फल परिरक्षण व्यवसाय का भविष्य बहुत ही उज्जवल है ।

□□□

अध्याय 2

परिरक्षण के नियम

(Principles of Preservation)

फल-तरकारियां खराब क्यों हो जाती हैं ?

परिरक्षण के नियमों को भली-भांति समझने के लिए यह जानना है कि फल-तरकारियां क्यों खराब हो जाती हैं ? हम भलीभांति जानते हैं कि पेड़, पौधे जब पूर्ण अवस्था पाते है तब ही उनमें फूल आने लगते हैं। इन फूलों मे परागण द्वारा फल लगते हैं। ये फल कालान्तर मे बढोतरी पाकर मंड संचयन करने लगते हैं। फलस्वरूप पूर्ण विकास करते हैं। इसके बाद प्रतिसंधि अवस्था आ जाती है यानि मंड सुक्रोज (शर्करा) मे बदलने लगते हैं। इसको ही हम फल पकना भी कहते हैं। इस अवस्था में हम पेड़ पौधों से फलों को अलग करें या नही तो भी पकने की प्रक्रिया चलती रहेगी। फलस्वरूप ये सुगन्ध से महकने लगते हैं। इस सुगन्ध से प्रकिण्व (खमीर या यीस्ट) फल की ओर आकर्षित होते हैं। प्रकिण्व फलो में प्रविष्ट कर उनमें पायी जाने वाली शर्करा को खाकर उसमें मद्यसार (एलकाहल) एवं कार्बन-डाई-ऑक्साइड पैदा करेंगे। मद्यसार की सुगन्ध से जीवाणु आकर्षित होकर एलकाहल का उपयोग कर सिरका मे परिवर्तित कर देते है। इसी प्रकार से फल का अधिकांश खाद्य योग्य अंश विभिन्न सूक्ष्म जीवों (प्रकिण्व, सिरका जीवाणु एवं फफूंद) द्वारा खाये जाते है। बचे हुए सेल्यूलोज एवं बीज पेड पौधो से अलग होकर भूमि मे गिर जाते हैं। कभी-कभी उपर्युक्त सभी क्रियाएँ पेड़ पौधों में या जमीन पर गिरने के बाद भी सम्पन्न होती हैं।

सेल्यूलोज को जमीन में पाये जाने वाले दीमक, केंचुवा आदि जीवो द्वारा खाया जाता है। बीज वर्षाकाल मे पानी के साथ बह कर उचित स्थान पर गिर जाता है। वहां पर पुनः पेड या पौधा उग जाता है। ये पेड़-पौधे पूर्ण अवस्था पाकर पुनः जीवन चक्र चलाते रहते हैं।

इसी प्रकार तरकारियो में भी उपर्युक्त प्रक्रिया चलती रहती है। जैसे—मटर में फूल आते है फूल मे बीज लगते हैं। बीज की बढ़ोतरी के आरम्भ मे शर्करा संचयन होती है व पूर्ण अवस्था पाते-पाते शर्करा मंड मे परिवर्तित हो जाती हैं। मटरो मे जब शर्करा की मात्रा उच्चकोटि में प्राप्त होती है तब हम इन्हे साधारणतया सब्जी बनाने के काम मे लेते हैं। पूर्ण रूप से पकने के बाद मटर बीज के काम आते हैं या खाने के, लेकिन उसमें मिठास नहीं होता। अन्य तरकारियो में भी फफूंद तथा जीवाणु प्रवेश कर तरकारी को खाकर खराब करते हैं या बढोतरी के बाद बीज बनकर पुनः पौधे बन जाते हैं। अगर मानव उपर्युक्त फल तरकारियों को चाही गई अवस्था में तोड़ लेता है, तथापि संचयन काल में भी उपर्युक्त सूक्ष्म जीवो द्वारा उनके अस्तित्व को खत्म करने की प्रक्रिया यदि चलती रहती है तो इसे फसल कटने के उपरान्त की कमियाँ कहा जाता हैं यानि कि इन खराबियो का कारण सूक्ष्मजीवी हैं। इनके द्वारा पहुँचाई गई खराबियों को सूक्ष्मजीव विकृति (खराबी) कहते हैं। अधिक जानकारी के लिए इस ग्रन्थ के सूक्ष्म जीव तथा आहार नामक अध्याय का अवलोकन करें।

फलों को पेड़-पौधों से अलग करें या न करें, सूक्ष्मजीव इनमें प्रवेश करें या न करें फिर भी इनमें कई शारीरिक प्रक्रिया यानि फल की वढोतरी, उसकी उपापचय प्रक्रिया आदि चलती ही रहती हैं यानि फल लगते समय मंड या शर्करा तथा उसके बाद मंड से शर्करा या शर्करा से मड में परिवर्तित होना आदि के अलावा श्वसन प्रक्रिया भी अनिवार्य रूप से चलती रहती है। यह जैविक रासायनिक प्रक्रिया है।

प्रायः सभी फल पूर्ण विकास प्राप्त करके ही पकने लगते हैं, तब उनकी श्वसन-क्रिया में तीव्रता आ जाती है। यह प्रक्रिया फल पेड़-पौधो पर रहें तब भी चलती रहती है और उसे तोड़ लें, तब भी साथ ही फल का हरा वर्ण बदल कर पीले मे या लाल मे या दोनों के संयुक्त रंग में परिवर्तित होने लगता है। यह प्रक्रिया पर्णहरित अवक्रमण से या केरोटिनाइड उत्पन्न होने से या दोनो की सयुक्त प्रक्रिया से हो सकती है। इसके साथ ही पेक्टिन मे परिवर्तन आता है, यानी प्रोटोपेक्टिन, पेक्टिक एन्जाइम की क्रिया से, पेक्टिन मे परिवर्तित हो जाते हैं तथा उसके बाद पेक्टिन, पेक्टिक अम्ल में परिवर्तित हो जाते हैं। जल अपघटन के कारण पोलीसेकेराइड्स जैसे मण्ड, हेमीसेल्यूलोज, साधारण शर्करा आदि के रूप में भी परिवर्तित हो जाता है। इसके साथ इथलीन उत्पादन-मात्रा मे भी भिन्नता देखी गई है। फलस्वरूप श्वसन-क्रिया दो दिनों में पराकाष्ठा पर पहुँच जायेगी। साथ ही कोष-निर्माण मे अवरोध आ जाये या उसमे पाये जाने वाले हारमोन मे अवरोध हो जाये तो भी शारीरिक प्रक्रिया में अवरोध आ सकता है। कहने का तात्पर्य है, जैविक रासायनिक प्रक्रिया द्वारा भी फलों में खराबी हो जाती है। इसको जैविक, रासायनिक प्रक्रिया विकृति (बायो-केमीकल स्पोइलेज) कहते हैं।

फलों को पेड़-पौधो से एकत्रित करने के लिए किसान पेड़ों पर चढकर शाखाएँ हिला देते हैं या नीचे खड़े होकर हिलाकर नीचे गिराकर एकत्रित कर लेते है। शायद ऐसा वे अपनी अज्ञानता के कारण एव फल तोड़ने मे होने वाले खर्च को देखते हुए करते हैं। फलस्वरूप फल ऊपर से गिरते समय उसमे चोट लगती है और खराब हो जाता है अथवा किसान फलों को बिना गिराये ही तोड़ लेते हैं, लेकिन पेटियों मे या बास की टोकरियों मे पैक करते समय ठूँस-ठूँस कर भरने के कारण भी चोट लगकर क्षति पहुँचती है। इसी प्रकार के क्षतिग्रस्त फल-तरकारियों मे सूक्ष्म जीव शीघ्र प्रवेश कर बढ़ोतरी कर लेते हैं। फलस्वरूप लाभ की बजाय हानि होती है।

अब आप भली-भांति जान गये होंगे कि फल-तरकारियो की खराबियो के तीन प्रमुख कारण हैं वे हैं—जैव-रसायन प्रक्रिया, सूक्ष्मजीव-प्रक्रिया तथा चोट। इनमे फसल काटने के बाद एवं परिवहन के समय होने वाली चोट से उत्पन्न खराबियों को छोड़ अन्य दोनो प्रकार से होने वाली खराबियों को दूर कर फल-तरकारियों का परिरक्षण हम कर सकते हैं।

परिरक्षण एक परिभाषा

"खाद्य पदार्थों के मौलिक आकार एवं रूप को परिवर्तित कर या अपरिवर्तित रखकर इनके पोषक तत्त्व एवं विटामिनों को यथासम्भव बनाये रखते हुए बिना विकृति के दीर्घकाल तक सुरक्षित रखने की विधियों एवं तकनीकों को परिरक्षण कहा जाता है।"

"Preservation is the method and technique applied on food material, in order, to protect it for longer period without spoilage retaining its nutritive values and vitamines as best as possible with or without changing its original shape and form."

खाद्य पदार्थों के मौलिक आकार एवं रूप को परिवर्तित करके ही हम अधिकांश परिरक्षित फल-तरकारियों का उत्पादन करते हैं, जैसे—जैम, जैली, विभिन्न फल पेय, आचार, सास, चटनी इत्यादि।

लेकिन फल तरकारियों के मौलिक आकार एवं रूप को अपरिवर्तित रख कर भी परिरक्षण सम्पन्न किया जा सकता है, जैसे अणुविकिरण द्वारा फल-तरकारियों में होने वाली जैविक-रासायनिक प्रक्रिया की रोकथाम एवं सूक्ष्म-जीवियों का अणु-विकिरण द्वारा विनाश।

इसके अलावा मोम-लेपन द्वारा कुछ विशेष फल-तरकारियों पर लेपन कर परिरक्षण सम्पन्न किया जाता है। इस मोम-लेपन से भी फल-तरकारियों का मौलिक आकार ज्यों का त्यों बनाये रखा जाता है। साथ ही उपर्युक्त परिरक्षण-विधियों से पोषक पदार्थों एवं विटामिनों का नाश भी उतना नहीं होता जितना साधारण तौर पर घर में फल-तरकारियाँ पकाते समय हो जाता है। इस मोम-लेपन से ही आजकल भारत से आम तथा अन्य नीबू वर्गीय फलों का निर्यात किया जाता है।

फल, तरकारी तथा उनके उत्पादों का परिरक्षण वैज्ञानिक नियमों पर आधारित है। परिरक्षण विधियों को दो भागों में विभाजित किया जा सकता है :—

(1) अस्थायी (2) स्थायी।

(1) अस्थायी परिरक्षण (Temporary Preservation)

खाद्य परिरक्षण व्यवसाय में एक भाग अस्थायी परिरक्षण पर आधारित है। चाहे यह नियम असंसाधित माल पर हो या उसके संसाधित उत्पाद पर हो, लेकिन अस्थायी परिरक्षण विधि पर तैयार किये हुए उत्पादों का उतना स्थिर परिरक्षण सम्भव नहीं, जितना कि संसाधित खाद्य पदार्थों में स्थिर परिरक्षण सम्भव है। मगर इस विधि द्वारा संसाधित उत्पादों को भी अधिक दिनों तक सुरक्षित रखा जा सकता है। अस्थायी परिरक्षण को सात भागों में विभाजित किया जा सकता है :—

(1) नीरोगावस्था या आरोग्यावस्था या अपूति (Asepsis)

मानव शरीर की तरह खाद्य पदार्थों को भी नीरोगावस्था में सूक्ष्म जीवों के प्रवेश से बचाया जावे, तो वे भी आरोग्यावस्था में रहेंगे तथा उन्हें सड़ने और गलने से भी बचाया जा सकेगा। जिस खाद्य पदार्थ को हम खाने के काम में लेते है, उसे पूर्णतया शुद्ध तथा नीरोग नहीं समझा जा सकता है, क्योंकि वातावरण के द्वारा ही उसमें बहुत से जीव प्रवेश किये रहते है। ऐसे खाद्य पदार्थों को सड़ने, गलने से पहले खाने पर भी मानव शरीर रोगी हो सकता है। अतः फल तथा तरकारियों को भी अन्य खाद्य पदार्थों की तरह साफ वातावरण में ही तैयार किया जाना चाहिए। कन्दवर्गीय फसलों को भूमि के तल पर आश्रित मलमूत्रादि के जल से सिंचित नहीं किया जाना चाहिए, अन्यथा उन्हें खाने वाले भी रोगग्रस्त हो सकते हैं। इस सम्बन्ध में वैज्ञानिकों का कथन है कि फलों को धोकर पकाये जाने पर भी उनमें रोगजनक जीवाणु पाये जाते हैं। अतः उपर्युक्त फल तथा तरकारियों का उत्पादन साफ तथा शुद्ध वातावरण में ही होना चाहिए। परन्तु मलमूत्रादि से युक्त गन्दे नाले व नालियों का पानी, जो कि नगरों से प्राप्त होता है, गेहूँ, जौ, बाजरा आदि फसलों तथा पेड़ पौधों के लिए विशेषकर गुणकारी होता है, किन्तु भूमि की सतह पर या भूमि में पैदा होने वाले कन्द तरकारियों (जैसे—गाजर, मूली, अरबी, पालक, चौलाई, आलू, फूलगोभी, पत्तागोभी, गाँठगोभी आदि) के लिए गुणकारी नहीं है।

फल तथा तरकारी तोड़ने वाले तथा इकट्ठा करने वाले दोनों ही किसी रोग तथा छूत की बीमारी से ग्रस्त नहीं होने चाहिए। वह स्थान जहाँ फल इकट्ठे किये जाते है साफ एव शुद्ध होना चाहिए। यदि उन्हें खेत में ही एकत्र किया जाये तो उस स्थान की ऊपरी मिट्टी हटा देनी चाहिए, या उन्हें साफ टोकरियो मे भरना चाहिए। इस प्रकार फल तथा तरकारियों को शुद्ध वातावरण व स्वच्छ स्थान पर रखा जाये तो वे कुछ अधिक समय तक सड़ने-गलने से बच सकते हैं। मटका, पेटी आदि को 0·25 प्रतिशत कैल्शियम हाइपोक्लोराइड के घोल (Calcium Hypochloride Solution) से धोया जाये या दो मिनिट तक इनका भापोपचार (Steam Treatment) किया जाये तो इन्हे सूक्ष्मजीवियो से बचाया जा सकता है। विकसित देशों मे तो 85 प्रतिशत कार्बन-डाई-ऑक्साइड (Carbon-di-Oxide) तथा 15 प्रतिशत इथायलीन (Ethylene) के मिश्रण से धूमीकरण (Fumigation) करके ही इन्हें काम मे लिया जाता है।

आजकल किसान फल तथा तरकारी उत्पादन के समय आमतौर पर पौध संरक्षण (Plant Protection) के लिए कई औषधियो का प्रयोग करते हैं। अत: फलों एवं तरकारियों पर इन रासायनिकों का अंश पाया जाना सम्भव है। साथ ही धूल तथा कई प्रकार के सूक्ष्मजीव भी उस पर लग जाते हैं। इसलिए फल तथा तरकारियों को तोड़ते ही धोकर साफ करना चाहिए। यह क्रिया दो प्रकार से फल-तरकारियों को अधिक समय तक सुरक्षित रखने में सहयोग करती है। (1) फल-तरकारियों की गर्मी को कम करके (2) गन्दगी तथा सूक्ष्मजीवियों को दूर करके। लेकिन ये सब बातें अस्थायी परिरक्षण मे ही आती हैं। स्थायी परिरक्षण हेतु भी उपयुक्त बातों का क्रियान्वयन करना अत्यावश्यक है। यानि कहने का अभिप्राय है, फल-तरकारियो पर सूक्ष्मजीवियों की संख्या कम से कम कर दी जाये, इसको ही अपूति कहते हैं।

(2) न्यूनतम परिरक्षण (Low Temperature Preservation)

यह बात हम भली-भाँति जानते हैं कि गर्मी मे खाद्य पदार्थ शीघ्र विकृत हो जाते हैं। सर्दियों में ऐसा नही होता, क्योंकि सर्दी मे तापमान कम होने से सूक्ष्मजीवियो का विकास रुक जाता है। उनके विकास के लिए एक निश्चित तापमान तथा आर्द्रता की आवश्यकता होती है। उन्हें 10° से० से अधिक ताप प्राप्त होने पर, वे खाद्य पदार्थों मे किण्वन (Fermentation) क्रिया उत्पन्न कर देते हैं, जिससे कि खाद्य पदार्थ खराब हो जाते हैं।

इस क्रिया की जानकारी हमारे पूर्वजों को भी भली प्रकार से थी, इसलिए वे खाद्य पदार्थों को गुणकारी पदार्थों के रूप मे बदल देते थे। जैसे—दूध से दही, मैदा से जलेबी आदि। इसके अलावा शीतप्रदेश के लोग खाद्य पदार्थों (माँस, मछली, फल, तरकारी) का परिरक्षण हिम कोठरियों मे रखकर करते थे। लेकिन आगे चलकर हमने प्रशीतियन्त्र (Refrigeration), शीतगोदाम (Cold Storage) आदि का आविष्कार किया, और उनमे आहार का संचयन करके परिरक्षण करने लगे। इस तरह के यन्त्रो मे साधारणतया 4° से 10° से० में ताप बनाया जा सकता है, ताकि परिरक्षण सम्भव हो सके। प्रशीतियन्त्र (रेफ्रिजिरेटरों) मे हिमकारी कक्ष (Freezing Chamber) भी होना है। इसके बारे मे विस्तार से आगे विचार किया जायेगा।

मछली, माँस, फल-तरकारी आदि का परिरक्षण करने के लिए करीब 350 से अधिक शीतगोदाम आज भारत में कार्यरत हैं। इनकी कार्यक्षमता साढ़े चार करोड़ मैट्रिक टन से अधिक है। इन गोदामों में अधिकतर आलू का संचयन होता है। करीब 10 प्रतिशत गोदामों में अन्य फल-तरकारियों का भी संचयन किया जाता है। शेष मछली-संचयन के लिए ही काम में लिये जाते हैं। *पिछले दो-तीन वर्षों से हिमाचल प्रदेश सरकार ने देश के* विभिन्न प्रान्तों में अपने शीतगोदामों का प्रबन्ध कर हिमाचल प्रदेश में उत्पादित सेब का संचयन करने का प्रबन्ध किया है।

(3) आर्द्रता अपवर्जन परिरक्षण (Preservation by Exclusion of Moisture)

सूक्ष्मजीवियों की बढ़ोत्तरी के लिए एक सीमित तापमान के साथ-साथ आर्द्रता या नमी की भी आवश्यकता होती है। यही कारण है कि सूखे फल तथा तरकारियों को खुला छोड़ने पर वातावरण से नमी पाकर वे फंफूदी ग्रस्त हो जाती हैं, क्योंकि सूखे फल तथा तरकारियाँ वायुमण्डल से नमी सोख लेती हैं, और उस नमी में उन पदार्थों में पाई जाने वाली शर्करा भी घुल जाती है, जिससे फंफूद आदि जीवाणु आसानी से बढ़ने लगते हैं। यह क्रिया परासरणी दबाव (Osmotic Pressure) द्वारा ही सम्भव होती है। इस शर्करा का घोल सूक्ष्मजीवों की बढ़ोतरी के लिए समुचित माध्यम बन जाता है। इसलिए सूखे खाद्य पदार्थों का भी साबुन की टिकियों की तरह मोम लगे कागजों में पैकिंग किया जाता है। अन्यथा इनके खराब होने की अधिक सम्भावना बनी रहती है और इसकी सम्भावना वर्षा के दिनों में अधिक रहती है। यही कारण है कि सूखे आलू (चिप्स), मटर, हलुवा आदि वायुरोधियों में पैक करके विदेशों में भेजे जाते हैं।

(4) आर्द्रता संरक्षण या मोमलेपन (Moisture Retension or Waxing)

गर्मियों में पौधों से अधिक वाष्पीकरण तो होता ही है। इसे रोकने के लिए कुछ पौधों में प्रकृति द्वारा स्वयमेव मोमलेपन किया होता है। वनस्पति वैज्ञानिकों ने भी उसे अपनाया। उद्यान-विशेषज्ञों ने फल तथा तरकारियों पर मोमलेपन करके सिद्ध कर दिया कि इस क्रिया से अस्थायी परिरक्षण सम्भव है, क्योंकि इस क्रिया द्वारा असंसाधित माल (फल तरकारी) की भीतरी नमी ज्यों की त्यों रोकी जा सकती है। इस क्रिया द्वारा कच्चे फल तथा तरकारी शीघ्र नहीं मुरझाते। इसके अतिरिक्त परिरक्षित फल तथा तरकारियों को मोमलेपित कागजों में लपेटकर रखने से वे और भी सुरक्षित हो जाते हैं, क्योंकि न तो वे सूखते हैं और न ही सूक्ष्मजीव लग पाते हैं।

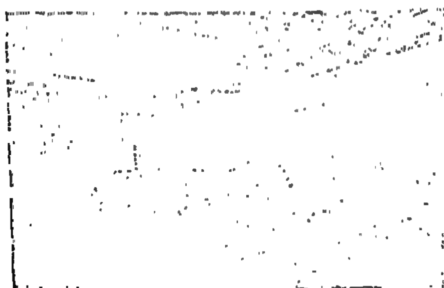
यहाँ मोमलेपन क्रिया केवल फल तथा तरकारियों के असंसाधित माल पर ही केन्द्रित करना चाहेंगे, क्योंकि इस क्रिया से वे अधिक दिनों तक रूप बदले बिना उपभोक्ताओं को प्राप्त हो सकते हैं। प्रायः यह भी देखा गया कि मोमलेपन क्रिया भी फल तथा तरकारियों पर लगे हुए सूक्ष्मजीवियों को नष्ट नहीं करती, बल्कि इस क्रिया के अपनाये जाने पर भी सूक्ष्मजीवी तथा तरकारियों पर आक्रमण करते रहे। इससे बचने के लिए वैज्ञानिकों ने मोम के साथ फफूँदी नाशक (Fungicide) औषधियों का भी प्रयोग किया, जिससे कि ऐसे खाद्य पदार्थ सूक्ष्मजीवियों से सुरक्षित रह सकें।

मोमलेपन में मोम के साथ उचित अनुपात में सूक्ष्मजीवी-नाशक दवा मिलाकर तैयार की जाती है जो पायसीकरण या इमलसीकरण द्वारा सम्पन्न करते हैं।

इस प्रकार तैयार किये हुए मोम मिश्रण में फल तथा तरकारियों को एक-एक करके डुबोया जाता है या इस मिश्रण को फल-तरकारियों पर छिड़का जाता है। इसके लिए यन्त्र काम में लिये जाते हैं। लेकिन अब तक मोमलेपन का प्रयोग इने-गिने फल-तरकारियों पर ही किया गया है। यह भी देखा गया है कि मोमलेपन मोटाई मे किया जाय तो अवायु-जीवों या अनाक्सीय जीवों (Anaerobe) की बढोतरी के लिए सहायक तथा पतला मोमलेपन उसमे आवश्यकतानुसार आर्द्रता का सरक्षण करने मे सुविधा पैदा कर देता है। अतः वर्तमान समय में भी व्यापारिक क्षेत्र मे इस क्रिया को प्राथमिकता प्रदान नही की गई है।

मोमलेपन सर्वप्रथम नीबूवर्गीय फलों मे किया गया। इसके बाद शलजम पर भी परिरक्षण किया गया। अमेरिका में तो नीबूवर्गीय फलों मे, कुकुम्बर आदि मे मोमलेपन करना व्यापारिक क्षेत्र मे भी प्रचलित हो चुका है। हरे टमाटर, सेव, शकरकन्द, आदि मे भी मोमलेपन क्रिया का उपयोग प्रारम्भ कर दिया है।

भारत मे केला, आम, सन्तरा, टमाटर आदि में मोमलेपन अनुसन्धान के रूप मे किया गया है, और परिणाम भी श्लाघनीय रहा है। ऐसी भी सूचना मिली है कि अलफोन्सा आमो मे मोमलेपन करके गोदामों मे कई दिनो तक रखा जा सकता है। यह विधि भी ऊष्मारहित परिरक्षण के अन्तर्गत आती है जिस पर विस्तार से आगे विचार किया जायेगा।



चित्र 2
व्यवसाय स्तर पर मोमलेपन की प्रक्रिया

(5) वायु अपवर्जन क्रिया से (By Exclusion of Air)

कुछ खाद्य पदार्थ वायु के सम्पर्क में आने से स्वतः ही खराब हो जाते हैं। चाहे वह पदार्थ आर्द्रता-अपवर्जित ही क्यो न हो। विभिन्न तेल, घृत, मक्खन आदि वायु के सम्पर्क से विकृतगंधी (Rancidity) हो जाते हैं, किन्तु केनीकृत या डिब्बाबन्दी (Canned) कि

हुए तेल, घी आदि विकृतगंधी नही होते हैं। क्योंकि वे वायुरोधी डिब्बों में बन्द कर रखने से कई दिनो तक विकृतगंधी होने से बचाये जा सकते है। इसी प्रकार मदीरा, आचार, सूखे तथा निर्जलीकृत (Dehydrated) उत्पादों को भी वायु से वंचित रखा जाये, तो वे खराब नही होंगे।

(6) मृदु प्रतिरोधियों द्वारा (By Mild Antiseptics)

ऐसे रसायन, जिनका प्रयोग न्यूनमात्रा में करने से मानव शरीर को हानि नहीं पहुँचती, तथा कुछ खाद्य-पदार्थ जो कि मानव शरीर की वृद्धि के लिए अनिवार्य हैं, जैसे—शर्करा, तेल, लवण आदि, उपयुक्त रसायन तथा खाद्य-पदार्थ जो कि सूक्ष्मजीवों की बढ़ोतरी को रोकते हैं या उनका नाश करते हैं, मृदुप्रतिरोधी कहलाते है।

जिस प्रकार डिटोल नये घावों पर काम करता है-उसी प्रकार प्रतिरोधी रसायन खाद्यों में कार्य करते हैं। इसमे सोडियम बेन्जोयेट तथा सल्फर डाई ऑक्साइड (Sodium Benzoate & sulphur di-oxide) आदि रसायन भी आते हैं। शर्करा, लवण, विभिन्न खाद्य तेल, सिरका आदि खाद्य-पदार्थ इसी श्रेणी मे आते हैं। फलो के विभिन्न पेयों मे शर्करा तथा परिरक्षक मिलाना, अलग-अलग अचारों मे लवण, तेल, सिरका आदि मे से एक या एक से अधिक मिलाना, उनके परिरक्षण के लिए ही किया जाता है।

इस प्रकार के परिरक्षण को ऊष्मारहित (Non heat or Low Temperature) परिरक्षण कहा जाता है। इस विधि के बारे मे विस्तार से आगे प्रकाश डाला जायेगा।

(7) पास्तुरीकरण (Pasturization)

प्राय: यह देखा गया है कि अगर खाद्य-पदार्थों को 60° से 80° से० (140° से 176° एफ) तक ताप प्रदान किया जाये तो उनमे प्रविष्ट सूक्ष्मजीव या तो नष्ट हो जायेंगे या निष्क्रिय (Inactive) हो जायेंगे, जिससे खाद्य-पदार्थों के गुणों में कोई परिवर्तन नहीं होगा। इसी क्रिया को पास्तुरीकरण कहा जाता है। पास्तुरीकरण के बारे मे हम पहले भी अध्ययन कर चुके हैं।

बड़े नगरों में दूध-वितरण इस क्रिया द्वारा ही किया जाता है। आज-कल फल तथा तरकारियों के सूप पास्तुरीकरण करके ही बाजारों में भेजे जाते हैं। दूध तथा तरकारी के रस जो पास्तुरीकृत हैं, वे तो अस्थायी परिरक्षण में ही आते हैं क्योंकि वे अम्लरहित पेयों की श्रेणी में हैं। लेकिन अम्लीय खाद्य-पेय पास्तुरीकरण करने पर स्थायी परिरक्षण के अन्तर्गत आते हैं।

(2) स्थायी परिरक्षण (Permanent Preservation)

असंसाधित या संसाधित (Raw or Processed) खाद्य-पदार्थों को अधिक दिनो तक सुरक्षित रखने के लिए हम जो तकनीक प्रयोग मे लाते हैं, उसे ही स्थायी परिरक्षण कहा जाता है। इस विधि द्वारा खाद्य-पदार्थों में प्रविष्ट सूक्ष्मजीवों को पूर्णतया नष्ट या निष्क्रिय बनाया जा सकता है, साथ ही सूक्ष्मजीवों का पुनर्प्रवेश भी प्रतिरोधक द्वारा रोका जा सकता है। अत: खाद्यों में सूक्ष्मजीवों तथा उनके किण्वकों (एन्जाइम) की क्रिया पुन: नहीं हो पाती है। इस कारण ही खाद्य पदार्थ बहुत दिनों तक खराब हुए बिना परिरक्षित रहते हैं।

स्थायी परिरक्षण की विधियों को 8 (आठ) श्रेणियो मे वर्गीकृत किया जा सकता है, जो अग्रांकित प्रकार से हैं—

परिरक्षण के नियम

स्थायी परिरक्षण (Permanent Preservation)

- ऊष्मा प्रयोग विधि (By heat)
  - सुखाने की विधि (By Drying)
    - धूप मे सुखाने की विधि (Sun Drying)
    - निर्जलीकरण विधि (Dehydration)
  - निर्जर्मीकरण विधि (By Sterilization)
  - ऊष्मा संसाधन विधि (By Heat Processing)
- ऊष्मा-रहित प्रयोग विधि (By Non-heat)
  - प्रतिरोधी विधि (By Antiseptics) उदा: फल पेय परिरक्षण
  - किण्वन क्रिया विधि (By Fermentation) उदा: मदिरा, सिरका
  - प्रशीतन तथा हिमीकरण विधि (By Refrigeration and Freezing)
  - अणुवीकरण विधि (By Radiation)

ऊष्मा परिरक्षण (Heat Preservation)

हम जानते हैं कि खाद्य पदार्थों मे पाये जाने वाले सूक्ष्मजीवों तथा उनके किण्वकों (एन्जाइम) को ताप द्वारा नष्ट किया जा सकता है। प्रायः सभी सूक्ष्मजीव 65^0 से० (149^0 एफ) तापमान पर नष्ट हो जाते हैं तथा उनके बीजाणु (Spore) 115^0 से० (239^{0}एफ) से अधिक ताप के प्रयोग से ही नष्ट हो पाते हैं। ऊष्मा प्रयोग विधि को हम तीन भागों मे विभाजित कर सकते हैं :—

1. सुखाना (Drying)

इस विधि द्वारा फल तथा तरकारियों के जल को बाहर निकाल दिया जाता है जिससे सूक्ष्मजीव नष्ट या निष्क्रिय हो जाते हैं। साथ ही सूक्ष्मजीवियों के किण्वको का भी निष्क्रिय हो जाना स्वाभाविक है। सुखाने से उनका पुनः प्रवेश भी अवरुद्ध हो जाता है। इस क्रिया को दो विधियों द्वारा क्रियान्वित किया जा सकता है :—

(क) धूप मे सुखाना तथा (ख) निर्जलीकरण करना।

(क) धूप में सुखाना (Sun Drying)

खाद्य-पदार्थों को धूप मे सुखाने की विधि उतनी ही पुरानी है, जितनी कि मानव संस्कृति। इसके अलावा यह क्रिया परिश्रम तथा खर्च-रहित भी है। जो हमारे घरो में आदिकाल से शाक-सब्जियों तथा फलो को सुखाने में अपनाई जाती रही है। आलू, कैरी, आम, केला, मछली आदि आवश्यकतानुसार सुखाये जाते रहे हैं। इन सूखे खाद्यों को आवश्यकता के समय काम में भी लिया जाता रहा है। यदि इन्हें मोमलेपित कागजों मे या वायुरोधी डिब्बो मे बन्द कर रखा जाय तो बहुत दिनों तक खराब हुए बिना प्रयोग मे लाये जा सकते हैं।

(ख) निर्जलीकरण (Dehydration)

फल तथा तरकारियों को अंगीठी, स्टोव, बिजली की अंगीठी आदि की सहायता से

बन्द वातावरण में एक निश्चित तापमान पर रखकर सुखाने की विधि को निर्जलीकरण कहते हैं। इस विधि में काम आने वाले यन्त्रों को निर्जलीकरण यन्त्र (Dehydrater) कहते हैं। इस यन्त्र मे सुखाये गये फल तथा तरकारी धूप मे सुखाये गये पदार्थों की अपेक्षा अधिक सुन्दर स्वरूप वाले तथा स्वादिष्ट होते हैं क्योंकि इस यन्त्र द्वारा फल तथा तरकारियों को सुखाने के लिए उनकी आवश्यकता के अनुसार ताप प्रदान किया जा सकता है तथा जितना जल उसमें से विसर्जित करना चाहें उतना ही नियन्त्रित रूप से निकाल भी सकते हैं। धूप में सुखाये गये तथा निर्जलीकृत खाद्यों मे करीब 70 प्रतिशत शुष्क पदार्थ *(Dry matter)* पाये जाते हैं। जिस खाद्य पदार्थ में शर्करा की मात्रा कम होगी उसमें से जल की मात्रा अधिक विसर्जित की जा सकती है। मगर अधिक शर्करा वाले पदार्थों में से उतनी मात्रा में जल विसर्जन सम्भव नहीं है। यही तथ्य अम्लीय खाद्य-पदार्थों के लिए उपयुक्त ठहरता है।

ऊष्मा निर्जर्मीकरण (Heat Sterilization)

ऊष्मा निर्जर्मीकरण क्रिया सभी खाद्य पदार्थों मे एक सी नहीं की जाती है, बल्कि उसकी प्रकृति के अनुसार ही सम्भव होती है। इस क्रिया द्वारा वस्तुओं में पाये जाने वाले सूक्ष्मजीव पूर्णतया नष्ट हो जाते हैं। अस्पतालों में काम आने वाले औजारो, कपड़ों आदि को ऑटो क्लेव (Autoclave) मे रखकर अधिक ताप प्रयोग से निर्जर्मीकरण किया जाता है। अस्पताल तथा प्रयोगशालाओं के कमरों को *अल्ट्रावायलट (Ultra voilet Ray)* रश्मियों द्वारा निर्जर्मीकरण किया जाता है। मगर डॉक्टर, प्रयोगशास्त्री अपने हाथों को स्प्रिट से धोकर निर्जर्मीकरण करते हैं। उद्देश्य सबका एक ही है, अर्थात् निश्चित स्थान को सूक्ष्मजीवियों से रहित, निर्जर्मीकृत, बनाना। जैसे कि पहले कहा जा चुका है कि खाद्य-पदार्थों में, विशेषकर फल तथा तरकारियो में, सूक्ष्मजीव आरम्भ से ही विद्यमान रहते हैं। यदि इन सूक्ष्मजीवों को मौके पर नष्ट या निष्क्रिय नहीं किया जाये तो वे खाद्य पदार्थों को खराब कर देंगे, साथ ही उसके उपभोक्ताओं के स्वास्थ्य के लिए भी हानिकारक हो सकते हैं।

फल तथा तरकारियों को तैयार कर डिब्बों मे या बोतलों में भर दिया जाता है और उन्हें प्रेशर-कूकर (Pressure Cookers) में सजाकर 100^0 से० (212^0 एफ) या इससे अधिक तापोपचार करके उनमें पाये जाने वाले सूक्ष्मजीवो को नष्ट किया जा सकता है। कारखानों में काम आने वाले प्रेशर-कूकर को रिटोर्ट (Retort) के नाम से पुकारते हैं। प्रेशर-कूकर से बड़े आकार के यह रिटोर्ट भाप से चलते हैं।

ऊष्मा संसाधन (Heat Processing)

खाद्य-पदार्थों में विशेषकर फल तथा तरकारियो का अगर निर्जर्मीकरण किया जाय तो उनके वर्ण और स्वाद बदल जायेंगे तथा पोषक तत्वो मे भी कमी हो जायेगी। परन्तु व्यापारिक क्षेत्र में केनीकरण (डिब्बा बन्दी), बोतलीकरण (Bottling) आदि विधियों द्वारा इनका निर्जर्मीकरण किया जाता है, जिससे उपर्युक्त कमियाँ दूर हो जाती है, क्योंकि इस विधि द्वारा जो तापोपचार किया जाता है वह वाहिका के अन्दर रखे हुए खाद्यो पर उतना प्रभाव नहीं डालता जितना कि वाहिका-रहित अवस्था मे डालता है। इसके अलावा, खाद्य-पदार्थों में ऑक्सीजन का अभाव भी रहता है तथा कम पी. एच. (PH) व ताप मान मे भी रहता है। इन्ही कारणो से सूक्ष्मजीव पूर्णतया नष्ट या निष्क्रिय हो जाते हैं। केन के अन्दर रखे हुए आहार मे उतना ताप नहीं पहुँचता जितना ताप बिना केन के आहार मे

पहुँचता है। कहने का तात्पर्य यह है कि अगर हम एक किलो के खाद्य डिब्बे के अन्दर भरके रिटोर्ट मे रखें तथा दूसरा एक किलो पैंकिंग विना रिटोर्ट मे रखें, दोनों को एक साथ बराबर शक्ति का तापोपचार दिया जाय तो बिना वाहिका के आहार का निर्जर्मीकरण तो हो जायेगा किन्तु उसके रूप-रंग में ही नही अपितु पोषक गुण में भी कमी आ जायेगी। लेकिन केन में रखे हुए खाद्य-पदार्थ इन दोषों से रहित रहेंगे। इसलिए यह विधि पास्तुरीकरण और निर्जर्मीकरण दोनों का मध्यवर्ती वातावरण स्थापित करती है। इसलिए इस विधि को ऊष्मा ससाधन (Heat Processing) अथवा व्यावसायिक निर्जर्मीकरण (Commercial Sterilization) आदि नामों से भी पुकारा जाता है।

प्रत्येक असंसाधित माल मे संघटन तथा स्वभाव की विभिन्नता के अनुसार उसके निर्जर्मीकरण के लिए आवश्यक तापमान की मात्रा मे भी भेद आ जाता है। जिस वस्तु में अम्लता कम होगी और प्रोटीन की मात्रा अधिक होगी, उस वस्तु के उत्पादो को निर्जर्मीकरण करना उतना आसान काम नही, जितना कि प्रोटीन की कम मात्रा तथा अम्लता की अधिकता वाले खाद्य-पदार्थों का निर्जर्मीकरण करना।

इस विषय पर विस्तार से आगे प्रकाश डाला जायेगा।

(2) ऊष्मा रहित प्रयोग या न्यून ताप प्रयोग
(By Non-heat or Low Temperature)

इस प्रयोग में सूक्ष्मजीवों का नाश नही होता, मगर उनके बाह्य किण्वक (एक्सो एन्जाइम) निष्क्रिय हो जाते हैं। साथ ही वायु-मण्डल मे पाये जाने वाले सूक्ष्मजीवो का प्रवेश भी नही हो पाता। प्रायः खाद्य-पदार्थों में एक या एक से अधिक परिरक्षक रसायन भी मिलाये जाते हैं, जिससे सूक्ष्म जीव अपनी क्रिया से वंचित हो जाते हैं अतः ऊष्मा प्रयोग के बिना ही खाद्य-पदार्थों का परिरक्षण सम्भव हो जाता है। इस विधि का एक-एक कर अध्ययन करेंगे।

प्रतिरोधी वस्तुओं द्वारा (By Antiseptics)

इस विषय पर पहले भी प्रकाश डाला जा चुका है कि प्रतिरोधी दो प्रकार के होते हैं—

(1) रासायनिक तथा (2) खाद्य वस्तु।

रासायनिक प्रतिरोधी भी दो प्रकार के हैं—(i) सरकार द्वारा जिनके प्रयोग का निषेध है।

(ii) सरकार द्वारा मान्यता प्राप्त।

रासायनिक प्रतिरोधियों के पहले वर्ग के अन्तर्गत सलिसिलिक अम्ल (Salicylic Acid); फार्मल्डिहाइड (Formaldehyde) आदि आते हैं। दूसरे वर्ग में 1955 के फूड प्रोडेक्ट आर्डर के अन्तर्गत पोटेशियम-मैटा बाई सल्फाइट (Potassium meta Sulphite or $K_2O_25O_2$), सोडियम बनजोयेट (Sodium Benzoate) आदि मान्यता प्राप्त रासायनिक है, लेकिन उपर्युक्त रसायनों मे प्रयोग की मात्रा उनकी वाहिकाओं के ऊपर लेवलो पर अंकित होना आवश्यक है। इस प्रकार कार्बन-डाइ-ऑक्साइड (Carbon dioxide) भी परिरक्षण रसायन के रूप मे विभिन्न फल-पेयो मे तथा पेय-जलों में भरा जाता है। कार्बनडाई ऑक्साइड मिलाये गये पेय पदार्थो को कार्बनीकृत पेय (Carbonated Beverages) के नाम से पुकारा जाता है। यह पेय साधारणतया बाजारों में प्राप्त होते हैं।

सोडा वाटर (Soda Water) इसका ज्वलन्त उदाहरण है जो शुद्ध पेय जल में कार्बन-डाई ऑक्साइड के साथ बोतलों में भरा हुआ होता है।

उपर्युक्त रासायनिक, पेय पदार्थों में इसलिए मिलाये जाते हैं कि उनमे पाये जाने वाले सूक्ष्मजीवो को निष्क्रिय किया जा सके या उनके पुनः प्रवेश पर अवरोध लगाया जा सके। उपर्युक्त रसायन खाद्य पदार्थों मे सूक्ष्मजीवों के लिए विष (Poison) के रूप मे कार्य करते हैं, साथ ही खाद्य-पदार्थों का परिरक्षण भी सम्पन्न होता है।

खाद्य वस्तुओं द्वारा प्रतिरोध

शर्करा द्वारा (By Sugar)

करीब 60 प्रतिशत शर्करा खाद्य तथा पेय पदार्थों मे मिलाई जाये तो वे परिरक्षित हो जायेंगे, क्योकि सूक्ष्मजीव तथा उसके किण्वक परासरण (Osmosis) क्रिया द्वारा 60 प्रतिशत शर्करा की मात्रा में निष्क्रिय हो जाते हैं। वहाँ जल स्वतन्त्र रूप से नहीं पाया जायेगा। सूक्ष्मजीवों की बढोतरी के लिए स्वतन्त्र जल का होना अनिवार्य है। विभिन्न फलो के जैम (Jam), जेली (Jelly), मार्मलेट (Marmalede) क्रिस्टलीकृत फल (Crystalised Fruit), मुरब्बा (Preserve), फलमिश्री (Fruit Candy) इत्यादि उपर्युक्त नियमों के आधार पर ही बनाये जाते हैं।

लवण द्वारा परिरक्षण (By Salt [Common])

शर्करा परासरण द्वारा खाद्य-पदार्थों के परिरक्षण के अतिरिक्त लवण भी खाद्य-पदार्थों का परिरक्षण करता है। लवण, परासरण क्रिया के अलावा एक विष के रूप में भी सूक्ष्मजीवो पर प्रभाव डालकर खाद्य पदार्थों का परिरक्षण करता है। इसलिए 15 से 20 प्रतिशत लवण की ही जरूरत पड़ती है। अचार का परिरक्षण भी इसी नियम पर ही आधारित है। यहाँ लवण का तात्पर्य खाने योग्य नमक से है।

तेलों द्वारा परिरक्षण (By Oils)

सभी तेल स्नेहाम्लवर्ग (Fatty Acid) मे आते हैं। यह भी सूक्ष्मजीवो का एक प्रतिरोधक है। शरीर के नव घाव पर तुरन्त तेल लगाते हुए आपने देखा ही होगा। तेल घाव पर इसलिए लगाया जाता है कि उस पर आक्रमण करने वाले रोगाणुओं का नाश हो, साथ ही उनका पुनः प्रवेश भी सम्भव न हो सके। इस प्रकार खाद्य पदार्थों मे तेल मिलाये जाने से उनमे सूक्ष्मजीव शुष्कताप (Dry Heat) से नष्ट हो जाते हैं और उनका पुनः प्रवेश भी रुक जाता है। लेकिन खाद्य पदार्थों को भली प्रकार से बन्द करके शुष्क तथा शीतल स्थानो पर रखना भी आवश्यक है। करीब-करीब सभी तेल फफूंद निरोधक (Mould inhibitions) भी होते हैं। अचार मे तो तेल, लवण तथा अन्य मसाले आदि मिलाने से वह और परिरक्षित हो जाता है। लेकिन कुछ वैज्ञानिको का मत है कि मसालो में परिरक्षण शक्ति नही होती, लेकिन राई, लौंग आदि मे परिरक्षण शक्ति पाई जाती है। अनुसन्धानकर्त्ताओं की ओर से अभी तक इसकी पुष्टि नही की गई है।

सिरका या चुक्र द्वारा परिरक्षण (By Vinegar)

सिरका भी स्नेहाम्ल वर्ग का एक सूक्ष्मजीव-प्रतिरोधक है, क्योकि सिरके में ऐसिटिक अम्ल (Acitic acid) पाया जाता है। यह अम्ल भी फफूंद रोधक है। अगर खाद्य पदार्थों मे 2 से 3 प्रतिशत तक ऐसिटिक अम्ल मिलाया जावे तो परिरक्षण सम्भव किया जा सकता है और यह सिरके के अचार के नाम से जाना जाता है तथा ये वस्तुएँ लम्बे समय तक बिना विकार के परिरक्षित हो जाती हैं।

किण्वनीकरण द्वारा परिरक्षण (By Fermentation)

सूक्ष्मजीव तथा किण्वकी की प्रतिक्रिया से कार्बोहाइड्रेट का संपघटन (Decomposition) अर्थात् संयुक्त पदार्थों का विघटन हो जाता है। इस क्रिया को ही किण्वन क्रिया कहा जाता है। वास्तव में देखा जाय तो किण्वन क्रिया का मूलभूत आधार किण्वक (एनजाइम) ही है। जिस पर विस्तारपूर्वक आगे प्रकाश डाला जायेगा।

कुछ सूक्ष्मजीव खाद्य पदार्थों को खराब करते हैं, जबकि कुछ सूक्ष्मजीव खाद्य पदार्थों का रूप बदलकर उनको उपभोग योग्य बना देते है। इस प्रकार के खाद्यों की सुगन्धी और गुण में भी अन्तर आ जाता है, जैसे—दूध से दही, अंगूर के रस से मदिरा, मदिरा से सिरका आदि।

खाद्य पदार्थों में शर्करा, मंड या स्टार्च आदि कार्बोहाइड्रेट्स पाये जाते हैं। जीवाणुओं द्वारा किण्वन क्रिया होती है तो उसको जीवाणु विघटन (Bacterial Decomposition) और सूक्ष्मजीवों द्वारा अगर किण्वन क्रिया सम्भव होती है तो उसको सूक्ष्मजीव किण्वन क्रिया (Microbial Fermentation) कहते हैं। यह क्रिया तीन प्रकार से सम्भव हो सकती है।

(1) मदिरा किण्वन (Wine or Alcoholic Fermentation)
(2) सिरका किण्वन (Vinegar Fermentation)
(3) लैक्टिक अम्ल किण्वन (Lactic Acid Fermentation)

(1) मदिरा किण्वन (Wine Fermentation)

वनस्पति-मंड, शर्करा आदि में निम्न परिस्थितियों में प्रकिण्वकों या खमीरों (Yeast) को प्रवेश कराया जाता है, ताकि उनमें किण्वन क्रिया सम्भव हो सके। इसी को मदिरा किण्वन के नाम से पुकारा जाता है, इसके लिए 25° से० (77° एफ) ताप की आवश्यकता पड़ती है। साथ ही निश्चित मात्रा में ऑक्सीजन भी पहुँचाई जाती है, जिससे उस वस्तु में मद्यसार (Alcohol) उत्पन्न होता है। जब 18 प्रतिशत मद्यसार (एल्काहोल) उसमें पैदा हो जाता है, तब प्रकिण्वन अर्थात खमीर अपना काम रोक देते हैं। क्योंकि इस अवस्था पर वे क्रियाहीन हो जाते हैं। इसी विधि द्वारा मदिरा तैयार की जाती है। इस पर विशेष अध्ययन आगे किया जायेगा।

(2) सिरका या एसिटिक किण्वन (Vinegar Fermentation)

मदिरा बन जाने पर अगर उसमें निम्न परिस्थितियों में सिरका जीवाणुओं का प्रवेश कराया जाय तो मद्यसार, सिरके के रूप में बदल जायेगा। इस सिरका में 5 से 7% तक एसिटिक अम्ल (Acetic Acid) पाया जायेगा। एसिटिक अम्ल सूक्ष्मजीव-नाशी है। इसी कारण से इसको परिरक्षक के रूप में काम में लिया जाता है। बाजारों में दो विभिन्न प्रकार के सिरके (विनिगर) प्राप्त होते हैं। (1) फल तथा तरकारियों से तथा (2) कृत्रिम। व्यापारिक क्षेत्र में उत्पन्न एसिटिक अम्ल (Acetic Acid) 5 से 7 प्रतिशत पानी में मिला कर तैयार किया जाता है। ग्लेसियल एसिटिक अम्ल का निर्माण फलों से प्राप्त एसिटिक अम्ल से सस्ता होता है। इसलिए इसी प्रकार कृत्रिम रूप से बनाये गये, एसिटिक अम्ल का घोल को कृत्रिम सिरका कहते हैं। बोतलों के ऊपर अंग्रेजी में लेबल पर "सिंथेटिक विनिगर" (Synthetic Vinegar) लिखा हुआ होता है। आम जनता इसे विनिगर के नाम से खरीद लेती है।

(3) लैक्टिक अम्ल किण्वन (Lactic Acid Fermentation)

कार्बोहाईड्रेट में लेक्टिक जीवाणुओं (Lactic Becteria) की क्रिया से लेक्टिक अम्ल बनाया जाता है तथा उसके जीवाणुओं को दूधिया जीवाणु भी कहते हैं।

कुछ अचार इसी विधि पर आधारित हैं। लेकिन इन अचारों या खाद्य पदार्थों को वायु सम्पर्क रहित अवस्था में सुरक्षित रखना पड़ता है, अन्यथा वायु सम्पर्क के कारण लेक्टिक अम्ल का नाश हो जाता है। फलस्वरूप खाद्य पदार्थ खराब हो जाते हैं।

परिरक्षक के रूप में प्रतिजैविकी (Antibiotic as Preservative)

कुछ सूक्ष्मजीवों के उपापचयी (Metabolic) उत्पादों में जीवाणु-नाशक शक्ति (Germicidal) होती है। इसी को हम प्रतिजैविकी के नाम से पुकारते हैं। इस प्रकार के भिन्न-भिन्न प्रतिजैविक रोगी के रोग निदान हेतु प्रयोग में लाये जाते हैं। इसके साथ ही खाद्य वैज्ञानिकों ने यह भी देखा कि खाद्यान्नों का प्रतिजैविक द्वारा परिरक्षण किया जा सकता है, मगर एलोपैथिक चिकित्सकों का मत है कि इस प्रकार परिरक्षित खाद्य पदार्थों के प्रयोग से अगर उपभोक्ता भविष्य में रोगग्रस्त हो जायें तो प्रतिजैविकों द्वारा उसे रोगमुक्त कराना असम्भव होगा, क्योंकि प्रतिजैविक उपभोक्ता के शरीर में मेल खा जाते हैं। इस विषय में कुछ खाद्य वैज्ञानिकों का अपना मत है। उनके मतानुसार प्रतिजैविक अन्ननालों द्वारा ही शरीर में प्रवेश करते हैं। अतः वे पाचन के साथ मिल जाने से निष्क्रिय हो जाते हैं तथा अवशिष्ट मलमूत्र आदि के द्वारा शरीर से विसर्जित कर दिये जाते हैं। इसलिए शरीर में इनका कोई असर नहीं होता। अतः इन्हें परिरक्षक के रूप में काम में लिया जा सकता है। टाईफाइड आदि रोगों का प्रतिजैविकों द्वारा इलाज भी किया जाता है। (प्रश्न उठता है कि इससे भी रोगी शरीर प्रतिजैविकों से मेल खा जायेगा फलस्वरूप भविष्य में प्रतिजैविकों द्वारा उस व्यक्ति का पुनः इलाज करना असम्भव नहीं हो जायेगा ?) तथापि उनका यह प्रयोग-अनुसन्धान के रूप में आज भी प्रचलित है। हो सकता है कि आने वाली पीढ़ियों को इन अनुसन्धानों द्वारा लाभ हो सके।

हिमीकरण परिरक्षण (By Freezing)

संसाधित तथा असंसाधित खाद्य पदार्थों के जलांश को, हिमीकारी (Freezer) यन्त्रों द्वारा हिमतुल्य बनाकर रेफ्रिजिरेटरों में रखा जाये तो अधिक काल तक उनका परिरक्षण सम्भव है। इस विधि को ही हिमीकरण (Freezing) कहते हैं। फल तथा तरकारियों में प्रायः 60 से 70 प्रतिशत जल की मात्रा होती है। शेष जैव तथा अजैव पदार्थ होते हैं। इस पदार्थ का कुछ भाग जल में तथा कुछ परमाणु के रूप में रहता है। फल तथा तरकारियों में पाया जाने वाला जल जल्दी हिमीकृत हो जाता है। उत्पादों को उचित रूप में बन्द करके—32° से (0° एफ) में रखा जाना चाहिये। न्यून ताप से रसायन-क्रिया या सूक्ष्मजीवों की वृद्धि नहीं होती। हिमीकरण-परिरक्षण इसी नियम पर आधारित है, मगर इस प्रकार के उत्पादों को निर्जर्मीकृत उत्पाद नहीं समझना चाहिए क्योंकि इसमें सूक्ष्मजीव नष्ट नहीं होते हैं। हिमीकृत उत्पाद निर्हिमीकरण (Thawing) करते समय उसमें उपस्थित निष्क्रिय सूक्ष्मजीव, पूर्व हिमीकरण अवस्था से भी अधिक तेजी से वृद्धि करते हैं। अतः निर्हिमीकरण होते ही शीघ्रातिशीघ्र उसका उपभोग कर लेना चाहिये अन्यथा सूक्ष्म-जीवों की संख्या अधिक हो जायेगी जिससे कि खाने वाले रोगग्रस्त हो जाएँगे। कुछ हरी

सब्जियों को छोड़कर अन्य खाद्य पदार्थों का उसके असंसाधित रूप में ही हिमीकरण किया जाता है।

अमेरिका में हिमीकरण परिरक्षण का इतिहास 47 वर्ष पुराना है। वहाँ अनुसन्धान द्वारा कई उपलब्धियाँ प्राप्त की जा चुकी हैं। वहाँ परिरक्षण के प्रचार के लिए प्रोत्साहन भी अधिकाधिक मिला है, मगर परिरक्षण-व्यवसाय भारतवर्ष मे अभी बाल्यावस्था में ही चल रहा है। यह सर्वविदित है कि भारतवर्ष का अधिकांश भू-भाग उष्म मेखला प्रदेश में है, जहाँ हिमीकरण तथा शीतगोदामीकरण आदि का खर्चा अधिक होता है। फिर भी पिछले 26 वर्षों से भारत मे मत्स्यहिमीकरण चलते आ रहे हैं। आज यहाँ 500 टन से भी अधिक मछलियो के हिमीकरण करने योग्य यन्त्र कार्यरत है। फल तथा तरकारी हिमीकरण पर अनुसन्धान कुछ वर्षो से केन्द्रीय खाद्य प्रौद्योगिक अनुसन्धान शाला, मैसूर मे चल रहा है। इस पर विस्तार से आगे प्रकाश डाला जायेगा।

विकिरण परिरक्षण (By Radiation)

परमाणु ऊर्जा (Atomic Energy) को विनाश के स्थान पर रचनात्मक कार्यों के लिए उपयोग मे लाया जा सकता है। अणु-विकिरण परिरक्षण इन्ही सद्‌विचारो की देन है।

यदि न्यूनतम परिरक्षण (शीतलीकरण-हिमकरणादि) निर्जलीकरण, सान्द्रीकरण (Concentration), फेनीकरण या डिब्बा बन्दी आदि परिरक्षण विधियो का तुलनात्मक अध्ययन किया जाये तो अणु-विकिरण परिरक्षण अपने आप मे एक सफल तथा अद्वितीय परिरक्षण विधि सिद्ध हो सकती है। खाद्य पदार्थो मे न्यूनतम अणुविकिरणोपचार किया जाये तो सूक्ष्मजीवो के अतिरिक्त चूहे तथा अन्य प्राणी भी रश्मियो के प्रभाव से नष्ट हो सकते है। अणुविकिरणोपचार की न्यूनता से खाद्य पदार्थो मे ऊष्मा की मात्रा भी नहीं बढ़ती है। अणुविकिरणोपचार के लिए यह भी आवश्यक नही है कि खाद्यों को पकाया ही जाय।

भारत जैसे (ऊष्णमेखला प्रदेशीय विकासशील तथा अविकसित) देश के लिए खाद्य पदार्थों को उचित रूप मे बन्द करके संरक्षण प्रदान कर शीघ्रनाशी फल, तरकारी, मछली, मांस, अण्डा आदि को परिरक्षित रखने के लिए शीतगोदाम, रेफ्रिजिरेटर आदि का निर्माण, सुधार, शीत-प्रदेशो की अपेक्षा महँगा पड़ता है। इसके लिए एकमात्र उपाय यह है कि अणुविकिरण द्वारा खाद्यो का परिरक्षण किया जाये। अणुविकिरण उत्पादो के लिए शीत-गोदामो की जरूरत भी नहीं होती तथा खाद्यो के रूप परिवतन की भी कोई आवश्यकता नहीं पड़ती है।

अणुविकिरण करने से खाद्यों में न तो ताप बढ़ता है और न ही शीतलन होता है। न्यून मात्रा मे अणुविकिरणोपचार से खाद्य पदार्थों में पाये जाने वाले सूक्ष्मजीव तथा उनके किण्वक निष्क्रिय ही नही, बल्कि पूर्णतया नष्ट हो जाते हैं। अतः इस उपचार द्वारा निर्जर्मीकरण सम्भव हो जाता है। साथ ही रासायनिक क्रिया भी नहीं होती। अतः पूर्ण परिरक्षण सम्भव हो जाता है।

वैज्ञानिकों के मतानुसार अनाज तथा दालवर्गीय फसलो को प्राणियो से बचाने के लिए 20,000 से 50,000 रॉड्स (Rads) तक अणुविकिरण ऊर्जा की आवश्यकता होती है। फलों मे पाये जाने वाले जीवों को निर्जर्मीकरण करने के लिए 50,000 हजार रॉड्स की आवश्यकता होती है।

कसार्ट (Casarett) के कथनानुसार खाद्य पदार्थों का शीतलीकरण रहित संरक्षण करने के लिए 20,00000 से 45,00000 रॉड्स में अणुविकिरणोपचार किया जाय तो निर्जर्मीकरण तथा परिरक्षण सम्भव हो सकता है। इस विषय पर भी विस्तार से अध्ययन आगे किया जायेगा।

□□□

अध्याय 3

सूक्ष्म जीव तथा आहार
(Micro Organism and Food)

सूक्ष्मजीव

हमारे नग्न नेत्रों से जिन जीवों को देखा नही जा सकता, उन्हें ही सूक्ष्मजीव कहते हैं। ये जीव, सूक्ष्मदर्शी (Microscope) की सहायता से ही देखे जा सकते हैं तथा आकाश व भूमि पर जहाँ वायु भी नही मिलती, वहाँ भी पाये जाते हैं और जीवित रह सकते हैं।

तीन सौ वर्ष पूर्व तक हम उन जीवो को ही छोटा समझते थे जो हमारे नग्न नेत्रों से देखने में बहुत ही छोटे थे, जो गोदामो तथा कोठो में पाये जाने वाले कृमिक–कीट थे। लेकिन सन् 1676 मे डच देश के 'लवनोक' ने पहली बार आवर्धकलेन्स (Magnifying Lense) की सहायता से सूक्ष्मजीवों का अवलोकन किया।

वनस्पति तथा जन्तु परिवारों को जोड़नेवाली एक कड़ी के रूप में सूक्ष्मजीव

मदिरा मे उत्पन्न खटास तथा उसकी सड़न का कारण उसमे प्रविष्ट हुए एक विशिष्ट प्रकार के सूक्ष्मजीव ही हैं। इस सत्य का सन् 1862 मे लुई पाश्चर ने आविष्कार किया था तथा उन्होंने यह सिद्ध किया कि उपर्युक्त खटास तथा सड़न आदि को रोकने के लिए मदिरा को अगर 70° सेन्टीग्रेड या 158° फेरनहीट पर 15 से 30 मिनट तक ऊष्मोपचार किया जाये तो उसे इन विकृतियो (खराबियो) से बचाया जा सकता है। इस प्रकार के सूक्ष्मजीव पौधों को ही आगे चलकर सूक्ष्मजीव के नाम से पुकारा जाने लगा, जो एक कोशीय (Unicellular) या बहुकोशीय (Multicellular) हो सकते है। यह पौधे तथा जीव दोनो को जोड़ने वाली एक कड़ी माना जाता है, क्योंकि यह दोनो के ही गुण को प्रदर्शित करता है।

इस वर्ग के कुछ सूक्ष्मजीव खाद्य पदार्थों को खराब करते हैं तथा उनमे से कुछ वर्ग ऐसे भी हैं जो खाद्य पदार्थों को रूपान्तरित कर खाने योग्य बना देते हैं। तीसरे वर्ग के सूक्ष्म जीव वनस्पतियों पर रोग फैलाकर उनका नाश कर देते है। ऐसे ही सूक्ष्मजीवो के अध्ययन को पौध व्याधि विज्ञान (Plant Pathology) के नाम से जाना जाता है। इसी प्रकार मनुष्य तथा जानवरो में भी रोगोत्पादक सूक्ष्मजीव बड़ी मात्रा में पाये जाते हैं।

वायु तथा सूक्ष्मजीव (Air and Micro Organism)

सूक्ष्मजीवो का तीन श्रेणियो मे वर्गीकरण किया जा सकता है—(1) वायुजीव (Aerobic) (2) अवायुजीव (Anaerobic) (3) विकल्पी अवायुजीव (Facultative Anaerobic)।

वायुजीव वायुरहित अवस्था में जीवित नही रह सकता, जबकि अवायुजीव रह सकता है। परन्तु विकल्पी अवायुजीव दोनो अवस्थाओं में जीवित रहने की क्षमता रखते हैं।

ऊष्मा तथा सूक्ष्मजीव (Heat and Micro-Organism)

ऊष्मा प्रतिरोध शक्ति के आधार पर सूक्ष्मजीवों को अल्प तापप्रिय (Mesophile), विकल्पीय तापरागी (Facultative Thermophile), अविकल्पीय तापरागी (Obligate Thermophile) आदि वर्गों में विभाजित किया जा सकता है। जो सूक्ष्मजीव तापप्रिय होते हैं वे 37 8° सेन्टीग्रेड (100° फारनहीट) ताप सह सकते हैं। लेकिन अविकल्पीय तापरागी वर्ग के सूक्ष्मजीव 37 से 82 2° सेन्टीग्रेड (100°–180° एफ) तक ताप सह सकते हैं, साथ ही विकल्पीय तापरागी वर्ग के सूक्ष्मजीव उपर्युक्त दोनों प्रकार के तापमानों को सहन कर सकने की प्रतिरोधक शक्ति से युक्त होते हैं।

सूक्ष्मजीवों का वर्गीकरण (Classification of Micro-Organisms)

ऐसे सूक्ष्मजीव, जो खाद्य पदार्थों मे गुण या दोष उत्पन्न करते हैं, साधारणतया एक कोशीय होते हैं। उन्हें तीन भागों में वर्गीकृत किया जा सकता है। प्रकिण्व या खमीर (Yeast), फफूँदी (Mould) तथा जीवाणु (Bacteria)।

प्रकिण्व (Yeast)

जलेबी, डबलरोटी, डोसा, इडली आदि भोज्य पदार्थ बनाने के लिए जिस प्रकार के खटास की आवश्यकता होती है, उसके लिए आटा तैयार कर रख लेते हैं। इस आटे मे प्रकिण्व प्रजनन से विशेष प्रकार का खटास पैदा होता है। इस क्रिया को किण्वन (Fermentation) क्रिया कहते हैं। इस क्रिया से खाद्य पदार्थों मे पोषक गुणों की वृद्धि तथा विशेष सुगन्ध पैदा हो जाती है।

ताड़ी (Toddy) वास्तव मे एक पोषक तथा आरोग्यवर्द्धक पेय है, जो नारियल वर्ग के वृक्षों की देन है। ताड़ी जितनी देर तक रखी जायेगी, उतनी ही उसमे प्रकिण्व क्रिया होती रहेगी तथा खटास बढ़ती रहेगी। यदि उसमें कृत्रिम मादक पदार्थ मिलाये जावें तो यह गुण के बदले दोष पैदा कर देते हैं।

उपर्युक्त किण्वन क्रिया खाद्य पदार्थों में पाये जाने वाले प्रकिण्व से, या उसमें मिलाये गए व्यापारिक प्रकिण्वों (Commercial Yeast) के कारण शुरू होती है। साधारणतया जलेबी, डबलरोटी, इडली, डोसा आदि मे व्यापारिक प्रकिण्व नहीं मिलाये जाते हैं। यदि इनको मिलाया जाये तो खाद्य पदार्थ उच्चकोटि का होगा तथा उसमे अनावश्यक व दोषकारी सूक्ष्मजीवों के प्रवेश को भी रोका जा सकेगा।

यदि सूक्ष्मदर्शी द्वारा देखा जाये, तो प्रकिण्व अण्डाकार या वृत्ताकार के रूप मे दिखाई देता है। यह प्रकिण्व एक कोशीय होते हैं। इनमें कवक जाल (Mycelium) तथा पर्णहरित (Chlorophyll) भी नहीं होते हैं, अतः जीवित रहने के लिए इन्हें अन्य पदार्थों पर आश्रित रहना पड़ता है। जिस प्रकार अर्वी मे आँखें पैदा होती हैं, वैसे ही इसमें भी आँखें पैदा होती हैं और यही आँखें आगे चलकर अपनी वंश परम्परा को कायम करती रहती हैं। परन्तु जीवाणु-वंश-परम्परा विघटन (Fission) द्वारा सम्भव होती है। अन्य सूक्ष्मजीवों की अपेक्षा प्रकिण्व की किण्वन शक्ति कहीं अधिक होती है। इसी कारण प्रकिण्व मंड (Starch) तथा शर्करा (Sugar) का मद्यसार, या एल्कोहोल (Alcohol), कार्बन-डाई-ऑक्साइड (CO_2) के रूप में रूपान्तरित हो जाता है। इसी क्रिया से व्यापारिक क्षेत्र मे मदिरा (Wine), ऐल्कोहोल तथा शर्करा, सिरका आदि बनाये जाते हैं। इनका दो भागों मे वर्गीकरण किया जा सकता है।

औद्योगिक प्रकिण्व (Industrial Yeasts)

इस वर्ग में बीजाणु (Sporeferning) रूपान्तरण होता है। मदिरा मे पाये जाने वाले सैकेरोमाइसीस इलिप्साइडियस (Sacchromyces Ellipsodius) तथा सैकेरोमाइसीस सिरवेसेई (S. Cervisiae) इस वर्ग के दो उदाहरण हैं। दूसरे सेब के रस मे पाये जाने वाले सैकेरोमाइसीस लुडविगी (S. Ludwingi) है, जो नींबू के आकार के होते हैं।

सैकेरोमाइसीस पाइरीफोर्मिस (S. Pyriformis) नाम के प्रकिण्व अदरक-बीयर (Ginger Beer) मे पाये जाते हैं। प्रकृति मे पाये जाने वाले एकमात्र प्रकिण्व सैकेरोमाइसीस पास्तरिनस (S. Pasteurianus) हैं। ये फलों के रस मे प्रविष्ट हो जायें तो उसमे कड़वापन पैदा कर देते हैं।

हनसेनुला (Hansenula) वर्ग के प्रकिण्व सुगन्धित वस्तुओं के निर्माण मे काम आते हैं जो हैट के आकार के (Hat Shaped) होते हैं।

कभी-कभी अाचार पर मलाई के रूप में सफेदी पैदा हो जाती है, इसका कारण उसमें पिकिया (Pichia) नामक प्रकिण्व का आक्रमण है।

प्रकिण्व बेकरियों में

डबल रोटी जैसे बेकरी उत्पादों के गुण, सुगन्ध, पोषक गुण आदि की वृद्धि का कारण भी प्रकिण्व प्रभाव ही है। इस क्रिया से गुँथे हुए आटे, चीनी में थोड़े समय में ही किण्वन से "एल्कोहाल" तथा कार्बन-डाई-ऑक्साइड (Alcohol and Carbon-di-oxide) पैदा हो जाती है। ये किण्वन प्रकिण्व के कारण सम्पन्न होते हैं। इस प्रकार के प्रकिण्व को बेकर्सईस्ट (Beaker's yeasts) या "सैकेरोमाइसीस सिरवेसेई" कहते हैं। इस प्रकार की रासायनिक क्रिया से डबलरोटी देशीरोटी (चपाती) से शीघ्र पाचनकारी होती है इसके अलावा उपर्युक्त रोटियाँ सुगन्धित तथा पोषकयुक्त होती हैं।

प्रकिण्व तथा प्रोटीन (प्रोभूजन) की कमी (Yeast and Protein Shortage)

आजकल अविकसित देश प्रायः पोषाहार की कमी के शिकार हैं। इन देशों में रहने वाले अधिकतर लोग विशेषकर बालक-बालिकाएँ प्रोटीन की कमी से कुरूप तथा बीमार हो गये हैं। विकसित देशों में भी जब अशान्ति (युद्ध या गृहयुद्ध के कारण) हो जाती है; तब प्रोटीन की कमी आ सकती है। तब उसकी पूर्ति के लिए एक मात्र स्रोत (Source) प्रकिण्व ही हैं। यह देखा गया है कि मद्यसार (ऐल्कोहाल) निर्माण के समय एक निश्चित मात्रा मे उसमें ऑक्सीजन देना पड़ता है। यदि ऑक्सीजन आवश्यकता से अधिक दिया जाय तो मद्यसार के बदले में प्रकिण्वों की कोषवृद्धि होती है। इस कारण उसमे प्रकिण्वों की संख्या भी बढ़ेगी। इन प्रकिण्वों को एकत्रित कर खाद्य योग्य बनाया जा सकता है। इस प्रकार खाद्य योग्य प्रकिण्वों को वैज्ञानिक टोरूला युटिलिस (Torula utilis) नाम से पुकारते हैं। इसमें 45 से 50 प्रतिशत प्रोभूजन (प्रोटीन) प्राप्त होते हैं। इसी प्रकार तैवान (आजाद चीन) के चीनी मिल्स के अवशिष्टों (Waste) से 10,000 टन प्रकिण्वों का प्रति वर्ष उत्पादन किया जाता है।

नारियल के पानी से भी प्रोटीन (Protein-from coconut water)

फिलिपीन में नारियल के पानी से भी प्रकिण्व उत्पादन किया जाने लगा है। इससे न केवल उनके देश से प्रोभूजन की कमी दूर हो रही है, बल्कि विदेशी मुद्रा

मे भी सहायता मिल रही है। नारियल तथा खोपरा उत्पादन मे भारत विश्व का प्रमुख देश है। केवल केरल प्रान्त मे ही असंख्य नारियलो का पानी जमीन पर फेंक दिया जाता है जो वातावरण को दूषित करता है। अगर भारत सरकार तथा प्रान्तीय सरकार इस दिशा में ध्यान दें तो हमारे देश की भी बहुत कुछ प्रोटीन समस्या तथा खाद्य समस्या हल हो सकती है।

अंगूर मे पाये जाने वाले प्रकिण्वो को अलग कर शुद्धि करके नारियल के पानी में मिला दिया जाता है। इस प्रकार के प्रकिण्वों को रोडोटुला रूबा (Rhodotula Ruba) कहते हैं। इसमें से 52 प्रतिशत प्रोटीन प्राप्त हो जाता है। विटामिन बी (B) वर्ग भी पर्याप्त मात्रा में प्राप्त हो जायेगा। यह जानवरो तथा कुक्कटों के आहार के लिए काम लिया जा सकेगा।

इस प्रकार के प्रकिण्वों पर विकिरणोपचार (Radiation Treatment) किया जाय तो विटामिन डी (D) की मात्रा मे भी वृद्धि की जा सकती है। उपचारित प्रकिण्वों को यदि दुधारू पशुओं को खिलाया जाय तो उनके दूध मे विटामिन डी (D) की मात्रा बढ़ेगी। इस दूध को पीने से मनुष्य मे विटामिन डी की कमी स्वयं दूर हो जायेगी।

औद्योगिक मद्यसार उत्पादन (Production of Industrial Alcohol)

फल रसों में (जीवाणुरहित) शुद्ध 'सैकेरोमाइसीस इलिप्सोइडियस" (S. Ellipsodius) जाति प्रकिण्वों का जावन (Starter) देकर ही मदिरा उत्पादन किया जाता है। लेकिन औद्योगिक क्षेत्र मे दाल के अवशिष्टो तथा अन्य सस्ते कार्बोहाईड्रेट्स (Carbohydrates) में प्रकिण्वों का जावन देकर मद्यसार (ऐलकोहाल) उत्पादन किया जाता है। औद्योगिक प्रकिण्व भी प्रकृति में ही पाया जाता है। अंगूर, सेव आदि में पाये जाने वाले प्रकिण्व विपरीत परिस्थिति (सर्दियो) मे बीजाणु के रूप मे बदल कर भूमि में समाविष्ट हो जाते हैं।

आभासी प्रकिण्व (Pseudo Yeast)

हमारे खाने पीने के पदार्थों को खराब करने वाले प्रकिण्वो को ही आभासी प्रकिण्वों (Pseudo yeast) के नाम से पुकारा जाता है। इनके आक्रमण से खाने तथा मदिरा आदि में दुर्गंध तथा धुंधलापन (Mist) पैदा कर देते हैं। प्रयोगशाला के अगर-अगर प्लेट (Agar-Agar plates) में घुस जाने से उचित सूक्ष्म जीवियो का शुद्ध रूप मे प्राप्त होना असंभव हो जाता है। आभासी प्रकिण्वों का रंग लाल होता है, इसलिए इसे आसानी से पहचान सकते हैं। फल तथा शाक परिरक्षण शालाओं की यन्त्र सामग्री में भी यह लग सकता है। अतः परिरक्षण शालाओं में स्वच्छता पालन बहुत ही आवश्यक है। खटास वाले फलो मे पाये जाने वाले एपिक्युलेट्स (Apiculatus) तथा परिरक्षण शाला के उपकरणों में लगने वाला माइकोडर्मा (Mycoderma), दोनो इस वर्ग में आते हैं।

मद्यसार (एलकोहाल), शर्करा तथा अम्ल में प्रकिण्वों का प्रभाव (Effect of Yeast in Alcohol, Sugar and Acids)

मद्यसार उत्पादन उपर्युक्त प्रक्रिया के कारण ही सम्भव होता है। लेकिन 18% मद्यसार उत्पादन के बाद उस वस्तु में प्रकिण्व क्रिया निष्क्रिय हो जाती है। इस प्रकार एक निश्चित मात्रा के ऊपर शर्करा तथा अम्ल वाले पदार्थ मे भी यह क्रिया नही करती। लेकिन हमें यह मालूम होना चाहिए कि ताजा इमली को जल में घोलकर रखा जाय तो उसमें

प्रकिण्व क्रिया सम्भव होगी। यह क्रिया केनडीडा टेमरिन्डी (Candida Tarmarindi) के द्वारा होती है जो सैकेरोमाइसीस वर्ग के प्रकिण्वों से कहीं अधिक अम्लीय परिस्थिति में भी क्रियाशील रहता है।

उपर्युक्त ज्ञान खाद्य परिरक्षण का एक और आधार है। सन्तरा रस में पाये जाने वाला अम्ल तथा शर्करा का अनुपात नींबू रस से भिन्न है। नीबू में अम्ल तथा सन्तरा में शर्करा की मात्रा अधिक होती है। अतः नीबू का परिरक्षण सन्तरा के रस के परिरक्षण से अधिक आसान है। पदार्थों में जितना अधिक अम्ल होगा उतना ही परिरक्षण भी अधिक सम्भव होगा। इस प्रकार 60 प्रतिशत या इससे अधिक शर्करा वाले पदार्थों का परिरक्षण भी अधिक आसानी से सम्भव होता है।

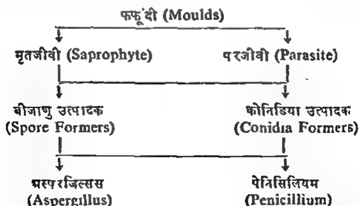
प्रकिण्व तथा सूर्य प्रकाश (Yeast and Sunlight)

प्रकिण्व आमतौर पर 5°–60° से० (41–140° एफ) तक तापमान पर अपनी वंशवृद्धि करता रहेगा। उसकी आवश्यक वृद्धि के लिए 24–30° (75–86° एफ) तक तापमान होना आवश्यक है। यद्यपि सूर्यताप से इन्हें कोई बाधा नहीं होती, लेकिन 65°से. (152° एफ) में 10 मिनिट ऊष्मोपचार किया जाये तो प्रकिण्व नष्ट भी हो सकते हैं।

फफूंदी (Moulds)

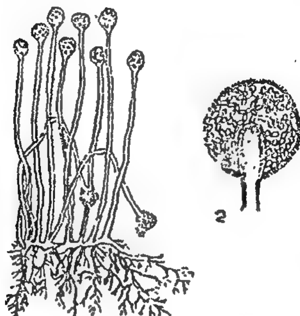
फफूंदी मृतपरजीवी (Saprcphyte) है। प्रायः यह नमी वाले खाद्य पदार्थों मे आक्रमण करती है। यह कुछ अधिक जल-अपघटनीय किण्वक (Hydrolytic Enzyems) का निर्माण भी करती रहती है। वर्षा काल मे डबल रोटी, सूखे फल तथा मेवे आदि पर इसका आक्रमण सम्भव होता है। ये हरे, नीले तथा काले वर्ण की होती है। इसका यथार्थ रूप हम सूक्ष्मदर्शी (Microscope) की सहायता से ही देख सकते हैं। फफूंदी का वर्गीकरण निम्नांकित प्रकार से किया जा सकता है—

फफूंदी दो प्रकार से अपना भोजन प्राप्त करती है। वह वर्ग जो मृतजीवियों से अपना भोजन लेते हैं, उन्हें मृतजीवी (Saprophytic) तथा दूसरा वर्ग जो कि जीवित वनस्पतियों तथा जीव-जन्तुओं में प्रवेश कर अपना भोजन प्राप्त करते हैं जिन्हें परजीवी (Parasitic) के नाम से पुकारा जाता है।



वंशवृद्धि के तरीके के आधार पर भी इनको दो भागों मे विभाजित किया जा सकता है। एक वर्ग बीजाणु द्वारा तथा दूसरा वर्ग कोनिडिया द्वारा अपनी वंशवृद्धि करते रहते हैं। इन दोनों का रूप तथा बाहरी गुण आदि भिन्न होता है। बीजाणु वर्ग के दो

प्रमुख उदाहरणों के लिए म्यूकर (Mucor) तथा रेसोपस (Rhizopus) आदि का निरीक्षण कीजिए।



(चित्र संख्या–3 Mucor म्यूकर सूक्ष्मजीव)

बीजाणु उत्पादक (Spore Formings)

यह गदाकार बीजाणुधानी (Sporangium) का निर्माण करता है, तथा इससे ही बीजाणु पैदा होता है। इन्हें सेक्स (Sacs) के नाम से पुकारा जाता है। जो इधर-उधर उलझे हुए धागे के समान दिखाई देते है। उनको कवक (Mycelilium) कहते हैं। इस कवक से उठकर ऊपर की ओर उठी हुई वस्तु को बीजाणुधर (Sporan Geospore) तथा उसके ऊपर गदा समान जो चिह्न दिखाई देते है उन्हे बीजाणुधानी (Sporangium) कहते हैं। इसके कवक जाल एक कोशीय होते हैं। इनका अस्पर्जिलस तथा पेनिसिलियम जैसे खण्डों मे विभाजन नहीं होता है। अतः इन्हे संकोशिका (Coenocytic) कहते हैं।

यह प्रायः डबलरोटियों पर आक्रमण करते हैं। इसलिए इन्हे रोटी की फफूंदी (Bread Moulds) भी कहते हैं। मंड को जल अपघटन क्रिया से औद्योगिक मद्यसार बनाने मे भी काम में लाते हैं।

सरस फलों (Berry Fruits) का अभिगमन (Transportation) करते समय यह फफूंदी लग जाती है तथा कभी-कभी तो सरस फलों का पूर्णतया नाश ही कर देती है।

प्रायः यह देखा गया है कि संसाधित (Processed) उत्पादों मे इसका आक्रमण नही हो पाता है।

कोणिडिया उत्पादक (Conidia Formers)

उपर्युक्त कवक जाल मे से उन पर उठे हुए भाग के ऊपर पत्ते (गदा) के आकार में पाये जाने वाले एक के ऊपर एक मणि के रूप मे लगे हुए को ही, कोणिडिया कहते हैं।

ये कोणिडिया बोतल के आकार के एक अंग पर एक से एक जुड़े रहते हैं या हम ऐसा भी कह सकते हैं कि कोणिडिया, स्टिरगमाटा (Sterigmata) का आधार है। स्टिरगमाटा, वैसेकिल (Vesicle) पर, वैसेकिल कोणिडियोफोर (Conidiophoric) पर तथा कोणिडियोफोर कवक जाल पर आधारित होते हैं। ये दो प्रकार के होते हैं।—खूँटीदार गदासमान हो तो एस्परजिलस (Aspergillus) होते हैं तथा झाड़ू समान दिखाई देवें तो इन्हें पेनिसिलियम (Penicilium) कहते हैं। इन दोनों को छोटे-छोटे भागों में विभाजित किया हुआ होता है। इन्हें निःसरन कोशिका (Non-coenocytic) कहते हैं।

पेनिसिलियम वर्ग की फफूंदी

इस वर्ग की फफूंदी खाद्य-परिरक्षण में बाधक है। यह फफूंदी जिस वस्तु पर लग जाये वह वस्तु सर्वप्रथम तो कपास जैसी दिखने लगती है तथा आगे चलकर नीली, गुलाबी या मिट्टी के रंग की बन जाती है। यह असंसाधित या कच्चे मालों पर भी लगती है। फल तथा शाक-परिरक्षण व्यवसायों का जाना-पहचाना पेनिसिलियम फफूंदी का नाम पेनिसिलियम ग्लायुकम (Penicillium Glaucum) या पेनिसिलियम एक्सानसम (P. Exansum) है। इसका रंग हरा होता है। यह उन खाद्यों पर लगते हैं, जिसमें परिरक्षक (Preservative) नहीं मिलाये हुए होते हैं। विशेष रूप से फल रस, जैम, जैली आदि में। ये जिस पर लगते हैं उस पर फफूंदी गन्ध (Mouldy Odour) उत्पन्न कर देते हैं। इसके लगने पर पहले सफेद और बाद में नीले वर्ण बन जाता है। इसके वंशवृद्धि के लिए 15–25° से० (59–77° एफ) तक तापमान की आवश्यकता होती है। लेकिन 35–37° से० (97–98·6° एफ) तापमान पर इसकी वृद्धि मन्द पड़ जाती है। ये हिमीकृत पदार्थों पर भी लग सकते है। नीबू वर्गीय फलों को खराब करना, सड़न-गलन आदि का कारक पेनिसिलियम इटालिकम (P. Italicum) तथा पेनिसिलियम डिजिटाटम (P. Digitatum) आदि है।

एस्परजिलस (Aspergillus) वर्ग की फफूंदी

यह साधारणतया अंगूर में पाई जाती है। उदाहरणार्थ एस्परजिलस नाइजर (A. Niger) को लें। आरम्भ में यह पेनिसिलियम सा दिखाई देता है, लेकिन धीरे-धीरे इस पर काला रंग चढ़ता जाता है। इसके साथ ही उनमें ऐस्परजिलस नाइजर साफ दिखाई देने लगते हैं। इसी कारण इसे नाइजर (Niger) नाम से पुकारा जाता है। ऐस्परजिलस नाइजर शर्करा में से ऑक्सालिक अम्ल (Oxalic acid) के उत्पादन तथा कुछ प्रत्येक परिस्थिति में नींबू का सत्त (Citric acid) उत्पादन (औद्योगिक क्षेत्र) में काम में लिये जाते हैं। पूर्व देशों में चावल से एक खास मद्यसार पेय (Alcoholic Beverage) बनाया जाता है। इसका नाम है साके (Sake), इसके उत्पादन के लिए ऐस्परजिलस ऑरिजाई (A. Oryzae) काम में ली जाती है।

परजीवी फफूंदी (Parasitic Moulds)

ये खासतौर से जीवित वनस्पतियों पर आक्रमण करती हैं। वर्षा-काल में पेड़-पौधों, फलों तथा पैकीकृत (Packaged) फलों पर भी लग जाते हैं, जिससे ब्राउन राट (Brown Rot) हो जाते हैं। दूसरा है अंगूर के मिलड्यू (Grape Mildew) नाम का रोग। तीसरे टमाटर, मिर्च आदि की नर्सरी में ही उन्हें गला देते है जिसको पित्तियम (Pythium) वर्ग की फफूंदी कहा जाता है।

फफूंदी तथा सूर्य प्रकाश (Moulds and Sunlight)

जब प्रकिण्व सूर्य प्रकाश से नष्ट नही होता तब फफूंदी सूर्य प्रकाश सहन करने की क्षमता नही रखती। इसका कारण अल्ट्रा-वायलेट (Ultra-Voilet) रश्मियाँ हैं जो सूर्य से विकिरण करती रहती हैं। इसी कारण ही फफूंदी, पदार्थों में रात्रि काल मे लगती है और वृद्धि करती है। अचार बनाते समय धूप दिखाने का कार्य भी इसी फफूंदी से बचाने के लिए ही किया जाता है।

फफूंदी तथा न्यून ताप (Moulds and Low Temperature)

फफूंदी की वृद्धि के लिए 4–10° से० (39–49° एफ) तापमान की आवश्यकता होती है। इसी कारण यह प्रशीतित्रों (रेफ्रिजरेटरों) में रखे हुए खाद्यो में भी लग जाती है। अतः खाद्य पदार्थों को सुचारू रूप से मोमलेपित कागजों (Wax Coated Papers) में लपेट कर रखा जाता है।

फफूंदी तथा भाप (Moulds and Steam)

प्रायः यह देखा गया है कि भापोपचार से फफूंदी का नाश हो जाता है। अतः 65° से० (149° एफ) पर 10 मिनिट ऊष्मोपचार करने से इसका नाश सम्भव है।

फफूंदी तथा फल परिरक्षण (Fungi and Fruit Preservation)

फल परिरक्षण में एक महत्वपूर्ण पदार्थ है साइट्रिक अम्ल (Citric Acid)। एक खास फफूंदी (एस्परजिलस नाइजर), शर्करा मे किण्वन क्रिया करके यह अम्ल उत्पादन करते हैं। अलग-अलग जाति के पेय, जैली, जैम, मार्मलेट आदि के निर्माण में भी साइट्रिक अम्ल की आवश्यकता होती है।

जीवाणु (Bacteria)

एक एकड़ भूमि के ऊपरी वायुमण्डल में 35,000 टन नाइट्रोजन (Nitrogen) स्वतन्त्र रूप में पाई जाती है। परन्तु इसमे से एक परमाणु मात्रा भी मानव या दूसरे जीव-जन्तु या वनस्पति भी ले नही पाते हैं। परन्तु जीवाणु स्वतन्त्र नाइट्रोजन को वनस्पति के पोषण योग्य रूप में रूपान्तरित कर देते हैं। इसमे मुख्य जीवाणु हैं—सहजीवी जीवाणु (Symbiotic Bacteria) तथा असहजीवी जीवाणु (Non-Symbiotic Bacteria)। सहजीवियों में से मूल जीवाणु या राईजोबियम (Rhizobium) मुख्य है। यह फलीदार फसलो (Leguminoas Crops) की जड़ो पर पाये जाते हैं। ये सहजीवी ही वायुमण्डल की स्वतन्त्र नाइट्रोजन को उस अवस्था में रूपान्तरित कर देते हैं जिस रूप में पेड़-पौधे नाइट्रोजन को ग्रहण कर पाते हैं। इसके बदले में सहजीवी पौधों से अपना भोजन भी प्राप्त कर लेते हैं।

असहजीवी जीवाणु भी वायुमण्डल की स्वतन्त्र नाइट्रोजन को पेड़-पौधों के पोषण योग्य बना देते हैं। लेकिन ये बदले में पौधो से कुछ भी प्राप्त नहीं करते। ये भूमि मे ही पाये जाते हैं। इस वर्ग का एक ज्वलन्त उदाहरण एजोटो बेक्टर (Azoto Bactor) जीवाणु है। जो जीवाणु नाइट्रोजन का ऑक्सीकरण करते हैं वे नाईट्रोबेक्टीरियाई (Nitro-bacteraceae) वर्ग के होते हैं।

जीवाणु तथा दूध उद्योग (Bacteria and Milk & Dairy Industry)

दूध में पाये जाने वाले एक प्रकार के जीवाणुओं को लैक्टिक अम्ल जीवाणु (Lactic Acid Bacteria) कहते हैं। ये दूध मे पाई जाने वाली शर्कराओं (Glucose & Lactose) पर किण्वन करके अम्ल निर्माण करते हैं। इस अम्ल को ही लैक्टिक अम्ल (Lactic Acid) कहते हैं। इसलिए दूध को गर्म करके ठण्डा कर उसमे जावन देने से दही बन जाता है। दही तथा जावन मे लैक्टिक अम्ल जीवाणु भरपूर मात्रा में पाये जाते हैं। अतः दूध-दही से अधिक पोषक तत्वों वाला खाद्य पदार्थ हो जाता है। दही खाने से मानव के उदर में पैदा होने वाले परजीवी जीवाणुओं को लैक्टिक अम्ल जीवाणु (दही) नष्ट कर देता है। लैक्टिक जीवाणु कुछ विशेष आचारों मे भी पाये जाते हैं। जिसके बारे मे आगे विचार किया जायेगा।

भगवान् श्री कृष्ण के पूर्व ही भारतीय जनता इस विधि से दही तथा उसके उत्पादों का उपयोग करती रही है। उस समय पश्चिमी देशों मे संस्कृति का उदय भी नहीं हुआ था। हमारे पूर्वजो को यह वैज्ञानिक ज्ञान उस समय ही प्राप्त हुआ था।

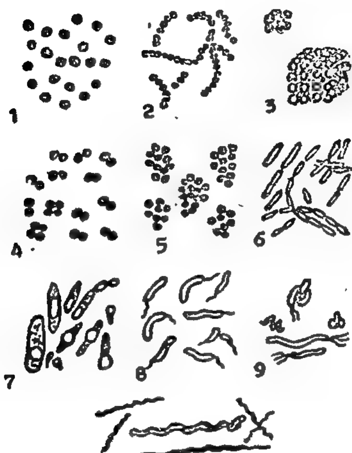
जीवाणु तथा परिरक्षण (Bacteria and Preservation)

कृषि-भूमि मे पाये जाने वाले दो प्रमुख मृतजीवी जीवाणु हैं—बेसिलस (Becillus) तथा सूडोमोनास् (Pseudomonas)। साधारणतया ये सभी फल-शाकों के ऊपरी सतह पर पाये जाते हैं। फिर भी फसल कटते समय उपर्युक्त जीवाणु उन पर और लग जाते हैं। इसी कारण परिरक्षण के पहले फल-शाको को शुद्ध पानी मे अच्छी तरह धोना आवश्यक हो जाता है तभी परिपूर्ण परिरक्षण सम्भव होगा, अन्यथा परिरक्षित खाद्य पदार्थ भी कुछ समय बाद खराब हो सकते हैं।

खाद्य विषीकरण (Food Poisoning)

खाद्य विषीकरण का मूल कारण एक जीवाणु है, जिसको क्लोस्ट्रीडियम बोटिलिनम (Clostridium Botulinum) के नाम से जाना जाता है। परिरक्षण के समय इसका ध्यान रखना अति आवश्यक है। इसके बीजाणुओं को नष्ट करने के लिए खाद्य-पदार्थों मे पी० एच० मान 7 (PH7) हो तो उसका 120° से० (248° एफ) पर 20 मिनट तक ऊष्मोपचार करना भी आवश्यक है।

जीवाणु अन्य सूक्ष्म-जीवियों से भिन्न होते है, लेकिन इनमें पर्णहरित नही होता है। ये प्रकिण्व के समान सूक्ष्म तथा कई आकार के होते हैं। यदि सूक्ष्मदर्शी द्वारा देखा जाय तो मालूम होगा कि वृत्ताकार जीवाणु (Spherical Bacteria), गोलरेखनी समान जीवाणु (Rod-Shaped) तथा अण्डाकार (Oval Shaped) होते है। ये क्रमशः कोक्स् (Coccus), बेसिलस (Bacillus), कोकोबेसिलस (Coccobacillus) के नाम से जाने जाते हैं। इनमे जीवाणुओं के चारों तरफ उभरे हुए रेशे होते है। सूक्ष्मदर्शी द्वारा देखा जाय तो यह जीवाणु चलते हुए से दृष्टिगत होंगे। लेकिन इनका हस्तान्तरण मक्खी, चूहे, जल, वायु आदि द्वारा ही होता है।



(चित्र संख्या–4 जीवाणु तथा आकार)

जीवाणु तथा वंशवृद्धि (Bacteria and Reproduction)

कोष विभाजन (Cell Division) द्वारा ही जीवाणुओं की वंशवृद्धि सम्भव होती है। एक जीवाणु सम्पूर्ण वृद्धि प्राप्त होते ही ऐसा प्रतीत होगा जैसे वह दो कोशीय हो, लेकिन वह ऐसा होता नहीं है। इस अवस्था को प्राप्त होते ही जीवाणु दो भागों में विभाजित हो जाते है तथा अलग-अलग जीवियों के रूप में अपना कार्य भार प्रारम्भ कर देते है। इसी प्रकार एक जीवाणु दो जीवाणुओं मे, दो चार मे, चार आठ में, आठ से सोलह के क्रम से इनकी वंशवृद्धि होती रहती है। लेकिन इस वृद्धि के लिए जीवाणुओं को 24°–37° से॰ (75–99° एफ) तक के तापमान की आवश्यकता होती है। न्यूनतम ताप या हिमीकरण अवस्था में रखे हुए खाद्य पदार्थों मे यदि विद्यमान हो तो नष्ट नहीं होगा, बल्कि प्रतिकूल परिस्थितियो में (न्यूनतम ताप पर) बीजाणु के रूप मे निष्क्रिय होकर रह जायेगा तथा अनुकूलावस्था प्राप्त होते ही वह अपना कार्य प्रारम्भ कर देगा। इसी कारण जीवाणुओं को खाद्य पदार्थ खराब करने वाले मुख्य सूक्ष्मजीवियो मे गिना जाता है तथा परिरक्षण शास्त्र एवं व्यवसाय में मुख्य रूप से इसका ध्यान रखा जाता है।

जीवाणु तथा अम्ल (Bacteria and Acids)

सभी फलो तथा तरकारियो में से केवल टमाटर मे अम्ल पाये जाते हैं। अम्ल की मात्रा के अनुसार किन्हीं फलों में खटास कम होगी और किन्ही मे अधिक। अम्लीय खाद्य-पदार्थों को उसमे पाये जाने वाली अम्ल की मात्रा के अनुसार तापोपचार करना पड़ता है। अर्थात् अधिक मात्रा मे अम्ल युक्त खाद्य-पदार्थों का तापोपचार कम मात्रा में करना पड़ता है और अम्ल की कम मात्रा वाले फलों का अधिक तापोपचार करना आवश्यक है। उपर्युक्त आधार पर ही दोनों पदार्थों मे जीवाणुओं का पूर्णतया नाश सम्भव होगा। लेकिन अम्लरहित शाक-सब्जियों को उससे भी अधिक तापोपचार की आवश्यकता होती है। अतः ऐसी शाक-सब्जियों को 116° से० (240.6° एफ) या अधिक तापोपचार देना पड़ता है ताकि उसमें पाये जाने वाले जीवाणु नष्ट हो सके।

खाद्य-पदार्थ इस कारण खराब होते हैं कि जीवाणुओं मे भी किण्वक होते हैं। साथ ही हमें यह भी नही भूलना चाहिए कि खाद्यो मे गुणात्मक वृद्धि भी किण्वको के प्रभाव से ही होती है। इसके बारे मे आगे विस्तार से वर्णन किया जायेगा।

अम्ल तथा खाद्य पदार्थ (Acids and Food Stuffs)

खाद्य-पदार्थों मे पाई जाने वाली अम्लता पी० एच० मान (PH Value) के आधार पर नापी जाती है। यह हाइड्रोजन आयन (Hydrogen Ion) की मात्रा पर निर्भर करती है। पी० एच० मान अधिक होने का मतलब होगा कि उस पदार्थ मे अम्लता कम होगी, इसके विपरीत पी० एच० मान कम होने पर उसमे अम्लता अधिक होगी। आमतौर पर आहार के पी० एच० 2–7 के बीच मे आ जाते हैं। लेकिन फल-तरकारियाँ आमतौर पर पी० एच० मान 2–6 के बीच में ही आती है।

पी० एच० (P.H.) क्या है ?

एक खाद्य मे हाइड्रोजन आयन विभव (Potential of Hydrogen) की मात्रा को ही पी० एच० कहते है। अमुक खाद्य-पदार्थ चाहे ससाधित हो या असंसाधित, इस पी०एच० मान के आधार पर हम यह अनुमान लगा सकते हैं कि उसमे किस प्रकार के सूक्ष्मजीव मौजूद होते हैं और किस प्रकार की विकृति अथवा खराबी कर सकते हैं। इस ज्ञान से हम उस खाद्य पदार्थ का आवश्यक ऊष्मोपचार तथा उसमे उचित मात्रा मे परिरक्षक भी मिला सकेंगे।

बहु-अम्लीय (कम पी० एच० मान) खाद्य पदार्थों में पाये जाने वाले सूक्ष्मजीव को कम तापमान से तथा कम अम्लीय (अधिक पी० एच० मान) खाद्य पदार्थों को अधिक तापमान से भी ऊष्मोपचार किया जा सकेगा, ताकि वह परिरक्षित हो सके।

अल्प अम्लाहार (Low Acid Food)

मछली, मास, अण्डा, मक्खन आदि में अम्ल मात्रा कम है। (पी० एच० 7) इस प्रकार अल्प अम्लीय आहारों पर लगने वाले सूक्ष्मजीव अल्पताप प्रिय बीजाणु, उत्पादकीय अवायुप्रिय जीवाणु (Mesophilic Spore forming anaerobic Bacteria) होते हैं।

लेकिन शाकवर्ग के सेम, चुकन्दर, शतावरि (Asparagus) आलू आदि में अम्ल कम मात्रा में तथा पी० एच० 6 (P. H. 6) होता है। तापरागी वर्ग सूक्ष्मजीवी (Thermophelous) तथा किण्वक इन्हें खराब कर देते हैं।

उपर्युक्त आहारों को अल्प अम्लीय (Medium acidic Food) या क्षारीय आहार (Alkaline Food) भी कहा जा सकता है। क्षारीय आहारों में प्रवेश करने वाले मुख्य सूक्ष्मजीवी क्लोस्ट्रीडियम बोटीलीनम (Clostridium botulinum) के प्रभाव से खाद्य विषीकरण हो जाता है। यह जीवी जितना विष विसर्जन करता है उसका $\frac{1}{1000000}$ ग्राम मानव शरीर में पहुँच जाय तो उसकी मृत्यु हो जायेगी। अतः आप अनुमान लगा सकते हैं कि इनका नाश कितना आवश्यक है। इसलिए खाद्य पदार्थों को 120° से० में निर्जर्मीकरण (Sterilization) करना अति आवश्यक है।

मध्यम अम्लीय आहार (Medium Acid Food)

कई प्रकार के सूप (Soup), अंजीर (Fig), जिनके पी० एच० मान 5·5 से 5·0 के बीच में आते हैं, को मध्यम श्रेणी अम्लीय आकारों में गिना जाता है। पी० एच० 4.5 से अधिक हो जाय तो इस वर्ग के आहारों में क्लोस्ट्रीडियम जीवाणु प्रवेश करते हैं।

अम्ल आहार (Acid Food)

पी० एच० 3.7 से 4.5 के बीच में आने वाले आहार आमतौर पर फल तथा फल-उत्पाद होते हैं। नासपाती (Pear), खुबानी (Apricot), आडू (Peach), सतरा, अंजीर तथा टमाटर आदि तथा उसके उत्पाद में पी० एच० मान 4.5 होता है, लेकिन अनन्नास, सेब, स्ट्रॉबेरी, चकोतरा आदि का पी० एच० 3.7 होता है। पी० एच० 4.5 वाले आहार तथा उसके उत्पादों को ऐसे जीवाणु खराब करते हैं जिन्हे गैर बीजाणु निर्माण कारक अम्लीय जीवाणु (Non-Spore Forming Acidic Bacteria) होते हैं। लेकिन जिसका पी० एच० मान 3.7 होता है, उसे अम्लीय जीवाणु के कारण खराब हो जाते हैं, जो बीजाणुओं का निर्माण करता है। साथ-साथ कुछ किण्वक जो प्रकृति में पाये जाते हैं, वे भी घुसकर खराब करने मे सहायक होते हैं।

अधिक अम्लीय आहार (High Acid Food)

जो आहार पी० एच० 2.3 से 3.7 तक की शृंखला मे आते हैं उन्हें ही अधिक अम्लीय आहार कहते हैं। इस वर्ग में आने वाले कमरख (Carambola), इमली (Tarmaric) आदि फल तथा अचार, कुछ नीबू वर्गीय फल, रस, जैम, जेली, मारमलेट आदि हैं। इनमे कुछ विशिष्ट सूक्ष्मजीव ही विकृति पैदा कर सकते हैं। इनमे मुख्य प्रकण्व तथा फफूंदी है। इनको नष्ट करने के लिए उपर्युक्त पदार्थों का 100° से० (212° एफ) मे ऊष्मोपचार किया जाना चाहिए, जिससे या तो वे नष्ट हो जायें, या निष्क्रिय हो जायें। साराश यह है कि खाद्य पदार्थों मे जितनी अम्लीयता बढेगी, उतना ही निर्जर्मीकरण अधिक आसानी से सम्भव होगा तथा अम्लीयता कम होने पर निर्जर्मीकरण कठिन होगा।

किण्वक क्या है ? (What is Enzyme ?)

किण्वक पकिण्व में ही नही, प्रायः सभी जीवित वस्तुओ मे पाये जाते हैं। मदिरा में होने वाली किण्वन क्रिया के रहस्य को कोई नहीं जानता था। मदिरा में जो झाग उत्पन्न होता है, उसका कारण किण्वन क्रिया है तथा यह क्रिया एक खास प्रकिण्व (Yeast) के कारण ही सम्भव हो सकती है। ये सब बातें लुई पास्चर ने सिद्ध की थीं। लेकिन सन् 1878 मे कुहने (Kuhne) ने कहा कि किण्वन कार्य प्रकिण्व नहीं करता, बल्कि उससे सम्बन्धित कुछ तत्वो से ही यह क्रिया सम्भव हो सकती है।

आगे चलकर सन् 1897 मे नोवल पुरस्कार विजेता बुकनेर (Buchner) ने यह सिद्ध किया था कि यह क्रिया प्रकिण्व मे पाये जाने वाले किण्वक की लीला है। इसके लिए बुकनेर ने प्रकिण्व को पीसा तथा उसके रस को प्रकिण्व के बदले मे काम में लिया। इससे भी किण्वन क्रिया सम्भव हुई। इस प्रकार कुहने की राय ठीक सिद्ध हुई और प्रकिण्व से प्राप्त रस को ही किण्वक (Enzymes) का नाम दिया गया तथा यह सिद्ध किया कि प्रकिण्व में ही किण्वक है।

किण्वक तथा रासायनिक अभिक्रिया (Enzyme & Chemical Reaction)

किण्वक केवल सूक्ष्मजीवियों मे ही नहीं बल्कि सभी जीवों के हर एक कोश में पाये जाते हैं। यह प्रोटीन युक्त पदार्थ हैं। उन्हें जैव उत्प्रेरक (Organic Catalytic) भी कहते हैं। जैव उत्प्रेरक रासायनिक क्रिया मे शीघ्रता लाते हैं, लेकिन वे स्वयं कोई परिवर्तन प्राप्त नही करते, अर्थात् किण्वक के स्वरूप मे ही रह जाते हैं। ये हर एक कोश में उपापचय (Metabolism) क्रिया में उत्प्रेरक का काम कोशिकाओं मे जीवद्रव्य या प्रोटोप्लासम् (Protoplasm) के संचयन (Storage) मे मदद करता रहता है। इसके साथ सहायक किण्वक (Co-enzyme) भी होते हैं। सहायक किण्वक का काम भी वही है जो किण्वक करता है। किण्वक के हर एक अणु मे अन्य वस्तुओ के हर एक अणुओ पर कार्य करने की क्षमता होती है। लेकिन प्रत्येक किण्वक एक ही वस्तु पर कार्य करेगा, अर्थात् अंगूर के रस को मदिरा में बदलने वाला किण्वक दूसरी बीयर बनाने के काम मे नही आता। यह किण्वक की अपनी एक विशेषता होती है। रासायनिक तथा भौतिक परिस्थिति मे होने वाली अदला-बदली से किण्वक क्रिया मे गुण या अवगुण पैदा हो सकता है। अतः भापोपचार से इसका नाश सम्भव है। 100° से० (212° एफ) पर एक मिनट तक तापोपचार करने से किण्वक निष्क्रिय हो जाते हैं। इसी प्रकार पी० एच० मान (P. H. Value) मे अदला-बदली, अजैव लवणों की विभव-समृद्धि तथा ऑक्सीजन तनाव (Oxygen tension), किण्वक विष (Enzyme poison), प्रकाश अणु-विकिरण आदि कारणों से भी किण्वक की क्रिया में अनुकूल या प्रतिकूल प्रभाव पड़ सकता है।

वाह्य-आन्तरिक किण्वक (Exo & Endo Enzymes)

कुछ किण्वक कोशो मे से बाहर आकर किण्वन क्रिया करते हैं तो कुछ अन्य किण्वक कोष भित्ति (दीवार) के अन्दर ही अन्दर अपनी क्रिया पूर्ण करते हैं। इनमे पहले वर्ग को वाह्य किण्वक तथा दूसरे को आन्तरिक किण्वक कहते हैं। इन्हें वैज्ञानिकों ने कई प्रकार से वर्गीकृत किया है।

प्रोटीन में जो किण्वक कार्य करते हैं; उन्हें प्रोटीनेज् (Protinase), दुग्ध शर्करा में जो कार्य करते हैं उन्हें लेक्टेज (Lectase), पेक्टीन में जो कार्य करते है उन्हें पेक्टीनेज (Pectinase), तथा कार्बोहाईड्रेट में जो कार्य करते हैं उन्हें कार्बोहाईड्रेटस् (Carbohydrates) आदि भिन्न-भिन्न नामो से जाना जाता है।

दूसरा वर्गीकरण रासायनिक क्रिया पर आधारित है। जो किण्वक ऑक्सीकरण करते हैं उन्हें आक्सीडेज (Oxidase), जो किण्वक कार्बनडाईआक्साइड का विमोचन करते हैं उन्हें डिकार्बाक्सीलेज (Decarboxilase) आदि नामों से पहचानते हैं।

विविध प्रकार के किण्वकों के कारण ही मानव शरीर में पाचन क्रिया सम्भव होती है तथा शरीर की वृद्धि होती है। पेड़ पौधों का बीजांकुरण, वृद्धि, फलना-फूलना और

पकना आदि सब क्रियाएँ किण्वक की ही लीला है। नवजात फलों में मंड बनना। बाद में शर्करा में बदलना आदि कार्य किण्वक करता है।

इन फल-तरकारियों को उचित समय पर मातृवृक्ष (पौधो) से अलग नहीं किया जाये तो वे गिर जायेंगे या वहाँ रहते हुए ही उनमें सूक्ष्मजीवियों का प्रवेश हो जायेगा। उसके फलस्वरूप उसमे किण्वन क्रिया होकर मद्यसार बन जायेगा। इस मद्यसार की सुगन्ध से फल मक्खियाँ (Fruit Flies) आकर्षित हो जाती हैं, जिनके पैरों पर प्राय: सिरका जीवाणु लगे होते हैं। सिरका जीवाणु मद्यसार में लगकर उसे सिरके में बदल लेते हैं। इस प्रकार फल, फफूंदी, प्रकण्व तथा जीवाणुओं की वंश वृद्धि का आधार तथा माध्यम बन जाते हैं। आखिर उन फलों में केवल सेल्लुलोज (Cellulose) ही बाकी बच जाता है। ये सेल्लुलोज बीज को छोड़कर पानी के साथ भूमि के भीतर प्रवेश करते हैं। एक या दो महीने के अन्दर यह सेल्लुलोज भूमि में उस सतह पर पहुँच जाते हैं जहाँ वायु प्रवेश सम्भव नहीं होता। इस स्थान पर इस वर्ग के जीवाणु होंगे जो वायु-प्रिय नहीं होंगे। यही अवायुजीवी सेल्लुलोज पर कार्य करके अम्ल उत्पादन करते हैं। इस अम्ल को वहाँ पाये जाने वाले कुछ अन्य जीवाणु प्राप्त कर लेते हैं। जिनके कारण कार्बनडाईआक्साइड तथा जल ($CO_2 + H_2O$) में परिवर्तित हो जाता है। इस क्रिया से जो ऊर्जा-उत्पादन होता है, वह ऊर्जा जीवाणु वृद्धि के काम में आती है।

इसी प्रकार जाने-अनजाने कितनी मात्रा में फल-तरकारी हमारी लापरवाही से सूक्ष्मजीवियों के (विशेषतौर से तरकारियों में पेनिसिलियम, राईजोपस, लैक्टोबेसिली, बेसिली, अक्रोमाबेक्टर, स्वीडोमोनास तथा फ्लैवोबक्टीरियम और फल तथा उसके रस को सक्रोमाइसिस, टोरूलोपिस, बोट्राईटिस, पेनसिलियम, राइजोपस, अस्टोबक्टर, लक्टोबेसिलि इत्यादि) आहार बन जाते है, इन्हीं सूक्ष्मजीवियों के तोड़ने के पहले तथा बाद में फल नष्ट हो जाते हैं। सूक्ष्मजीवियों को तो थोड़ा-सा शर्करा मिला हुआ दो-चार बूँद पानी चाहिए ताकि वे उसमे वृद्धि कर प्रजनन कर सकें। आर्द्रता वाले पदार्थ सूक्ष्मजीवियों की वृद्धि के लिए उपयुक्त हैं। खाद्य पदार्थों को इस प्रकार नष्ट होने से बचाने के लिए खाद्य पदार्थों को खराब करने वाले सूक्ष्मजीव जैसे, फफूंद, प्रकिण्व तथा बैक्टीरिया किन्हीं परिस्थितियों (पी० एच०) के माध्यम में आते हैं, इन्हें जानना खाद्य पदार्थों के परिरक्षण के लिए बहुत आवश्यक और महत्त्वपूर्ण है। फफूंद 1·5 से 8·5 पी० एच० शृंखला के खाद्य पदार्थों में, प्रकिण्व 2·5 से 8·0 तथा बैक्टीरिया 4·0 से 7·5 पी० एच० शृंखला के खाद्य पदार्थों में प्रवेश कर वृद्धि करेंगे। आप भली-भांति समझ गये हैं कि अधिकांश खाद्य पदार्थ इस पी०एच० शृंखला में ही आते हैं। इन सूक्ष्मजीवों द्वारा उत्पन्न खराबियों से खाद्य पदार्थों को बचाकर विभिन्न विधियों द्वारा परिरक्षण सम्भव हो सका है। इसलिए परिरक्षण विज्ञान के प्रयोगात्मक अध्ययन के लिए सूक्ष्मजीव विज्ञान का अध्ययन अति आवश्यक है।

□□□

अध्याय 4

फल-तरकारियाँ तथा उनके उत्पादों में विटामिन और अन्य पोषक तत्व

(Vitamins and Other nutrients in Fruits and Vegetables and in their Products)

विटामिन क्या है ? (What are Vitamins)

सजीवों की नीरोगता, वंशवृद्धि आदि क्रिया के लिए विटामिन्स की आवश्यकता होती है। ये जैव रासायनिक (Organic chemical) पदार्थ हैं। विटामिन को हिन्दी में जीवति कहते हैं, जिससे उपर्युक्त कथन की पुष्टि होती है। विटामिन शब्द का अंग्रेजी भाषा में जो अर्थ होता है वैसे ही हिन्दी में जीवति का है।

ऊर्जा का रूपान्तरण करना पोषक परिणाम या उपापचय (Metabolism) का नियन्त्रण करना आदि विटामिन्स का कार्य है। यद्यपि स्वयं विटामिन में ऊर्जोत्पादन शक्ति नहीं होती है और न ही यह वृक्ष, जीव-जन्तु आदि सजीवों में वृद्धि करा सकता है तथापि इनके बिना कितना भी पोषक तत्व मानव या सजीवों को प्रदान किया जाये, फिर भी उसमें वृद्धि सम्भव नहीं होगी। इनके बिना जैव क्रिया असम्भव है। अतः प्रायः सभी आहारों में कुछ विटामिन्स प्रकृति प्रदत्त होते हैं। (सारणी संख्या 3, 4, 5) अण्डा, दूध, फल, शाक व उनके उत्पादों से शाकाहारी एवं मांसाहारियों को विटामिन प्राप्त हो जाते हैं। जीवति को विटामिन ए, बी, सी, डी, ई, आदि नामों से पुकारा जाता है। विटामिन बी को थाइमिन (Thiamine), विटामिन सी को अस्कॉर्बिक अम्ल (Ascorbic Acid) आदि नाम भी दिये गये हैं।

विटामिन 'ए' (Vitamin 'A')

विटामिन ए मानव एवं पशुओं की त्वचा, रोम, आन्तरिक ऊतकों के बढ़ने, स्वास्थ्य-वृद्धि तथा वंश वृद्धि के लिए अत्यावश्यक है। इसकी कमी से बच्चों की शरीर-वृद्धि रुक जाती है। कई तरह के छूत के रोग इस विटामिन के अभाव से पैदा हो जाते हैं। आँखों के जलांशों का सूख जाना, अन्धा हो जाना आदि भी इस विटामिन की कमी से ही होता है।

यह आमतौर पर पपीता, केला, सन्तरा, कटहल, आड़ू, (Peach), पैशनफल (Passion Fruit) आदि में तथा टमाटर, पत्तागोभी, शकरकन्द, आलू, गाजर आदि शाकों में पाया जाता है।

विटामिन 'बी' वर्ग (Vitamin 'B')

थाइमिन, रीबोल्फनिन (Riboflavine), नीकोटिनिक ग्रम्ल (Nicotinic Acid) को ही विटामिन बी वर्ग के नाम से पुकारा जाता है। थाइमिन के ग्रभाव से बेरी-बेरी, मन्दाग्नि ग्रादि रोग हो जाते है। थाइमिन दाल वर्गों तथा काजू, बादाम ग्रादि काष्ठफलो मे ग्रधिक मात्रा मे पाया जाता है। इनके ग्रलावा गाजर, फूल गोभी, मूली ग्रादि तरकारियो मे तथा केला, सेब, ग्रलूचा, ग्रालुबुखारा, जामुन ग्रादि फलों मे पाया जाता है। विटामिन बी, खाद्य को ऊष्मा तथा ऊर्जा मे बदलने मे सहायक होता है, जिससे शरीर गर्म रहता है। फलस्वरूप शरीर को काम करने का प्रोत्साहन मिलता रहता है।

त्वक् की सुचारु रूप से वृद्धि तथा उसकी निरोगता के लिए विटामिन $बी_2$ (Vitamin B_2) का शरीर में होना नितान्त ग्रावश्यक है। इसकी कमी से शरीर के त्वक्, जीभ, ग्रधर, तथा नेत्र पटल मे वर्णभेद हो जाता है। यह तरकारियों से काफी मात्रा मे प्राप्त होता है। टमाटर में रीबोल्फविन के ग्रलावा बॉयोटिन (Biotin) भी प्राप्त होते हैं। फल वर्ग मे ग्रनन्नास, ग्रनार, पपीता, लीची ग्रादि मे से विटामिन $बी_2$ प्राप्त होता है।

विटामिन 'सी' (Vitamin 'C')

विटामिन सी का दूसरा नाम ग्रस्कारबिक ग्रम्ल है। ग्रस्थि तथा दाँतो की वृद्धि के लिए यह जीवति ग्रत्यावश्यक है। शिशुग्रों तथा दूध पिलाने वाली माताग्रो के लिए तो यह एक ग्रमृतोपम कार्य करता है। किसी शारीरिक घावो को भरने के लिए भी विटामिन सी की नितान्त ग्रावश्यकता होती है। विटामिन सी की कमी से घुटनों में दर्द, सूजन, दाँतों मे गलन तथा सडन, मसूड़ो से खून ग्राना ग्रादि बीमारियाँ हो जाती है। वातरोग भी विटामिन सी की ही कमी से होते है। इस बीमारी को स्कर्वी (Scurvy) कहते हैं। यह विटामिन शरीर में संचित नही होता, इसलिए दैनिक ग्राहार मे इसका होना ग्रावश्यक है।

वेस्ट इण्डियन चेरी (West Indian Cherry—*Malpighia pumicifolia*) मे 860 एम० जी० विटामिन सी होता है। यह मात्रा ग्रांवले से प्राप्त होने वाली विटामिन सी की मात्रा से करीब सवा गुनी ग्रधिक होती है। ग्रब तक हम यही जानते थे कि ग्रांवले से ही विटामिन सी ग्रधिक प्राप्त होता है। (मुत्तुकृष्णन तथा पलनिस्वामी 1966)।

इसके ग्रतिरिक्त नीबू वर्गीय फल, ग्रमरूद, पपीता, ग्राम, स्ट्राबेरी ग्रादि फलो मे तथा टमाटर, गाजर, हरी मिर्च ग्रादि तरकारियो मे भरपूर मात्रा में पाया जाता है।

विटामिन 'डी' (Vitamin 'D')

पाचन शक्ति मे उचित सचालन तथा मानव शरीर मे कैलशियम व फॉस्फोरस की पूर्ति के लिए विटामिन डी की ग्रावश्यकता होती है। यह जीवति दाँत तथा ग्रस्थियो की वृद्धि तथा उनमे चमक लाने ग्रादि का कार्य करता है। इसकी कमी से हड्डियाँ कमजोर हो जाना, दाँत हिलना, जुकाम, सर्दी, खाँसी ग्रादि रोगो का लगना भी सम्भव हो जाता है। यह गाजर, पत्ता गोभी तथा हरे शाको मे ग्रधिक पाया जाता है।

सारणी संख्या 3

तरकारियों में विटामिनों की मात्रा (मिलिग्राम प्रति 100 ग्राम के हिसाब से)

क्र सं.	तरकारी का नाम	विटामिन ए (आई० यू०)	थाइमिन	निकोटनिक अम्ल	रिबोफ्लेबिन	विटामिन सी
1	2	3	4	5	6	7
1.	हरा शाक (पत्ती वाली सब्जी)	11000	0·03	0·9	0·10	173
2.	पेठा	9200	0·06	0·4	0 04	2
3.	सेम	330	0·08	0 5	0 06	49
4.	मूंग	158	0·46	2·0	0 26	11
5	करेला	210	0 07	0 5	0 09	88
6.	लौकी (घीया)	—	0 03	0 2	0 01	5
7.	बैंगन	124	0·04	0 4	0·11	012
8.	पत्ता गोभी	2000	0 06	0 4	0 12	124
9.	गाजर	3150	0·02	0 4	0·02	3
10.	अरबी	40	0 09	0·4	0·03	—
11	चवले की फली	941	0 07	0 9	0·09	13
12.	ककड़ी	—	0 03	0·2	0 01	7
13	मिर्च	292	0 09	0.9	0·39	111
14.	जमीनकन्द	434	0 06	0·7	0·07	—
15.	लहसुन	—	0·16	0·4	0·23	13
16.	भिण्डी	58	0 06	0 6	0·06	16
17.	आलू	40	0 09	0 4	0·03	—
18.	प्याज	—	0 08	0·4	0 01	11
19.	काशीफल (कद्दू)	84	0 06	0·5	0·04	2
20.	हरा मटर	139	0·25	0 8	0 01	9
21	मूली	5	0 06	0·4	0·02	15
22·	फूल गोभी	38	0 10	0 9	0 08	66
23	चिरचिण्डा	160	0 04	0·3	0·06	—
24.	शकरकन्द	10	0·08	0·7	0 04	24
25.	टमाटर	320	0 04	0·3	0 05	32
26.	मूली (पत्ता)	6700	0 05	0 5	0·12	65
27.	टापीयोका	—	0 05	0 3	0·10	25
28.	मतीरा (तरबूज)	599	0·05	—	0.05	6
29.	चुकन्दर	10	0 08	0 7	0 04	24
30.	सलाद	—	0 09	0 5	0·13	10
31.	पालक	5500	0 05	0 5	0·11	48

बी० चौधरी 1967

एम० स्वामीनाथन 1969

फलों में विटामिन की मात्रा (मिलिग्राम प्रति 100 ग्राम खाद्य योग्य फल भाग में)

सारणी संख्या 4

क्र.सं.	फल का नाम	विटामिन ए (करोटिन) आई० यू० मे	विटामिन बी$_1$	निकोटनिक अम्ल	रिबोफ्लेबिन	विटामिन सी
1	2	3	4	5	6	7
1.	बादाम	न्यून मात्रा	0·44	2 5	0·12	0
2.	आंवला	—	0·03	0·2	0·03	700
3.	खुबानी	98	0·02	2 2	—	न्यून मात्रा
4.	सेब	न्यून मात्रा	0 03	0 2	0·03	2
5.	अवकोडो	—	—	—	—	13
6.	केला	न्यून मात्रा	0·04	0 3	0 03	1
7.	बेल	186	0·12	0·9	0 1	15
8.	बेर	70	—	—	—	—
9.	कमरख	240	—	—	—	—
10.	ग्रेडफ्रूट	15	—	—	—	—
11.	केप गूसबरी	—	—	—	—	49
12.	काजू	100	0 63	2·1	0·19	0
13.	काजूफल	—	—	—	—	—
14.	शरीफा	न्यून मात्रा	—	—	—	—
15.	सीताफल	न्यून मात्रा	—	—	—	—
16.	पिण्ड खजूर (पेरसिमन)	600	0·09	0·8	0 03	न्यून मात्रा
17.	दूरियन	20	—	—	—	—
18.	अंजीर	270	—	0·6	0 05	2
19.	अंगूर (नीलवर्ण)	15	0.04	0·3	0·01	3
20·	चकोतरा (मार्स सिडलस)	—	0 12	0·3	0·02	31
21.	अमरूद (देशी)	न्यून मात्रा	0 03	0·2	0 03	299
22.	अमरूद (पहाड़ी)	न्यून मात्रा	—	0·3	—	16
23	कटहल	540	0 03	0 4	—	—
24.	जामुन	—	—	—	—	—
25.	करोंदा (मूसा)	—	—	—	—	—
26.	लेमसाठ	13	0 08	—	0·12	1
27.	कागजी नींबू	26	0 02	0·1	0·02	63
28.	लीची	42	0 08	—	0·12	न्यून मात्रा
29.	लोकाट	—	—	—	—	—
30.	आम (कच्चा)	150	—	—	30	3
31.	आम (पक्का)	4800	0 04	0 3	0·02	24

1	2	3	4	5	6	7
32	मैंगो स्टीन	—	—	—	—	—
33.	सन्तरा	350	0 05	0 3	0 09	98
34.	पपीता	2020	0 04	0·2	0·02	46
35.	पैसन फ्रूट	90	—	—	—	—
36.	पीच (आड़ू)	न्यून मात्रा	0 02	0 2	0 01	1
37.	नासपाती	14	0 02	0·2	0 03	न्यून मात्रा
38.	परसीमोन	1710	—	—	—	—
39.	अनन्नास	60	0·03	0 2	0 04	63
40.	प्लम (लाल)	230	0·12	0 3	0 03	1
41.	अनार	—	—	—	0·1	16
42.	पूमल्लो	200	0 03	0·2	—	20
43.	रोस आपल	—	—	—	0·05	—
44	स्ट्राबरी	—	0·03	0·2	—	52
45.	वालनट	10	0·45	1·6	—	—

श्यामसिंह तथा साथी, 1963
एवं
एम० स्वामीनाथन तथा साथी, 1969

विटामिन 'ई' (Vitamin 'E')

वंशवृद्धि के लिए इस विटामिन की नितान्त आवश्यकता होती है। इसकी कमी से स्त्री-पुरुष में नपुंसकता आ जाती है। पत्ता गोभी, फूल गोभी, प्याज आदि से यह जीवति मानव शरीर को प्राप्त हो जाता है।

उपर्युक्त विटामिन्स का एक व्यक्ति को प्रतिदिन 75 मिलिग्राम विटामिन सी, 5000 अन्तर्राष्ट्रीय यूनिट (I. U.) विटामिन ए, 1-8 मिलिग्राम थाइमिन, 18 मिलिग्राम नियासीन तथा 2-7 मिलिग्राम रीबोफिलिन के हिसाब से उपयोग करना चाहिए।

फल तथा तरकारियों मे पोषक पदार्थ जैसे प्रोटीन, कार्बोहाइड्रेट, धातुलवण आदि आवश्यक मात्रा में मौजूद रहते है। भारतीय पोषक आहार विशेषज्ञों की राय में हल्का काम करने वालो को प्रतिदिन 30 ग्राम फल, 125 ग्राम हरी सब्जी, 100 ग्राम कन्दवर्गीय शाक तथा 75 ग्राम अन्य शाक खाना आवश्यक है। विटामिन्स तथा धातु लवणो के स्रोत सारणी संख्या 3, 4, 5 में दिया है।

सारणी संख्या 5

विटामिन्स तथा लवणों के स्रोत (प्राप्त मात्रा के क्रमानुसार सूची में दिये गये हैं)

हरा शाक	विटामिन्स	लवण
पालक (स्पाइनाक)	ए, डी	कैल्सियम
साग (अमरात, कीरे)	ए, सी, बी, ग्रुप, डी	कैल्सियम
अरबी (कोलोकेशिया) के पत्ते	ए, बी, ग्रुप	आइरन (लोहा) कैल्सियम
मेंदना का पत्ता (ड्रमस्टीक)	ए, सी	कैल्सियम
मरसों का साग	ए, सी	आइरन कैल्सियम
मेथी	सी, ए, बी, ग्रुप	कैल्सियम, लोहा

फल	विटामिन्स	तरकारी	विटामिन्स
पपीता	ए, सी	गाजर	ए, डी
ग्राम, कटहल, ग्राडू			
पैसनफल	ए	टमाटर	ए, सी
ग्रांवला	सी	ग्रालू	सी, ए
लैमन (नीबू)			
कागजी नीबू (लाइम)			
सन्तरा	सी, ए	मटर	बी ग्रुप
सीताफल (शरीफा)		प्याज, पत्ता गोभी,	ई, डी
काष्टफल (काजू, बादाम)			
दाल वर्ग	नइमिन	काशीफल (कोला)	ए
		पत्ता गोभी	ए
		शकरकन्द	ए

ग्रचाय्या के० टी० 1975

विटामिन तथा ऊष्मा (Heat & Vitamins)

विटामिन ए के ग्रग्रगामी करोटिन है, या विटामिन ए का जनककर्त्ता करोटिन कहा जा सकता है। यह दोनो ऊष्मा-सह (Heat tolerant) होते हैं।

टी० एन० मौरिस का कथन है कि मक्खन मे पाये जाने वाले विटामिन ए मे 120° (248° एफ) तक की ऊष्मा पर कोई ग्रन्तर नहीं ग्राता है। इसी प्रकार यह 12 घटे ताप सह सकते हैं। लेकिन 120° से० पर वायु सम्पर्क में ग्रा जाय या 80° (176°एफ) 12 घण्टे तक वायु सम्पर्क मे ग्रा जाय तो विटामिन ए पूर्ण रूप से, उस पदार्थ से नष्ट हो जायेगा। इसका तात्पर्य यह हुग्रा कि खाद्य पदार्थों को वायु रहितावस्था मे ऊष्मोपचार कर विटामिनों की क्षति से बचाया जा सकता है।

इस प्रकार विटामिन बी$_2$ (रिबोफ्लेबिन) तापसह होते हैं। लेकिन ग्रॉक्सीकरण से यह भी नष्ट हो सकता है, जबकि विटामिन बी (Vitamin B) ऊष्मासह नहीं है। लेकिन निकोटिनिक ग्रम्ल ऊष्मा-ग्रॉक्सीकरणसह होते है। ग्रन्य विटामिन ऊष्मासह तो है, लेकिन ग्रॉक्सीकरणसह नहीं होते हैं। ग्रत. ऊष्मीकरण से भी कुछ जीवनि नष्ट हो जाते हैं।

विटामिन सी क्षारीय ग्रवस्था मे (Alkaline Conditions) तथा रासायनिक उदासीन घोल (Chemically neutral Solution) मे ग्रॉक्सीकरण से नष्ट हो जाता है। मगर ग्रम्ल घोल (Acid Solution) मे उतना नष्ट नहीं होता। विटामिन सी ताप-प्रकाशसह है। लेकिन ग्रॉक्सीकरण से यह नष्ट हो जायेगा। शर्करा तथा परिरक्षक की उपस्थिति मे विटामिन सी नष्ट नहीं होता। यह भी देखा गया है कि कटे हुए फलो मे शर्करा मिलाकर पकाया जाय तो विटामिन नष्ट नहीं होता। शर्करा की चासनी तैयार कर, ठण्डा कर उसमे फल-रस मिलाया जाय तथा साथ ही परिरक्षक भी मिलाया जाय, उसको वायुरहितावस्था में बन्द कर रखा जाय तो भविष्य मे विटामिन सी नष्ट नहीं होगा। इसलिए फल पेय के प्रयोग से विटामिन की कमी दूर हो जाती है।

विटामिन्स तथा विलेयता (Vitamins and Solubility)

विटामिनों मे कुछ तो जल विलयशील होते हैं तो कुछ अन्य वसा-विलयशील (Fat-Soluble) होते हैं।

जल विलेय विटामिन

विटामिन 'बी' वर्ग तथा 'सी' जल विलेय होते है, ये जिन फलों तथा शाकों मे मौजूद होते है, उन आहारों के उत्पादों मे जल विलयशील विटामिनों को धारणीय रखना असंभव है, क्योंकि उत्पादों के लिए कच्चे माल (फल तथा तरकारी) को धोना, काटना, उबालना तथा उस पानी को निथारना आदि क्रियाओं से जल विलेय विटामिन उस जल मे घुलकर नष्ट हो जाता है। इसलिए फल तरकारी पहले ही धोकर, शुद्ध वातावरण मे काटकर रखा जाना चाहिए, ताकि उसको दुबारा धोना नहीं पड़े। इसी प्रकार शाक-सब्जियों को उबालकर उस पानी को निथारना भी नही चाहिए। जैसे कुछ लोग अज्ञानवश पालक, ग्वार की फली आदि सब्जियों को उबालकर, पानी को निथारकर फेंक देते हैं, जिससे जल विलेय विटामिन (थाईमिन, रीबोफलेविन, अस्कार्बिक अम्ल) नष्ट हो जाते है। इन्हें मरकोग्राम के आधार पर नापा जाता है।

वसाविलेय विटामिन (Fat Soluble)

विटामिन 'ए' 'डी,' 'ई' तथा 'के' वसाविलेय होते है, इन्हें अन्तर्राष्ट्रीय मात्रक (I.U) मे नापा जाता है। ये जीवित वायु की उपस्थिति मे ऊष्मासह होते हैं। लेकिन ऑक्सीजन की उपस्थिति मे ऊष्मासह नही होते। पहले भी कहा जा चुका है कि ऑक्सीजन की उपस्थिति मे 115–5° से० (240° एफ) तक तापोपचार करने से खाद्य पदार्थों में से विटामिन की कोई खास क्षति नही होती। मगर ऊष्मोपचार किये गये उत्पादों का अधिक तापमान वाले गोदामों मे सचयन करने से उनका विटामिन ए क्षतिग्रस्त हो जाता है।

विटामिन डी ऊष्मा-ऑक्सीजन की उपस्थिति मे नष्ट हो जाता है। मगर अलग-अलग परिस्थितियों में यह ऊष्मासह भी होते है। उबलते वसा मे विटामिन डी मिलाने पर यह देखने में आया है कि वह शीघ्र ही नष्ट हो जाता है। साथ ही यह भी देखा गया है कि यह ऊष्मा मे नष्ट नही होता। निरीक्षण करने से यह भी सिद्ध हुआ है कि करीब-करीब विटामिन ई का भी हाल यही होता है।

खाद्य पदार्थों के परिरक्षण-काल मे अगर कम समय मे अधिक ऊष्मा प्रयोग किया जाये तो न्यून मात्रा मे ही विटामिन की क्षति होगी। मगर अधिक समय मे कम ऊष्मा पर ऊष्मोपचार किया जाये तो अधिक मात्रा मे विटामिन की क्षति होती है। फल-परिरक्षण के समय यह बात ध्यान देने योग्य है, ताकि कम मात्रा मे विटामिनों की क्षति हो पाये, साथ ही उत्पादों के गुण बने रहें, क्योंकि उत्पादों के गुण उसमें पाये जाने वाले पोषक तत्वों तथा विटामिनों की मात्रा पर अधिक आधारित हैं, अतः यह देखा गया है कि परिरक्षित पदार्थों मे उपयुक्त पोषक तथा विटामिन आदि कितनी मात्रा मे पाये जाते है? इसके लिए अनुसंधान प्रतिवेदनों पर एक सरसरी दृष्टि डालना यहाँ उचित ही होगा।

परिरक्षित पदार्थों में विटामिन्स (Vitamins in Preserved Products)

पश्चिमी देशों के लोग भारतीयों से कहीं अधिक संसाधित (Processed) आहार ही अधिक पसन्द करते हैं, लेकिन भारतीय भी पहले से कहीं अधिक ससाधित (जैम, जेली, टमाटर की चटनी, मांस, कैचप आदि) खाद्य पदार्थ पसन्द करने लगे हैं, क्योंकि वे

भली-भाँति जानते है कि परिरक्षित (संसाधित) आहार प्रौद्योगिकज्ञों (Technologists) तथा तकनीकज्ञों (Technicians) की देखरेख मे बहुत ही शुद्ध तथा साफ वातावरण मे, वैज्ञानिक ढंग से, परिरक्षित किये जाते हैं। इसलिए उनके घरो मे बनाये गये आहारों से कही अधिक पोषक तत्त्व तथा विटामिन्स मानव शरीर को प्राप्त होगे। साधारणतया घरों मे जो आहार बनाया जाता है उसमे वायु-सम्पर्क तथा अनियन्त्रित ऊष्मोपचार से विटामिन की क्षति शीघ्र सम्भव होती है। आहार को अधिक पकाया जाय या कम, इस ज्ञान के अभाव मे पोषक तत्त्व या तो नष्ट हो जाते हैं, या कम हो जाते हैं या शरीर के उपयोग योग्यावस्था से दोषपूर्ण हो जाते है। यह बातें परिरक्षण मे नही आती हैं क्योंकि प्रौद्योगिकज्ञों (Technologists) तथा तकनीकज्ञो (Technicians) को भलिभाँति मालूम है कि कच्चे आहारो को किस प्रकार धोना है और कौन से परिमाण में काटना है, कितनी देर तक कौन-सी अवस्था मे (वायु-रहित या ऑक्सीजन रहित या दोनों रहित अवस्था) में पाचकीकरण करना है, आदि-आदि। इसके अलावा तकनीकज्ञ ऊष्मोपचार पर नियन्त्रण भी कर पाता है। असंसाधित खाद्यो मे पोषक तत्त्व तथा विटामिन्स कितनी मात्रा मे थे, और संसाधित खाद्य-पदार्थों मे उपर्युक्त तत्त्व कितनी मात्रा में बचे हुए हैं, आदि जानकारी को भी दृष्टिगत रखते हुए खाद्य-परिरक्षण किया जा सकता है।

कैनीकृत या डिब्बाबन्दी उत्पादों में विटामिन्स
(Vitamins in Canned Products)

खाद्य-पदार्थों को कैन (डिब्बा) मे भरकर संसाधित किया जाय तो 100° से० (212° एफ) से अधिक ताप कैन मे रखे हुए खाद्यों मे नही पहुँचता, विशेषकर उसके भीतर वायु भी अधिक मात्रा मे मौजूद नही रहती। इन्ही कारणो से उसमे से पोषक तत्त्व तथा विटामिन्स की कमी नही होती। कैनों (डिब्बो) के भीतर शीर्ष स्थान होता ही है। वहाँ पायी जाने वाली वायु में ऑक्सीजन तो होती है, लेकिन यह ऑक्सीजन डिब्बा स्वयं ग्रहण कर लेता है। अतः कैनीकृत आहारों मे ऑक्सीकरण से विटामिनों की क्षति नही होती। लेकिन जो भी अल्प क्षति उसमे हो जाती है वह पूर्व संसाधन या पूर्व परिरक्षण-क्रिया, जैसे धोना, विवर्णीकरण करना (Blanching) आदि क्रियाओ से ही होती है। फिर भी घरो मे बनाये गये आहारो मे जितने विटामिन पाये जाते हैं उससे कही अधिक, कैनीकृत आहारो में होते हैं। यह प्रतिवेदन सन् 1963 मे ओलिवर (Ollivar) ने दिया था।

सेबो का छिलका निकालकर, बीच मे से बीजकक्ष (Core) अलग कर सेब-टुकड़ो का कैन-संसाधन (डिब्बाबन्दी) किया तो सेब-उत्पाद मे जितना विटामिन सी धारणीय था, उसमे से कही अधिक विटामिन सी उन कैन-संसाधित सेबो मे था, जिनका छिलका नही निकाला गया, बीजकक्ष अवश्य दोनो अवस्थाओ मे निकाला गया था। इससे यह साबित होता है कि छिलके के साथ गूदे के ऊपरी भाग मे ही विटामिन सी पाया जाता है। अतः सेबो का छिलका नही उतारना चाहिए।

परन्तु सन् 1941 मे आडम (Adam W.B., 1941) ने कैनीकृत उत्पादों का समाधान करके, 6 महीने पश्चात् परीक्षण किया तो पाया कि विटामिन सी नष्ट हो चुका है। इसका कारण डिब्बा भरते समय आवश्यकता से अधिक शीर्ष स्थान छोड़ना था। इससे वहाँ अधिक वायु केन्द्रित हो गयी थी तथा अधिक ऑक्सीजन भी थी, जिसके प्रभाव से विटामिन सी की हानि हुई।

कुर्ग सन्तरा (Loose Skinned Oranges)

कुर्ग सन्तरा तथा सातपुड़ी सन्तरा के छिलके क्षारीय क्रिया (Lye Peeling) द्वारा निकाले गये तो यह देखा गया कि उनमे से 14–0 से 17–0 प्रतिशत विटामिन सी नष्ट हो जाता है। इन्ही सन्तरों का कैनीकरण किया गया, उन्हें 24 से 30° से० (75-86° एफ) भवन ताप पर (Room Temperature) एक वर्ष रखा, उसके उपरान्त निरीक्षण किया तो देखा कि उसमे 5 प्रतिशत विटामिन सी नष्ट हो चुका है (सिद्धप्पा तथा भाटिया 1956)

सन् 1954 मे प्रूथि ने यह प्रतिवेदन प्रस्तुत किया कि बादामी, (अल्फॉनसो) रसपुरी किस्म के आमो के कैनीकरण के बाद परीक्षण से यह पता चला कि 90 प्रतिशत करोटीन 98 प्रतिशत विटामिन सी क्रमशः उसमे धारित (Retained) थे।

(Pruthi et al., 1954)

सन् 1956 मे सिद्धप्पा तथा भाटिया ने यह भी देखा था कि बादामी आम में 8212, रसपुरी में 4727, नीलम आम में 2365, मूनगोवा में 1685 मिलि माइक्रोग्राम (Milli microgram) करोटीन की हिसाब से हर एक किस्म के आम के प्रति 100 ग्राम फलों में पाया गया था। मगर उन्हें कैनीकरण कर 24–30° से० पर 6 मास रखकर निरीक्षण किया गया तो 65 प्रतिशत करोटीन उन उत्पादों में धारित थे। सन् 1955 मे सिद्धप्पा तथा भाटिया ने एक और प्रतिवेदन दिया था कि कैनीकृत बादामी आमों के प्रति सौ ग्राम फल मे 60 मि० ग्रा० विटामिन सी धारित था।

डिसरोसियर (Desrosier) 1970 का कथन है कि जब मटर को कैनीकृत किया तो 50 प्रतिशत थाइमिन, 'लिमा' सेम (Lima beans) तथा मक्का के कैनीकरण मे 80 प्रतिशत थाइमिन नष्ट हुआ पाया गया। उन्होने आगे कहा कि उतना थाइमिन गाजर के कैनीकरण से क्षतिग्रस्त नही हुआ। इसके अलावा डिसोसियर ने यह भी देखा कि कैनीकरण से अधिक रिबोफ्लेमिन बोतलीकरण से नष्ट होता है।

ऑक्सीजन तथा ताम्र की उपस्थिति मे बहुत देर तक कम तापमान में भी ऊष्मोपचार किया जाये तो खाद्य-पदार्थों से अस्कॉर्बिक अम्ल (Vitamin C) अधिक नष्ट हो जाता है। अधिक तापमान पर कम समय में ऊष्मोपचार करने से अस्कॉर्बिक अम्ल की क्षति कम होती है, तथा यह अम्ल किण्वकों का ऑक्सीकरण भी करता है। साथ ही यह भी देखा गया है कि टिन वाहिकाओ (Tin Containers) मे खाद्य-पदार्थ के विटामिन सी को खाद्यो में ही रोक रखने का गुण भी अधिक होता है।

धूप में सुखाये तथा निर्जलीकरण से सुखाये उत्पादों में विटामिन (Vitamins in Sun Dried & Dehydrated Products)

डिसरोसियर का कथन है कि धूप मे सुखाये गये खाद्य-पदार्थों में विटामिन सी और करोटीन अधिक नष्ट होता है। जबकि निर्जलीकृत खाद्य-पदार्थों में तथा हिमीकरण-निर्जलीकरण (Frezee-Dehydration) से बने उत्पादो में विटामिन "सी" तथा पोषक तत्त्व उतना नष्ट नहीं होता है। फलों को सुखाने के लिए अपनायी गयी विधि के अनुसार विटामिनो की मात्रा में कम या अधिक क्षति हो सकती है। जो फल जिस विधि से सुखाये जाते हैं उस विधि के अनुसार विटामिन क्षति मे भी अन्तर आ सकता है। सन् 1951 में

मोरिस (Morris, 1951) ने प्रतिवेदन दिया कि तरकारियों में से विटामिन ए नष्ट हो जाता है। परन्तु सुखाये गये टमाटर में विटामिन ए, बी तथा सी धारित थे, लेकिन कैनीकृत टमाटर में विटामिन सी की मात्रा कम थी। उन्होंने आगे बताया कि सूखे नीबू रस-चूर्ण (Dried Lime Powder) तथा सन्तरा रस-चूर्ण में विटामिन सी अधिक पाया गया था।

सन् 1930 में मोरगान तथा फील्ड (Morgan & Field, 1930) और सन् 1931 में मोरगान, फील्ड तथा निकोलास (Morgan, Field and Nicholas, 1931) आदि वैज्ञानिकों ने प्रूणस (Prunas) तथा खुबानी (Apricots) में अनुसन्धान करके बताया कि धूप में तथा निर्जलीकरण द्वारा सुखाने से पहले, अगर गन्धकीकरण (Sulphuring) किया जाय तो उसमें से विटामिन सी नष्ट नहीं होगा। इन लोगों ने पुन. कहा कि प्रूणस् फलों को जब उबलते क्षारीय घोल में (Boiling Lye) डुबोया गया तो उसमें विटामिन सी बहुत मात्रा में नष्ट हुआ। इसका कारण प्रूणस् के हर-एक टुकड़ों पर गन्धकयुक्त भाप पहुँचने से ही है, लेकिन गन्धकीकरण किये हुए सूखी खुबानियों को डिब्बों में भरकर एक वर्ष तक भवन-ताप पर संचयन किया गया, बाद में उसका निरीक्षण किया गया तो पता चला कि 60 प्रतिशत विटामिन सी उसमें से नष्ट हो चुका है। लेकिन जब आड़ूफलों (Peaches) को विवर्णीकरण, गन्धकीकरण आदि क्रियाओं के बाद सुखाया गया तो उसमें विटामिन सी अधिक मात्रा में धारित था। निम्नलिखित सारणी सख्या 6 से यह और स्पष्ट हो जायेगा।

सारणी–6

*संसाधन अभिक्रिया में जो अन्तर किया गया उसके अनुसार सूखे आड़ुओं में विटामिन सी की मात्रा में हुआ परिवर्तन, अन्तर। (Changes in Vitamin C Content in dried Peaches on Influenced by Processing Conditions)

अभिक्रिया	फलों के हर एक सौ ग्राम में कितना मिलि ग्राम विटामिन सी पाया जाता है (शुष्क भारक के आधार पर)	
	ताजा (Fresh)	सूखे फल (Dried)
1 गन्धकीकरण करके धूप में सुखाये गये फल	52	34
2. गन्धकीकरण, विवर्णीकरण तथा सुखाये	68	39
3. गन्धकीकरण, निर्जलीकरण	52	64
4. गन्धकीकरण, विवर्णीकरण, निर्जलीकरण	52	60

*(Mrak and Pfaff, 1947) : (म्राक व पफ (1947)।

दास और जैन के सन् 1955 के प्रतिवेदन के अनुसार आम तथा पपीता के गूदों को सुखाने पर पाया गया कि उनमें से एस्कॉरबिक अम्ल करीब-करीब नष्ट हो चुका है,

लेकिन करोटीन 35–40 प्रतिशत ही नष्ट हुआ पाया गया। इन्हें 24° से 30° से० ताप मे सचयन किया तो उसमे 25–30 प्रतिशत करोटीन और नष्ट हो गये।

शाक-सब्जियों को उपर्युक्त आधार पर छाया में सुखायां जाये तो विटामिनों की क्षति की सम्भावना कम होगी। यदि किण्वकों को निष्क्रिय बनाये बिना सुखाया जाये तो उसमे पाये जाने वाले करोटीन 80 प्रतिशत नष्ट हो जायेंगे, जबकि विवर्णीकरण से 15 प्रतिशत थाइमिन क्षतिग्रस्त हो जायेगा। यदि शीघ्रता से धूप में सुखाया जाए तो विटामिन सी की क्षति को रोका जा सकता है। लेकिन उनका संचयन करते समय विटामिन क्रमशः क्षतिग्रस्त होते जायेंगे।

जैम, जैली आदि में विटामिन्स (Vitamins in Jam, Jellies etc.)

सन् 1934 मे जिलवा (Zilva et al 1934) और उसके साथियों ने सेब से जैली निर्माण करते समय यह निश्चित मात्रा में अस्कौर्बिक अम्ल जैली मिश्रण में (पकाते समय) मिलाया, निर्माण के बाद किये गये निरीक्षणो से पता चला कि इससे 10 से 20 प्रतिशत अस्कौर्बिक अम्ल ही नष्ट हुआ था, तथा इस निर्णय पर पहुँचा कि सेब में पाये जाने वाले अस्कौर्बिक अम्ल मात्रा भी उतनी ही प्रतिशत मे नष्ट होती होगी।

सन् 1936 में ऑलिवर (Olliver, 1936) ने निम्न प्रतिवेदन दिया। उन्होने शीत प्रदेशीय फलो से जैम तथा सन्तरो से मारमलड (Marmalade) बनाकर अध्ययन किया कि उपर्युक्त पदार्थों तथा उनके असंसाधित वस्तुओ मे कितनी मात्रा मे विटामिन सी पाये जाते हैं, इससे ओलीवर ने यह सिद्ध किया कि ऊष्मीकरण से विटामिन अल्प-मात्रा मे नष्ट होते हैं तथा असंसाधित (कच्चे) पदार्थों मे कुछ सीमित मात्रा मे विटामिन पाये जाते है। अत. उनके उत्पादो मे विटामिन अवश्य पाये जायेंगे।

इस प्रकार ऊष्ण प्रदेशीय फलो (आवला, आम, पपीता) तथा उसके जैम, जैली और अन्य उत्पादो मे भी विटामिन पाये जायेंगे।

इस प्रकार वे इस निर्णय पर पहुँचे कि इन उत्पादों में यदि शर्करा मिलायी जाये तो विटामिन क्षति नही होगी, क्योकि विटामिन शर्करा मे विलेय है।

फल पेयों, फल रसों, फल शर्बतों में विटामिन्स (Vitamins in Fruit Beverage, Juice and Fruit Syrups)

फल पेयों, फल रसो, शर्बतो आदि के लिए फल पूर्ण रूप से विकसित, पका हुआ तथा ताजा होना चाहिए। तभी उस फल-पेय मे उस फल की सुगन्ध, स्वाद तथा गुण पाया जायेगा। इस तरह के फलों तथा उसके उत्पादो मे पोषक तत्त्व व विटामिन उचित मात्रा मे पाये जायेंगे। इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिए ही परिरक्षण किया जाता है।

साधारणतया फल वर्ग पानको तथा अन्य पेयों का उतना ऊष्मीकरण नही किया जाता जितना रसो का करना पड़ता है। शर्करा की चासनी बनाकर, उसे ठण्डा कर (भवन ताप पर) उसमें रस मिलाया जाता है और तुरन्त बाद परिरक्षक मिलाकर बोतलीकरण (Bottling) किया जाता है, जिससे विटामिन की क्षति नही होती।

नीबू-वर्गीय फल-रसो मे पाये जाने वाले विटामिन सी की क्षति रोकने तथा विकृतियो या खराबियों से रस को बचाने हेतु, विशेषकर औद्योगिक क्षेत्र में (विकसित देशो मे

ही प्रचार में है) उन्हें वायु रहितावस्था मे निकाला जाता है, या रसो को निःवातनीकरण (Deaeration) किया जाता है, तुरन्त, बाद उपर्युक्त विधि से पास्तुरीकरण कर बोतलीकरण किया जाता है।

सन् 1944 में गिरधारी लाल तथा साथियो ने प्रतिवेदन दिया कि नीबू वर्गीय फलों में सल्फर डाइ-ऑक्साइड (Sulphur Dioxide (SO_2)) मिलाकर परिरक्षण कर, एक साल गोदाम मे रखकर, परीक्षण किया गया तो सन्तरा रस मे से 38–32 प्रतिशत विटामिन सी तथा नीबू मे 35–45 प्रतिशत विटामिन सी क्रमश. क्षतिग्रस्त पाया गया था।

सिद्धप्पा का कथन है कि सन्तरा-रस को 10° शर्करामान या ब्रिक्स (10° Brix) से समनीत दाब (Reduced Pressure) पर 75 प्रतिशत ब्रिक्स मे सान्द्रीकरण किया गया तो उसमे से 10–15 प्रतिशत विटामिन सी नष्ट हुआ था। लेकिन उसी समय यह भी मालूम हुआ कि सन्तरा-रस चूर्ण मे मिलायी गयी विटामिन सी की मात्रा एक वर्ष सचयन के बावजूद 25–30 प्रतिशत नष्ट हुई पाई गई थी। सन् 1950 मे प्रूथी (Pruthi) ने यह अध्ययन किया कि नीबू वर्गीय फल रसो को परिरक्षण कर, भवन ताप पर डेढ से तीन माह तक रखा गया तथा उसके बाद के परीक्षण से यह मालूम हुआ कि 10–15 प्रतिशत विटामिन सी उसमे नष्ट हुआ।

सन् 1959 मे शास्त्री तथा सिद्धप्पा ने आवले का विभिन्न विधियों द्वारा मुरब्बा बनाकर यह अध्ययन किया कि उसमें अस्कॉर्बिक अम्ल तथा टैनिन (Tanins) में क्या-क्या परिवर्तन आता है। उसके आधार पर उन्होने यह प्रतिवेदन दिया कि आंवलों का अधिक देर तक लवणोपचार (Salt Treatment) किया जाए तो 13 प्रतिशत तक अस्कॉर्बिक अम्ल क्षतिग्रस्त हो जाता है। लेकिन परम्परागत विधि से (लवणोपचार रहित) परिरक्षण किया गया तो मुरब्बे मे विटामिन सी 15.9 से 39 9 प्रतिशत विद्यमान (धारित) रहा है, लेकिन आंवले मे पाये जाने वाले अस्कॉर्बिक अम्ल को देखते हुए मुरब्बे में इससे कही अधिक अस्कॉर्बिक अम्ल विद्यमान रहना चाहिए था। मगर टेनिनस् (Tannins) की मात्रा मुरब्बे में बहुत अधिक (45.5 से 57.8 प्रतिशत) पायी गयी। परम्परागत विधि (Conventional), निर्वात या रिक्त विधि (Vacuum method) इनकुबेषन विधि (Incubation Method) आदि से आंवले का मुरब्बा बनाकर अध्ययन किया तो पाया गया कि तीसरी विधि (इन्कुबेषन से दोनो का अधिक मात्रा मे विनाश हो जाता है, अर्थात् अस्कॉर्बिक अम्ल तथा टेनिनस् की धारणीयता क्रमशः केवल 25.7 और 42.2 प्रतिशत है। मगर रिक्त विधि से इन दोनो की धारणीयता कही अधिक थी (81·7 और 77·8 प्रतिशत क्रमश.) तथा मुरब्बा देखने मे भी कही अधिक अच्छा था।

आंवला सांद्रीकृत (Amla Concentrate) में 55 प्रतिशत विटामिन पाये जाने का प्रतिवेदन सन् 1960 मे देव तथा चन्द्रशेखरन् ने दिया था। आवले का गूदा बनाकर दारू (काष्ट) संपीडक (Wooden Press) की सहायता से रस निकाला गया लेकिन गूदे को कपड़े मे लपेट कर निकाला था। परीक्षण से पता चला कि इसमें से 55 प्रतिशत विटामिन सी था। उन्होंने आगे कहा कि 80 प्रतिशत विटामिन उस रस से प्राप्त हुआ जो गूदे को, जल में निष्कर्षण (निचोड़) किया गया था। मगर न्युट्रल लेड एसिटेट (Neutral Lead Acetate) तथा तप्त मद्यसार (Hot Alcohol) पर एक के बाद एक उपचार किये तो उससे प्राप्त अवशेष (Residue) में अस्कॉरबिक अम्ल की मात्रा अधिक थी।

ऊष्मीकरण से विटामिन को नष्ट होने से बचाने के लिए साद्रित आंवले को रिक्त विधि द्वारा निकालना चाहिये तथा संचयन काल में होने वाली विटामिन क्षति को रोकने हेतु उस गूदे मे अस्कॉर्बिक अम्ल ऊपर से और मिलाया जाना चाहिए। सन् 1959 मे रत्नम् तथा श्रीनिवासन ने आंवला का ऊष्मोपचार करके उपर्युक्त प्रतिवेदन दिया था।

सन् 1954 में जैन तथा गिरधारी लाल ने आंवला-शर्बत बनाकर अध्ययन किया तथा यह प्रतिवेदन दिया कि आंवला-शर्बत के प्रति 100 ग्राम मे (42 5 mg Per fluid 0z) 12 2 मिलिग्राम विटामिन सी धारित था। एक साल बाद परीक्षण किया तो 35 से 45 प्रतिशत विटामिन क्षतिग्रस्त हुआ। उन्होंने आगे कहा कि अगर आंवला-रस अन्य उत्पादों में भी काम में लिया जाए तो वह इन्हे भी पोषक बना सकता है।

अनन्नास उत्पादों में विटामिन सी (Vitamin C in Pineapples Products)

दक्षिण भारत मे अनन्नास की कई किस्मों की खेती की जाती है। क्यू (Kew), जैइन्ट क्यू (Giant Kew), मोरोसिस (Mouritus) आदि कुछ किस्मे हैं। क्यू मे 14–16.6 मिलीग्राम, जैइन्ट क्यू मे 6.1 से 10 2 मिलीग्राम, मोरेशियस मे 19.3 से 24.6 मिलीग्राम विटामिन सी प्रति 100 ग्राम रस में पाया गया था। यह प्रतिवेदन 1955 मे गिरधारी लाल तथा प्रूथी ने अनन्नास उत्पादो मे विटामिन की मात्रा के अध्ययन के आधार पर दिया। शर्करा-युक्त तथा रहित, अनन्नास-रस तथा टुकड़ों का केनीकरण-बोतलीकरण किया गया तथा उसका संचयन किया तो पाया कि उसमे 91.2 से 96.5 प्रतिशत अस्कॉर्बिक अम्ल था। मगर गन्धकोपचार किये हुए अनन्नास मे अस्कॉर्बिक अम्ल 96 3–98.2 प्रतिशत पाया गया था। रस तथा पेयों को 24–30° से० तक के भवन ताप पर 12 मास रखा गया तथा निरीक्षण से पता चला कि, उसमे 80–85 प्रतिशत अस्कॉर्बिक अम्ल मौजूद था। साथ ही 37° से० पर रखे हुए मे 38 1 प्रतिशत से 57.2 प्रतिशत विटामिन ही धारित था। उपर्युक्त तापमानो पर गन्धकोपचार किया हुआ अनन्नास, संचयन कर देखा तो उनमें पास्तुरीकृत रसों मे पाये गये विटामिन की मात्रा से कहीं अधिक पाया गया था। लेकिन अनन्नास-रस में विटामिन सी को रोकने के लिए शर्करा मिलायी गई तो सफलता प्राप्त नहीं हुयी। उनके प्रतिवेदन का यही साराश है कि उपर्युक्त उत्पादो को तैयार कर भवन ताप पर संचयन किया जाए तो विटामिन सी उत्पादों में धारित रहेगा।

टमाटर रस में विटामिन (Vitamins in Tomato Products)

फल-तरकारी परिरक्षण शास्त्र के आचार्य डब्लू० वि० क्रुश (W. V. Cruess) का कथन है कि टमाटर रस को ठीक तरीके से निकाल कर परिरक्षण किया जाए तो सन्तरा में जितना विटामिन पाया जाता है, उसका आधा विटामिन सी तथा उससे कहीं अधिक विटामिन ए उस टमाटर रस में धारित होगा। टमाटर मे पाये जाने वाले विटामिन सी को धारित रखना एक कठिन काम है।

सन् 1931 में कोहमन (Coheman) ने प्रतिवेदन किया था कि ऊष्मोपचार-रहित विधि से अगर टमाटर का रस निकाला जाये तो वायु के सम्पर्क से ऑक्सीकरण होता है, जिसके कारण विटामिन सी की क्षति होती है। कोहमन ने जब ऊष्मोपचार-विधि से टमाटर-रस निकाला तो देखा कि विटामिन सी की क्षति नहीं होती है। इसके लिए एक विधि यह है कि पहले टमाटर के टुकड़े किये जायें, वायु-रहित अवस्था अर्थात् भाप जैकेटीकृत

(Steam Jacketed Kettle) केतली में 82·5° से०—87.5° से० (180°–190° एफ) पर तापोपचार करके तप्त अवस्था मे ही रस तथा गूदे को निकाला जाये तो अधिक विटामिन सी धारित रह सकेगा।

लालसिंह तथा गिरधारी लाल ने इस विषय पर अनुसन्धान किया और सन् 1945 में प्रतिवेदन दिया कि भापोपचार से करोटीन की क्षति नहीं होती, मगर तप्त टमाटर से जब रस निकाला जाता है, तब वायु के सपर्क (ऑक्सीकरण) से विटामिन सी की क्षति हो जाती है। यह भी देखा गया कि बोतलीकरण के बाद जिस रस का पास्तुरीकरण किया गया, उसमे विटामिन सी कम पाया गया जबकि पास्तुरीकरण कर बोतलीकृत टमाटर के रस में विटामिन सी अधिक मात्रा में था। उन्होंने आगे कहा कि इसका कारण यह है कि ऊष्मोपचार से लघुकरण सा पिंड (Reduction Like Bodies) उत्पन्न होता है तथा ये इण्डोफिनोल वर्ण (Indophenol Colour) के ऊपर अपचायक (Reducing Agent) के रूप में क्रिया करने के कारण पैदा होता है। फॉर्मेल्डिहाइड कंडनशेशन तकनीक (Formaldehyde Condensation Technique) द्वारा विटामिन सी की मात्रा का भी अध्ययन कर सकते हैं। इसी कारण फल-शाकों के उत्पादों मे पाये जाने वाले विटामिन को मापा जा सकता है। सन् 1955 मे केमरोन (Cameron et al 1955) तथा साथियों ने केनीकरण शालाओं (Canning Factory) में से (अमरीका में) तीन विभिन्न डिब्बे बन्द नमूने इकट्ठे कर अध्ययन किया तो पाया गया कि उसमे विटामिन की मात्रा में भी भिन्नता थी, उनके प्रतिवेदन के अनुसार यह भिन्नता अलग-अलग कैनीकरण शालाओं में अपनायी गयी विधि की भिन्नता के कारण हुई।


चित्र संख्या–5 पास्तुरीकरणी यंत्र)

एक कैनीकरण शाला मे टमाटरों का 87.5° से० (190° एफ) पर एक मिनट भापोचार (Steam Treatment) करके यन्त्रो द्वारा रस तथा गूदा निकाला गया। उसका निर्वायुकरण कर 250° एफ (121 5° से०) पर पास्तुरीकरण

(Pasteurization) कर, डिब्बों मे भरा तथा सील बन्द कर उल्टा रखा गया तथा वायु मे स्वयं शीतलीकरण होने दिया । इस प्रकार तैयार किये हुए रसो मे 94 प्रतिशत विटामिन सी धारित था ।

दूसरी कैनीकरणशाला में कच्चे टमाटरो को सीधे यन्त्र की सहायता से पीसा गया, उसके बाद ऊष्मा-विनियमकारी (Heat Exchanger or Heat Interchanger) नामक एक विशेष पास्तुरीकरण यन्त्र में पंप कर उसे 105° एफ पर ऊष्मोपचार कर इस टमाटर को लुगदीकरण यन्त्र (Pelpur) मे भेज दिया गया । वहाँ गूदे तथा रस को तैयार कर छान लिया । इस रस को 195° एफ (87.5° से०) पर ऊष्मोपचार कर, लवण (नमक) मिलाया और उसका तुरन्त कैनीकरण किया गया तथा संसाधन भी किया गया । इसके परीक्षण से यह मालूम हुआ कि इसमें विटामिन सी 77 प्रतिशत मौजूद था ।

तीसरी कैनीकरण शाला मे एक और तरीके से रस परिरक्षण किया जाता था । वहाँ पहले टमाटरो को भापोपचार कर, टुकड़े करते थे और ताम्र कुण्डली (Copper Coil) युक्त बर्तनों मे 195° एफ (90.5° से०) पर ताप कर, तुरन्त बाद, इसे टंकियो मे भेज देते थे, जो एक के बाद एक क्रम मे सजायी हुई थी । ताम्र कुण्डलियो के सहारे ऊष्मोपचार करने के बाद टमाटर के रस को छान लेते थे, इस रस मे उचित मात्रा मे लवण मिलाकर कैनीकरण करते थे बाद में उन रस भरे केनों को रिटार्टो मे ससाधित किया जाता था । इस प्रकार रस परिरक्षण के लिए लिया हुआ समय 45 मिनट था । मगर विटामिन तो मात्र 32 प्रतिशत ही धारित हो पाते थे ।

कमेरोन तथा साथियों ने इसका कारण यह बताया कि ताम्र उपस्थिति से विटामिन सी की क्षति हुई, क्योंकि विटामिन सी का उत्प्रेरकीकरण (Catalizing) किण्वक (Enzymes) टमाटरों का नही होता है, इसलिए उस रस मे से विटामिन सी की क्षति का कारण किण्वक नही है । उन लोगो ने यह भी देखा कि सदलन (Crush) किये गये टमाटरों के रस मे ताप मात्रा जितनी बढायी जायेगी, उतनी ही विटामिन सी की मात्रा भी ऑक्सीकरण से क्षतिग्रस्त होती रहेगी । मगर वाष्पीकरण बिन्दु (Boiling Point) मे पहुँचते ही इस प्रकार का वाष्पीकरण बन्द हो जाता है । यह तापमान करीब 160-180° एफ (71°-82.2° से०) के बीच मे आता है । अन्य विटामिनो को धारित रखने की शक्ति भी टमाटरो मे काफी होती है, लेकिन रस मे विटामिन ए की जरूरत हो तो गूदा मिलाना चाहिए, क्योंकि विटामिन ए रस मे विलय नही होता है, बल्कि गूदे मे धारित रहता है । साथ ही यह भी बताया कि विटामिन बी की भी क्षति नही होती है ।

हिमीकरणोत्पाद तथा विटामिन (Frozen Products & Vitamins)

हिमीकरण क्रिया स्वयं विटामिनों का नाश नहीं करती है । न्यून तापमान की (Low Temperature) मात्रा के आधार पर पोषकों की क्षति पर अन्तर तो आ सकता है, लेकिन विवर्णीकरण (Blanching) धोना, सदलन, आदि प्राथमिक क्रियाओ के कारण विटामिन की क्षति हो सकती है । उसी वक्त यह भी याद रखना पड़ेगा कि विवर्णीकरण क्रिया से ही किण्वक निष्क्रिय हो जाते हैं, और यह क्रिया विटामिन सी को धारित रख पाती है । हिमीकरण उत्पादों को भी विवर्णीकरणोपचार कराया जाता है ताकि उत्कृष्ट उत्पाद (Quality Products) बन सकें ।

असंसाधित खाद्यों मे जितना विटामिन पाया जाता है उतनी ही मात्रा में हिमीकरण उत्पादों मे भी पाया जायेगा। यह प्रतिवेदन सन् 1942 में ग्राहाम ने दिया था।

सन् 1933 में मोरगोन, फिल्ड तथा निकोलास (Morgan, Field and Nicholas) ने ये प्रतिवेदन दिया कि खुबानियों को वायुरहित अवस्था मे हिमीकरण किया गया तो विटामिन सी क्षतिग्रस्त नहीं हुआ था, जबकि वायु की उपस्थिति मे क्षतिग्रस्त हुआ देखा गया।

फल-शाको को पूर्व अभिक्रियाओं रहित (Without Pre-treatment) अवस्था में हिमीकरण किया गया तो किण्वक क्षतिग्रस्त नहीं हुआ था, लेकिन निष्क्रिय रहा, जबकि हिमीकरणोपरान्त निर्हिमीकरण (हिमद्रवीकरण) के समय पुनः क्रियाशील हो जाते हैं। इसी कारण विटामिन सी नष्ट हो जाता है। यह प्रतिवेदन सन् 1951 मे मॉरिस ने दिया था। उन्होने आगे कहा कि परिपूर्ण हिमद्रवीकरण (Thawing) के पहले ही ऐसे-ऐसे हिमीकरण उत्पादो का उपभोग (Consume) करना चाहिए। परिपूर्ण हिमीकरण हो जाए तो उत्पादों में सूक्ष्म जीवियो (जीवाणु) की संख्या, प्रजनन से, अत्यधिक हो जायेगी। यह बात हम पहले भी कह चुके हैं।

गुआडग्नि तथा साथियों (Guadagni et al 1961) का कहना है कि हिमीकृत स्ट्रॉबरी फलों को 0° एफ तापमान वाले गोदामों मे रखा गया तो विटामिन सी धीरे-धीरे कम होता गया (सारणी 7)।

उपर्युक्त क्षति को रोकने हेतु, परिरक्षण शालाओं के उत्पादो में ऊपर से अस्कॉर्बिक अम्ल मिलाकर पूरी कर देते हैं। इसलिए उत्पादो में विटामिन सी की कमी नहीं होती है।

आपको मालूम है कि विटामिन बी कम ऊष्मासह होते हैं, इसलिए विवर्णीकरण के समय यह नष्ट हो जाते हैं। इसके अलावा हिमीकृत उत्पादो को 0° एफ वाले शीतल गोदामों में रखा गया तब भी इनका नाश हुआ था। यह प्रतिवेदन 1970 मे क्रिस्त्रोसियर ने दिया था।

सारणी संख्या–7

हिमीकृत स्ट्रॉबरियों को 0° एफ पर संचयन किया गया तो उनमे पायी गई विटामिन क्षति।

कुल संचयन अवधि (दिनो मे)	पाई गई अस्कॉर्बिक अम्ल की क्षति (मिली ग्राम प्रति 100 ग्राम के हिसाब से)
0	31.5
60	30.5
120	29 0
140	26 0
480	20.0
720	14 0

(Gaudagni et al 1961)

विटामिन ए वसा (स्नेह) विलेय होता है। करोटीन विटामिन ए का पूर्वगामी है। यह हिमीकरण क्रिया के समय थोड़ा नष्ट होता है। जब गोदामों में 0° एफ पर संचयन किया जाता है तब भी नष्ट हो सकता है, लेकिन विवर्णीकरण किया जाये तो करोटीन की क्षति आगे सम्भव नहीं होगी। इसके अलावा सुचारु रूप से पैकीकरण (Packing) किया जाये तो गोदामों मे होने वाली क्षति को भी रोका जा सकता है।

अचारों में विटामिन (Vitamin in Pickles)

कच्चे खीरे मे जितना विटामिन सी होता है, उस मात्रा का 14 प्रतिशत विटामिन सी, 75 प्रतिशत करोटीन तथा थाइमिन उसके अचार मे धारित होता है, मगर कैलशियम, लोहाधातु के अंशो मे कोई कमी नहीं पाई गयी। यह प्रतिवेदन सन् 1960 में फेलर्स (Fellers) ने दिया था।

सन् 1960 में कृष्णन् तथा पलानिस्वामी ने यह प्रतिवेदन दिया कि जब वेस्ट इण्डियन चेरी का साबुत तथा टुकड़े कर अचार बनाया तथा अचारो को भवनताप पर 6 माह रखकर अध्ययन किया गया तो पाया कि वे बहुत स्वादिष्ट थे। उन्होने आगे कहा कि संचयन काल मे उसमें अस्कॉर्बिक अम्ल की क्षति होती रही। (सारणी–8) लेकिन 6 माह बाद भी उसके प्रति 100 ग्राम पर 860 मिलीग्राम अस्कॉर्बिक अम्ल पाया गया था। यह मात्रा अमरूद मे पाये जाने वाली (300 मिली ग्राम) मात्रा की दुगुनी तथा आंवले में पायी जाने वाली (700 मिलीग्राम) मात्रा से सवा गुणा अधिक थी।

सारणी संख्या–8

वेस्ट इण्डियन चेरी अचारों के 6 माह संचयन के बाद पायी गयी अस्कॉरबिक अम्ल की मात्रा—0*

संचयन काल दिनो में	अस्कॉरबिक अम्ल मात्रा हर एक 100 ग्राम पर कितनी मिलीग्राम के हिसाब से	
	अचार (साबुत फल)	अचार (टुकडो में)
1. कच्चे फलो मे	2350	2350
2. अचार बनने के 8 दिन बाद	1750	1500
3. अचार बनने के 23 दिन बाद	1348	1144
4 ,, ,, 68 ,,	1216	982
5. ,, ,, 113 ,,	1023	821
6. ,, ,, 158 ,,	892	750
7. ,, ,, 188 ,,	860	735

*कृष्णन् तथा पलानिस्वामी 1966

उपर्युक्त तालिका से स्पष्ट है कि टुकड़ों मे किये गये अचार मे अस्कॉर्बिक अम्ल कम तथा साबुत मे अधिक पाये जाते हैं। यह अन्य अचार बनाते समय ध्यान रखने योग्य बात है। इसी प्रकार अन्य भारतीय अचारो मे पाये जाने वाले विटामिनो का अध्ययन अति आवश्यक है। अब तक की जानकारी के अनुसार इस क्षेत्र मे कोई अनुसन्धान नही हुआ है। अस्कॉर्बिक अम्ल वाले कई फल (नीबू, आँवला इत्यादि) से अचार बनाने की प्रथा

भारत में प्रचलित है, तथा प्रचार के लिए भारत प्रसिद्ध है। इसको दृष्टिगत रखते हुए प्रचारों पर अनुसन्धान अति-आवश्यक सिद्ध होता है।

मोम लेपित फलों में विटामिन (Vitamin in Wax Fruits)

सन् 1971 में अग्निहोत्री तथा राम ने मोम इमलसन लेपित तथा लेपन-रहित तरीकों से पूर्ण परिपक्व तथा अध-पके केलों का भवनताप में संचयन किया तथा 8 दिनों बाद उसका परीक्षण किया गया तो पाया कि, मोम इमलसन लेपित केलों में 36–61 मिली ग्राम तथा नियन्त्रण (Control) वालों में 3–5 मिलीग्राम विटामिन सी धारित थे।

इसी प्रकार अलफाँनसो (बादामी) किस्म के आमों पर फफूंदनाशी (Fungicide) मिलाकर मोमलेपन किया गया तो उसमें भी विटामिन सी की मात्रा कम नहीं हुई। यह प्रतिवेदन माथुर तथा साथियों ने 1956 में दिया था।

कुर्ग सन्तरों को बार-बार मोमलेपन कर, साधारण कमरों में कितने दिन रखा जा सकता है ? यह अध्ययन करके, दलाल तथा साथियों ने यह प्रतिवेदन दिया कि सन्तरों में से विटामिन सी की क्षति हुई है।

माथुर तथा साथियों ने (1960) तीन अलग-अलग किस्म के आमों पर, धातु वर्ग तेल में बनाये गये मोमपायस (Waxing) से लेपन किया तथा भवन ताप पर संचयन किया तो देखा कि प्यारि, नीलम, तोतापरी आदि आमों में विटामिन सी की मात्रा बहुत क्षति-ग्रस्त हुई है।

सन् 1973 में अग्निहोत्री तथा राम ने पुनः प्रतिवेदन दिया था कि, टमाटरों का मोमलेपन कर अध्ययन किया तो नियन्त्रण से, मोमलेपन में विटामिन की क्षति बहुत होती है।

अणुविकरणोत्पाद तथा विटामिन (Vitamin and Radiated Food)

ऊष्मीकरणोपचार से जो क्षति हो सकती है वह अणुविकरण से भी सम्भव है। अणुविकरण से विटामिन खाद्य-पदार्थों में धारित नहीं रहता। एटाँमिक इनर्जी (अमेरिका) रिसर्च के 84 वां काग्रेम में दिये गये प्रतिवेदन में बतायी गयी एक तालिका उल्लेखनीय है। (सारणी सख्या–9)

सन् 1969 में धारकार ने प्रतिवेदन दिया कि सन्तरों का जब 8 × 10 रोडों (8 × 10 Rods) में अणुविकरण किया गया तो अस्कौर्बिक अम्ल, थाइमिन, रिबोफ्लेविन आदि विटामिनों की क्षति अधिक हुई जबकि 4 × 10 राडों में अणुविकरण तथा 50° से० (122° एफ) पर 15 मिनट ऊष्मयान (Incubation) किया गया तो उतनी क्षति नहीं हुई, लेकिन सूक्ष्म जीवियों का नाश काफी मात्रा में (8×15^5 Rods) ही सम्भव हुआ था। (सारणी संख्या–10)

सन् 1965 में धारकार तथा साथियों ने यह प्रतिवेदन दिया कि ऊष्मा संसाधन से विटामिनों की जो क्षति होती है, उतनी क्षति अणुविकरण से नहीं होती। यह कथन उन्होंने कुछ भारतीय फलों को अणुविकरण कर रखने की विधि के अध्ययन के अवसर पर दिया था। (तालिका संख्या–11)

सारणी संख्या–9

क्रम सं S. No.	विटामिन (Vitamin)	धारणीय विटामिनो का प्रतिशत	
		कैनीकरण (Canning)	अणुविकरण (Radiation)
1.	थाइमिन (Thiamine)	35	35
2.	रिबोफलेबिन (Riboflavin)	80	90
3.	पिरिडोक्सीन (Pyridoxin)	70	75
4.	नियासिन (Niacine)	75	75
5.	फोलिक अम्ल (Folic Acid)	70	90
6.	विटामिन "ए" (Vitamin "A")	80	75
7.	विटामिन "ई" (Vitamin "E")	90	75
8.	विटामिन "के" (Vitamin "K")	90	20

सारणी संख्या–10

विविध विधियों से सन्तरा-रस निर्जर्मीकरण से विटामिन क्षति की स्थिति का अध्ययन।

प्रक्रिया	विटामिनों की क्षति		
	थाइमिन	रिबोफलेबिन	अस्कॉरबिक अम्ल
अणुविकरण 8×10^5 राड	82.4	42.0	70
अणुविकरण $40 \times 10^5 + 50$ से० पर 15 मिनट ऊष्मायान	62–5	27	50

सारणी संख्या–11

अणुविकरण तथा ऊष्मा संसाधन विधियो से परिरक्षित किये गये आमों में विटामिनो की मात्रा (प्रति 100 ग्राम के गूदे मे)

प्रक्रिया	नियासिन	रिबोफलेबिन म्यू० ग्राम	अस्कॉरबिक अम्ल मि० ग्रा०	थाइमिन	करोटिनाइड के कुल सख्या
अणुविकरण 4×10^5 रॉडों मे	1–815	40	24.05	52	6.94
ऊष्मा ससाधन 100° से० पर 15 मिनिट की अवधि मे	1–78	42.2	24.37	38.9	6 49

अपने प्रतिवेदन में उन्होंने यह भी सिद्ध किया था कि 4×10^5 से कम रॉडों में विटामिन की क्षति नही होती है ।

सन् 1966 में घरकार तथा साथियों ने अल्फांसो किस्म के आमों पर अणुविकरण कर प्रतिवेदन दिया था कि, नाइट्रोजन की उपस्थिति में 25 क्रोड शक्ति मे अणुविकरण कर 15 दिन तक परिरक्षण कर सकते हैं । उसमें अस्कोंरबिक अम्ल की मात्रा 64–3 मिलीग्राम धारित थी । उन्होने आगे कहा कि जिस मात्रा से विटामिन अन्य विधियों से प्राप्त होगा उससे कहीं अधिक अणुविकरण से प्राप्त कर सकते हैं ।

पोषक तत्त्व (Nutrients)

आहार मे पोषक पदार्थों की सख्या पांच होती है । वे है, कार्बोहाइड्रेट, प्रोटीन, वसा, धातु-लवण आदि । विटामिन के बारे मे हम अध्ययन कर चुके है । अक्सर घरों मे भोजन बनाते समय विटामिन ही नही अन्य पोषक पदार्थों की भी क्षति हो जाती है, क्योंकि घरों पर पाचकीकरणों में ऊष्मा नियन्त्रण सम्भव नहीं होता । मगर कारखानो मे यह सम्भव है ।

मानव शरीर मे अन्य सब पोषक पदार्थ होते हुए भी अगर विटामिन नही है तो जीवित रहना असम्भव होगा, इसलिए विटामिन को सर्व-प्रथम स्थान दिया जाता है । उत्कृष्ट उत्पाद वही है, जिसमें काफी मात्रा में विटामिन विद्यमान हो ।

कार्बोहाइड्रेट (Carbohydrates)

विविध शर्करा, वनस्पति मंड (Vegetable Starch) आदि को ही कार्बोहाइड्रेट कहते हैं । यह शरीर को शक्ति प्रदान करते हैं, फलों में शर्करा, ग्लूकोज के रूप मे पाये जाते हैं । परिरक्षण के समय इनकी क्षति नही होती, मगर घरो पर पाचकीकरण (Cooking) के समय क्षतिग्रस्त हो सकते हैं । इसके अलावा केनीकरण के समय शर्करा मिलाया जाता है, इसी कारण उस उत्पाद के शक्तिदायक गुणो मे वृद्धि हो जाती है ।

प्रोटीन तथा वसा (Protein and Fat)

प्रोटीन शरीर में ऊदक तथा मांसपेशियों को बनाने मे अनिवार्य पोषक पदार्थ है ।

मटर, सेम, सोयाबीन आदि को छोड़कर अन्य फल तरकारियों में प्रोटीन बहुत कम मात्रा मे ही पाया जाता है । यह शरीर की वृद्धि तथा अन्य कमियो को दूर करने में सहायता प्रदान करता है ।

इसी प्रकार वसा से शरीर को ऊर्जा तथा शक्ति प्राप्त होती है । यह फलों मे विशेष रूप से बदाम, काजू आदि काष्ट (Nuts) फलों में अधिक प्राप्त होती है । वसा के खाने से कार्बोहाइड्रेट का शीघ्र पाचन हो जाता है । प्रोटीन कों अधिक ऊष्मा पर अधिक देर रखा जाय तो क्षतिग्रस्त हो जाता है, लेकिन कम ऊष्मा पर क्षतिग्रस्त नहीं होता ।

धातु लवण (Minerals)

शरीर मे पायी जाने वाली अस्थियो मे कैलसियम तथा फास्फोरस की मात्रा धातुओं मे अधिकाधिक पाई जाती है । कैलशियम हृदय की मांस-पेशियो को सुचारु रूप से काम करने तथा शरीर के प्रत्येक कोश मे रक्त पहुँचाने मे सहायक होते हैं ।

धातु लवण भी शरीर के लिए अति आवश्यक है, इसकी अनुपस्थिति से मानव शरीर क्षीण हो जाता है । कैलसियम (Calcium), भास्वक (Phosphorous), लोहा (Iron) आदि ऐसे पदार्थ हैं । लोहे की कमी से रक्त अणु की कमी हो जाती है तथा शरीर पीला

पड़ने लगता है। जिससे अल्परक्तक (Anaemia) नामक बीमारी हो जाती है। लोहा, रक्त में अवश्य होना चाहिए ताकि ऑक्सीजन शरीर के प्रत्येक ऊदक में पहुँचाया जा सके, ताकि शरीर में आहार को ज्वलित कर सकें। कैलसियम तथा फास्फोरस की कमी से हड्डी कमजोर हो जाती है। फलस्वरूप दांत कमजोर हो जाना, आदि अस्थियों मे बीमारी हो सकती है। फल तथा शाक इनकी कमी को दूर कर सकते है। परिरक्षण से इन चीजो की क्षति भी आहार मे नहीं होती। कई तरह के अध्ययन, इस संसार के कई स्थानों पर किये जाते हैं ताकि परिरक्षण से आम जनता को अधिकाधिक लाभ प्राप्त हो सके।

आहार मे ऊर्जा की मात्रा उसमे पाये जाने वाले वसा, प्रोटीन कार्बोहाइड्रेट इत्यादि तत्वों पर निर्भर करती है। अधिक वसा (तेल) वाले आहार अधिक ऊर्जा प्रदान करते हैं, लेकिन अधिक प्रोटीन तथा कार्बोहाइड्रेट वाले आधी ऊर्जा ही प्रदान कर पाते हैं।

फल-तरकारियों में, केला, पिण्डखजूर, अंगूर, आलू, सूखा सेम, सूखे मटर इत्यादि को छोड़कर बाकी सब अल्प ऊर्जा प्रदान करने वाले होते है—क्योंकि उनमें अन्य आहारों की भांति, वसा, प्रोटीन तथा कार्बोहाइड्रेट की मात्रा बहुत कम होती है। लेकिन फल-तरकारियाँ आम तौर पर संरक्षण आहार है। इनके खाने से शरीर नीरोग रहता है। शरीर को नीरोग रखने के लिए एक निश्चित मात्रा के आहार की ही आवश्यकता होती है। जब एक व्यक्ति उस मात्रा से अधिक भोजन (वसा, प्रोटीन तथा कार्बोहाइड्रेट युक्त) लेता है तब शरीर इस अधिक भोजन को वसा में परिवर्तित कर सचयन कर लेता है। मोटापा इसी कारण से होता है। जिन व्यक्तियों को अधिक भोजन लेने की आदत हो किन्तु वह मोटापे से बचना चाहे तो उन्हें चाहिए कि कम ऊर्जा वाले फल-तरकारियों को अपने भोजन मे अधिकाधिक स्थान दें।

□□□

अध्याय 5

खाद्य संयोजियाँ

(Food Additives)

परिभाषा-1

संयुक्त राष्ट्र के खाद्य तथा कृषि संगठन और स्वास्थ्य संगठन की ओर से दी गई परिभाषा इस प्रकार है :—

"खाद्य संयोजिया ऐसे पोषण रहित पदार्थ हैं जो साधारणतया न्यूनमात्रा मे जान-बूझ कर खाद्य पदार्थों में मिलाये जाते है ताकि खाद्य पदार्थों के रंग, रूप, सुगन्ध, सरचना या सचयन गुणों मे सुधार कर सकें।"

लेकिन खाद्यो के पोषक गुण (Nutrition quality) को बढाने हेतु मिलाये जाने वाले पदार्थ या विटामिन आदि संयोजियो के वर्ग मे नही आते।

परिभाषा-2

संयुक्त राज्य अमेरिका की नेशनल अकादमी ऑफ साइंस की परिभाषा के अनुसार "ऐसे पदार्थ या पदार्थों के मिश्रण को संयोजी कहते हैं जो बुनियादी रूप से आहार नहीं है, लेकिन जो उत्पादन पर मिलाए जाते हैं, तथा जो संयोषित या प्राकृतिक आहार उत्पादनो मे उपस्थित भी होते हैं।" यह परिभाषिक शब्द आकस्मिक संदूषण (Chance Contamination) का ख्याल नही किया गया है।

अतः खाद्य परिरक्षण में इनके यथोचित प्रयोग के बारे मे कहा जा सकता है कि संयोजी; संसाधन मे योग प्रदान करने वाले हों, खाद्यो के पोषक गुण बनाये रखने वाले हो, उनको अधिक दिन तक परिरक्षित रखने योग्य हो या स्थिरता लाते हो, साथ ही खाद्य की क्षति न करते हों तथा व्यंजना रहित ढंग से आहार की तरफ उपभोक्ताओं को मोहित करने वाले हों, ऐसे गुणों के लिए संयोजियों का प्रयोग करना चाहिए।

इसका मतलब यह है कि हम रासायनिक परिरक्षक, जो खाद्यो को अधिक विकृतियो (खराबियों) से बचाता हो, अनुमति प्राप्त रंग, जो आहार के वर्ण परिरक्षण, पदार्थ, खाद्यो का परिरक्षण तथा स्थायीकारी (Stablizer) का काम करता हो, आदि के बारे में अध्ययन करें।

रासायनिक परिरक्षक (Chemical preservatives)

कुछ खाद्य पदार्थों का पास्तुरीकरण, निर्जर्मीकरण, हिमीकरण आदि के बिना एक या अधिक परिरक्षण मिलाकर परिरक्षण किया जाता है। इसके लिए सीमित रासायनिक पदार्थ ही प्रयोग मे लिए जा सकते हैं, ये हैं—पोटैशियम मेटाबाइसल्फाइट (Potassium

meta bisulphite), सोडियम बेन्ज़ोएट (Sodium Benzoate), सोडियम प्रोपियोनेट (Sodium Propionate), सोरबिकअम्ल (Sorbic acid) आदि। ऐसे रासायनिक पदार्थों को ही रासायनिक परिरक्षक कहा जाता है जो खाद्य पदार्थों का संरक्षण कर उन्हें विकृतियों से बचाते हैं, ताकि उनमें से किसी प्रकार के पोषकों तथा विटामिनों का रूप परिणत या नष्ट नहीं हो पाए।

फल पेय (Fruit Beverages) को पास्तुरीकरण कर परिरक्षण कर सकते है लेकिन उसमे रुचि-भेद आ सकता है। इसमें जली हुई-सी गन्ध आती है। इसके अलावा इस प्रकार का परिरक्षित पेय खोलने के बाद तुरन्त पी लेना चाहिए, अन्यथा खराब हो जाने की सम्भावना है, लेकिन रासायनिक परिरक्षक मिलाने से सील तोड़ने के बावजूद कुछ दिन और रखा जा सकता है, बशर्ते उनका मुंह बंद कर लें।

जैम, टमाटर उत्पादो आदि के लिए फल तैयार करते समय तथा बाद मे भी रासायनिक परिरक्षक मिलाये जायें तो उनमें सूक्ष्मजीवी प्रवेश नही कर सकेंगे, अगर प्रवेश कर भी जायें तो उनमें गुणात्मक वृद्धि नही हो सकेगी। फलों के रस का उष्मोपचार करते समय रासायनिक पदार्थ उसमे से नष्ट हो जायेंगे। यदि आवश्यकता हो तो तैयार उत्पादो मे पुनः परिरक्षक मिलाये जा सकते है।

परिरक्षक—एक परिभाषा

संयुक्त राज्य अमेरिका के फेडरल फूड ड्रग एण्ड कॉस्मेटिक एक्ट के कथनानुसार "कोई रासायनिक पदार्थ खाद्य पदार्थ में मिलाने से उस खाद्य को दूषित होने से बचा सकता है या प्रदूषण मे अवरोध पैदा कर देता है तो उस रासायनिक पदार्थ को रासायनिक परिरक्षक कहा जाता है।"

ब्रिटिश फूड एण्ड ड्रग एक्ट सन् 1928 के अनुसार परिरक्षक की परिभाषा अधोलिखित है—"आहार मे सम्भावित किण्वन अम्लीकरण अथवा अपघटन आदि का निरोध करने वाले या उपर्युक्त क्रियाओं को निष्क्रिय करने की क्षमता वाले रसायनों को रासायनिक परिरक्षक कहा जाता है। लेकिन लवण (नमक), शर्करा, एसिटिक अम्ल या सिरका, मद्यसार पेय स्प्रीट, गरम मसाला, सुगन्धित वस्तु या धूमीकरण वस्तु, जो संसाधन क्रियाओं के अवसर पर प्रयुक्त की जाती हैं, आदि को परिरक्षक नही माना जाता।"

उपर्युक्त परिभाषा से यह सिद्ध होता है कि परिरक्षण क्षमता वाले सभी पदार्थ रासायनिक परिरक्षक मे नही आते।

कैनीकरण के समय उसमे अल्प वायु छोड देते है। इसके बदले मे नाइट्रोजन छोड़ दिया जाय तो भी वह परिरक्षक नही माना जावेगा। इसी प्रकार पेय पदार्थों मे कार्बनडाइ-ऑक्साइड भर देते हैं। अचार मे तेल, लवण, सिरका आदि तथा पेयो मे मिलाये गए साइट्रिक अम्ल, शर्करा आदि भी परिरक्षक क्षमता रखते हैं, परन्तु परिरक्षक नही है, क्योंकि उपर्युक्त पदार्थ खाद्य हैं. इनके प्रयोग के बारे मे उत्पादो के पैकीकरण पर अंकित करने की आवश्यकता नही है जबकि इण्डियन फूड प्रोडक्ट ऑर्डर सन् 1955 के अन्तर्गत "अमुक परिरक्षित आहार मे मिलाये गए रासायनिक परिरक्षक" अंकित करना अति आवश्यक है।

संयुक्त राज्य अमेरिका मे प्रयुक्त रासायनिक परिरक्षक के नाम तथा मात्रा प्रत्येक उत्पादो के ऊपर लेबलों पर अंकित होनी चाहिए तथा उसकी भाषा उपभोक्ताओं के समझने

योग्य स्पष्ट होनी चाहिए। इसके अलावा एक या अधिक परिरक्षक का प्रयोग किया हो तो उसे भी स्पष्ट कर देना चाहिए। लेकिन भारत मे परिरक्षक उत्पादों के पैकिंग के ऊपर लेवलों पर आजकल केवल ऐसा ही लिखा होता है कि "सरकार से मान्यता प्राप्त रंग तथा परिरक्षक मिलाये गए हैं।"

इसी प्रकार सरकारी आदेशों द्वारा नियन्त्रित, लेकिन संसार भर में प्रचलित तथा भारत में स्वीकृति प्राप्त दो प्रमुख परिरक्षक हैं, वे हैं—सोडियम बेन्जोएट (Sodium Benzoate) तथा पोटेशियम मेटा बाईसल्फाइट।

सोडियम बेन्जोएट अथवा बेन्जोइक अम्ल
(Sodium Benzoate or Benzoic Acid)

प्रकृति मे बेन्जोइक अम्ल का मुख्य स्रोत क्रानबरिस (Cranberries) नामक एक सरस फल है। यह अम्ल तथा लवण परिरक्षक के रूप में प्रचुर मात्रा में, संसार भर मे काम मे लिया जाता है। अम्ल जल मे अल्प विलेय (Sparingly Soluble in Water) है तथा उसका लवण रूपी सोडियम बेन्जोएट शीघ्रता से जल विलेय भी है। 0·34 भाग बेन्जोइक अम्ल 100 भाग जल मे घुलनशील है, जबकि 1·0 भाग सोडियम बेन्जोएट साधारण ताप पर 1·8 भाग जल मे घुलनशील है, अर्थात् सोडियम बेन्जोएट, बेनजाइक अम्ल से 180 गुणा अधिक घुलनशील है। साथ ही रासायनिक रूप में शुद्ध सोडियम बेन्जोएट में न तो सुगन्ध है, न स्वाद। इसके घोल का कोई वर्ण नही होता। इसलिए सोडियम बेन्जोएट परिरक्षक के रूप में साधारणतया प्रयोग में लिया जाता है। इसके अलावा सोडियम बेन्जोएट के प्रयोग से, फल पेय तथा उसके उत्पादों मे वर्ण परिवर्तन नही होता है तथा इसमे फल के रस को बनाये रखने की विशेष शक्ति भी है।

आहारो में इसके प्रयोग के औचित्य पर कुछ आलोचना तो अवश्य हुई है। कुछ वैज्ञानिकों का कहना है कि यह एक विष है इसलिए अनियमित मात्रा मे इसको नहीं मिलाना चाहिए। वस्तुतः यह कथन इस कहावत को चरितार्थ करता है कि "अमृत भी अधिक खाने से विष हो जाता है।" डिक्सोमियर के अनुसार ऐसा कोई प्रतिवेदन प्राप्त नहीं हुआ कि इस परिरक्षक (सोडियम बेन्जोएट) के आहार मे मिलाए जाने से कोई दुर्घटना घटी हो।

लेकिन क्रुम ने खाद्य पदार्थों मे इसके प्रयोग की मात्रा 0·1 प्रतिशत निर्दिष्ट की थी, लेकिन आज अमेरिका में इससे कही अधिक मात्रा का प्रयोग किया जाता है। काम मे ली गई मात्रा उत्पादों के पैकिंग के ऊपर अवश्य अंकित होनी चाहिए। आज आम तौर पर 0·1 से 0·15 प्रतिशत सोडियम बेन्जोएट परिरक्षक के रूप मे प्रयोग मे लिया जाता है। लेकिन भारत मे केन्द्रीय खाद्य प्रौद्योगिक अनुसन्धान शाला के निर्देशानुसार प्रति एक किलो उत्पाद मे 750 मिली ग्राम सोडियम बेन्जोएट अधिकाधिक मिलाया जा सकता है।

फल पेयो मे सोडियम बेन्जोएट कितना मिलाना चाहिए, यह उस पेय में सम्भवतया पाये जाने वाले सूक्ष्मजीवियों की संख्या, उनके वर्ग, उपवर्ग, अम्लीयता आदि पर निर्भर करता है। गिरधारीलाल तथा साथियो का कथन है कि 3·5 से 4·0 पी.एच. पर फलो के रस मे 0·06 से 0·10 प्रतिशत सोडियम बेन्जोएट मिलाना पर्याप्त है। लेकिन कम अम्लीय फलों के रस मे (पाश्चरीकरण किये हुए अंगूर) यह मात्रा 0·3 प्रतिशत हो सकती है। साराश

यह है कि अम्ल परिस्थितियों में सोडियम बेन्जोएट का क्रिया शक्ति बढ़ती है।

यह एक तरफ प्रकिण्व (खमीर) फफूंदी आदि को न तो आने देता है और न ही वंश वृद्धि करने देता है, लेकिन दूसरी तरफ सिरका-जीवाणुओं (Vinegar Bacteria) को किसी प्रकार की क्षति भी नहीं पहुँचाता है। इसलिए सिरका-जीवाणुओं से होने वाला किण्वन यथावत् रहेगा। अतः सोडियम बेन्जोएट को एक अपूर्व परिरक्षक माना जाता है।

डिस्रोसियर का कथन है कि फलों के रस को ऐसी परिस्थिति में तैयार किया जाय कि उसमें बहुत कम सूक्ष्म-जीवी लग पायें। ऐसी अवस्था में तैयार किये हुए फल रस में 0·05 प्रतिशत सोडियम बेन्जोएट मिलाने से परिरक्षण सम्भव हो जाएगा। सोडियम बेन्जोएट में इतनी परिरक्षण-क्षमता होती है। उन्होंने आगे कहा कि इसी प्रकार सेब आसव (Cider) का परिरक्षण कर 32 डिग्री एफ (0 डिग्री से.) तापमान पर संचयन कर देखा तो 4 से 6 मास तक वह दूषित नहीं हुआ।

फल-रस मे जब 0.1 प्रतिशत सोडियम बेन्जोएट मिलाया गया तो पाया कि उसमें अनावश्यक स्वाद व जलन (Burning Sensation) अनुभव हुई। इस बात को क्रूस तथा डिस्रोसियर दोनों समान रूप से मानते हैं।

सन् 1948 में क्रूम ने कहा कि जे. एच. इरिस ने यह देखा कि कार्बनडाइऑक्साइड (CO_2) की उपस्थिति में बेन्जोएट की परिरक्षण शक्ति बढ़ती है तथा बसिलस सबटिलिस (Bacillus Subtilis) की वंश वृद्धि नहीं होती। यह प्रतिवेदन इरिस ने अंगूर रस को बेन्जोएट की उपस्थिति में कार्बनीकरण कर अध्ययन के आधार पर दिया। इसके अलावा कम पी. एच. मान पर इसकी परिरक्षण शक्ति अधिक तथा अधिक पी. एच. मान पर परिरक्षण शक्ति मन्द पड़ जाती है।

डिस्रोसियर का कथन है कि आहार में अगर पी. एच मान 7 हो तो बेन्जोएट अम्ल का प्रभाव (शक्ति) कम तथा पी. एच. मान 3 हो तो प्रभाव अधिक होता है। अधिक अम्लीय पदार्थों में रोगाणुनाशक शक्ति 10 गुणा अधिक होती है तथा इससे भी अधिक अम्ल वाले में 100 गुणा रोगाणुनाशक शक्ति होगी।

गिरधारीलाल तथा साथियों का कथन है कि बेन्जोइक अम्ल के ऑर्थो (Ortho), मेटा (Meta) तथा पेरा (Para) वर्ग का प्रयोग करके रोगाणुनाशक शक्ति बढ़ाई जा सकती है।

सन् 1961 में डोनॉल्ड के ट्रेसलर (Tressler, D. K 1961) का कथन है कि बेन्जोइक अम्ल से वर्ण परिवर्तन शीघ्र होता है। इसलिए सलफरस अम्ल तथा बेन्जोइक दोनों ही मिलाने चाहिएँ, क्योंकि सलफररस अम्ल ऑक्सीकरण परिवर्तन को रोकता है तथा बेन्जोइक अम्ल खास तौर से खराबी करने वाले सूक्ष्मजीवियों को नष्ट करता है (आनन्द तथा साथी सन् 1958) तथापि उन्होंने आगे कहा कि दोनों रस के कोलाइडल सन्तुलन (Colloidal balance) को प्रभावशाली बनाकर अवसादन (Sedimentation) करते है। अल्प मात्रा मे तापोपचार करें या बिना तापोपचार के ही सोडियम बेन्जोएट मिला कर नीबूवर्गीय फल-रस, सेब-आसवों, आचार आदि का परिरक्षण किया जा सकता है।

मछली का बर्फ में परिरक्षण करते है। अगर इस बर्फ को 0·1 प्रतिशत बेन्जोइक अम्ल मिला कर बनाया जाय तथा उस बर्फ को मछली-परिरक्षण के काम में लिया जाय तो अधिक समय तक परिरक्षण सम्भव होगा। इस ज्ञान को फल-शाकों के परिरक्षण में भी प्रयोग कर अध्ययन करना चाहिए।

सल्फर डाई ऑक्साइड (Sulphur-di-Oxide)

पोटेशियम मेटा बाइ सल्फाइड से सल्फर डाई ऑक्साइड प्राप्त होता है। यह क्रिस्टलीय (Crystaline) या मणिमीय लवण होता है जो प्रायः उदासीन क्षारीय माध्यम में स्थायी होता है और ऐसे मन्द अम्ल (कारबोनिक), साइट्रिक, टार्टारिक एवं मलिक अम्लों का अपघटन भी हो जाता है।

सल्फर डाई ऑक्साइड एक सर्वसाधारण प्रतिरोधी (Antiseptic) है। यह प्रकिण्वनीय बभ्रुकरण (Enzymic Browning) तथा किण्वनीय अभिक्रिया के लिए प्रभावशाली भी है। इसको ऑक्सीकरण विरोधी तथा अपचायक (Reducing agent) के रूप में भी काम में लेते हैं। आस्ट्रेलिया में सल्फरडाई ऑक्साइड व्यापक रूप से काम में लिया जाता है। फल तथा तरकारी सुखाने, ताजा फलों के परिरक्षण, विविध पेय जैसे मदिरा (Wine) पोषक पेय (Cordials) हिमीकृत फल-रस, तथा मधुर पेय (Soft drink) आदि के संसाधन में जैसे भारत में इसका प्रयोग किया जाता है वैसे ही आस्ट्रेलिया में भी प्रयोग में लेते हैं। इसके अलावा मांस-उत्पादों, झींगा (Prawn) आदि के संसाधन में भी इसका प्रयोग किया जाता है।

गन्धक युक्त संयुक्त तो मानव उपयोगी रासायनिक पदार्थ हैं जो एक परिरक्षक के रूप में आदिकाल से ही हमारे पूर्वज काम में लेते आ रहे थे। आज संसार भर में काम में लाये जाने वाले सर्वप्रथम परिरक्षक यही है, विशेष रूप से फल-तरकारियों के परिरक्षण के लिए, क्योंकि परिरक्षक के रूप में सोडियम सल्फाइट काम में लेने से कोई खतरा भी नहीं होता। "कामनवेल्थ साइन्टिफिक, इंडस्ट्रियल ओरगनाईजेशन 1974" (C. S. I. R. O. 1974)।

यदि परिरक्षक प्रकिण्व पर उतना प्रभाव नहीं डालता जितना फफूँदी, बीजाणु, जीवाणु आदि पर। इसलिए प्रकिण्वों से जो किण्वनोत्पाद बनाया जाता है, उसमें इसे ही काम में लिया जाता है, क्योंकि यह प्रकिण्वों के अलावा अन्य सूक्ष्मजीवियों (फफूँदी, जीवाणु) को नष्ट कर देता है। मदिरा के किण्वन काल में अल्प मात्रा में पोटेशियम मेटा बैसलफाइट प्रयोग करने से प्रकिण्व पर कोई कुप्रभाव नहीं पड़ता, बल्कि अन्य सूक्ष्मजीवियों पर आवश्यक कुप्रभाव पड़ता है।

फल-रसों तथा फल-पेयों का परिरक्षण करने से पहले यह देखना होगा कि उसमें सूक्ष्मजीवियों की मात्रा कितनी है, वे कौनसे वर्ग के तथा उपवर्ग के हैं। फल-पेयों तथा रसों में परिरक्षक मिलाने से पहले ही सूक्ष्मजीवियों की संख्या अधिक हो तो फिर मिलाने से कोई विशेष लाभ नहीं होगा, अर्थात् पदार्थ का या उत्पादों का परिरक्षित करना सम्भव नहीं होगा।

पेय-पदार्थों में एक किस्म (Variety) के सूक्ष्मजीवियों को नष्ट करने के लिए 730 मिली ग्राम सल्फरडाईऑक्साइड की जरूरत पड़ती है, जबकि दूसरी किस्म के प्रकिण्वों को नष्ट करने के लिए 650 मिली ग्राम की ही जरूरत होती है। अर्थात् प्रकिण्वों की जाति, उपजाति के अनुसार उनकी सल्फरडाईऑक्साईड सहन शक्ति भी बढ़ती-घटती रहती है। इस बात का जितना ध्यान रखते हुए सल्फरडाईऑक्साइड मिलाया जायेगा, परिरक्षण में उतनी ही सफलता प्राप्त होगी।

सल्फरडाई ऑक्साइड, गाढे रस में, उतना प्रभावकारी नहीं होगा जितना पतले रस में। क्योंकि जितना पतला द्रव होगा, सल्फरडाई ऑक्साइड के अंश भी उतने ही स्वतन्त्र तथा समान अवस्था में उस द्रव में पाये जायेंगे, उसके साथ ही उसमे पाये जाने वाले सूक्ष्मजीवियों को नष्ट या निष्क्रिय बनाने की क्षमता भी अधिक होगी।

जब फल-पेयों मे सल्फरडाई ऑक्साइड मिलाया जाता है तब पोटेशियम मुलक (Potassium radicle) पेयों मे पाये जाने वाले साइट्रिक अम्ल से अभिक्रिया कर पोटेशियम साइट्रेट (Potassium Citrate) का निर्माण करता है तथा सल्फरडाई ऑक्साइड और जल स्वतन्त्र हो जाता है। यह जल तथा सल्फरडाई ऑक्साइड पुनः अभिक्रिया कर सल्फरस अम्ल का निर्माण करता है। सल्फररस ऑक्साइड बोतलों के खाली शीर्ष स्थानों में भर जाते हैं, फलस्वरूप परिरक्षण सम्भव हो जाता है। क्योंकि शीर्ष स्थान मे सम्भवत: पाये जाने वाले हानिकारक सूक्ष्मजीवियो को नष्ट या निष्क्रिय बना देता है। पेय जिस वाहिका मे है, उसको वायुरोधक अवस्था मे सील बन्द रखने से बाहर से सूक्ष्मजीवियों का प्रवेश भी पूर्णतया रुक जाता है। पोटेशियम मेटाबाई सल्फाइट तथा साइट्रिक अम्ल की अभिक्रिया का परिणाम अधोलिखित है :—


1— पोटेशियम मैटाबाई सल्फाइट + साइट्रिक अम्ल ——>

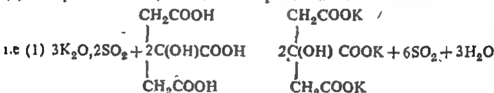

——> पोटेशियम साइट्रेट + सल्फरडाई ऑक्साइड + जल


2— सल्फरडाई ऑक्साइड + जल ——> सल्फरस अम्ल।


(1)—Potassium meta-bisulphite + Citric Acid ——> Potassium


Citrate + Sulphur dioxide + Water


(2)—Sulphur dioxide + Water ——> Sulphurus acid.




$$\text{i.e (1) } 3K_2O,2SO_2 + 2\begin{array}{c}CH_2COOH\\ |\\ C(OH)COOH\\ |\\ CH_2COOH\end{array} \quad 2\begin{array}{c}CH_2COOK\\ |\\ C(OH)\ COOK\\ |\\ CH_2COOK\end{array} + 6SO_2 + 3H_2O$$


(2) $SO_2 + H_2O \rightarrow H_2SO_3$

सन् 1931 मे क्रूस तथा साथियो ने प्रतिवेदन दिया कि विभिन्न पी. एच. मानों मे विभिन्न मात्राओं मे सल्फरस अम्ल मिलाना चाहिए। ताकि सूक्ष्मजीवियो की वृद्धि रोकी जा सके। पी एच. 2.5 में जितना सल्फरस अम्ल मिलाया जाएगा उससे 2 से 4 गुणा अधिक पी एच. 3.5 वाले पेय पदार्थों मे अपेक्षित है। लेकिन पी. एच 7 में सल्फाइट, प्रकिण्व, फफूंदी तथा जीवाणुओं पर कोई विशेष प्रभाव नही होगा।

सन् 1944 मे रेन तथा कोन (Rahn & Conn 1944) ने प्रतिवेदन दिया कि प्रकिण्व की वृद्धि H_2SO_3 के अणुओ के कारण रुकती है न कि सल्फाइट या सल्फरडाइ ऑक्साइड (SO_2) के कारण। यह भी देखा गया कि जब सल्फरस अम्ल 4 पी. पी एम. के (4 भाग प्रति 10 लाख) के अनुपात से मिलाया गया तो मात्र सैक्रोमाइसिस इलीफ-सौडियस (Saccharomyces illipsoideus) को रोक पाया था। मगर 100 पी पी.एम. के अनुपात मे मिलाया गया तो जीवाणुओं की वृद्धि भी बन्द हो गई थी।

सल्फर ऑक्साइड एक किण्वक विष है (Enzyme poison) फल तरकारियाँ मुझायी जाती हैं तब बभ्रुकरण (Browning) होता है, जो किण्वकीय बभ्रुकरण

कहलाता है। इसको रोकने के लिए फल तरकारियों को सुखाने के तुरन्त पूर्व गन्धकीकरण किया जाता है।

सेब के टुकड़ों, छिलके उतारे हुए आलू, हरे मटर, हरा चना आदि का केनीकरण तथा सुखाने के समय पोटेशियम मेटाबाइ सल्फाइट मिलाकर विवर्णीकरण किया जाता है, इसलिए विरंजन (Bleaching) नहीं होता। इसके अलावा बभ्रुकरण भी नहीं होगा। इस प्रयोग से केवल सूक्ष्मजीवियों का नाश ही नही होगा बल्कि पोषक पदार्थों को क्षति से भी बचाया जा सकेगा।

सल्फरस अम्ल तो शर्करा के साथ अभिक्रिया (मानक-पेयों मे) नही करता। फिर भी रसों मे पाये जाने वाले ग्लूकोज (Glucose), पेक्टिन (Pectin) आदि मे अभिक्रिया करने से उसकी शक्ति मन्द पड जाती है। लेकिन यह पारस्परिक (Reciprocal) अभिक्रिया होने से इसमे किसी प्रकार की क्षति नही होती।

$$\text{शर्करा (ऑल्डीहाइड)} + \text{बाई सल्फाइट} \rightleftharpoons \text{शर्करा (ऑल्डीहाइड) सल्फाइट}$$

$$[\text{Sugar (aldehyde)} + \text{Bi-Sulphite} \rightleftharpoons \text{Sugar (aldehyde)Sulphate}]$$

अल्पकालीन परिरक्षण के लिए 0·1 प्रतिशत सल्फरस अम्ल मिलाना पर्याप्त है। पौष्टिक पेयों (Cordial) के लिए रस निकाल कर उसमें से गूदे आदि को पूर्ण रूप से अलग करने के लिए कुछ समय रखना पडता है। इस समय उसमें किण्वन क्रिया होना स्वाभाविक है। इसको रोकने के लिए 0·01 प्रतिशत सल्फरडाइ ऑक्साइड मिलाना पर्याप्त होता है। (1 लीटर रस में 100 मिली ग्राम के अनुपात से) इसके अलावा 50 से 100 मिली ग्राम सल्फरडाइ ऑक्साइड मिलाने से रसों की नूतन सुगन्ध तथा वर्ण आदि की क्षति भी नही होती। क्योंकि उसमे ऑक्सीकरण सम्भव नहीं होगा। मगर कुछ ऐसे फलरसों का भी परिरक्षण करना होता है जिसमे ऊपर से वर्ण नही मिलाया जाता जैसे, जामुन, आम, अनन्नास, फालसा, अनार, स्ट्राबरीज, टमाटर आदि। अगर इन फल-रसों मे सल्फरडाइ ऑक्साइड मिलाया जाय तो वर्ण विरंजनीकरण हो जायेगा। मगर सल्फरडाइ ऑक्साइड कृत्रिम रंगो पर विरंजनीकरण नहीं करता, बल्कि फलों के प्राकृतिक रंगों का ही विरंजनीकरण करता है।

कैनीकरण के लिए सल्फरडाइ ऑक्साइड काम मे नही आता क्योंकि सल्फरडाइ-ऑक्साइड, टिन के साथ अभिक्रिया कर, हाइड्रोजन सल्फाइड (Hydrogen Sulphide) का निर्माण करता है जो दुर्गन्ध वाला है। इसके अलावा यह काले संयुक्त टिन मे सूक्ष्म द्वार (Pin holes) बना देते हैं। फलस्वरूप कैन के भीतर रखे हुए आहार को पूरी तरह खराब कर देता है।

परिरक्षक का प्रयोग तथा सावधानियाँ

फलरसों मे 350 पी. पी. एम पोटेशियम मेटाबाई सल्फाइड या 45 किलो फल-पेयों मे 56 ग्राम के अनुपात से पोटेशियम मेटाबाई सल्फाइट मिलाना पर्याप्त है। क्योंकि सल्फरस अम्ल के साथ अभिक्रिया करने वाले पदार्थ फल रसों मे कम पाये जाते हैं। लेकिन परिरक्षक न तो पुराना होना चाहिए न ही खुला रखा हुआ हो, क्योंकि इन दोनो परिस्थितियों मे उसकी परिरक्षण शक्ति क्षीण हो सकती है।

एक फलरस में अगर, पी. एच. मान अधिक हो तो उसको कम करके सल्फरडाई-ऑक्साइड की शक्ति बढाई जा सकती है। इसके लिए अम्ल उन फल रसों मे मिलाना उचित है जिसमे पी. एच. मान अधिक है। गाढ़े फल रसो में सल्फरस अम्ल यौगिकीकृत पदार्थ (Sulphures acid fixing substances) की अधिकता के कारण, उन्हें परिरक्षण करने के लिए सल्फरस अम्ल का प्रतिशत बढाना पड़ता है। औद्योगिक क्षेत्र मे सान्द्रीकृत (गाढ़ा) फल रसो मे 1500 पी पी. एम. के अनुपात से सल्फारडाइ ऑक्साइड मिला कर परिरक्षण किया जाता है।

सल्फरडाई ऑक्साइड प्रकिण्व को छोडकर बाकी सब सूक्ष्मजीवियो का नाश करता है मगर सोडियम बेन्जोएट केवल प्रकिण्व को ही नष्ट करता है। इसलिए जोसलिन तथा मार्शल (Joslyns Marshal) का प्रतिवेदन है कि सम्पूर्ण परिरक्षण के लिए दोनों परिरक्षकों का समावेश कराया जाय।

लालसिह तथा गिरधारीलाल का मत है कि रस के स्वाभाविक यानि अम्ल-शर्करा की मात्रा के आधार पर दोनों परिरक्षको मे से एक या दोनो का प्रयोग किया जा सकता है। नीबूवर्गीय फल पेय जिनमे 45° से 65° ब्रिक्स (45°—65° Brix) शर्करा तथा 2.0 से 2.5 प्रतिशत साइट्रिक अम्ल हो तो उनके परिरक्षण के लिए 350 पी. पी. एम तक सल्फरडाई ऑक्साइड मिलाया जा सकता है।

फल पेयो का परिरक्षण करते ही स्वाद देखा जाय तो उसमे जो तीखापन आयेगा वो सल्फरडाइ ऑक्साइड की सुगन्ध होगी। लेकिन इन पेयों को गोदाम मे रखने के कुछ दिन बाद उन्हें पिया जाय तो उनमें तीखापन नही रहेगा और उनमे जल मिला कर पीने से सल्फरडाई ऑक्साइड का स्वाद बिल्कुल ही महसूस नहीं होगा। इसलिए फल पेय (सल्फर डाई-ऑक्साइड मिलाये हुए) बनाते ही उन्हें प्रयोग मे नही लेना चाहिए।

पेयों मे जीवाणु किण्वन रोकने के लिए पोटैशियम मेटा बाई सल्फाइट बहुत अच्छा होता है, लेकिन सोडियम बेन्जोएट नही। इसके लिए सल्फरडाई ऑक्साइड ग्यास (घातक) होने के कारण पेयो के ऊपर आकर उत्पादों को विकृत होने से बचाते हैं। यह शीघ्रविलेय है, इसलिए रसो मे तुरन्त घुल जाते हैं।

क्रूस का कथन है कि किसी फल पेय मे सल्फरडाई ऑक्साइड अधिक हो जाय तो फल रस को करीब 70° से (160° एफ) पर तापोपचार कर या उसमें वायु को शक्ति से प्रवेश करा कर या रिक्त परिस्थिति मे भापोपचार कर, दूर किया जा सकता है। इन क्रियाओ से फल रस मे 1 पी. पी. एम के अनुपात से ही सल्फरडाई ऑक्साइड शेष रहना चाहिए।

सन् 1961 में रंगण्णा तथा सिघप्पा ने यह प्रतिवेदन दिया कि सन्तरा-रस या पानक (स्क्वेश: Squash) में सल्फरडाई ऑक्साइड की मात्रा अधिक हो जाय तो उसमें H_2O_2 या Na_2O_2 मिला कर दूर कर सकते हैं। इन क्रियाओ के कारण उसके गुण मे कोई अतर नही आयेगा। परिरक्षक के प्रयोग के समय यह ध्यान रखना चाहिए कि जो मात्रा निर्धारित है उसको लेकर मामूली पानी या पतला रस (पेय का) लेकर घोल बनाया जाय ताकि उसमे परिरक्षक का अश पात्र मे बच न जाय। अब इस घोल को फल-पेय मे अच्छी तरह मिला देना चाहिए। अगर परिरक्षक बोतल मे जाकर बैठ जाय तो परिरक्षण सफल नही हो पायेगा। इसलिए परिरक्षक मिलाते समय इसका ध्यान रखना अत्यन्त आवश्यक है।

सन् 1958 में आनन्द तथा साथियों ने आम के पानक में फफूंदी द्वारा होने वाली विकृतियों के नियन्त्रण के लिए खाद्य परिरक्षकों के प्रभाव का अध्ययन किया जो इस प्रकार है :—

सल्फरडाई ऑक्साइड, सोडियम प्रोपिओनेट तथा सोडियम डाईऑक्साइड फफूंदी नियन्त्रण के लिए अधिक प्रभावशाली है, मगर सोडियम बेन्जोएट तथा सोरबिक अम्ल आदि "आसमोफिलिक" प्रकिण्व पर (Osmophilic yeast), सोडियम प्रोपिओनेट तथा सोडियम डिएसिटेट (Sodium Propionate and Sodium-diacetate) 2000 पी. पी. एम के तथा 1000 पी. पी. एम (0·2 व 0·1 प्रतिशत) मात्रा में मिलाए जाने पर भी फफूंदी से होने वाली विकृतियों पर नियन्त्रण नहीं हो पाया था।

सल्फरडाई ऑक्साइड 350 पी. पी एम. (0.0035 प्रतिशत) में प्रयोग करने से प्रकिण्व तथा फफूंदी नियन्त्रण हो गया, लेकिन सोडियम बेन्जोएट 1000 पी. पी एम. पर भी फफूंदी नियन्त्रण सम्भव नहीं हुआ था। जबकि 300 पी. पी. एम. सल्फरडाई ऑक्साइड तथा 200 पी. पी एम सोडियम बेन्जोएट पानक में मिलाने से अच्छा वर्ण तथा स्वाद बनाये रखने में सक्षम साबित हुए। जब उपर्युक्त मात्रा के साथ 250 पी. पी एम सोरबिक अम्ल भी मिलाया गया तो पानक और भी स्वादिष्ट बना।

परिरक्षक तथा उसकी सीमा *(Preservative and its Limits)*

संयुक्त राष्ट्र के स्वास्थ्य, खाद्य एवं कृषि संगठन की रिपोर्ट के अनुसार 70 किलो वजन वाला एक व्यक्ति 105 मिली ग्राम सल्फरडाई ऑक्साइड का उपयोग कर सकता है। जबकि वही व्यक्ति प्रति दिन 25 मिली ग्राम (औसत) सल्फरडाई ऑक्साइड का उपयोग कर रहा है।

जिबसन तथा स्ट्राग (सन् 1973) के अनुसार संयुक्त राज्य अमेरिका में 70 किलो वजन वाला व्यक्ति 7·2 मिली ग्राम से अधिकाधिक 120 मिली ग्राम तक सल्फरडाई-ऑक्साइड का उपयोग कर सकता है। इससे यह मालूम होता है कि लोक स्वास्थ्य संगठनों द्वारा निर्धारित मात्रा समुचित है।

आहार में सल्फरडाई ऑक्साइड के प्रयोग की सीमा, विभिन्न देशों में समान रूप से नहीं पायी जाती। यह मुख्य रूप से जलवायु पर आधारित है। खुबानी सुखाने के लिए, ऊष्ण-भैदानीय आस्ट्रेलिया से सल्फरडाई ऑक्साइड की मात्रा 2000 पी पी एम निर्धारित है, लेकिन शीत प्रदेशीय आस्ट्रेलिया में खुबानी सुखाने के लिए 3000 पी पी एम. की आवश्यकता होती है। फलस्वरूप दोनों स्थितियों में सुखायी गयी खुबानी में वर्ण समानता बनी रह सकेगी।

इवेलियन (Evelyn : सन् 1964) तथा कोहन फ्रिडोविक (Cohen Fridovich : सन् 1971) के प्रतिवेदन के अनुसार यह कहा जा सकता है कि सल्फरडाई ऑक्साइड से विषीकरण (Toxicity) नहीं होता या कोई खतरे की आशंका भी नहीं रहती। फिर भी सल्फरडाई ऑक्साइड के उपभोग पर समालोचना तो होती ही है। सन् 1966 में स्रोटर (Schroeter : 1966) ने कहा कि सल्फाईट तो थाइमिन को नष्ट करता है। मेंथिरो व वावरमैन सन् 1972 के अनुसार सल्फरडाई ऑक्साइड विट्रो में (In vitro) न्युक्लिक अम्ल (Nucleic Acid) के साथ अभिक्रिया करता है।

उपर्युक्त प्रतिवेदनों से यह सिद्ध होता है कि म्यूटोजनिक प्रभाव (Mutagenic effects) का तो सन्देह बना ही रहना है। इस प्रकार के सन्देह का समाधान भी वैज्ञानिको ने ढूंढ निकाला है। फिर भी इतना कह सकते है कि खाद्यों मे तथा जन्तुतन्त्रो मे सल्फाइट की पारस्परिक क्रिया के बारे मे अध्ययन जारी रखना ही है। आज सल्फाइट सस्ता,सुविधा- जनक तथा प्रभावशाली परिरक्षक सिद्ध हुआ है, जो सरकार द्वारा स्वीकृति प्राप्त भी है।

भारत में परिरक्षक की सीमा

सन् 1955 के इण्डियन फ्रूट प्रोडेक्ट आर्डर के अनुसार फल-तरकारी के हर एक 10 लाख भाग मे (1000000) मे परिरक्षक (पी० पी० एम० के हिसाब से) मिलाने का आदेश अधोलिखित सारणी सख्या 12 मे दिया हुआ है। सरकार ने आम जनता के स्वास्थ्य को दृष्टिगत रखते हुये ही ऐसा किया है। यह सीमा ब्रिटिश सरकार द्वारा भी स्वीकृत थी।

कार्बन डाई ऑक्साइड (Carbon-di-oxide)

कार्बन डाईऑक्साइड जब उच्च दाब पर, मशीन द्वारा बोतलो मे भर दिया जाता है, तो भरे हुये पदार्थ (पेय) का पूर्णतया परिरक्षण हो सकता है। इसके अलावा फल तथा अन्य खाद्य पदार्थ को गोदामो मे संचयन करते समय भी कार्बन डाईऑक्साइड का प्रयोग किया जाता है। इसका प्रयोग आजकल उत्परिवर्तन (Mutation) को नियन्त्रित करने के लिए भी किया जाता है।

सन् 1869 मे ग्राग्रर ने (Grager) अंगूर रस मे किण्वन क्रिया रोकने के लिए कार्बन डाईऑक्साइड दबाव का प्रयोग किया। सन् 1912 मे बोही ने सेब, अंगूर, नासपाती आदि रसो के किण्वन मे कार्बन डाईऑक्साइड के प्रभाव का अध्ययन किया तथा बताया कि

सारणी संख्या 12

सन् 1955 के इण्डियन फ्रूट प्रोडक्ट आर्डर के अनुसार फल-तरकारी उत्पादों मे हर एक 10 लाख मे जितना भाग परिरक्षक मिलाना चाहिए, उसकी मात्रा यह सारणी सूचित करती है।

क्र सं.	फल उत्पादे (Fruit Products)	परिरक्षक का नाम (Name of Preservative)	हर दस लाख भाग के लिए परिरक्षक की निर्धारित मात्रा (P.P.M)
1.	फल, फलगूदा, रस (जो चूर्ण नही है) जाम, क्रिस्तलीकृत फलोत्पाद, धूमीकृत सूखेफल	सल्फर डाईऑक्साइड	-
	(1) सरसफल	"	
	(2) स्ट्रावरी, रसबरी	"	

1	2	3	4
	(3) अन्य फल	सल्फरडाई ऑक्साइड	1,000
2.	फल सांद्रता	"	1,500
3.	सूखे फल :—		
	(1) खुबानी, आड़ू, सेब, नाशपाती आदि	"	2,000
	(2) किशमिश	"	750
4.	फलपेय (पानक, क्वश, फलरस) बारली जल शर्बत आदि में	सल्फर डाई-ऑक्साइड बनजोइक अम्ल	350 600
5	जैम, मारमलेड, मुरब्बा, जैली, आदि फलोत्पादों मे	सल्फरडाईऑक्साइड या बनजोइक अम्ल	40 या 200
6.	क्रिस्टलीकृत फलो, धूमीकृत सूखे तथा धवलीकृत फलो मे	सलफर डाईऑक्साइड	150
7.	अन्य फल तथा फल गूदा जो इस सारणी मे सम्मिलित नही है।	"	350
8.	गाजर पेय	" बनजोइक अम्ल	70 या 120
9.	फल-तरकारी अचार	"	250
10	टमाटर तथा अन्य सॉस	"	250
11.	टमाटर शोरबा तथा लेई	"	250
12.	मधुरपेय तथा शर्बत	सल्फर डाई ऑक्साइड या बनजोइक अम्ल	350
13.	निर्जलीकृत तरकारी	सल्फर डाईऑक्साइड	2,000

6 से 7 वायु मण्डलीय दबाव (6–7 atm o-pheric Pressure) पर सूक्ष्मजीवियों की सम्पूर्ण क्रिया समाप्त हो जाती है तथा फल की नैसर्गिक सुगन्ध व विशिष्टता भी नष्ट नही होती।

कार्बन डाईऑक्साइड पी० एच० में परिवर्तन लाती है, इसलिए सूक्ष्मजीव-विरोधी प्रभाव पैदा करती है।

सन् 1865 में प्रांडल (Prandel) ने देखा कि कार्बन डाईऑक्साइड का दबाव वाहिकाओं में जैसे-जैसे बढ़ाया वैसे ही मधुर रस में चल रही किण्वन क्रिया भी मन्द पड़ते हुए समाप्त हो गयी। लेकिन यह क्रिया मद्यसार के अपने प्रभाव डालने से पूर्व ही सम्पन्न हुई। कुछ वैज्ञानिकों ने अधिक दबाव (300 से 400) देकर प्रकिण्वों की किण्वन क्रिया शक्ति को भी कम करने में सफलता प्राप्त की थी। कार्बन डाईऑक्साइड में फफूंदी-रोधक शक्ति है ही। केवल अक्सर फफूंदियों द्वारा खराब होता है। इसलिए सन् 1940 में ही इसे दबाव तथा प्रशीतन (Refregiration) का संयुक्त प्रयोग कर व्यावसायिक मात्रा में सम्पन्न

करने लगे थे। लेकिन यह देखा कि निर्जर्मीकरण-निष्यन्दन (Germproof Filteration) तथा कार्बन डाईऑक्साइड के प्रयोग से उतना प्रभाव नहीं हुआ था।

फलों के रस में वायु मिश्रित हो जाये तो उसमें पाए जाने वाले अस्कॉरबिक अम्ल, ऑक्सीकरण से नष्ट हो जायेंगे। अगर कार्बन डाईऑक्साइड मिलाने से उसमे मिश्रित वायु निकल जाती है तो ऑक्सीकरण कम हो जाता है, फलस्वरूप अस्कॉरबिक अम्ल धारणीय रहेगा। अगर कार्बनीकरण (Carbanization) से फल पेयो मे तीखापन आ जाता है जो उपभोक्ता के स्वाद के अनुकूल होता है।

फल रसों में कार्बन डाईऑक्साइड को विलीन करने के लिए तापमान भी कुछ हद तक प्रभाव डालता है, क्योंकि यह देखा गया कि 60° एफ (15·5° सी०) से अधिक तापमान हो तो विलेयता कम होती जायेगी।

राई तथा राई संयुक्त(Mustered & Mustered Compounds)

ईसा के करीब 1500 वर्ष पूर्व, मिश्र में लिखी गई चिकित्सा रिपोर्ट मे उल्लेख है कि राई एक मसाले के अलावा परिरक्षक के रूप में प्रयोग में लाई जाती थी। भारत मे भी अनादि काल से अचारो मे, अनिवार्य रूप से राई का प्रयोग किया जाता है। इसका प्रयोग खटाई लाने के लिए नही, बल्कि परिरक्षक के रूप में किया जाता है। टर्की के लोग भारतीयो की तरह घरेलू उपयोग तथा परिरक्षण के लिए राई काम मे लेते हैं। बताया गया है कि रोम निवासी राई को पीसकर, फल रसों के परिरक्षण मे काम मे लेते थे। रोम निवासी अपने ब्रिटेन देशान्तरण के समय राई को साथ ले गये बताते है। वहाँ उन लोगो ने मदिरा बनाते समय अंगूर के रस मे राई मिलाई। क्योंकि मुकडी या द्राक्षा रस (Fermented Grapejuice) को खराबियों से बचाने के लिए ही इसका प्रयोग किया जाता है। यही कारण है कि राई का अंग्रेजी में मस्टर्ड (Mustered), जो पदार्थ मस्ट यानी मुकडी मे डालते हैं) नाम पड़ा।

परिरक्षण के लिए राई को पीसना चाहिए तथा तुरन्त प्रयोग में लेना चाहिए। राई का सक्रिय पदार्थ ऐलाई थयोसाइनेट (Allyl Thiocyanate) है। यह संयुक्त 1·0 प्रतिशत फल रस मे मिलाया जाए तो प्रकिण्व से होने वाली किण्वन क्रिया को रोका जा सकता है। लेकिन जीवाणु तथा फफूँदी को नही रोकता। अतः सम्पूर्ण परिरक्षण के लिए 2·0 प्रतिशत मात्रा अपेक्षित है (ट्रसलर तथा जोसिलीन 1961)। ट्रसलर तथा साथियों ने आगे कहा कि (अन्य शोधकर्त्ताओं के प्रतिवेदनो के आधार पर) तीन विभिन्न राई सयुक्त, ऐलाई ऐसोसाइनेट, मिथाइल ऐसो थयोसाइनेट तथा इथइल ऐसो-थयोसाइनेट (Allyl iso-thiocynate, methyl iso-thiocyanate, and Ethyl iso-thiocynate) का जीवाणु पर होने वाले प्रभाव का अध्ययन किया तो मालूम पड़ा कि इन तीनो मे उल्लेखनीय परिरक्षण कार्य तो मिथइल ऐसो थयोसाइनेट के प्रभाव से होता है। एक लाख भाग में एक भाग तथा 10 लाख भाग मे 1 भाग सान्द्रता के हिसाब से मिलाया गया तो सम्पूर्ण जीवाणु सक्रिय पाये गये। इस सयुक्त को सेराटिया मारसेन्स, बेसिलस सबटिलिस तथा बेसिलस मैकोइडस (Serratia mavescens, Bacillus subtilis & B mycoides) आदि जीवाणु सह नही पाते थे। लेकिन इस परिरक्षक का जीवाणु, इचरिचिया कोलि, स्टाफिलोकोकस ओरेस (Escherichia coli, & Staphylococcus aureus) पर कोई प्रभाव नही पड़ा।

1	2	3	4
	(3) अन्य फल	सल्फरडाई ऑक्साइड	1,000
2.	फल सान्द्रता	"	1,500
3.	सूखे फल :—		
	(1) खूबानी, आड़ू, सेब, नाशपाती आदि	"	2,000
	(2) किशमिश	"	750
4.	फलपेय (पानक, कप, फलरस) बारली जल	सल्फर डाई-ऑक्साइड	350
	शर्बत आदि में	बनजोइक अम्ल	600
5.	जैम, मारमलेड, मुरब्बा, जैली, आदि फलोत्पादों में	सल्फरडाईऑक्साइड या बनजोइक अम्ल	40 या 200
6.	क्रिस्टलीकृत फलों, धूमीकृत सूखे तथा धवलीकृत फलों में	सलफर डाईऑक्साइड	150
7.	अन्य फल तथा फल गूदा जो इस सारणी में सम्मिलित नहीं है।	"	350
8	गाजर पेय	"	70 या
		बनजोइक अम्ल	120
9.	फल-तरकारी अचार	"	250
10	टमाटर तथा अन्य सास	"	250
11.	टमाटर शोरबा तथा लेई	"	250
12.	मधुरपेय तथा शर्बत	सल्फर डाई ऑक्साइड या बनजोइक अम्ल	350
13.	निर्जलीकृत तरकारी	सल्फर डाईऑक्साइड	2,000

6 से 7 वायु मण्डलीय दबाव (6–7 atm ■-pheric Pressure) पर सूक्ष्मजीवियों की सम्पूर्ण क्रिया समाप्त हो जाती है तथा फल की नैसर्गिक सुगन्ध व विशिष्टता भी नष्ट नहीं होती।

कार्बन डाईऑक्साइड पी० एच० में परिवर्तन लाती है, इसलिए सूक्ष्मजीव-विरोधी प्रभाव पैदा करती है।

सन् 1865 में प्राडल (Prandel) ने देखा कि कार्बन डाईऑक्साइड का दबाव वाहिकाओं में जैसे-जैसे बढ़ाया वैसे ही अंगूर रस में चल रही किण्वन क्रिया भी मन्द पड़ते हुए समाप्त हो गयी। लेकिन यह क्रिया मद्यसार के अपने प्रभाव डालने से पूर्व ही सम्पन्न हुई। कुछ वैज्ञानिकों ने अधिक दबाव (300 से 400) देकर प्रकिण्वों की किण्वन क्रिया शक्ति को भी कम करने में सफलता प्राप्त की थी। कार्बन डाईऑक्साइड में फफूंदी-रोधक शक्ति है ही। सेबरस अक्सर फफूंदियों द्वारा खराब होता है। इसलिए सन् 1940 से ही इस गैस तथा प्रशीतन (Refregiration) का संयुक्त प्रयोग कर अत्यधिक मात्रा में मद्यरस

करने लगे थे। लेकिन यह देखा कि निर्जर्मीकरण-निष्यन्दन (Germproof Filteration) तथा कार्बन डाईग्रॉक्साइड के प्रयोग से उतना प्रभाव नहीं हुआ था।

फलो के रस मे वायु मिश्रित हो जाये तो उसमे पाए जाने वाले ग्रस्कॉरबिक ग्रम्ल, ग्रॉक्सीकरण से नष्ट हो जायेंगे। अगर कार्बन डाईग्रॉक्साइड मिलाने से उसमे मिश्रित वायु निकल जाती है तो ग्रॉक्सीकरण कम हो जाता है, फलस्वरूप ग्रस्कॉरबिक ग्रम्ल धारणीय रहेगा। अगर कार्बनीकरण (Carbanization) से फल पेयो मे तीखापन आ जाता है जो उपभोक्ता के स्वाद के अनुकूल होता है।

फल रसो मे कार्बन डाईग्रॉक्साइड को विलीन करने के लिए तापमान भी कुछ हद तक प्रभाव डालता है, क्योकि यह देखा गया कि 60° एफ (15 5° सी०) से अधिक तापमान हो तो विलेयता कम होजी जायेगी।

राई तथा राई संयुक्त(Mustered & Mustered Compounds)

ईसा के करीब 1500 वर्ष पूर्व, मिश्र मे लिखी गई चिकित्सा रिपोर्ट मे उल्लेख है कि राई एक मसाले के अलावा परिरक्षक के रूप मे प्रयोग में लाई जाती थी। भारत मे भी अनादि काल से अचारों मे, अनिवार्य रूप से राई का प्रयोग किया जाता है। इसका प्रयोग खटाई लाने के लिए नही, बल्कि परिरक्षक के रूप मे किया जाता है। टर्की के लोग भारतीयो की तरह घरेलू उपयोग तथा परिरक्षण के लिए राई काम मे लेते है। बताया गया है कि रोम निवासी राई को पीसकर, फल रसों के परिरक्षण मे काम मे लेते थे। रोम निवासी अपने ब्रिटेन देशान्तरण के समय राई को साथ ले गये बताते है। वहाँ उन लोगों ने मदिरा बनाते समय अँगूर के रस में राई मिलाई। क्योंकि मुकडी या द्राक्षा रस (Fermented Grapejuice) को खराबियों से बचाने के लिए ही इसका प्रयोग किया जाता है। यही कारण है कि राई का अग्रेजी मे मस्टर्ड (Mustered), जो पदार्थ मस्ट यानी मुकड़ी में डालते हैं) नाम पडा।

परिरक्षण के लिए राई को पीसना चाहिए तथा तुरन्त प्रयोग में लेना चाहिए। राई का सक्रिय पदार्थ ऐलाई थयोसाइनेट (Allyl Thiocyanate) है। यह संयुक्त 1·0 प्रतिशत फल रस में मिलाया जाए तो प्रकिण्व से होने वाली किण्वन क्रिया को रोका जा सकता है। लेकिन जीवाणु तथा फफूँदी को नही रोकता। अतः सम्पूर्ण परिरक्षण के लिए 2·0 प्रतिशत मात्रा अपेक्षित है (ट्रसलर तथा जोसिलीन 1961)। ट्रमलर तथा साथियो ने आगे कहा कि (अन्य शोधकर्त्ताओ के प्रतिवेदनो के आधार पर) तीन विभिन्न राई सयुक्त, ऐलाई ऐसोसाइनेट, मिथाइल ऐसो थयोसाइनेट तथा इथइल ऐसो-थयोसाइनेट (Allyl iso-thiocynate, methyl iso-thiocyanate, and Ethyl iso-thiccynate) का जीवाणु पर होने वाले प्रभाव का अध्ययन किया तो मालूम पडा कि इन तीनों में उल्लेखनीय परिरक्षण कार्य तो मिथइल ऐसो थयोसाइनेट के प्रभाव से होता है। एक लाख भाग मे एक भाग तथा 10 लाख भाग में 1 भाग सान्द्रता के हिसाब से मिलाया गया तो सम्पूर्ण जीवाणु सक्रिय पाये गये। इस सयुक्त को सेराटिया मारसेनस, बेसिलस सबटिलिस तथा बेसिलस मैकोइडस (Serratia mavescens, Bacillus subtilis & B. mycoides) आदि जीवाणु सह नही पाते थे। लेकिन इस परिरक्षक का जीवाणु, इचरिचिया कोलि, स्टाफिलोकोकस ओरेस (Escherichia coli, & Staphylococcus aureus) पर कोई प्रभाव नही पड़ा।

वैज्ञानिकों ने राई के तेल को भी परिरक्षण के लिए काम मे लिया। फल रस मे 1·5 से 2 मिलिग्राम प्रति लीटर के हिसाब से राई का तेल मिलाकर रखने से फफूंदी को तो रोका जा सका, मगर किण्वन क्रिया को नही। यह भी देखा गया कि 25–50 मिलीग्राम प्रतिलीटर के हिसाब से राई तेल मिलाकर रखने से अगूर रस मे किण्वन क्रिया नही होती, लेकिन रस का निष्यंद्रीकरण (Filteration) कर सीलबन्द वाहिकाओं में रखना जरूरी है। इसलिए काली राई को काम मे लिया गया था। यह तेल में मिलाने से अनावश्यक स्वाद पैदा हो जाता है, जो जल अपघटन क्रिया से नष्ट भी हो जाता है। 10 पी० पी० एम० के हिसाब से सेब तथा अगूर के रस मे मिलाकर देखा गया तो मालूम हुआ कि तापमक वाली फफूंदी तथा प्रकिण्व की संख्या में कमी हुई। इसलिए दाब पास्तुरीकरण तथा उपर्युक्त तेल मिलाना परिरक्षण के लिए पर्याप्त है।

सोरबिक अम्ल (Sorbic Acid)

सोरबिक अम्ल, फल तथा तरकारी परिरक्षण में आमतौर पर इतना काम मे नहीं आता, जितना पूर्व वर्णित रासायनिक पदार्थ काम में लिए जाते हैं। यह अब भी अनुसन्धान शाला तक सीमित है। लेकिन प्रोटीन आहार (मांस तथा मछली) के परिरक्षण के काम मे लिया जाता है, जिसकी सरकार से स्वीकृति प्राप्त है। 2, 4–हैक्साडिनिक अम्ल (2, 4–Hexadienic Acid) को सोरबिक अम्ल कहते हैं। यह उपापचय (Metabolism) क्रिया के फलस्वरूप कार्बन डाई ऑक्साइड तथा जल मे रूपान्तरित हो जाता है। इस तरह के गुण वाला परिरक्षक, दूसरा नही है। यह तेल, सोडियम सोरबेट या सोरबिक अम्ल, अपास्तुरीकृत (Unpasteurixed) सेब-रस में प्रकिण्व-किण्वन-क्रिया-रोधक काम करता है। यह साधारणतया फफूंदियों का भी रोधी है। लेकिन जीवाणु किण्वन मे साधारणतया यह रोधक नही है। कुछ सल्फिड्रिल-किण्वकों (Sulphydryl or Sulphydryl Enxymes) पर सोरबिक अम्ल प्रभाव डालकर सूक्ष्मजीवियों की वृद्धि को रोका जाता है। यह बात ह्वाइटकर ने (सन् 1959) मे बताई है।

सन् 1952 मे इमार्ड तथा वाऊहन (Emard & Vaughn) ने बताया कि सोरबिक अम्ल प्रायः जीवाणुओं, अक्टिनोमेसिटिस (Actino mycetes), फफूंदी तथा प्रकिण्वों को रोकता है लेकिन लैक्टिक अम्ल जीवाणु (Lactic acid bacteria) तथा क्लोस्ट्रोडियम पर प्रभाव नही डालता।

यद्यपि सोरबिक अम्ल, बनजोइक अम्ल के बराबर फल रसो की प्रकृति मे किसी प्रकार का दोष नही डालता, तथापि सोडियम सोरबेट, सोडियम बनजोएट के बराबर काम नही देता। मगर सेब-रसो को 70°–75° एफ तापमान पर 7 दिन तक बनाये रखने के लिए, सोडियम सोरबेट योग्य सिद्ध हुआ है। इससे अधिक तापमान पर यह देखा गया कि फफूंदी तथा प्रकिण्व पर नियन्त्रण तो रहा, लेकिन जीवाणुओं की वृद्धि होती रही।

सन् 1959 तक के अनुसधान से यह पता लगा है कि सोरबिक अम्ल प्रकिण्व के साथ सारे ब्लास्टोमिसिटिस (Blastomycetes) पर प्रभाव डालता है। इसके लिए न्यूनतम 1 ग्राम प्रतिलीटर के हिसाब से मिलाना चाहिए।

मन्द तापोपचार कर, मिलाये गये सोरबिक अम्ल या लवण के प्रभाव को उत्तेजित किया जा सकता है। इसी प्रकार 0·06 से 0·12 प्रतिशत सोडियम सोरबेट मिलाकर

तापोपचार किया गया तो ताजा सेब-रसों के संचयन-गुण में वृद्धि पाई गयी (रोबिनसन तथा हिल्स 1959)।

बुरमिस्टर (सन् 1959) ने देखा कि सेब में प्रकिण्वों को रोकने के लिए 0·6 ग्राम सोरबिक अम्ल प्रतिलीटर के हिसाब से चाहिए था जबकि उसका पी० एच० मान करीब 3·2 था।

सन् 1955 में लकमन तथा मेलनिक (Luckman & Melinik) ने सोरबिक अम्ल निर्धारण (Determination) हेतु स्पेक्ट्रो फोटो मैट्रिक (Spectro photometric) रीति का विकास किया।

फोरमिक अम्ल (Formic acid)

फोरमिक अम्ल वसा अम्ल वर्ग का है, जो साधारणतया चीटी तथा बिच्छू में पाया जाता है। यह अम्ल नीबू वर्गीय फलों के रस तथा उसके सांद्रता का परिरक्षण करने के काम में लिया जाता है, जो विविध पेय बनाने के लिए भविष्य में काम में लिया जा सकेगा। यह (सन् 1958) बरमिस्टर का कथन था कि यह अम्ल अपेक्षाकृत वाष्पशील है, अगर फल रस मे या फल सांद्रता में फोरमिक अम्ल की मात्रा आवश्यकता से अधिक हो जाय, तो इसको वाष्पीकरण द्वारा शीघ्र दूर कर सकते हैं। इन कारणों से परिरक्षण मात्रा (फोरमिक अम्ल) कुछ अधिक रखनी पड़ती है। अतः 4 ग्राम प्रतिलीटर के हिसाब से मिलाना आवश्यक है। लेकिन इसके मिलाने मात्र से परिरक्षण सम्भव नहीं होगा, इसके साथ बनजोइक अम्ल और मिलाना जरूरी हो जाता है। ध्यान रहे कि फोरमिक अम्ल के साथ बनजोइक अम्ल की मात्रा उतनी नहीं चाहिए जितनी कि बनजोइक अम्ल के द्वारा परिरक्षण के समय प्रयोग मे लाई जाती है। फारमिक अम्ल पी० एच० मान को भी घटाता है। साथ ही फारमिक अम्ल कोई विषीकरण (Poisoning) प्रभाव भी नहीं डालता। फिर भी यह सोरबिक अम्ल की भाँति सरकार द्वारा स्वीकृत नहीं है। इसका प्रयोग आज भी अनुसन्धान-शालाओं तक सीमित है।

प्रतिजैविकी (Antibiotic)

प्रतिजैविकी सूक्ष्मजीव एवं अन्य जीवित ऊतकों में उत्पन्न उपापचयी पदार्थ है। इन उपापचयी पदार्थों में रोगाणुनाशक शक्ति होती है। इसका आविष्कार मानव शरीर के रोगों को दूर करने मे एक आशीर्वाद ही कहा जा सकता है, क्योंकि मानव रोगों को ही नहीं, बल्कि वनस्पति तथा पशु-रोग, जन्य अणुओं को नष्ट करने के लिए भी प्रतिजैविकी को काम मे लिया जाता है। लेकिन चिकित्सा मे इसको जितना प्रोत्साहन मिला है उतना खाद्य-परिरक्षण मे प्राप्त नहीं हुआ। वैज्ञानिको के कथनानुसार इसके अनियन्त्रित उपभोग से मानव शरीर रोगाणु प्रतिजैविकी प्रतिरोधक (सह) (Antibiotics Resistant) हो जायेगा जिसके फलस्वरूप भविष्य मे चिकित्सा कठिन हो जायेगी। लेकिन कुछ वैज्ञानिकों ने इसकी अवहेलना की है. फिर भी इसका खुला प्रयोग वर्जित है। खाद्य परिरक्षण मे इसका प्रयोग सर्व प्रथम कुछ फ्रांसीसी वैज्ञानिकों ने सन् 1955 मे किया था। अब तक प्रतिजैविकी (1) मेयकोसयू-टिलिन तथा अक्टिडिओन (Mycosutilin & Actidione) फल परिरक्षण मे प्रयोग कर देखा। अंगूर रस की फफूंदी को रोकने मे इन्होंने मदद की, लेकिन लैक्टिक तथा एसिटिक अम्ल जीवाणुओ की वृद्धि उसमे हुई। एक दूसरा जीवाणुरोधक का नाम है, नाइसिन (Nisin)।

सन् 1960 मे स्कॉलर ने कहा कि अगर सब्जियो के रस में नाइसिन मिलाया जाय तो जीवाणुओं को केवल रोका ही नही जा सकता, बल्कि उनके ऊष्मोपचार की भी आवश्यकता नही होती है । अन्य दो प्रतिजैविकी, जिनका प्रयोग फल-रस मे सफल रहा है मेक्रोसबटलिन तथा पॉटुलिन (Microsubtilin & Patuline) हैं ।

डिस्थोसियर (सन् 1970) के अनुसार खाद्यो मे इसका प्रयोग अमेरिका मे वर्जित है, लेकिन आऊरोमेसिन (Aureomycin) को कच्चे कुकड मांस के सचयन के लिए अनुमति प्रदान की गई है ।

आज भी इसका प्रयोग अनुसन्धान केन्द्रो तक ही सीमित है । हो सकता है कि भविष्य में यह सार्वजनिक रूप से काम मे लिया जा सकेगा ।

विटामिन 'के$_5$' (Vitamin K_5)

यह संयुक्त विटामिन की शृंखलाओं का एक समानान्तर तत्व है (2–Methyl–4 Amino–1–naphthal hydrochloride), प्राट तथा साथियो ने सन् 1948 में यह देखा कि यह संयुक्त मदिरा प्रकिण्वो के अलावा कई अन्य सूक्ष्मजीवियो का रोधक है। सूक्ष्मजीवियो की प्रजनन-रोध शक्ति तथा न्यून विषीकरणो के कारण विटामिन के$_5$, प्रतिजैविकी की सीमा मे आता है ।

वैज्ञानिकों ने देखा कि मुकडी (Must) मे 5 से 300 मि० ग्रा० प्रतिलीटर तक विटामिन के$_5$ मिलाया गया तो प्रारम्भिक किण्वन (Initial Fermentation) देर से सम्पन्न हुआ । मन्द या मधुर मदिरा (Light or Sweet wine) मे 7 से 8 पी०पी०एम० के हिसाब से मिलाया गया तो देखा गया कि द्वितीय किण्वन प्रक्रिया रुक गई । इसके अलावा सोरबिक अम्ल से यह ऊष्मासक भी होते हैं । यह गुण परिरक्षण मे एक विशेष सुविधा प्रदान करता है । यवरस बीयर (Malt Beer) में जब 300 मिलीग्राम प्रतिलीटर के हिसाब से, विटामिन के$_5$ मिलाया गया तो पाया गया कि फफूंदी-वृद्धि रुक गई तथा यह भी ज्ञात हुआ कि इस मात्रा में प्रयोग करने से मानव शरीर में विषीकरण भी नही होता । यह प्रतिवेदन सन् 1954 मे वानोसी (Vanossi) ने प्रस्तुत किया ।

ट्रेसलर तथा जोसलिन (Tressler and Joslyn 1961) के अनुसार मदिरा निर्माण मे सल्फरडाई ऑक्साइड से उत्तम, विटामिन के$_5$ हैं तथा प्राप्त प्रमाणों से कहा जा सकता है कि यह परिरक्षण के रूप मे (कारखानो मे) बने फल-रसो मे मिलाया जा सकता है ।

वर्ण (Colours) तथा सुगन्ध द्रव्य (Flavours)

जब कोई आहार नजर आता है तो उसके रंग की वजह से ही हम उसकी तरफ आकर्षित होते हैं, उस पदार्थ को सूंघें तो उसकी सुगन्ध मन मोहक होनी चाहिए । इसी प्रकार यदि नेत्र तथा नासिका उस आहार को पसन्द करलें तो हो हम उसको चखना चाहेंगे । इससे आप सहमत होंगे कि रग तथा सुगन्ध को हम स्वाद से पहले महत्व देते हैं । इस तथ्य को ध्यान मे रखते हुए परिरक्षण पदार्थो मे वही रग और सुगन्ध दी जाती है, जो उसके कच्चे माल मे भी हम अनुभव करते हैं । सुगन्ध तथा रंगो से न तो परिरक्षण होता है न ही पोषकता बढती है । लेकिन यह देखा गया कि जब एक ही आहार को रग मिलाकर बनाया गया, दूसरा बिना वर्ण बनाया गया, तो पाया गया कि, उपभोक्ता रंग मिलाये गये

पदार्थ को अधिक पसन्द किया। इससे रंग तथा सुगन्ध के प्रयोग का महत्व स्वतः सिद्ध हो जाता है।

लेकिन खाद्य-पदार्थ बनाने वालो द्वारा खाद्य मे अस्वीकृत वर्ण मिलाने की वजह से उपभोक्ताओ के स्वास्थ्य पर बुरा असर पड़ता है। फलस्वरूप सरकार को मजबूरन कुछ पदार्थों मे रंग मिलाना अवैध घोषित करना पड़ा। भारत के विभिन्न प्रदेशों मे बनाये जाने वाले खास-खास खाद्य पदार्थों का अध्ययन करने से इसकी पुष्टि हुई है, जिसकी आगे चर्चा की जायेगी।

खाद्य योग्य वर्ण वस्तु (Edible Colours)

वर्णों का खाद्य तथा अखाद्य के रूप मे वर्गीकरण किया गया है। खाद्य वर्ण, खाद्य पदार्थों मे तथा दूसरा कपड़ा, कागज, तेल आदि अखाद्य वस्तुओं को रंगने के काम मे लिए जाते हैं। याद रखें कि खाने के तेल मे रंग नहीं मिलाये जाते।

इनका पुनः स्वाभाविक तथा कृत्रिम वर्णों में वर्गीकरण कर सकते है। ऐसे वर्ण जो वनस्पति तथा प्राणियों से प्राप्त होते हैं, उन्हे स्वाभाविक वर्ण तथा रासायनिक विधियो द्वारा तैयार किये जाने वाले वर्ण, कृत्रिम वर्ण कहलाते है।

उपर्युक्त वर्ण कुछ तो जल-विलेय हैं तथा कुछ स्नेह (वसा) विलेय होते हैं। कुछ वर्ण ऐसे भी होते हैं जो क्षारीय परिस्थिति में विलेय हैं तो दूसरे वर्ग के वर्ण अम्लीय परिस्थिति मे ही विलेय होते हैं।

यह घोल या चूर्ण के रूप मे बाजार में प्राप्त होते है। लेकिन खाने के काम मे लेते समय अवश्य देखना चाहिए कि यह खाने योग्य है या नही इस विषय पर आगे प्रकाश डाला जायेगा।

एक देश मे मान्यता प्राप्त वर्ण के लिए जरूरी नहीं कि दूसरे देश में भी उसे मान्यता प्राप्त हो। यह भी हो सकता है कि आज जिस रंग को मान्यता प्राप्त है, कल उसकी मान्यता समाप्त कर दी जाय। क्योंकि ऐसे निर्णय अनुसन्धान पर आधारित अध्ययन के प्रतिवेदनों के आधार पर ही सरकार द्वारा लिए जाते है।

ब्रिटेन मे मान्यता प्राप्त वर्ण को, अन्य देशो में मान्यता प्राप्त नहीं हुई है। यह तथ्य अधोलिखित सारणी (स० 16) से स्पष्ट हो जाता है।

सारणी सख्या 13
भारत सरकार द्वारा मान्यता प्राप्त कुछ वर्ण

सन् 1955 के इण्डियन फ्रूट प्रोडक्ट आर्डर के अन्तर्गत निम्नलिखित वर्णों को खाद्य पदार्थों को मिलाने की अनुमति प्रदान की गई है :—

(अ) खाने योग्य प्राकृतिक वर्ण

1. कोचिनियल या करामिन कारमैन	(Cochineal of Carmine)
2. केरोटिन या केराटिनाइड	(Carotene or Carotenoids)
3. क्लोरोफिल	(Chlorophyll)
4. लैक्टोफ्लेविन	(Lectoflavin)
5 कारामेल	(Caramel)
6. अन्नटो	(Annatto)
7. राटनजोट	(Ratanjot)
8. सैफरोन	(Saffron)
9. कुर्कमिन	(Curcumin)

(आ) खाने योग्य कोलटार वर्ण (Edible Coaltar dyes) जो प्रयोग में लिए जा सकते हैं (तालिका संख्या 15 देखिये)।

जब उपर्युक्त वर्ण मिलाये जाएँ तब यह ध्यान रखना पड़ेगा कि ये रंग शुद्ध हो तथा उनमे किसी प्रकार कि मिलावट नहीं हो। मान्यता प्राप्त कोलटार या उसका मिश्रण खाद्य पदार्थों में प्रति एक किलो ग्राम के लिए 0 215 मिलीग्राम के हिसाब से मिलाना चाहिए इससे अधिक नही।

सन् 1975 मे खन्ना तथा सिंह ने प्रतिवेदन दिया कि आज ऐसे 10 कृत्रिम रंगो को भारत में मान्यता प्राप्त है। जिन्हें खाद्य पदार्थों मे वर्ण देने के लिए काम मे लिया जा सकता है, जो सारणी 14 मे दिया गया है।

सारणी संख्या 14

1. अमरंत	(Amaranth)
2. कारमोसेन	(Carmosine)
3. इरीथ्रोसिन	(Erythrosine)
4. फास्ट रेड ई	(Fast red E)
5. पोनशो 4–आर	(Ponceau 4–R)
6. सनसेट येल्लो एफ० सी०एफ० ओरज	(Sun set yellow F. C. F. Orange)
7. टारटराज़िन येल्लो	(Tartrazine yellow)
8. इंडिगो कारमीन ब्लू	(Indigo Carmine Blue)
9. ग्रीन बी	(Green B)
10. फास्ट ग्रीन एफ० सी० एफ०	(Fast green F C F)

लेकिन उन्होने आगे कहा कि ऐसा भी पाया गया कि कुछ ऐसे वर्ण भी खाद्य पदार्थों में मिलाये जाते है, जो मान्यता प्राप्त नहीं हैं तथा इनके खाने से मानव शरीर को कई प्रकार की बीमारियाँ हो जाती हैं। इन्होने 12575 आहार नमूने उत्तर प्रदेश के कई इलाको मे से एकत्र किये तथा उनकी जाँच करने से मालूम हुआ कि 8820 नमूने मे ऐसे रंग मिलाये गये थे जो मान्यता प्राप्त नही थे। उनमें मे कुछ प्रमुख निम्नलिखित हैं (सारणी संख्या 15)।

सारणी संख्या 15

अवैध रंगों के नाम जो खाद्य में पाये गये

1. ओरामिन येलो	(Auramine yellow)
2. ब्लू वी० आर० एस०	(Blue V. R S)
3. कोनगों रेड	(Congo Red)
4. सूडान, द्वितीय तथा तृतीय रेड	(Sudan II & III Red)
5. मालाचिटे ग्रीन	(Malachite Green)
6. मेटानिल येलो	(Metanil yellow)
7. ओरेंज यैल्लो-ओरेंज	[Orange II (Yellow to Orange)]
8. रोडामिन बी पिंक	(Rhodamine B–Pink) आदि।

उपर्युक्त रंग सस्ते होने के कारण ही अपने लाभ के लिए निर्माता इन्हें आहार में मिलाते हैं जो उपभोक्ताओं को रोगी बना देते हैं। इनके शिकार खास तौर से बालक-

बालिकायें तथा गरीब व अज्ञानी लोग होते हैं। अतः इस प्रकार की मिलावट करने वालो पर अधिकाधिक कठिन दण्ड दिलाने का प्रावधान होना चाहिए।

उपर्युक्त कारणों से वर्गीकरण से पहले यह भली-भाँति जान लेना चाहिए कि वर्ण जो आहार में काम में लेने जा रहे है वह खाने योग्य हैं या नही। अगर समझ मे नहीं आये तो घरो मे कम से कम वर्ण रहित परिरक्षण ही उचित रहेगा। उल्लेखनीय है कि बाजार में बनने वाले वर्णीकृत (रग मिलाये हुए) खाद्य पदार्थ विना अनुज्ञापत्र (Licence) प्राप्त व्यक्तियों द्वारा ही मिलाये जाते हैं। इसलिए ऐसे खाद्य पदार्थ उपभोग करने योग्य नहीं होते। अगर वर्ण के बारे मे पूर्ण विश्वास है तो ही काम मे लेना चाहिए अन्यथा नही। साधारणतया फल मे 0·006 से 0.008 प्रतिशत वर्ण मिलाने चाहिए (*ट्रेसलर तथा जोसलिन (सन् 1961)*, गिरधारीलाल तथा साथियो के अनुसार) मात्रा जो सारणी संख्या 17 मे बतायी है।

सारणी संख्या 16

निम्नांकित सारणी मे (मा) चिह्नित वो वर्ण इस बात का द्योतक है कि उस देश मे मान्यता प्राप्त है।

क्र स	ब्रिटेन मे मान्यता प्राप्त वर्ण का नाम	आस्ट्रेलिया	केनाडा	भारत	संयुक्त राज्य अमेरिका
1	2	3	4	5	6
1.	अमरन (Amaranth)	मा	मा	—	मा
2	ब्लू वि. आर एस. (Blus VRS)	मा	—	मा	—
3	ब्लेक बी. एन. (Black B N.)	मा	—	मा	—
4	ब्राउन एफ. के (*Brown F. K.*)	—	—	—	—
5	कारमोयसिन (Carmoisine)	मा	—	मा	—
6.	चोकलेट ब्राउन एफ. बी. (Chocolate Brown F B.)	—	—	—	—
7.	चोकलेट ब्राउन एच. टी. (Chocolate Brown H. T.)	—	—	—	—
8.	इरिथ्रोसिन बी. एस. (Erythrosine B. S.)	मा	मा	—	मा
9	फास्ट रैड ई (Fast Red E.)	—	मा	मा	—
10.	ग्रीन एस. (Green S.)	—	मा	—	—
11	इन्डिगो कारमिन (Indigo Carmine)	मा	मा	मा	मा
12.	नफतोल येलो एस. (Naphthol yellow S.)	—	मा	—	—
13.	ओइल येलो एक्स पी. (Oil yellow X.P.)	—	मा	—	—
14.	ओरेंज आर. एन. (Orange R. N.)	—	—	—	—
15.	ओरेंज जी. (Orange G.)	—	—	—	—
16.	ओरेंज यल्लो जी. जी. (Orange yellow G. G.)	—	—	—	—
17.	टारट्रासीन (Tartrazine)	मा			

1	2	3	4	5	6
18.	पोनसो एम. एक्स. (Ponceau M.X)	—	—	—	—
19.	पोनसो 4 आर. (,, ,, 4R)	मा	—	मा	—
20.	पोनसो एस. एक्स. (,, ,, S.X)	मा	मा	—	मा
21.	पोनसो 3 आर. (,, ,, 3R)	—	मा	—	मा
22.	रैड 10 बी (Red 10B)	—	—	—	—
23.	रैड 6 बी (Red 6B)	—	मा	—	—
24.	रैड 2 जी. (Red 2G)	—	—	—	—
25	रैड एफ बी (Red F B)	मा	मा	—	—
26.	सन सैट यलो एफ सी.एफ. (Sun set yellow F.C F.)	मा	मा	मा	—
27.	वॉयलेट बी एन पी (Violet B N P)	—	—	—	—
28.	येलो 2 जी. (Yellow 2 G)	—	मा	—	—
29.	येलो आर वाई (Yellow R.Y)	मा	—	—	—

सारणी संख्या 17

परिरक्षित खाद्य मिलावट कानून, 1953

कोलटार वर्ण जो काम मे लिए जा सकते हैं :—

निम्नलिखित वर्णों के अलावा कोई भी अन्य कोलटार वर्ण या उसका मिश्रण आहार मे नही मिलाना चाहिए ।

क्र.स.	वर्ण	साधारण नाम	कलर इंडेक्स	केमिकल क्लास
1	2	3	4	5
1.	रैड (Red)	पोनसो 4 आर	16255	ऐजो (AZO)
		कारमोसीन	14720	,, ,,
		फास्ट रैड ई	16045	,, ,,
		अमरंद	16185	,, ,,
		इरिथ्रोसिन	45430	जादीन
2.	येलो (Yellow)	टारटारजिन	19140	पिराजोलीन
		सन सैटयेलो एफ. सी. एफ.	15985	ऐजो
3.	ब्लू (Blue)	इन्डीगो कारमाइन	73015	इन्डीगोइड
		ब्रिलियन्ड ब्लू एफ.सी एफ.	42090	ट्रियरीलिमियाइन
4	ग्रीन (Green)	ग्रीन एस. फास्ट	44090	,, ,,
		ग्रीन एफ भी एफ	42053	,, ,,
		एफ डी. एण्ड सी. नम्बर 6		

सारणी संख्या 18

फल उत्पादों मे प्रयुक्त किये जाने वाले कुछ वर्ण तथा उनकी प्रयोग मात्रा :—

क्र.सं.	वर्ण	उत्पाद	चासनी मे काम ली जाने वाली मात्रा
1	2	3	4
1.	पोनसो 2 आर.	केनीकृत स्ट्राबरी	2 ग्राम प्रति $4\frac{1}{2}$ लीटर में
		लोंगबरी	1 ,, ,, ,,
		रसभरी	$\frac{1}{2}$,, ,, ,,
		विक्टोरियाप्लम	$\frac{1}{2}$,, ,, ,,
2	पिग्रिन रंग (5 प्रतिशत घोल)	केनीकृत मटर	10 सी. सी. ,,
		,, सेम	7–8 ,, ,, ,,
		,, सूखामटर	7–8 ,, ,, ,,
3.	सनसेट यल्लो	सन्तरा पानक	$2\frac{1}{2}$ से 3 ग्राम प्रति $45\frac{1}{2}$ किलो
4	सप्रेरोस बी. एस. 20+ भाग	टमाटर कैचप	0·85 ग्राम प्रति ,, ,,
	ट्रारट्रासिल यल्लो 80	टमाटर रस*	0·9 ,, ,, ,,

—ऐ. सी. ए. आर. के सौजन्य से

*टमाटर उत्पादों मे आजकल रंग मिलाना सरकार द्वारा वर्जित है।

वर्ण चुनते समय ध्यान रखने योग्य बातें

1. वर्ण अधिकाधिक विलेयशील हो।

2 वर्ण अम्लीय हों, क्योंकि क्षारीय वर्ण शीघ्र फीका पड जाता है।

3. साथ ही वर्ण ऐसा होना चाहिये जो सूक्ष्मजीव, प्रकाश, ऑक्सीकरण, टिन, जस्ता आदि से क्रिया कर फीका न पड़े। ऐजो (Azo) के वर्ण टिन के साथ अभिक्रिया कर फीके पड जाते है। उदाहरणार्थ—अमरात, पोनसो, सनलाइट येलो आदि। मगर ड्रॅफिनेल मिथाइन, फास्ट ग्रीन, लाइट ग्रीन आदि इस प्रकार के दोष से रहित हैं, लेकिन ऐजो वर्ग के पीले रंगों का प्रयोग पानक मे देखा नही गया है। पोनसो 2 आर०, इरथ्रोसिन आदि सल्फर डाईऑक्साइड के साथ अभिक्रिया नहीं करता। मगर जब सन्तरा पानक मे सनलाइट येलो, ट्रारट्रामिन, पोनसो आदि का मिश्रण सावधानी के साथ किया गया तो भी फीका पडा (गिरधारीलाल तथा माथो)।

4. उपर्युक्त वर्ण ऊष्मोपचार से भी फीके पड़ जाते हैं। इसलिए उत्पादों को भरने के पहले भट्टी से उतार कर, रंग मिलाये जाते हैं।

उत्पादों में वर्ण मिलाने की विधि

बाजारों में वर्ण दो रूप में प्राप्त होते हैं—1. चूर्ण रूप मे, 2. घोल के रूप मे, । चूर्ण वर्ण उचित मात्रा मे लेकर मामूली पानी मिलाकर खूब मिलाना चाहिये ताकि चन्दन जैसे बन जाय (घिसी हुयी) इसके बाद फल रस मिलाकर उसको और पतला किया जाना चाहिये। इसके बाद उसको समूचे उत्पाद मे मिला देना चाहिये ताकि फल उत्पाद में सर्वत्र एकरूप में घुल जाये।

अगर वर्ण घोल मे प्राप्त है तो उसको सीधे उत्पाद में मिलाया जा सकता है। लेकिन बचा हुआ रंग कुछ दिनो बाद बेकार हो जाता है। इसलिए उसे काम में नही लेते हैं।

सुगन्धित द्रव्य (Flavours) या आसव

कुछ विशेष पेड़-पौधो की जड़ें, तनों, पत्तो, फूलो व फलों आदि मे सुगन्ध अधिक मिलती है। जैसे खसखस, अदरक, चन्दन, तेजपात, तुलसी, पोदीना, लौंग, केवड़ा, गुलाब के फूल, रातरानी, दिन का राजा, नीबू, संतरा, इलायची, काली मिर्च, दाल चीनी, मीठा नीम इत्यादि। पदार्थों मे एल्डिहाइड (Aldehydes) ईस्टर्स तथा जैव लवण (Esters & Organic Salts) पाये जाते हैं जो सुगन्धकारक होते है। इनमे कुछ वाष्पीकरण शील हैं, कुछ जल विलेय है तो कुछ अन्य मद्यसार मे विलेयशील। इस तरह के पदार्थों मे आसव तथा मद्यसार मे विलीन किया हुआ सुगन्ध होता है। इन्हे ही प्राकृतिक सुगन्ध द्रव्य (Natural Flavours) कहा जाता है।

कुछ अन्य सुगन्ध द्रव्य और भी हैं जो सारणी सख्या 19 मे उल्लेखित हैं।

सारणी संख्या—19

कुछ सुगन्ध द्रव्य तथा उनके स्रोत पदार्थ

क्र.सं.	सुगन्ध का नाम	स्रोत-पदार्थ का नाम
1.	वेनिला एसेन्स (Vanilla Essence)	वेनिला सेम (Vanilla Bean)
2.	नीबू एसेन्स (Lemon Essence)	नीबू के छिलके (Lemon Skin)
3.	खस एसेन्स (Khaskhas ,,)	खसखस (Khaskhas)
4.	गुलाब एसेन्स (Rose ,,)	गुलाब के फूल (Rose Flower)
5.	अदरक (Ginger ,,)	अदरक गाँठ (Ginger)
6	संतरा (Orange ,,)	सन्तरे के छिलके (Orange Skin)

परिभाषा

प्रिस्कोट तथा प्रोक्टर (सन् 1973) ने इसी प्रकार की परिभाषा दी है कि "सुगन्धित पेड़-पौधों को या उनके किसी भाग को इथाइल ऐल्कोहॉल (Alcohol) की सहायता से निचोड़ कर ली गई सुगन्ध घोल को ही सुगन्ध अर्क या द्रव्य या आसव (Essence) कहा जाता है। इस तरह के सुगन्ध आसव में प्राकृतिक रंग आवें या न आवें। लेकिन उसकी स्रोत वस्तु का नाम अवश्य रखा जायेगा।" इसी प्रकार के कुछ सुगन्धित द्रव्यो के नाम सारणी संख्या 20 मे दिये गये है।

गर्म मसाले तथा उनके अर्क

ऐसे अर्क, गर्म मसाले (काली मिर्च, इलायची, जावित्री, तेजपात, लौंग आदि) व कुछ अन्य वस्तुओं की वाष्पीकरण क्रिया मन्द मद्यसार की सहायता से या सिरके की सहायता से तैयार कर निचोड़ कर निकाले जाते हैं। वेनिला सेम का संदलन कर मद्यसार मे भिगोने से सुगन्ध उसमे विलेय हो जाती है। इसको छानकर काम में लिया जाता है। इस तरह की सुगन्ध खाद्यो को सुगन्धित करने के काम मे ली जाती है। लेकिन अलग-अलग वस्तु के लिए

अलग-अलग सुगन्ध होती है। जैसे गुलाब के शर्बत मे आने वाला गुलाब का अर्क, केश तेल मे घुलनशील नहीं होगा। इस प्रकार गर्म मसालो को सिरके मे मिलाकर मन्द ऊष्मोपचार करने से उसका अर्क निकाला जा सकता है जो भविष्य मे भिन्न-भिन्न आहार मे इच्छानुसार मिलाया जा सकता है। (आगे इस अध्याय मे ही चर्चा की गई है।)

संजीवनी कदली गंध

पूर्ण विकसित पके हुये केले को, छिलके निकालकर एक खाली बोतल मे साबुत रखा जाये तथा उसमे रैक्टिफाइड स्पिरिट (Rectified Spirit) भर दिया जाये, लेकिन ध्यान रखें कि बोतल के ऊपर कुछ स्थान अवश्य खाली रहे, इसके बाद बोतल को सील बन्द कर 8 दिन तक रख दें तो आप देखेंगे कि केला ज्यो का त्यो है, लेकिन बोतल के शीर्ष स्थान पर केले का अर्क (आसव) तैरता हुआ दिखाई देगा। इस तेल को अलग करने के लिए ऐसा कीप काम मे लिया जाता है जिसको सेपरेटिंग फनल (Separating Funnel) कहते हैं। इसको आयुर्वेद मे सजीवनी कदली गन्ध कहते हैं। ठण्डाई, फलपेय या शर्बत, दूध आदि मे इसकी एक बूँद डालने पर पके केले के समान सुगन्ध, स्वाद तथा गुण प्राप्त होगे। बोतल के अन्दर रैक्टिफाइड स्पिरिट मे से निकाले गये केले को फेंक दिया जाये, जो खाने के योग्य नही है।

कृत्रिम सुगन्धित द्रव्य

उपर्युक्त सुगन्ध आसवो के अलावा कुछ ऐल्डिहाइड तथा इस्टेज एक निश्चित अनुपात मे मिलाया जावे तो कृत्रिम सुगन्ध प्राप्त होगी। सुगन्ध जिस वर्ग की प्रतीत होती है उसको उसी का नाम दिया जाता है। प्रोक्टर तथा प्रिस्काट ने अधोलिखित कृत्रिम सुगन्ध बनाने का तरीका बताया है जो फल रस रहित पेयो में मिलाया जाता है।

सारणी संख्या 20

(अ) कदली सुगन्ध (कृत्रिम) (Banana Flavour)

क्रम	रासायनिक पदार्थ का नाम	प्रतिशत
1	बेन्ज़िल ऐसिटेट (Benzyl Acetate)	10
2	,, प्रोपियोनेट (,, Propoinate)	10
3	इथाइल बुट्रेड (Ethyl butyrate)	5
4.	अमाइल ,, (Amyl ,,)	10
5	अमाइल एसिटेट (Amyl Acetate)	5
6	स्वीट ऑरेन्ज ऑइल (Sweet Orange oil)	3

(आ) स्ट्रावेरी सुगन्ध (Strawberry Flavour)

1	2	
1	बनज़ाइल एसिटेट (Benzle Acetate)	10
2	अमाइल ,, (Amyl Acetate)	10
3.	,, बुटिरेट (Amyl butyrate)	10
4.	इथाइल ,, (Ethyl ,,)	20
5	इथाइल असिमेट (,, Acetate)	5
6.	मिथाइल सालिसिलेट (Methyl Salicylate)	1
7.	इथाइल सिन्नामेट (Ethyl cinnmate)	1

सारणी संख्या 21

कुछ बुनियादी सुगन्धों की रचना (Basic Flavour Composition)

क्रम संख्या	रासायनिक पदार्थ का नाम	चेरि (Cherry)	रसभरी (Raspberry)	स्ट्राबरी (Strawberry)	अंगूर (Grape)	आड़ू (Peach)	अनन्नास (Pineapple)
1	2	3	4	5	6	7	8
1.	इथइल एसिटेट (Ethyl acetate)	58	55	30	40	25	5
2.	आइसोअमाइल ब्युटाईरेट (Iso amyl butyrate)	—	11	20	—	—	20
3.	इथाइल फॉरमेट (Ethyl formate)	20	5	—	10	20	—
4.	इथाइल ब्युटाइरेट („ butyrate)	10	11	37	—	30	70
5.	इथाइन ओइननथेट („ oenanthate)	2	5	—	30	5	—
6.	इसो अमाइल एसिटेट (Iso amyl acetate)	—	11	10	—	15	—
7.	बेन्जोल्डिहाइड (Benzoldehyde)	10	—	—	—	—	—
8.	आयोनोन (Iononen)	—	2	—	—	—	—
9.	इथाइल मिथाइल फिनाइल ग्लाईसिडेट (Ethyl mythyl phenyl glycidate)	—	—	3	—	—	—

10.	मिथाइल अन्थ्रानिलेट (Mythyl anthranilate)	—	—	—	20	—	—
11.	अन्डिकोलएक्टोन (Undecol actone)	—	—	—	—	5	—
12.	अलाइल कुप्रोऐट (Allyl coproate)	—	—	—	—	—	5
		100	100	100	100	100	100
	कुछ स्वास्थ्य (Total Toner)	टोलिल-ऐल्डिहाइड	बनजइल ऐसिटेट	इथाइल ऐसो-वालरैट	इथाइल-केपोरेट	बैन्जोल्डि-हाईड	इथाइल हप्टोयेट
	उदासीकारक रसायन (Neutralizer)	चेरी बार्क एक्स्ट्राक्ड	जासमिन आयल	ओरिस आॅयल	ग्रेप वाइन	ओरेन्ज आयल	सेड जोन्स् [illegible] एक्स्ट्राक्ड ओरन्ज आयल
	अवशेष (Traces)	वैनेलिन	पलाटोन	वैनेलिन	मिथाइल सैलिसिलेट	वैनेलिन	
	अम्ल (Acids)	ऐसिटिक	ऐसिटिक	ब्यूट्रिक	ऐसिटिक	ऐसिटिक	ब्यूट्रिक

उपर्युक्त सारणी संख्या 21 मे जो कृत्रिम सुगन्ध बनाने की विधियाँ बताई हैं वह जानोवास्की (1959) ने प्रस्तुत की हैं।

रासायनिक पदार्थ जो बुटिरेट हैं, वे अनन्नास की सुगन्ध वाले होते हैं। ये पुराने मक्खन या इथाइल ऐल्काहॉल से बनाये जाते हैं। इनमें भी गन्दगी पाई जा सकती है।

लेकिन यह ध्यान रखना चाहिये कि प्रायः सभी कृत्रिम सुगन्ध न्यून आपेक्षिक घनत्व (Low specific gravity) वाले होते हैं। इसलिए जल में सम्पूर्ण विलेय नहीं हो पाते तथा पेय पदार्थ में वे अलग-अलग हो सकते हैं। इसलिये पायसीकरण (Emulsification) एकरूपनीकरण (Homogenization) आदि के पहले सुगन्धित तेलों को अधिकाधिक आपेक्षित घनत्व वाले, ब्रोमिनीकृत वनस्पति तेल मे मिश्रण कर काम मे लेते हैं किन्तु उसका आपेक्षिक घनत्व पेयों के तुल्य हो जाये। इन कठिनाइयों के कारण ही इन्हें फल-पेयों में नही मिलाया जाता। लेकिन प्राकृतिक सुगन्ध फल-पेयों मे तथा कृत्रिम सुगन्ध फल-रस रहित पेयों मे मिलाये जाते हैं।

मसाले तथा गर्म मसाले

मसाले तथा गर्म मसाले सुगन्धित तथा एक विशेष स्वाद वाले वनस्पति उत्पाद है। यह पदार्थ मिलाने से आहार तथा कुछ पेयो मे एक विशेष सुगन्ध, स्वाद, रग आदि पैदा हो जाते हैं। *लेकिन इनमे पोषक गुण नही के बराबर हैं। गर्म मसालो मे खास तौर से औषधि* गुण पाये जाते है। कुछ तो पाचन शक्ति बढाते है, कुछ शरीर के ताप को बढाते हैं, कुछ नेत्र ज्योति बढाते हैं। ये हैं जावित्री, काली मिर्च, इलायची, अदरक, लौग, कुमकुम, तेजपात बडी इलायची, दाल चीनी आदि। आज कल कुछ अपराधी लोग खराब हुये खाद्यो मे गर्म मसाले मिलाकर सुगन्धित कर उनको बेचते हैं। इस प्रकार की प्रवृत्ति दण्डनीय है।

कुछ प्रचलित मसाले जो भारत मे काम मे लिए जाते हैं, वे हैं—लाल मिर्च, धनिया, हल्दी, दानामेथी, राई, जीरा, लहसुन, प्याज आदि।

उपर्युक्त मसाले तथा गर्म मसाले कैचप, सॉस, चटनी (Ketchup, Sauce, Chutney) आदि फल तथा तरकारी उत्पाद बनाने के काम मे आते हैं। सन् 1953 मे महस्त्र बुद्धे तथा भाटिया ने प्रतिवेदन दिया कि लाल मिर्च, हल्दी, राई, अदरक या सोंठ, जावित्री, लौंग तथा काली मिर्च आदि मे "एन्टी ऑक्सीजनिक" (Anti Oxygenic) प्रभाव है। यह प्रभाव उस समय देखा गया जब उनका अधिक मात्रा मे खाद्य पदार्थों मे प्रयोग किया था उन्हे कम उपचार किया गया था।

कुछ अन्य संयोजियाँ

ऐस्कॉर्बिक अम्ल तो विशेष रूप से हिमीकृत उत्पादन व्यवसाय मे बड़े पैमाने पर प्रयोग किया जाता है, क्योंकि यह उत्पादो मे अवर्णीकरण तथा दुर्गन्ध आदि नही होने देता। पूर्व हिमीकरण क्रियाओ मे सल्फर डाईऑक्साइड का प्रयोग कम मात्रा में किया जाता है तथा वह सल्फाइट के रूप मे होते हैं। यह मात्रा उपयोगी सिद्ध हुई है। सूखे फल तथा तरकारियों मे सल्फर डाईऑक्साइड तथा सल्फाइड के प्रयोग से उत्पादों का वर्ण तथा पोषकता गुण काफी मात्रा मे धारित रखा जा सकता है। फल रसो मे होने वाली अवर्णीकरण तथा सुगन्ध को ऐस्कॉर्बिक अम्ल तथा उसके समावयवो ("Isomers") के प्रयोग से समाप्त हुआ देखा गया। साइट्रिक अम्ल स्वाभाविक वर्णों को, उत्पादो मे स्थायी बनाये रखने में

मदद करता है। केनीकृत उत्पादो में होने वाली बभ्रूकरण (Browning) को भी ऐस्कॉर्बिक अम्ल तथा समावयव रोकते है तथा चिपड (चिप्स), काष्टफल आदि मे होने वाली विकृत गन्धी (Rancidity) को सन्तोपजनक ढग से रोका जा सकता है। साथ ही उसकी स्थिरता को फिनोलिक तथा दूसरी ऑक्सीकरण विरोधियो से उसको और भी योग्य बनाया जा सकता है। याद रखें कि ऐस्कॉर्बिक अम्ल सयोजी के रूप मे हिमीकृत उत्पादो के निर्माण में काम मे लेते हैं लेकिन परिभाषा के अनुसार यह संयोजी नही है क्योंकि यह पदर्थ के विटामिन की वृद्धि करती है।

पेक्टिन, अगर-अगर (Pectin, Agar-Agar), थायोयूरिया (Thiourea), साइट्रिक अम्ल, प्रोफिलगलाबिल (Propylgallab), टोकोफिरोल (Tocopherol) आदि कई रासायनिक तथा अरासायनिक पदार्थ का समय-समय पर प्राप्त प्रौद्योगिक उपलब्धियों के फलस्वरूप प्रौद्योगिज्ञों तथा वैज्ञानिको द्वारा प्रयोग करते है, जिसका वर्णन भिन्न-भिन्न पदार्थ के परिरक्षण तथा संसाधन प्रक्रियाओं के अवसर पर किया जावेगा।

सन् 1956 मे दास, जैन तथा गिरधारीलाल ने कुछ संयोजियो का प्रयोग कर बताया कि फल तथा तरकारियों को हिमीकरण (Freezing), केनीकरण (Canning) तथा निर्जलीकरण (Dehydration) आदि ससाधन क्रियाओं के लिए तैयार करते समय (छिलका उतारना, टुकड़े करना) उन पर ऑक्सीकरण होता है। फलस्वरूप फल तरकारियों का वर्ण (कटे हुये भाग पर) बदल जाता है जिसको रोकने के लिए थयोयुरिया, ऐस्कॉर्बिक अम्ल, सल्फर तथा साइट्रिक अम्ल आदि का प्रयोग कर, रोका जा सकता है। उन्होने आगे बताया कि थयोयुरिया, सीट्रिक अम्ल, सल्फर डाईऑक्साइड आदि विटामिन सी को उत्पादो में धारित रखने की शक्ति प्रदान करती है।

☐☐☐

अध्याय 6

वाहिका
(Container)

परिरक्षण किये हुए आहार को सुरक्षित रखने के लिए कई प्रकार की वाहिकाएँ प्रचलित हैं, जैसे चीनी मिट्टी की बरनी (Porcelain), कांच की बरनी (Glass Container), टिन के बने कैन या डिब्बे (Tin Cans), प्लास्टिक (Plastic), एलुमिनियम (Aluminium) आदि के अलावा प्लास्टिक, एलुमिनियम आदि से बनी कई प्रकार की नम्य वाहिकायें (Flexible Container) भी प्रचुर मात्रा मे काम मे ली जाने लगी हैं। आजकल पोलिथिलीन या पोलिथिन (मोमजामा) कागज को भी वाहिकाओं के रूप मे प्रयोग किया जाने लगा है जो नम्य वाहिकाओ मे आती है। घी, मक्खन आदि ही नहीं बल्कि डेयरी से दूध भी पोलिथिन कागजों मे भरकर वितरण के लिए आता है।

वाहिकाओं का विकास (Development of Containers)

आदिकाल से ही भारत मे मक्खन, घी, आचार, शर्करा, तेल, गुड़ इत्यादि चीनी मिट्टी की बनी बरनियों मे रखे जाते रहे हैं। घरो मे सूखे फल-मेवे आदि रखने के लिए ये उपयुक्त तो हैं, लेकिन व्यावसायिक युग मे इन्हे उचित नही माना जाता, क्योंकि इनमे रखे हुए आहार के जल्दी खराब होने का भय रहता है

ऐपार्ट ने कैनीकरण परिरक्षण क्रिया कांच की बरनी मे ही चलायी थी। लेकिन आगे चलकर टिन मे भी कैनीकरण होने लगा। पिछले 100 वर्षों से टिनो मे कैनीकरण आरम्भ हुआ, फिर भी घरेलू स्तर पर कैनीकरण अब भी सारे देश-विदेश में कांच की बरनियों मे ही हो रहा है। कांच, टिन (डिब्बा) से अच्छा है, क्योंकि यह बार-बार काम में लिया जा सकता है और सीलबन्द करने के लिए यन्त्रो की आवश्यकता भी नही होती। फिर भी व्यावसायिक क्षेत्र मे यह उतना उपयुक्त नही हो सकता, क्योंकि टिनो से यह भारी होता है। परिवहन खर्च अधिक होता है, इसके अलावा मसाधन क्रिया के समय तथा परिवहन के वक्त टूटने की सम्भावना अधिक रहती है। बढते हुए तकनीकी ज्ञान की सहायता मे आज किसी भी वर्ग के आहार को टिन-कैनो मे भरकर रखा जा सकता है, तथा कोई विकृति भी उसमें नहीं होती है।

प्रारम्भ काल में यह देखा गया है कि इस्पात चद्दरो मे टिनीकरण या रांगा लेपन (Tinning) मे टिन-कैन बनाया गया तथा उन डिब्बों मे कैनीकरण किया गया तो परिरक्षण सम्भव हुआ, लेकिन जब गोदामों मे रखा गया तो आगे चलकर वर्णभेद हुआ देखा गया। इसी प्रकार की खराबी कांच की बरनियो मे कैनीकरण किये हुए पदार्थों मे भी पाई गई थी, क्योंकि कांच में सूर्य-प्रकाश का प्रवेश होता है। इससे पाया गया कि खाद्य मे

वर्णभेद हो जाता है। इसके लिए आजकल इस्पात चद्दरों में इलक्ट्रोप्लेटिंग (Electroplating), लॉकीकरण (Lacquering) कर उपर्युक्त कमी दूर की जा सकती है। इसी प्रकार काच में टिनीकरण कर प्रकाश के प्रवेश को रोका जा सकता है। अंग्रेजी में इस्पात चद्दरों तथा रांगों को टिन कहा जाता है। इसलिए इन सभी वाहिकाओं को जिसमे रांगा-लेपन किया हुआ हो तथा इस्पात नहीं हो, उन्हे भी इस्पात रहित टिन-वाहिका (Tin-Container) कहा जाता है।

काच वाहिकाएँ

संयोजक (Composition)

एक या अधिक सिलिकोन (Silicon), बोरोन (Boron), फोसफोरस (Phosphorous), सोडियम (Sodium), मैगनीशियम (Magnesium), कैलसियम (Calcium), पोटेशियम (Potassium), आदि पदार्थों की ऑक्साइडों (Oxides) को मिलाकर ऊष्मीकरण करें तो वे पिघल जाते हैं। इस प्रकार पिघले हुए द्रव्य को उचित आकार तथा साइज के सांचो मे डालकर ठण्डा कर काच बनाया जाता है।

कांच के यथार्थ गुण (Real Quality of Glass)

काच अक्रिस्टलीय यानी रवाहीन (Amorphous) पारदर्शक (Transparent) या पारभाषी (Translucent) होता है।

कांच का इतिहास (History of Glass)

ईसा के 1600 वर्ष पहले ही काच का ज्ञान मानव समाज को प्राप्त था। काच अपने स्वाभाविक रूप मे प्रकृति से प्राप्त नही होता। बालू मिट्टी, समुद्री शैवालों (See Weedes) राख, दोनो को मिलाकर पिण्ड बनाया जाता है, इन पिण्डो के ऊपर चिकनी मिट्टी का लेपन कर उसको भट्टी मे पकाया जाता है। पके हुए को तोड़ा जाए तो काच प्राप्त होता है। इस काच को पुनः ऊष्मीकरण कर कांच का सामान बनाया जाता था। पुराने समय मे भी रोम के लोग काच वाहिकाओ को मुंह से फूंककर बनाते थे। आज भी प्रयोगशालाओं में काच की छोटी-मोटी चीजें उपर्युक्त विधि से ही बनायी जाती हैं। द्रवित काच को काष्ठ, लोहा आदि से बने सांचों मे डालकर बनाने की प्रथा भी चलती थी। सन् 1880 में इस कार्य के लिए एक यन्त्र का आविष्कार हुआ, जिसके फलस्वरूप काच बनाने की प्रक्रिया में आश्चर्यजनक परिवर्तन तथा उन्नति हुई।

खाद्य परिरक्षण योग्य कांच की विशिष्टतायें

काच की वाहिका किस काम मे ली जाती है, उसको दृष्टिगत रखते हुए कांच वाहिकाओ के कच्चे माल तथा उसके निर्माण की तकनीकी विशेषताओ के प्रयोग मे भी कुछ परिवर्तन लाया गया। खाद्य-पदार्थ का जिन कांच वाहिकाओ मे रखकर संसाधन किया जाता है, उन्हें ऊष्मसह तथा कठोर कांच का होना अत्यावश्यक है। इस प्रकार की वाहिकाएँ सोडियम, कैलशियम, मैगनीशियम आदि के सिलिकेट द्वारा बनाया जाता है।

फल तथा तरकारी परिरक्षण के लिए बनायी जाने वाली कांच-वाहिकाएँ 75 प्रतिशत सिलिकोन ऑक्साइड (SiO_2), 18 प्रतिशत सोडियम ऑक्साइड (NaO), 7 प्रतिशत कैल्सियम ऑक्साइड (CaO) तथा 1 प्रतिशत मैगनीशियम ऑक्साइड (MgO) से बनाया

जाता है। इसके अलावा फेरस ऑक्साइड (Fe_2O_3), मैगनीज ऑक्साइड (M_nO_2) भी अल्प मात्रा में मिलाये जाते हैं।

आधुनिक कांच निर्माण

उपर्युक्त कच्चे मालो को आवश्यकतानुसार उचित अनुपात मे तोल कर उसी अनुपात पर काच का टुकड़ा मिलाकर एक मिश्रण बनाया जाता है। इन्हे गहरी भट्टी (फरनेस) मे डालकर ऊष्मोपचार किया जाता है। इस मिश्रण का द्रवणांक (Melting Point) 2600° एफ (1427° सी०) होता है। इस ताप पर यह द्रव बन जाते हैं, लेकिन टूटे हुए काच के टुकड़े उपर्युक्त तापमान से पहले ही पिघल जायेंगे तथा इस क्रिया से कच्चे माल को पिघलाने में मदद भी करेगा। इसी प्रकार पिघले हुए काच का उस मात्रा तक शीतलीकरण करते हैं कि वह वांछित विस्कासिता यानी लसीलापन (Viscosity) ला सके। यन्त्रो की सहायता से पिघले हुए कांच को यन्त्रो द्वारा ही सांचो मे भरकर काच की वाहिकाये बनायी जाती हैं जैसे अन्य काच की वस्तुएँ भी बनायी जाती हैं। आज भारत मे 2,50,000 टन से अधिक काच वाहिकायें बनायी जाती हैं।

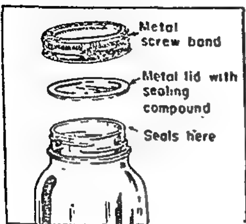
साधारण कठोर (Hard for Flint) काच को वर्णहीन बनाने के लिए कोबाल्ट (Cobalt) या सैलेनियम ऑक्साइड्स (Selenium Oxides) मिश्रण मे मिलाये जाते हैं। हरे काच की वाहिका या वस्तुओ को बनाने के लिए लोहा (Iron) या आर्सेनिक ऑक्साइड्स (Arsenic Oxides) मिलाये जाते है। इसी प्रकार हरे मरकत कांच की वस्तुओ के लिए क्रोमियम (Chromium) लवण, कहरूवा वर्ण के काचो के लिए कारबन या गन्धक अथवा लोहा तथा मैगनीज ऑक्साइड तथा दूधिया काचो के लिए फ्लूराइड (Fluoried) या अलुमिना (Alumina) मिलाये जाते हैं।

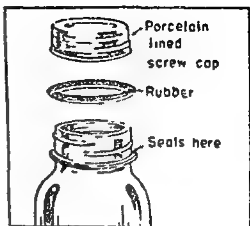
इस प्रकार बनायी गई काच-वाहिकाओ के उचित ढक्कन भी जरूरी हैं। साधारणतया काच-वाहिकाओं को काच से बने ढक्कन से ही बन्द किया जाता है, खासतौर से ऊष्मसंसाधन तथा कैनीकरण में काम मे आने वाली वाहिकाओ को। उपर्युक्त वाहिकाओं को वायुरुद्ध कराने के लिए, ढक्कन लगाना आवश्यक है। इसको स्थायी रूप से सम्भव कराने के लिए रबर-वलय (Rubber-Ring) पेचवाली टिन की बनी ढक्कन जिसके अन्दर ऊपर की सतह पर लगने वाली एक काच की टोपी आदि भी होती है, काम में लायी जाती है जिसकी वजह से वायु-रोधन शत-प्रतिशत सम्भव होता है। इस प्रकार की कांच की वाहिकाओं को किलनर्स जार (Killner's jars) या किलनर की बरनी कहते हैं। (चित्र सं०–6)

विविध ढक्कन

टिन, एलुमिनियम, सेलीलॉइड, कार्क, मोम आदि के ढक्कन आजकल काम मे लाये जाने लगे हैं। काच वाहिकाओं को एकाकी ढक्कनो से बन्द करते हैं तो उसका भीतरी मुंह तथा ढक्कनों के बाहरी मुंह भाग पारभासी किया हुआ होता हैं, ताकि दोनों परस्पर बन्द होकर वायुरुद्ध कर सकें। यन्त्रों की सहायता से ही यह क्रियान्वित किया जाता है। टिन, एलुमिनियम आदि चद्दरों से बनाये गये पेच वाले ढक्कनो के भीतर रबर-वलय या रबड़ लेपन, कार्क से बनी चद्दर के टुकड़े या मोमलेपित मोटा कागज आदि उसी के आकार का काटकर लगाया जाता है ताकि नमी रोधक तथा वायुरोधक रहे. साथ ही आहार पदार्थ ढक्कनों के सम्पर्क मे न आ सके। लेकिन सेल्युलाइड ढक्कनों में यह केवल नमी—वायुरोधक का काम

करता है । साधारण सेल्लुलाइड ढक्कन उष्मा-प्रयोग से टूट सकता है, लेकिन आजकल ऊष्मासक सेल्लुलाइड भी प्राप्त होने लगे हैं ।





चित्र संख्या–6 (किलनर्स जार)

कुछ अन्य ढक्कनें

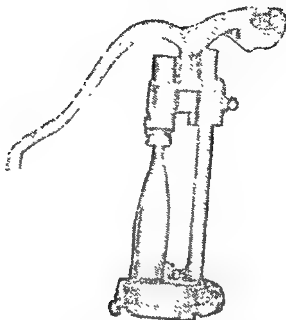
विविध फल-पेय, कैचप, सॉस, चटनी, आचार आदि जो घरों मे भी बनाये जाते हैं उन्हें आमतौर पर काच की बोतलो मे भरकर कार्क लगाया जाता है तथा ऊपर से मोम या लाख को गर्म कर उस द्रव में वाहिकाओं के ढक्कन लगे हुए भाग को डुबोकर सील बन्द किया जाता है । इस प्रकार इसे वायुरोधक बनाया जा सकता है । शोभा तथा सुरक्षा के लिए विविध वर्णों के कागजो को बोतल के मुंह पर लपेटा जा सकता है ।

क्राउन कॉर्क (Crown Cork)

औद्योगिक क्षेत्र मे उपयुंक्त खाद्यों को बोतल में भरते ही तुरन्त बाद क्राउन कॉर्क से समुंद्रित (Hermetic Sealing) किया जाता है । यह टिन से बनाये हुए होते है तथा कॉर्क से बनी चद्दरों या मोमलेपित कागजों के ढक्कन के भीतरी सतह पर लगाये हुए होते हैं । यह लघु यन्त्र के सहारे मनुष्य स्वयं या स्वचालित यन्त्र की सहायता से समुंद्रित किया जाता है । यह प्रायः देखा गया है कि इस तरह के ढक्कन बोतल टूटने पर भी नहीं खुलते। ढक्कन लगाने के यन्त्रो को क्राउन कॉर्किंग मशीन (Crown Corking Machine) कहा जाता है । जो चित्र संख्या–7 मे बताया गया है ।

औद्योगिक क्षेत्र में भरी हुई बोतलें स्वयं यन्त्रों की सहायता से क्रमानुसार वाष्प-कोष्ट (Steam Chamber) में प्रवेश करती हैं, जहाँ एक क्षण में बोतलों के मुंह पर एक-दम भाप की बौछार होती है, इस प्रकार मुंह के निर्जर्मीकरण के तुरन्त बाद बोतलें दूसरे कक्ष मे प्रवेश करती हैं, जहाँ यन्त्रो द्वारा क्राउनकॉर्क लेकर बोतलों को एक-एक कर सील बन्द किया जाता है । वहाँ से बोतलें शीतलीकरण के लिए चली जाती हैं । फलस्व शीर्ष-स्थान में प्रविष्ट भाप, जल बन कर आहार मे मिल जाता है तथा रिक्त (Vacuum) वहाँ पैदा हो जाता है जिसका दबाव करीब 2 इन्च से 28। "–28

Pressure) हो सकता है। यह छोड़े गये शीर्षस्थान के अनुपात मे बढ़ता या घटता रहता है।



चित्र संख्या–7 (क्राउन कॉर्किंग मशीन)

मिलावट तथा धोखाधड़ी से बचने के लिए कारखाने वाले सील-बन्द बोतलों के ऊपर एक सील और लगा देते हैं, इस प्रकार के ढक्कनो को पिलफर प्रूफ (Pilfer Proof Cap seal) या उठाई-गिरी रोधक ढक्कन तथा उसमे काम आने वाले यन्त्र को पिलफर-प्रूफ कैपसीलर (Pilfer Proof Capsealer) कहा जाता है।

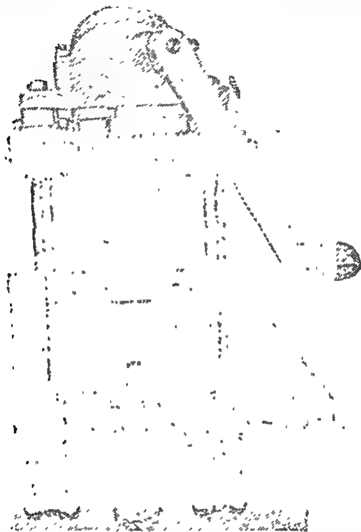
उपर्युक्त सारे ढक्कनो के ऊपर वर्ण शोभित पर्णिका या पन्नी (Foil) लगायी जाती है, जो बोतलों की करीब गर्दनो तक पहुच जाये। इसका भी उद्देश्य उठाई-गिरी तथा मिलावट से उत्पादों तथा ग्राहको को बचाना ही है। यह पर्णिकाएँ भी एलुमिनियम, टिन आदि की बहुत महीन पतली चद्दरों से बनाई हुई होती हैं।

टिन वाहिकायें (Tin Containers)

कलई (रांगा चढाना) किये हुए बर्तन भारत भर मे आदिकाल से काम में लिए जाते आ रहे हैं, लेकिन यह काम कब से भारत में शुरू हुआ, यह कहना कठिन है। कुछ अमरीकी लेखकों के अनुसार 12वी शताब्दी से आरम्भ हुआ ज्ञात होता है, मगर भारत मे विशेषतया केरल मे पुरातनकाल से, मुह देखने के काच के आविष्कार से पहले ही, पीतल के दर्पण (आईने) बनाये जाते थे। इससे यह पता चलता है कि पीतल तथा कलई दर्पण बनाना बहुत पहले से ही लोग जानते थे। इससे हम भली-भांति कह सकते हैं कि कलई का काम 12वी शताब्दी से पहले हमारे पूर्वजो को ज्ञात था।

इस्पात की चद्दरो मे इसी प्रकार रांगा चढ़ाकर कैन बनाकर, आहार का परिरक्षण करने का ज्ञान तो पश्चिम की ही देन है। इसका आविष्कार करीब सन् 1250 में हुआ

था। इसके पहले काली इस्पात की चद्दरों से बने काले डिब्बे केवल कील आदि रखने के लिए काम में आते थे। मगर 16 वीं शताब्दी तक इस्पात की चद्दरों पर कलई चढ़ाने का



चित्र संख्या 8 (कैन सीलर–घरेलू स्तर के)

तकनीकी ज्ञान गोपनीय रखा गया था। सन् 1730 में ब्रिटेन में सबसे पहले इस्पात चद्दरों में रांगा चढ़ाने का एक कारखाना खोला गया। इसके करीब 142 वर्ष बाद अमेरिका में तथा उसके बाद अन्य पश्चिमी देशों में रांगा चढ़ाने का कार्य प्रारम्भ किया गया।

प्रारम्भ में लोहे के सरियों (Iron Rods) को पीट-पीट कर चद्दर बनाया करते थे। इसमें पाये जाने वाली आइरन ऑक्साइड्स या जिंक (Iron Oxides or Rust) का अम्लोपचार कर, बाद में कुचर-कुचर कर साफ किया जाता था। अम्ल तो किण्वन क्रिया से बनाया जाता था। इसी कारण इस अम्लोपचार क्रिया को "लोहे का अचार डालना" (Iron Pickling) कहा जाता था।

साफ की हुई लोहा-चद्दरों को पिघले हुए रांगा-द्रव्य मे डाला जाता था, इसी प्रकार रांगा चढ़ाने के लिए तीन टंकियाँ काम में ली जाती थीं। प्रथम टंकी को भिगोने की टंकी (Soaking Tank) कहते हैं। इस टंकी मे करीब एक घण्टा चद्दर पड़ी रहती थी। इसके बाद धोने की टंकी में डालते थे जहाँ रांगा समान रूप से चद्दरों पर चढ़ जाता था। इसी प्रकार कलई लगी चद्दरो की सीमाओं मे रांगा बूंद-बूंद बनकर या लकीरों के समान जम जाता था। इन्हें दूर करने के लिए तीसरी टंकी मे डुबोते थे। इस प्रकार की हुई कलई की मोटाई 0.00154 मिली मीटर होती थी। उपर्युक्त विधि से बनाई गई चद्दरों मे कलई एक समान चढ़ना जरूरी नही, क्योकि इस विधि मे विशेष कार्य-कुशलता की आवश्यकता होती थी तथा उसमे थोडी सी भूल से समान रूप से कलई चढ़ नहीं पाती। लेकिन सामान्य नेत्रों से इसकी कमी नजर नही आती है। कलई चढाई हुई एक चद्दर का टुकडा काटकर लिया जाय व उसे सूक्ष्मदर्शी की सहायता से देखा जाय, तो यदि अपूर्ण रूप से चद्दरों में कलई चढी हुई हो तो ऐसी चद्दरों से बनी कैन मे परिरक्षण किया जाय तो आहार चंद दिनों में ही काले पड़ जाएँगे तथा वह पदार्थ विपणन योग्य नही रहेगा। लेकिन इससे न तो खाद्य खराब होते हैं और न ही सुगन्ध या गुणों मे कोई परिवर्तन आता है। किन्तु उपभोक्ता निडर होकर उसको खरीदने को तैयार नही होगे फलस्वरूप कम्पनी को नुकसान उठाना पड़ेगा। इसको रोकने के लिए रांगे चढ़े हुए चद्दरों का यथाविधि निरीक्षण कर यह विश्वास कर लेते हैं कि चद्दर पर सम्पूर्ण तथा एक समान रुप से रांगा चढा हुआ है।

उपर्युक्त विधि से बनाई गई चद्दरों को बुरादा तथा राईघास (Moss Grass) की सहायता से घिसकर शोभनीय बनाया जाता है। इसके तुरन्त बाद स्नेहलेपन (तेल लगाना) करते हैं ताकि जल तथा वायु के सीधे सम्पर्क से चद्दर खराब न हो जाय। इसी प्रकार लोहा या इस्पात की चद्दरों को तथा उससे बने कैन संक्षारण प्रतिरोधक (Corrosion Resistance) बन जाता है। उपर्युक्त सब क्रियाएँ मानव अपने हाथों से किया करता था।

कैनो के निर्माण मे काम आने वाली इस्पात की चद्दरो में बहुत कम मात्रा मे ही कार्बन मिला हुआ होना चाहिए। ऑटोमोबाइल इण्डस्ट्रीज में बेकार हुई चद्दरो को भी कैन निर्माण में काम मे लेते है। इस प्रकार की चद्दरों में ताम्र तथा अन्य धातुओं के अंश भी पाये जाते हैं। ताम्र इस्पात मे 0.15 प्रतिशत पाया जाता है। इसके अलावा कुछ विशेष इस्पात भी बनाये जाते है। उनमे मुख्य है टाइप एल प्लेट (Type L. Plate), इसमे साधारणतया 0.067 प्रतिशत कार्बन, 0.370 प्रतिशत मेगनीज, 0.032 प्रतिशत गन्धक, 0.004 प्रतिशत फासफोरस, 0.003 प्रतिशत सिलिकोन पाया जाता है। लेकिन कोक प्लेट मे 0.100 प्रतिशत कार्बन, 0.350 प्रतिशत मेंगनीज, 0.040 प्रतिशत गन्धक क्रमशः पाये जाते हैं। कुछ मुख्य अन्य चद्दरें इस प्रकार हैं :—एम० आर० प्लेट (M.R. Plates), कोल्ड-रोल्ड (Cold-Rolled), एम० सी० प्लेट (M. C. Plate) तथा एम० प्लेट (M. Plate)।

टिन कैनों का निर्माण (Manufacture of Tin Cans)

आज लोहे के सरियों को यान्त्रिक मिल्स की सहायता से पीटकर चद्दरें बनाये जाते हैं। कलई चढाने के पहले जो किण्वन किया करते थे उसके बदले मे गन्धक अम्ल (Sulphuric Acid) से चद्दरों की जंग साफ करने लगे हैं।

आज कैन निर्माण लुहारों का काम नहीं रहा, बल्कि मानव की बुद्धि, तकनीक तथा यन्त्रों का काम बन गया है। पहले-पहल शीर्ष ढक्कन आधा खुला हुआ (Top half Open) कैन बनाते थे तथा उसमें रिक्त स्थान बनाने योग्य एक छोटा छेद भी बनाया हुआ होता था। इस प्रकार के कैनों में कई प्रकार की असुविधाएँ कैनीकरण के समय होती थीं। इसलिए इसको छोड़कर शीर्ष स्थान खुला हुआ (Top Open) कैन बनाने लगे। शुरू में कैनों को धातुलेपन से जोड़ा जाता था।

शीर्ष खुला कैन (Top Open Cans)

शीर्ष खुला-कैन के उदय के साथ खाद्य परिरक्षण व्यवसाय में काफी उन्नति होने लगी, क्योंकि यह पहले प्रचलित शीर्ष ढक्कन आधे खुले हुए कैनों से कैनीकरण के लिए अधिक सुविधाजनक पाये गये जिससे आहारों को बिना टूटे-फूटे ही कैन में भरा जा सकता है। अधातु लेपन के कारण जुड़े हुए भाग, अधिक ऊष्मा से कैनों के जोड़ अलग नहीं होते हैं। इसके अलावा कैनों में आहार पदार्थ भरकर समुद्रित कर संसाधन किया जाता है, तब उसमें रिक्त स्थान उत्पन्न हो जाता है, जिससे करीब 35 पौण्ड दबाव पड़ता है। इस तरह की कैन रिक्तावस्था (Vacuum) तथा दबाव (Pressure) को रोकने की प्रतिरोध शक्ति वाले होते हैं।

कैन के काया-शीर्ष तथा अधो-ढक्कनों को इस प्रकार समुद्रित (Hermeticaly Seald) किया जाता है, ताकि कैन के भीतर भरा हुआ आहार, वायु, नमी आदि का प्रवेश या सम्पर्क उसमें न हो सके। यह सारी क्रिया यन्त्रों द्वारा की जाती है। इसके अतिरिक्त भरना (Filling), निर्वातीकरण (Exhausting), संस्तरीकरण (Seaming), संसाधन (Processing), लेबनीकरण (Labelling) आदि क्रियाओं के लिए शीघ्रता तथा आसानी होती है।

आधुनिक कैन निर्माण (Modern Can Manufacture)

एक कैन के तीन भाग होते हैं। एक काया (Body), दूसरा शीर्ष ढक्कन (Top-End or lid) तीसरा अधो-ढक्कन (Low end or lid)।

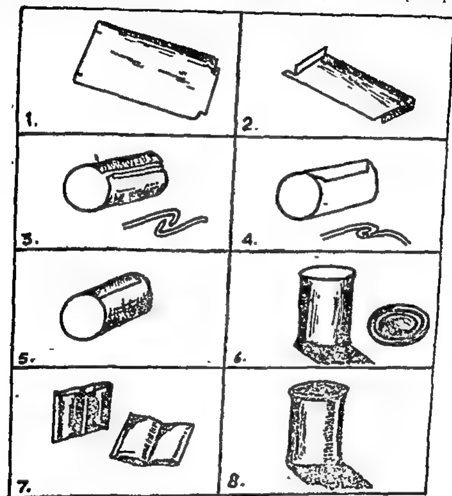
1. काया निर्माण

कैन के आकार तथा परिमाण, परिधि, चौड़ाई आदि के आधार पर गैंग स्लीटर (Gang Slitter) यन्त्र की सहायता से कलाईकृत टिन को कतर दिया जाता है। कतरे हुए टिन टुकड़ों के चारों पार्श्वों को यन्त्र द्वारा खाँच (Notching) डालते हैं, इसलिए दोनों भागों को जोड़ पाते हैं। इसी कारण दोनों ढक्कनों को काया से द्वि-संस्तरीकरण (Double Seaming) के पश्चात् रिसाव (Leak) नहीं होता है।

2. संस्तरावरोध (Lock Seaming)

संस्तरीकरण यन्त्र (लॉक्सीमिंग मशीन) के कोरसूत्र (Edging Device) में जब कतरे हुए काया (चद्दर) भेज दिये जाते हैं तो वहाँ कोर पर अंकुश बन जाते हैं। एक अंकुश जिस तरफ मुड़े हुए हैं, उसके विपरीत दूसरे अंकुश को मोड़ लेते हैं, जिससे अंकुश (Hooks) परस्पर जुड़ पाते हैं। जुड़े हुए अंकुशों के स्थान को यान्त्रिक हथौड़े से समतल कर दिया जाता है। इसी प्रकार संस्तरीकरण किये हुए स्थान पर धातुलेपन किया जाता है। इन्हीं कारणों रिसना, वायु प्रवेश आदि बिल्कुल रुक जाता है। आवश्यकता से

अधिक लगे हुए धातु लेपन को भी यन्त्र साफ कर देते है। कैन काया के शीर्ष तथा अधो-भाग, यन्त्र द्वारा थोड़ा सा मोड़ लेते हैं। अब स्क्रोलसियर (Scroll Shears) नाम के यन्त्र कैन के शीर्ष तथा अधो-ढक्कनों को वृत्ताकार में कतर लेते हैं जो काया के मुंह के आकार से थोड़ा बड़ा होता है। इन ढक्कनों के वृत्ताकार ढक्कनों को छापने के यन्त्र (Stamping



चित्र संख्या-9 (शीर्ष खुला कैनों की निर्माण प्रक्रिया)

Machine) में भेज देते हैं, वहाँ मुद्रांकित (Stamping) किये जाते हैं, इसके कारण वृत्ताकार संकेन्द्रित मेड (Concentric Circular Ridges) बन जाते हैं। यह केवल सुन्दरता के लिए ही नहीं बल्कि ससाधित उत्पादों को गोदाम मे संचयन करते समय कैनो को फूलने या उमड़ने (Bulge) नही देते, अधिक जानकारी बाद के अध्याय में करेंगे। इस प्रकार वृत्ताकार सकेन्द्रित मेड़ बनाते समय व्यवसायी अपनी मोहर भी लगा सकते हैं, ताकि "लेबल" निकल भी जाय तो कारखाने का निशान रह सकेगा।

कैनों के वृत्ताकार सीमाएँ तथा वृत्ताकार संकेन्द्रित मेडों वाले ढक्कनों के किनारो को मोड़कर बेनजीन या टोलुइन (Benzene or Toluene) मे तैयार किया गया रबड़ घोल

लगाकर सुखाते हैं। यह अस्तर संयुक्त (Lining Compound) रबड़ के जलीय पायस (Water Emulsion) भी हो सकता है। कभी-कभी रबड़ या कागज के अस्तर भी लगाये जाते हैं। शीर्ष ढक्कन तथा अधो-ढक्कन दोनों संस्तरीकरण यन्त्र (Double Seamer) द्वारा किये जाते हैं। समतलीय (Horizontal) रीति मे ही कैन के काया को सस्तरीकरण यन्त्र में रखा जाता है, तुरन्त छोटे रोलर (Small Rollers) उसके चारो तरफ फेरते समय ढक्कन काया मे लग जाती है। इसके साथ-साथ दूसरी जोड़ी रोलर उस जुड़े हुए भाग को पुनः दबाव देकर खूब सांमुद्रित किया जाता है।

कारखानो मे कैन के अधो-ढक्कन ही लगाये जाते हैं। शीर्ष ढक्कन कैनीकरण शाला मे आहार भरने के बाद लगाया जाता है। पहले वाले को कारखाना बन्धन (Factory end) तथा दूसरे को कैनीकरणालय बन्धन (Cannery end) का नाम क्रमशः दिया गया है।

उपर्युक्त तरीके से बनाये गये कैनों का परीक्षण किया जाता है। एक यन्त्र में कैनों को लगा दिया जाता है, उसमे रबड़ के अस्तर लगे हुए होते हैं। इसमे कैन को फिट किया जाता है, तुरन्त कैन के भीतर यन्त्र द्वारा वायु भर देते है। अगर उसमे कोई कमी हो, भविष्य में यदि रिसने की सम्भावना हो तो वायु पहुँचते ही (कैन के भीतर) वह कैन यन्त्र से बाहर फेंक दिया जाता है। इस तरह की कमी वाले कैनो को मरम्मत के लिए वापस भेज दिया जाता है। सही सलामत कैनों को कैनीकरणालय मे पहुँचाते हैं। वहाँ साधारणतया 0·1 प्रतिशत से अधिक उपर्युक्त त्रुटि वाले (Defect) कैनो से अधिक नही पहुँचेगा। इसका ध्यान अवश्य रखा जाता है।

लैकीकरण (Lacquering)

रंगीन आहारो का, जैसे विविध सरसफल, जामुन आदि का कलईदार कैनो मे संभाधन किया तथा संचयन के बाद के अध्ययन से मालूम हुआ कि आहार के रंग मे भिन्नता आई है। इस कमी को दूर करने के लिए लैकीकरण का आविष्कार हुआ था। यह लाख तथा ऐलकोहॉल से बनी एक वारनिश (Varnish) है। कैनों मे इसका एक पतला लेप लगाने से स्वर्ण-वर्ण प्राप्त हो जाता है, फलस्वरूप लैकीकृत कैनो मे भरे रंग-बिरंगे आहार भविष्य में सुरक्षित रहेंगे साथ ही उनका रंग भी नही बिगड़ेगा।

विशेष लैकीकरण (Special Lacquering)

लैकीकरण मुख्यतया दो प्रकार के होते है—एक अम्ल रोधक (Acid Resistant) दूसरा गन्धक रोधक (Sulphur Resistant) है। सुवर्ण वाले अम्ल-रोधक होते है जिन्हें आर० इनामल (R-Enamal Cans) कैन कहा जाता है। इसमे जल विलयशील वर्ण द्रव्य (Water Soluble colour Pigments) वाले अम्लीय फलो का सुरक्षित कैनीकरण किया जा सकता है। इस वर्ग के कुछ फल इस प्रकार के भी है, रसभरी (Raspberries), स्ट्रॉबेरीज आदि सरसफलो, विविध तरह के प्लम (Plums) तथा रंगीन अंगूर इत्यादि।

जिस कैन मे गन्धक-रोधक लैकीकरण किये हुए होने हैं वे भी स्वर्ण-वर्ण के ही होते हैं, मगर इन्हें सी-इनामल कैन (C-Enamal Cans) के नाम से पुकारा जाता है।

इन्हें अम्ल रहित आहार (हरा मटर, मक्का, सेम आदि) के कैनीकरण के काम मे लाते हैं। उपर्युक्त दोनों कैन स्वर्ण-वर्ण के होते हैं लेकिन मामूली अन्तर है जो एक दो दिन के परिचय से पहचान पायेंगे।

साधारण कैनो मे (बिना लैकीकृत) उस वर्ग के फल भरके कैनीकरण किया जाता है जिसका वर्ण द्रव्य जल-विलेय नही है, बल्कि अम्ल-विलेय होता है, जैसे चकोतरा, अनन्नास आदि। ऐसे साधारण कैनो को अंग्रेजी मे "प्लेन" कैन (Plane Can) कहा जाता है।

लैकीकरण का आविष्कार (Discovery of Lacquering)

जब दूसरा विश्वयुद्ध चल रहा था तब इस्पात से बने टिन तथा टिन लगे लोहे की चद्दरों आदि की कमी हुई। इसको दूर करने के लिए यह कोशिश की गई कि काले लोहे की चद्दरों मे रांगे (टिन) के बदले मे क्या किया जाय ? वैज्ञानिकों ने अपने अनुसन्धान से यह प्रतिवेदन दिया कि लैकीकरण कर यह कमी दूर की जा सकती है।

कैन तथा परिमाण (Cans & Size)

आज विविध परिमाण, आकार तथा धारण शक्ति (Holding Capacity) के कई मानक कैन प्रचलित हैं।

ए-10 केन (A-10 Can) को 157 मिलीमीटर व्यास (Diameter), 178 मिलीमीटर ऊँचाई होती है। व्यापार पद्धति (Trade custom) के अनुसार बेलनाकार (Cylindrical अण्डाकार (Oval) या समचतुर्भुज आकार (Square) के होते है।

कलई की गई टिन वाहिकाओ के लिए करीब 2,23,000 टन रांगा (टिन) की आवश्यकता होती है। इस खपत को देखते हुए हर वस्तु टिन वाहिकाओं मे भरना असम्भव है। इसलिए उसकी जगह प्लास्टिक काम मे ली जाती है क्योंकि भारत मे प्राप्त रांगा हमारे लिए काफी नहीं है। आज भारत को जितना टिन चाहिए वह पूरा रूरकेला (उड़ीसा) स्टील निर्माण शाला से प्राप्त होता है। वहाँ विद्युत्-अपटघन (Electroplating) द्वारा ही टिन (रांगा) लेपन किया जाता है।

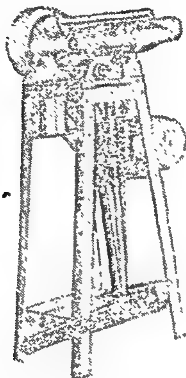
मेटलबोक्स कम्पनी तथा उसका योगदान

भारत मे आज कई कम्पनियाँ कैन निर्माण करती हैं, लेकिन उच्च कोटि के कैन तो अक्सर मेटलबॉक्स कम्पनी (इण्डिया) लिमिटेड (The Metal Box Company India Ltd.) मे ही बनाये जाते हैं। सन् 1956 तक कैनीकरण शाला के सारे यन्त्र तथा औजारो के लिए हम आयात पर निर्भर करते थे। आज हम स्वावलम्बी हो चुके हैं। इसका श्रेय मेटलबॉक्स कम्पनी को है।

"टाप ओपन कैनो" (शीर्ष ढक्कन खुली हुई कैनो) पर रंगीन छापो के काम भी बड़ी खूबी से मेटलबॉक्स कम्पनी द्वारा किये जाते हैं। जिसकी समाधन-क्रिया मे कोई हानि टिन मे की हुई प्रिन्टिंग पर नहीं पड़ती। इस तरह के टिन प्रिन्टिंग मे धोखाधड़ी होने की सम्भावना भी कम होती है। क्योंकि कैनो पर लगे लेबल परिवहन के समय नष्ट हो सकते है। इसके अलावा इसी प्रकार के लेबलो को उठाई-गिरी वाले काम मे ले सकते हैं। इसी

तरह उपभोक्ता तथा व्यापारी दोनो ही वंचित हो सकते हैं। इसको रोकने के लिए कुछ व्यवसायी कैंनो पर व्यापार अक (ट्रेड मार्क) प्रिन्ट करा देते हैं। जिसका पहले वर्णन किया जा चुका है।

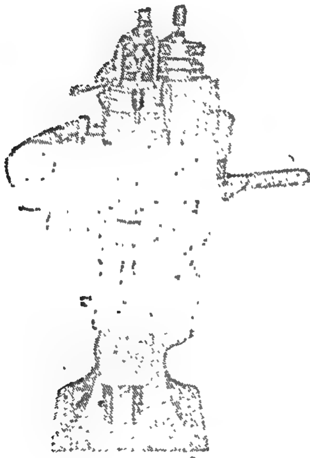
कैनो का परिवहन खर्च कम करने के लिए मेटलबॉक्स चपटे कैनों (Flattened Form of Cans) का वितरण करते हैं। चपटे केन परिवहन खर्च संचयन खर्च को भी कम



चित्र संख्या–10 (पुनः काया निर्माण यन्त्र (बोडी-रिफार्मर इस यन्त्र की सहायता से चपटी केनों को पुनः सही रूप दिया जाता है)

कराते है तथा गोदामों में जगह भी कम घेरते हैं। चपटे कैन का मतलब बिना (दोनों) ढक्कनो के कैनो (काया) को चपटा कर भेज देते है जिसको कैंनीकरण शाला में पहुँचने के बाद पुनः काया निर्माण यन्त्र (Body Reformer) मे डालकर दुबारा वास्तविक रूप दिया जाता है। इसके बाद फ्लैन्जर (Flanger) में देकर काया को दबाते हैं ताकि ऊपर और नीचे कोरदार हो सके, तथा उनमें ढक्कन लगाया जा सके। इसलिए फ्लैन्जर (चित्र संख्या 12) को कोरदारक भी कह सकते हैं। फ्लैन्जर की हुई काया को "डबल सीमर" (Double Seamer) मे देकर ढक्कन लगा दिया जाता है। जिसको द्वि-संस्तरीकरण(Double Seming) तथा उस यन्त्र को द्वि-संस्तरण यन्त्र (Double Seamer) कहा जाता है।

(चित्र संख्या–11)। अधो ढक्कन लगे कैन आहार भरने के लिए तथा संसाधन के लिए भेज दिये जाते है, जहाँ आहार भरना, निर्वातीकरण करना आदि के बाद ऊपर का ढक्कन लगा दिया जाता है, यह क्रिया भी डबल सीमर की सहायता से ही सम्पन्न होती है। यह दोनो क्रिया बड़े कारखानो मे (कैनीकरण शाला) ही सम्भव होती है। छोटे स्तर के कारखानो मे अधो-ढक्कन कैन बनाने वाली फैक्ट्री मे तथा ऊपर का ढक्कन कैनीकरण शाला मे सम्पन्न होता है।



चित्र संख्या–11 द्वि-संस्तरण यन्त्र (डबल सीमर)

ऐलुमिनियम वाहिकायें (Aluminium Containers)

एलुमिनियम वाहिकाएँ भार-रहित, विष-रहित आदि गुणों वाली होती हैं। इसके अलावा एलुमिनियम वाहिका प्रति विम्वक गुण तथा उच्च कोटि की छपाई आदि के लिए उत्तम है। आज सारे संसार मे इसका प्रचार हो रहा है। लेकिन द्वि-संस्तरण एलुमिनियम वाहिका मे सम्भव नही है, जितना टिन वाहिका में सम्भव है। फिर भी बढ़ती हुई तकनीकी जानकारी, एलुमिनियम के उपर्युक्त दोष को भविष्य मे दूर कर सकेगी। उस समय तक एलुमिनियम कैनीकरण शाला मे पहुँच नहीं सकता, क्योंकि उसको वस-

हीनता से उसका संस्तरीकरण सम्भव नही हो पाता है । फिर भी आज देश में 2,100 टन से अधिक एलुमिनियम से विभिन्न प्रकार की वाहिकाएँ बनाई जाती है । एलुमिनियम तथा उसके उत्पादों के लिए भारत स्वावलम्बी है ।

सारणी संख्या–22

कुछ प्रचलित (आम) मानक कैनों का विवरण

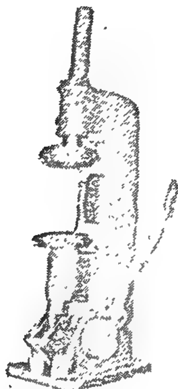
क्रम स०	व्यापार नाम (Trade Name)	परिमाण मि० मि० मे (Size)	व्यापार परिमाण (Trade Size)	धारण शक्ति (Holding Capacity) औस मे	एम एल. मे
1	ए–10 (A–10)	157×178	603×700	109	3090
2	509	142×183	509×703	91 5	2600
3.	ए–ढाई (A–2½)	102×119	401×411	29 9	850
4	1 पोण्ड बट्टर	102×76	401×300	18.0	510
5	ए–2 (A–2)	87×114	307×408	21.1	570
6.	नं० 1 टाल (No 1 Tall)	77×116	301×409	16.2	460
7	1 पोण्ड जैम (1 Lbs Jam)	77×90	301×309	12.3	350
8	14 औन्स कन्डेन्ड मिल्क (Condensed Milk)	77×80	301×302.5	10 6	300
9	8 औस (8, O z)	77×60	301×206	7.7	220
10	4 औंस झींगा (Prawn)	77×40	301×109	4.6	130
11	5½ औस जूस (Juice)	55×89	202×308	6 0	170

मेटल बोक्स कम्पनी के सौजन्य से—

प्लास्टिक वाहिकायें

आज भारत मे विकसित देशों की तुलना मे तो नही, किन्तु प्लास्टिक की विभिन्न श्रेणियों की कई उच्च कोटि की प्लास्टिक वाहिकाएँ बनायी जाती है, जो पारदर्शक या अर्द्ध पारदर्शक हैं । यह वाहिकाएँ साधारणतया निर्जलीकृत सूखे आहार पदार्थों को सुरक्षित रखने के लिए काम मे ली जाती है । इसके अलावा वनस्पति घी, आदि पदार्थ रखने के लिए भी आमतौर पर वाहिकाएँ काम मे ली जाती है । अगर प्लास्टिक उच्च कोटि का न हो तो उसमे रखे हुए आहार में दुर्गन्ध आ सकती है । प्लास्टिक कैन आज भारत मे कैनीकरण के लिए काम में ली जाती है, लेकिन अनुसन्धान शाला मे (विकसित देशों में) इसके प्रयोग से गुण दोष के बारे मे अध्ययन तथा परीक्षण चल रहा है । लेकिन कैनीकरण के अलावा अन्य फल- तरकारी परिरक्षण मे प्लास्टिक का उपयोग शुरू हो चुका है । आज भारत मे 30 हजार टन प्लास्टिक विविध वाहिकाओं के लिए काम मे

लिया जाता है । अधिक जानकारी के लिए हिमीकरण आदि अध्यायों मे चर्चा की जायेगी ।



चित्र संख्या-12 (काया बनने के बाद दोनो ढक्कनों को लगाने के पूर्व उपर्युक्त यन्त्र (फ्लंजर) की सहायता से काया को दबाते है ताकि उसमे दोनो ढक्कन सुचारु रूप से यन्त्र (केन सीलर) की सहायता से वायुरुद्ध अवस्था मे लगा सकें।)

□□□

अध्याय 7

परिरक्षण-कारखानों की आवश्यकता

(Preservation Factory Requirements)

कारखाना खोलने के पूर्व हर व्यवसायी कुछ प्रश्न अपने आप से पूछते हैं। कितनी पूँजी चाहिए ? कौन से फल तथा तरकारी का परिरक्षण करें ? कारखाना देश के कौन से प्रान्त में, कौन से क्षेत्र में खोला जाय ? क्या वहाँ अन्य प्रदेशों से कम दामों में उचित मूल्य पर फल, तरकारी प्राप्त हो सकेगी तथा अधिक दिनों तक प्राप्त हो सकेगी, ताकि कारखाना लगातार चल सके ? क्या उस प्रदेश में वाहिकाएँ, पैकिंग साधन तथा अन्य यन्त्र उपकरण आसानी से उपलब्ध हो सकेंगे ? क्या उस स्थान से फल तथा तरकारी उत्पादों का देश-विदेश में आसानी से परिवहन किया जा सकेगा ? क्या वहाँ कारखानों के लिए उपयोगी शुद्ध पेयजल, ईंधन, विद्युत्शक्ति आदि पर्याप्त मात्रा में प्राप्त हो सकेगी ? इसके अलावा सर्वोपरि आवश्यकता होती है मेहनती तथा सामान्य बुद्धि वाले श्रमिकों की, क्या वहाँ वे आसानी से प्राप्त होंगे ? कारखाने का अवशिष्ट (कचरा तथा गन्दा पानी) आसानी से निकालने के लिए उचित स्थान प्राप्त होगा ? क्या वहाँ उत्पादों को अनुकूल वातावरण में संचयन करने योग्य गोदाम उपलब्ध होंगे ? ऐसे अनेक प्रश्न उभर कर सामने आते हैं। इन सभी प्रश्नों का एक व्यापारी एक साथ स्वयं उत्तर नहीं ढूँढ सकता। इसके लिए उसको सर्व प्रथम सर्वे करने की आवश्यकता होती है। उसके बाद सर्वे रिपोर्ट की सहायता से या स्वयं उपर्युक्त प्रश्नों का उत्तर ढूँढ लेता है। कई लोग परामर्शियों की सहायता प्राप्त करते हैं। आजकल केन्द्रीय खाद्य प्रौद्योगिक अनुसन्धान शाला उपर्युक्त प्रश्नों का उत्तर तथा समस्याओं को हल करने के लिए सेवारत है। यह संस्थान एक व्यवसायी को जिन-जिन खाद्य पदार्थों का उत्पादन करना है, उसके अनुसार उनको मार्गदर्शन देता है। देश के कौन से भाग में फैक्ट्री खोलनी चाहिए ? कहाँ से उनको पूँजी के लिए आर्थिक सहायता प्राप्त होगी, आदि के अलावा तकनीकी जानकारी भी दी जाती है।

पूँजी (Capital)

कारखाने के परिमाण (Size), आकार (Shape), कच्चे माल का प्राप्ति केन्द्र, समाधन, गुण-नियन्त्रण प्रयोग-शाला (Quality Control Laboratory), वितरण केन्द्र, गोदाम, परिवहन सुविधाएँ, गाड़ियों के आने जाने का स्थान, भविष्य में कारखानों का विकास चाहें तो उसके लिए योग्य आरक्षित भूमि आदि को दृष्टिगत रखते हुए पूँजी का अन्दाजा लगाया जाता है। इसके साथ यन्त्र तथा औजारों की खरीद तथा स्थापना आदि का खर्च,

आवर्तन पूँजी (Recurring Capital) दोनों को मिलाकर ही पूँजी कहा जाता है। तकनीशियन तथा प्रौद्योगिक (Technician & Technologist) विशेषज्ञों आदि के साथ विचार-विमर्श कर योजना को कार्यान्वित किया जाता है।

इसी प्रकार के कारखानों की स्थापना के लिए आज-कल जितनी पूँजी की आवश्यकता होती है, उसके लिए कई व्यावसायिक बैंक सहायता कर रहे हैं।

अब प्रश्न यह उठता है कि कौन-कौन से उत्पाद तैयार करें, ताकि उपभोक्ताओं को आसानी से प्राप्त हो सकें। इसके लिए बड़े-बड़े व्यवसायी सर्वप्रथम सर्वेक्षण द्वारा मालूम करते हैं। कुछ लोग नये-नये उत्पाद बनाते हैं। उनका प्रचार वे विज्ञापनों द्वारा उपभोक्ताओं को आकर्षित करके करते है। वे जो खाद्य पदार्थ तैयार करना चाहते हैं, उसका कच्चा माल जिस प्रदेश में कम दामों मे भरपूर मिलता है, उसी प्रदेश मे कारखाना खोलना चाहिए। साथ ही कारखाना ऐसे स्थान मे स्थापित करना चाहिए जहाँ से उपभोक्ताओं तक कम परिवहन खर्च से उत्पाद यथाशीघ्र पहुँचाया जा सके।

शीत प्रदेशीय फल, तरकारी जैसे सेब, नासपाती, सरसफल तथा तरकारियों मे फूलगोभी, पत्तागोभी, टमाटर, आलू, मटर, पालक एव सरसो के लिए उत्तर भारत उष्ण प्रदेशीय फल तरकारियाँ जैसे—आम, पपीता, अनन्नास, केले, कटहल, कद्दू वर्गीयफल तथा तरकारियो मे भिण्डी, कुछ हरे शाक, अरबी आदि के लिए दक्षिणी भारत चुने जा सकते हैं। इसमे भी उत्तर भारत मे (हिमाचल प्रदेश, काश्मीर) सेब, सरसफल, प्लम आदि फलो के लिए तथा नागपुर सन्तरा, नीबू, आम आदि फलो के लिए योग्य स्थान माने जाते हैं। वैसे तो चण्डीगढ, दिल्ली, लखनऊ, आगरा, अलवर, अजमेर आदि स्थान भी चुने जा सकते हैं।

दक्षिण प्रदेश विशेष तौर से बैंगलोर, मैसूर, कुर्ग, सेलम, कोयम्बटूर आदि स्थान आम, सन्तरा, नासपती, अनन्नास आदि फल ससाधन के लिए उपयुक्त है, त्रिचूर, कोचीन, कोट्टयम, कोइलोन, पुनालुर, त्रिवेन्द्रम आदि क्षेत्र अनन्नास, काजू तथा काजूसेब, नेन्द्रन केले, केले, कटहल, आम, नीबू वर्गीय फल तथा तरकारियो मे भिण्डी, चिरचिण्डा, कद्दूवर्गीय फल, सेंजन की फली, सेम की फली आदि के परिरक्षण कारखानो के लिए उपयुक्त है।

ससार मे भारत ही एक ऐसा देश है जहाँ दुनिया मे पाये जाने वाली अधिकांश फल-तरकारियाँ पैदा की जाती हैं। क्योंकि भारत शीत, समशीत, उष्ण, अर्धशुष्कीय तथा शुष्कमेखलीय प्रदेश है। भारत मे उत्तर प्रदेश एक ऐसा प्रदेश है जहाँ भारत मे पायी जाने वाली प्रायः सभी फल-तरकारियाँ पैदा की जाती हैं। इसलिए यह प्रदेश फल-तरकारी परिरक्षण कारखानों का केन्द्र माना जाता है। इसी प्रकार अन्य प्रदेश मे बढती हुई कृषि उपलब्धियो तथा फल-तरकारी परिरक्षण ज्ञान के कारण, परिरक्षण कारखानो के लिए उपयुक्त बनते जा रहे हैं। राजस्थान मे भवानी मण्डी सन्तरे के लिए तथा गंगानगर माल्टे की विविध जाति के फलो के लिए प्रसिद्ध है।

परिरक्षण-कारखानो के लिए स्वस्थ स्थान चुनना चाहिए, इससे अलावा कारखाने का स्थान कुछ ऊँचाई पर होना आवश्यक है ताकि जल तथा अवशिष्टो को कारखाने से बाहर निष्कासित करने मे मदद मिल सके। साथ ही इन अवशिष्ट पदार्थों को दूर करने के लिए उचित व्यवस्था भी उपलब्ध होनी चाहिए। कारखाने के लिए काम आने वाला जल मीठा हल्का तथा दोष रहित होना चाहिए। उसमे उचित मात्रा में क्लोरीन भी होना

चाहिए ताकि जीवाणु तथा रोगाणुओं से आहार दूषित न हो। कारखाना तथा हर एक यन्त्र को चलाने तथा मरम्मत करने वाले मिस्त्रियों, प्रविधिज्ञों, औद्योगिकों की भी आवश्यकता होती है, साथ ही सामान्य बुद्धि वाले चुस्त श्रमिक भी वहाँ आवश्यकतानुसार उपलब्ध होने चाहिए।

कारखाना विन्यास (Factory Layout)

उपर्युक्त बातों को ध्यान में रखते हुए देखा जाय तो आपको विदित होगा कि कारखाना बड़ा या छोटा हो सकता है लेकिन भीतरी छत की ऊँचाई बड़े कारखानों में करीब 7.3 मीटर होनी चाहिए। बड़े कारखाने एक या दो मन्जिल के भी हो सकते हैं, लेकिन बड़े कारखानों के लिए दो मन्जिल का भवन उपयुक्त माना जाता है क्योंकि वह कच्चे माल को जमा करने तथा संसाधित माल को बाहर भेजने, संचयन करने आदि के लिए सुविधाजनक होता है। इससे उत्पादन खर्च भी (Production Cost) कम हो सकता है और उत्पादन खर्च कम होने के तरीके से ही कारखानों का विन्यास होना चाहिए।

कारखाने के चारों ओर जल से गन्दगी नहीं होनी चाहिए। अस्तु रोधी पत्थर, पट्टियाँ या चीनी मिट्टी की ईंटों से बना हुआ आंगन होना आवश्यक है। इसके अलावा आंगन जल निकास के लिए हर एक 30 सेन्टीमीटर के लिए 0.63 से० मी० ढलान (Slope) के हिसाब से बना हुआ होना चाहिए। इसके साथ-साथ नाली तथा उपनालियाँ भी बना देनी चाहिए, ताकि जल निकास सुचारु रूप से होता रहे। यन्त्र तथा उपकरणों को क्रमानुसार उचित स्थान पर स्थापित करना चाहिए ताकि बिना किसी रुकावट के यन्त्रों का एक के बाद एक के क्रम में उपयोग किया जा सके। इसके अलावा कारखाने के लिए खरीदे यन्त्र उपकरण ऐसे होने चाहिए जो आसानी से जोड़ने और खोलने योग्य पुर्जों वाले हों। साथ ही पुर्जे बाजार में आसानी से प्राप्त होने वाले हों। इन सबका ध्यान रखना अति-आवश्यक है। कारखाने में यन्त्रों को इस ढंग से सजाना चाहिए कि भण्डार से कच्चे माल, पूर्वक्रिया के बाद दूसरी क्रियाओं के लिए क्रमशः चलते रहें, ताकि संसाधित (तैयार) माल सीधा दूसरी तरफ से गोदामों में भेजा जा सके। अन्यथा कच्चे माल को आगे-पीछे ढोना पड़ेगा, फलस्वरूप उत्पादन में समय ही नहीं अपितु कष्ट एवं खर्च अधिक पड़ेगा।

कारखाने के विन्यास के बारे में आवश्यक जानकारी केन्द्रीय खाद्य औद्योगिक अनुसन्धान संस्थान (मैसूर) या स्थानीय मेटलबोक्स इण्डिया के कस्टमर्स रिसर्च सर्विस (Customer's Research Service) तथा अन्य खाद्य परिरक्षण मशीनरी उत्पादकों से भी प्राप्त की जा सकती है। मैटलबोक्स इण्डिया ने भारत में दक्षिण में मद्रास, पश्चिम में बम्बई, उत्तर में दिल्ली तथा पूर्व में कलकत्ता में अपनी शाखाएँ स्थापित कर रखी हैं। इसके अलावा कुछ अन्य प्रमुख स्थानों में भी उनकी शाखाएँ चल रही हैं जहाँ से आप मार्गदर्शन प्राप्त कर सकते हैं। दिल्ली में खाद्य तथा कृषि मन्त्रालय के साथ एक पोषक मण्डल भी कार्यरत है, जो फल तथा तरकारी कारखानों को ही नहीं बल्कि समस्त खाद्य कारखानों से सम्बन्धित जानकारी तथा मार्ग-दर्शन की व्यवस्था करता है। कारखाना स्थापित करने के अनुज्ञापत्र तथा सामयिक निर्देश आदि के लिए आप निदेशक फल तथा तरकारी परिरक्षण विभाग, खाद्य तथा पोषक मण्डल, कृषि मन्त्रालय, कृषि भवन, नई दिल्ली से सम्पर्क स्थापित कर सकते हैं।

एक कैनीकरण शाला के विन्यास का मानचित्र (चित्र संख्या 13) दिखाया गया है । कारखाना कहाँ और किस परिस्थिति में होना चाहिए इस सम्बन्ध में हम पहिले ही चर्चा कर चुके हैं । कारखानों की छतों पर लगे हुए आसपट्स, चद्दर आदि भिन्न-भिन्न जगहों

कैनीकरण शाला विन्यास

3500 सेमी.

5250 से.मी.

यहाँ खाली डिब्बों का गोदाम कैन्टीन खिड़की बॉयलर इत्यादि भी दर्शाया गया है।

चित्र संख्या–13

मे से हटाकर वहाँ पारदर्शी काँच लगा देना चाहिए, ताकि कारखाने के भीतर सूर्य का प्रकाश पर्याप्त मात्रा में आ सके। साथ ही छत पर ऐसी कोई जगह नही होनी चाहिए जहाँ से वायु मण्डल से धूल या पानी अन्दर आ सके। एक या एक से अधिक एगजोस्ट पखे भी लगे होने चाहिए ताकि भीतर की गर्म वायु तथा गैस बाहर निकल सके। भीतरी दीवारों पर सफेदी आदि लगी हुई होनी चाहिए तथा कीटनाशी, फफूदीनाशी औषधियो का समय-समय पर फैक्ट्री के अन्दर छिड़कना भी अति-आवश्यक है। यह कार्य जब कारखाने मे ससाधन क्रियाएँ बन्द रहती हो तब ही किया जाना चाहिए।

कारखाने के भीतर ऐसा कोई स्थान नही होना चाहिए जहाँ से चूहे, मक्खी तथा अन्य प्राणी प्रवेश कर सकें। चूहा घुसने तथा उसको शरण देने वाले स्थान भी नही छोडने चाहिए। कारखाने के भीतर चूहे के खाने योग्य वस्तुएँ यदि आसानी से प्राप्त होगी तभी चूहा अन्दर प्रवेश करने का प्रयत्न करेगा। इसलिए उपर्युक्त बातों को मद्देनजर रखकर ही फैक्ट्री की बनावट तथा प्रबन्ध संचालन होना चाहिए। तिलचट्टे एव झिंगुर भी खाद्य-पदार्थों के बिखरने के साथ पनपते हैं अतः भवन निर्माण मे इस बात का विशेष ध्यान रहे कि नालियां मे खाद्य-पदार्थ एकदम से बह सके जहाँ पर ये कीट छुपे रहते हैं।

कारखाने में खरीदे जाने वाले यन्त्र सामग्री ऐसी हो जो एक से अधिक खाद्य-पदार्थों का परिरक्षण करने मे उपयोगी हो। जैसे टमाटर का रस तथा गूदा निकालने का यन्त्र (पल्पर) खरीदा जाय तो इस यन्त्र से आप अगूर, आम, केला, अनन्नास आदि फलो का गूदा भी तैयार कर सकते हैं। इसी प्रकार "स्टीम जैकेटेड" (Steam Jacketed) केतली हो तो इसमे आप जैम, जैली, कैचप आदि ही नही बल्कि विविध फल पेय बनाने के लिए चीनी की चासनी बनाने के लिए, मुरब्बा बनाने के लिए, तरकारियो को विपर्णीकरण करने आदि के लिए भी उपयोग कर सकते हैं। सारांश यह है कि आप जो भी यन्त्र अथवा उपकरण खरीदें वह बहुद्देशीय हो और बहुत से तकनीशियनो एवं मशीन चालकों की आवश्यकता न हो यह सभी बातें आपके उत्पादन खर्चे को कम करने मे तथा अधिक लाभ प्राप्त करने मे सहायक हैं। सर्वोपरि कारखाने मे काम आने वाले मशीन या यन्त्र तथा उपकरण, बर्तन आदि स्टेनलैसस्टील, एलुमिनियम के बने हुए होने चाहिए। यन्त्र का वह भाग जो फल-तरकारियों से सीधा सम्पर्क मे आते है, स्टेनलैसस्टील या उच्च कोटि के एलुमिनियम से बना हुआ होना चाहिए। तात्पर्य यह है कि कोई उपकरण या मशीन का भाग जो फल-तरकारी मे सम्पर्क मे आते हैं, साधारण लोहे, स्टील या ताम्र से बना नही होना चाहिए, अन्यथा फल-तरकारी खराब होने या भविष्य मे वर्ण भेद हो जाने की सम्भावना है।

यदि कारखाना बड़े स्तर का हो तो पूँजी अधिक चाहिए। तथा छोटे तथा कुटीर स्तर के हो पूँजी क्रमश: कम चाहिए। नगर के पास की तुलना मे दूर स्थानों पर स्थापित उद्योगों में खर्च अधिक होगा, क्योकि समाधित आहार के परिवहन, यन्त्र आदि लाने ले जाने का खर्च, गाँव मे बढ जायेगा। इसलिए प्रारम्भ मे ही जहाँ कारखाना खोलना है वहाँ समाधित खाद्य-पदार्थ की खपत वाला क्षेत्र हो तो व्यवसाय के लिए लाभ-दायक होगा।

अगर ऋतुनिष्ठा प्रचालन (Seasonal Operation) अर्थात् प्रत्येक फल का संसाधन करने के लिए आगामी ऋतु तक फैक्ट्री बन्द पड़ी रहती है तो खर्च अधिक होगा, मुनाफा कम। उत्पादन-खर्च कम करने के लिए कारखाना लगातार चलता रहना चाहिए। एक

ऋतु के बाद दूसरी ऋतु मे आसानी से प्राप्त होने वाले फल-तरकारियो का उत्पादन करना चाहिए या अधिक माँग वाले (मानलें कि आप टमाटर कैंचप उत्पादन करते है तथा उसकी माँग भी अधिक है तो टमाटर का रस तथा गूदा टमाटर की ऋतु मे इकट्ठे कर परिरक्षण कर लेना चाहिए, ताकि वर्ष भर लगातार टमाटर कैंचप, साँस आदि निरन्तर बनती रहे। खाद्य-पदार्थों का निर्माण लगातार करते रहना चाहिए जिससे कि आपको समय-समय पर श्रमिकों की छंटनी करना, उनकी पुन. नियुक्ति करना आदि व्यवस्थापिक कठिनाइयों का सामना न करना पड़े।

फल उत्पाद कारखाने की स्वास्थ्य आवश्यकताएँ

सन् 1955 के फलोत्पाद नियम के अनुसार ऐसे कारखाने के लिए स्वास्थ्य सम्बन्धी अपेक्षाएँ निम्नानुसार है —

(1) कारखाना तथा उसका परिसर शुद्ध तथा उचित रूप में प्रकाशमान तथा वायु-संचालित होना चाहिए। आवश्यकतानुसार सफेदी, रंग पेन्टिंग, रोगाणु-नाशकीकरण या निर्गंधीकरण (Deodourization) आदि मे से एक या दो का प्रयोग करना चाहिए।

(2) कारखाने की खिड़कियाँ, दरवाजे, उजालदान आदि मक्खी-रोधक (Fly Proof) तथा स्वयं बन्द होने वाली जाली के किवाड़ से युक्त होने चाहिए। कारखाने की भीतरी छत तथा ऊपरी छत पक्की होनी चाहिए। फर्श सीमेन्ट किया हुआ या पत्थर पिचिंग का होना चाहिए।

(3) फल उत्पादो के लिए अनुमति प्राप्त कारखानों मे, यन्त्र तथा उपकरणों को मास-मछलियों के परिरक्षण में नही लेना चाहिए। यदि एक कारखाने को फल उत्पाद तथा मांस वर्ग के खाद्य-पदार्थ जैसे मछली, मास, अण्डा आदि का परिरक्षण करने की अनुमति प्राप्त भी है, तो भी मांस वर्ग के आहार परिरक्षण के बाद कम से कम एक महीना खाली रखना चाहिए तथा उसके बाद ही वहाँ फल उत्पादो को शुरू करना चाहिए। इसी प्रकार फल उत्पाद के बाद भी खाली छोड़ना आवश्यक है। उपर्युक्त कार्यों की समय-समय पर अधिकारियो को सूचना भी देनी आवश्यक है, तथा इसका रेकार्ड भी वहाँ होना जरूरी है।

(4) कारखाने का परिसर स्वच्छ स्थान मे हो, वहाँ गन्दगी न होने दें।

(5) इसके अलावा प्रांगण, उपभवन, गोदाम तथा उसका परिसर साफ रखना अति आवश्यक है।

(6) सन् 1934 के फैक्ट्री एक्ट (संशोधित तथा नवनीकरण) के अनुसार ही प्राधिकृत (Approved) परिसर का निर्माण किया जावेगा या संशोधित किया जावेगा ताकि सारी क्रियाएँ तथा-उत्पादो का पैकोकरण आदि सावधानी से, स्वस्थ परिस्थिति में किया जा सके।

(7) कारखाने में स्थापित उपस्कर तथा यन्त्र इस प्रकार बने हों जो आसानी से साफ किये जा सकें। वाहिकायें, मेज, यन्त्रों के पुर्जों को साफ करने योग्य व्यवस्था उपलब्ध होनी चाहिए।

(8) ऐसे धातु-सन्दूषणकारी बर्तनो या उपस्करों का फल तैयार करने, पैकीकरण करने या संचयन करने में प्रयोग नही होना चाहिए, जिससे स्वास्थ्य की हानि होती हो। ताम्र या पीतल के बर्तनो मे कलई की हुई होनी चाहिए। लोहा या गलवेनीकृत या जस्तेदार (Galvanized) लोहा, फल उत्पादो के सम्पर्क में नही आना चाहिए।

(9) व्यवसायों मे काम आने वाला जल पीने योग्य होना चाहिए तथा उसकी अधिकृत प्रयोगशाला मे रासायनिक तथा जीवाणु विज्ञान सम्बन्धी निरीक्षण तथा परीक्षण का विधेय हुआ होना चाहिए।

(10) जल निकास की पूर्ण व्यवस्था होनी चाहिए, साथ ही कचरे आदि को दूर करने की व्यवस्था भी सुचारु रूप से होनी चाहिए।

(11) पाँच या उससे अधिक स्त्री या पुरुष श्रमिक काम करते हो तो महिलाओं तथा पुरुषो के अलग-अलग शौचालय अधोलिखित सारणी के अनुसार बनवा लेने चाहिए:—

श्रमिको की सख्या	शौचालयो की सख्या (आधुनिक)	हाथ धोने का बेसिन (चिलमची)
25 तक		
24 से 49 तक		
50 से 100 तक		
100 से अधिक		

(12) जहाँ पाचकीकरण खुली भट्टी पर किया जाता है वहाँ धुआँ तथा चिनगारियाँ बाहर जाने की व्यवस्था की जानी चाहिए।

(13) छूत का या संक्रामक रोगग्रस्त लोगो को कारखाने मे काम नही करने देना चाहिए। फल उत्पाद मे लगे श्रमिको तथा अन्य लोगो की वर्ष मे एक बार डॉक्टरी जाँच करनी चाहिए ताकि यह मालूम हो सके कि उन्हे किसी तरह की बीमारी नही है। खास-तौर से संक्रामक रोगी न हो। उपर्युक्त सूची मेडिकल आफिसर के हस्ताक्षर सहित निरीक्षणार्थ कारखाने मे रख देनी चाहिए। फल-उत्पादन मे लगे लोगो को इपिडमिक वर्ग के रोग तथा चेचक से सुरक्षा के लिये इनाकुलेशन तथा टीका (Inoculation & Vaccination) लगवाना चाहिए। अगर महामारी हो जाय तो सारे श्रमिको को इनाकुलेशन करा देना आवश्यक है।

(14) संसाधन तथा तैयारी मे लगे श्रमिको को साफ एप्रेन तथा सिर पर टोपी आदि उपलब्ध करा देने चाहिए और यह देखना चाहिए कि वह पहन कर काम करें। प्रबन्धकों को यह भी देखना होगा कि श्रमिक साफ-सुथरे तथा सुव्यवस्थित ढग से काम करते हैं।

जल तथा उसकी आवश्यकता

वैज्ञानिक दृष्टि से जल एक रासायनिक पदार्थ है जो 2 हाईड्रोजन आयन तथा 1 ऑक्सीजन आयन से बना है (H_2O)। प्रकृति मे यह ठोस, द्रव्य, वाष्प आदि तीन रूप मे पाया जाता है। यह सभी जीव-जन्तुओ के कोषो मे तथा धातु क्रिस्टलों (Crystals) मे भी पाया जाता है। यह वर्षा द्वारा या बर्फ के पिघलने पर नदी तालावो मे बहकर आ जाता है। इस प्रकार के जल को भूपृष्ठ जल तथा गहरे कुए, जल कूपो, झरनो से प्राप्त जल को भूगर्भ जल कहते हैं। यहाँ हम उस पेय जल के गुणावगुणो की चर्चा करेंगे जो पीने योग्य है तथा फल तथा तरकारी समाधन मे, अन्य खाद्य ससाधन की तरह किसी प्रकार का दोष उत्पन्न करने वाला न हो। पेय जल हल्का रहेगा उसमे किसी प्रकार का रग, गन्ध, स्वाद, नही रहेगा, इसके अलावा उसका विश्लेषण करने पर किसी प्रकार के रोगाणु

जीवाणु आदि नहीं होने चाहिए, ऐसे जल को हम पेय जल या शुद्ध जल कह सकते हैं, जो खाद्य परिरक्षण में भी काम में लिया जा सकता है।

लोक स्वास्थ्य संगठन का कथन है कि पेय जल में वर्ण, गन्ध आदि नहीं पाई जाती है तथा निर्मलीकृत जल में कोलीफार्म जीवाणु (Coliform Bacteria) प्रति 100 मिली लीटर में 1 के हिसाब से पाया जाता है।

लेकिन सार्वजनिक स्वास्थ्य विभाग (Public Health Department) के अनुसार पेय जल (निर्मलीकृत तथा अनिर्मलीकृत) में कोलीफार्म जीवाणु प्रति 100 मिली लीटर में 1 के हिसाब से ही पाये जाने चाहिए।

फल तथा तरकारी परिरक्षण कारखाने में भी उपर्युक्त गुणों वाला जल ही काम में लेना चाहिए। अशुद्ध जल खाद्यों को खराब तो करेगा ही साथ ही बर्तनों, कैनों का क्षारण (Corrosion) भी करेगा। इसलिए उसे अन्य काम में भी नहीं लेना चाहिए। अशुद्ध जल में धातुलवण भी पाये जाते हैं जो खाद्यों को कठोर बनाते हैं। कैल्शियम मैगनीशियम आदि के कार्बोनेट तथा बैकारबनेट, लैक्टिक अम्ल के साथ अभिक्रिया कर उत्पादों (अचार) के अम्ल को कम कर देते हैं। फलस्वरूप उत्पादों की प्राकृतिक सुगन्ध नष्ट हो जाती है। इसके अलावा ऊष्मा-समापन क्रिया के समय कैनों, बर्तनों तथा बोतलों पर सफेद वर्ण लग जाता है। इसको निकालने के लिए सफाई की जरूरत पड़ती है, जो उत्पादन खर्च में वृद्धि करता है। शहरों में पानी निर्मलीकरण कर वितरित किया जाता है। इसलिए नगरों में स्थापित कारखानों में भी यह जल काम में लिया जा सकता है, लेकिन कारखानों के अधिकारियों को स्वयं यह निश्चित कर लेना चाहिए कि वितरण करने वाले जल में किसी प्रकार का दोष नहीं है। यह जल सार्वजनिक स्वास्थ्य विभाग की स्वीकृति के अनुसार होना चाहिए जिसका लोक स्वास्थ्य विभाग की प्रयोगशाला में पहले ही परिरक्षण कर स्वीकृति प्राप्त कर लेनी चाहिए।

यह के परिरक्षण तथा निरीक्षण को विशेष बनाया जाए तो मालूम पड़ेगा कि उसमें जल कठोर है और उसकी कठोरता कितनी मात्रा में है। कुल कठोरता (Total Hardness), कैल्शियम कठोरता (Calcium Hardness), मैग्नीशियम कठोरता (Magnesium Hardness), सल्फेट्स (Sulphates), क्लोराइड्स (Chlorides), आइरन (Iron), मैंगनीज (Manganese), सिलिका (Silica) नाइट्रेट्स (Nitrates), जैविक पदार्थ (Organic Substances), धुंधलापन (Turbidity), अवसादन (Sediment), वर्ण (Colour) तथा गन्ध (Odour) आदि के बारे में निरीक्षण परीक्षण किया जाता है।

जिस पानी में कैल्शियम कार्बोनेट 50 पी० पी० एम० से कम होगा उस जल को मृदु जल तथा 50 से 100 पी० पी० एम० में कैल्शियम कार्बोनेट घुले हुए होंगे तो अल्प कठोर (Slightly Hard) जल कहा जायेगा। इससे अधिक कैल्शियम कार्बोनेट घुली हुई हो तो कठोर जल माना जायेगा।

फिर भी हर पेय जल में सावधानी के तौर पर 2 से 5 पी० पी० एम० क्लोरीन मिलाया जाता है तो अच्छा रहता है। लेकिन याद रखें कि इसी प्रकार क्लोरीकरण आपको सरकार द्वारा वितरण किये जाने वाले जल में मिलाने की आवश्यकता नहीं होगी, क्योंकि वहाँ पहले ही क्लोरीकरण कर दिया जाता है।

फल तथा तरकारी परिरक्षण में जल की अति आवश्यकता होती है। बॉयलर की सहायता से भाप-उत्पादन कर, स्टीम जैकेटेड केतलियों को चलाना, लवण शर्करा आदि का घोल बनाना, कच्चे माल तथा यन्त्र सामग्रियों को धोना, तथा कर्मचारियों के स्थान आदि के लिए अधिकाधिक जल की आवश्यकता होती है। इस बात का कारखाना खोलते समय ध्यान रखना चाहिए।

ऐसे कारखानों की सम्पूर्ण आवश्यकताओं (चित्र संख्या 15) की यहाँ चर्चा नहीं की गई है। पाठकों को यहाँ सामान्य आवश्यकताओं से परिचित करवाने का प्रयास किया गया है, जो उनके लिए सहायक सिद्ध होगी।

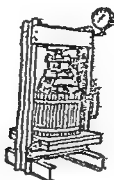


चित्र संख्या-14 (कारखानों की आवश्यकताएँ) एक बड़े कारखानों में—फल तथा तरकारी कैनिंग मशीन की मरम्मत करते हुए दिखाया गया है। साथ ही अन्य यन्त्र सामग्रियों के यथास्थान पर सुचारु रूप से लगाये हुए दिखाया गया है। इससे आप एक कारखाने तथा उसकी स्थापना किस तरीके से की जाती है, निरीक्षण कर सकते हैं।

सन् 1955 के फल उत्पाद नियम के अनुसार निर्दिष्ट आवश्यकताएँ जैसे टैक्नीकल स्टाफ, प्रयोगशाला, मशीनों तथा उपस्करों की न्यूनतम आवश्यकताएँ अधोलिखित हैं। मशीनों तथा उपस्करों का चित्र दिया गया है (चित्र संख्या–15 a, b, c)।



कोण टाइप एक्सट्रैक्टर (जूस)



हाइड्रोलिक जूस प्रैस (रस निकालने के लिए)



पिस्टन जाम एवं कैचप फिलर



बास्कट प्रैस



स्लाइसर (कतरनी)



वायुम बोटल फिलर



धातु कैपसीलर



पिल्फर प्रूफ कैप सीलर

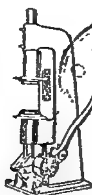


फ्लैंट कैन-रिफारमर

चित्र संख्या—15



कैन वाशर



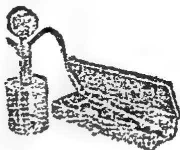
कैन प्लन्जर



प्रेशर कूकर



कैनिंग रिटोर्ट



हैड वाक्यूम टैस्टर
(दोनों ढक्कन लगाने के बाद)





पैडेस्टल कैन सीलर



बल जूस पास्चुराइजर

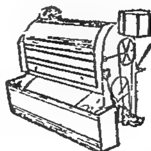


स्टीम जैकेटेड कैटल

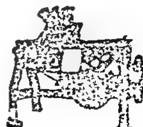
चित्र संख्या—15



पाइनएपल पीलर एवं कोरर



पी हलर

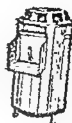


पाइन एपिल स्लाइसर

चित्र संख्या—15 B


एमल्सीफायर


पल्पिंग मशीन
(चित्र संख्या–15 C)


पोटाटो पीलर

कारखानों की श्रेणी तथा अनुज्ञापत्र (लाइसेन्स) शुल्क

क्र० सं०	श्रेणी	न्यूनतम उत्पादन क्षेत्र गोदाम तथा कार्यालय के अलावा	लाइसेंस शुल्क, एक निश्चित अवधि या उसके भाग के लिए
1.	बड़ा कारखाना जिसकी क्षमता दो मीट्रिक टन प्रतिदिन के हिसाब से फल उत्पादन करने की हो तथा वर्ष मे 250 मेट्रिक टन कुल उत्पादन करता हो।	300 वर्ग मीटर	रु० 1500/-
2.	छोटा कारखाना :		
	(अ) कारखाना 2 मीट्रिक टन के हिसाब से प्रतिदिन फल उत्पादन करता हो तथा वर्ष में 100 मीट्रिक टन तथा 250 मीट्रिक टन के बीच मे उत्पादन करता हो।	150 वर्ग मीटर	रु० 600/-
	(आ) कारखाना प्रतिदिन 1 मीट्रिक टन से अधिक उत्पादन न करता हो या वर्ष मे 50 और 100 मिट्रिक टन के बीच में हो।	100 वर्ग मीटर	रु० 400/-
3.	कुटीर उद्योग जहाँ फल उत्पाद वर्ष मे 10 से 50 मीट्रिक टन के बीच में हो।	60 ,,	रु० 250/-
4.	गृह स्तर के कारखाने जहाँ फल उत्पादन वर्ष में 10 से 25 मीट्रिक टन के बीच मे हो, कैनीकृत उत्पाद के अलावा है।	60 ,,	रु० 100/-

खाद्य एवं पोषक बोर्ड, कृषि मन्त्रालय, भारत सरकार

टिप्पणी :—1.उपर्युक्त क्षेत्र में से 50 प्रतिशत से अधिक स्थान मशीनरी में नही घेरना चाहिए।

2. जल :—हर लाइसेन्सी को कम से कम 1000 लीटर पानी प्रतिदिन के हिसाब से उपलब्ध कराना चाहिए तथा उत्पादन के हिसाब से जल मात्रा भी बढानी चाहिए। संसाधन हाल मे पाइप द्वारा धारावाहिक जल वितरण का प्रबन्ध भी करना चाहिए।

टक्नीकल स्टाफ तथा प्रयोगशाला की आवश्यकताएँ

बड़े स्तर का

फलोत्पादो के निर्माण के निरीक्षण एक ऐसे कैमिस्ट द्वारा किया जाना चाहिए जिसको अधोलिखित योग्यताओं में से कोई भी एक प्राप्त हो :—

(क) बी० एस० सी० (टेक) फूड टैक्नोलोजी के साथ या कैमीकल इन्जीनियरिंग तथा एक साल का अनुभव कम से कम फुड प्रिजरवेशन फैक्ट्री मे काम करने का हो।

(ख) बी० एस० सी० तथा पोस्ट ग्रेज्युएट डिप्लोमा, फूड टैक्नोलॉजी में प्राप्त हो जो मान्यता प्राप्त हो, या कलामासेरी पोलीटैकनिक से फ्रूट प्रिजरवेशन में डिप्लोमा प्राप्त हो या केरला गवर्नमेन्ट पॉलीटैकनीक से हो।

(ग) बी० एस० सी० कैमिस्ट्री मे या एग्रीकल्चर मे हों तथा फल तथा तरकारी परिरक्षण फैक्ट्री मे तीन साल का अनुभव हो।

कारखाने मे एक ऐसी प्रयोगशाला होनी चाहिए जिसका क्षेत्रफल 20 वर्ग मीटर हो, वह सब तरह से सम्पूर्ण हो ताकि आर्डर की द्वितीय अनुसूची के आधार पर फलोत्पादों का विश्लेषण कर सके।

छोटे स्तर का

इस श्रेणी के कारखानो मे फलोत्पादो के निर्माण का निरीक्षण निम्नांकित योग्यता वाले व्यक्ति द्वारा किया जाना चाहिए :—

(क) बी० एस० सी० कैमिस्ट्री में या एग्रीकल्चर मे हो।

(ख) फ्रूट प्रिजरवेशन कोर्स मे डिप्लोमाधारी हो या कम से कम 3 महीने की अवधि मे स्वीकृति प्राप्त संस्थान से फ्रूट प्रिजरवेशन मे प्रशिक्षण प्राप्त हो।

मशीनों तथा उपस्करों की न्यूनतम आवश्यकताएँ

क्र० सं०	प्रचलन	छोटा तथा कुटीर स्तर के	बड़े स्तर के
1	2	3	4
1.	(क) कच्चे माल को धोने के लिए	सीमेन्ट या एलुमिनियम से बनी दो टकी मय आभासी पेंदे के साथ जिसका परिमाण 1.075×0.75	तीन या अधिक सीमेंट या एलुमिनियम टकी मय आभासी पेंदे के जिसका परिमाण 1.075 ×0.75 या । वाशिंग मशीन

1	2	3	4
	(ख) बोतल धोने के लिए	1. बोतल वाशिंग मशीन 2. बोतलों को रखने के लिए रैकें	1. बोतल वाशिंग मशीन 2. बोतलो को रखने तथा ले जाने के लिए ट्रालियाँ।
2. फल- तरकारी तैयार करने के लिए		1. एलुमिनियम या स्टेनलैस-स्टील या जिंक रहित धातु से बनी मेज जिसका एरिया 10 वर्ग मीटर हो।	1. एलुमिनियम या स्टेनलैसस्टील या जिंक रहित धातु से बनी मेज जिसका ऐरिया 10 वर्ग मीटर हो।
		2. स्टेनलैसस्टील से बनी चाकू छिलका निकालने, कतरने तथा टुकड़े करने तथा बीज-कक्ष को निकालने के लिए।	2. स्टेनलैसस्टील से बनी कोरिंग, क्यूबिंग तथा कटिंग मशीन इक्यूमेन्ट
		3. जहाँ उडनवेट्स सीमेन्टेड ट्रेंकस क्यूवरिंग तथा लिचिंग के लिए काम मे लेते है उन्हे सुचारु रूप से ढक देना चाहिए।	3 जहाँ उडनवेट्स सीमेन्टेड ट्रेंकस क्यूवरिंग तथा लिचिंग के लिए काम मे लेते है उन्हें सुचारु रूप से ढक देना चाहिए।
		4. एलुनिमियम या स्टेनलैस-स्टील से बनी कम से कम 12 ट्रेंज	4. एलुमिनियम या स्टेनलैसस्टील से बनी कम से कम 50 ट्रेंज।
3. जूस, पल्पिंग तथा फिनिसग के लिए		1. जूस ऐक्सट्रक्टर और या बासकट प्रेस या रोसिंग इक्यूमेन्ट	1. पावर चलित एक्सट्रेटर या हाईड्रोलिक प्रेस।
		2. स्टेनलैसस्टील या एलुमिनियम सिव्स (चालनी)	2. पल्पिंग मशीन
		3. एलुमिनियम या स्टेनलैस-स्टील ड्रम जिसकी क्षमता 100 लीटर से कम न हो।	3. संक्षारण रहित स्टेनलैसस्टील की टन्की जिसकी क्षमता 500 लीटर से कम न हो।
		4. स्टेनलैसस्टील या एलुमिनियम से बनी बाल्टियाँ।	

1	2	3	4
		5. मैंगों तथा टमाटर उत्पादों के लिए पल्पर।	
4.	तापोपचार हेतु (हिट प्रोसेसिंग)	1. बाइलर तथा स्टीम जैकेटेड केतलियां, या ग्लास कुकिंग 1. ए-भट्टियां जो पत्थर-कोयले से या अन्य ईंधन से चलने वाली धुंआ निकलने के प्रबन्ध सहित। 2. थर्मामीटर्स तथा हाइड्रो मीटर्स 3 रफरेक्ट्रो मीटर्स	1. एक बाइलर 2. स्टील जैकेटेड केतलियाँ 3 थर्मामीटर्स 4 सेन्सीट्रय बालन्स (तराजू) परिरक्षक तोलने के लिए 5. रफरेक्ट्रो मीटर। 6. पास्चोराइसर (विनिगर या सिरका के लिए)
5.	फिलिंग सीलिंग	1. बोटल, फिलिंग मशीन 2. बोटल सीलिंग मशीन 3 क्राउन कोर्रकिंग मशीन 4. वेईंग बैलन्स (तराजू)	1 बोटल फिलिंग मशीन 2 बोटल सीलिंग मशीन 3 हैवीड्यूटी कॉर्किंग मशीन 4. वेईंग मशीन (तराजू)
6	एक्झाटिंग, सीलिंग तथा प्रोसेसिंग, कॅनिंग और कोरलिंग के लिए।	1. टैंक, क्रैट्स के साथ (एक्सासटिंग के लिए) 2. सेमिआटोमैटिकडबल सीमर 3. कूलिंग टैंक 4. मिनिमम रिटोटिंग कैपेसिटी, 100 ए–2½ केन प्रतिचार्ज के हिसाब से। 5. प्रैशर कैन टैस्टर	1. एक्जास्ट बोक्स। 2 सेमिआटोमैटिक डबल सीमर 3 कूलिंग टैंक (आवश्यक क्षमता के) 4. रिटोटिंग कैपेसिटी 250 ए–2½ केन्स पर चार्ज के हिसाब से। 5. प्रैशर कैन टैस्टर।

ए–2 श्रेणी के कैनों में उत्पादन करने वाले निर्माताओं को फलों के उपयोग में आने वाली मशीन तथा उपस्तरों की सूची देने की आवश्यकता नहीं है।

खाद्य एवं पोषक बोर्ड, कृषि मन्त्रालय, भारत सरकार के सौजन्य से

□□.□

भाग—2

परिरक्षण प्रणालियाँ

(Methods of Preservation)

अल्प ताप परिरक्षण

(Low Temperature Preservation)

अध्याय 1

प्रशीतन तथा शीतगोदाम
(Refrigeration and Cold Storage)

खाद्य पदार्थों को सड़ने गलने से बचाने के लिए अल्प तापोपचार जरूरी है, क्योंकि सड़न गलन का मुख्य कारक—सूक्ष्मजीव हैं। तरकारियों को सड़ाने वाले सूक्ष्मजीव—पेनिसिलियम, राईजोपस, लेक्टोबेसिली, बेसिली, अक्रोमोबेक्टर, स्यूडोमोनास तथा फलेवो-पेक्टीरियम हैं तथा फल तथा रसो मे खराबी उत्पन्न करने वाले सूक्ष्मजीव—सैक्रोमोईसिस, तोरूलापिस, ओड्राईटिम, पेनिसिलियम, राईजोपस, अक्टोबेक्टर, लैक्टोबैसिली तथा किण्वक आदि हैं। इनकी क्रियाशीलता अल्पताप पर या तो बंद हो जाती है या मंद हो जाती है। यह जानकारी फल तथा तरकारियो को या उसके उत्पादो को एक निश्चित अवस्था मे अधिक दिन तक प्रशीतन (रिफ्रजरेशन) या हिमीकरण फ्रीजिंग या दोनों के संयुक्त प्रयोग से मिली है।

प्रशीतन (Refrigeration)

प्रशीतन से हमारा अभिप्राय शीतलीकरण अर्थात् पदार्थों को ठण्डा करना है अथवा हम यह भी कह सकते हैं कि फल तरकारियो मे पाई जाने वाली ऊष्मा को उसमें से निष्कासित कर देना ही प्रशीतन है। इसके लिए हमारे पूर्वजो ने गहरे कुओं मे, गड्ढों में, गहरी गुफाओं या शीतल जल वाले तालाबों मे तथा हिमगुफाओं मे खाद्य पदार्थों को रख कर परिरक्षण करना आदि काल मे ही प्रारम्भ कर दिया था। आज भी आलू, अदरक, गेहूँ आदि गड्ढो मे भर कर बंद कर देते हैं ताकि उनमे किसी प्रकार का 'विकार नही हो। इसके उदय के बारे मे हम "परिरक्षण—एक परिचय" नामक अध्याय मे वर्णन कर चुके है।

जहाँ रिफ्रिजरेटर की सुविधा उपलब्ध नही है, वहाँ गर्मियो मे, जब लू चलने लगती हैं तो शीत जल के लिए मानव पुरानी विधियाँ अपनाता है। ग्रामीणजन मिट्टी के घड़ों मे पानी भर कर ऊँची छतों पर रात को रख देते हैं, जहाँ हवा लग कर पानी ठण्डा हो जाता है दूध को उबाल कर बोतलों में भर कर सील बंद कर, ठण्डा करते है, इसके तुरन्त बाद इन्हीं घड़ों के पानी के भीतर रख देते हैं। फलस्वरूप काफी समय तक दूध बिगड़ता नहीं है।

इसी प्रकार शीत प्रदेशों मे खाद्य पदार्थ, जैसे फल तरकारी तथा मांस-मछली आदि शीघ्रनाशी पदार्थों को हिम गुफाओं मे रख कर परिरक्षण किया जाता रहा है, क्योंकि खाद्य पदार्थों में पाये जाने वाले तापमान से हिम का तापमान कम होता है। इसी कारण हिम जल रूप मे परिवर्तन होने के लिए अपने समीप आये हुए पदार्थों से ताप ग्रहण करता है, फलस्वरूप पदार्थ शीघ्र शीतल हो जाता है। यह प्रक्रिया उस समय तक चलती रहती हैं, जब तक कि हिम तथा पदार्थों का तापमान सतुलित/संतुलनात्मक (Equilibrium) न हो जाय।

संक्षिप्त इतिहास

मार्कोपोलो (Marcopolo) ने अपने यात्रा विवरण में यह लिखा है कि तेरहवी शताब्दी में पूर्वी देशो मे खाद्य पदार्थों का हिमकणो की सहायता से परिरक्षण किया जाता रहा है। इसी प्रकार पाश्चात्य जगत् को इस तकनीक की जानकारी देने वाला प्रथम व्यक्ति मार्कोपोलो ही था। इस विधि को पहले पहल रोमवासियो ने अपना कर देखा। उन्होंने जलाशय की सतह पर जमी हुई हिम परतो को एकत्र कर आहार के परिरक्षण के लिए प्रयोग किया, उन्होंने हिम का अन्य देशवासियो को भी निर्यात किया। उन्होंने आगे यह भी ज्ञात किया कि शीघ्रनाशी खाद्य पदार्थों का 24 घटे तक हिमकरणों के से परिरक्षण किया जा सकता है तथा हिमकरणों के पिघलने के बाद पुनः हिमक णो में रखा दिया जावे तो और अधिक समय तक उन्हें परिरक्षित किया जा सकता है।

इसी प्रकार मानव ने अनुभव किया कि अशीतन क्रिया से शीघ्रनाशी खाद्य पदार्थों को अधिकाधिक समय तक तरोताजा रखा जा सकता है। उसका स्वाभाविक सुगन्ध तथा उसकी प्राकृतिक सुन्दरता के साथ परिरक्षण किया जा सकता है। इस अनुभव से यह सभव हो सका कि सैकड़ों मन सड़ते-गलते खाद्य पदार्थों को न केवल बचाया ही गया अपितु वर्ष भर देश के अभावग्रस्त क्षेत्रो में उन्हें उपलब्ध कराने में भी सफलता मिली।

खाद्य पदार्थों में, विशेषकर फल तरकारियों के बाह्य एवं आभ्यन्तर भागो में पाये जाने वाले सूक्ष्मजीवों की रसायन प्रक्रिया (Biochemical activity of micro-organisms) के कारण किण्वको अथवा रासायनिक सहायक वस्तुओ के (Enzymes or chemical agencies) कारण तथा स्वलयन (Autolytic action) के कारण ही विकृति सम्भव होती है, परन्तु इस क्रिया के लिए एक निश्चित तापमान की आवश्यकता होती है। अब शीघ्रनाशी पदार्थों को अल्प ताप पर रखा जाता है तो उपर्युक्त सूक्ष्मजीव तथा रासायनिक वस्तुओ की क्रियाशीलता या तो समाप्त हो जाती है या मद पड़ जाती है। अतः पदार्थ विकृतीकरण से बच कर परिरक्षित हो जाता है, किन्तु खाद्य पदार्थों की परिरक्षण शक्ति अर्थात् पदार्थ को परिरक्षित रखने की अवधि, इस बात पर निर्भर करती है कि अल्प ताप पर पदार्थ को रखते समय उसमे पाये जाने वाले सूक्ष्मजीवियों की संख्या कितनी थी, वे कौन-कौनसी किस्मों के थे तथा प्रारम्भ में तापमान कितना था। इसलिए यह आवश्यक हो जाता है कि अल्प तापमान पर रखने के पूर्व ही फल एवं तरकारियों को यथासम्भव स्वच्छता से पैदा किया जाय तथा साफ करके रखा जाय। साथ ही प्रारम्भिक तापमान को पूर्व-शीतलीकरण कर रखा जाय। अशीतन दो प्रकार से सम्पन्न किया जा सकता है, प्रथम प्रकृति द्वारा, द्वितीय कृत्रिम विधि द्वारा

1. प्राकृतिक प्रशीतन (Natural Refrigeration)

शीतजल, हिमकण,हिमकण-लवण मिश्रण (Snow and Brine) आदि के प्रयोग से आदि काल से ही मानव प्रशीतन क्रिया सम्पन्न करता आ रहा है । आज प्राकृतिक हिमकणों के स्थान पर कृत्रिम हिमकण (बर्फ) का प्रयोग किया जाता है । भौतिक रूप से प्राकृतिक हिम और कृत्रिम हिम मे कोई अन्तर नहीं है । लेकिन स्वास्थ्य के दृष्टिकोण से देखा जाय तो कृत्रिम हिम शुद्ध है तथा प्राकृतिक हिम शुद्ध नही है । प्राकृतिक हिम का हर स्थान पर हर समय उपलब्ध होना सम्भव नहीं है । इसके अलावा प्राकृतिक हिम मूल्य मे उसका परिवहन करने से अधिक कम मूल्य देना पडता है पर कृत्रिम हिम का उत्पादन किया जा सकता है ।

हिम द्वारा प्रशीतन (Refrigeration by Ice)

ऊष्मारोधक कक्षों मे या भवनो मे फल तथा तरकारियो को हिमकणो के बीच में एक रूपता मे सजाया जाय तो हिम कण उनसे ऊष्मा ग्रहण करेगा, फलस्वरूप फल तरकारियो का शीतलीकरण हो जायेगा । जल का हिमावस्था मे रूपान्तरण करने के लिए 32° एफ. (0° सी.) तापमान की आवश्यकता होती है । इसलिए 32° एफ. ताप पर पदार्थ को शीतलीकृत करने के लिए हिमों का प्रयोग किया जा सकता है । फलस्वरूप हिमकण जल मे परिवर्तित हो जाऐंगे, इस क्रिया के लिए जितनी ऊष्मा की आवश्यकता होती है, उसको ही द्रवण ऊष्मा (Heat of fusion) कहा जाता है । जहां 32° एफ. (0° सी) से नीचे प्रशीतन की आवश्यकता होती है वहाँ हिम के साथ लवण (नमक) का प्रयोग किया जाता है ताकि 32° एफ. ताप से न्यून तापमान पर भी आहार का परिरक्षण किया जा सके ।

लवण हिमकण-मिश्रण (Brine-Ice Mixture)

आप भली-भाँति जानते है कि हिम कण का तापमान 32° एफ. है, परन्तु इसमें लवण मिलाया जावे तो, मिलाये गए लवण की मात्रा के अनुपात में मिश्रण का तापमान भी घटना या बढ़ना रहेगा । अधिक जानकारी के लिए निम्न सारणी की ओर आपका ध्यान आकर्षित किया जाता है :—

सारणी संख्या 1

हिमकण लवण मिश्रण के अनुपात मे उसमें उत्पन्न तापमान

क्रम संख्या	लवण मात्रा प्रतिशत मे	मिश्रण का तापमान (एफ)
1	0	32° एफ.
2	5	27 "
3	10	20 "
4.	15	11 "
5.	20	1·5 "
6.	25	−10 "

उपर्युक्त सारणी के आधार पर मिश्रण बना कर उसके सम्पर्क में आहार को लाया जाय तो सारणी में बताये गए तापमान पर खाद्य पदार्थों का शीतलीकरण सम्भव है। कुल्फी (दूध, फलरस या अन्य किसी वस्तु से बनी हुई) को इसी विधि से जमाया जाता है। यदि आवश्यकता हो तो जैसे ही हिम कण पानी में रूपान्तरित हो जाता है, वैसे ही उसमें पुनः हिम कणों तथा लवण की मात्रा भी बढ़ाते रहना चाहिए। इस प्रकार के प्रयोग से आप चाहे जितने दिन तक एक आहार (फल-तरकारी) को शीतलीकृत रख सकते हैं।

प्रशीतनीकृत वाहन (Refrigerated Car)

फल तथा तरकारी जैसे शीघ्रनाशी खाद्य पदार्थों को देश के एक कोने से दूसरे कोने तक ताजगी के साथ पहुंचाने के लिए आज कल विकसित तथा विकासशील देशों में प्रशीतनीकृत वाहन काम में लिए जाते हैं, जो उपर्युक्त विधि पर आधारित होते हैं, परन्तु फल-तरकारियों को वाहन में चढ़ाने के पहले, पूर्व-शीतलीकरण अथवा क्षेत्रीय ऊष्मा विमोचन (Removal of field heat) करवा कर वाहन में सजाया जाता है, लेकिन प्रशीतनीकृत वाहन में काम आने वाले हिम कणों का आकार 0·5 से 7 5 सेन्टीमीटर मोटाई का होना चाहिए तथा उसमें मिलाये जाने वाले लवण की मात्रा रखे जाने वाले पदार्थ के लिए चाहे गए तापमान के अनुसार मिलानी चाहिए। आज प्रशीतनीकृत वाहनों में कई परिवर्तन तथा परिष्कार किए जा चुके हैं।

लवणघोल गुरुत्वीय प्रवाह विधि (Brine Gravitation Flow Method)

शीत गोदाम (Cold Storage) ऊष्मारोधक तथा चारों ओर से लवणवाही कुण्डलियां (Brine Coils) द्वारा जुड़ा हुआ होगा। इसके भीतर, उस वस्तु को रखा जाता है जिसका शीतलीकरण करना होता है। पदार्थ को व्यवस्थित करने के उपरान्त ही प्रवेश द्वार को बंद किया जाता है, जो खुद ही ऊष्मारोधक होता है। इस प्रकार के शीत गोदामों के भीतर हिम कण लवण मिश्रण वाली वाहिका को थोड़ी ऊँचाई पर रख दिया जाता है, जो स्वयं भी ऊष्मारोधक होती है। यह वाहिका कुण्डलियों द्वारा जुड़ी हुई होती है। लवण हिमकण मिश्रण का तापमान न्यून होने से कुण्डलियों द्वारा प्रवाहित होकर समूचे शीत गोदामों के चारों ओर पहुंच जाता है, जहाँ कुण्डलियाँ बिछायी हुई होती हैं। इसके फलस्वरूप कुण्डलियों के सम्पर्क में आने वाली गोदाम की भीतरी वायु ठण्डी हो जाती है, बदले में वायु से ऊष्मा प्राप्त कर कुण्डलियों में बहने वाले लवण हिमकण मिश्रण का तापमान बढ़ जाता है तथा मिश्रण उन्हीं कुण्डलियों द्वारा ही वापस वाहिका में पहुंच जाता है, जहाँ वह पुनः शीतल होकर पुन. शीतल गोदाम की कुण्डलियों में आवागमन करता रहता है। इस प्रकार से यहाँ की वायु ठण्डी होनी रहती है और इस प्रकार लवण हिमकण मिश्रण से चाहा गया न्यून तापमान प्राप्त होता रहता है। ध्यान रखें कि वाहिका में रखे हुए लवण-हिमकण-मिश्रण का अनुपात लगातार बनाये रखना चाहिए, अन्यथा शीत गोदामों के भीतर चाहा गया तापमान प्राप्त नहीं होगा, क्योंकि लवण हिमकण मिश्रण की न्यून तापमान अवस्था भंग हो जायेगी। इसको रोकने के लिए चाहे गए अनुपात में हिमलवण मिश्रण-वाहिका में पुन. भरते रहना चाहिए। इसी प्रकार शीत गोदामों के भीतर की वायु ठण्डी हो जायेगी, उक्त ठण्डी वायु गोदामों के भीतर रखे हुए पदार्थ से ऊष्मा ग्रहण कर पुनः गर्म हो जायेगी। यह गर्म वायु पुनः लवण हिमकणवाही कुण्डलियों के सम्पर्क में आकर पुनः

ठण्डी हो जाती है। उपर्युक्त क्रिया के आवर्तन हेतु शीत गोदाम के भीतर रखे हुए पदार्थ चाहे गए तापमान पर, शीतल हो जाते हैं।,फलस्वरूप अधिक दिन तक उनको विकृति से बचाया जा सकता है। क्योंकि फल तथा तरकारियों में पेड़-पौधों से अलग होने के बावजूद भी जीवन क्रिया होती रहती है। जैसे—श्वासोच्छ्वास तथा पूर्ण विकसित फलों का पकाना। उसके बाद भी सड़न-गलन आदि क्रियाओं को बनाये रखने के लिए भी एक निश्चित तापमान की आवश्यकता होती है। अगर उस तापमान से न्यून तापमान पर उनका सचयन किया जाये तो उन्हें उपर्युक्त जीवन क्रियाओं से कुछ अवधि के लिए और रोका जा सकता है ताकि उनमें किसी प्रकार का विकार नहीं होने पावे। उपर्युक्त क्रियाएँ सूक्ष्मजीवों द्वारा भी सम्पन्न हो सकती हैं, लेकिन वे भी न्यून तापमान पर क्रियाशील नहीं रहते। इन्ही कारणों से फल तथा तरकारियों को न्यून तापमान पर रख कर परिरक्षण किया जाता है।

परन्तु उपर्युक्त विधि से बने शीत गोदामो में आर्द्रता अर्थात नमी (Humidity) नहीं होनी चाहिए। इसके लिए गोदामो के एक कोने मे कैल्सियम क्लोराइड (Calcium Chloride) रखा जाना चाहिए। यह रासायनिक गोदामो की भीतरी वायु की नमी को सोख लेता है, जिससे वहाँ शुष्कता उत्पन्न होती है। इस स्थिति को बनाये रखने के लिए समय-समय पर आवश्यकतानुसार कैलसियम क्लोराइड को बदलते रहना चाहिए।

शुष्क हिम विधि (Dry Ice Method)

अन्य पदार्थों की तरह कार्बनडाई ऑक्साईड के भी तीन भिन्न-भिन्न रूप होते हैं। जैसे—गैस, द्रव, ठोस। जब कार्बनडाईऑक्साइड ठोस अवस्था प्राप्त करती है तब उसका तापमान अल्प या न्यून हो जाता है जो–40° से-50° एफ. (–40° से –50° F) तक होता है। इसलिए ठोस कार्बनडाई-ऑक्साइड को शुष्क-हिम कहा जाता है। शुष्क-हिम बहुत अधिक शीतलकारी होता है, इसलिए इसके सम्पर्क मे आने वाले पदार्थ अति शीघ्र ठण्डे हो जाते है। परन्तु शुष्क-हिम पदार्थों के सीधे सम्पर्क में नही आना चाहिए। अगर शुष्क-हिम को छूने वाले व्यक्ति के नग्न हाथ उसको लग जायें तो त्वचा फट सकती है। इसी प्रकार फल-तरकारी भी शुष्क-हिम के सम्पर्क मे आने से फट कर खराब हो जाते है। इसलिए शुष्क-हिम से चलाने वाले शीतल गोदामों मे दो कक्ष होते हैं—एक छोटा, दूसरा बड़ा। दोनों आभासी दीवार से अलग-अलग किए गए होते है। इनसे छोटे कक्ष में शुष्क-हिम रखा जाता है ताकि पदार्थों से सीधा सम्पर्क न हो सके।

454 ग्राम ठोस कार्बनडाई ऑक्साइड गैस के वातावरण से (Carbon di-oxide atmosphere) 246·9 ब्रिटिश थर्मल यूनिट (ब्रिटिश ऊष्मा मात्रक का प्रशीतन) प्रशीतन, उत्पन्न होती है, अर्थात् उस कार्बनडाई ऑक्साइड गैस के वातावरण से—109.3 एफ० ताप प्राप्त हो जाता है। इसमे से 50 प्रतिशत कार्बनडाई ऑक्साइड तथा बाकी 50 प्रतिशत वायु भी होगी तो उसमे से (शुष्क-हिम से)—126° एफ० ताप उपलब्ध होगा।

परन्तु इसी प्रकार शुष्क हिम से प्रशीतन करने के लिए जितने शुष्क-हिम की आवश्यकता होगी उसकी पहले ही गणना कर सुरक्षित रखना होगा। शुष्क-हिम को जिस कोष्ठ मे रखा जाता है, उसके समीप दूसरे कोष्ठ मे उन पदार्थों को व्यवस्थित किया जाता है,

जिनको शीतलीकरण की आवश्यकता होती है। इन दोनो मे जब निरन्तर वायु का आवागमन होता रहता है तब वायु शुष्क हिम के सम्पर्क में ठण्डी हो जाती है और यह ठण्डी हवा वहाँ से पदार्थ की ओर प्रवाहित होकर, भारीपन के कारण शीत गोदामों के भीतर रखे हुए पदार्थों के (फल-तरकारी) सम्पर्क मे आती है। फलस्वरूप उक्त पदार्थ से ऊष्मा शोषण कर पुनः हल्की हो जाती है, तदनुसार वायु वहाँ से हट कर शुष्क-हिम कोष्ठ की ओर चलती है। बदले से वहाँ मे ठण्डी हवा उस स्थान को (जहाँ फल-तरकारियाँ रखी होती हैं) प्रवाहित होती हैं। इसी प्रकार शीत गोदाम तथा उसके भीतर के पदार्थ का तापमान न्यून या अल्प हो जाता है। यह क्रिया चाही गयी तापमात्रा तक होती रहती है। फलस्वरूप शीत गोदामों के भीतर रखी हुई फल-तरकारियाँ जिस अवस्था मे रख दी जाती हैं उसी अवस्था मे अधिक दिनों तक बिना विकृति के परिरक्षित रखी जा सकती हैं। अगर उसके भीतर बराबर वायु संचार न रहे या पर्याप्त शुष्क-हिम निरन्तर उपलब्ध न कराया जावे तो विकृतीकरण होगा, अन्यथा नही।

शुष्क हिम-कणों द्वारा प्रशीतनीकृत वाहन
(Refrigerated Cars with Dry Ice)

प्रशीतनीकृत वाहन को भी फल-तरकारियो का परिवहन करने के लिए काम मे लिया जाता है। यह वाहन ऊष्मारोधक होते हुए भी, इसमे थर्मोस्टेटिक (Thermostatic) उपकरण लगा हुआ होता है। अतः वाहन के भीतरी तापमान को आवश्यकतानुसार नियन्त्रित किया जा सकता है। अर्थात् तापमान बढ़ाना हो या घटाना हो तो इस उपकरण द्वारा सम्भव कराया जा सकता है। साधारणतया उपर्युक्त वाहन मे—20° एफ० (माइनस 20 डिग्री एफ०) का ही प्रयोग किया जाता है। लेकिन अधिकतर इस प्रकार के वाहन को हिमीकृत उत्पाद (Frozen Products) का परिवहन करने के लिए ही काम मे लेते हैं। इसलिए यह वाहन आम तौर पर विकसित देशों मे ही काम मे लिया जाता है। इसी प्रकार प्रशीतन का आविष्कार उच्च दर्जे के रोधकों (इन्सुलेटरों) के आविष्कार के लिए प्रेरणा देता रहा है।

सिलिका जेल द्वारा प्रशीतन (Refrigeration by Silica-gel)

सोडियम सिलिकेट (Sodium Silicate) की अम्लीय अभिक्रिया करा दी जाय तो सिलिका जेल उत्पन्न हो जायेगा। यह पदार्थ कुछ विशेष वातको तथा जल-वाष्पो का अवशोषण (Absorb) करने की क्षमता रखता है। इसके प्रयोग मे वाहनो का प्रशीतन किया जा सकता है, ताकि शीघ्रनाशी आहार को यथाशीघ्र ताजगी की अवस्था मे दूर के उपभोक्ताओं तक पहुंचाया जा सके।

इस प्रकार प्रशीतनीकृत वाहनो मे सल्फरडाई ऑक्साइड को प्रशीतक (Refrigerant) के रूप मे काम मे लिया जाता है। इस गैस को अनुक्रमों मे व्यवस्थित नलो मे विकसित होने दिया जाता है, जो वाहनो की लम्बाई मे स्थापित किया होता है। यह नल वाहनो की भीतरी छत के साथ लगे हुए होते हैं तथा उसके नीचे द्रोणिकाएँ (Condensers) लगी हुई होती है जो नलो मे से टपकने वाली द्रवणीकृत (Condensed) बूंदों को जमा कर सकें। सल्फरडाई ऑक्साइड का द्रवणीकरण के लिए वायु शीतलीकृत द्रवणीय प्रणाली काम में

ली जाती है जो वाहन की ऊपरी छत पर लगी हुई होती है। इन्हे धूप और सूर्य-किरणों से बचाये रखना होता है। वाहनों के आगे तथा पीछे अवशोषक (Absorb) भी दो भागो मे लगे हुए होते है। ये नलियां, वाहन को अग्नि-बाधाओं से बचाने के लिए रोधीकृत (Insulated) होती है। सिलिका जेल गैस को, विमोचन करने के लिए गैस बर्नर काम में लिया जाता है। इसके लिए काम आने वाली गैस, वाहनो के फर्श के नीचे स्थापित टंकियो मे से वितरीत की जाती हैं। इन दोनो के संयुक्त प्रयोग से अवशोपको के कारण वाहनो मे लगातार प्रशीतन क्रिया होती रहती है। सल्फरडाई ऑक्साइड की क्रियाशक्तिहीन होते ही सिलिका जेल शक्तिशाली हो जाती है। इसी प्रकार सिलिका जेल शक्तिहीन होते ही सल्फरडाई ऑक्साइड शक्तिशाली बन जाती है। इसी प्रकार एक के बाद एक को शक्ति प्राप्त होने के कारण प्रशीतन क्रिया निरन्तर होती रहती है। फलस्वरूप वाहनों को बार-बार प्रशीतनीकरण के बजाय ऊष्मीकरण की ही आवश्यकता होती है ताकि प्रशीतन लगातार चालू रहे। ऐसे प्रशीतनीकृत वाहनों में जगह की बचत होती है। यह एक विशेषता है।

(2) कृत्रिम अथवा यांत्रिक प्रशीतन
(Artificial or Mechanical Refrigeration)

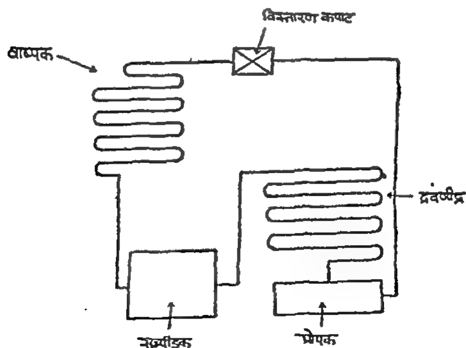
अति शीघ्र वाष्पशील पदार्थ अपने सम्पर्क मे आने वाले अधिक तापमानीय आहार या वस्तु से ताप शोषण कर वाष्परूप धारण कर लेते हैं। इसी प्रकार की ऊष्मा को वाष्पणगुप्त ऊष्मा (Latent heat of Vapourisation) कहा जाता है।

एक गोल वाहिका (Cylinderical container) मे रखे हुए द्रव्य अमोनिया को कुण्डलियों द्वारा जोडा जाय तथा उन कुण्डलियों के अधिकांश भाग को अन्य वाहिका मे स्थापित किया जावे, चाहे कुण्डलियां वाहिका के केन्द्र मे हो या किनारे पर स्थापित हो। अब जिस फल या तरकारी को ठण्डा करना हो, उन्हे वाहिका के चारो तरफ या केन्द्र स्थान पर (कुण्डलियो की स्थिति के विपरीत) व्यवस्थित किया जाये तथा उस वाहिका को ऊष्मारोधक अवस्था प्रदान की जाये तो फल या तरकारी ठण्डी हो जायेगी। द्रव्य अमोनिया गोल वाहिका मे से कुण्डलियों की तरफ प्रवाहित होने लगता है, फलस्वरूप फल-तरकारी रखी हुई वाहिका के अन्दर की कुण्डलियो मे पहुच कर उन्हे ठण्डा कर देता है। इस प्रकार शीतलीकृत कुण्डलियां उसके निकट सम्पर्क में आने वाली वायु को ठंडा कर देती है, उस वायु के सम्पर्क मे आने वाली फल-तरकारियों से ऊष्मा शोषण कर उन्हे शीतल किया जाता है। इसी प्रकार वापस गर्म हुई वायु कुण्डलियो को गर्म करने की वजह से अमोनिया गैस बन कर वहाँ से हट जाती है। बदले मे अमोनिया द्रव्य उस स्थान को पुन: आकर क्रिया चालू रखता है। इसी प्रकार वाहिका के भीतर रखे हुए फल, तरकारी या अन्य पदार्थ शीतलीकृत हो जाते हैं। यह क्रिया आप चाहे गए न्यून तापमान मे जितने समय के लिए चाहिए सम्भव करा सकते हैं, लेकिन अमोनिया सम्पूर्ण रूप से गैस बन जाने के बाद यह क्रिया स्वयमेव बन्द हो जायेगी। इसलिए पुनः अमोनिया को भरते रहना चाहिए, लेकिन इस प्रकार अमोनिया भरते रहना सम्भव भी नहीं है और इसमे शीतलीकरण का खर्च भी बढ जाता है। इस कमी को दूर करने के लिए ही यांत्रिक प्रशीतन का आविष्कार हुआ था। प्रशीतन अभियांत्रिकी के सम्पूर्ण अध्ययन के लिए डा. ए. एम. माइकेल द्वारा लिखित एग्रीकल्चर इन्जीनियरिंग पर या अन्य कोई ग्रन्थ का अध्ययन अपेक्षित है।

विभिन्न यान्त्रिक प्रशीतन विधियाँ
(Artificial or Mechanical Refrigeration)

यांत्रिक प्रशीतन मे तीन प्रामाणिक प्रणालियाँ जुड़ी हुई हैं वे निम्न प्रकार हैं :— *(1) संपीडन (Compression), (2) अवशोषण (Absorption)* तथा *(3) वायु (Air)* प्रणाली ।

संपीडन प्रणाली मे संपीड़क (Compressed) गैस को या वाष्प को, वाष्पक से निकाल कर उसको संपीडित कर द्रवणीन्द्र (Condenser) की कुण्डलियो मे भेज दिया जाता है । द्रवणीन्द्र में वाष्प अधिक दवाव पैदा करने के कारण उसका क्वथनांक (Boiling Point) बहुत अधिक हो जाता है, फलस्वरूप अधिक क्वथनांक वाली वाष्प को धारावाहिक जल वर्षा प्रयोग द्वारा या वायु के सहारे ठण्डा किया जाता है ताकि वह गैस द्रव बन सके । संपीडित तथा शीतलीकृत वाष्प का प्रसारण परिवर्तक वाल्व (Value) द्वारा वाष्पक मे पहुचता है । संपीडित वाष्प या गैस लघुकरणीय दबाव के कारण फैलता है, इस क्रियाकाल मे वह आस-पास से ऊष्मा का शोषण करता है । इस प्रकार आवर्तनीय संपीडन, द्रवणीकारण प्रसारण तथा वाष्पीकरण चलता रहा है । इसमे प्रशीतक के रूप मे अमोनिया काम मे लिया जाता है । इस प्रकार से शीत गोदाम में प्रशीतन्त्र आदि काम करते हैं । अमोनिया के अलावा अन्य प्रशीतक भी काम मे लिए जाते हैं । अमोनिया प्रशीतन प्रणाली का एक रेखाचित्र नीचे अंकित किया जा रहा है जिसकी ओर अपका ध्यान आकर्षित है (चित्र संख्या–16) ।



अमोनिया प्रशीतन प्रणाली का रेखाचित्र

चित्र संख्या–16

विविध प्रशीतक (Refrigerants)

आपको भली-भाँति मालूम है कि जो वस्तु अन्य पदार्थों के सम्पर्क में आने से ऊष्मा-शोषण कर लेती है, उन्हें ही प्रशीतक कहते है। इस प्रकार के गुणयुक्त पदार्थ हैं—शीतजल, प्राकृतिक हिम (Snow), कृत्रिम हिम (Ice), शुष्क हिम आदि। तथा दूसरे अमोनिया, मिथाइल क्लोराइड (Methyle Chloride), इथइल क्लोराइड (Ethyle Chloride), बूटेन (Butane), ऐसोबुटेन (Isobutane), कार्बनबाई सल्फाइड (Carbonbi Sulphide), क्लोरोफार्म (Chloroform), इथइन (Ethane), ईथर (Ether), प्रोपेन (Propane), इत्यादि। इन्हें दहन-विस्फोटक (Explosive) सहायक कहा जाता है। इनमें कुछ दहन विस्फोटक भी होते हैं। वे हैं—सल्फरडाई ऑक्साइड, कार्बनडाई ऑक्साइड, डाईक्लोरो-डाईफ्लोरो-मिथेन (Dichloro-difloro-methene), मिथेलिन क्लोराइड (Methylene Chloride), कार्बनटेट्रा क्लोराइड (Carbon tetra Chloride), ट्रैलीन (Treline), नाईट्रस-ऑक्साइड (Nitrous oxide) आदि। उपर्युक्त प्रशीतकों में उपयुक्त अल्प क्वथनांक प्रशीतक होता है। द्रवणीन्द्र में इन प्रशीतकों की गैस तथा वाष्प को वायुमण्डल के दबाव से कम दबाव वाला होना आवश्यक है, अन्यथा दबाव बढ़ने से वायु तथा आर्द्रता प्रशीतन्त्रों मे प्रवेश कर जायेगी, तत्पश्चात् अनुरक्षण, मरम्मत (Maintenance) आदि का खर्चा भी बढ जायेगा। अतः उपरोक्त प्रशीतको मे वाष्पणयुक्त ऊष्मा तो अधिक होनी ही चाहिए। अन्यथा एक ही मात्रा में प्रत्येक प्रशीतक को लें तो यह सिद्ध होगा कि कौनसा प्रशीतक सबसे अधिक प्रशीतन शक्ति प्रदान करता है। उसी प्रशीतक का प्रयोग करना अधिक लाभ-दायक होगा। इसके अतिरिक्त प्रशीतक गैस जल के द्वारा द्रवणीकृत होने वाला भी होना चाहिए। बार-बार प्रयोग मे लाने योग्य प्रशीतक भी होना उचित होगा, अन्यथा प्रशीतन अधिक खर्चीला हो जाएगा। साथ ही प्रशीतक विषैला हो तो वाहिकाओं तथा कुण्डलियों में किसी प्रकार रिसना नहीं चाहिए। यदि रिसने लग जाय तो उसको सूचित करने योग्य गन्ध भी निकलनी चाहिए। उपर्युक्त सभी गुणों को चाहते हुए, देखा जाए तो अमोनिया सर्वश्रेष्ठ प्रशीतक सिद्ध होता है क्योंकि इसमे निम्न गुण पाये जाते हैं :—

(1) साधारण दबाव पर इसका क्वथनांक —28° एफ. (माइनस), है इसलिए दबाव रहितावस्था मे – 28° एफ. ताप प्राप्त हो जायेगा।

(2) इसके अलावा इससे अन्य प्रशीतकों से अधिक वाष्पन गुप्त ऊष्मा (588·8 ब्रिटिश थर्मल यूनिट) भी प्राप्त होती है।

(3) 85° एफ. पर इसका निरपेक्ष (Absolute) दाब हर एक वर्ग इंच पर 166·4 पौंड होता है।

(4) एक सीमित परिमाण में इसका भार अधिक होता है तथा जल मे विलेय भी है।

(5) गन्धक बत्ती (Sulphur Candles) अमोनिया के निःसरण अभिज्ञापक (Detector) का कार्य भी करती है।

लेकिन पीतल, ताम्र, इस्पात आदि से बनी वाहिकाओ में अमोनिया अभिक्रियाशील होता है, जबकि इस्पात पर उतना अभिक्रियाशील नहीं होता जितना पीतल तथा ताम्र पर। इसलिए इसके लिए एलुमिनियम कुण्डलियां काम में ली जाती हैं। लेकिन यहां शुद्ध अमोनिया ही काम मे लेना चाहिए।

शीत गोदामों का तापमान (Cold-storage Temperature)

फल-तरकारियाँ जीवित पदार्थ हैं तथा शीघ्रनाशी भी। क्योंकि श्वसन उपापचय क्रिया आदि से ऊर्जा या ऊष्मा विसर्जित करते हैं, अगर गोदामों मे 100° एफ तक ताप बढ़ जाता है तो ये शीघ्र पक जाएँगे, वर्णभेद हो जाएगा तथा इनमें विकृति प्रारम्भ हो सकती है। इनसे बचाने के लिए गोदामों के तापमान को औचित्य के साथ स्थिर रखना चाहिए। इस तापमान मे 2° या 3° एफ. ताप ऊपर-नीचे हो जाए तो कोई विशेष प्रभाव फल-तरकारियो पर नहीं पड़ेगा। इसके अतिरिक्त गोदामों के सम्पूर्ण भागों मे समान तापमान होना भी आवश्यक है। अगर ऐसा नहीं हो तो गोदामो के अन्दर विभिन्न स्थानों में भिन्न-भिन्न तापमान होगा, फलस्वरूप एक कोने मे रखे गए फल पकने लगते है जहाँ तापमान अधिक होता है तथा दूसरे कोने में जहाँ कम तापमान होगा वहाँ नही पकेंगे। इस प्रकार से जब गोदामों में से फलों को निकाला जायेगा तब कुछ सड़े-गले, कुछ पके, कुछ अधपके, कुछ कच्चे प्राप्त होंगे। तापमान को रोकने तथा स्थिर रखने के लिए विभिन्न उपाय हैं, जैसे—रोधन, समुचित-प्रशीतनीकरण, प्रशीतक कुण्डली तथा भवन तापमान का कम अन्तर रखना, सारणी संख्या 4 मे दिये गए ताप-स्तरो के अनुसार हर फल को उचित मात्रा मे ऊष्मा पर रखा जाना। इन उपायों से उचित समय तक फल गोदामों मे परिरक्षित रह सकते हैं। इसके साथ ही उचित स्थान पर "ताप-स्थायी" ($1\frac{1}{2}$ मीटर ऊँचाई) लगाया जाना चाहिए। भीतर की छत तथा फर्श के तापमान का निरीक्षण करते रहना चाहिए ताकि वहाँ कोई विशेष ताप-अन्तर न हो पाए। उत्पादो का तापमान उसके पैकिंग से या भारी वाहिकाओं मे से ही लेना चाहिए। इसके लिए मानकीकृत थर्मामीटर का ही उपयोग करना चाहिए, तथा गोदामो के भिन्न-भिन्न स्थानों से ताप का नाप लेना आवश्यक है। ताजा उत्पादो से तापमान नापने के लिए काच या धातु से निर्मित थर्मामीटर ही काम में लेना चाहिए। जहाँ-जहाँ गोदामों का भीतरी तापमान लेना कठिन है वहाँ का तापमान लेने के लिए ऐसे भी थर्मामीटर मिलते हैं जो दूर से ही तापमान नाप लेते हैं। इस प्रकार के थर्मामीटर को थर्मोकोपुल्स अथवा इलैक्ट्रिकल रैजिस्टैंस थर्मामीटर (ताप-वैद्युत-युग्म तापमापी) कहा जाता है।

पूर्व-शीतलीकरण (Pre-Cooling)

फल-तरकारियो को एकत्र करते ही परिवहन या गोदामों मे संचयन करने से पूर्व उन्हें ठण्डा किया जाता है, ताकि उत्पादो की ऊष्मा का कुछ अंश विसर्जित हो सके। इस क्रिया द्वारा उत्पादों को अधिक दिनों तक सुरक्षित रखा जा सकता है। इस क्रिया को ही पूर्व शीतलीकरण कहा जाता है।

क्षेत्रीय ऊष्मा या संवेद्य ऊष्मा (Field Heat or Sensible Heat)

फल- तरकारियो को जिस ताप मे रखा जाना है उस ताप मे पहुचाकर ही उपर्युक्त शीघ्रनाशी पदार्थों को शीतगोदामो मे रखा जाता है। इसके लिए कितनी मात्रा मे ऊष्मा विसर्जन करना है, यह हर एक पदार्थ की आपेक्षिक ऊष्मा, प्रारम्भ ताप तथा अन्तिम ताप की अन्तर संख्या से गणन करने से जो संख्या प्राप्त होगी, वही होगी विसर्जनीय ऊष्मा। अर्थात् सेब की आपेक्षिक ऊष्मा 0 88, प्रारम्भ ताप 62° एफ. तथा अन्तिम (चाहे गए)

ताप 32° एफ कुल सेब 2000 पौंड हो तो 52,800 मिलेगा तथा इस ऊष्मा को क्षेत्रीय ऊष्मा कहा जाता है। इसको संवेद्य ऊष्मा भी कह सकते हैं। यह ताप जितना शीघ्र फलों से बाहर विसर्जित कराया जायेगा, उतने ही अधिक दिनों तक फल परिरक्षित रहेंगे।

जैव ऊष्मा (Vital Heat)

पूर्व शीतलीकरण विधि से फलों का शीतलीकरण होने पर भी वे अपनी श्वसन क्रिया चालू रखते हैं, चाहे उसका श्वसन-क्रम कम ही क्यों न हो। इस श्वसन क्रिया द्वारा उत्पादित ऊष्मा को जैव ऊष्मा कहा जाता है। यह ऊष्मा भी प्रशीतन्त्र तथा प्रशीतन भवनों में तापमान को बढ़ाती है। इसके अलावा प्रशीतन्त्र तथा प्रशीतन या शीतगोदामों को बार-बार खोलने, मोटर आदि यन्त्रों से निकलने वाली ऊष्मा से तथा भीतर चलने वाले विद्युत् लट्टू (बल्ब) से विसर्जित ऊष्मा आदि से भी शीतगोदामों का भीतरी तापमान आपेक्षित तापमान से अधिक हो जाता है। उपर्युक्त सभी कारणों से सम्पूर्ण ऊष्मा भार (टोटल हीट लोड) बढ़ जाता है। इसलिए प्रशीतन–भार गणना के समय इन बातों का ध्यान रखना आवश्यक है।

पूर्व शीतलीकरण का महत्व (Importance of Pre-Cooling)

क्षेत्रीय ऊष्मा को बिना विसर्जित किए ही फल-तरकारियों को शीत गोदामों में रखा जाय तो उसमें से विसर्जित ऊष्मा से फल-तरकारियों का अतिशीघ्र विकृतीकरण होने लगता है। फलों को तोड़ते ही यथाशीघ्र एकत्रित कर, पूर्व, शीतलीकरण कर, शीतगोदामों में रखा जाय तो उतने ही अधिक दिन तक वे परिरक्षित रहेंगे।

यह क्रिया पूर्व अध्यायों में वर्णित जल, वायु, हिम तथा उसके मिश्रण आदि द्वारा सम्पन्न की जा सकती है। इसके लिए फलों के रचना गुणों तथा स्वभाव के अनुसार 30 मिनिट से 24 घंटे तक इस क्रिया के लिए (पूर्व, शीतलीकरण) विधेयक बनाया जा सकता है।

सचयन के लिए जो पूर्व शीतलीकरण क्रिया की जाती है उसके लिए विशेष सुविधाएँ तथा उपस्करों की आवश्यकता होती है। यह क्रिया विभिन्न रीतियों से की जा सकती है। लेकिन यथाशीघ्र फल-तरकारियों से ऊष्मा का निष्कासन अवश्य होना चाहिए। शीतलीकरण क्रम चार कारकों पर निर्भर है, वे हैं—(1) फल या तरकारी प्रशीतक माध्यम कैसे स्वीकृत करता है, (2) प्रशीतक माध्यम तथा फल-तरकारियों के तापमान का अन्तर, (3) प्रशीतक का वेग तथा (4) शीतलीकरण माध्यम आदि।

अर्द्ध शीतलीकरण समय (Half Cooling Times)

फल-तरकारियों में पाये जाने वाले तापमान को आधा कम करने के लिए जितना समय चाहिए, उस समय को अर्द्ध शीतलीकरण समय कहा जाता है। सैद्धान्तिक रूप में यह प्रारम्भिक तापमान होता है जो शीतलीकरण अवधि में प्रायः एक रूप में रहता है। अब हमारे लिए विभिन्न शीतलीकरण विधियों का अध्ययन करना आवश्यक होगा।

शीत वायु से:—एकत्र फल-तरकारियों को उचित स्थान पर यथाशीघ्र पहुंचाकर वहां फैला देना चाहिए ताकि उस पर शीतल वायु लगती रहे और क्षेत्रीय ऊष्मा विसर्जित कराई जा सके। यह क्रिया परिवहन के समय मालगाड़ियों तथा ट्रकों में भी की जा सकती है। फलस्वरूप फल-तरकारियों को उपभोक्ताओं के केन्द्र में स्थित शीतगोदामों में शीघ्र रखा

जा सके। इसके परिवहन तथा पूर्व शीतलीकरण साथ-साथ सम्पन्न होगा। फलस्वरूप समय की बचत भी होगी। लेकिन यह ध्यान रखना आवश्यक है कि परिवहन के समय प्रत्येक फल-तरकारी को ऐसी स्थिति में सजाना चाहिए, जिसमे उन्हें ठंडी हवा लग सके।

हिम टिकियों द्वारा (With Ice Cubes)

फल-तरकारियों को पैकिंग करते समय हिम की टिकियाँ भी बीच-बीच में रख दी जाती है या फलों के चारो तरफ लगादी जाती है, ताकि उसमे से क्षेत्रीय ऊष्मा निकाली जा सके। हरे शाको के परिवहन के समय शाक के शीर्ष पर या बीच-बीच मे हिम-टिकियाँ रखी जाती है, जबकि कन्दवर्गीय शाकों जैसे—मूली, गाजर आदि के शीर्ष पर बर्फ रखी जाती है।

जल द्वारा

32° एफ तापमान के जल मे फल-तरकारियों को डुबोकर या तैराकर पूर्व-शीतलीकरण किया जा सकता है। यह एक आम तरीका है, जो साधारणतया घरों में भी किया जाता है। लेकिन इस विधि के लिए शीतजल निरन्तर प्रवाहित कराते रहना चाहिए तथा एक बार प्रयोग मे लिया हुआ जल पुन. काम मे नही लेना चाहिए, अन्यथा सड़न-गलन के कारक सूक्ष्मजीवों की संख्या उस जल मे बढती जायगी, फलस्वरूप फल-तरकारियों का विकृतीकरण हो जायेगा। भुट्टा, सदाभरी, गाजर, मूली, आडू आदि का उपर्युक्त क्रिया से शीतलीकरण किया जा सकता है। ऊष्मामान के कम या ज्यादा के आधार पर पूर्व शीतलीकरण के समय में भी अन्तर हो सकता है।

निर्वात (रिक्त) विधि (Vacuum Method) द्वारा शीतलीकरण

इस क्रिया मे पूर्व शीतलीकरणीय वस्तुओ को इस्पात से बने एक भीमाकार कोष्ठ में रखा जाकर उसको समुद्रित किया जाता है। फिर उस कोष्ठ का भीतरी दबाव, यान्त्रिक नियन्त्रण द्वारा कम कर दिया जाता है, तब वहाँ वाष्पीकरण प्रारम्भ होता है तथा यह क्रिया पारे (मर्करी) मे 4·6 मिलीमीटर पहुँचने तक जारी रखते हैं। यह दाब निरन्तर चालू रहे तो उसके भीतर रखे हुए फल या तरकारी का तापमान 32° एफ पहुँच जायेगा। इस प्रक्रिया से 1·5 से 4·7 प्रतिशत जल वाष्पीकृत हो जाता है मगर यह वस्तुओं के सम्पूर्ण क्षेत्र से, समान रूप से वाष्पीकृत हो जाने के कारण फल या तरकारी मुर्झित नहीं होते। इसके अलावा हर एक 10° एफ. तापमान की कमी पर 1 प्रतिशत भार जरूर नष्ट हो जाता है। इस कमी को दूर करने हेतु फल-तरकारियों को उपर्युक्त क्रिया के पूर्व ही जल छिड़काकर रखते हैं, ताकि यन्त्र मे रखने से नष्ट न हो सके।

कृषि उत्पादों की उपर्युक्त पूर्व शीतलीकरण विधि 1948 मे कैलीफोर्निया में की गई थी। वहाँ आज यह क्रिया अधिक प्रचलित है। फूलगोभी, हरा मटर, मूली, भुट्टा आदि का पूर्व शीतलीकरण किया जा सकता है। ध्यान रखें, उपर्युक्त किसी भी विधि से शीतलीकरण करें, लेकिन फल-तरकारियों का तुरन्त शीतगोदामों मे रखा जाना अति आवश्यक है।

वायु परिसंचरण (Air Circulation)

शीतल गोदामों के सम्पूर्ण क्षेत्र तापमान को सन्तुलित रखने के लिए वायु परिसंचरण वहाँ आवश्यक है, क्योंकि एक तरफ से वायु जब प्रवेश करती है, तब वायु शीतल होती है। मगर शीतगोदामों में रखी हुई वस्तुओं (फल-तरकारी) के सम्पर्क में आकर जब वायु आगे बढ़ती है तो उसमें पदार्थ से शोषण की हुई ऊष्मा शामिल हो जाती है। फलस्वरूप ताप बढ़ जाने के कारण वायु में शीतलता कम हो जाती है। इसलिए जिस स्थान से वायु गोदामों से बाहर निकलती है उसके आस-पास गोदामों में रखे हुए पदार्थ से वायु उतनी ऊष्मा शोषण नहीं कर पाती, जितनी गोदामों के भीतर प्रवेश करते ही ग्रहण करती है। इस कमी को दूर करने के लिए गोदामों के बीच से शीतल वायु प्रवेश कराकर चारों ओर दीवारों की तरफ तथा वहाँ से नीचे से होते हुए पदार्थों के चारों ओर घुमती हुई संचरित करवाई जाती है। इस प्रकार ऊष्मा ग्रहण करती हुई वायु को पुनः गोदामों के बीच से ही बाहर निकाल दिया जाता है।

यदि फल-तरकारियों की क्षेत्रीय ऊष्मा निकाली गई है, तो उस वस्तु के लिए आपेक्षित वायु वेग (6000 वर्ग फीट प्रति मिनिट के अनुपात में) की आवश्यकता नहीं होगी, किन्तु गोदामों में फिर 50–75 रेखीय पट्टि के अनुपात से वायु संचार आवश्यकता होगी तथा यह वायु सारे शीतल गोदाम में सन्तुलित रूप से संचारित करते रहना चाहिए। इससे आर्द्रता-नियन्त्रण भी सम्भव होगा। अगर वायु परिसंचरण का वेग दुगुना कर दिया जाये तो गोदामों में रखे हुए फल-तरकारियों में से 1/3 भाग आर्द्रता नष्ट हो जायेगी। अगर गोदामों की आर्द्रता इसमें रखे गए पदार्थों में पाये जाने वाले जलांश से कम होती है तो वहाँ शुष्कता उत्पन्न होगी। फलस्वरूप फल-तरकारी का निर्जलीकरण हो जायेगा, क्योंकि वायु गोदाम में रखे हुए पदार्थों (फल-तरकारी) से नमी प्राप्त कर लेगी। इसलिए गोदामों के भीतर रखे हुए पदार्थ की जल-धारिता के अनुपात में गोदामों के भीतर की वायु में भी आर्द्रता होनी चाहिए, अन्यथा फल-तरकारियाँ अलस जावेगी।

शीत गोदामों में पैकेजों का अन्तरालन (Package Spacing in Cold Storage)

शीत गोदामों के लिए फल तरकारियों को किस प्रकार वाहिकाओं में भरना चाहिए तथा उनको किस विधि से सजाना चाहिए ये बातें शीतगोदामीकरण में बहुत महत्त्व रखती हैं। इन बातों का ध्यान रखने पर ही शीतलीकरण क्रिया सुचारु रूप से फल तरकारियों में (अन्य खाद्य पदार्थों की तरह) हो सकेगी। अव्यवस्थित रूप से भरने से गोदामों में वायु परिसंचरण प्रणाली चाहे कितनी ही सुव्यवस्थित क्यों न हो, उपयोग शून्य होगी। भिन्न-भिन्न अन्तराल से वायु का प्रवाह समान रूप से न रह कर खंडित होकर प्रवाहित होने लगता है, फलस्वरूप गोदामों में शुष्क वायु खण्ड उत्पन्न होगा। इससे फल तरकारियाँ कहीं शीतलीकृत हो जाती हैं तो कहीं नहीं हो पाती। फलस्वरूप फल तरकारियाँ कहीं पकी हुई मिलती हैं तो कहीं विकृत रूप में। कहने का तात्पर्य यह है कि शीतल गोदामों में परिरक्षण अपूर्ण रहेगा। इससे आपको यह ज्ञात हो गया होगा कि शीत गोदामों में पदार्थों को रखते समय हर एक पैकेट दूसरे पैकेट से निश्चित अन्तराल पर होना चाहिए।

फिर भी यह आम तौर पर कहना कठिन है कि एक ही वस्तु या वस्तुओं को भिन्न-भिन्न परिमाणों की वाहिकाओं में भर कर रखा जावे तो अन्तरालन कितना होना चाहिए। अगर एक ही पदार्थ समान परिमाण की वाहिकाओं में भरकर हमेशा रखा जाता है तो परस्पर रेखाएँ दी जा सकती है, ताकि अन्तराल का संकेत मिल सके। फिर भी सेवों की पेटियों के लिए 5 से 7.5 से० मी० (2 से 3 इन्च) अन्तराल की आवश्यकता होती है, ताकि वायु संचालन पंक्तियों के साथ-साथ हो सके तथा चारों ओर की दीवारों से करीब 10 से 20 से० मी० (4 से 8 इन्च) अन्तराल भी आवश्यक रूप से देना चाहिए, ताकि शीतलवायु प्रत्येक पैकेट के चारों ओर पहुंच सके। साथ ही यह भी देखना चाहिए कि भीतरी छत तथा फर्श पर से भी वायु संचालन हो सके। इसके लिए फल-तरकारी वाहिकाओं को फर्श से थोड़ा ऊँचा तथा भीतरी छत से थोड़ा नीचे रखना अति आवश्यक है। पंक्तियों की आपसी दूरी 10 से 15 से मी (4 से 6 इन्च) रखनी चाहिए। उपर्युक्त विधि की सफलता के लिए सेवों को पेटियों तथा कागज के डिब्बों में सजा-सजा कर पैकिंग कर शीत-गोदामों में निर्धारित अंतराल से रखा जाता है।

इस सम्बन्ध में अधिक जानकारी जैसे अम्बार (चट्टा) लगाने की विधियाँ, विभिन्न वाहिकाओं का अन्तराल, वायु परिसचरण आदि के लिए रिफ्रिजरेशन एण्ड कोल्डस्टोरेज सम्बन्धी ग्रन्थों का अध्ययन करें।

आपेक्षिक आर्द्रता (Relative Humidity)

वायु में पाई जाने वाली नमी को आपेक्षिक आर्द्रता के नाम से जाना जाता है, जो प्रतिशत में नापी जाती है। 80 प्रतिशत आपेक्षिक आर्द्रता का अर्थ है, एक सीमित तापमान पर निश्चित स्थान की वायु में 80 प्रतिशत नमी वाष्पीय रूप में है। वायु की जलधारण-शक्ति तापमान की वृद्धि में अधिक तथा तापमान की कमी में न्यून होगी। कहने का तात्पर्य यह है कि 70° एफ० पर 90 प्रतिशत आपेक्षिक आर्द्रता होगी, तो उसी वायु को अगर 32° एफ० पर लाया जाय तो आर्द्रता कम होगी।

इसी प्रकार शीत-गोदामों में पाई जाने वाली आर्द्रता भी, उनके भीतर रखे हुए फल तरकारियों तथा उसके परिरक्षण गुणों में भी प्रभाव डालती है। अगर फलों के लिए निर्धारित आर्द्रता शीतल गोदामों में नहीं पाई गई तो, आहार खराब हो सकते हैं। शीतल-गोदामों में आवश्यक आर्द्रता (फल तरकारियों के लिए) सारणी संख्या 4 में उल्लेखित है। अगर आर्द्रता कम हो जाय तो फल तरकारियों से नमी शोषण करेगी, फलस्वरूप निर्जलीकरण से फल तरकारियाँ मुर्झाने लगती हैं। इसके विपरीत आर्द्रता आवश्यकता से अधिक हो जाय तो वे सड़ने-गलने लगती हैं। इसके अलावा 100 प्रतिशत आर्द्रता हो जाय तो गोदामों के भीतर पानी टपकने लगता है, तथा शीत भवनों की भीतरी छत तथा दीवारों, फल-तरकारियों पर फफूंदी लगने की भी पूरी सम्भावना रहती है।

नमी नियन्त्रण के लिए आज कल आधुनिक उपकरणों का भी प्रयोग किया जाता है जैसे :—साइक्रोमीटर (Psychrometer)। अतः तापमान में उपरोक्त वर्णनानुसार आर्द्रता बनाई रखनी चाहिए।

शीतल गोदामों की वायु में समुचित आपेक्षिक आर्द्रता उपलब्ध कराने के लिए, उच्च कोटि के रोधकों का प्रयोग करना चाहिए ताकि शीतलता बाहर न निकल सके।

शीतल-गोदामों की वायु में आवश्यकतानुसार आर्द्रता बनाये रखने के लिए उच्च कोटि के रोधकों, गोदामों की भीतरी शीतलता बनाये रखने के लिए लीक (रिसना) रोधक तथा अधिकाधिक शीतनकारी सतह प्रदान करना आदि बहुत आवश्यक है, ताकि गोदामों के भीतर रखी हुई फल तरकारियों में वांछित तापमान और प्रशीतक के तापमान के बीच में कम अन्तर रह सके।

अगर रिफ्रिजरेटिंग (Refrigerating) सतह का 30° एफ० पर शीतलीकृत किया जाय तथा सतह तापमान 25° एफ० हो तो वायु की आपेक्षिक आर्द्रता 78 प्रतिशत होगी, और इससे अधिक जल वाष्प पानी के रूप में टपकने लगेगा। फिर भी 27° एफ० तापमान पर वायु रिफ्रिजरेटिंग सतह पर लगती रहे तो आपेक्षिक आर्द्रता 89 प्रतिशत होगी, तथा वायु व रिफ्रिजरेटिंग सतह का तापमान का अन्तर एक डिग्री (1° एफ०) होगा तो आपेक्षिक आर्द्रता 94 प्रतिशत तक मिलने की सम्भावना रहती है। उपर्युक्त अवस्थाओं में प्राप्त यथार्थ आर्द्रता (रिफ्रिजरेटिंग सतह तथा वायु तापमान) कुछ अधिक होगी क्योंकि सम्पूर्ण वायु रिफ्रिजरेटिंग सतह पर नहीं लगती।

शीत गोदामों के भीतर आर्द्रता बनाये रखने के लिए कई उपाय किये जाते हैं, उसमें एक है—"जैकेट प्रणाली" (Jacket System) जो कैनेडा जैसे विकसित देशों में प्रयुक्त की जाती है ताकि आर्द्रता नष्ट न हो सके। लेकिन यह आम-तौर पर हिमीकृत आहारों को सुरक्षित रखने के लिए ही काम में ली जाती है। जैकेट प्रणाली से 100 प्रतिशत आपेक्षिक आर्द्रता सम्भव है और शीतल गोदामों के वाष्प रोधकों में पानी भी नहीं टपकेगा। प्रशीतक कुण्डलियों पर हिम-निर्माण भी इससे बहुत कम होता है, लेकिन इसमें दोष भी कम नहीं। इसका निर्माण तथा बिजली खर्च विकसित देशों के लिए भी बहुत भारी पड़ता है। पूर्व शीतलीकरण भी बहुत धीमी होता है। श्वसन क्रिया से उत्पन्न ताप को निकालना भी कठिन है। गोदामों की भीतरी छत से तथा दीवारों से पानी भी टपकता रहता है। उच्च आपेक्षित आर्द्रता से सूक्ष्मजीवियों की वृद्धि भी अधिकाधिक होती है।

ताप उपापचय तथा ताप स्थिरता इत्यादि (Temperature Metabolism and Temperature Constant)

हम भली-भांति जान चुके हैं कि जीवित ऊतकों के उपापचय क्रिया के लिए ताप
अति आवश्यक है तथा जीव समुदाय को अपनी शारीरिक वृद्धि के लिए एक सीमित ताप-
मात्रा अनिवार्य है। इस तापमात्रा में वृद्धि हो जाय तो उसका नाश कम
जाने पर उपापचय क्रिया धीमी पड़ जायेगी। जल हिमीकरण के लिए
उस ताप (अल्प) पर श्वसन क्रिया मग हो जायेगी। इस [illegible] के
पता लगा कि खाद्य सामग्रियों का परिरक्षण किया जा ।
अभिक्रिया आधी हो जायेगी। पुनः 18° एफ० तापम
पुनः आधी हो जायेगी। अर्थात् 32° से 34° एफ०
कम ही नहीं करती, अपितु विकृतियों के प्रेरक सूक्ष्
है (सारणी संख्या 2 देखिये)।

सारणी संख्या—2

तापमान का प्रभाव

(1) तापमान 0⁰ एफ० पर	(2) प्रभाव
—80	हिमीकृत उत्पादों मे जलांश परिपूर्ण रूप से क्रिस्टलीकृत हो जाता है।
—20 से —38	साधारण खाद्य सामग्रियों का हिमीकरण हो जाता है।
0 से.10	हिमीकृत आहारों का गोदामीकरण ताप या इस ताप पर शीत गोदामों में हिमीकृत आहारों को रखा जाता है।
32	जल हिमीकरण ताप। अगर सूक्ष्मजीव जल मे ही तो उसकी वृद्धि धीमी पड़ जायेगी।
40	इस तापमान पर (12—24 घण्टों के अन्दर) जीवाणु दुगुने हो सकते हैं।
50	इस तापमाप पर (12—24 घण्टों मे) जीवाणु पाँच गुने हो जाते हैं।
60	12 से 24 घण्टों मे जीवाणु पन्द्रह गुणा वृद्धि करता है।
70	12 से 24 घण्टों मे जीवाणु सात सौ गुणा वृद्धि करता है।
80	12 से 26 घण्टों मे जीवाणु तीन हजार गुणा वृद्धि करता है।
98·6	मानव शरीर का औसत तापमान (नीरोग)।
101	नीरोग गाय के शरीर का औसत तापमान।
115	वाहिकाएँ, उपकरण आदि धोने योग्य जल का तापमान।
135	कास्टिक सोडा जल का तापमान जो बोतलों को धोने के काम में लिया जाता है।
138	इस तापमान में ब्रूसेल्ला (अन्द्रावम), आन्त्र-ज्वर, पेचिश जीवाणु तथा रोगजनक स्ट्रेप्टोकोकाइ आदि को 30 मिनट के अन्दर ही नष्ट कर देते हैं।
165	इस तापमान पर आहार का पाचकीकरण आरम्भ होता है।
170	इस तापमान के जल मे पाँच मिनिट रखा जाय तो बर्तन, वाहिकाएँ निर्जर्मीकृत हो जाती हैं।
200	इस तापमान वाले भाप कोष्ठ में पाँच मिनिट बर्तनों (वाहिकाओं) को रखा जाय तो निर्जर्मीकृत हो जाएँगे।
212	मानव दबाव के जल क्वथनांक इस ताप पर वनस्पति कोशिकाएँ अल्प समय के अन्दर ही मर जायेंगी।

नोरमेन० डब्लू० डिस्रोसियर 1970

क्योंकि फल-तरकारियों की श्वसन क्रिया, उपापचय क्रिया चालू रहती है। तदनुसार ऊष्मा उत्पन्न हो जाती है, फलस्वरूप कार्बनडाई ऑक्साइड उपोत्पाद के रूप में पैदा होगी। इसके लिए पौधों के ऊतक में पाये जाने वाले कार्बन—मे विशेषकर शर्करा में पाई जाने वाली कार्बन—मे क्रिया कर विभिन्न अपघटन उत्पाद पैदा होती है जिसकर आगिरी

उत्पाद कार्बनडाई ऑक्साइड तथा जल होगा। इस प्रक्रिया से ऊर्जा विसर्जित होती है, जो ऊष्मा के रूप में पायी जाती है—



$$C_6H_{12}O_6 + 6O_2 \rightarrow 6CO_2 + 6H_2O$$

उपर्युक्त ऊर्जा हर वस्तु पर भिन्न-भिन्न रूप से होगी। इसके अलावा तापमान बढ़ने के अनुपात पर ऊर्जा भी बढ़ती रहेगी जो 100° एफ० तक चलेगी। यह कथित जैव ऊष्मा भी प्रशीतन भार का अंग बनी रहेगी। अतः फल-तरकारियाँ शीतल गोदामों में रखते समय ध्यान रखने की आवश्यकता होती है, जिसके बारे में पूर्व शीतलीकरण क्रिया के अवसर पर चर्चा की जा चुकी है। शीतल गोदामों रखते समय हर एक वस्तु कितनी मात्रा में ऊष्मा विसर्जन करती हैं, इसका क्रम सारणी संख्या 3 में उल्लेखित है।

सारणी संख्या—3

विभिन्न तापमान पर ताजा फल-तरकारियों को गोदामीकरण के समय उसमें से निकलने वाली ऊष्मा का विकास अनुपात।

(Rate of evolution of Heat by fresh fruits and vegetables when stored at various temperatuses)

फल तथा तरकारी का नाम	सूचित तापमान पर 24 घण्टों में औसत प्रतिटन ब्रिटिश थर्मल यूनिट		
	32° एफ०	40°–41° एफ.	59°–60°एफ०
(1)	(2)	(3)	(4)
सेब (आपल)	500–900	1100–1600	3000–6800
खूबानी (अप्रीकाट्स)	—	1800–8300	8300–15100
कच्चा केला	—	—	4600–5100
केला (फल)	—	—	5500–16500
रसबरीज	3900–5500	6800–8500	18100–22300
स्ट्राबरीज	2700–3900	3600–7300	15600–20300
चकोतरे	—	700–1300	2200–4000
लैमन	500–900	600–1900	2300–5000
कागजी नींबू (लाइम पेरसियन)	—	300–1300	1300–2300
सन्तरा (ओरेन्ज)	400-1100	800–1600	2800–5200
अंगूर (ग्रेप विनिफेरा)	300–500	700–1300	2200–2600
आम (मैंगो)	—	2200–4800	–9900
तरबूज (वाटर मैलन)	—	700–900	— —
पपीता (पपाया)	—	900–1300	3300–4800
आड़ू (पीच)	900–1400	1400–2000	7300–13200
नासपाती (पीयर्स बार्टलैट)	700–1500	1100–2200	3300–13200
अनन्नास (पैयनापिल्स)	—	300–500	2900–4000

(2)	(2)	(3)	(4)
प्लम्स	400–700	900–2000	2600–2800
अंजीर (ताजा)	—	2400–2900	10800–13900
		तरकारी	
सदाबरी (प्रासपारागस)	6200–13200	1300–23100	25500–51500
सेम (बीन्स-लीमा)	2300–6600	4300–7900	22000–27400
सेम (लीमा) दाना	3900–7700	6400–13400	— —
चुकन्दर बिना पत्ता (बीट)	–2700	–4100	–7200
पत्तागोभी (कैबेज)	1000–1400	1700–2700	4000–5700
गाजर (कैरट्स)	2100–4500	2800–5800	5700–11800
फूलगोभी (कालीफलावर)	3600–4200	4200–4800	9400–10800
खीरा (कुकम्बर्स)	—	—	3300–7300
लहसुन (गारलिक)	900–3100	2000–7300	3100–6400
कुकुरमुत्ता (मशरूम)	6200–9600	–15600	— —
प्याज (ग्रोनियन्स)	600–700	700–800	2300–2500
प्याज हरा (ग्रोनियन ग्रीन)	2300–4900	3800–15000	14500–21400
भिण्डी (ग्रोकरा)	—	11600–12900	30400–33700
ग्रालू (पोटेटो)	—	600–1900	1300–2600
मूली बिना पत्ता (रैडिस्)	700–2100	1300–2900	4900–9300
पालक (स्पाइनाक)	7200–4900	7600–12700	29500–49200
शकरकंदी (स्वीट पोटेटो)	—	—	–6300
हरा टमाटर (टमाटो ग्रीन)	—	1100–1800	3600–6200
लाल टमाटर (टमाटो रैड)	—	–1300	5300–6400
हरा मटर फली मे (पीस, ग्रीन इन्पौडं)	7600–10300	12100–16800	39300–44500
हरा मटर का दाना	10400–16600	17400–21400	— —

—संयुक्त राज्य ग्रमेरिका के कृषि विभाग के एग्रीकल्चर हैण्ड बुक नम्बर 66 से उद्धृत ।

उपर्युक्त सारणी से यह मालूम हो जाता है कि भिन्न-भिन्न पदार्थों में से भिन्न-भिन्न मात्रा में ऊष्मा विसर्जित होती है । पालक, हरा मटर, नासपती, ग्राडू, सेव ग्रादि का श्वसन क्रम बहुत ग्रधिक होता है, फलस्वरूप उसमें से विसर्जित ऊष्मा मात्रा भी ग्रधिक होती है । परन्तु ग्रंगूर, ग्रालू, प्याज इत्यादि का श्वसन क्रम उपर्युक्त पदार्थों के विपरीत कम होता है, इसलिए पदार्थों के गुण के ग्राधार पर ही गोदामों की ग्रशीतन मात्रा को भी बढ़ाते-घटाते रहना चाहिए । इसके ग्रतिरिक्त गोदामों में रखे जाने वाले पदार्थ के प्रारम्भिक ताप (Intial Temperature) श्वसन क्रम, उसमें से विसर्जित ऊष्मा, ग्रापेक्षित गोदामों में रखने के समय पाये जाने वाले तापमान, रखने वाले पदार्थ के कुल भार ग्रादि को दृष्टि में रखना ग्रति ग्रावश्यक है, क्योंकि सचेतन (सजीवोदक) ऊर्जा को ऊष्मा के रूप में विसर्जित

करता है। इसको ब्रिटिश थर्मल यूनिट (ब्रिटिश ऊष्मा ताप) तापमान में ही नापा जाता है। फल तरकारियाँ भी सजीव है। विविध फल तरकारियाँ शीत गोदामों में रखी गई तो वहाँ 37.8° से० ग्रे० (100° एफ०) तक ताप पाया गया, अर्थात् कुछ तो इससे (37.8° सी या 100° एफ०) से श्वसन क्रिया कम होती थी। इन्हीं कारणों से कुछ पदार्थों को अधिक प्रशीतन मात्रक तथा कुछ अन्य पदार्थों को अल्प प्रशीतन मात्रक की आवश्यक होती है।

454 ग्राम (एक पौण्ड) जल को 1° एफ० पहुंचाने के लिए जितनी मात्रा में ऊष्मा की आवश्यकता होती है, उतनी ऊष्मा को ही 1 ब्रिटिश थर्मल यूनिट (ब्रिटिश ऊष्मा मान) कहा जाता है। अगर एक पदार्थ की आपेक्षिक ऊष्मा ज्ञात हो जाए तो प्रशीतन भार की गणना की जा सकती है।

आहार तथा आपेक्षिक ऊष्मा (Food & Specific Heat)

आपेक्षिक ऊष्मा पर विचार से पूर्व देखें की ऊष्मा क्या है? ऊष्मा ऊर्जा का एक रूप है, जो कैलोरी या ब्रिटिश थर्मल यूनिट में नापा जाता है। यह ऊष्मा ही वाष्पीकरण पाचकी करण, निर्जलीकरण आदि कार्य करती है।

454 ग्राम जल को वाष्प बनाने में करीब 1000 ब्रिटिश थर्मल यूनिट या कैलोरी की आवश्यकता होती है इसको ही वाष्पीकरण गुप्त ऊष्मा (Latent Heat of Vapourization) कहते हैं। ठोस वस्तुओं को द्रव्य में या द्रव्य को गैस में रूपान्तरित करने के लिए आवश्यक ऊष्मा को गुप्त ऊष्मा कहा जाता है। परन्तु जिस तापमान पर वाष्पीकरण होता है, उसके आधार पर अन्तर आ सकता है।

आपेक्षिक ऊष्मा (Specific Heat)

एक ग्राम पदार्थ को एक डिग्री से० पर पहुंचाने के लिए जितनी ऊष्मा चाहिए, उसको आपेक्षिक ऊष्मा कहते हैं या हर एक द्रव्य मात्रा की ऊष्मा धारिता (Thermal Capacity) को आपेक्षिक ऊष्मा कहते हैं।

ऊष्मा धारिता (Thermal Capacity)

एक सीमित या प्राप्त वस्तु के द्रव्य को 1 डि० ग्रे० सी० तक पहुंचाने के लिए कितनी ऊष्मा चाहिए, उस ऊष्मा को ही ऊष्माधारिता कहते हैं।

हर एक खाद्य पदार्थ की आपेक्षिक ऊष्मा जानने के लिए प्रशीतन-भार गणना आवश्यक है।

आपेक्षिक ऊष्मा = 0.008 (आहार में जल आर्द्रता प्रतिशत) + 0.20 (Specific Heat) = 0.008 (H_2O % in Food) + 0·20)। उदाहरणार्थ :—सेब की सांद्रता 84 प्रतिशत हो तो उसकी आपेक्षिक ऊष्मा की गणना इस प्रकार की जा सकती है :—

$$\text{आपेक्षिक ऊष्मा} = 0.008 \times 84 + 0.20 = 0.87$$

अन्य फल तरकारियों की यथार्थ आपेक्षिक ऊष्मा की जानकारी के लिए संख्या 4 देखें।

प्रशीतन भार गणना (Calulcation of Refrigeration Load)

प्रशीतन भार को साधारणतया टनों में माना जाता है, अर्थात् प्रशीतन टन उस समय से चले आ रहे हैं, जब से प्राकृतिक हिम से प्रशीतन किया जाता रहा है।

एक टन हिम को 24 घण्टो में 32° एफ या (0° सी०) पर द्रवीकरण (जल बनाने) के लिए आवश्यक ऊष्मा को ही एक माननीकृत प्रशीतन टन कहा जाता है।

माना कि सेब की आपेक्षिक ऊष्मा 0 87 है उसका तापमान 62° एफ० है, तो ऐसे सेबों का 32° एफ० पर संचयन करना है, कुल फल का वजन 1 टन है, तथा उनका 5 दिन तक शीतलीकरण करना है तो कितना प्रशीतन, टनों के हिसाब, से आवश्यकता होगी ताकि यन्त्र को चलाया जा सके।

1. 1 टन सेबो के तापमान को 62° – 32° तापमान पर लाने के लिए हमे उसमे से विसर्जनीय ऊष्मा मात्रा = 30 × 0·87 × 2000 बी० टी० यू० होगा।

= 52200 बी० टी० यू०

इसलिए 1 टन सेबों में 52200 बी० टी० यू० सवेद्य ऊष्मा होती है।

2. इस 1 टन फल को 5 दिन तक ठण्डा रखना है तथा हमको यह साबित करना है। कि इस समय मे कितनी ऊष्मा विसर्जित होगी। उपर्युक्त सारणी में देखें, तो सेबों मे औसत 700 बी० टी० यू० 32° एफ० पर, 1050 बी० टी० यू० 40°—41° एफ पर, तथा 4900 बी० टी० यू०, 59°—60° एफ० पर होगा। यह देखा गया है कि फलो का शीतलीकरण करते समय उसमे से उत्पन्न ऊष्मा उसके शीतलीकरण के लिए रखे हुए समय के अनुपात में होती है। उपर्युक्त फलो द्वारा ऊष्मा विसर्जन क्रम कितना है, इसी का भी हमको अनुमान लगाना है। यह एक अनुमान होते हुए भी प्रशीतन भार गणन के लिए बहुत लाभप्रद है। 32° तथा 60° एफ पर सेवों के श्वसन क्रम से विसर्जित ऊष्मा को जोड़कर उसका औसत निकालना होगा। इसके लिए आप सारणी संख्या 3 को देखें तो 32° एफ० पर पायेंगे कि सेबों की विसर्जित ऊष्मा 24 घण्टों मे 500—900 बी० टी० यू० है। इसलिए औसत विसर्जित ऊष्मा, 24 घण्टों मे 700 बी० टी० यू० पायेंगे।

इसी प्रकार 60° एफ० के लिए आप सारणी मे 59°—60° एफ० पर पायेंगे कि विसर्जित ऊष्मा 3000—6800 बी० टी० यू० है। अर्थात् औसत 24 घंटो में 4900 बी० टी० यू० होगा, अर्थात् 32° तथा 59° से 60° एफ पर औसत अर्थात् 32° एफ० पर = 700, 59°—60° = 4900।

दोनो का औसत $= \frac{700 + 4900}{2} = 2800$ बी० टी० यू० ऊष्मा एक टन सेब से 24 घंटो मे विसर्जित होगी।

3. अब क्षेत्रीय ऊष्मा और श्वसन ऊष्मा दोनो को जोड़ने से 32° एफ० पर 5 दिन तक सेबों को ठण्डा रखने के लिए 52,200 + 14,000 = 66200 बी० टी० यू० होगी।

4. यह प्रमाणित किया गया है कि एक टन हिम को 32° एफ० पर शीतलीकरण के लिए जितनी बी० टी० यू० ऊष्मा चाहिए वह एक टन प्रशीतन के बराबर होती है, अर्थात् 288,000 बी० टी० यू०।

5. एक टन सेबों को 5 दिन के लिए चाहिए 662,00 बी० टी० यू० । अब इस संख्या को 288,000 बी० टी० यू० से भाग दिया जाय तो मिलेगा—

$$= \frac{66200}{288000} = 0.23$$

आवश्यक प्रशीतन क्षमता 1 टन सेबो के लिए चाहिए—

= 0.23 टन्स (Tons)

शीतलीकरण क्रिया को पूरा करने के लिए आवश्यक प्रशीतन भार गणना में कुछ अन्य बातों को भी ध्यान मे रखना आवश्यक है, जैसे—गोदामों का क्षेत्रफल, ऊष्मारोधक तथा उसकी किस्म, व उसकी मोटाई, पेटियो का वजन, गोदाम द्वार खुलने का समय, उसके भीतर प्रविष्ट वायु, (सेवो को रखते समय तथा प्रशीतन काल के बीच में कई बार गोदामों के अन्दर जाना पड़ता है), गोदामों के भीतर लगे हुए विद्युत बल्बो की संख्या, उनकी तापशक्ति, उनके जलने की अवधि, भीतर प्रवेश करने वाले व्यक्तियों की सख्या तथा उनके शरीर से निकलने वाली ऊष्मा आदि को भी कुल प्रशीतन भार-गणन मे जोड़ा जाना आवश्यक है, इसलिए कुल प्रशीतन भार गणना को विस्तृत अध्ययन करने के लिए आप रिफ्रिजरेशन इन्जिनियरिंग पर आधारित ग्रन्थ का अध्ययन करें या किसी रिफ्रिजरेशन इन्जिनियर से सलाह लें।

शीत गोदामों में सफाई तथा शुद्धता (Sanitation in Cold Storage)

शीत गोदामो में सफाई तथा शुद्धता की अति आवश्यकता होती है। महीनो तक उच्च आपेक्षिक आर्द्रता 31° एफ० में भी अगर गोदाम को चलाते रहे तो भी पैकेजो के ऊपर, दीवारों, तथा भीतरी छतो पर फफूंदी लग सकती है, लेकिन यह सतह फफूंदी फल तरकारियो मे सड़न-गलन उत्पन्न नही करेगी। परन्तु वाहिकाएं बार-बार काम में ली जाती रहे तो उनमे भरे जाने वाली फल तरकारियां सड़ सकती हैं, क्योकि उन वाहिकाओं में सूक्ष्मजीव लगे हुए होते हैं। इनको रोकने का एक मात्र उपाय यह है कि वाहिकाओं को बार-बार काम में न लिया जाय। यदि लिया भी जाय तो उनको भरने के पहले धूप दिखावें या कोई उचित फफूंदी नाशक घोल से धोवें या शक्तियुक्त भापोपचार कर सूक्ष्मजीवियो को नष्ट कर दें। गोदामों मे सूक्ष्मजीवियों को दूर रखने के लिए एक मात्र उपाय यह है कि समय-समय पर गोदामो मे वायु संचारण कराते रहें। गोदाम खाली होते ही तुरन्त सफाई करा देनी चाहिए, ऊपरी छत तथा दीवारो मे सफेदी करानी चाहिए, यह क्रिया जहाँ तक सम्भव हो सके स्प्रे द्वारा करावें। फर्श तथा दीवारो मे काई जम जाय तो सोडियम हाईपो क्लोराइड या ट्राईसोडियम फोसफेट युक्त सफाईकारी द्वारा रगड़ कर धोना चाहिए, तुरन्त फर्श को अच्छी तरह शुद्ध पानी से धोकर कुछ समय के लिए वायु प्रवेश योग्य बना देना चाहिए। जैसा कि पहले ही बताया गया है कि पेटियों तथा उपस्करो को 0·25 प्रतिशत कैल्शियम हाईपो क्लोराइड घोल से साफ करें या भापोपचार करें। विकसित देशो में 85 प्रतिशत कार्बनडाई ऑक्साइड तथा 15 प्रतिशत इथलिन युक्त धूमीकरण द्वारा भी गोदाम साफ किये जाते हैं। वायु का भी शुद्धीकरण आवश्यक है। गोदामो मे जहाँ सुगन्ध या दुर्गन्ध के कारक जो वाष्पशील होते हैं, वे गोदामों की वायु में मिल

जाते हैं, फलस्वरूप गंधित हो जाते हैं, क्योंकि इस प्रकार की सुगन्ध या दुर्गन्ध दोनों ही दूसरी वस्तु की प्राकृतिक सुगन्ध के ऊपर प्रभाव डालती है, इसलिए इसे दूर करना अति-आवश्यक है। यह क्रिया खासतौर से वहाँ काम में ली जाती है जहाँ फल तरकारियाँ संचित की जाती हैं। इसको दूर करने के लिए गोदामों के भीतर भिन्न-भिन्न स्थानों में उत्प्रेरित नारियल की खोपड़ी का कोयला रखा जाता है, जिसका परिमाण 6–14 मेष (6–14 Mesh activated Coconut shall Carbon) होगा। यह खासतौर से फल तरकारी संचयनीकृत गोदामों में ही काम लेते हैं जहाँ नियन्त्रित वातावरण में (Controlled Atmosphere) संचयन करना हो। क्योंकि फल पकते समय उसमें से वाष्पशील जैव पदार्थ निकलते हैं जो गोदामों की भीतरी वायु में लीन हो जाते हैं। ये कुछ तो सुगन्धित होते हैं और कुछ दूसरी वस्तुओं के सहयोग से दुर्गन्धित हो जाते हैं। दोनों ही गोदामों के भीतर रखे हुए अन्य पदार्थों की सुगन्ध पर विपरीत प्रभाव डालते हैं, जहाँ एक ही गोदाम में भिन्न भिन्न फल-तरकारियाँ संचित की हुई हो।"

कुछ लोग, खास तौर से यूरोपीय देशों में, गोदामों की भीतरी वायु को जल द्वारा दूर करते हैं, वाष्पशील सुगन्ध या दुर्गन्ध पानी में घुल जाती है तथा गोदाम से निष्कासित हो जाती है। इसके लिए वे जेटस्प्रे काम में लेते हैं। इससे दो फायदे हैं, एक तो गन्ध दूर होती है, दूसरे गोदामों की भीतरी आपेक्षिक आर्द्रता बनी रहती है तथा फलों का वजन भी यथावत् बना रहता है और फल-तरकारियाँ मूर्च्छित भी नहीं होतीं। इस क्रिया से फल को शीघ्र पकने में मदद भी मिलती है।

प्रशीतन सपूरक (Supplements to Refrigeration)

फल-तरकारियों को विकृतियों से बचाने का एक उच्च कोटि का प्रयोग है, प्रशीतन क्रिया। फिर भी कुछ सपूरकों को काम में लिया जा सकता है ताकि संचयन अवधि को कुछ और आगे बढ़ाया जा सके। यह क्रियाएँ फल-तरकारियों को उनके प्राकृतिक रूप में ही परिरक्षित करने के लिए काम में ली जाती हैं। सपूरकों को आप प्रतिस्थापी न समझें। प्रशीतन संपूरक निम्न प्रकार के हैं :—

(1) नियन्त्रित-वातावरण संचयन, (2) रासायनिक उपचार तथा धूमीकरण, (3) मोमलेपन, (4) अणुविकिरण, (5) संरक्षण पैकीकरण, इत्यादि।

(1) नियन्त्रित वातावरण संचयन
(Controlled Atmosphere Storage)

प्रशीतन से श्वसन क्रिया कम हो जाती है, फलस्वरूप परिरक्षण अवधि बढ़ जाती है। कुछ विशेष फल-तरकारियों में श्वसन, फल पकने की क्रियावेग, सड़न तथा अन्य कार्यिक विकृति को उस समय और रोका जा सकेगा जब हम ऑक्सीजन के स्तर को न्यून करें या कार्बनडाई ऑक्साइड के स्तर को गोदामों की वायु में उत्पन्न करें या दोनों का संयुक्त प्रयोग करें। फलस्वरूप संचयन द्वारा परिरक्षण अवधि को बढ़ाया जा सकता है। इसके लिए मुख्य हिम की गोदामों में रख कर कार्बनडाई ऑक्साइड की मात्रा को 10—45 प्रतिशत बढ़ा कर अल्पकालीन संचयन किया जा सकता है। इस क्रिया का परिवहन समय में भी प्रयोग किया जा सकता है। खास तौर से यह प्रयोग विभिन्न नरम फल (रसभरी,

रसबरीज) तथा मीठी चेरीज पर विशेष लाभप्रद है, क्योंकि कार्बनडाई ऑक्साइड फल-तरकारियों की प्राकृतिक सुन्दरता को बनाए रखता है, साथ ही विकृतियों से भी मुक्त रखता है।

नियन्त्रित वातावरण सचयन, प्रशीतन मे ऑक्सीजन तथा कार्बनडाई ऑक्साइड दोनों के स्तर को सतर्कता से नियन्त्रित करते हैं। इस विधि से सेब तथा नासपातियों को जितने समय प्रशीतन द्वारा परिरक्षित किया जा सकता है, उससे दुगुने समय नियन्त्रित वातावरण सचयन से सम्भव किया जा सकता है।

इसके अलावा नासपाती, सैब, मीठी चेरीज आदि को पोलिथिलीन कागज मे लपेट कर, पेटियों मे रख कर पैक किया जाय, चाहे उसके साथ शुष्क हिम रखे या न रखें। इस प्रकार के संचयन को रूपांतरित वातावरण संचयन कहा जाता है।

नियन्त्रित वातावरण संचयन-सिद्धात खास तौर पर सेबो पर की जाती है जो व्यापार के लिए होती है। यह क्रिया विशेष रूप से जोनाथान, यल्लोन्यूटन, मिग्नोट्स (Megnotos) आदि सेब के किस्मों पर प्रयुक्त की जाती। क्योंकि उपरोक्त फल 30° से 32° एफ. पर संचयन करने से क्षतिग्रस्त हो जाते है। 2—3 प्रतिशत ऑक्सीजन तथा 1-8 प्रतिशत नियन्त्रित कार्बनडाई ऑक्साइड, दोनो के सयुक्त प्रयोग (भिन्न-भिन्न किस्म के लिए मात्रा भी भिन्न-भिन्न होती है) तथा 36°-40° एफ पर रखा जाय तो अधिक समय तक परिरक्षित रहेगा। लेकिन जोनाथान किस्म की सेबो को 32° एफ. पर सचयन करना पड़ेगा। फलस्वरूप श्वसन क्रिया 30–60 प्रतिशत हो जाती है। नियन्त्रित वातावरण मे आपेक्षिक आर्द्रता 95 प्रतिशत रखी जा सकती है।

नियन्त्रित वातावरण गोदामों मे डिलीशियस, गोल्डन डिलीशियस, रोमब्यूटी तथा स्टेमैन सेबों का 30° से 32° एफ पर तथा नासपातियों का 30° से 31° एफ पर सचयन किया जा सकता है। इस प्रकार एक से दो महीने तक परिरक्षण अधिक किया जा सकता है। इससे अधिक चाहें तो प्रशीतन द्वारा ही सम्भव होगा। नासपाती नियन्त्रित वातावरण संचयन द्वारा अधिक दिनो तक परिरक्षित रखी जा सकती है। इसलिए इन्हे पोलिथिलिन मे लपेट कर रखा जाता है, मगर सेबो को नासपाती के समान अवधि तक परिरक्षित रखना प्रशीतन द्वारा ही सम्भव है। यही कारण है कि शीतगोदामों मे नासपतियां कम संचयित की जाती हैं।

(2) रासायनिक उपचार तथा धूमीकरण

(Chemical Treatments and Fumigation)

अंजाऊ नासपाती तथा सेबो में जलदाह (Scold) को नियन्त्रित करने तथा छिलके उतरे हुए काटड फलो के विकृतगन्धी के जन्म को दूर करने के लिए एन्डीओक्सीडडस् काम में ली जाती है।

आलू, प्याज आदि के अंकुरण को रोकने के लिए वृद्धि नियन्त्रक (ग्रोथ रेगूलेटर्स को काम मे लिया जाता है। वाष्पीय उपचार के लिए कार्बनडाई ऑक्साइड धूमीकरण भी किया जाता है, ताकि वीनीफेरा अंगूर शीतगोदामो में गलें नही। लेकिन यह देखा गया है कि यह प्रयोग अन्य फल तथा तरकारियों को क्षति पहुँचाता है। नीबू वर्गीय फल पैकेज

में सड़न-गलन रोकने के लिए बाई-फिनाइल पैडस् (Biphenyl pads) काम में लिए जाते हैं।

सोडियम ऑर्थोफिनायल फिनेट, नीबू वर्गीय फलों, सेबों, मीठी चैरीज तथा शक्करकंदी आदि पर प्रतिरोधी के रूप में प्रयोग की जाती है। इसके लिए सोडियम ऑर्थोफिनायल फिनेट घोल से उपर्युक्त फल-तरकारियों को धोकर शीतगोदामों में रखते है या मोम में मिला कर मोमलेपन के लिए काम में लेते हैं। व्यावसायिक स्तर पर फल-तरकारियों को 50-125 पी. पी. एम. क्लोरीन घोल से भी धोया जाता है। फलस्वरूप फल-तरकारियों में लगे हुए सूक्ष्मजीवों की संख्या बहुत कम हो जाती है। इनके अलावा कुछ अन्य रसायन भी क्लोरीन की भाँति काम में लिए जाते हैं, जैसे सोडियम-डीहाइड्रोएसीटेट, कैप्टन तीराम आदि में डुबोकर भी कुछ फल-तरकारियों को शीतगोदामों में रखा जाता है।

कुछ भी हो रसायन को इस्तेमाल करते समय निम्न बातों का ध्यान रखना आवश्यक है :—

(1) जिस उद्देश्य को पूरा करने के लिए रसायन का प्रयोग किया जाता है वह पूर्णतया सम्भव होना चाहिए।

(2) उसका मूल्य न्यून होना चाहिए ताकि फल-तरकारियों के भावों में वृद्धि न हो।

(3) रसायन, पदार्थों को दूषित करने वाला न हो, ताकि उपभोक्ताओं के स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव न पड़े।

(4) जो रसायन काम में लिया जाता है वह सरकार द्वारा स्वीकृत होना चाहिए।

(3) मोमलेपन

मोमलेपन के बारे में इस ग्रन्थ में पूर्व में ही चर्चा की जा चुकी है। मोमलेपन कर फल-तरकारियों को शीतगोदामों में रखा जाय तो अधिक दिनों तक परिरक्षण सम्भव है। मोमलेपन विशेषतौर से नीबू वर्गीय फलों तथा खीरों में सफलतापूर्वक सम्भव हो सका है, इनके अलावा पूर्ण विकसित हरे टमाटरों, सेबों तथा शकरकंदी आदि में भी। मोमलेपन में एक विशेषता यह है कि कुछ फल-तरकारी चमकीले हो जाते हैं। लेकिन आलू में मोमलेपन वर्जित है। अंकुर रोधक, वृद्धि रोधक, फफूँदी नाशक तथा कुछ अन्य परिरक्षक तथा वर्ण को मिला कर भी मोमलेपन किया जाता है। उदाहरण के लिए शकरकंदी पर रंग मिलाकर मोमलेपन किया जाता है ताकि उसके छिलके का रंग आकर्षक हो सके।

(4) अणु विकिरण

अणुविकिरण पर भी हम कुछ प्रकाश डाल चुके हैं, और आगे भी चर्चा की जायेगी। यहाँ इतना ही कहना पर्याप्त है कि कुछ फल-तरकारियों को गामारेडियेशन विघेदक बनाकर (200–300 किलोराड्स) शीतगोदामों में रखा जाय तो कुछ दिनों तक अधिक परिरक्षित रखा जा सकता है। 22 फल-तरकारियों का अणुविकिरण के पश्चात् निरीक्षण परीक्षण किया गया तो पाया कि केवल तीन किस्म के स्ट्रावरीज, कुकुरमुत्ता तथा कुछ अंजीर की किस्मों में कोई परिवर्तन नहीं हुआ, लेकिन अन्य में वर्णभेद, गड्ढे पड़ जाना, नर्म हो जाना, कुछ अजीब रूप से पक जाना या सुगन्ध नष्ट हो जाना आदि दोष पाये गए। लेकिन 8–10 किलो रॉड्स पर अणुविकिरण कराने से आलू तथा प्याज में अंकुरण गुण को रोका जा सका, लेकिन सड़न व गलन पर नियन्त्रण नहीं हो पाया। अणुविकिरण से

परिरक्षित आलू को पकाया गया तो उसके भीतर कालापन पाया गया। अणुविकिरण के लिए उपर्युक्त उपस्कर तथा अणुविकिरण खर्च आदि को दृष्टि मे रखते हुए वर्तमान परिस्थिति में अणुविकिरण परिरक्षण भारत के लिए लाभप्रद प्रतीत नहीं होता, यही कुछ वैज्ञानिकों का कथन है। शीतगोदामों के लिए अल्ट्रावाइलेट लैम्पस् प्रयोग मे लाते है ताकि गोदामो मे पाए जाने वाले जीवाणु तथा फफूँदी को नष्ट किया जा सके। फिर भी यह कहना कठिन है कि इस रश्मि के प्रयोग से पैकीकृत फल-तरकारियाँ शीतगोदामो में सड़ने गलने से बच सकेंगी या नहीं।

(5) संरक्षण पैकीकरण (Protective Packing)

फल-तरकारियों को इस प्रकार वाहिकाओं मे सजा कर गोदामों में रखना चाहिए ताकि उसमे किसी प्रकार का धक्का, रगड़ व मोच आदि न लग पाये, साथ ही उनके भीतर उच्च आर्द्रता परिस्थिति भी बनी रहे। इसके लिए गद्दीदार वस्तुओं से लपेटकर वाहिकाओं में भरना चाहिए ताकि मालभरी वाहिकाओं को गोदामो मे एक के ऊपर एक अम्बार लगाते समय उनके भीतर रखे हुए फल-तरकारियों को उपरोक्त दोषो से मुक्त रखा जा सके। वाहिका तथा उनके भीतर पदार्थों के चारो ओर लगाये जाने वाली गद्दीदार वस्तु भी ऐसी होनी चाहिए जो परिवहन व गोदामीकरण के समय पदार्थों को धक्का, मुक्की से बचाने मे सक्षम हो तथा ऊपरी अम्बार के वजन को सहन करने की क्षमता रखती हो।

प्रशीतन से होने वाली क्षति

शीतगोदामों मे सभी फल-तरकारियाँ परिरक्षित नहीं होंगी, जो परिरक्षित होते हैं उनमें भी भिन्न-भिन्न किस्मे एक रूप से न्यूनतापसह नहीं होते हैं। यह सम्भव नहीं है कि एक ही किस्म के सारे फल बराबर न्यूनताप सह सकें। इसलिए शीतगोदामीकृत फल-तरकारियों मे कुछ दोष अवश्य पाये जाना स्वाभाविक है, वे निम्न हैं :—

1. द्रुतशीतन क्षति (Chilling Injury)

कुछ फल-तरकारियाँ 32°–50° एफ पर दोषग्रस्त हो जाती हैं। इस तापमान पर वे कमजोर हो जाती है, क्योंकि वे साधारण उपापचय क्रिया को चालू रखने में असमर्थ हो जाती हैं। उपरोक्त कारण से क्षतिग्रस्त हुए फलों को शीतगोदामो में बाहर आने पर उन्हें देखा जाय तो बाह्य रूप से उनका दोष नजर नहीं आयेगा लेकिन कुछ अधिक ताप लगते ही उन्हें काट कर देखा जाय तो भीतरी न्यूनताप क्षति के कारण आई विकृति दिखाई देगी। जैसे—खड्डे पड़ जाना, वर्णभेद हो जाना, दाग-धब्बे पड़ जाना, पकने मे देर करना इत्यादि।

उपरोक्त क्षतिग्रस्त फल-तरकारी शीतगोदामो में से विक्रय स्थल पर पहुँचते-पहुँचते ही सड़ने लग जायेंगी। द्रुतशीतन क्षतिग्रस्त फल-तरकारियों "आलटर्नेरिया-राट" के कारण सड़ने लगती है, विशेष रूप से टमाटर, कुम्हाड़ा (कूट ककड़ी) इत्यादि। उपरोक्त दोष प्राकृतिक रूप से भी उत्पन्न हो जाते हैं, जब तापमान 50° एफ. से न्यून हो जाता है। इसी प्रकार प्रकृति से द्रुतशीतन (पाला पडने से) क्षतिग्रस्त फल-तरकारियों का शीतगोदामो में भी परिरक्षण सम्भव नहीं है।

हिमीकरण क्षति

ताजे फल-तरकारियों को शीतगोदामीकरण के लिए सिफारिश किये हुए तापमान (तालिका न० 4 तथा 5 में वर्णित फल-तरकारियों के लिए) हिमीकरण बिन्दु से थोड़ा (32° एफ.) ऊपर है जो फल-तरकारियाँ द्रुतशीतन क्षतिग्रस्त नहीं होंगी। मगर तालिका मे वर्णित फल-तरकारी का भी उनके हिमीकरण बिन्दु पर गोदामीकरण हो जाय तो वे क्षतिग्रस्त हो जायेंगी। हर वस्तु का समान रूप से एक ही हिमीकरण बिन्दु पर क्षतिग्रस्त होना आवश्यक नहीं है। कुछ पदार्थ हिमीकृत होकर परिरक्षित हो जाते हैं, तो कुछ फल-तरकारी हिमीकरण के कारण क्षतिग्रस्त हो जाते हैं। जब गर्जरिका (पारसनिपस्) तथा टमाटर को 30° – 31° एफ पर शीतगोदामीकरण करें तो गर्जरिका हिमीकृत हो जाते है। तथा उन्हें बार-बार हिमीकरण तथा बार-बार निर्हिमीकरण (Thawing) करने पर भी क्षतिग्रस्त नहीं होते। लेकिन टमाटर उसी तापमान पर पहली बार ही क्षतिग्रस्त होकर उपयोग शून्य हो जायेगा। सारणी मे दिये हुए तापमान से न्यून तापमान (15° से 20° एफ.) गोदाम में कुछ समय के लिए हो जाय तो सेब क्षतिग्रस्त हो सकती हैं। सारणी संख्या 5 मे दी हुई कुछ फल-तरकारियाँ हिमीकरण क्षति के आधार पर वर्गीकृत की गई हैं। इसके अलावा अन्य कई फल-तरकारियां हैं जो हिमीकरण से क्षतिग्रस्त नहीं होती। फिर भी जितना हो सके उन्हें इस दोष से दूर रखना चाहिए। आमतौर पर हिमीकरण से गोदामीकरण अवधि (परिरक्षण-समय) कम हो जाती है। सेब जो हिमीकृत हो गई हो, वे साधारण सेबों मे नर्म होती है, इसलिए उन्हें तुरन्त विक्रय स्थल पर पहुंचना चाहिए। गाजर जो हिमीकृत हो जाती है, वह गलने लगती है।

सारणी संख्या—4

ताजे फलों को व्यावसायिक रूप में गोदामीकरण के समय सिफारिश किया गया तापमान, आपेक्षिक आर्द्रता, औसतन परिरक्षण अवधि, उच्चतम हिमीकरण बिन्दु, जलाश धारिता तथा आपेक्षिक ऊष्मा इत्यादि। (Recommended temperature, and relative humidity, approximate storage life, highest freezing point, water content and specific heat of fresh fruits in commercial storage).

क्रम संख्या	फल का नाम	तापमान 0° एफ. मे	आपेक्षिक आर्द्रता प्रतिशत में	औसतन परिरक्षण अवधि	उच्च हिमीकरण उच्च 0° एफ. में	जलधारिता प्रतिशत में	आपेक्षिक ऊष्मा बी.टी.यू. (पौंड) 0° एफ. में
1	2	3	4	5	6	7	8
1.	सेव	30—40	90	3—8 माह	29·3	84·1	0·87
2.	खुबानी	31—32	90	1—2 सप्ताह	30 1	85 4	0·88
3.	केला	56—58	90—95	——	30·6	74·8	0·80
4.	गूजबरीस	31—32	90—95	2—4 सप्ताह	30·0	88 9	0·91
5.	रसबरीज	31—32	90—95	2—3 दिन	30·0	80·6	0·85
6.	स्ट्राबरीज	32	90—95	5—7 दिन	30 6	89·9	0·92
7.	चैरीज (खट्टा)	32	90—95	3—7 दिन	29·0	83 7	0·87
8.	चैरीज (मीठा)	30—31	90—95	2—3 सप्ताह	28·8	80·4	0·84
9.	नारियल	32—35	80—85	1—2 माह	30·4	46·9	0 58
10.	पिण्डखिजूर	0 या 32	74 से कम	6–12 माह	3·7	20·9	0·38
11.	ताजा अंजीर	31—32	85—90	7–10 दिन	27 6	78 0	0·82

1	2	3	4	5	6	7	8
12.	चकोतरा (कैलीफोर्निया तथा अर्जोणा)	58—60	85—90	4—6 सप्ताह	—	88·8	0·91
13.	अंगूर (वेनीफेरा)	30—31	90—95	2—8 माह	28 1	81·6	0·85
14.	अंगूर (अमेरिकन)	31—32	85	2—8 सप्ताह	29 7	81·9	0 86
15.	अमरूद	45—50	90	2—3 सप्ताह	—	83·0	0·86
16.	लैमन	—	85—90	1—6 माह	29 4	89·3	0·91
17.	कागजी नीबू	48—50	85—90	6—8 सप्ताह	29 1	86·0	0·89
18.	आम	55	85—90	2—3 सप्ताह	30·3	81·4	0 85
19.	सन्तरा (कैलीफोर्निया एवं अर्जोणा)	38—48	85—90	3—8 सप्ताह	29·7	87·2	0 90
20.	सन्तरा (फ्लोरडा व टेक्सस)	32	85—90	8–12 सप्ताह	30·6	87·2	0·90
21.	पपीता	45	85—90	1—3 सप्ताह	30 4	90 8	0 93
22.	आड़ू	31—32	90	2—4 सप्ताह	30·3	89·1	0·91
23.	नासपाती	29—31	90—95	2—7 माह	29 2	82·7	0·86
24.	अनन्नास	45—55	85—90	2—4 सप्ताह	30·4	85·3	0·88
25.	प्लम व प्रून्स	31—32	90—95	2—4 सप्ताह	30·5	85·7	0·89
26.	अनार	32	90	2—4 सप्ताह	26·6	82·3	0·86

—संयुक्त राज्य अमेरिका के कृषि विभाग के एग्रीकल्चर हैंड बुक नं० 66 के आधार पर

सारणी संख्या—5

फल-तरकारियों का हिमीकरण-क्षति के आधार पर वर्गीकरण

हल्के हिमीकरण से ही क्षतिग्रस्त हो जाते हैं	एक-दो बार हल्के हिमीकरण से क्षतिग्रस्त हो जाते हैं	वे फल-तरकारियां जो हिमीकरण से क्षतिग्रस्त नहीं होती हैं
1	2	3
खुबाइनी	सेब	चुकन्दर
सदावरी	नयी पत्तागोभी	कुछ पत्तागोभी (पुरानी)
केले	गाजर	पिण्डखिजूर
सेव	फूलगोभी	गर्जरिका (पारसनिप)
सरसफल (कैनबरी के अलावा)	कैनबरीज	शलजम
खीरा	चकोतरा	ब्रसल्स स्प्राउट्स
बैंगन	अंगूर	
लेमन	प्याज (गाँठ)	
सलाद हरा	सन्तरे	
कागजी नींबू	नासपाती	
भिण्डी	मटर	
आड़ू	मूली	
प्लम	पालक	
आलू		
कुम्हाड़ा (फूट ककड़ी)		
शकरकन्दी		
टमाटर		

अमोनिया क्षति

जिन शीतगोदामों मे "डाइरेक्ट-एक्सपानशन-रिफ्रिजरेशन" प्रणाली से प्रशीतन किया जाता है, वहाँ कभी-कभी अमोनिया निकल जाता है, फलस्वरूप फल-तरकारियो पर अमोनिया लगने के कारण वे क्षतिग्रस्त हो जाती है (हरापन और कालापन फल-तरकारियों के बाहरी ऊतक पर लग जाता है)। सेब तथा नासपातियो के वातरन्ध्रों के चारों तरफ वर्णभेद हो जाता है। अगर अमोनिया से हुई क्षति तीव्र हो तो भीतरी ऊतक नर्म हो जाते हैं तथा वर्णभेद भी हो जाता है। फलस्वरूप सेब विक्री योग्य नहीं रहते। 0 8 प्रतिशत अमोनिया, अगर शीतगोदामों के भीतर भर जावे तो सेब, नासपाती, आड़ू, प्याज इत्यादि एक घंटे में ही बुरी तरह क्षतिग्रस्त हो जायेंगे। इसी प्रकार अंगूर तथा बादाम भी क्षतिग्रस्त हो जायेंगे, यदि एक प्रतिशत अमोनिया आधा घंटे गोदाम मे भरा रहे। 0 01 प्रतिशत अमोनिया हो जाय तो शीघ्र ही पहिचाना जा सकेगा जब इसी परिस्थिति मे रखे हुए मटर के दाने 15 मिनिट में काले पड़ जायेंगे या एक घण्टे मे बादाम की गुली काली पड़ जायेगी। आड़ू 0·02 प्रतिशत अमोनिया वाली परिस्थिति मे छः घण्टे रह जाये

तो क्षतिग्रस्त हो जाता है। इसलिए उपर्युक्त प्रणाली से संचालित शीतगोदामों का रोज निरीक्षण करना चाहिए, ताकि अमोनिया की उपस्थिति पहिचान कर, उचित कार्यवाही की जा सके। विकसित देशों में शीतगोदामों के भीतर बनने वाली अमोनिया गैस की उपस्थिति मालूम करने के लिए अमोनिया अलार्म प्रणाली भी काम में ली जाती है।

जिन गोदामों में अमोनिया गैस भर जाती है, वहाँ जैट स्प्रे द्वारा गोदामों के भीतर जलवर्षा कर अमोनिया को पानी में घुला कर बाहर निकाल देते हैं। सेबों के बातरन्ध्रों में होने वाली क्षति को दूर करने के लिए तुरन्त शीतगोदामों में वायु प्रवेश कराया जाये, जहाँ अमोनिया गैस भर गया हो। सल्फरडाई ऑक्साइड कुछ फलों (जैसे, अंगूर तथा बादाम) को क्षति नहीं करता। इस प्रकार के फल रखे हुए गोदामों में अगर अमोनिया भर जाय तो उसके (SO_2) प्रयोग से अमोनिया को दूर किया जा सकता है, लेकिन उसकी सान्द्रता अंगूर के लिए एक प्रतिशत से कम तथा बादाम के लिए पाँच प्रतिशत से कम प्रयोग करना चाहिए। लेकिन सल्फरडाई ऑक्साइड का प्रयोग मीठीचेरी, आड़ू, नासपाती तथा वालनट (Walnut) आदि के लिए उपयुक्त नहीं है।

□□□

अध्याय 2

हिमीकरण परिरक्षण
(Preservation by Freezing)

हिमीकरण का उद्देश्य

अन्य परिरक्षण विधियों की अपेक्षा फल तथा तरकारियों के स्वाभाविक रंग रूप को बनाये रखने के लिए हिमीकरण परिरक्षण एक अच्छी विधि है। इस विधि से फल तथा तरकारी के भिन्न-भिन्न तथा पोषक तत्त्व यथावत् बने रहते हैं, क्योंकि इसमें उष्मोपचार नहीं किया जाता। इसके अलावा जब कभी भी मेहमान घर आवें, उन्हें खिलाने-पिलाने के लिए हिमीकरण उत्पाद काफी देखा में हर समय फ्रिज में तैयार मिलेंगे।

लेकिन यह देखा गया है कि हिमीकृत आहार का जब हम निर्हिमीकरण या थाविंग करते हैं तब उसकी संरचना में अन्तर आ जाता है। फलस्वरूप स्वाभाविक आहार की तुलना में हिमीकृत आहार भिन्न दिखाई देते हैं क्योंकि हिमीकृत आहार जब निर्हिमीकरण विघटन बनाता है उस प्रक्रिया के अन्त उसके ऊतक बलहीन हो जाते हैं। ऊतकों की बलहीनता काम में लिये गये आहार की जाति, उपजाति की संरचना के अनुसार अधिक या कम हो सकती है। इसलिए टमाटर, तरबूज, पालक आदि के मुकाबले में हरा मटर, सेम के दाने, मक्के के दाने आदि हिमीकरण के लिए अधिक उपयुक्त हैं। हिमीकरण से परिरक्षण शीघ्र ही सम्भव हो सकता है। अधिकांश फल तरकारियों के स्वाभाविक रंग, सुगन्ध, पौष्टिकता तथा विटामिनों को इस प्रणाली से यथावत् रखा जा सकता है। लेकिन भारत में फल तरकारी हिमीकरण प्रक्रिया इतनी प्रचुर मात्रा में विकसित नहीं हुई है जितनी पाश्चात्य देशों में विकसित हुई है, क्योंकि भारत एक विकासशील देश तो है ही, लेकिन यह उष्ण जलवायु प्रदेश में आता है, जहाँ हिमीकरण ही नहीं बल्कि शीत भण्डारीकरण (न्यून तापमान परिरक्षण) भी अधिक खर्चीला है। उष्ण देशीय प्रदेश में शीतभण्डारीकरण स्थापना, संचालन तथा मरम्मत आदि भी महँगे पड़ते हैं, जबकि शीत प्रदेशीय राष्ट्रों में इतने महँगे नहीं पड़ते।

फिर भी आज भारत में 6000 टन से अधिक मछली हिमीकृत की जाती है, जो मुख्यतः भारत के दक्षिण-पश्चिमी तट तथा दक्षिण-पूर्वी तटीय क्षेत्रों में, विशेष कर केरल में, हिमीकृत की जाती है। इस परिरक्षण विधि का प्रचार तो भारत में हो ही रहा है इसलिए हिमीकरण परिरक्षण ज्ञान होना अति-आवश्यक है। आज केन्द्रीय खाद्य प्रौद्योगिकी अनुसन्धान संस्थान, मैसूर में हिमीकरण परिरक्षण में हो रही [illegible] बढ़ रहा है।

हिमीकरण योग्य फल-तरकारियाँ

प्रत्येक फल-तरकारी हिमीकरण के लिए योग्य नहीं मानी जाती, क्योंकि न्यून ताप प्रत्येक फल तरकारी पर समान रूप से प्रभाव नही डालता। हरा मटर, सेम आदि फलियों के कच्चे दाने, गाजर, भिण्डी, सदाभरी, स्ट्रॉबरीज, अंगूर (थामसन सीडलेस), अमरूद आदि हिमीकरण योग्य फल-तरकारियाँ हैं, लेकिन पत्ता गोभी, टमाटर, हिमीकरण योग्य नही होते। आड़ू (पीच), खुबानी, सरसफल (बेरी), चकोतरा आदि भी हिमीकरण योग्य हैं, परन्तु केला, आवकोडो आदि फल हिमीकरण योग्य नही होते। हिमीकरण-योग्यता फल-तरकारियों की जाति-उपजाति के आधार पर भिन्न-भिन्न हो सकती है। कुछ जाति व उप-जाति के फल या तरकारी हिमीकरण के लिए अधिक उपयुक्त होती है जबकि उस फल व तरकारी की अन्य किस्में उतनी उपयुक्त नही होती।

हिमीकरण तथा रासायनिक किण्वक प्रतिक्रियाएँ

हिमीकरण प्रक्रिया के समय भी रासायनिक तथा किण्वक क्रियाएँ जुड़ी होती हैं। रासायनिक परिवर्तन के लिए किण्वक सहायक होते हैं। इसी प्रकार किण्वक-परिवर्तन तापमान पर निर्भर करते हैं। वर्णभेद या सुगन्ध तथा उसकी संरचना में आने वाले अन्तर का मुख्य कारण किण्वक तथा उसका रसायन परिवर्तन है। किण्वक क्रिया को अगर रोका जाय तो रासायनिक परिवर्तन भी नही होगा। 82° सी० पर किण्वक निष्क्रिय हो जाते हैं। इसलिए हिमीकरण के पूर्व फल तथा तरकारियों का उबलते पानी में या शक्तियुक्त भाप पर विवर्णीकरण किया जाय तो किण्वक निष्क्रिय हो जाते हैं। कटे हुए फल तरकारियाँ ऑक्सीकरण किण्वकों तथा अन्तरिक्ष वायु में उपस्थित ऑक्सीजन के सम्पर्क में आकर ऑक्सीकृत हो जाते हैं। फलस्वरूप उनमें वर्णभेद आ जाना स्वाभाविक है। इसको रोकने के लिए विवर्णीकरण उपचार के अलावा गन्धोकोपचार से भी उपर्युक्त दोष दूर किये जा सकते हैं, जिसका वर्णन इस ग्रन्थ में अन्यत्र किया गया है।

अस्कॉर्बिक अम्ल

अस्कॉर्बिक अम्ल फल-तरकारियों के हिमीकरण में एक आवश्यक पदार्थ है, क्योंकि यह हिमीकृत उत्पादों के संचयन के समय उसमें सम्भावित वर्णभेद को रोकता है। इसके अलावा विटामिन सी की मात्रा भी बढ़ाने में मदद करता है। इसको मिलाने से उस पदार्थ का पी० एच० मान गिर जाता है, फलस्वरूप ऑक्सीकरण किण्वकों की क्रिया भी रुक जाती है। 0.5 प्रतिशत अस्कॉर्बिक अम्ल मिली हुई शर्करा या शर्करा चाशनी में मिलाकर उसके माध्यम से फलों को हिमीकृत किया जाता है।

अविवर्णीकृत उत्पादों के बराबर ही अपूर्णता में विवर्णीकृत फल-तरकारी भी ऑक्सीकृत हो जायेगी, चाहे उसका कितने ही न्यून ताप पर क्यों नहीं संचयन किया हो। इससे यह सिद्ध हो जाता है कि समान रूप में फल या तरकारी को विवर्णीकरणोपचार विधेयक बनाकर ही हिमीकरण के लिए हिमीकरणी में सजाना चाहिए।

चाशनी में जैसे फल टुकड़ों को हिमीकृत किया जाता है, उसी प्रकार अस्कॉर्बिक अम्ल सान्द्रीकृत फलों में (फ्रूट प्यूरे तथा पेस्ट) भी मिलाकर हिमीकरण किया जा सकता है, लेकिन ध्यान रखना होगा कि उस सान्द्रण में खटास की मात्रा आवश्यकता से अधिक न बढ़ जाय, क्योंकि अस्कॉर्बिक अम्ल विटामिन सी होता है, फलस्वरूप उसमें खटास होना

स्वाभाविक है। अम्लता, शर्करा में पाया जाने वाला लोहांश तथा ताम्र अंश के आयन्स (Ions) के साथ प्रतिक्रिया कर सकर पदार्थ (कांप्लेक्स सबस्टांस) का निर्माण करता है। फलस्वरूप अस्कॉर्बिक अम्ल एक मुख्य ऑक्सीकरण रोधी (Anti Oxidants) भी है।

विकसित देशो मे हिमीकरण के लिए शर्करा-फल अस्कॉर्बिक अम्ल को यन्त्र सहायता से मिश्रित किया जाता है। अस्कॉर्बिक अम्ल क्रिस्टल रूप मे (दानेदार) तथा गोली के रूप मे विपणि मे प्राप्त होता है। प्रायः एक गोली 25 ग्राम से 1000 ग्राम भार की प्राप्त होती है। लेकिन क्रिस्टलीय अस्कॉर्बिक अम्ल अधिक स्वीकार योग्य है। एक साधारण चाय की चम्मच में प्रायः 3 ग्राम अस्कॉर्बिक अम्ल भरा जायेगा। गोलियो से पहले ही घोल बना लिया जाता है। गोली मे पायी जाने वाली अस्कॉर्बिक अम्ल की मात्रामिली ग्राम में अंकित की हुई होती है। बची हुई मात्रा अस्कॉर्बिक अम्ल धारक होती है, जिसको पूरक (Fillers) कहा जाता है। अस्कॉर्बिक अम्ल को पहले थोड़े जल मे पीस कर आवश्यकता के अनुसार हिमीकरण विधेयक बनाने वालों फलो मे मिलाया जाता है। अगर चासनी मे फलो को हिमीकृत किया जाना है, तो अस्कॉर्बिक अम्ल घोल को पहले ही फलो मे छिड़ककर मिश्रण कर वाहिकाओ मे भर दिया जाता है तथा ऊपर से ठण्डी चाशनी भरी जाती है। इसी प्रकार बिना मिठास के भी हिमीकरण किया जाता है। चाशनी के बजाय जल भर दिया जाता है। अस्कॉर्बिक अम्ल को फलों की बजाय पानी में मिलाकर भी काम मे लिया जा सकता है। इसी प्रकार अगर फल रस, कतरे हुए फल सान्द्रीकृत फल इत्यादि का भी हिमीकरण किया जाना है तो इनमे ही अस्कॉर्बिक अम्ल मिलाना चाहिए।

आजकल अस्कॉर्बिक-शर्करा मिश्रण, शर्करा साइट्रिक अम्ल, अस्कॉर्बिक अम्ल आदि मिश्रणों के रूप में भी विपणि मे उपलब्ध होते है, लेकिन इनका प्रयोग निर्माता के निर्देशानुसार ही किया जाना चाहिए। अस्कॉर्बिक अम्ल के अभाव मे उच्च श्रेणी का लैमन रस या निर्मलीकृत आंवला रस भी काम मे लिया जा सकता है, क्योंकि इनमे पर्याप्त मात्रा में साइट्रिक अम्ल तथा अस्कॉर्बिक अम्ल पाये जाते हैं। फलस्वरूप हिमीकरण परिरक्षण में लिये जाने वाले फलों में मिलाया जाए तो भविष्य में उनमें वर्णभेद नही होगा। ध्यान रहे शुद्ध अस्कर्विक अम्ल के समान लैमन रस या आंवला रस उपयोगी होना आवश्यक नही।

हिमीकरण तथा सूक्ष्मजीव

जैसा पहले ही कहा जा चुका है कि 0° सी० (32° एफ०) पर अधिकाश सूक्ष्मजीव वंशवृद्धि नही कर पाते। लेकिन कुछ प्रकिण्व (खमीर)–46° सी० (15° एफ०) पर भी वंशवृद्धि करने की क्षमता रखते हैं। जीवाणुओ के समान प्रकिण्व तथा फफूंद मे भी अल्प ताप मे बढने की क्षमता होती है।

हम भली-भाँति जानते हैं कि कच्चे माल मे सूक्ष्मजीव अधिक होते हैं। लेकिन पूर्वोपचार क्रियाओ द्वारा जैसे धोना, विवर्णीकरण करना इत्यादि उनमें से अधिकाश सूक्ष्मजीवियो को दूर किया जा सकता है। फल तरकारियों को वाहिका में भरते समय सूक्ष्मजीवों का उसमे प्रवेश कर पुनः संख्या वृद्धि करने का भय बना रहता है। इसलिए खाद्य-पदार्थों को वाहिकाओं में भरते समय भी इस बात का ध्यान रखना अनिवार्य है कि उस

स्थल पर सूक्ष्मजीव संख्या कम से कम रहे, इसलिए शुद्धता का ध्यान रखना चाहिए। हिमीकरण परिरक्षण से खाद्य पदार्थों का निर्जर्मीकरण नहीं किया जाता, बल्कि उनमें न्यून ताप के कारण सूक्ष्मजीवियों की वंशवृद्धि रोकी जाती है। फलस्वरूप वे परिरक्षित हो जाते हैं, लेकिन जब उन्हें निर्हिमीकरण किया जाता है तब उसमे पाये जाने वाले सूक्ष्मजीव पूर्व क्षमता से कहीं अधिक तीव्रता से वंशवृद्धि करने लगते हैं। यही कारण है कि जितनी कम मात्रा में उसमें सूक्ष्मजीव होंगे उतनी ही शीघ्रता से उसमे वंशवृद्धि होगी।

क्लाडोस्पोरियम (**Cladosporium**)—जाति के प्रकिण्व—20^0 सी० पर, टोरूला, श्रोडियम आदि जाति के प्रकिण्व—4^0 सी० में भी वंशवृद्धि करने के योग्य होते हैं।

हिमीकरण तथा पोषक तत्त्व

हिमीकरण से फल तरकारियों मे पाये जाने वाले पोषक पदार्थों को कोई क्षति नहीं होती। इनका जितना न्यून ताप पर संचयन किया जायेगा उतना ही उनमें पोषक पदार्थ धारणीय रहेगा। प्रोटीन युक्त आहार को बार-बार हिमीकरण करे तथा बार-बार निर्हिमीकरण करें तो प्रोटीन की क्षति सम्भव है। लेकिन किण्वक निष्क्रिय नहीं बनाया जाय तो प्रोटीन का अपघटन (प्रोटोलिसिस) हो जायेगा।

ऑक्सीकरण द्वारा हिमीकरणोत्पादों में पायी जाने वाली वसा तथा स्नेहद्रव्यों (**Fats and Oils**) में क्षति हो जाती है। यह क्षति अधिकांश रूप मे मछली के हिमीकरण में पाई गई थी। लेकिन फल-तरकारियों के हिमीकृत उत्पादों में नहीं पाई गई। लेकिन पूर्व हिमीकरण क्रियाकाल मे जैसे धोना, विवर्णीकरण करना, पीसना आदि क्रियाकाल में विटामिनों की क्षति स्वाभाविक है। कतरी हुई तथा पीसी हुई फल-तरकारियों के ऊतक जितनी देर वायु सम्पर्क में रहेंगे उतना ही विटामिन सी उनमें से नष्ट हो जायेगा। यह क्षति ऑक्सीकरण से है। हिमीकरण के बाद भी इसी प्रकार की क्षति होती रहेगी, लेकिन क्षति की गति गोदामों के तापमानों की भिन्नता के अनुसार अधिक या कम हो सकती है। अगर फल तरकारियों का विवर्णीकरण कर किण्वकों को निष्क्रिय बना दिया हो तो उनमे पाये जाने वाले विटामिनों को भी धारणीय रखा जा सकता है, लेकिन यह नहीं भूलना चाहिए कि विवर्णीकरण के समय विटामिन बी$_1$ अल्प मात्रा मे क्षतिग्रस्त हो जाता है। विटामिन बी$_2$ हिमीकरण प्रक्रिया के समय कम क्षतिग्रस्त होता है। लेकिन हिमीकरण उत्पादों के गोदामों मे संचयन के समय विटामिन क्षतिग्रस्त नहीं होता। करोटीन (विटामिन ए) हिमीकरण के समय मे क्षतिग्रस्त नहीं होते हुए भी गोदामीकरण काल मे क्षतिग्रस्त हुआ पाया गया है। इस दोष को दूर करने के लिए उच्चकोटि की पैकीकरण पद्धतियों पर विशेष ध्यान देना आवश्यक होगा। हिमीकरण से आहार मे पाये जाने वाले परजीवियों की क्षति भी सम्भव है। खाद्य-पदार्थों को 0^0 एफ० से भी न्यून ताप में संचयन करना आवश्यक होगा।

हिमीकरणोत्पाद तथा वाहिकाएँ

अगर हिमीकृत उत्पादों को उचित वाहिकाओं में सुचारु रूप से पैकिंग नहीं किया जाता है, तो उनके गुणों मे कमी आ जायेगी—विशेष तौर से सुगन्ध, वर्ण, सरचना इत्यादि मे। हिमीकरण उत्पाद, उपर्युक्त कमी से सूख भी सकते हैं। इसलिए वाहिकाएँ, जो हिमीकृत उत्पाद भरने के लिए काम में ली जाती हैं, आर्द्रता-संधारण-रोधक होनी चाहिए।

साथ ही उनके ढक्कन आसानी से शीघ्र बन्द करने योग्य या फोल्ड करने योग्य तथा रिसाव रोधक भी होने चाहिए। हिमीकृत उत्पादों के पैकिंग के लिए काम मे आने वाली वाहिकाएँ ऐसी होनी चाहिए जो लम्बे अर्से तक काम में आने योग्य हो, न्यूनतम ताप मात्राओं में टूटने वाली, फटने वाली भी नही होनी चाहिए। वाहिकाओ के भीतर रखे हुए पदार्थों से वाष्पीकरण रोकने योग्य (वेपर-मोइस्चर प्रूफ) वाहिका होना भी आवश्यक है। आज विपणि मे उपलब्ध वाहिकाएँ उपर्युक्त गुणों से युक्त हैं। इनकी पहचान कर लेना चाहिए। काच, कठोर प्लास्टिक, भाप-आर्द्रता-रोधक युक्त लिफाफे (कागज से बने) मोमलेपित पुट्ठे से बनी वाहिकाएँ भी विपणि मे आसानी से उपलब्ध हो जाती है। पोलीथलिन के बने लिफाफे आदि नम्य वाहिकाओ मे आते हैं।

कठोर वाहिका

काच, प्लास्टिक, कलई की हुई टिन वाहिका, मोमलेपित पुट्ठे की बनी वाहिका (कार्टन) आदि को ही कठोर वाहिका कहा जाता है (चित्र अन्यत्र वाहिका अध्याय मे चित्रांकन किया हुआ है)। उपर्युक्त करीब-करीब सभी वाहिकाएँ द्रव पदार्थों, जैसे फलरस, सान्द्रीकृत फल, तरकारी आदि को भरकर हिमीकरण के लिए प्रयोग मे ली जाती है। उपर्युक्त वाहिकाओ में कम जलांश वाले आहार को भी भरने तथा हिमीकरण के उपयोग में लिया जा सकता है। साधारणतया तरकारियों के हिमीकरण के लिए आर० इनामल कैनों को काम मे लिया जाता है। लेकिन विविध अम्लीय वर्ण रूपी फलो के हिमीकरण के लिए काम में ली जाने वाली कैनों मे कुछ विशेष इनामल लेपित किया हुआ होता है, जिसके बारे मे कैनीकरण तथा वाहिकाओं से सम्बन्धित अध्यायों मे प्रकाश डाला जा चुका है।

गन्धकयुक्त तरकारियो को, भुट्टे के मुलायम दाने, सेम, गाजर, वर्ण शोभित फलवर्ग (जैसे सरसफल, फलवर्गों का रस), चुकन्दर, शकरकन्दी आदि के हिमीकरण के लिए सी० इनामल लेपित कैनो को काम मे लिया जाता है। वैसे कही-कही आर० इनामल कैनो को भी काम में लिये जाने की प्रथा है।

नम्य वाहिकाएँ

अल्युमीनियम पणिका (फॉइल), सिलोफेन से बने लिफाफे, चद्दरें, पोलीथलिन कागज, लिफाफे परतदार किया हुआ (लेमीनीकृत) कागज तथा अन्य धातु पणिकाओ के अलावा रबर से बने द्विमुखी ड्यूप्लक्स (Duplex) लिफाफे आदि भी द्रव रूप के फल तरकारियों को भरने तथा हिमीकरण करने योग्य हैं। इनमे द्रव पदार्थ भरकर हिमीकरण किया जाता है, तुरन्त पुट्ठे से बनी वाहिकाओं मे पैक कर दिया जाता है। फलस्वरूप दबने या खरोंच लगने से बच जाते हैं। दन्त क्रीमों का पैकिंग भी उपयुक्त नम्य वाहिकाओ मे ही होता है। इसी प्रकार फल रस, सान्द्रीकृत फल तरकारियों को भरकर हिमीकरण कर पैकिंग किया जाता है जो भारत मे प्रचलित नही है।

वाहिकाओं की साइज

हिमीकरण के लिए काम में ली जाने वाली वाहिकाएँ इतनी बड़ी होनी चाहिए जितना कि एक औसत परिवार (6 व्यक्ति) के एक समय मे काम मे लेने योग्य समुचित

आहार को उसमें भरा जा सके, क्योंकि एक बार खाने के लिए निर्हिमीकरण किया हुआ आहार शेष रह जाय तो पुनः काम मे लेने के योग्य नहीं होता उसे रखना हो तो उन्हें पुनः हिमीकरण करना होगा, लेकिन यह व्यावहारिक नहीं है। इसके अलावा कुछ खाद्य पदार्थों को बार-बार हिमीकरण करने मे उनके गुणों में विपरीत असर पड़ता है।

वाहिकाओं का आकार

वाहिकाओं का आकार भी ऐसा होना चाहिए जिससे कि उन्हें हिमीकरणियो मे आसानी से अधिकाधिक सजाया जा सके। कहने का तात्पर्य है कि कठोर वाहिकाएँ चौकोर हों या कैनों के आकार के हो तो उचित रहेगा, लेकिन वाहिकाओं की सुन्दरता की दृष्टि से त्रिकोण आकार की हो तो, हिमीकरणी में अधिक संख्या मे सजा नहीं सकेंगे। ऐसी वाहिकाओं में भरे हुए पदार्थ का भी समरूप से हिमीकृत हो जाना जरूरी नहीं है, क्योंकि हिमीकरणी के अन्दर समान रूप से सजा नहीं रहेगा, फलस्वरूप उसके भीतर की न्यूनताप वायु समान रूप से वाहिकाओं के चारों तरफ सम्पर्क मे नहीं आएगी। कैनों मे से हिमीकृत आहारों को निर्हिमीकृत कर बाहर निकालने मे आसानी रहती है जबकि टेढ़ी-मेढ़ी दबी हुई वाहिकाएँ देखने मे सुन्दर तो होगी, लेकिन उनमे पदार्थ भरने मे सुविधा नहीं। हिमीकरण करने तथा निर्हिमीकरण कर बाहर निकालने मे भी कठिनाई आ सकती है। नम्य वाहिका मे भरे हुए पदार्थों को दबने से बचाने के लिए पैकीकरण की आवश्यकता होती है, अन्यथा उनके दबने तथा खरोंच लगने की सम्भवना बनी रहती है।

वायुरुद्ध सीलिंग अथवा सामुद्रीकरण (Hermatical Sealing)

कैनीकरण की भांति हिमीकरण के लिए भी कठोर वाहिकाओं (कांच की बरनी या कैन में भरकर उचित शीर्ष स्थान छोड़कर सामुद्रित किया जाना आवश्यक है—यह क्रिया यन्त्र या हाथों से की जा सकती है। लेकिन वायुरुद्ध सीलिंग हाथ से उतना सम्भव नहीं होगा, जितना यन्त्रों से सम्भव है। वाहिकाओं को सामुद्रित करने के बाद उनके ऊपर हिमीकरण फीता (फ्रीज टेप) लगाया जाता है। इस फीते मे समुचित गोंद का पदार्थ लगा हुआ होता है। इसके ऊपर अगर मोम और लगा दिया जाय तो वह वाष्प प्रतिरोधक भी हो जायेगा।

इसके बाद उन्हें समुचित रूप से पैकिंग करना चाहिए। साधारणतया इन्हें पोलियलिन लिफाफों मे रखकर सील बन्द किया जाता है। घरों में इन्हें कागज या पुट्ठे मे लपेट कर धागे से बाँध दिया जाता है, फिर इन्हें हिमीकरण के लिए, हिमीकरणी में सजाया जाता है। घरो मे ऐसी वाहिकाओं या पैकीकरण पदार्थों का प्रयोग किया जाता है, जिनका बार-बार इस्तेमाल किया जा सके।

विविध हिमीकरणियाँ (Different Freezers)

हिमीकरण क्रिया दो प्रकार से सम्पन्न की जाती है—एक धीमी हिमीकरण प्रक्रिया से तथा दूसरी शीघ्र हिमीकरण (क्विक फ्रिजिंग) प्रक्रिया से। यहाँ हिमीकरण के माने शीघ्र हिमीकरण से ही है। धीमी हिमीकरण प्रक्रिया का हिमीकरण परिरक्षण मे प्रयोग नहीं किया जाता। रिफ्रिजरेटर में जहाँ हिमीकरण-कोष्ठ (फ्रीज चेम्बर) होता है, वहाँ भी हिमीकरण क्रिया सम्भव होती है, लेकिन उतना शीघ्र हिमीकरण वहाँ सम्भव नहीं है। इसलिए

यह कोष्ठ जल हिमीकरण के लिए अधिक उपयुक्त है। इस कोष्ठ मे भी कुछ खाद्य पदार्थों का हिमीकरण किया जा सकता है लेकिन वे अधिकाधिक 15 से 28 दिन तक ही परिरक्षित रह सकते हैं, इसलिए शीघ्र हिमीकरण द्वारा ही हिमीकरण करना अधिक उपयुक्त होगा।

इसके लिए जो हिमीकर्णियाँ काम में ली जाती है, उन्हे दो भागो में विभाजित किया जा सकता है। एक गृह हिमीकर्णियाँ (होम फ्रीजर्स) तथा दूसरी व्यावसायिक हिमीकर्णियाँ (कॉमर्शियल फ्रीजर्स)। घरों में काम आने वाली हिमीकर्णियाँ बड़े आकार के सन्दूकनुमा होती हैं जिन्हें "भ्रिनटाइप" कहा जाता है। दूसरी अलमारीनुमा होती है। हिमीकर्णियों के कार्यकलाप भी वैसे ही हैं जैसे—रिफिजरेटरो के। हिमीकर्णी तथा रिफिजरेटर का अन्तर इतना है कि रिफिजरेटरों (15° फारनहीट) से भी न्यून मात्रा में हिमीकर्णिया काम करती है ताकि उसके भीतर रखे हुए आहार पदार्थों मे से शीघ्रातिशीघ्र ऊष्मा को बाहर लाया जा सके।

उपर्युक्त सन्दूकनुमा हिमीकर्णियाँ, अलमारी नुमा हिमीकर्णियों से कही अधिक शीतलता बनाये रखती हैं। दीर्घकाल परिरक्षण के लिए हिमीकर्णियों तथा हिमीकरणालयों मे तापमान 0° एफ० से न्यूनताप का होना अति-आवश्यक है, अर्थात्—5° से–10° एफ० तक न्यूनताप को पहुँचाते हैं। इस तापमास मे कोई खास अन्तर नही आने देना चाहिए, अर्थात् अगर हम—10° एफ० चाहते हैं तो इस तापमान को हिमीकर्णियों मे लगातार प्राप्त कराते रहना चाहिए ताकि उसमे किसी प्रकार का अवरोध पैदा न हो सके।

साधारणतया फल-तरकारियों को 0° एफ० से नीचे के तापमान पर 8 से 12 माह तक परिरक्षित रख सकते हैं, लेकिन नीबू वर्गीय फलों को 4 से 6 माह से अधिक परिरक्षित नहीं रखा जा सकता। दानेदार चीनी मिलाकर हिमीकरण किया हुआ आहार, चाशनी मे तैयार किये हुए आहार के बराबर अधिक दिनो तक परिरक्षित नही रहेगा। घरों मे जब हिमीकरण किया जाता है तब हिमीकर्णी में विभिन्न आहार विभिन्न मात्रा की वाहिकाओं में भरकर हिमीकरण के लिए रखना स्वाभाविक है, लेकिन यह ध्यान रखना होगा कि विभिन्न आहारों का हिमीकरण समय तथा परिरक्षण अवधि भिन्न-भिन्न होती है, इसलिए हर पैकेज में आहार का नाम, रखे जाने की तिथि, अवश्य अंकित होनी चाहिये, ताकि उचित समय पर उसका उपभोग किया जा सके। अन्यथा आहार हिमीकरण होने के पूर्व या उसकी परिरक्षण अवधि के पश्चात् ही खोलना पडेगा। फलस्वरूप पदार्थ या तो अपूर्ण रूप से हिमीकृत होगा या हिमीकृत पदार्थ विकृत हो सकता है। इसलिए पैकीकरण के समय उनमे लेबलीकरण, जैसे पदार्थ का नाम, हिमीकरण के लिए रखी गई तारीख तथा उसकी औसत परिरक्षण अवधि इत्यादि, का उल्लेख अनिवार्य समझा जाता है। इसके साथ ही हिमीकरणी में रखे हुए पदार्थ का नाम तथा उसकी रखने की तिथि तथा परिरक्षण अवधि इत्यादि अंकित की हुई तालिका हिमीकर्णियो के बाहर भी अनिवार्य है। इससे आपको यह अन्दाजा होगा कि उसके भीतर कौन-कौन सी वस्तु कौन सी तारीख से पहले उपभोग कर लेनी चाहिये। फलस्वरूप हिमीकर्णी को अधिक देर तक खुला रखने तथा पैकेट को इधर-उधर करके वस्तुओ को खोजने की तकलीफों से बचा जा सकेगा। इसके अलावा बार-बार हिमीकर्णी खोलने व बन्द करने तथा अधिक समय तक खुला रखने आदि क्रियाओ से हिमीकर्णी पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है क्योकि रिफिजरेटर की भाँति हिमीकर्णी भी अधिक

देर तक खुला रखने से उसके भीतरी तापमान मे अन्तर आ जाता है। फलस्वरूप यन्त्र को हानि भी पहुँचती है।

उपर्युक्त सारी बातें व्यावसायिक स्तर पर काम में लेने वाले हिमीकरणालय मे भी लागू होती हैं। बड़े कारखानों की हिमीकर्णियो तथा हिमीकरणालयों को समुचित रूप से ऊष्म-रोधीकृत किया हुआ होना चाहिए जैसा कि शीतगोदामो मे किया जाता है। शीत-गोदामो की भांति हिमीकरणालय भी काम करते हैं लेकिन अन्तर इतना है कि जितना रिफ्रिजरेटर तथा हिमीकर्णी मे है।

पूर्व हिमीकरण क्रियाएं

विविध परिरक्षणो की भांति इस परिरक्षण के लिए भी आहारो को विशेषतया फल-तरकारियों को समुचित रूप से धोना आवश्यक है। इसके लिये जालीदार टोकरियाँ चाहे बेंत की बनी हुई हो या अन्य किसी उचित काष्ठ की हो, काम मे ली जा सकती है। आजकल स्टेनलैसस्टील, एल्युमिनियम, प्लास्टिक आदि से बनी टोकरियाँ प्रायः धोने के काम मे ली जाती हैं। उपर्युक्त टोकरियो मे फल-तरकारियो को भरकर टकियो मे डुबो-डुबो कर धोने मे तथा जल निकालने मे आसानी ही नही बल्कि समय की बचत भी होती है। साथ ही फल-तरकारियाँ क्षतिग्रस्त भी नहीं होती। क्योंकि जल से बाहर निकालते ही उनमे से पानी आसानी से निकल जाता है, क्योंकि हिमीकरण परिरक्षण के लिये फल-तरकारियाँ पानी मे अधिक देर (समय) छोड़ना उचित नहीं है।

धोने के बाद आप जिस रूप मे चाहे उसी आकार मे काटकर विवर्णीकरण करें या जिनका रस निकालना है उनका रस निकाल लें। जिस रस को सान्द्रकर (गाढ़ाकर) हिमीकरण करना है, उस रस को यथाशीघ्र सांद्र कर लेना चाहिये। अन्य परिरक्षणों की भांति हिमी-करण के लिये भी आवश्यक यन्त्र सामग्रियाँ तथा उपस्करो के पुर्जे, जो सीधे फल-तरकारियो के सम्पर्क मे आते है, वे लोहा या गलवनीकृत लोह धातु के बने हुए नहीं होने चाहिये। एल्युमिनियम, चीनी मिट्टी के बर्तन, कांच के बर्तन, स्टेनलैसस्टील तथा रागालेपित इस्पात की बनी वाहिकाएँ, पुर्जे आदि होने चाहिए।

कुछ लोग अज्ञानवश गलवनीकृत (जस्तालेपित) वाहिकाओं में, जैसे बाल्टी, भगोने आदि पात्रो मे खटाई वाले आहार जैसे फल-तरकारी रस भी भरने के काम मे लेते है। फलस्वरूप आहार मे पाई जाने वाली अम्लता (खटास) जस्ते से प्रक्रिया कर एक विष पैदा करती है जो स्वास्थ्य के लिए हानिकारक है। इसलिए उपर्युक्त दोषयुक्त बर्तनों में खाद्य पदार्थों को नहीं रखना चाहिये। इसी प्रकार सम्पूर्ण रागालेपित बर्तन भी सुयोग्य नही हैं, जिसके बारे मे पहले ही चर्चा की जा चुकी है।

वाहिका में भराई

वाहिकाओं मे तैयार किये हुए पदार्थों को भरने के पहले शीतलीकरण करना आव-श्यक है—जिसको हम पूर्व शीतलीकरण की संज्ञा देते हैं। पूर्व शीतलीकरण जितना न्यून तापमान पर होगा, उतनी ही उस आहार के वर्ण, सुगन्ध, सरचना आदि ज्यों की त्यो उस पदार्थ मे बनी रहेंगी। इसी प्रकार भरते समय भी ध्यान रखना है कि उसके भीतर वायु न रह सके। जब वाहिकाओं मे जब खाद्य पदार्थ भरते है तब उनके भीतर रही हुई वायु को बड़ी सावधानी से बाहर निकालना चाहिए ताकि वह पुनः प्रवेश नही कर सके। साथ

ही उचित मात्रा में वाहिकाओं में शीर्ष स्थान भी छोड़ना अनिवार्य है। पोलिथलिन से बनी नम्य वाहिकाओं में भरने के बाद आटोमैटिक वैक्युम-सीलर की सहायता से निर्वातीकरण कर वायुरुद्धता से सीलबन्द की जाती है। शीर्ष-स्थान विशेष तौर से उन वाहिकाओं में देना आवश्यक है जिनमे द्रव्य भरते हैं अथवा द्रव्य माध्यम मे घन आहार को भरा जाता है, जैसे—फलरस, रस सांद्रता तथा फलरस में फल टुकड़ो को डालकर जहाँ हिमीकरण किया जाता है वहाँ शीर्षस्थान छोडना आवश्यक है, क्योंकि फल रस, जल की भाँति हिमीकरण के समय अपना व्यास बढाता है। अगर शीर्षस्थान नही छोड़ा जाता है तो वाहिका को तोड़ देगा या फाड़ देगा। कुछ खाद्य पदार्थ हिमीकरण के समय अपना व्यास बढ़ाने के बजाय सुकड़ते भी है। चाशनी में जिन पदार्थों का हिमीकरण किया जाता है, उनका व्यास नही बढता, जबकि जल में हिमीकरण किया जाय तो 10 प्रतिशत व्यास बढ़ जाता है। जल में शर्करा की मात्रा के आधार पर उसकी विकास-शक्ति कम-ज्यादा हो सकती है। कुछ अनुसन्धानकर्त्ताओं ने निष्कर्ष निकाला है कि स्ट्राॅबरी को जब दानेदार शर्करा माध्यम से हिमीकृत किया जाता है तो उसका मामूली विकास होता है। उपरोक्त बातों को ध्यान में रखते हुए ही दृढवाहिकाओं मे फल-तरकारियों को, हिमीकरण के लिए भरना चाहिए।

*विविध वाहिकाओं मे भिन्न-भिन्न माध्यम मे आने वाले अन्तर के अनुरूप अपेक्षित शीर्ष स्थान :—

पैकीकरण का माध्यम	वाहिकाएँ (1) चौड़े मुंह वाली मिलीलीटरों मे	वाहिकाएँ (2) सकड़े मुंह वाली मिलीलीटरों मे	
	पिंट (473 एम. एल.)	क्वार्ट (1946)	पिंट (473)	क्वार्ट (946)
(1) द्रव्य पैक (रस मे, शर्करा मे, चाशनी में हुरे फल तथा कसा हुआ फल या सांद्रीकृत फल रस भरते समय अपेक्षित शीर्षस्थान)	6 एम. एल.	12 एम. एल.	9 एम. एल.	18 एम. एल.
(2) द्रव्य रहित या सूखे तरीके से पैकिंग करते समय फल-तरकारियों के भरने मे अपेक्षित शीर्षस्थान	6 एम. एल.	6 एम. एल.	6 एम. एल.	6 एम. एल.

*संयुक्त राज्य अमेरिका के कृषि विभाग के सौजन्य से—

(1) उपर्युक्त शीर्ष स्थान करीब-करीब सभी वाहिकाओं के लिए चाहे वह सीधी हो या मामूली रूप में परिवर्तित हो।

(2) करीब-करीब सभी फल तरकारियों को भरने के लिए कैनिंग जारों को काम मे लिया जा सकता है, लेकिन जल माध्यम में हिमीकरण करना हो तो कैनिंग जार उपयुक्त नहीं।

(3) फल रसों को हिमीकरण के लिए 18 मिलीमीटर शीर्षस्थान देना आवश्यक है।
(4) सदाबरी ब्रोकोली आदि भरते समय शीर्षस्थान देना अनिवार्य नहीं है।

हिमीकरण प्रणालियाँ

हिमीकरण क्रिया को भिन्न-भिन्न विधियों से सम्पन्न किया जा सकता है। ये विधियाँ हैं—शीतलीकृत लवण द्वारा हिमीकरण, हिम मिश्रण मे पैकीकृत पदार्थों को डुबोकर हिमीकरण, चपटी धातु से बनी प्लेट के मध्य, जिनके भीतर शीतलीकृत लवणहिममिश्रण प्रवाहित होता हो—रखकर हिमीकरण, शीतलीकृत वायु द्वारा हिमीकरण तथा शक्तियुक्त शीतल-वायु को प्रवाहित कराकर हिमीकरण इत्यादि। इसके बारे में हम आगे चर्चा करेंगे।

पैकीकृत आहार पदार्थों को हिमीकरण के पूर्व शीतलीकरण करना अनिवार्य है। अगर आप घर में हिमीकरण करना चाहते हैं तो बैंकिंग करते ही आप उन्हे क्रमानुसार रिफ्रिजिरेटर मे रखा जायें, जब तक पूरी पैकिंग न हो जाय। इसका तापमान 30° से 32° एफ० पर पहुँचते ही क्रमानुसार हिमीकरण मे सजाते जाये। इसी प्रकार रखे हुए पैकीय पदार्थ के सारे के सारे एक ही समय मे अथवा 8 घण्टे मे हिमीकृत हो जाने की क्षमता रखने योग्य होने चाहिए। हिमीकर्णी के भीतर के हरेक 30 5 सेन्टिमीटर वर्ग क्षेत्रफल के लिए 300 ग्राम खाद्य-पदार्थ के अनुपात मे सजाना चाहिए। इससे अधिक भरे जाने पर यन्त्र की हिमीकरण क्षमता भंग हो जायेगी। फलस्वरूप शीघ्र हिमीकरण सम्भव नहीं हो सकेगा तथा आहार पदार्थ खर ब हो सकते है। शीघ्र हिमीकरण के लिए फ्रीजिंग प्लेटों (हिमीकरण प्लेट) के तथा फ्रीजिंग कॉइलों (हिमीकरण कुण्डलियों) के विपरीत मे ही सजाये जाते हैं। इसके अलावा यह भी ध्यान रखना होगा कि प्रत्येक पैकिटो के चारो तरफ हिमीकृत वायु सुचारु रूप से प्रवाहित हो सके। इसके अनुसार समुचित अन्तराल भी देना आवश्यक है लेकिन हिमीकरण क्रिया पूर्ण होते ही पैकिटो को पास-पास रखा जा सकता है। हिमीकृत उत्पादों को शीतगोदाम मे 0° एफ० पर सचयन किया जाता है, ताकि अधिकाधिक दिनों तक परिरक्षित रह सके। अब हम हिमीकरण प्रणाली तथा प्रक्रिया का अध्ययन करेंगे।

शीतलीकृत वायु द्वारा हिमीकरण

हिमीकरणी, हिमीकरण कोष्ठ तथा हिमीकरणालय आदि ऊष्मा-रोधी होते हैं। इनके भीतर पूर्व कथनानुसार पैकीकृत खाद्य-पदार्थों को सजाकर बन्द कर देते है। इसके भीतर की वायु इतनी शीतल की हुई होगी जिससे कि उसके भीतर रखे हुए फल-तरकारी हिमीकृत हो सकें। इसी प्रकार चलन रहित वायु को भापकवायु कहा जाता है। इस क्रिया मे खर्च कम होता है। वायु का आवागमन न होने से हिमीकरण क्रिया भी धीमी होती है, लेकिन इसके भीतर रखे हुए पदार्थ के आरम्भिक (शुरू के) तापमान के अनुसार हिमीकरण अवधि घट या बढ सकती है। इसी प्रकार पैकेट की साइज, उसमे भरे हुए पदार्थ की जाति, उपजाति, किस्म इत्यादि के अनुसार हिमीकरण अवधि मे भी अन्तर आ सकता है।

शक्तियुक्त शीतलीकृत वायु द्वारा हिमीकरण

इस प्रणाली से चलने वाले हिमीकरणालय या यन्त्र आवश्यकतानुसार तथा क्षमता अनुसार एक से अधिक पखों से चलने वाले होते हैं। इनकी सहायता से शीतलीकृत वायु

को भीतर रखे हुए खाद्य-पदार्थों पर प्रवाहित कराकर हिमीकरण क्रिया सम्पन्न कराते हैं। फलस्वरूप खाद्य-पदार्थ पहले वाले से शीघ्र हिमीकृत हो जाते हैं।

संयुक्त राज्य-अमेरिका मे ऊष्म रोधीकृत गुफानुमा हिमीकर्णियो (टनल फ्रिजरों) में हिमीकृत वायु प्रवाहित कराकर उसके भीतर रखे हुए खाद्य-पदार्थ को शीघ्र हिमीकरण कराने की प्रणाली भी आज प्रचलित है। खाद्य-पदार्थों को पैक कर हिमीकृत किया जाता है—तदनुसार हिमीकृत उत्पाद विकृत नहीं होते, लेकिन हिमीकरण कर पैक किया जाय तो इतनी सुरक्षा नहीं होगी, क्योंकि हिमीकरण के पश्चात् जब तक पैकीकरण पूर्ण नहीं हो जाता तब तक बाह्य वायु से खाद्य-पदार्थ का सम्पर्क हो जाता है, जिससे उच्च तापमान के कारण हिमीकृत पदार्थ निर्जलीकृत होने लगते हैं। इसलिए आहार पदार्थों को, विशेषकर फल-तरकारियों को, पैकिंग कर हिमीकरणोपचार के लिए रखा जाता है।

प्रशीतकों के सम्पर्क से हिमीकरण

फल-तरकारियो को अन्य खाद्य-पदार्थों की भाँति धातु-वाहिकाओं मे भरकर शीतलीकृत लवण-हिमघोल में डुबोकर रखा जाय तो वे हिमीकृत हो जाते हैं। यह क्रिया खाद्य-पदार्थों के प्रशीतको से सीधे सम्पर्क में न होकर अप्रत्यक्ष रूप से हिमीकरण क्रिया सम्पूर्ण होती है। इसी प्रकार किसी भी वाहिका को काम मे ले सकते है जो लवण घोल के सम्पर्क मे आने से कोई दोष पैदा न करती हो।

पैकिंग किये हुए खाद्य-पदार्थ को पट्टे (बेल्ट) की सहायता से हिमीकृत लवणघोल से भरी हुई वायु-रोधित टंकियो में भेजते है, उस समय आहार को धारण किये हुए पट्टे हिमीकृत लवणघोल मे डूबते हुए एक निश्चित समय के भीतर उसमे से बाहर चले जाते हैं, तब खाद्य-पदार्थ हिमीकृत हो जाता है। इस प्रणाली में दिन-प्रतिदिन सुधार लाया जा रहा है।

प्रशीतक में प्रत्यक्ष सम्पर्क से हिमीकरण

सीधे सम्पर्क से हिमीकरण सम्पन्न कराने के लिए साधारणतया प्रयोग मे लाने वाली प्रशीतक वायु अथवा गैस होती है लेकिन प्रत्यक्ष सम्पर्क से हिमीकरण के लिए द्रव प्रशीतक को काम मे लिया जा सकता है, क्योंकि प्रशीतक उपर्युक्त प्रशीतकों से कहीं अधिक ऊष्मा चालक (Good Conductor of Heat) है, जैसे धातु अथवा लवण, चाशनी इत्यादि। इन वस्तुओं का शीतलीकरण कर उनमे खाद्य-पदार्थ को सुचारु रूप से रखा जाय तो हिमीकृत हो जायेगा। खाद्य--पदार्थ को उपर्युक्त वस्तु की सहायता से हिमीकृत करने के लिए उसे हिमीकारी द्रव मे रखने या हिमीकारी द्रव को हिमीकरणी में रखने के बाद उस पर जेटस्प्रे (अदृश्य बिंदु) द्वारा बौछार लगाने से भी हिमीकरण हो जायेगा।

हम यह भली-भाँति जानते है कि फल-तरकारियों में अधिकांश जल है। यह 25° से 32° एफ० तापमान पर हिमीकृत हो जाते हैं, लेकिन फल-तरकारियाँ जब तक परिपूर्ण रूप से हिमीकृत नहीं हो जायेंगी तब तक उनके तापमान पर कोई विशेष परिवर्तन सम्भव नहीं होगा। इसलिए खाद्य-पदार्थों मे पाई जाने वाली ऊष्मा को शीघ्रातिशीघ्र विसर्जित करना ही प्रशीतको का उद्देश्य है। भिन्न-भिन्न खाद्य-पदार्थों का तापमान अलग-अलग होता है, इसलिए उनके हिमीकरण के लिए आवश्यक तापमान में भी अन्तर आ जाता है। पत्तागोभी, फूलगोभी आदि के हिमीकरण बिन्दु 31° से 32° एफ० है। हरा मटर, सदाबरी आदि, का

31° से 30° एफ०, रसबरी, गाजर आदि का हिमीकरण विन्दु 29° से 30° एफ. है। लेकिन आलू का 28° एफ० तापमान होता है। केला तथा लहसुन का हिमीकरण विन्दु 25° से 26° है। वालनट का हिमीकरण विन्दु 20° एफ० तथा मूंगफली का 17° एफ० है। अगर देखा जाय तो उपर्युक्त सारे पदार्थों का औसत हिमीकरण बिन्दु 28° एफ० दिखाई देता है, इसलिए प्रत्येक वस्तु का सही हिमीकरण विन्दु से न्यून तापमान में हिमीकरण करना सम्भव है।

निर्जलीकरण-हिमीकरण (Dehydro-Freezing)

आज विकसित देशों में, विशेष कर संयुक्त राज्य अमेरिका में प्रचलित एक परिरक्षण विधि है–निर्जलीकरण-हिमीकरण। फल हिमीकरण की भाँति तैयार कर उन्हें हिमीकरण के पूर्व उसमें सम्भवतया पाये जाने वाले जलांश के आधे भाग को निर्जलीकरण द्वारा विसर्जित कराकर पैंकिंग किया जाता है, तुरन्त बाद उन्हें हिमीकरण के लिए हिमीकरण में सजाकर हिमीकरण किया जाता है। इस विधि को ही निर्जलीकरण-हिमीकरण कहा जाता है। इस विधि से तैयार किये पदार्थ हिमीकरणोत्पाद से कहीं अधिक गुणयुक्त होते हैं। निर्जलीकरण हिमीकरण प्रक्रिया से 50 प्रतिशत भार भी कम हो जाता है, फलस्वरूप परिवहन खर्च भी कम होता है। लेकिन हरेक वस्तु में पाई जाने वाली जलांश मात्रा भिन्न-भिन्न होती है, इसके अनुरूप उसमें से जलांश को विसर्जित करवाया जा सकता है। 80 से 85 प्रतिशत जलांश वाली फल तरकारियों में से 50 प्रतिशत जलांश निर्जलीकरण द्वारा अलग किया जा सकता है, लेकिन 92 प्रतिशत जलांश वाले पदार्थ में से 65 प्रतिशत जलांश ही दूर किया जा सकता है।

हिमीकरण तथा निर्जलीकरण-हिमीकरण दोनों का अन्तर प्रवाह विधि (फ्लो चार्ट) से समझा जा सकता है। जब निर्जलीकरण-हिमीकरण प्रणाली में अर्द्ध निर्जलीकरण के बाद उन्हें पैकीकरण कराकर हिमीकरण किया जाता है। निर्जलीकरण-हिमीकरण में शर्करा की आवश्यकता नहीं होती।

हिमीकरण-निर्जलीकरण (Freeze-dehydration)

यह विधि भी विकसित देशों में ही प्रचलित है। जो पदार्थ हिमीकृत हो चुका है उसे निर्जलीकरण क्रिया विधेयक बनाया जाता है। जब ऊष्मा प्रयोग होता है तब हिमीकृत वस्तु में उपस्थित ठोस जलांश वाष्प रूप में परिवर्तित हो जाता है। फलस्वरूपफल-तरकारियाँ सुकड़ते नहीं है तथा उनमें रूप परिवर्तन भी नहीं होता। अब हम यह देखेंगे कि हिमीकरण-निर्जलीकरण किस सिद्धान्त पर आधारित है।

जल त्रिगुण बिन्दु (Triple-Point of Water)

हम अच्छी तरह जानते हैं कि प्रकृति में जल तीन विभिन्न रूपों में पाया जाता है। जबकि जल को 4.7 मी० मि० दबाव में (पारे के) तथा 32° एफ० तापमान की परिस्थिति में जल को रखा जाय तो उपर्युक्त तीनों रूप में (ठोस, द्रव, वाष्प) पाया जायेगा। जहाँ ये तीनों गुण पाये जाते हैं, उस बिन्दु को जल त्रिगुण बिन्दु कहा जाता है।

जल को अगर ठोस अवस्था से सीधा वाष्प अवस्था में लाना है तो हमें जल को ठोस अवस्था को 4 7 मि० मी० दबाव पर लाना होगा। इससे अधिक दबाव बढ़ जाय तो ठोस जल बिना द्रव से वाष्प नहीं बन सकता।

साधारण खाद्य-पदार्थों के ठोस जलांश को वाष्प अवस्था में सीधा पहुंचाने के लिए 4.7 मि० मी० दवाव आवश्यक है। हिमीकरण-निर्जलीकरण विधि इसी सिद्धान्त पर आधारित है। इसलिए हिमीकृत उत्पादों को रिक्त निर्जलीकरणी में सजाकर चलाया जाय तो उस यन्त्र के दवाव, पारे मे 4.6 मि० मि० हो जाता है, साथ ही उसके भीतर रिक्तावस्था भी सम्पन्न होती है। फलस्वरूप हिमीकृत पदार्थों मे पाये जाने वाला ठोस जल बिना द्रव बने ही वाष्प रूप बनने के लिए तत्पर हो जाता है। फलस्वरूप हिमीकृत उत्पाद को इस परिस्थिति मे उचित ऊष्मा उन पर प्रवाहित करा कर उसे सुखाया जा सकता है।

हिमीकृत-निर्जलीकरण उत्पादों की विशेषताएं

(1) हिमीकृत-निर्जलीकरण उत्पादों की रूप/प्रतीति मे कोई अन्तर नही आता।

(2) 70 से 90 प्रतिशत भार की कमी हो जाती है।

(3) हिमीकृत निर्जलीकरण से परिरक्षित पदार्थ बहुत कमजोर होते हैं तथा टूट सकते हैं, इसलिए इन्हे बहुत सावधानी से सम्भालना होगा।

(4) अन्य निर्जलीकरणोत्पादो से पुनः रचना गुण इनमे अधिक होते हैं।

(5) इसमे किण्वन क्रिया नही होती, क्योंकि खाद्य-पदार्थों की विवर्णीकरण-पाचकीकरण आदि क्रिया में कोई एक विधेयक सम्पन्न कराकर हिमीकरण-निर्जलीकरण किया जाता है।

लेकिन इसका एक विशेष दोष यह है कि उत्पाद अन्य परिरक्षित उत्पादो की भाँति रुचिपूर्ण नही होता।

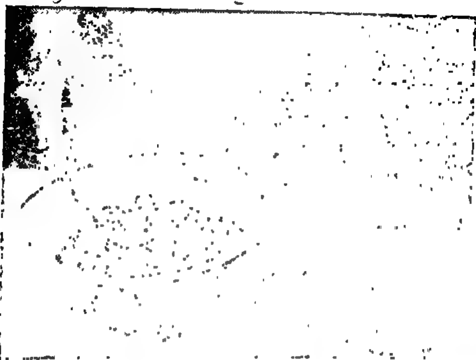
विविध फलों की हिमीकरण विधि

सेब हिमीकरण

कैनीकरण के योग्य सेब ही हिमीकरण के लिए उपयुक्त है। धोकर, छिलका उतार कर एक प्रतिशत सोडियम-बाई-सल्फाइट घोल में 4 मिनट रख देते हैं, फलस्वरूप सेब का बभ्रूकरण से वर्णभेद नही होगा। आँक्सीकरण से होने वाले वर्णभेद को रोकने के लिए (गन्धकीकरण के बिना) 2 से 4 मिनट विवर्णीकरण के पश्चात्, शीतलीकरण कर अधोलिखित किसी भी एक तरीके से हिमीकरण किया जा सकता है। विवर्णीकरण के बारे मे कैनीकरण तथा निर्जलीकरण मे विशेष रूप से चर्चा की जायेगी।

चाशनी माध्यम द्वारा

आमतौर पर 30° से 40° ब्रिक्स की चाशनी काम मे ली जाती है। इसमे 0.1 से 0.15° प्रतिशत (मणिमय) विस्टलीय अस्कॉर्बिक अम्ल मिलाने से उसमें रखे हुए सेवों के टुकडो मे भविष्य में भी बभ्रूकरण नही होगा। चाशनी ठन्डी होने के बाद अस्कॉर्बिक अम्ल मिलाना चाहिए। पहले थोड़ी-सी चाशनी वाहिका में डालकर उसके ऊपर सेव के टुकडों को इस प्रकार सजाया जाता है कि टुकडे टूट न पावें। साथ ही सतर्कता से उन्हें दवा-दवा कर भरना चाहिए, आवश्यकतानुसार चाशनी भर देनी चाहिए ताकि उचित



चित्र संख्या—17

शीर्षस्थान भी उसमें रह सके, इसके बाद उनको मुहरबन्द कर देना चाहिए ताकि उनके भीतर वायु न रह सके। इसके बाद उन्हें हिमीकर्णी यन्त्र मे सजाया जाता है ताकि उचित समय मे हिमीकृत हो सके।

मणिमय (क्रिस्टलीय) शर्करा में हिमीकरण

गन्धकीकरण या लवणीकरण या विवर्णीकरण के पश्चात् सेब के टुकडो में मणिमय (क्रिस्टलीय) शर्करा मिलाई जाती है। एक किलो फल के लिए 157 ग्राम शर्करा के अनुपात से मिलाना चाहिए। क्रिस्टलीय शर्करा फलों पर क्रमानुसार छिड़क देते हैं, साथ ही उन्हें एकरूपता से मिला देते है। इन्हें वाहिकाओं मे भरकर, उचित शीर्ष-स्थान छोड़कर मुहर-बन्द कर देते हैं (चित्र 17)

लवणीकरण के लिए सेब के टुकडों को 2 प्रतिशत लवणघोल में 15 से 20 मिनट तक डुबोकर रखा जाय तो उसमे बभ्रूकरण नही होगा।

अंजीर हिमीकरण

अंजीर पूर्णरूप से पका हुआ होना चाहिए, लेकिन कैनीकरण के लिए अधपका फल ही काम में लिया जाता है। हिमीकरण के लिए अंजीर की किस्म मिठास वाली होनी भी आवश्यक है। इन्हें धोकर टुकड़े करें अथवा साबुत भी हिमीकरण के लिए प्रयोग मे ले सकते है। अगर इसका छिलका नरम है तो निकालने की आवश्यकता भी नही होती। इन्हें मन्द सल्फरडाई-ऑक्साइड के घोल मे डुबाकर लिया जाय तो इनमे वर्णभेद नहीं होगा।



चित्र संख्या—18

इनमें भी 0.1 से 0.15 प्रतिशत अस्कॉर्बिक अम्ल मिलाकर हिमीकरण किया जाय तो भविष्य में, गोदामीकरण (संचयन) के समय वर्णभेद होने से रोका जा सकता है। अंजीर का भी तो विभिन्न प्रकार से हिमीकरण किया जा सकता है—

1. चाशनी माध्यम से

अंजीर हिमीकरण के लिए 35° ब्रिक्स की चाशनी काम में ली जाती है। गन्धकीकृत फलों को अस्कॉर्बिक अम्ल युक्त चाशनी से वाहिका में तैरा देते हैं। उचित शीर्ष-स्थान छोड़ना आवश्यक है। तुरन्त वाहिका मुद्रबन्द कर दी जाय ताकि उसके भीतर वायु न रह सके। अस्कॉर्बिक अम्ल के अभाव में खासतौर से गृहों में निर्मलीकृत नीबू रस भी चाशनी में मिलाया जा सकता है। एक लीटर चाशनी के लिए आधा कप निर्मलीकृत नीबू रस मिलाया जा सकता है। मुद्रबन्द वाहिकाओं को हिमीकरण के लिए हिमीकर्णी में सजाया जाये।

2. फीका हिमीकरण

अगर अंजीर को बिना शर्करा के हिमीकरण करना है तो उपर्युक्त मात्रा में अस्कॉर्बिक अम्ल मिलाये हुए जल के माध्यम से पैकीकरण कर हिमीकरण किया जा सकता

है। अगर जल नहीं मिलाना हो तो एस्कॉर्बिक अम्ल घोल बनाकर अंजीर में छिड़क दें, उन्हें वाहिका मे भरकर मुहरबन्द कर दें तथा उन्हें हिमीकरण के लिए हिमीकर्णी में सजा दें।

संदलित अंजीर हिमीकरण

उपर्युक्त विधि से तैयार किये हुए अंजीर को यन्त्र सहायता से संदलित किया जाता है लेकिन संदलन महीन नहीं होना चाहिए। एक किलो संदलित अंजीर के लिए 214 ग्राम से 243 ग्राम शर्करा तथा 11.4 ग्राम एस्कॉर्बिक अम्ल मिलाकर वाहिका में भरकर हिमीकरण करना चाहिए। इनमें भी मुहरबन्द करने से पूर्व उचित शीर्ष-स्थान छोड़ना न भूलें।

अंगूर हिमीकरण

चाशनी माध्यम से अंगूर अच्छी तरह हिमीकृत किया जा सकता है। अगर अंगूर हिमीकरण भविष्य मे जैम, जैली या अंगूर का रस बनाने हेतु हो तो शर्करा नहीं मिलानी चाहिए।

पूर्ण विकसित पके हुए तथा नरम अंगूर ही हिमीकरण के लिए चुनना चाहिए। इसी प्रकार चुने अंगूर मे चाहा गया वर्ण तथा सुगन्ध अपेक्षित है। अंगूर का डण्ठल निकालकर उसके दाने अलग कर दिये जाते हैं, और अच्छी तरह धोकर निकाल दिया जाता है। अगर अंगूर की इन किस्मो में बीज हो तो उन्हें टुकड़े कर बीज निकाल दिये जाते हैं, अन्यथा साबुत ही हिमीकरण के लिए लिया जा सकता है। इसके लिए काम में ली जाने वाली चाशनी का ब्रिक्स 40° होना आवश्यक है। अगर फीका हिमीकरण करना है तो बिना



चित्र संख्या—19

चाशनी मिलाये भरना चाहिए जैसा कि पहले बताया है। उचित शीर्ष-स्थान, मोहरबन्द आदि के पश्चात् उन्हें हिमीकरणी में सजाया जाता है ताकि हिमीकृत हो सके।

सांद्रीकृत अंगूर हिमीकरण

उपर्युक्त विधि के अनुसार तैयार किये हुए अंगूरों को यन्त्र द्वारा संदलित किया जाता है। उन्हें थोड़ी देर उबालकर रस निकालकर सांद्रीकृत किया जाता है। इस रस को सांद्रीकृत किया जाता है। एक प्रत्येक अवस्था तक सांद्रीकृत करते हैं उस अवस्था को अंग्रेजी में प्युरण

(Puree) कहते हैं। इसी प्रकार के एक किलोग्राम सांद्रीकृत अंगूर के लिए 150 ग्राम शर्करा मिलाई जाती है। इन्हें वाहिकाओं में भरकर उचित शीर्षस्थान छोड़कर सीलबन्द कर हिमीकरण किया जाता है।

अंगूर रस

पहले बताये गये अनुसार साफ कर तैयार किये हुये अंगूर के दानों का रस निकालें। इस रस को जैलीबैग (Jelly Bag) की सहायता से छान कर निकालें तथा इस रस को रात भर रिफ्रिजिरेटर में या शीतगोदाम में संचयन रखें। दूसरे दिन इस रस को निथार कर निकालें। इसे उचित वाहिकाओं में भर कर सील बंद कर हिमीकरणी में रखें। कारखानों फलरस निकालने तथा निर्मलीकरण प्रक्रिया के बारे में इस ग्रन्थ में अन्यत्र चर्चा की गई है। यदि अंगूर के रस में टर्टरेट मणिभ (क्रिस्टलीकृत) पाया जाय तो उसे हिमीकरण के पश्चात् निर्हिमीकरण कर निकाला जा सकता है।

आम का हिमीकरण

कैनीकरण की भाँति हिमीकरण के लिए भी जो आम चुने जाते हैं वे पूर्ण विकसित पके हुए तथा ठोस गूदे वाले होने चाहिए जो मनपसन्द सुगन्ध तथा वर्ण वाले हों। आमों को पहले धोकर, छिलका उतार दिया जाता है, इसके बाद इनकी फांकें बनाई जाती हैं। इन फाकों को उचित आकार में कतरा जाता है। इन टुकड़ों को आवश्यकतानुसार क्षमता वाली वाहिकाओं में भर कर चाशनी माध्यम से पैकीकरण किया जाता है। इसमें काम में ली जाने वाली चाशनी 25° से 40° ब्रिक्स की हो सकती है। काम में ली जाने वाली चाशनी का ब्रिक्स उपभोक्ता की इच्छानुसार कम या ज्यादा किया जा सकता है, जिनका अपना अलग अलग विपणन नाम होता है। चाशनी में तैयार हुये कतरे, हुये आम के टुकड़ों वाली वाहिकाओं को उचित शीर्षस्थान देकर सील बंद कर हिमीकरण किया जाता है। संयुक्त राज्य अमेरिका, ब्रिटेन, कनाडा, जर्मनी, रूस आदि देशों में आम के उत्पादों की अधिक माँग है। खास तौर से उपर्युक्त विधि से उत्पादित हिमीकृत आम। विदेशी मुद्रा अर्जन के लिए यह एक अच्छा व्यवसाय है।

अनन्नास हिमीकरण

कैनीकरण के लिए उपयुक्त अनन्नास किस्में ही, हिमीकरण के लिए भी चुनी जाती है। कैनीकरण की भाँति हिमीकरण के लिए भी फल को तैयार करना है। जैसे—धोना, मुकुट निकालना, छिलका उतारना या छिलका उतारने के पहले अपेक्षित मोटाई में कतरना, छिलका तथा कोर (पित्त) निकालना, विवर्णीकरण करना आदि। इसके पश्चात् कतरे हुए अनन्नास के वलयों को अथवा क्यूब या गाँठिया आकार के टुकड़ों के रूप में बनाकर काम में लिया जा सकता है। इन टुकड़ों को वाहिकाओं में भर कर हिमीकरण किया जा सकता है। जहाँ मिठास की आवश्यकता नहीं है—लेकिन उचित मात्रा में जैसे पहले ही कहा जा चुका है, अस्कॉर्बिक अम्ल मिलाना न भूलिए।

चाशनी माध्यम से

इसके लिए 25° या 40° ब्रिक्स की चाशनी काम में ली जा सकती है। इसमें 0·1 से 0·2 प्रतिशत अस्कॉर्बिक अम्ल मिलाना चाहिए। इन्हें वाहिकाओं में क्रमानुसार

सजाकर अपेक्षित ब्रिक्स की चाशनी में तैराया जाय, इसके बाद उचित शीर्षस्थान देकर सील बंधन आदि के पश्चात् हिमीकरण के लिए रखा जाता है। कुछ लोग शर्करा मिलाये हुए अनन्नास के रस को ही चाशनी के बजाय उपयोग मे लेते है, क्योंकि अनन्नास के बचे हुये टुकड़ों मे से निकाला हुआ रस इसके लिए काम मे लिया जा सकता है, जहाँ उपर्युक्त रस का कोई अन्य उपयोग नजर नहीं आता। इसी प्रकार अनन्नास के रस का भी उचित मात्रा मे अस्कारबिक अम्ल मिला कर हिमीकरण किया जाता है।

आड़ू फलों का हिमीकरण

हिमीकरण के लिए आड़ू फल (Peaches) सर्वोत्तम माना जाता है। कैनीकरण की भांति सिमीकरण के लिए चुने जाने वाले फल पूर्ण विकसित पके हुए तथा ठोस होने चाहिएँ पके हुये फलों के ऊपर कही भी हरा छिलका नही होना चाहिए। फलो को कैनीकरण भांति तैयार कर एक प्रतिशत सोडियम-बाई-सल्फाइड घोल मे 4–5 मिनट रखा जाता है ताकि उनमे वर्णभेद न आवे। इसी प्रकार तैयार किये हुये फलों को 3 भिन्न-भिन्न तरीको से हिमीकरण किया जा सकता है। (चित्र संख्या अन्य 22 B व C)

1. चाशनी माध्यम से

इसके लिए काम मे ली जाने वाली चाशनी का ब्रिक्स 40° होना चाहिये, तथा इस चाशनी में 0.1 प्रतिशत अस्कारबिक अम्ल मिलाना चाहिये। फलस्वरूप आड़ू फल के वर्ण तथा सुगन्ध मे कोई हानि नहीं होगी। जैसा कि पहले कहा जा चुका है—उसी प्रकार वाहिका में थोड़ी चाशनी भरने के बाद उसमे टुकड़ों को सजा दिया जाता है, साथ ही चाशनी मे तैरा दिया जाता है। अपेक्षित शीर्षस्थान देकर इन वाहिकाओ को सीलबद कर शीतलीकरण कर हिमीकरणी मे हिमीकरणार्थ सजा दिया जाता है।

2. शर्करा क्रिस्टल द्वारा

उपर्युक्त विधि से तैयार किये हुए फलो को गन्धकीकरण के पश्चात् 25 से 30 प्रतिशत क्रिस्टलीय शर्करा छिड़काकर वाहिकाओ मे भर दिया जाता है—जहाँ उचित शीर्षस्थान देकर सील बद कर दिया जाता है। इसके पश्चात् शीतलीकरण कर हिमीकरणार्थ हिमीकरणी में सजाया जाता हैं।

आड़ू का फीका हिमीकरण

यहाँ चाशनी की बजाय 0 2 से 0·3 प्रतिशत अस्कॉर्बिक अम्ल युक्त घोल काम मे लिया जाता है, अन्य क्रियाएँ पूर्वानुसार की जाती है।

कतरा हुआ या संदलित या सांद्रीकृत आड़ू फलों का हिमीकरण

उपर्युक्त तरीके से तैयार किये हुए फलों को यन्त्र द्वारा कतरा जाता है या संदलित किया जाता है या उनका रस निकाल कर सांद्रीकृत किया जाता है। इसके बाद हिमीकरण के लिये रखा जाता है। इसके लिये 25 से 30 प्रतिशत शर्करा तथा 0 15 प्रतिशत अस्कॉर्बिक अम्ल मिलाकर वाहिका मे पूर्व वर्णित विधि अनुसार भर कर हिमीकरणोपचार के लिये रखा जाता है।

चकोतरे तथा सन्तरे का हिमीकरण

चकोतरे तथा सन्तरे के हिमीकरण के लिये पेड़ पर पके फल उपयुक्त माने जाते हैं।

इन्हें धोकर, छिलका उतार कर इनकी फाकें अलग-अलग कर ली जाती है, जिनमे किसी प्रकार के अनचाहे ऊतक न लगे हुये हो। हर एक फांकों मे से बीजों को निकाल देना चाहिये। इन्हें वाहिका मे सजाने के पहले थोड़ी चाशनी भरना न भूलें। चाशनी का ब्रिक्स 40° तथा उसमे मिलाये हुये अस्कॉर्बिक अम्ल की मात्रा 0·1 से 0·15 प्रतिशत होनी चाहिये। इन्हें हिमीकरण के लिये पैकिंग किया जाय।

रस हिमीकरण

उपर्युक्त फलों का रस निकालकर उसमे 10 से 15 प्रतिशत शर्करा तथा 0.1 से 0 16 प्रतिशत अस्कारबिक अम्ल मिलाकर अपेक्षित वाहिका में भर कर हिमीकरण के लिये रखा जाता है, लेकिन उचित शीर्षस्थान छोड़ना अनिवार्य है। ध्यान रखें कि इसी प्रकार के नीबूवर्गीय फलरस के हिमीकरण के लिए काच की वाहिका या सी-इनामल लेपित कैन होना आवश्यक है, अन्यथा कुछ दिनो बाद रस दुर्गन्ध हो सकती है।

नासपाती हिमीकरण

पूर्ण रूप से पके हुए व ठोस फलो को चुनना चाहिये। इन्हे धोकर, छिलका उतार कर, उसके बीज कक्ष को अलग कर उचित आकार मे टुकड़े किये जाएँ। इन टुकड़ो को 40° ब्रिक्स की चाशनी मे 2 मिनट पकाएँ, इन्हें चाशनी से निकाल कर पुन: 40° ब्रिक्स की ठण्डी चाशनी मे पैक किया जाता है, जिसमें 0.2 प्रतिशत अस्कारबिक अम्ल मिलाया हुआ हो। इसके पैकीकरण का तरीका भी पूर्ववर्णित ही है। इसी प्रकार पैकीकृत नासपातियों को हिमीकरणार्थ सजाया जाता है।

नारियल का हिमीकरण

पूर्ण विकसित पके हुये नारियल चुने जाते हैं। इनकी खोपड़ी को तोड़ कर इसकी गिरी को कसकर निकाला जाता है। इस गिरी को अपेक्षित शीर्षस्थान छोड़ कर वाहिकाओं मे भर कर नारियल की गिरी के रस मे तैरा कर मिलाया जाता है उसके बाद सीलबद्ध कर, हिमीकरण के लिये रखा जाता है।

मिश्रित फलों का हिमीकरण (Fruit Cocktail Freezing)

मनचाहे फलो को इच्छानुसार सुन्दर रूप में कतर कर, वाहिका मे भर कर चाशनी मे तैरा देते हैं। चाशनी का ब्रिक्स 30° से 40° हो तथा उसमे 0 1 प्रतिशत अस्कारबिक अम्ल मिलाया हुआ हो। इन्हें उचित शीर्षस्थान देकर सील बद कर, हिमीकरण के लिये रखा जाता है। आम तौर पर अंगूर, तरबूज, अनन्नास, सेब, नीबू वर्गीय फल, आम, नासपाती, अमरूद, मरसफल जैसे—रसबरी, स्ट्राबरी दो या अधिक फलो को आवश्यकतानुसार कतर कर मिलाया जाता है जो हिमीकरण के लिये सुयोग्य माने जाते हैं।

फल रसों को हिमीकरण के लिये काम मे लेते समय बोतलीकरण की भांति रस को क्षणपास्तुरीकरण प्रणाली से तैयार कर (किण्वकों को निष्क्रिय बनाने के लिए) हिमीकरण किया जाता है, ताकि उसकी प्राकृतिक सुगन्ध, वर्ण इत्यादि हो नहीं उसके गुण भी सम्पूर्ण रूप से जहाँ तक सम्भव हो, उसमे रोके जा सकें। नीबूवर्गीय फल रस तैयार करते समय उसमे वायु प्रवेश नहीं होने देनी चाहिये। इस रस को 190° से 195° एफ तापमान पर पास्तुरीकरण कर हिमीकरणार्थ उपयोग मे लेना चाहिये। इस सम्बन्ध मे विस्तृत जानकारी फल वर्ग पेयों के अध्याय मे दी गई है।

तरकारी हिमीकरण

तरकारियों को तोड़ते ही उनका जितना शीघ्र हिमीकरण किया जाये उतना ही उच्च कोटि का उत्पाद प्राप्त होगा । हम यह भी जानते हैं कि अधिकांश तरकारियाँ कोमल अवस्था में ही उपयोग योग्य होती हैं । इसलिये तरकारियों का चुनाव करते समय इस बात का ध्यान अवश्य रखना होगा । तरकारियों को फलों से कहीं अधिक सावधानी से धोकर काम में लेना होगा, क्योंकि अधिकांश तरकारियाँ भूमि की सतह पर या उसके समीप उगती हैं—फलस्वरूप इनमें सूक्ष्मजीवियों की संख्या भी अधिक पायी जाती है । पूर्ण रूप से धोकर निकाली हुई तरकारियों को उसके आकार के अनुरूप वर्गीकरण किया जाता है । अधिक जानकारी प्रत्येक तरकारियों के हिमीकरण के समय बतायी जायेगी ।

विवर्णीकरण (Blanching)

कैनीकरण की भाँति, हिमीकरण के लिये भी विवर्णीकरण अपेक्षित है, क्योंकि किण्वक क्रिया से होने वाली विकृतियों को रोकने के लिये यह क्रिया अनिवार्य है । विवर्णीकरण के लिये तरकारियों को जालीदार क्रेटों (टोकरीनुमा बर्तन) में भर कर उबलते पानी में या भापोपचार (क्रेट को भाप से भरी रिटार्ट में अल्प समय उपचार करा कर) से विवर्णीकरण किया जा सकता है । अलग-अलग तरकारियों के लिए उसकी अवस्था के अनुपात में विवर्णीकरण में भी अन्तर आ सकता है, जो आगे बताया जायेगा ।

शीतलीकरण

विवर्णीकृत तरकारियों को उबलते पानी में से या भाप में से निकालते ही 60° एफ ताप पर या उससे न्यून ताप पर लाने के लिये विवर्णीकृत तरकारियों को शीतजल में तुरन्त डाल देते हैं या शीतजल की उसके ऊपर बौछार की जाती है ताकि वह अपेक्षित तापमान पर शीतलीकृत हो सके । कुछ लोग बर्फ का पानी भी इसके लिये काम में लेते हैं, लेकिन एक बार काम में लिया हुआ जल पुनः काम में नहीं लेना चाहिए । इस प्रकार शीतलीकृत तरकारियों को पूर्ण जल निस्सारण या स्राव के पश्चात् हिमीकरण के लिये काम में लिया जाता है ।

सदाबरी हिमीकरण

हिमीकरण के लिये भी कैनीकरण योग्य सदाबरी ही योग्य मानी जाती है । इन्हें उनकी मोटाई के आधार पर वर्गीकृत कर, धोकर 5 सेमी. साइज के टुकड़ों में कतरा जाता है । इनकी मोटाई के आधार पर सदाबरी के टुकड़ों को 2 से 4 मिनिट का समय देकर उबलते पानी में विवर्णीकृत करते हैं । शीतलीकरण के पश्चात् इन्हें वाहिका में इस प्रकार सजाया जाता है, (उल्टा) ताकि उसका शीर्षस्थान नीचे की तरफ छूटे । इसमें बिना शीर्षस्थान छोड़े सील बंद कर, शीतलीकरण कर हिमीकरण के लिये रखा जाता है ।

लिमा सेम का हिमीकरण

इसके लिये काम में ली जाने वाली लिमा सेम-फली फूली हुई होनी चाहिए । इनमें से सेम का दाना निकाला जाय तथा उन्हें परिमाण अनुसार वर्गीकृत करें । वर्गीकरण मटर की भाँति यन्त्र द्वारा भी किया जा सकता है । इन्हें भी सेम के परिमाण अनुसार 2 से 4 मिनिट का समय देकर उबलते पानी में विवर्णीकृत करना चाहिये । सम्पूर्ण नमी निकालने

के बाद 12 मिमी. शीर्षस्थान छोड़ते हुये इन्हें वाहिका में भर कर हिमीकरण के लिए रखा जाय (चित्र सं. 22 E व F)।

कतरी हुई सेम का हिमीकरण

सेम की फली नरम तथा चपटी होनी चाहिये। इन्हें धोकर 12 से 14 मिमी. लम्बाई में कतर कर विवर्णीकरण किया जाता है। विवर्णीकरण के लिए उबलते पानी मे करीब 3 मिनट रखना आवश्यक है। इसके पश्चात् शीतलीकरण आदि के बाद वाहिका में भर कर 12. मिमी. शीर्षस्थान छोड़ते हुए पैंकिंग कर हिमीकरण के लिए रखा जाय।

पत्तागोभी का हिमीकरण

इसके लिए चुनी जाने वाली पत्तागोभी ठोस (भारी) होनी चाहिए। इसके ऊपर के पके पत्तो को हटा कर काट दिया जाता है, इन टुकडो को $1\frac{1}{2}$ मिनिट तक उबलते पानी में विवर्णीकरण कर ठण्डा कर 12 मिमी. शीर्ष स्थान देकर वाहिकाओं में भरा जाता है, तत्पश्चात् सील बंद कर हिमीकरणार्थ शीतलीकरण किया जाता है।

गाजर का हिमीकरण

हिमीकरण के लिए चुनी जाने वाली गाजर नर्म, मीठी तथा कम क्रोड (अभ्यन्तर) होनी चाहिये। इन्हे अच्छी तरह रगड कर धोएँ ताकि मिट्टी ही नही, बल्कि उसकी छोटी-छोटी रोम रूपी जड़ भी निकल जाएँ। इसके बाद उसके दोनो सिरे जो खाने योग्य नही हैं, अलग कर दें। अगर गाजर छोटी हो तो काटने की आवश्यकता नही है, अन्यथा काटना चाहिए। साधारणतया कतरे हुए टुकडों का आकार 6 मिमी. होना चाहिये। बिना कतरी हुई छोटी गाजरों को उबलते पानी मे 5 मिनिट तक तथा 6 मिमी. वाले टुकडों को 2 मिनिट तक विवर्णीकृत करना चाहिए। इन्हें ठण्डा कर वाहिकाओं में भरते हैं ताकि 12 मिमी शीर्ष स्थान न रह सके। इन वाहिकाओं को सील बंद कर यथाविधि हिमीकरण के लिए रखा जाता है।

फूलगोभी का हिमीकरण

हिम-वर्ण-रूपी फूलगोभी, जिसको स्नोव्हाइट कहते हैं, हिमीकरण के लिए उचित है। फूलगोभी ठोस होनी चाहिये, न कि फैली हुई, साथ ही वह नर्म भी होनी चाहिए। इन्हें 25 मिमी. आकार में कतरे हुए फूलों को 2 प्रतिशत लवण घोल में 30 मिनिट रखा जाय तो इसमें पाये जाने वाले कीट नष्ट हो जाऐंगे। 20 मिनिट बाद इन्हें एकत्रित कर 0 1 से 0 5 प्रतिशत उबलते हुये लवण घोल मे 3 मिनिट देकर विवर्णीकरण करें, इसके बाद विधिपूर्वक शीतलीकरण आदि के बाद वाहिका मे भरना चाहिये। यहाँ शीर्षस्थान देने की आवश्यकता नही है, सील बद कर हिमीकरण के लिए सजाया जाये।

भिण्डी का हिमीकरण

हिमीकरण के लिए भी वैसी ही भिण्डी चुनी जाती है जो हम तरकारी के लिए आम तौर पर चुनते हैं, लेकिन जहाँ तक हो सके बिना रोयेदार भिण्डी ही उपयुक्त है। इन भिण्डियो को धोने के बाद इनके दोनों सिरे जो खाने योग्य नही हैं, अलग कर ऊपर से नीचे तक ऐसे चीरते हैं ताकि उसके अन्दर के बीज बाहर दिखाई नही दें। अब इसके आकार के अनुसार वर्गीकरण करें तथा 3 से 4 मिनिट समय देकर विवर्णीकरण कर यथाविधि

शीतलीकरण आदि के पश्चात्, आकार के अनुसार, योग्य वाहिकाओं में भर दिया जाये तथा 6 मिमी. शीर्ष स्थान देकर इन्हें सील बंद कर हिमीकरण के लिए सजाया जाये।

हरे मटर का हिमीकरण

हिमीकरण के लिए कैनीकरण की भाँति नर्म, मीठे तथा गहरे हरे रंगयुक्त दाने वाले मटर ही चुनने चाहिए, जिनकी फली में अधिकाधिक पूर्ण विकसित दाना पाया जाय। फलियों में से दाना निकाल कर उनका वर्गीकरण किया जाये। इसके पश्चात् इनका विवर्णीकरण किया जाता है, इसके लिए उबलते पानी में 1 मिनिट से 2½ मिनिट तक (आकार के अनुसार) विवर्णीकरण करना चाहिए, फिर तुरन्त शीतलीकरण कर 6 मिमी. शीर्ष स्थान देकर वाहिकाओं में भर कर सील बंद करना चाहिये—साथ ही यथाविधि हिमीकरण में सजाया जाता है।

हरे शाकों का हिमीकरण

पालक, मेथी, चौलाई, सरसों आदि अपने देश के मुख्य हरे शाकों में आते हैं। हिमीकरण के लिए इन्हें चुनते समय ध्यान रखना है कि यह नर्म तथा बिना डंठल के हों। हरे शाकों को अच्छी तरह पानी में धोकर निकालना चाहिए ताकि पत्तों पर किसी प्रकार की गन्दगी न रहे, जैसे—मिट्टी, कीड़े आदि। इन पत्तों को किस्म व संरचना के अनुपात में 1 से 3 मिनिट तक विवर्णीकरण करना चाहिये तथा शीघ्र ही शीतलीकरण कर 12 मिमी शीर्ष स्थान छोड़ते हुए वाहिकाओं में भरना चाहिए, फिर इन्हें सील बंद कर हिमीकरणी में सजाया जाये।

कद्दू (काशीफल) का हिमीकरण

हिमीकरण के लिए विकसित देशों में पूर्ण विकसित पके हुए कद्दू ही काम में लिए जाते हैं। इन्हें छिलके सहित रगड़ कर धोया जाता है तथा बाद में छिलका उतारा जाता है। छिलका उतरे हुए कद्दुओं को बीज आदि छोड़ कर कतर लिया जाता है, उन्हें उबाल कर सदलित किया जाता है। इसके लिए पल्पिंग मशीन भी काम में ली जा सकती है। तैयार किये हुए कद्दू को शीतलीकरण कर वाहिका में 6 मिमी शीर्षस्थान छोड़ते हुए भर कर सीलबन्द कर, हिमीकरण के लिए सजाया जाता है।

शकरकंद का हिमीकरण

शकरकंदी भी पूर्ण विकसित होनी चाहिये, इन्हें रगड़ कर धोते हैं ताकि किसी प्रकार की गन्दगी न रहे। इसके बाद शकरकंदियों का भापोपचार कर छिलका उतार दिया जाता है। इन्हें अपेक्षित आकार में कतर लिया जाता है। कतरे हुए टुकड़ों को 0·4 प्रतिशत साइट्रिक अम्ल तथा 10 प्रतिशत नीबू रस मिलाये हुए घोल में 4–5 सैकिण्ड रख दिया जाता है। इसके लिए टुकड़ों को कपड़े में पोटलीनुमा बना कर घोल में छोड़ देते हैं या जालीदार बर्तन में भर कर घोल से डुबो कर रख देते हैं।

अगर शकरकन्दी उबाल कर संदलन कर हिमीकरण करना चाहें तो उसमें 10 प्रतिशत नीबू या सन्तरे का रस मिला कर वाहिका में भरना चाहिये। इन दोनों को भरते समय 6 मिमी शीर्ष स्थान छोड़ कर सीलबन्द कर यथाविधि हिमीकरण के लिए सजाया जाय।

टमाटर रस हिमीकरण

टमाटर तथा उसके रस को बिना उबले हिमीकरण सम्भव नही है, क्योंकि बिना उबल टमाटर या टमाटर के रस का हिमीकरण किया तो वह दुर्गन्धित हो जाता है।

इसलिए पेडो पर से पूर्ण विकसित पके फलो को तोड कर, धोकर, टुकडे कर, मामूली शर्करा मिला कर, पकाया जाता है ताकि उसका विटामिन 'सी' ही नहीं बल्कि, उसका वर्ण भी बना रह सके। इसके लिए टमाटरों को 190° – 212° एफ (80° से 100° से) ताप देकर पकाना चाहिए तथा उसका गूदायुक्त रस निकालना चाहिए, इसमे 0·5 प्रतिशत शुद्ध लवण मिला कर वाहिकाओ मे भरना चाहिये ताकि उसमें सारणी मे बताये अनुसार शीर्ष स्थान छूट सके। इन्हें सीलबन्द कर हिमीकरण किया जाय तो कैनीकृत टमाटर रस से अधिक उपयुक्त होगा।

सोझनीकृत टमाटर (Stewed Tomatoes)

जैसे टमाटर जूस के लिए चुने जाते है वैसे ही टमाटर उबले टमाटरो के लिए भी चुने जाते है। उबलते पानी में या भापोपचार से इन टमाटरो का छिलका फाड़ कर उतारा जाता है, जिसके बारे मे कैनीकरण अध्याय मे चर्चा की गई है। छिलका उतरे हुए ठोस टमाटरों को उसके आकार के अनुरूप 2 या 4 टुकडे कर, बर्तन मे रख कर 10 से 20 मिनिट उबालते है। इन्हें तुरन्त ही बर्फ वाले शीतल जल मे रख कर (बर्तन सहित) शीतली-करण किया जाता है, इसके बाद शीर्ष स्थान छोडकर सीलबन्द कर यथाविधि हिमीकरण के लिए रख दिया जाता है।

हिमीकरणोत्पादों का उपभोग कैसे करें

हिमीकृत फल रसो को निर्हिमीकरण कर उपभोग किया जाता है। लेकिन निर्हिमी-करण-क्रिया वाहिका खोले बिना ही करनी चाहिए, अन्यथा फलरस मे दुर्गन्ध तथा वर्णदोष आ जायेंगे। इसके लिए हिमीकृत उत्पादो को बिना खोले ही भवनताप मे या साधारण ताजा जल में रख कर निर्हिमीकरण किया जाता है। इस समय वाहिका को आवश्यकता-नुसार पलटते रहना चाहिये। फलस्वरूप समूचा पदार्थ समान रूप से निर्हिमीकृत हो जायेगा। चाशनी मे हिमीकृत आधा किलो खाद्य-पदार्थ 1–8 घण्टे मे भवनताप पर निर्हिमी-कृत हो जायेगा। लेकिन जल मे यह क्रिया एक घंटे मे ही सम्भव है। यह रिपोर्ट ऐसे विकसित देशों में की गई है, जहां शीत जलवायु है। भारतीय जलवायु के अनुसार भवन-ताप मे इससे कही शीघ्र निर्हिमीकरण हो सकता है। यहां हमारा उद्देश्य निर्हिमीकरण अवधि के बारे मे संक्षिप्त जानकारी करना मात्र है। मध्यम शर्करा मे हिमीकृत उत्पाद इससे कही अधिक शीघ्रता से निर्हिमीकृत हो जाते हैं, लेकिन उपर्युक्त दोनो से कही अधिक समय जल मे हिमीकृत पदार्थ लेगा। इसी प्रकार हिमीकृत आहारों को वाहिका मे निकालते ही, उपभोग करना चाहिए। इसी कारण से इस बात पर जोर दिया जाता है कि आवश्यकतानुसार उचित आकार की वाहिका मे पैकिंग करें ताकि वाहिका मे पैक आहार एक परिवार, एक समय, एकसाथ सारे हिमीकृत पदार्थों का उपभोग कर सके। विस्तृत जानकारी इस अध्याय के प्रारम्भ मे दी जा चुकी है। फलरसों का निर्हिमीकरण कर,

उपभोग करते समय उसमें उतनी शीतलता होनी चाहिए जितनी हम ठण्डे पेय में शीतलता चाहते हैं, इन्हें स्टिल कोल्ड (Still Cold) कहा जाता है। कुछ लोग फल रसों में ठण्डा पानी या अन्य फलरस मिला कर भी उपभोग करते हैं।

पश्चिमी देशों में हिमीकृत फलों का उपयोग भविष्य में जैम, जैली, मुरब्बा आदि बनाने के लिए भी किया जाता है।

हिमीकृत तरकारी कैसे काम में लेते हैं

हिमीकृत तरकारियाँ निर्हिमीकरण क्रिया के बिना ही काम में ली जाती हैं। बर्तन जिसमें तरकारी बनाना है उसमें थोड़ा जल लेकर उबालते हैं, उसमें अपेक्षित हिमीकृत तरकारी को वाहिका से निकाल कर, उसमें डाल देते हैं। ध्यान रखें कि डालते समय उबलते पानी के बर्तन को आँच से हटा कर डालें तथा चम्मच के उल्टे सिरे से तोड़ कर मिलाते रहें। जब वह बर्तन में समान रूप से फैल जाय, उसको आग पर रख कर पकावें जब बर्तन का सारा पानी तथा तरकारी उबलने लगे, तो ढक्कन लगा कर आँच से उतार लें।

साधारणतया सदाबरी के लिए 5 से 10 मिनिट, सीमा सेम के लिए 6 से 10 मिनिट, कतरे हुए सेम के लिए 10 से 20 मिनिट, हरे मटर के लिए, 5 से 10 मिनिट, फूलगोभी के लिए 5 से 8 मिनिट, गाजर के लिए, 5 से 10 मिनिट, पत्तागोभी के लिए, 4 से 8 मिनिट तक पकाना चाहिये।

इस प्रकार तैयार की हुई तरकारियों में अपेक्षित मसाले तथा गर्म-मसाला-युक्त शोरबा तेल में या घी में तैयार कर मिला देना चाहिए। इनका यथाशीघ्र उपभोग करना चाहिये। ध्यान रखें कि उपर्युक्त विधि से पकाई हुई तरकारियों में पोषक तत्व धारित रहेगा। अगर इन्हें अधिक पकाया गया तो पोषक तत्व नष्ट हो सकते हैं।

हिमीकरणोत्पादों का शीतगोदामीकरण

अधिकांश हिमीकृत फल-तरकारियाँ तथा रस 0° एफ० तापमान में या उससे न्यून तापमान पर रखी जाएँ तो उनका एक वर्ष तक परिरक्षण सम्भव है। 0° एफ० तापमान से 10° से 15° एफ० तापमान हो जाय तो उनके गुण में विशेष कमी हो जाती है। 10° एफ० तापमान पर हिमीकृत आड़ू फलों में बभ्रूकरण हो जाता है। हरा मटर तथा सेम का वर्ण 5° एफ० पर 6 माह सुरक्षित रहेगा, लेकिन 0° एफ० तापमान पर रखा जाय तो 12 माह तक परिरक्षण सम्भव होगा। लेकिन 10° एफ० में रखने से केवल 3 महीने तक ही परिरक्षण सम्भव है। इसके बाद हरापन फीका पड़ने लगता है। इसी प्रकार हिमीकृत सान्द्रीकृत सन्तरा रस को रखा गया तो उसका वर्ण, सुगन्ध, इत्यादि 5° एफ. तापमान में शीघ्रातिशीघ्र नष्ट हो जाता है। सदाबरी, सेब, आड़ू इत्यादि − 5° एफ. तापमान के शीतगोदाम में सुरक्षित पाया गया, लेकिन गोदामों में बिजली गुल हो जाने पर थोड़े समय में ही अर्थात् तापमान 10° एफ. से 20° एफ तक पहुँच भी जाय तो (कुछ घण्टों के लिए) उनमें कोई खास क्षति नहीं होगी। परन्तु बिजली गुल होने का क्रम चलता रहे तो सदाबरी, सेम, सेब, आड़ू इत्यादि तरकारी तथा फल खराब हो सकते हैं, इसलिए उपर्युक्त बातों का गोदामीकरण के समय में ही नहीं, बल्कि खुदरा विक्रेताओं के यहाँ शीतकरणी में संचयन

के समय भी ध्यान रखना चाहिए कि वे 0° एफ. तापमान में सुरक्षित रखें। साथ ही वाष्प संरक्षण के लिए हिमीकृत खाद्यपदार्थों को मोमलेपित कागजों में या पोलिथलिन कागजों में पैकिंग कर रखना अति उपयुक्त होगा।

गोदामों में चलने वाली ठण्डी हवा एक ही क्रमानुसार चलनी चाहिए तथा तापमान में भी कोई विशेष अन्तर नहीं आना चाहिए—फिर भी तापमान के एक या दो डिग्री फारेनहीट कम-ज्यादा हो जाने से कोई विशेष प्रभाव नहीं पड़ेगा।

गोदामों में हिमीकृत उत्पादों को सजाते समय यह ध्यान रखना चाहिए कि हिमीकृत उत्पाद के पैकेट दीवारो के या फर्श के सम्पर्क मे नही आने चाहिए। इसके लिए फर्श से 7·5 से. मीटर ऊँचाई पर पैकेटों को सजाना चाहिए तथा दीवारों से 10 से 30 से. मीटर दूर अम्बार भी लगाना चाहिए। (चित्र संख्या 19)



अध्याय 3

अणु विकिरण परिरक्षण

(Preservation by Radiation)

संसार के विकसित देश ही नहीं अपितु विकासशील देशों में भी आज वनस्पति-शास्त्रियों, मत्स्य-शास्त्रियों द्वारा पशु, कुक्कुट, मत्स्य, कृषि इत्यादि उत्पादों को बढ़ाने तथा उनके सुचारु रूप से परिरक्षण करने के लिए अणुविकिरण प्रणाली की प्रयोग-विधि के सम्बन्ध में अनुसंधान अध्ययन चल रहे हैं।

आज एक्सरे, गामारे, बीटारे, न्यूट्रॉनो तथा आल्ट्रावायलट (परा बैंगनी) रे का उपर्युक्त क्षेत्र में प्रयोग कर आश्चर्यजनक परिणाम निकाले जा रहे हैं।

इसके अलावा अणुविकिरण से मानव-रोगों का पता ही नहीं लगाया जा रहा है, अपितु कैंसर जैसी भयंकर बीमारी की चिकित्सा भी की जा रही है। वर्षा के अभाव में सूखा पड़ने पर पनबिजली बन्द हो जाय तो परमाणुशक्ति के प्रयोग से हमें विद्युत उपलब्ध कराई जाती है। तात्पर्य यह है कि अगणित कार्यों के लिए, अणुविकिरण मानव रक्षा के लिए तत्पर है। आज धातुपट्टियों, कागजों, पोलिथलिन पट्टियों तथा उनसे बने कागजों के गेज (Gauge) नापने के लिए भी अणुविकिरण का प्रयोग किया जाता है।

खाद्य परिरक्षण के इतिहास में अणुविकिरण का आरम्भ सन् 1940 से हुआ है। इसके जन्मदाता डॉ० सामुवल–ए गोल्डब्लिथ तथा डॉ० बरनार्ड–ई० प्रोक्टर हैं। सन् 1950 तथा 1970 के मध्य रूस, संयुक्त राज्य अमेरिका, कनाडा, ब्रिटेन, नीदरलैंड, इजराइल इत्यादि देशों की इस क्षेत्र में महत्त्वपूर्ण उपलब्धियाँ हैं। इनमें रूस सबसे अग्रगण्य माना जाता है।

खाद्य पदार्थ तथा अणु विकिरण प्रक्रिया

जब खाद्य पदार्थों को अणुविकिरणोपचार विधेयक बनाते हैं, तब वे ऊर्जा प्राप्त करते हैं, फलस्वरूप खाद्य पदार्थ आयोनीकृत हो जाते हैं, इसलिए खाद्य के भीतर भी विद्युतीकरण उत्पन्न हो जाता है। एक सैकण्ड के हजारवें भाग समय में आहार के परमाणु, हजारों की तादाद में उपर्युक्त प्रक्रिया से आयोनीकृत हो सकते हैं। अणुविकिरण के प्रभाव में उस पदार्थ के परमाणुओं के एलेक्ट्रोन्स (Electrons) उसमें से अलग हो जाते हैं—फलस्वरूप वे रेडियोऐक्टिव बन जाते हैं, इसलिए यह परमाणु भी अणुविकिरणयुक्त हो जाते हैं। इन परमाणुओं की अणुविकिरण शक्ति उनकी रेडियोऐक्टिव क्षमता के अनुरूप काम करती रहेगी। इसलिए पदार्थ में जितनी मात्रा में अणुविकिरण होगा, उतनी ही रेडियोऐक्टिव क्षमता उस पदार्थ में रहेगी। अर्थात् जिस पदार्थ में कम मात्रा में अणुविकिरण कराया जायेगा उस पदार्थ की रेडियोऐक्टिव शक्ति का क्षय (Radioactive decay) शीघ्रातिशीघ्र सम्भव होगा।

ऊष्म ससाधन के लिए जितनी ऊर्जा चाहिए उससे कम ऊर्जा ही अणुविकिरण के लिए आवश्यक होती है, अर्थात् 1/5 भाग ऊर्जा काफी होती है। खाद्य-पदार्थों मे जब अणुविकिरण किया जाता है, तब उनमे केवल 5° फारनहीट ताप पहुँचते ही वे निर्जर्मीकृत हो जाते हैं। इसलिए अणुविकिरण परिरक्षण विधि को शीत निर्जर्मीकरण (Cold Sterilization) कहा जाता है। इसमे ताप प्रयोग नही किया जाता फिर भी विशाल रूप से इनमे रासायनिक प्रक्रिया जैसे ऑक्सीकरण, निरोक्सीकरण (Oxidation and Reduction) आदि सम्पन्न होते हैं। फलस्वरूप परमाणु रचना तथा अणुरचना (Atomic and) molecular structure) मे आमतौर पर भिन्नता आ जाती है। लेकिन अल्प मात्रा मे जब खाद्य-पदार्थों मे अणुविकिरण का प्रयोग किया जाता है, तब रासायनिक परिवर्तन अल्पमात्रा मे होता है।

अणु विकिरण परिरक्षण तथा मानव

साधारणतया खाद्य-पदार्थों का 2·3 मेव (Mev) मे अणुविकिरणोपचार किया जाता है, ताकि खाद्य पदार्थ परिरक्षित हो सके। इसलिए वैज्ञानिको का मत है कि अणुविकिरण द्वारा परिरक्षित खाद्य-पदार्थों के उपभोग से मानव को किसी प्रकार की क्षति नही होगी। इसके अलावा मानव पर प्रकृति से ही प्रतिदिन अणुविकिरण विधेयक होते रहते हैं—सूर्यमण्डल से प्रज्वलित कॉस्मिक रश्मियां इनमे से मुख्य हैं। यह कॉस्मिक रश्मियां शक्तियुक्त हैं, क्योंकि इनमे 85 प्रतिशत प्रोटोन तथा करीब 13 प्रतिशत अल्फाकण मिले होते हैं। इनमे जो अणुविकिरण होता है, उसकी मात्रा समुद्रतटीय देशो मे और प्रान्तो मे प्रतिवर्ष करीब 0 3 राड से 1·1 राड तक होती है। लेकिन प्रत्येक 1500 मीटर ऊँचाई की दर पर इसकी मात्रा 0·6 से 2·2 राड के अनुपात से बढती जायेगी। इसके अलावा अन्य स्रोतो से जैसे चट्टान, रेत, जल तथा आहार आदि से 28 राड अणुविकिरण प्रतिवर्ष मानव पर प्रभाव करता है। यह प्रभाव मानव के अलावा पशु पक्षियो तथा वनस्पति पर भी होता है। भूमि मे रेडियोऐक्टिवता वाले पदार्थ अधिक मात्रा मे होते है, जैसे—यूरेनियम, थोरियम इत्यादि। इनकी मात्रा के अनुसार उस भूमि मे उत्पन्न फसलो मे भी थोरियम तथा यूरेनियम की मात्रा का पाया जाना स्वाभाविक है। इन फसलो को मानव या पशु जब खाते है तब उनमे भी यह प्रवेश कर जाते हैं। इसी प्रकार वनस्पति, मास, मछली तथा जल द्वारा वे मानव शरीर मे प्रवेश कर जाते हैं—फलस्वरूप बाहर से तथा अन्दर से मानव शरीर मे अणुविकिरण हो जाता है। इसी प्रकार प्रतिवर्ष 50 राड अणुविकिरण भूमि मे पड़ता है यह प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से मानव को प्रभावित करता है।

अणु विकिरण तथा सूक्ष्मजीव

हम पहले भी कह चुके हैं कि अल्प मात्रा मे अणुविकिरण प्रयोग से खाद्य पदार्थो मे पाये जाने वाले सूक्ष्मजीवियो को नष्ट किया जा सकता है। अल्प मात्रा मे अणुविकिरण करने से मानव को किसी प्रकार की हानि भी नही होती। फलस्वरूप खाद्य पदार्थों को विकृतिकारक सूक्ष्मजीवियों से बचाया जा सकता है। इनके लिए चाहे खाद्य पदार्थों का प्राकृतिक रूप बदलकर या बिना बदले ही सूक्ष्मजीवियों का नाश कराया जा सकता है। अणुविकिरण से किण्वकों (एन्ज़ाइम) को निष्क्रिय बनाकर किण्वकों से होने वाली f

से भी खाद्य पदार्थों को बचाया जा सकता है। जीवाणुओं के बीजाणु (Spores), काइका कोशिकाएं (Vegetative cells) अणुविकिरणसक होती है, लेकिन कोलीफार्म जीवाणु (कोलीफार्म-बैक्टीरिया) प्रकिण्व, आसपरजिलस वर्ग के फफूंद तथा उसके बिजाणु इत्यादि अणुविकिरण प्रभाव से नष्ट हो जाते हैं।

अम्लयुक्त खाद्य पदार्थों को जब कैनीकरण किया जाता है, तब उनमें विकृति की साध्यता बहुत कम हो जाती है। इसी प्रकार अम्ल युक्त खाद्य पदार्थों को जब अणु-विकिरणोपचार विधेयक बनाते हैं, तो उसमें विकृति की सम्भावना बहुत न्यून हो जाती है। इसलिए परिरक्षण से पहले खाद्य पदार्थों का हाइड्रोजन आयन सांद्रता का ज्ञान अति-आवश्यक है तथा उसके आधार पर ही खाद्य पदार्थों को अणुविकिरणोपचार विधेयक बनाना चाहिए। क्लस्टोडियम बोटूलिनम तापसक होते हैं, फिर भी ऊष्मा संसाधन से उनका नाश हो जाता है। इसी प्रकार अणुविकिरण के समय भी उपर्युक्त सूक्ष्मजीवियों का विशेषतौर से ध्यान रखना चाहिए। वे आमतौर पर पी० एच० 4 5 के समीप वाले खाद्य पदार्थों में पाये जाते हैं। लेकिन सड़न-गलन-कारक अवायु जीवाणु तथा कुछ अन्य तापरागी सूक्ष्मजीव अधिक तापसह होते हैं।

सन्तरे के रस का 400 क्राड अणुविकिरण कर उसके तुरन्त बाद 50° सेंटीग्रेड 15 मिनट तक तापोपचार विधेयक बनाया गया तो पाया गया कि वो निर्जर्मीकृत हो गया था। प्रतिवेदन सन् 1966 में घरकार तथा श्रीनिवासन् ने प्रस्तुत किया था।

अणुविकिरणसह माइक्रोकोकस रेडियोडुरन्स (Micrococus radiodurans), स्ट्रेप्टोकोकस फेइकालिस (Streptococcus faecalis) जो कम अणुविकिरण सह होते हैं, इन दोनों का अल्ट्रासोनिक उपचार विधेयक बनाया गया तो पाया कि उनकी मृत्यु संख्या 90 प्रतिशत तक पहुँचाने के लिए 580 से 290 क्राड तक तथा 37 से 22 क्राड तक अणु-विकिरण उपचार देना आवश्यक था। ऐसा सूक्ष्मजीवियों की अणुविकिरण के साथ प्रति संवेदनशील *(Sensitivity) में आई वृद्धि के कारण सम्भव हुआ। यही* प्रतिवेदन उन्होंने आगे प्रस्तुत किया था। घरकार तथा श्रीनिवासन् ने आगे इस प्रकार प्रतिवेदन किया कि एस० सिविसिऐ (S. Cervesiae) युक्त आम—रस का 50, 100, 150 (एवस 10^3) क्रम के क्राड्स में अणुविकिरणोपचार विधेयक कर, बाद में 50° सें० ग्रे० तापोपचार किया गया, तुरन्त बाद में तुलनात्मक अध्ययन से पाया गया कि अधिक मात्रा में अणुविकिरण की आवश्यकता नहीं होती है। उपर्युक्त प्रतिवेदन हमें इस भय से मुक्त कराते है कि चर्चित अणुविकिरण से मानव को कोई हानि नहीं होगी। इसके अलावा फल तरकारियों को न्यून मात्रा अणुविकिरणोपचार तथा ऊष्मोपचार दोनों के संयुक्त प्रयोग से अधिकाधिक *सूक्ष्मजीवियों तथा किण्वकों को निष्क्रय बनाया जा सकता है।* उपर्युक्त सफलता किसी एक उपचार से संभव भी नहीं होती। अनुसधानों से हमें आगे यह भी पता लगा कि बेसीलस सप्टीलिस तथा बा० सिरियेस को भी उपर्युक्त प्रयोग *विधियों द्वारा नष्ट किया जा सकता है।* बसीलस बीजाणुओं का अणुविकिरणोपचार के बाद तापोपचार किया गया तो पाया गया कि वे नष्ट नहीं होते, किन्तु तापोपचार के बाद अणुविकिरणोपचार किया गया तो तो पाया कि *उनका नाश अवश्य हुआ है। इसके अलावा* कुछ अन्य तथ्य भी उनके द्वारा प्रस्तुत किये गये हैं।

घरकार तथा साथियों ने आगे यह भी प्रतिवेदन दिया कि ऊष्मा संसाधन किया

से कैनीकृत खाद्य पदार्थों का अणुविकिरणोपचार किया गया तो पाया कि कैनीकृत उत्पादों मे होने वाली विकृतियों में काफी कमी पाई गई।

इसी प्रकार फल तथा तरकारियों को एकत्र करते ही एक सुनिश्चित मात्रा में अणुविकिरणोपचार कर उन्हें बिना किसी विकृति के परिरक्षित किया जा सकता है, क्योंकि अणुविकिरण से ताजे फल-तरकारियो से सड़ने-गलने के कारक सूक्ष्मजीवियों, किण्वकों तथा कुछ विशेष हारमोनों को निष्क्रिय बना कर, उन्हें यथारूप परिरक्षित किया जा सकता है।

भस्मवर्णी फफूंद (Grey mould) तथा बोट्रीटिस सिनिरिया (Botrytis Cinerea) 5° से ग्रे० पर 200 क्राड अणुविकिरणोपचार किया जाय तो उनका नाश हो जायेगा। इसी प्रकार पीच, प्लम, चेरी, आप्रीकाट इत्यादि शीतप्रदेशीय फलों के सड़न-गलन कारक मोनिलिनिका फ्रुक्टोकोला (Monilliam fructicola) राइसोपस स्ट्रोलोनीफर आदि को भी अणुविकिरणोपचार से नष्ट किया जा सकता है। नीबूवर्गीय फलों में लगने वाली पैनिसिलियम इटालिकम (Penicilliam italicum) पें. डिजिटाटम (P. digitatum) इत्यादि तथा सेब मे लगने वाली पैं० एक्सपैनसम फफूंदों को भी अणुविकिरणोपचार से नष्ट कर उपर्युक्त फलो का परिरक्षण किया जा सकता है। उपर्युक्तफफूंद-बाधा से कई लाख टन फल तथा तरकारियाँ सड़ने तथा गलने से नष्ट हो जाती हैं। अणुविकिरणोपचार से ही सफलतापूर्वक इन्हें नियन्त्रित किया जा सकेगा। इसके अलावा कोई अन्य उपाय नहीं है।

प्रोटीन पर अणुविकिरण प्रभाव

अणुविकिरणोपचार से खाद्य पदार्थों मे पाये जाने वाले प्रोटीन विकृत (Denaturing of Proteins) हो जाते हैं। प्रोटीन कण फट कर (Splitting of Proteins Particles) बहुलकीकरण (Polymerization) हो जायेगा। आवश्यकतानुसार अणुविकिरणोपचार हो जाए तो पैप्टाइड शृङ्खलायें (Peptide Chains) बहुलकीकरण, स्कन्धन अथवा घनीकरण (Coagulation), अवक्षेपण (Precipitation) इत्यादि प्रक्रियाएँ क्रमशः सम्पन्न होती हैं। इसके बाद अधिक शक्ति से अणुविकिरणोपचार विधेयक बनाया जाए तो प्रोटीन्स का विद्युतीकरण मचलन (Electrophonetic mobility of proteins) कम हो जायेगा। इसके बाद लगातार दीर्घ समय तक अणुविकिरणोपचार चालू रखा जाय तो अमोनिया, गन्धकयुक्त सयक्तो तथा कार्बनडाई ऑक्साइड आदि प्रोटीनो में से बाहर निकाल दिया जायेगा। ऐसा भी प्रतिवेदन मिलता है कि मांस, मछली, दूध, अण्डा इत्यादि प्रोटीन युक्त खाद्य पदार्थों का अणुविकिरण उपचार विधेयक बनाया गया तो पाया गया कि उनमे से दुर्गन्ध निकलती है, लेकिन अधिक अस्कार्बिक अम्ल युक्त आहार में दुर्गन्ध बहुत कम पाई गई। इसके अलावा इन्हें अल्प अणुविकिरणोपचार विधेयक बनाकर कुछ दिनों तक संचयन कर परीक्षण किया गया तो पाया कि उनमे उतनी दुर्गन्ध नहीं आती और खाद्य-पदार्थ के स्वाद में भी कोई अन्तर नही पाया गया। खाद्य पदार्थों का अणुविकिरणोपचार विधेयक बनाते समय अमीनों अम्लों की वलय-सरचनाएं (Ring Structure) छिन्न-भिन्न हो जाती हैं तथा प्रोटीन की भाँति अमीनो अम्ल मे भी उसकी प्रक्रिया सम्पन्न होती है, यह भी देखा गया। अमोनिया उत्पादन शक्ति अणुविकिरण शक्ति के अनुपात में कम-ज्यादा होती रहेगी। इसी प्रकार वाष्पीकरण शक्ति के गन्धक संयुक्तो की मात्रा भी अणुविकिरण शक्ति के अनुपात में ही चलती रहेगी।

अणुविकिरण तथा किण्वक

अणुविकिरण भिन्न-भिन्न प्रकार से एक वस्तु पर कार्य करता है, प्रत्यक्ष रूप से और अप्रत्यक्ष रूप से। फलस्वरूप किण्वक निष्क्रिय हो जाते हैं। यह हिमीकृत किण्वको पर किये गए अनुसन्धान-अध्ययन से मालूम हुआ है, लेकिन शुद्ध किण्वको के घोल मे अणुविकिरणोपचार किया गया तो पाया गया कि वे निष्क्रिय हो जाते हैं, जबकि खाद्य पदार्थों मे पाये जाने वाले किण्वकों में उतना प्रभाव नही डालता। वैज्ञानिको ने यह स्पष्ट किया कि यह अन्दर अणुविकिरण-सह क्षमता के प्रभाव से है, इसलिए सूक्ष्मजीविओ को नष्ट करने के लिए जितनी ऊर्जा चाहिए, उसकी 5 गुणा ऊर्जा किण्वको को निष्क्रिय बनाने के लिए चाहिए। लेकिन न्यून मात्रा के अणुविकिरणोपचार से किण्वको को निष्क्रिय बनाया जा सकता है। 1 से 5 ऋाड तक अणुविकिरणोपचार मे 90 प्रतिशत किण्वको को निष्क्रिय बनाया जा सकता है। यह प्रतिवेदन सन् 1966 मे वास के ने प्रस्तुत किया था।

अणुविकिरण-खाद्य-परिरक्षण-अनुसन्धान करीब-करीब पश्चिमी देशो मे ही हुए है। इसलिए मास, मछली, अण्डा, दूध इत्यादि मे ही वहाँ अधिक अनुसन्धान किये गए हैं। परन्तु आज भारत मे उपर्युक्त खाद्य पदार्थों के अलावा फल-तरकारियो मे भी अनुसन्धान चल रहा है।

कई वैज्ञानिकों ने समय-समय पर प्रतिवेदन दिये हैं कि चेरी, नीबूवर्गीय फल, आडू (पीच) आदि फलो पर अणुविकिरणोपचार से पाया गया कि पैक्टीन, मिथयिल, इस्ट्रेस की मात्रा बढ़ती जाती है। अणुविकिरण के बाद एक दो सप्ताह तक सचयन कर परिरक्षण विधेयक बनाया गया तो मालूम हुआ कि नीबूवर्गीय फलो के छिलके मे पैरोक्सीडेस (Peroxidase) की क्रियाशीलता तीव्र हो जाती है। ऐसा भी प्रतिवेदन मिलता है कि इसी प्रकार चकोतरा में भी कैटालिसिस (Catalysis) की क्रियाशीलता तीव्र हो जाती है। 200 क्राड शक्ति की गामारश्मी (गामा-रे) द्वारा अणुविकिरणोपचार किया गया तो नीबूवर्गीय फलो के छिलको में फिनोलिक संयुक्त (Phenolic Compoundes) एकत्र होते दिखाई दिये। इसका कारण यह बताया गया कि "फिनाइल अमीन अमोनिया लेइस" प्रक्रिया तीव्र होने से होती है।

अणुविकिरण तथा हारमोन

अणुविकिरण प्रभाव से ऑक्सीन (Auxin) नामक हारमोन का नाश होता है। यह प्रतिवेदन 1950 मे स्कूंग तथा साथी (Skoong et al) ने प्रस्तुत किया था। लेकिन 1960 मे किंग तथा साथी ने यह प्रतिवेदन दिया कि एन्डोजिनियस ऑक्सिन (Endogenous auxin) अणुविकिरण से निष्क्रिय हो जाता है। आलू पर अणुविकिरण प्रक्रिया से होने वाली 'इन्डोल एसिटक अम्ल' निर्माण सीमा का अध्ययन करते समय देखा गया कि किण्वक प्रक्रिया प्रारम्भ मे धीमी पड़ती है तथा 5 सप्ताह के बाद वह क्रिया समाप्त हो जाती है। यह प्रतिवेदन सन् 1963 मे यूसुफ के. के. तथा नायर पी. एस. ने प्रस्तुत किया। इसी प्रकार अंकुरण-रोधक क्रिया विधेयक आलुओं को 20 पी. पी. एम की मात्रा में आई ए. ए. नामक हारमोन घोल मे डुबोया गया तो अंकुरण रोधक शक्ति भग हो गई। इसी प्रकार जिब्रिलिक अम्ल (Gibberellic acid) द्वारा अंकुरण रोधक शक्ति को भग

किया जा सकता है। इसी प्रकार अणुविकिरणोपचार से केले को पकाने की क्षमता रोके रखने के बाद उन्हें इथलिन 1 से 100 पी. पी. एम. या 2, 4 डी 1000 पी. पी. एम. के अनुपात मे उपचार किया जाय तो वे तुरन्त पकने लगेंगे। यह प्रतिवेदन 1962 मे टियास तथा नोमस और साथियों ने भिन्न-भिन्न स्थानों पर प्रस्तुत किये थे।

अणु विकिरण तथा कार्बोहाइड्रेट

मंड (Starch) का अणुविकिरणोपचार विधेयक बनाते समय आणविक परिवर्तन (Molecular Change) हो जाता है। मंड जब पानी में घोला जाता है तथा उसमे 1·5 गुणा 10^6 राड्स में अणुविकिरणोपचार विधेयक बनाते हैं तब अपबहुलकीकरण (Depolymerization) होता है, फलस्वरूप माल्टोटेस्ट्रेस अश (Maltotetrase) उत्पन्न होता है। अणुविकिरण मात्रा बढाई जाये तो मड मे बहुलक (Polymer) हेक्सोस यूनिट्स (Hexose Unit) के रूप मे बदल जाते हैं। चीनी (शर्करा) मे अणुविकिरणोपचार से अपघटन (Hydrolyze) सम्पन्न होता है। 1.5×10^6 मात्रा मे अणुविकिरण दिया जाय तो 40 प्रतिशत मड डीग्रेडेसन (Degradation) होकर आखिर में ग्लूकोज के रूप में परिवर्तित हो जायेगा। इसी प्रकार पैक्टिन भी सिलेलोस मे जल-विलेय सयुक्तो का उत्पादन करने के लिए अणुविकिरण काम मे आता है। यह तथ्य यह स्थापित करता है कि फल तथा तरकारियो के गुणों को अणुविकिरणोपचार नष्ट करता है। सदाबरी आदि हरी तरकारियो के कठोर भागों को नर्म करने के लिए भी अणुविकिरण प्रक्रिया काम मे ली जा सकती है।

अणु विकिरण तथा वर्णांक (Pigments)

रगीन फल-तरकारियो के अणुविकिरणोपचार विधेयक के बाद निरीक्षण तथा परीक्षणों से स्पष्ट मालूम हुआ कि वे रगहीन हो जाते हैं या उनमें वर्णभेद हो जाता है, लेकिन अणुविकिरणोंपचार मात्रा के अनुसार वर्णभेद पूर्णतया या अपूर्णतया हो सकता है। सन् 1970 में सांबन्ध तथा साथियो ने यह प्रतिवेदन दिया कि ऊष्णोष्णकटिबन्धीय प्रदेश के फलो में गामा-रे से अणुविकिरण कराया गया तो उनमे वर्णभेद पाया गया। उन्होंने आगे कहा कि नागपुरी सन्तरो तथा अलफान्सो आमो का 1·0 ग्राड गामा-रे से अणुविकिरण विधेयक बनाया गया तो यह सिद्ध हुआ कि सन्तरे में पाई जाने वाली करोटिनाईड्स मे से 38 प्रतिशत तथा आम के करोटिनाईड्स मे से 24 प्रतिशत नष्ट हो जाती है।

सन् 1967 में सोनी तथा जैन ने यह प्रतिवेदन प्रस्तुत कि अमरूद से बने शर्बत के अणुविकिरण विधेयक के बाद 119 दिन सचयन करने के पश्चात् अध्ययन किया तो मालूम हुआ कि अमरूद शर्बत गहरे भूरेपन मे परवर्तित हो गया। आई. सी. ए. आर. में किये गए इस अध्ययन के लिए उन्होंने वहाँ के गामा मन्दिर को ही चुना था।

फलों को पश्चिमार्थ फसल देह व्यापारिका (पोस्ट हारवेस्ट फिसोलोजी)

अणुविकिरण परिरक्षण मे ही नहीं अपितु अन्य परिरक्षण के लिए तोड़नोपरान्त के देह व्यापारिका (पोस्ट हारवैस्ट फिसोलोजी) के अध्ययन का बहुत फलों को पेड़-पौधो से एकत्र करने के बाद उनमे होने वाली उपापचय प्रक्रिया को आवश्यक है। इसको हिन्दी में फलो की पश्चिमार्थ फसलदेह व्यापारिका भी कह

प्रतिसंधि अवस्था (Climacteric)

प्रायः सभी फल जब पकने लगते हैं, तब उनकी श्वसन क्रिया में तीव्रता आ जाती है। इस अवस्था को ही प्रतिसंधि अवस्था कहा जाता है। यह अवस्था फल जब पेड़-पौधों में लगे हुए होते हैं तब या एकत्र करने के बाद सम्पन्न हो सकती है। फलों को इसके आधार पर दो भागों में विभाजित किया जा सकता है—एक प्रतिसंधि-अवस्था-युक्त-फल तथा दूसरे अप्रतिसंधि-अवस्था-युक्त-फल (Non-Climacteric Fruits)।

प्रतिसन्धि अवस्था वाले फलें (Climacteric Fruits)

सेब, खुबइनी (आप्रीकाट), केला, आम, पपीता, फैंसनफल, आड़ूफल (पीच), नासपाती, अमरूद, प्लम, सपोटा (चीकू), टमाटर आदि फल प्रतिसंधि अवस्था वाले कहलाते हैं। इन फलों में से निकलने वाली कार्बनडाई ऑक्साइड तथा उनके द्वारा काम में ली जाने वाली ऑक्सीजन की मात्रा क्रमशः कम होते-होते न्यूनतम (मिनिमम) पर पहुँच जाती है। यह अवस्था फल पकने के तुरन्त पूर्व की अवस्था है। जब फल पकने लगता है तब श्वसन-क्रिया तीव्र हो जाती है तथा साथ ही वर्ण हरे से पीले या लाल में परिवर्तित होने लगता है यह प्रक्रिया पर्णहरित अवक्रमण से या करोटिनाइड उत्पन्न होने से या दोनों की संयुक्त प्रक्रिया से भी हो सकती है। इसके साथ ही पैक्टिन में भी भिन्नता आ जाती है। प्रोटोपैक्टिन घुलनशील पैक्टिन में परिवर्तित होने लगते हैं। जल अपघटन के कारण पोलीसकराइड्स (Polysaccharides) जैसे मंड, हेमीसिलिलोस (Hemicellulose) तथा साधारण शर्कराओं के रूप में भी परिवर्तन होता है। इसके साथ इथलिन (Ethylene) की उत्पादन मात्रा में भी भिन्नता देखी गई है। पहले के दो दिनों के अन्दर ही श्वसन क्रिया पराकाष्ठा पर पहुँच जायेगी। इनके कोश-निर्माण में कोई अवरोध आ जाय या उसमें पाये जाने वाले हारमोन में कोई अवरोध हो जाय, तो उपर्युक्त प्रक्रिया में किसी प्रकार का अवरोध आ सकता है।

अप्रतिसन्धि-अवस्थायुक्त-फल (प्रतिसन्धि-अवस्थामुक्त फल)

परिपूर्ण रूप से विकसित अवस्था में फलों में भी श्वसन क्रिया में काफी कमी हो जाती है। इन फलों को उस समय तक एकत्र नहीं करेंगे जब तक कि वे पेड़ पर ही पूर्ण रूप से पक न जाएँ, जैसे—चेरी वर्ग के फल, ककड़ी, अंजीर, चकोतरा कागजी नीबू, सन्तरा, अनन्नास, तरबूज, स्ट्राबरी इत्यादि। उपर्युक्त फलों में मंड, कार्बोहाइड्रेट आदि का संचयन नहीं होने के कारण उनके पकने में किसी प्रकार की रासायनिक प्रक्रिया नहीं होती। इसलिए इस अवस्था के फलों को, अगर उसके गुण, सुगन्ध आदि चाहिये तो उन्हें उस समय तक मातृवृक्ष से (पेड़ से) अलग नहीं करना चाहिए जब तक वे पूर्ण रूप से विकसित होकर पक न जाएँ। लेकिन हमारे कृषक तथा व्यापारी वर्ग इस जानकारी की कमी की वजह से या मुनाफाखोरी के लोभ से, यथाशीघ्र उन्हें पेड़-पौधों से तोड़कर कृत्रिम रूप में पका कर विपणन के लिए भेज देते हैं, फलस्वरूप उपभोक्ता उपर्युक्त फलों के वास्तविक गुणों एवं सुगन्ध से वंचित रह जाते हैं। लेकिन परिरक्षण के लिए ऐसे फलों को पूर्णतया काम में नहीं लेना चाहिए—यानि मातृवृक्ष में पूर्णरूप से विकसित पके हुए फल ही परिरक्षण के लिए उपयुक्त हैं।

परिरक्षण के लिए योग्य फल

फलों को एकत्र करने के बाद उनमे होने वाली विकृतियाँ, जीव रसायन तथा शरीर विज्ञान, पौधरोग तथा प्राकृतिक क्षति आदि से सम्भव होती है। उपर्युक्त विकृतियो मे प्रथम तथा द्वितीय को अणुविकिरण प्रयोग से रोका जा सकता है। इससे फल-तरकारियो के रग, सुगन्ध, गुण तथा रचना मे भी कोई परिवर्तन नही आता है। इसी प्रकार बहुत कम शक्ति मे अणुविकिरण प्रयोग से फलों मे पाये जाने वाले पोषक तत्वो मे भी कोई कमी या विकृति नही होती, लेकिन फल तोड़ते समय होने वाले क्षतिग्रस्त फल अणुविकिरण-परिरक्षण योग्य नही है, इसलिए ऐसे फल-तरकारियो को नही चुनना चाहिए।

भारत में अणुविकिरण परिरक्षण अनुसन्धान—एक सिंहावलोकन

सन् 1966 में धरकार तथा साथियो ने यह प्रतिवेदन दिया कि पूर्ण विकसित, भीतर से पके हुए अल्फान्सो आमों का 25 क्राड शक्ति में अणुविकिरण किया गया तो 6 दिन तक वे यथावत् पाये गए। आमों पर यह अणुविकिरण परिरक्षण ऑक्सीजन, कार्बन-डाईऑक्साइड तथा नाइट्रोजन आदि गैसों की उपस्थिति में किया गया था। लेकिन नाइट्रोजन की उपस्थिति में अणुविकिरण किये हुए आम स्वाद, सुगन्ध तथा रचना मे अति उत्तम पाये गए।

20 क्राड, 25 क्राड शक्ति मे जब चीकू, अमरूद और टमाटर आदि का अणुविकिरण किया गया तो 6 दिन तक वे बिना पके थे। फलस्वरूप इनके वर्ण तथा सुगन्ध मे कोई परिवर्तन नही पाया गया। यह प्रतिवेदन धरकार तथा श्रीनिवासन् ने अपने प्राथमिक अनुसन्धान अध्ययन के आधार पर प्रस्तुत किया था।

40 प्रतिशत आर्द्रता वाले अर्द्धशुष्क केलो का 0 5 क्राड शक्ति मे अणुविकिरणोपचार कर 28 से 30 सेन्टीग्रेड भवन ताप के गोदामों मे सचयन किया गया तो 3 महीने तक उनमे किसी प्रकार का विकार नही हुआ, लेकिन 10 प्रतिशत आर्द्रता वाले केले के वर्ण, सुगन्ध तथा पोषक गुणों मे कमी पायी गयी थी। इसके अलावा एक-दो सप्ताह पश्चात् उनमे फफूंद बाधा भी पाई गई थी।

धरकार तथा श्रीनिवासन् ने यह भी प्रतिवेदन दिया कि आम, अमरूद, सेब आदि का कैनीकरण कर 17° से० ग्रे० में 10 मिनट ऊष्म संसाधन कर तुरन्त बाद 400 क्राड शक्ति में अणुविकिरणोपचार किया गया तो उनके वास्तविक वर्ण, सुगन्ध तथा पोषकतत्वों मे कोई भिन्नता नही दिखाई दी।

इसी प्रकार हरे मटर का 100° से० ग्रे० पर 5 मिनट रखने के पश्चात् 500 क्राड शक्ति मे अणुविकिरणोपचार किया गया तो, मटर परिपूर्ण रूप मे निर्जर्मीकृत पाया गया। सन्तरा रस का 400 क्राड शक्ति मे अणुविकिरण प्रयोग कर 50° से० ग्रे० मे 15 मिनट तक ऊष्मीकरण किया गया तो पूर्णरूप से निर्जर्मीकरण सम्भव हुआ। धरकार तथा साथियों ने आगे यह भी प्रतिवेदन दिया कि आलू, प्याज, साधारण तथा 8 सप्ताह मे अंकुरित होने लगते हैं, इसे रोकने के लिए आलू को 10 क्राड शक्ति मे तथा प्याज का 4 क्राड मे अणुविकिरणोपचार किया गया तो क्रमशः 32 तथा 24 सप्ताह तक उन्हें अंकुरण से बचाया जा सका। लेकिन कुफरी किस्म के आलू व रेडग्लोब किस्म के प्याज का कोबाल्ट–60

गामा-रे की सहायता से 6 क्राड तथा 3 क्राड शक्ति मे ग्रणुविकिरणोपचार के पश्चात् 21 से 35 डिग्री० से० मे भवन ताप मे, जहाँ आर्द्रता 85 से 90 प्रतिशत तक थी, वहाँ संचयन किया गया तो पाया कि अकुरित नही हुए। यह प्रतिवेदन सन् 1963 मे लूविस ने प्रस्तुत किया था जो निम्नांकित सारणी मे स्पष्ट किया गया है :—

सारणी

अभिक्रिया	गोदामो की अवस्था		बिना विकृति से रही अवधि महीनो मे	
	तापमान से. ग्रे मे	आर्द्रता प्रतिशत	आलू	प्याज
(1) अभिक्रिया रहित (कन्ट्रोल)	21^0 से 35^0	57 से 90	$3\frac{1}{2}$	$4\frac{1}{2}$
(2) 6000 राड (6 क्राड)	21^0 से 35^0	57 से 90	5	$5\frac{1}{2}$
(3) अभिक्रिया रहित	11^0 से 12^0	85 से 90	$2\frac{1}{2}$	$1\frac{1}{2}$
(4) 6000 राड (6 क्राड)	11^0 से 12^0	85 से 90	10	8

फूड टैक्नोलोजी डिविजन भाभा ऐटोमिक रिसर्च सैन्टर बोम्बे के सौजन्य से—

अणुविकिरण के बाद अलफान्सो आमों का निर्यात करते समय या गोदामो मे संचयन करते समय उनमे होने वाली सम्भावित प्रक्रियाओ का जे० फर्नांस, एस० डी० थरकार व ए० श्रीनिवासन् आदि ने अध्ययन किया है। आमों पर मोमलेपन, अणुविकिरणोपचार आदि अभिक्रियाओ के पश्चात् चावल के भूसे मे लपेटकर टोकरियो मे पैकिंग किया और उन्हे बोम्बे से 100 किलोमीटर दूर भेजकर वहां के ऐसे गोदाम मे 8 दिन संचयन किया गया जिनका भवन ताप 25° से 35° से० ग्रे० था। गोदाम से वापस निकालने के 5 दिन बाद परीक्षण-निरीक्षण किया गया तो मालूम हुआ कि अणुविकिरणोपचार किये हुए दोनो प्रकार के आम (मोमलेपित तथा बिना मोमलेपित) 100 प्रतिशत विपणन योग्य पाये गये।

इसी प्रकार तीन भिन्न-भिन्न अभिक्रियाएँ किये हुए आम (1–मोमलेपित 2–बिना मोमलेपित 3–अणुविकिरणोपचारित) टिश्यू कागजो मे अलग-अलग लपेटे जाकर प्लाइवुड पेटियों मे भरकर बन्द कर बॉम्बे से 5600 किलोमीटर दूर के बुडापेस्ट के लिए विमान द्वारा भेजे गये। वहाँ पहुचने के चार दिन बाद परीक्षण-निरीक्षण से मालूम हुआ कि अणुविकिरण किया हुआ तथा मोमलेपन किया हुआ आम अपनी पैकिंग अवस्था मे ही था। उसमे किसी प्रकार की सड़न-गलन व विकार नही देखा गया। इससे यह सिद्ध हुआ कि मोमलेपन कर अणुविकिरण करने से अधिकाधिक दिन तक आम को परिरक्षित रखा जा सकता है।

भारत में अणुविकिरण खाद्य परिरक्षण इतिहास

भारत मे अणुविकिरण खाद्य परिरक्षण की चर्चा के समय हमें नई दिल्ली स्थित भारतीय कृषि अनुसन्धान संस्थान का नाम अवश्य याद आता है—क्योंकि कृषि-क्षेत्र मे

विशेष-तौर पर चाहे गये विकास कार्यों के लिए वहाँ एक अणुविकिरण केन्द्र स्थापित किया हुआ है, जो एशिया मे अपने स्तर का एकमात्र स्थान है।

25 अगस्त, 1960 मे इस केन्द्र का उद्घाटन हुआ था। इसका नाम गामा मन्दिर (गामा गार्डन) रखा गया। इस गामा मन्दिर की स्थापना का श्रेय भारतीय कृषि अनुसन्धान परिषद् के वैज्ञानिको को ही है। हमारे वैज्ञानिक इसका तकनीकी ज्ञान अमेरिका तथा स्वीडन से प्राप्त किया था। इन्हीं लोगो ने इसकी स्थापना की थी। इसके पूर्व सन् 1954 में कलकत्ता के 'बोस-अनुसन्धान संस्थान' में एक गामा मन्दिर पहले ही स्थापित था। यद्यपि इन दोनो का मुख्य उद्देश्य अणुविकिरण द्वारा मानवोपयोगी नई-नई फसलो का प्रजनन करना ही था, तथापि अन्य वैज्ञानिक विभागों के अनुसन्धान के लिए भी उपर्युक्त केन्द्र हमेशा तत्पर रहे हैं। भारतीय कृषि अनुसधान संस्थान के गामा मन्दिर में ऐसे भी कई अनुसन्धान हुए हैं जो फल तथा तरकारी परिरक्षण से सम्बन्धित है। इनके बारे मे पूर्व के अध्यायो मे ही चर्चा की जा चुकी है।

भाभा परमाणविक अनुसन्धान केन्द्र

देश मे आर्थिक रूप से प्रमुख तथा शीघ्रातिशीघ्र सड़ने-गलने वाले खाद्य-पदार्थों को अणुविकिरण द्वारा परिरक्षण करने से सम्बन्धित अनुसन्धान इस केन्द्र के फ़ूट टेक्नोलोजी (खाद्य प्रौद्योगिकी) विभाग में चल रहे हैं। सन् 1959 मे इस अनुसन्धान संस्थान की स्थापना हुई थी। ऐटोमिक रि-ऐक्टर के विस्फोट उत्पादों को ही गामा रश्मियों के स्रोत के रूप में काम मे लिया गया था, लेकिन सन् 1964 में कोबाल्ट – 60 (C–60) की स्थापना के साथ यहाँ अनुसन्धान कार्य मे तीव्रता आई। नई दिल्ली के गामा मन्दिर मे फसलो की नई-नई किस्मों को जन्म दिया तो भाभा परमाणविक अनुसन्धान संस्थान के खाद्य-प्रौद्योगिकी विभाग खाद्य परिरक्षण के विभिन्न पहलुओं का अध्ययनरत है।

कोबाल्ट–60 पैकेज इराडीयेटर (Cobalt–60 package Irradiator)

कोबाल्ट–60 इराडीयेटर आवश्यकतानुसार 5 आड से 5 लाड तक शक्ति मे शीघ्रातिशीघ्र नियन्त्रणाधीन यन्त्रो द्वारा चलाया जाता है। कोबाल्ट पैन्सिलें इसको दो स्वतन्त्र तश्तरियो मे सुरक्षित रखी होती है, उनमें से उत्सर्जित (Emission) अणुविकिरण आवश्यकतानुसार ग्राह्य रूप मे स्थापित किया हुआ होता है। जब इसकी आवश्यकता नहीं होती, इस कोबाल्ट को 550 से० मीटर नीचे इसके लिए बनाये गये जलाशय मे सुरक्षित रखा जाता है, यह इराडियेटर मांस, मछली, फल-तरकारियो, अनाज इत्यादि के अणुविकिरण परिरक्षण अध्ययन के लिए प्रयोग किया जाता है।

अणु विकिरण-परिरक्षित उत्पादों का पैकीकरण

अणुविकिरण द्वारा परिरक्षित खाद्य-पदार्थों को किस प्रकार पैकीकृत किया जाय? यह एक समस्या बन गई थी। वैज्ञानिक निरन्तर परिरक्षण के फलस्वरूप इस तथ्य पर पहुँचे कि रागालेपित टिन, एल्युमिनियम आदि से निर्मित कैन (डिब्बे), काम मे लिये जा सकते हैं। इसके अलावा उन्होंने यह भी पता लगया कि 60,000,000 राड या इनसे अधिक शक्ति के अणुविकिरण प्रयोग मे भी इस्पात तथा एल्युमिनियम मे कोई [illegible] ही टोरी तथा इस्पात की चद्दरों पर लेकिन रागो पर भी अणुविकिरण मे कोई क्षति

अपितु इस्पात को जोड़ने के लिए जो रासायनिक संयुक्त काम मे लेते है, वे अणुविकिरणोपचार से अधिक शक्तियुक्त हो जाते हैं, लेकिन उसमे लगी हुई रबर-सील अणुविकिरण से अवश्य खराब हो जाती है। घनाकृति की कैन अणुविकिरण खाद्य-पदार्थों के यंत्रीकरण के लिए अधिक उत्तम है-लेकिन वृत्ताकार कैनों को भी विशेपतौर पर काम मे लिया जाता है।

इसके अलावा नम्य वाहिकाऐं भी काम मे ली जाती हैं। नम्य वाहिकाएँ आमतौर पर हिमीकृत खाद्य-पदार्थों को पैकिंग के लिए ही काम मे ली जाती हैं। इस प्रकार की नम्य वाहिकाओ मे 2,000,000 राड शक्ति अणुविकिरण क्षमता होती है। प्लास्टिक से निर्मित वाहिकाएँ अणुविकिरण प्रभाव से दुर्गन्ध युक्त हो जाती हैं—इसलिए इन्हें इस योग्य नही माना जाता।

अणु विकिरणोत्पाद तथा उसका उपभोग

क्या अणुविकिरणोत्पाद खाने से मानव को किसी प्रकार की क्षति होती है? इस पर देश मे ही नहीं अपितु विश्व के अन्य देशो में भी अनुसन्धान होते चले आ रहे है। डिस्लोसियर (1970) के मतानुसार अणुविकिरणोत्पाद खाने से किसी प्रकार की विपरीत प्रक्रिया मानव शरीर पर नही होती। अणुविकिरण द्वारा परिरक्षित आलू आज कनाडा के निवासी भलीभाँति खाते हैं, परन्तु संयुक्त राज्य अमेरिका में आलू को ही नही अपितु अन्य अणुविकिरण द्वारा परिरक्षित खाद्यो के उपभोग पर पाबन्दी लगी हुई है।

अणुविकिरण द्वारा परिरक्षित खाद्य-उत्पाद अन्य परिरक्षणोत्पाद से कही अधिक पोषक तत्त्व वाले बताये जाते है साथ ही वे परिपूर्ण रूप से निर्जर्मीकृत भी होते हैं फलस्वरूप इन्हे शल्यक्रिया द्वारा हृदय प्रतिरोपित रोगियों के लिए उपयुक्त भोजन माना जाता है। इस क्षेत्र में विश्व के वैज्ञानिक दिन-प्रतिदिन कार्यरत हैं। जिनकी उपलब्धियां मानव उपयोगी सिद्ध होंगी।



अध्याय 4

किण्वन परिरक्षण

(Preservation by Fermentation)

करीब 300 वर्ष पूर्व तक मानव को यह आभास ही नहीं था कि खाद्य-पदार्थों की विकृतियों का कारक सूक्ष्मजीव है। भारत में आदिकाल से ही मदिरा, दही इत्यादि का निर्माण किया जाता रहा है। इसका उल्लेख इस ग्रन्थ के प्रारम्भ में ही किया जा चुका है। भारतीय जलेबी, डोसा इडली, नान इत्यादि बनाते रहे, परन्तु उनको शायद मालूम नहीं था कि उपर्युक्त उत्पाद सूक्ष्मजीवियों द्वारा निर्मित होते हैं। लेकिन संस्कृत में "यीस्ट" को प्रकिण्व एवं एन्जाइम का किण्वक नाम दिया गया है, यानी प्राचीन भारतीय वैज्ञानिकों को यह मालूम था कि यीस्ट में एन्जाइम उपस्थित है तभी तो उन्होंने यीस्ट को प्रकिण्व नाम दिया था यानी किण्वकं पूर्वक यानी प्रकिण्व में किण्वक है। मदिरा तो वैदिक काल से ही भारत में बनाया करते जैसे दही, मक्खन इत्यादि। करीब एक शताब्दी पूर्व ही विश्व की जनता को यह मालुम हुआ कि किण्वितोत्पादों के प्रेरक सूक्ष्मजीव है। यह जीव कार्बोहाइड्रेट पर कार्य कर उन्हें ऑक्सीकरण द्वारा परिवर्तित करते हैं। यह सूक्ष्मजीव अवायुप्रिय या अर्द्ध अवायुप्रिय हो सकते हैं। इसी प्रकार एक प्राकृतिक खाद्य-पदार्थ का रूपान्तरण होकर परिरक्षित हो जाता है। अचार, मदिरा, सिरका इत्यादि उपर्युक्त पदार्थ किण्विनोत्पाद में आते हैं।

किण्वितोत्पादों के निर्माण के लिए काम में आने वाले बर्तन, वाहिकाएँ तथा उपस्कर ऐसे होने चाहिए जिनमें जंग नहीं लगता हो तथा जो किसी प्रकार की प्रक्रिया-प्रेरक न हो। अचार बनाने के लिए ऐसे काष्ठ से बना पीपा या पत्थर से निर्मित टंकी उचित पात्र माने जाते हैं, वे आदिकाल से काम में लिये जाते रहे हैं। इसी प्रकार के बर्तन मदिरा तथा सिरका निर्माण के लिए भी लिए जाते हैं। लेकिन लघु उद्योगपति अचार निर्माण के लिए भिन्न-भिन्न धारक शक्ति की चीनी-बरनियाँ काम में लेते हैं। इन्हें काष्ठ, पत्थर या चीनी मिट्टी से बने ढक्कनों से बन्द किया जाता है, लेकिन यह अवश्य ध्यान में रखना चाहिए कि उनमें किसी प्रकार की दुर्गन्ध पैदा न हो।

अचार

अचार एक किण्विनोत्पाद है, जो दो तरह के होते हैं—(1) लवणोपचार किया हुआ तथा (2) लवणोपचार के उपरान्त मसाले, गर्म मसाले, शर्करा, सिरका इत्यादि या उनमें से कुछ के संयुक्त प्रयोग से बनाया हुआ होता है। अंग्रेजी में इसे भिन्न-भिन्न नामों से जाना जाता है—मास्टर्ड पिकल तथा स्वीट्न्ड पिकल इत्यादि। भारत में इन दोनों को विशेष

तौर पर अचार ही कहते हैं। अचार विशेषतौर पर पाचनशक्ति को बढाता है, इसलिए कुछ विशेष रोगियों को कुछ विशेष किस्म के आचार जैसे—लवणोपचारित (बिना तेल मसाले के) अचार खिलाये जाते है। उनमें नीबू, आँवला, अदरक इत्यादि प्रमुख है।

देश-विदेश के कुछ अचार

भारतीय विपणी मे दो तरह के अचार मिलते हैं। एक-विदेशी तरीके से विदेश मे या देश में निर्मित अचार तथा दूसरे देशी अचार। विदेशी अचार लवणोपचार के बाद सिरके, मसाले, गर्म मसाले, शर्करा आदि के संयुक्त प्रयोग से या बिना मसाले से बनाया जाता है—इन्हें खट्टा अचार, मीठा अचार, मसाला अचार आदि नामो से जाना जाता है। इसके लिए खासतौर से खीरा, प्याज, गाजर, पत्तागोभी, फूलगोभी, हरा टमाटर, आडूफल (पीच), नासपाती, अंजीर, बीज रहित अंगूर काम मे लेते हैं।

देशी अचार

भारत मे निर्मित अचार के लिए विशेषतौर से कैरी (कच्चा-आम), नीबू वर्गीय फल, खासतौर से कागजी नीबू, लैमन, भिन्न भिन्न किस्म का आँवला, मिर्च इत्यादि का प्रयोग किया जाता है। इसके अलावा भारत के भिन्न-भिन्न प्रान्तो मे विशेषतौर से उत्पादित कुछ फल-तरकारी भी अचार के लिए काम मे लिए जाते है—जैसे कैर, लसोडा (नेसवा), गंवार पाठे की फली, केले के तने के बीच का डठल, करौंदा इत्यादि। इन्हे लवणोपचार के बाद विभिन्न मसाले मिलाकर अचार बनाये जाते हैं, जिनमे तेल आवश्यकतानुसार काम मे लिया जाता है। कई व्यक्ति तेल रहित अचार भी बनाते है। प्रत्येक भारतीय प्रदेश मे प्रत्येक अचार में मिलाये जाने वाले मासालरव तेल भी भिन्न-भिन्न होते हैं। रुचि, और सुगन्ध में अन्तर पाये जाते है।

किण्वितोत्पन्न मे यह आवश्यक नही है कि उसके कच्चे माल की सुगन्ध तथा रग कायम रहे। किण्वन क्रिया से कच्चे माल के वास्तविक रगरूप मे परिवर्तन आ जाता है, तथा उसके पोषक तत्वो मे विशेषतौर पर वृद्धि पाई जाती है, फलस्वरूप उसमें हमारे हमचाहे आरोग्यवर्तक सूक्ष्मजीवों का प्रवेश ही होता है तथा उनकी वशवृद्धि के लिए उपयुक्त तापमान तथा अन्य परिस्थितियाँ प्रदान की जाती है। फलस्वरूप किण्वन द्वारा खाद्य-पदार्थ परिरक्षित हो जाते हैं, क्योंकि उनको विकृत करने वाले अनारोग्यकारी सूक्ष्मजीवियो का प्रवेश सुचारु रूप से रोक दिया जाता है। प्रकिण्व, फफूंद आदि अम्ल खाद्य-पदार्थों मे वृद्धि करते हैं, इसलिए प्रकिण्वों की सहायता से जहाँ किण्वन क्रिया होती है, उसमे फफूंद बाधा या फफूद द्वारा किण्वन क्रिया कराये गये पदार्थ मे प्रकिण्व बाधा भी सम्भव है। फलस्वरूप अचार खराब हो सकते हैं, क्योकि हमारे चाहे गये सूक्ष्मजीवियों द्वारा किण्वन क्रिया न होकर दूसरे से किण्वन क्रिया सम्पन्न होती है, लेकिन सड़न-गलन-कारक जीवाणु अम्लीय खाद्य-पदार्थों को खराब नही करते, इसलिए जीवाणु बाधा को रोकने के लिए खाद्य-पदार्थों मे एक निश्चित मात्रा में अम्ल मिलाये जाते हैं। अल्प अम्ल वाले तथा अम्ल रहित खाद्य-पदार्थों मे जीवाणु बाधा के कारण खराबी हो सकती है। अचार उत्पादन मे इस बात का अवश्य ध्यान रखना चाहिए।

मदिरा निर्माण के लिए प्रकिण्वों का तथा सिरका निर्माण के लिए सिरका जीवाणुओ का प्रयोग किया जाता है। एक निश्चित मात्रा के मद्यसार को सिरके में परिवर्तन करने की शक्ति है। प्रकिण्वो में शर्करा मे से एक निश्चित मात्रा मे मद्यसार बनाने की भी क्षमता पाई जाती है।

अचार, नमक, लैक्टिक अम्ल जीवाणु

फल-तरकारियों, जिनमे शर्करा की मात्रा कम है, जैसे आँवला, कागजी नीबू, लैमन, कैरी, पत्तागोभी, फूलगोभी आदि, का 15 से 20 प्रतिशत वाले लवणघोल से या दानेदार लवण से उपचार किया जाये तो फफूंद बाधा तथा उनसे होने वाली किण्वन क्रिया से मुक्त रखा जा सकता है। लवणघोल मे उपचार की हुई फल-तरकारियाँ 24 घण्टे के अन्दर मुलायम हो जाएगी। इसमे एक प्रकार की मिश्रित-किण्वन-सड़न (Combination of Fermentation and Putrefaction) प्रक्रिया उत्पन्न होती है जो वांछनीय भी है। फलों में स्वतः लैक्टिक अम्ल जीवाणु होता ही है, यह जीवाणु गाढ़े लवण परिस्थिति मे भी अपने कार्य को चालू रखने की क्षमता रखता है—फलस्वरूप लैक्टिक अम्ल मात्रा का स्वत. उसमे बढाना भी स्वाभाविक है। अतः उपर्युक्त क्रिया से जहाँ लैक्टिक अम्ल मात्रा बढती है, उस अवस्था मे उस पदार्थ को (अचार) अधिकाधिक दिन तक परिरक्षित रखा जा सकता है।

जीवाणु अम्ल, परिस्थिति में बढोतरी नही करता, लेकिन लैक्टिक अम्ल जीवाणु, अम्ल परिस्थिति वाले पदार्थों मे अपनी वंशवृद्धि करता रहता है। यह हम भली-भाँति समझ चुके हैं। लैक्टिक अम्ल जीवाणु 10 प्रतिशत लवणयुक्त खाद्य-पदार्थ में बिना रोक-टोक बढोतरी करेगा। अचार निर्माण मे अम्ल लवणो को ही विशेषतौर से महत्त्व दिया जाता है।

इसी प्रकार लैक्टिक अम्ल जीवाणु तथा लवण दोनो के संयुक्त प्रयोग तथा क्रिया से, उसमे सामान्यतः पाये जाने वाले अन्य अनचाहे सूक्ष्मजीवियों को नष्ट कर या उसमे पुनः प्रवेश को रोक कर पूर्व चर्चित मिश्रित-किण्वन-सड़न संयुक्त प्रक्रिया से फल या तरकारी 24 घण्टे के भीतर नर्म की जा सकती है।

अाचार तथा क्रियाविधि

एकत्र किये हुये ताजा फल-तरकारियों मे लैक्टिक अम्ल जीवाणुओं की संख्या अधिक होगी। इनको सुचारु रूप से लवणोपचारित किया जाता है, तब उस फल-तरकारी में पाये जाने वाले जलांश को परासरण (Osmosis) द्वारा बाहर निकाला जाता है। इसमे फल-तरकारियों मे पाये जाने वाले धातुलवण, शर्करा, (अगर हो तो) इत्यादि घुलनशील पदार्थ भी पाये जायेंगे। यह पदार्थ उसमे उपस्थित लैक्टिक अम्ल जीवाणुओं के लिए आहार हो जाते हैं। फल-तरकारियों में से जो रस बाहर आ जाता है, उसके बदले मे लवणरस प्रवेश कर लेते हैं। अधिक जलांश वाले फल-तरकारियों के लिए 20 से 25 प्रतिशत तथा कम जलांश वालो के लिए 4 से 5 प्रतिशत लवण मिलाना अनिवार्य है। इसी प्रक्रिया से जो रस बाहर आ जाता है, उन्हें भी लैक्टिक अम्ल जीवाणु किण्वन क्रिया से परिरक्षित किया जाता है। लैक्टिक अम्ल जीवाणु क्रिया के लिए 30° से. तापमान आवश्यक है। इसलिए अचार निर्माण के समय यह ताप परिस्थिति बनाये रखना आवश्यक है। इसी प्रकार लैक्टिक अम्ल जीवाणु एक निश्चित मात्रा मे लैक्टिक अम्ल निर्माण करते हैं, तुरन्त बाद वे उसी परिस्थिति में निष्क्रिय हो जाते है। फलस्वरूप अचार उसी अवस्था मे स्थिर रह जाता है, अर्थात् आगे परिवर्तन नही होता। इस समय जिस फल से या तरकारी से अचार बनाया गया हो, उसी अचार के रंग, रूप, स्वाद, सुगन्ध आदि उसमें पाये जायेंगे। इन्ही गुणों से हम पहचान लेते हैं कि अचार पूर्णतया बन गया कि नहीं। इस समय अगर सावधानी नहीं बरती गई तो वायुग्रिय सूक्ष्मजीव अचार मे प्रवेश कर खराब कर सकते हैं।

अचार तथा सिरका

सिरका भी एक परिरक्षक पदार्थ है, जिसको मसालों में माना जाता है। लवणोपचार कर नर्म की हुई तरकारियों को 2 से 3 प्रतिशत ऐसिटिक अम्लयुक्त सिरके में परिरक्षित किया जा सकता है, जिसको पाश्चात्य लोग खट्टे अचार के नाम से पुकारते हैं। ये 10 प्रतिशत ऐसिटिक अम्लयुक्त गाढा सिरका काम मे लेते हैं। गाढ़े सिरके मे दीर्घकाल तक रखने के कारण वाहिका में पायी जाने वाली वायु निकालने के लिए भी सिरका काम में लेते है। फलस्वरूप वायु-प्रिय जीवाणु वाहिका मे रहे अचार में प्रवेश नही कर पाते। इस परिस्थिति मे ही अचार छोटी-छोटी वाहिकाओं मे भरकर सीलबन्द किये जाते। अचार निर्माण क्रिया मुख्यतया दो अवस्थाओ मे सम्पन्न होती है—(1) लवणोपचार (लवणघोल या दानेदार नमक द्वारा) तथा (2) मसालो एव गर्म मसालो द्वारा उपचार।

अचार बनाने की विधि

फल-तरकारियो को एकत्र करते ही शीघ्रातिशीघ्र अच्छी तरह साफ कर, जिनका छिलका उतारना हो, उतार कर, चाहे गये निश्चित परिमाण (आकार) मे कतर लेते है। इन टुकड़ों का जिस वाहिका मे उपचार करना है, उसे पहले साफ कर लेना चाहिए, । कतरे हुए टुकड़ों के वजन के अनुसार 3 प्रतिशत शुद्ध नमक तोलकर लेना चाहिए, वाहिका में कतरे हुए फल या तरकारी को करीब 3 सेन्टीमीटर मोटाई में तह बनाते हुए बिछावें, उसके ऊपर तोले हुए नमक से एक हिस्सा नमक लेकर छिड़का देवें, इसके ऊपर 3 सेन्टीमीटर मोटी तह पुन. कतरी हुई फल या तरकारी बिछादें, इसके ऊपर फिर नमक। इसी प्रकार एक के बाद एक वाहिका में भरते जाएं। जब वाहिका भर जाये तब उसके ऊपर एक सफेद कपड़े को दो तीन-बार मोडकर बिछा दें, इसके ऊपर एक लकड़ी का पाटा जिसका आकार वाहिका के मुँह के बराबर हो, रखदें ताकि उसके ऊपर वजन रखा जाये तो वाहिका में भरे हुए माल को दबा सके, साथ ही कपड़े की मदद से उसके भीतर वायु प्रवेश न हो सके। लकड़ी के पाटे पर रखा जाने वाला भार अचार के सम्पर्क मे आ जाये तो वह रासायनिक प्रक्रिया प्रेरक गुणयुक्त नहीं होना चाहिये। 30 किलो तरकारी पर करीब 5 किलो भार रखना चाहिए। 24 घन्टे के अन्दर वाहिकाओ मे, जैसा पहले ही कहा जा चुका है, वैसा लवण घोल बनता दिखाई न दे तो उसके ऊपर और भार रखा जाना चाहिये। इसी प्रकार की वाहिकाओं को चाहे गये तापमान, तथा शुष्क स्थान मे रखा जाये तो उसमे चाही गई किण्वन क्रिया सम्पन्न होगी। साधारणतया 26° से 32° सेन्टीग्रेड तापमान मे रखा जाये तो 8 से 10 दिन मे किण्वन क्रिया सम्पूर्ण होगी। लवण घोल उत्पन्न होते ही किण्वन क्रिया आरम्भ होती है। लेकिन उपर्युक्त तापमान मे परिवर्तन आ जाय तो किण्वन क्रिया मंद या तीव्र हो जायेगी। फलस्वरूप अचार खराब हो जाएगा। कम तापमान में किण्वन क्रिया सम्पूर्ण करने के लिए 24 दिन का समय लग सकता है। इसी प्रकार के अचार को सावधानी के साथ निर्जर्मीकृत वाहिकाओं मे भरकर सीलबन्द कर देना चाहिये। इस प्रकार की क्रिया में किसी प्रकार की असावधानी हो जाये तो वन्य प्रकिण्व (Wild yeasts) प्रवेश कर लेक्टिक अम्ल जीव णुओ को नष्ट कर सकते है। वन्य प्रकिण्व बाधित अचारों के ऊपर मलाई जैसी एक परत दिखाई देगी। इन्हे अचार का मलीकरण (Scum) कहा जाता है।

ये वायु सम्पर्क से ही अचार मे प्रवेश करेंगे। यह तथ्य इस बात का द्योतक है कि अचार को वायु सम्पर्क से वंचित रखा जाये। वायु प्रवेश तीन प्रकार से रोका जा सकता है—

निर्वातीकरण

(1) लवण द्वारा

तैयार किया हुआ अचार जिस वाहिका मे है, उसमे उसी प्रकार का अचार और भरकर तुरन्त ढक्कन लगादें। ढक्कन के केन्द्र स्थान मे 1.25 सेन्टीमीटर व्यास वाला एक द्वार होना आवश्यक है। इस द्वार द्वारा लवणघोल उसके भीतर भरा जाय ताकि वाहिका के मुँह तक भर जाय। इस क्रिया से उसके भीतर की वायु बुलबुले बनकर बाहर आती हुई दिखाई देगी। इस लवणघोल का प्रयोग उस समय तक चालू रखा जाये जब तक उसमें बुलबुले बन्द न हो जाएँ। वाहिका के मुँह से लवणघोल नीचे उतर जाय तो पुनः दोहराएँ। करीब 24 घण्टों मे भीतरी वायु का निष्कासन बन्द हो जायेगा। वाहिका के भीतर वायु बिल्कुल नहीं है, यह पूरी तरह मालूम होने पर ढक्कन के द्वार को अच्छी तरह बंद करदें। इस विधि से बनाए गये अचार मे मलीकरण नही होगा।

(2) तेल द्वारा

वाहिकाओं में अचार ठूंस-ठूंस कर भरकर उसमे खाद्य-तेल (सरसो, तिल, काकडा तेल, मूंगफली तेल) को गर्म कर (अच्छी तरह गर्म होकर तेल में से धुंआ निकलने लगे तब तक) ठण्डा कर, छान कर अचार के ऊपर आवश्यकतानुसार डाला जाता है। तेल लवणघोल से हल्का होने के कारण ऊपर तैरता रहेगा। फलस्वरूप वाहिका मे भीतर रखे हुए अचार में बाहर से वायु प्रवेश नही हो सकेगा लेकिन कम से कम 6 से 7 मिलीलीटर मोटाई तक अचार के ऊपर वाहिका मे तेल तैरता रहना अनिवार्य है। जब कभी अचार उसमे से निकालना हो, तो पहले तेल को ऊपर से निथार लिया जाता है, तुरन्त बाद निथारे हुये तेल को अचार निकालने के बाद वापस वाहिका में डाला जाता है, ताकि तेल बराबर वाहिका के अन्दर अचार के ऊपर तैरता रहे। अन्यथा अचार निकालते समय तेल अचार में मिल जायेगा—फलस्वरूप तेल और डालना पड़ेगा तथा उत्पादन खर्च भी बढ जायेगा।

(3) मोम द्वारा

उपर्युक्त दोनो प्रयोगो के अलावा पैराफिन मोम प्रयोग से भी वायु प्रवेश को रोका जा सकता है। मोम को पिघलाकर तेल के स्थान पर डाल दिया जाता है—फलस्वरूप मोम ठण्डा होकर सील समान कार्य करता है—साथ ही वाहिका के भीतर अचार में होने वाली संभावित किण्वन क्रिया से निकलने वाली वायु भी मोम को फाड़कर बाहर निकल जायेगी, इसलिए मोम फटते ही, उसको निकाल कर पुनः पिघलाकर डालना चाहिये। इस प्रयोग में अचार में चलने वाली किण्वन क्रिया रुकी या नहीं, यह मोम को फटने या न फटने की अवस्था से मालूम हो जाता है।

लवण किण्वन

फल-तरकारी मे एक निश्चित मात्रा मे मिलाये गये लवण या लवण घोल प्रयोग मे एक निश्चित समय के भीतर किण्वनीकरण होता है। इस क्रिया को लवण किण्वन कहते है। पश्चिमी देशो में लवणघोल में ही तरकारियो को किण्वन क्रिया के लिए काम में लेते हैं। आमतौर से खीरा, पत्तागोभी इत्यादि। किन्तु भारत मे नीबूवर्गीय फलों के लिए लवण या लवण घोल में किण्वन क्रिया विधेयक बनाया जाता है। कुछ प्रदेशों में कैरी, छोटे आम,

करौंदा आदि के भी लवण घोल प्रयोग द्वारा अचार बनाये जाते हैं। लवण किण्वन के लिए करीब 25 से 35 दिन आवश्यक हैं। ऐसे अचार मे उसके कच्चे माल के रूप रंग से भिन्नता पायी जायेगी। निर्जीवीकरण प्रयोग उस अचार के लिए आवश्यक नही जिसमें 10 प्रतिशत से अधिक नमक मिलाया गया हो।

संचयन

उपर्युक्त विधि मे तैयार किये हुये अचार को दो विभिन्न रीतियो से पैकीकरण कर गोदामो में रखा जाता है या विपणन के लिए भेज दिया जाता है।

(1) उपर्युक्त विधि से तैयार किये हुए अचार में उतना नमक और मिलाया जाता है, जिससे 25 प्रतिशत नमक हो जाये। इस लवण प्रयोग से अचार मे किण्वन क्रिया समाप्त हो जायेगी।

(2) लवणोपचार किये हुए अचार लवण घोल से निकालकर धोया जाता है ताकि उसके बाहर लगा हुआ नमक दूर हो सके। पानी मे इसी प्रकार धोये हुए अचार को 10 प्रतिशत ऐसिटिक अम्ल वाले सिरके मे डालकर रखा जाता है ताकि भविष्य में सकुचनी-करण (Shrivelling) न हो सके। तुरन्त बाद उन्हें मीठे सिरके मे या मसालायुक्त सिरके मे डालकर पैक किया जाता है।

मसालेदार सिरके का प्रयोग

प्रत्येक योग मे जितना चाहिए उतनी मात्रा मे सिरका लेकर जैसे—साद्रकृत उत्पादों के अध्याय मे चर्चा की है, उसी प्रकार मसाला निचोड मिलाकर या सिरके में मसाले तेल (अर्क) मिलाकर या दोनों संयुक्त प्रयोग मे भी मसाला सिरका बनाया जा सकता है। परन्तु बड़े कारखानो मे आवश्यकतानुसार मसाला तोलकर उन्हे पीसकर सिरके मे मिलाया जाता है, उन्हें बार-बार मिलाते रहते हैं। इस विधि से जब काफी मसाला रस सिरके मे मिल जाता है, तब सिरके को छानकर काम मे लिया जाता है।

मीठा सिरका

प्रथम योग मे जिस प्रकार बताया गया है, उसी मात्रा मे शर्करा तथा सिरका मिला कर गर्म करें, ढक्कन लगाना अनिवार्य है। शर्करा सिरके मे घुल जायेगी, इस समय मसालों को एक सफेद कपड़े मे पोटली बांधकर 6 घण्टे तक उपर्युक्त शर्करायुक्त सिरके मे गर्म होने दिया जाये। 6 घण्टे बाद ठण्डा कर आवश्यकतानुसार अचार मे मिलाया जा सकता है। योग संख्या 1 विदेशी नुस्खा है।

योग संख्या—1

क्र म	योगांश	मात्रा किलोग्राम में
1.	शर्करा	21 500
2.	लौंग	0·500
3.	धनिया	0.600
4.	इलायची	0 800
5.	अदरक	0 600
6	सौंफ	0 025
7.	सिरका	3·500 लीटर

योग संख्या–2

क्र. स.	योगांश	मात्रा
1.	सफेद सिरका	18 लीटर
2.	पानी	15 "
3.	लहसुन	60 ग्राम
4.	लाल मिर्च	136 "
5.	शीर्ष रहित लौंग पिसा हुआ	280 "
6.	जावित्री	50 "
7.	राई पिसी हुई	280 "
8.	धनियाँ पिसा हुआ	280 "
9.	इलायची पिसी हुई	50 "
10.	तेजपात पिसा हुआ	175 "
11.	सौंफ पिसी हुई	20 "
12.	अदरक पिसी हुई	186 "

योग संख्या–2 एक विदेशी नुस्खे पर आधारित है, जो केम्वल ने सिफारिश की है। योग संख्या–2 में बताये हुये मसालों को 7 दिन तक सिरके मे भिगोकर, छानकर, काम मे लिया जाता है।

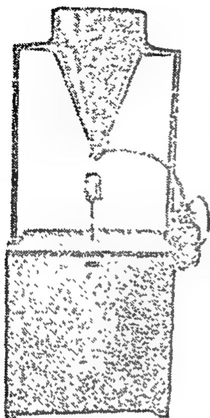
योग संख्या–3

क्र. सं.	योगांश	मात्रा
1.	सिरका	3 लीटर
2.	अदरक तेल	22 ग्राम
3.	लौंग तेल	20 ग्राम
4.	जावित्री तेल	0·4 "
5.	धनियाँ तेल	66 "
6.	राई तेल	12 "
7.	इलायची तेल	228 "
8.	तेजपात तेल	28 "

योग संख्या-3 मे बताये हुए सिरके मे उसके साथ बनाये हुए मसाले के तेलो को दो प्रकार से मिलाया जा सकता है—1. योग मे बताये अनुसार सिरका लेकर उसमे मसाला तेल तथा गोंद मिलाकर चटनी-सा बनाया जाये या 2. तेल तथा शर्करा सिरके मे मिलाकर भी बनाया जा सकता है। यह योग पोन्टनी द्वारा सिफारिश योग पर आधारित है।

पैकीकरण

तैयार किये हुये अचार को विपणन योग्य वाहिकाओं मे भरकर पैकिंग कर बाजार मे विक्रय हेतु भेजा जाता है। आमतौर पर अचार कांच की बरनियो मे या कैनों (डिब्बों) मे भरकर उसमे सिरका या तेल और मिलाया जाता है ताकि उसकी भीतरी वायु बाहर



चित्र 20
आटोमेटिक पिकल फिलगमशीन
(स्वचालित अचार भरने वाला यन्त्र)

निकाली जा सके व वायु का पुनः प्रवेश रोका जा सके। बड़े कारखानों में स्वचालित यन्त्र काम में लिया जाता है। (चित्र सं.–20) इसके लिये वाहिकाओं को वायुरुद्ध अवस्था में सीलबन्द कर दिया जाता है, साथ ही लेबल भी लगाये जाते हैं, जिससे कम्पनी की पहचान ही नहीं अपितु अचार का नाम तथा अन्य वर्णन आसानी से मिल सके।

विभिन्न अचार

तेल में आम का अचार बनाने की विधि

साधारणतया पूर्ण विकसित खट्टे आम इसके लिऐ चुने जाते है। इन्हे अच्छो तरह धोकर इच्छित आकार में फाँकें बनानी चाहिए। साधारणतया उत्तरी भारत में आमों को 4 टुकड़े कर गुठली सहित अचार के लिए काम में लेते है, लेकिन दक्षिण भारत में गुठली निकाली जाती है। इसलिए जिस प्रदेश में विपणन करना है, वहाँ की आवश्यकतानुसार अचार बनाना व्यापारिक दृष्टि से उचित रहेगा। विदेशों में भेजे जाने वाले अचार भी गुठली रहित होने चाहिए।

कतरते समय आमों के वर्णभेद को रोकने के 3 प्रतिशत लवण वाले जल घोल में कतरे हुए आमो को डालते रहना चाहिए। कतरे हुए इन्ही आमों का योग सख्या–4 में बताए योगाश के अनुसार अचार निर्माण किया जा सकता है। यह योगाश केन्द्रीय खाद्य प्रौद्योगिक अनुसंधान सस्थान द्वारा निर्दिष्ट विधि पर आधारित है।

योग संख्या–4

क्र. स.	योगाश	मात्रा किलोग्राम में
1.	कतरे हुए आम	100
2.	नमक	20
3.	मेथी पिसी हुई	12.500
4.	काला जीरा पिसा हुआ	3
5.	हल्दी पिसी हुई	3
6.	लाल मिर्च	3
7.	काली मिर्च पिसी हुई	3
8.	सौंफ	3
9.	तेल—6 मिलीमीटर अचार के ऊपर तैरने के लिए आवश्यक मात्रा में।	

योग संख्या–4 में बताई गई मात्रा के अनुसार कतरे हुए आम तथा नमक मिलाकर रखा जाये जैसे इस अध्याय में पहले ही चर्चा हो चुकी है। यदि आम के टुकड़े बिछाकर उसके ऊपर नमक, फिर टुकड़े व नमक इसी प्रकार क्रमशः वाहिका में भरते जायें। इसको 25° से 32° सेन्टीग्रेड तापमान वाले स्थान पर रखना चाहिये। (साधारणतया घरेलू स्तर पर अचार बनाने के लिए बरनी में टुकड़े तथा नमक मिलाकर 4–5 दिन धूप दिखाकर अचार बनाते हैं, लेकिन बड़े कारखानों में बड़ी मात्रा में अचार बनाया जाता है वहाँ यह विधि सम्भव नहीं है।)

नर्म होने के बाद योग संख्या–4 में बताये हुए मसाले मिलाये जाते हैं तथा अचार को छोटी-छोटी वाहिकाओं में भरकर उपर्युक्त विधि अनुसार तेल तैराया जाता है। इस विधि से निर्मित अचार 2 सप्ताह से 3 सप्ताह के भीतर खाने योग्य हो जाता है। ध्यान रहे कि तेल नीचे उतर जाये तो पुनः तेल डालकर 6 मिलीलीटर तैराएँ। तेल हमेशा गर्म करके ठण्डा कर अचार में मिलाया जाता है। तेल के बजाय मोम भी काम में लिया जा सकता है लेकिन मोम खाया नहीं जाता।

कागजी नींबू का अचार बनाने की विधि

कागजी नीबू, अन्य नींबूवर्गीय फल आदि का अचार आम के अचार की भाँति ही बनाया जाता है। कागजी नीबू पूर्ण विकसित पके हुए, पीले रंग वाले अच्छे माने जाते हैं। नीबूओं को अच्छी तरह धोकर उन्हें गर्म पानी में डुबोकर तुरन्त कपड़े से साफ कर लेना चाहिये। नीबुओं को 0·03 प्रतिशत पोटेशियम मेटाबाईसल्फाइट युक्त जल में डुबोकर रखने के पश्चात् उन्हें पोंछकर भी काम में लिया जा सकता है। नीबू की मात्रा के अनुसार उनसे 25 प्रतिशत नमक मिलाया जाता है। इन्हें घरेलू स्तर पर धूप में रखकर तैयार किया जाता है, वैसे व्यावसायिक स्तर के लिए आम की तरह ही वाहिकाओं में तैयार किया जाता है। जब कागजी नींबू का रंग भूरा हो जाये तब उसमें काफी मात्रा में लवण घोल भी पाया जायेगा। इन्हें तुरन्त वायुरुद्ध अवस्था में बन्द कर रखें। नीबुओं को 15 से 20 प्रतिशत लवणयुक्त जलीयघोल में भी तैयार किया जाता है। इनमें मसाला मिलाकर भी अचार बनाया जाता है।

आँवले का अचार भी इसी प्रकार लवणघोल में नर्म कर अचार बनाया जाता है। मुरब्बे के लायक आँवलों को मुरब्बे की भांति गोदकर उन्हें लवणोपचार या चूना उपचार के बाद अचार बनाया जाये तो अधिक मसाला आँवलों में प्रवेश कर जायेगा जिससे वे और भी स्वादिष्ट हो जायेंगे। आँवलों को गोदने के लिए हाथ से चलने वाले एक यन्त्र का आविष्कार सदाशिवन नायर तथा एम. एल. जैन (1977) ने किया है। (चित्र संख्या–2[illegible]

कागजी नींबू व हरी मिर्च का मिश्रित अचार

कागजी नीबू तथा बड़ी हरी मिर्च अच्छी तरह धोकर, जैसे पहले चर्चा की जा चुकी है, बराबर मात्रा में ले लेवें, इसमें 20 से 25 प्रतिशत नमक [illegible] है। हरी मिर्च लम्बाई में दो टुकड़ों में काटी जाती है लेकिन [illegible] के अनुसार दो या चार टुकड़ों में [illegible]। हरी मिर्च को 5 प्रतिशत [illegible] जलीय घोल में [illegible]। [illegible] लिया जाता है, उसमें 5 प्रतिशत [illegible]



चित्र 21

मुरब्बा बनाने के पूर्व आँवलो को गोदना है । इसके लिए कृषि कॉलेज जोधनेर मे (नायर एवं जैन 1977) विकसित की गई प्रिकर का चित्र जो साबुत आँवलो से अचार बनाने के पूर्व गोदा जाये तो मसाले तथा गर्म मसाले आँवलो के भीतर आसानी से प्रवेश कर स्वादिष्ट बन जायेंगे ।

पर अम्ल तैरता रहे । साइट्रिक अम्ल के बजाय नीबू का रस भी निचोड़ कर डाला जा *सकता है जो अधिक उत्तम है । दूसरे दिन इसमें एसिटिक अम्ल मे उपचारित हरी मिर्च* को अलग कर नीबू मे डाल दिया जाता है । इन दोनो को मिश्रित कर लेते हैं । घरेलू स्तर पर इन्हे बरनी मे भरकर धूप मे रख दिया जाता है । दोनो विधियों मे नीबू तथा हरी मिर्च का रंग बदल जाये तथा नर्म हो जाय तब नमी तथा वायुरोधक अवस्था में ढक्कन लगा कर रख दिया जाता है । इस समय से इसको काम में लिया जा सकता है । ध्यान रखें वायुरुद्ध अवस्था में अगर अचार तैयार किया जाता हैं तो नीबू का वर्ण ज्यों-का-त्यों बना रह सकेगा । लेकिन घरेलू स्तर पर धूप दिखाकर अचार तैयार किया जाता है वहाँ नीबू का वर्ण भूरा हो जाता है ।

कटहल का अचार

केरल, आसाम, कर्नाटक तमिलनाडु, उत्तरप्रदेश, मध्यप्रदेश तथा महाराष्ट्र मे कटहल काफी मात्रा मे प्राप्त होते हैं। दक्षिण भारत मे कच्चे कटहल को तरकारी के रूप मे तथा पके हुए कटहल को फल के रूप में काम मे लेते है। कटहल के बीज को नमकीन तथा तरकारी के रूप मे भी काम में लिया जाता है। कटहल विशेषतौर से दो मुख्य किस्मो में पाया जाता है। एक पकने के बावजूद कड़क रहता है दूसरी किस्म के कटहल के स्कन्द पकने के बाद ढीले हो जाते है। उत्तर भारत में कटहल तरकारी के रूप मे ही विशेषतौर से काम मे लिया जाता है। अचार बनाने के लिए भी कटहल उत्तर भारत मे दक्षिण भारत की अपेक्षा अधिक लोकप्रिय है। केन्द्रीय खाद्य प्रौद्योगिकी अनुसंधान संस्थान द्वारा निर्दिष्ट किये गये एक योग के आधार पर अचार बनाया जाये तो वह समस्त भारतीयो के लिए लोकप्रिय रहेगा।

अचार बनाने के लिए नर्म कटहल काम मे लिया जाता है, जिनके बीज तथा सारगर्भित भाग दोनों ही मुलायम हो। साबुन कटहल को ब्रुश की सहायता से रगड़ कर धो लेना चाहिए। इसके बाद फल का ऊपरी छिलका उतार दें। इस समय हाथ मे तेल मलना न भूलिये, ताकि उसमें से निकलने वाला दूध जैसा (गोंद-सा) पदार्थ हाथ में न चिपक पावे। छिले हुए कटहल को करीब 1 25 सेंटीमीटर मोटाई की फाकों में कतर लेवें। इन्हे 8 प्रतिशत लवण घोल मे डुबोकर रखिए। दूसरे दिन इनमें 2 प्रतिशत नमक और मिला देवें ताकि लवण घोल 10 प्रतिशत हो जाय। यह प्रक्रिया प्रतिदिन दोहराते रहें ताकि उनका लवण प्रतिशत आखिरी दिन मे 15 प्रतिशत हो जाय। 8 से 10 दिन के भीतर टुकड़े पूर्णरूप से नर्म हो जायेंगे, तुरन्त उन्हें शुद्ध पानी मे धोकर निकालें। लवणोपचारित इन टुकड़ो को विभिन्न प्रकार के अचार बनाने के काम मे लिया जाता है।

योग संख्या 5

क्र. सं.	योगाश	मात्रा किलोग्राम मे
1.	लवणोपचारित कटहल टुकड़े	100 000
2	नमक	6 250
3.	जीरा	0·300
4.	लाल मिर्च चूर्ण	1·900
5.	लौंग	0·300
6	इलायची	0·150
7	दालचीनी	0·300
8.	सोंठ चूर्ण	0·150
9	प्याज कतरा हुआ	3 000
10.	सरसो या राई दो टुकड़ों मे	0·300
11.	लहसुन कतरा हुआ	0·300
12.	शर्करा	12 500
13.	सिरका	12·500
14.	तिल का तेल	12·500

कटहल का मीठा अचार

योग संख्या–5 में दर्शाये गए योगांशों में से अदरक, प्याज, लहसुन आदि को थोड़े तेल में भुन लें। जब इनका रंग भूरा हो जाय, तब इनमे राई डाल दें, राई फटने लगे तब मसाले तथा लवणोपचारित कतरे हुए कटहल मिला दें। इन्हें बरणी मे यथाविधि भर कर रखें। घरेलू स्तर पर इन्हें भी धूप दिखायी जाती है, लेकिन इनमे मक्खी को रोकने के लिए मलमल के कपड़े से ढक दें। चार-पांच दिन धूप दिखाने बाद इसमे सिरका तथा शर्करा मिलाकर पुनः 3 से 4 दिन धूप दिखावें। व्यावसायिक स्तर पर हो तो 25 से 28 सेन्टीग्रेड तापमान पर रखना चाहिए। आम के अचार की तरह इन्हें भी छोटी-छोटी चाहिकाओं में यथाविधि भरकर ऊपर तेल तैरा देना चाहिये।

कटहल का अचार मसालेदार सिरके में

योग संख्या–6 मे बताये गये मसालों को कपड़े में एक पोटली बनाकर सिरके में डालकर मन्द आंच में पकाया जाय। ध्यान रखें कि सिरका उबल न जाये। 4 घण्टे बाद पोटली निकालकर उसमें से रस निचोड़ कर सिरके में वापस डाल दें। इसको ठण्डा कर लें। ध्यान रहे इस प्रकार तैयार किये हुए सिरके की मात्रा लवणोपचारित टुकड़ों के बराबर होनी चाहिए अर्थात् जितना वजन टुकड़ों का है उतना ही वजन या नाप सिरके का होना चाहिए। मसाला कम हो तो ऊपर से और मिलाया जा सकता है। इसी प्रकार बिना मसाले के सिरके में भी अचार बनाया जा सकता है, लेकिन एक सप्ताह बाद टुकड़ों को सिरके मे से निकालकर ताजा सिरका मिलाना चाहिए ताकि बराबर शक्ति का सिरका बना रहे। अगर सिरका बदला नहीं जाये तो अचार खराब होने की सम्भावना है। सिरके का अचार जिस चाहिका में रखा है, उसका ढक्कन जंगरोधी होना चाहिये।

योग संख्या–6

क्र सं	योगांश	मात्रा किलोग्राम में
1.	लवणोपचारित कटहल टुकड़े	100·000
2	शर्करा	75·000
3.	सिरका	100 लीटर
4	जल	37 5 लीटर
5	धनिया	0 050 ग्राम
6.	शीर्ष रहित लौंग	
7	दाल चीनी	
8.	अदरक	0 050ग्राम
9	जावित्री	
10	राई	

पपीता अचार

हरे पपीतों से उनका दूध निकालकर उनमें से पपाइन नामक पदार्थ बनाया जाता है, इसको निकालने के लिए पूर्ण विकसित कच्चे पपीतों को पेड़ पर रहते समय ही हल्का चीरा लगाकर दूध जैसा पपाइन एकत्रित कर लिया जाता है। फलस्वरूप पपीता देखने में

अच्छा नहीं लगता पकने के बाद भी विपणन योग्य नहीं रहता। लेकिन इस पपीता में किसी प्रकार का दोष नहीं पाया जाता। इसीलिए इसे भी पकाकर कैनीकरण के काम में लिया जाता है। चाहे तो कच्चे पपीते (पकने के पहले) से अचार भी बनाया जा सकता है।

अचार के लिए पूर्ण विकसित बिना पके पपीते एकत्र करने चाहिएँ, चाहे पपाइन निकाला हुआ ही क्यों न हो। इन्हें अच्छी तरह धोकर, छिलका उतारकर, चाही गई मोटाई में कतर लेना चाहिए। ध्यान रखें कि पपीते के भीतर के बीज तथा अनुपयोगी भाग निकाल देवें। इन टुकडों को विवर्णीकरण के पश्चात् किसी मेज पर फैला देना चाहिए ताकि नमी निकल जाये। टुकड़ों में से नमी पूर्ण रूप से निकलते ही वाहिका में भरकर सिरका तैरा दें। इसमें करीब 12 प्रतिशत राई पीसकर डाल दें। हल्दी जितनी चाहिए उतनी पीसी हुई मिला दें। तुरन्त उन्हें वायुरुद्ध अवस्था में बन्द कर रख दें। चार-पाँच दिन बाद इन्हें काम में लिया जा सकता है।

प्याज का अचार

पूर्ण विकसित एक समान प्याजों को चुन लें। इसके अनुपयोगी भागों को निकाल दें। छिलके रहित प्याजों को पानी में अच्छी तरह धोकर निकालें। इन प्याजों को पानी में 2 से 3 दिन तक रखें तथा तुरन्त बाद इन्हें 5 प्रतिशत लवण घोल में 5–6 दिन रख दें। प्याजों को निकालकर एक वाहिका में भर दें। इन्हें 60° सालोमीटर वाले लवणघोल (15 प्रतिशत) से तैरा दें। प्याज को 80° सालोमीटर घोल पर अधिक दिनों तक भी सन्धान किया जा सकता है। इस क्रिया से प्याज हिमवर्ण ही नहीं होगा अपितु उसका चरपराहट भी कम हो जायेगी। इसके बाद प्याजों को निकालकर गर्म पानी में 12 घण्टे रखा जाये ताकि उसका नमक निकल जाये। इसके बाद प्याज निकालकर 4 प्रतिशत एसिटिक अम्ल वाले घोल में 24 घण्टे रखें। इसके बाद प्याज को निकालकर चौडी मुँह वाली काँच की बरनियों में भरकर 5 प्रतिशत एसिटिक अम्ल या सफेद सिरका डालकर बरनियों को सील कर दें। चाहे तो इसमें कुछ लाल मिर्च तथा राई भी मिलाई जा सकती है। कुछ लोग मसाला युक्त सिरका भी मिलाते हैं।

शीघ्र किण्वन विधि से अचार बनाना

उपर्युक्त विधि से प्याज तैयार कर विवर्णीकरण कर नमी दूर कर, प्याज के वजन के अनुसार 12 प्रतिशत नमक मिलाकर 24 घण्टे रख दें। इन्हें बार-बार मिलाते-हिलाते रहें। 24 घण्टे बाद प्याज निकालकर काँच की बरणी में भरकर मसालायुक्त ठण्डा सिरका उस पर तैरा दें तथा सीलबन्द कर समुचित स्थान पर सचयन करें। यह विधि गिरधारीलाल तथा साथियों ने निर्दिष्ट की है।

अकिण्वन विधि से प्याज का अचार

यह भी एक विदेशी विधि पर आधारित है। छिलका आदि निकालकर धोये हुए प्याज को एक काष्ठ पीपे में ठूँस-ठूँसकर भर दें। ध्यान रखें कि प्याज टूटे नहीं। इसमें करीब 85° सालोमीटर के लवणघोल को भर दें, 48 घण्टे बाद प्याज से लवणघोल अलग कर दें। बदले में उसी डिग्री सालोमीटर (85)° का नया लवणघोल पुनः भर दें इसमें 225 लीटर क्षमता वाले पीपे में करीब 58 ग्राम पोटेशियम मेटाबाईसल्फाइट मिलाया जाये

(0·0025%) तो प्याज हिमवर्ण भी हो जायेगा। इस प्रकार का अचार दो सप्ताह के अन्दर खाने योग्य हो जायेगा।

पत्तागोभी का अचार

पूर्णरूप से विकसित पत्तागोभी काम मे लेनी चाहिए। इस प्रकार की पत्तागोभी गोभी भारी भी होगी। इसे अच्छी तरह धोकर अनचाहे पत्तों को निकाल दें। इन्हे बराबर मोटाई में कतरकर जंगरोधी वाहिका मे पुनः धोकर पानी निथारकर भर दें। इसमें करीब 3 प्रतिशत नमक मिला लें। याद रखें कि नमक व कतरी हुई पत्ता गोभी को वाहिका में पहले एक परत पत्तागोभी, उसके ऊपर नमक, फिर पत्तागोभी की परत व उस पर नमक क्रमशः एक के बाद एक भर लें। इसके ऊपर तुरन्त ढक्कन लगा दें जो काष्ठ से बना होना चाहिए) तथा ऊपर भार रखना अनिवार्य है। 30 घण्टे बाद इसे निकालकर (लवणघोल-रहित) काँच की बरनी मे भरकर नये सिरके से तैराकर सीलबन्द कर, लेबलीकरण पश्चात् उचित स्थान पर सचयन करें। विशेषतौर से पश्चिमी देशवासियों का यह स्वादिष्ट अचार है। एक अन्य अचार है-सवरक्राट।

सवरक्राट

अमेरिका, जर्मनी आदि पाश्चात्य देशो मे यह अचार प्रचलित है। जैसे कि पहले बताया जा चुका है, उस विधि से तैयार पत्तागोभी को नमक मिलाकर काष्ठ ढक्कन लगा कर उसके ऊपर भार रखा जाता है। इसको ऐसे स्थान मे रखा जाता है, जहा 24° से 27° सेन्टीग्रेड ताप 8 से 12 दिन तक बराबर मिलता रहे। इसमे जो अचार-मलीकरण हो जाता है, उसे अलग करते रहना चाहिए। किण्वन क्रिया सम्पूर्ण होते ही (12 वें दिन) उन्हे उबालकर निर्जलीकरण करना चाहिए। इसके बाद कांच की बरनी मे भरकर उसमे गर्म लवणघोल तैरा देना चाहिए। उचित कैनो मे भी भरा जा सकता है। लेकिन कैनों को निर्वातीकरण कर (कैन के केन्द्र मे जब 32° सेन्टीग्रेड ताप पहुँच जाय) सीलबन्द किया जाय। यह विधि क्रुम द्वारा प्रतिपादित है।

खीरे का अचार

पश्चिमी देशो मे ही नही, भारत मे विशेष रूप से उत्तर भारत का एक प्रमुख तरकारी है-खीरा। यह खास तौर से सलाद के रूप मे खाया जाता है। गर्मी के मौसम में यह तरावट देने वाली सलाद तरकारी है। विदेशो मे तो इसे अचार के रूप मे अधिक पसन्द करते हैं। इसमें काफी मात्रा मे पोषक तत्व हैं। सन् 1965 मे प्रेमनाथ ने यह प्रतिवेदन दिया है कि खीरे के प्रत्येक खाद्य योग्य 100 ग्राम मे निम्नलिखित पोषक तत्व है, जो निम्नलिखित सारणी मे वर्णित हैं :—

सारणी

क्र म	पोषक पदार्थ	मात्रा
1	जलांश	91 1 प्रतिशत
2	प्रोटीन	0·7 ग्राम
3	स्नेहांश	0·10 ,,
4	कार्बोहाइड्रेट	2·7 ,,

5	रेशा	0·5 ग्राम
6	कैल्शियम	10·0 मिलीग्राम
7	फॉस्फोरस	21·0 ,,
8	लोहांश	1·2 ,,
9	थाइमिन	0·03 ,,
10	रिबोफ्लेविन	
11	अस्कार्बिक् अम्ल	8·0 ,,
12	विटामिन 'ए'	2·60 इन्टरनैशनल यूनिट

सन् 1951 में जैकब ने अचार बनाने के पहले तथा बाद में खीरे का विश्लेषण करके बताया कि इसमें 95 प्रतिशत जलांश, 5 प्रतिशत ठोस पदार्थ, 1·2 प्रतिशत शर्करा, 1·4 प्रतिशत प्रोटीन, 0·06 प्रतिशत स्नेहांश (वसा), 0·52 प्रतिशत भस्म है।

परन्तु खीरे का अचार बनाने के बाद विश्लेषण से मालूम हुआ कि 92 प्रतिशत जलांश, 9·8 प्रतिशत ठोस पदार्थ, 0 1 प्रतिशत शर्करा, 1·04 प्रतिशत प्रोटीन, 0·15 प्रतिशत स्नेहांश तथा 6·48 भस्म है। इससे यह पता लगता है कि कच्चे खीरे मे पोषक पदार्थ अधिक नहीं है, बल्कि अचार में है। पोषक अंश बढ़ने का मुख्य कारण उसमें प्रकिण्वों का प्रजनन तथा उनकी क्रिया है।

लेकिन इसी प्रकार का समानान्तर विश्लेषण अध्ययन आज भी भारतीय अचार तथा उसके कच्चे माल की तुलना में नहीं किया गया है, जो इस आवश्यकता पर विशेष बल देता है।

खीरा अचार

अचार के लिये खीरा कम से कम 5–6 सेन्टीमीटर लम्बा हो तथा ठोस होना चाहिये। यह सब बराबर मोटाई तथा लम्बाई का होना उचित है। इन्हें अच्छी तरह पानी से धोकर निकाल लें। रूस के अनुसार खीरे का तीन विभिन्न विधियों से अचार बनाया जा सकता है।

तैयार किये हुए खीरे को काष्ट की बनी टंकी में डाल दें। यह टंकी आवश्यकतानुसार क्षमता की होनी चाहिए। इस टंकी में 3 सेन्टीमीटर ऊँचाई पर 10 प्रतिशत लवण-घोल पहले से ही तैयार कर डाल दें। टंकी जितनी बड़ी हो उतना ही अधिक लवण-घोल डालना चाहिये। बिना लवणघोल की टंकी में खीरा डाला जाये तो वह क्षतिग्रस्त हो जायेगा। खीरा भरने के बाद उसमे पुनः लवण-घोल तैरा दें। उसके ऊपर काष्ट का ही बना एक ढक्कन इस प्रकार लगायें जिससे खीरा लवण-घोल में डूबा रहे। इस लवण-घोल को समय-समय पर जाँच कर चाहे गये 10 प्रतिशत नमक को बनाये रखें, क्योंकि लवण-घोल से खीरा नमक को चूस लेता है और लवण-घोल में नमक का प्रतिशत कम हो जाना स्वाभाविक है। लवण-घोल 10 प्रतिशत से कम हो जाए तो खीरा खराब होने की सम्भावना रहती है।

खीरे का खट्टा अचार

उपर्युक्त विधि से तैयार किये गये खीरे को 43° से 54° सेन्टीग्रेड तक

गर्म पानी में 3 बार धोकर निकालें। तीसरी बार धोते समय 900 लीटर पानी के लिए 454 ग्राम सोडाअलम या 3 से 4 प्रतिशत कैल्शियम क्लोराइड उस जल में मिलाया हुआ होना चाहिए। इस प्रकार के किसी भी एक पानी में धोने से खीरा ठोस बन जायेगा। इसके बाद खीरा में हल्दी लगाई जाए। इनमें 4 से 5 प्रतिशत ऐसिटिक अम्ल युक्त सफेद सिरका मिलाकर परिरक्षण कर सकते हैं। लेकिन खीरा सिरके में डूबा रहना चाहिए। कुछ दिनों तक खीरा उसमें से निकालकर कांच की बरनियों में भर लिया जाता है तथा पुनः उपर्युक्त शक्ति का ऐसिटिक अम्ल मिलाकर सीलबन्द कर देते हैं। ध्यान रखें कांच का ढक्कन जंग रोधी हो या ढक्कन को इस प्रकार लगा देना चाहिये कि ऐसिटिक अम्ल से वह सीधा सम्पर्क में न आ सके। इसके लिए ढक्कन के भीतर मोम जामा कागज या कार्क से बनी पुट्ठे के टुकड़े काटकर लगा दिया जाए।

खीरे का मीठा अचार

उपर्युक्त विधि से लवणोपचारित खीरे को 6 प्रतिशत ऐसिटिक अम्ल वाले सफेद सिरके में दो रोज रखने के बाद निकालकर गर्म मसाले युक्त मीठे सिरके में परिरक्षण किया जाता है, जो योग सं. 7 में वर्णित है। 6 प्रतिशत ऐसिटिक अम्ल से उपचार इसलिए किया जाता है कि खीरा शर्करा के सम्पर्क में परासरण की वजह से सिकुड़ न जाए।

शर्करा मिलाने से पूर्व मसाले की कपड़े की पोटली बनाकर एक घण्टे तक सिरके में रखें जिसका तापमान 80° से 82° सेन्टीग्रेड हो। चीनी युक्त घोल का ब्रिक्स 15·5 सेन्टीग्रेड पर 40° ब्रिक्स तथा 5 प्रतिशत अम्ल होना चाहिए। इस घोल में चाहे तो अदरक, कच्चा टमाटर, फूलगोभी आदि में से दो या अधिक वस्तुऐं मिलाकर मिश्रित अचार भी बनाया जा सकता है।

योग संख्या–7

क्र सं.	योगाश	मात्रा
1	ऐसिटिक अम्ल से बना सिरका (8 प्रतिशत अम्ल युक्त)	58 लीटर
2	भूरे रंग की शर्करा	9,120 कि.ग्रा.
3	दानेदार सफेद शर्करा	9.100 "
4	लौंग	0 058 "
5	धनियाँ	0·058 "
6	राई	0·058 "
7	अदरक	0·058 "
8	जावित्री	0·058 "

फूलगोभी का अचार

फूलगोभी को जैसे कैनीकरण के लिए तैयार किया जाता है, वैसे तैयार किया जाये। उन्हें 10 प्रतिशत लवणघोल में उपचार कर (खीरे की तरह) अचार बनाया जा सकता है।

फलों से बने कुछ विशेष अचार

यहाँ फलों से बनने वाले कुछ विशेष अचारों की विधि के बारे में चर्चा की जा रही है। साधारणतया अंजीर, तरबूज, अंगूर, नाशपाती इत्यादि मन्द शर्करा घोल में या जल में पकाये जाते हैं। यह एक विदेशी योग पर आधारित है।

योग संख्या–8

क्र.स.	योगांश	मात्रा
1	शर्करा	55 किलोग्राम
2	पानी	25 ,,
3	सिरका	18·5 ,,
4	लौंग	0·165 ,,
5	दालचीनी	
6	अदरक	

उपरोक्त योगांशों को एक साथ मिलाकर रात भर रखा जाये। दूसरे दिन निथार-कर इसको 104° सेन्टीग्रेड ताप पर उबालें। इसमें फलों को डालकर पुनः उबालें। इसको काँच की बरनियों में या कैनों में भरकर सीलबन्द कर संचयन किया जाये। यह विधि क्रूम पर आधारित है। कैन "एल" टाइप होनी चाहिये।

अचार में आमतौर पर होने वाली विकृतियाँ

अचार के ऊपर मलाई की तरह एक परत जमाना (मलीकरण) सिकुड़ना, कड़वा-पन, अचार काला हो जाना (कालीकरण) धुंधलापन आदि विकृतियाँ साधारणतया अचार में उत्पन्न हो जाती हैं। यह आमतौर पर फफूंद बाधा से होती है। इसलिए फफूंद से अचार को बचाये रखना अनिवार्य है। शीतगोदामों में रखा जाए तो अचार दीर्घ-काल तक परिरक्षित रहेगा। जितने लम्बे समय तक अचार रखना हो, उतनी ही सावधानियाँ भी बरतनी होंगी।

मलीकरण

वन्य प्रकिण्वों के आक्रमण से ही आचार पर सफेद-सा मलीकरण होता है। इसको अचार मलीकरण कहा जा सकता है। इन्हें देखते ही हटा देना चाहिये तथा उसके ऊपर एक प्रतिशत ऐसिटिक अम्ल डाल देना चाहिए। अन्यथा अचार में पाये जाने वाले लैक्टिक अम्ल जीवाणुओं को वन्य प्रकिण्व नष्ट कर देंगे, फलस्वरूप अचार खराब हो जायेगा।

अचार में सिकुड़न

नींबू, खीरा, आँवला, आदि का गाढ़े शर्करा घोल में या सिरके में उपचार करते समय सिकुड़न हो जाती है, ऐसा परासरण के कारण ही होता है। इसलिए हमेशा प्रारम्भ में मन्द घोल में बाद में गाढ़े घोल में उपचार किया जाये तो इस दोष को दूर किया जा सकता है।

अचार में कालापन या कालीकरण

इस विकृति का मुख्य कारण खराब लवण का प्रयोग, लौहयुक्त लौंग

या दोनों का संयुक्त प्रयोग होता है। इसलिए शुद्ध नमक ही काम में लेना चाहिए। लौंग प्रयोग के पहले उसके शीर्ष को अलग कर दें। इसके अलावा कुछ सूक्ष्मजीवियों के आक्रमण से भी अचार काला हो जाता है। इसके लिए अचार को वायुरहितावस्था मे रखने के लिए उसकी सतह पर लवणघोल, गर्मकर ठण्डा किया तेल या गर्म मोम डालकर सीलबन्द कर देना चाहिए।

अचार में कड़वापन

मसाला अधिक हो जाने से या अधिक शक्ति के (गाढ़े) सिरके के प्रयोग से या दोनों की संयुक्त अवस्था मे अधिक देर तक पकाये जाने से भी अचार में कड़वापन आ सकता है।

अचार में धुंधलापन

हम भली-भांति जानते हैं कि खाद्य पदार्थों मे स्वतः ही कुछ सूक्ष्मजीव होते हैं तथा बाद में बाहर से आक्रमण कर प्रविष्ट हो जाते हैं। उन्हे सम्पूर्ण रूप से धोकर तथा परिपूर्ण रूप से लवणोपचारित नही किया गया तो खाद्य पदार्थ परिपूर्ण रूप से नर्म नही होते। फलस्वरूप उसके भीतरी हिस्से कच्चे रह जाते हैं। परिणामस्वरूप वहां उपस्थित सूक्ष्मजीवाणु क्रियाशील रहते हैं। वे सिरके मे डालने के बावजूद भी, अन्दर ही अन्दर प्रजनन कर सम्पूर्ण अचार में फैल जाते हैं। इससे ही अचार मे भविष्य मे धुंधलापन पैदा हो जाता है। इसके अलावा अशुद्ध सिरका तथा नमक के प्रयोग से भी यह पैदा हो सकते हैं। इसलिए सम्पूर्ण लवणोपचार मे शुद्ध सिरका तथा नमक काम मे लें।

ताड़ी या नीरा

नारियल वर्ग के पेड़ से प्राप्त एक रस को ही ताड़ी कहते हैं। यह नारियल वर्ग के पेड़ के फूल खिलने से पूर्व ही उससे प्राप्त होती है। पिण्ड खजूर के पेड़ से प्राप्त ताड़ी को बिना किण्वन क्रिया विधेयक कर पीने योग्य पेय को नीरे के नाम से उत्तर भारत मे जाना जाता है जो खादी ग्रामोद्योग बोर्ड द्वारा वितरण किया जाता है। यह ताड़ी की तरह पोषक तत्व वाला मद्यसार रहित एक पेय है। ताड़ी तथा नीरा किण्वन क्रिया विधेयक बनाया जाये तो उसमें मद्यसार की मात्रा बढ़ जायेगी तथा यह मादक बन जाता है। पेड़ से प्राप्त होते ही ताड़ी पी जाय तो अमृततुल्य गुणकारी होते हैं। इस तथ्य को महात्मा गांधी ने भी स्वीकारा है। वे नीरा को प्रोत्साहन दिया करते थे, ताकि इस ग्रामोद्योग का विकास भी होते रहे।

केरल मे स्थित सेन्ट्रल प्लान्टेशन क्रोप रिसर्च इन्स्टीट्यूट के रीजनल (कायमकुलम) स्टेशन पर किये गये एक अनुसन्धान के फलस्वरूप ताड़ी को सार्वजनिक रूप से एक स्वादिष्ट पेय पदार्थ बनाया गया है, जिसमे किसी प्रकार की दुर्गन्ध नहीं होती। इस ताड़ी का निर्गन्धीकरण, पास्तुरीकरण इत्यादि कर बोतलीकरण करके एक सांकेतिक विधान को जन्म दिया है, जो पेटेन्ट किया हुआ है। व्यापार स्तर पर इसका उत्पादन होते ही एक सुप्रसिद्ध मद्यसार पेय के रूप मे बदल जाने की सम्भावना है, अगर भारत सरकार मद्यनिषेध नीति पर अमल न करें, मद्यनिषेध होने पर भी इस पेय से विदेशी मुद्रा अर्जन में मदद मिल सकती है।

मदिरा तथा मदिरा निर्माण

भारतीय पुराणों तथा अन्य धार्मिक ग्रन्थों में मदिरा का वर्णन देखने को मिलता है, जिसकी अन्यत्र चर्चा की गयी है। मदिरा विशेषतौर से अंगूर से निकाली जाती है, फलस्वरूप अंगूर के नाम से मदिरा, मदिरा के नाम से अंगूर जुड़े हुए हैं। लेकिन मदिरा अन्य फल तरकारियों से भी बनायी जा सकती है। वैधानिक तरीके से बनायी जाने वाली मदिरा का निर्माण विज्ञान के साथ-साथ एक कला भी है। इसलिये भिन्न-भिन्न लोगों से, भिन्न-भिन्न देशों में बनने वाली मदिरा एक ही किस्म के अंगूर से होते हुये भी भिन्न-भिन्न स्वाद वाली है। यह मदिरा निर्माता की कलात्मक प्रवृत्ति की भिन्नता से उत्पन्न होती है। पाश्चात्य देशों में कुछ देश जैसे—फ्रान्स, पोर्टगल, हंगरी, स्पेन, मदिरा निर्माण के लिये प्रसिद्ध है। क्योंकि अंगूर फूलने से लेकर पकने तक वहाँ प्रायः वर्षा नहीं होती। यह परिस्थिति अंगूर की खेती के लिए बहुत ही उपयुक्त है। अंगूर रस निकालते समय के मौसम भी मदिरा निर्माण के योग्य होता है। मदिरा निर्माण के योग्य कुछ अन्य देश हैं—रिन, रोम, आदि यूरोपियन तराई वाले क्षेत्र तथा संयुक्त राज्य अमेरिका के कैलीफोर्निया, न्यूयार्क आदि राज्य।

मदिरा क्या है ?

अंगूर का रस या अन्य फल तरकारी रस को किण्वन क्रिया विधेयक बनाने से प्राप्त एवं मद्यसार पेय को ही मदिरा कहा जाता है। अंग्रेजी में इसको वाइन कहते हैं। इसमें एक निश्चित प्रतिशत मद्यसार होगा। उसमें पाया जाने वाली शर्करा में प्रकिण्वों की क्रिया से होने वाले किण्वन से ही मद्यसार उत्पन्न होता है। यह स्वादिष्ट ही नहीं बल्कि थकावट व शारीरिक कष्ट को दूर कर आरोग्यवर्द्धक आहार भी है। पाश्चात्य लोग आज भी पौराणिक भारतीयों की भांति मदिरा को सर्वगुण सम्पन्न पेय के रूप में काम में लेते हैं, जैसे–आज के ग्रामीण भारतीय भोजन के साथ छाछ लेते हैं। 'थोड़ी-सी मदिरा व्यक्ति को बुद्धिमान बना देती है।' यह ईसाइयों के धार्मिक ग्रन्थ पवित्र बाइबिल में उल्लिखित है। वैसे अमृत भी अधिक पीने से विष हो जाता है। बाइबिल का यह कथन भारतीय कथन की पुष्टि करता है तथा मदिरा के महत्व को उजागर करता है।

श्रेष्ठ मदिरा परिशुद्ध होती है। इसमें किसी प्रकार का कीट नहीं जमता, बल्कि अच्छी सुगन्ध तथा स्वाद वाली होती है। खराब मदिरा में धुंधलापन, खट्टापन, दुर्गन्ध इत्यादि पायी जाती है। साथ ही अरुचिपूर्ण होती है। अधिक मीठी तथा शर्बत-सी मदिरा भी अच्छी नहीं मानी जाती।

मदिरा योग्य फल तरकारियाँ

पहले ही कहा जा चुका है कि उत्तम स्तर की मदिरा के लिए अंगूर ही सर्वोतम है। इसके बाद सेब, सरसफल (बेरीज), नासपाती, काजूफल (काजूसेब) आदि फल तथा तरकारियों में शकरकन्दी, आलू, गाजर, चुकन्दर इत्यादि को भी मदिरा बनाने के लिये काम में लिया जाता है। सबसे पहले यहाँ अंगूर से मदिरा बनाने की विधि के बारे में चर्चा की जा रही है।

मदिरा के लिए अंगूर रस

रस निकालने के लिए एकत्र किये हुए अंगूर के गुच्छों में से सर्वप्रथम उसमें लगी हुई फफूंद तथा खराब फलो को अलग कर देना चाहिए। तुरन्त बाद कैनीकरण की भाँति इन्हें अच्छी तरह धोकर दो-तीन दिन तक शुद्ध पानी में भिगो दें। अंगूर फलो मे स्वतः पाये जाने वाले किण्वक जल की उपस्थिति मे प्रक्रिया कर बिना रोक-टोक के काफी मात्रा मे रस प्राप्त करने मे यह प्रक्रिया सहायक सिद्ध होगी। इनके विपरीत अंगूर से सीधा रस निकाला जाए तो उसमे स्वतः पायी जाने वाली पेक्टिन के कारण रस गाढ़ा रह जाता है। फलस्वरूप काफी मात्रा में अंगूर से रस प्राप्त नही होता। किण्वक, जल की सहायता से प्रोटोपेक्टिन को पेक्टिन मे रूपान्तरित कर देता है, इस क्रिया के कारण रस पतला तो होता ही है, साथ ही पानी फलो के ऊतको मे प्रवेश कर किण्वक की सहायता से अधिकाधिक रस बाहर निकाल लेता है।

अंगूर को दो दिन तक जल मे भिगोने के बाद बास्कट या तत्तुल्य या अन्य किसी भी रस-निचोड (इसके बारे मे इस पुस्तक मे अन्यत्र चर्चा की गयी है) की सहायता से निकाला जा सकता है। इस प्रकार निकाला गया रस, काम मे लिये गये अंगूर के वजन से करीब 60 से 70 प्रतिशत प्राप्त होगा। इस रस मे तुरन्त ही 50 से 70 पी पी. एम. या 227 ग्राम प्रतिटन अंगूर के अनुपात मे पोटेशियम मेटाबाई सल्फाइट मिला दें, ताकि उसमें सम्भवतः पाये जाने वाले सूक्ष्मजीवियो (प्रकिण्वो के अलावा) को नष्ट किया जा सके। साथ ही बाहर से रस मे उनके आक्रमण को भी रोका जा सके। पाश्चात्य देशो मे तथा समीपपूर्व देशो मे इस क्रिया के लिए राई-चूर्ण काम मे लिया जाता रहा है। इसके लिये वे अंगूरो को संदलन कर तुरन्त ही राई-चूर्ण को मिलाया करते थे। राई में पाया जाने वाला एक जीवाणु-नाशक पदार्थ सूक्ष्मजीव नाशक है। इस तथ्य का ज्ञान आदिकाल में उनको प्राप्त नहीं था, बल्कि उनको इतना ही मालूम था कि राई-चूर्ण डालने से अंगूर का रस मदिरा-किण्वन काल मे खराब नहीं होता तथा उत्तम किस्म की मदिरा बनाने के लिये राई-चूर्ण मदद करता है।

मदिरा किण्वन

आजकल उपर्युक्त विधि से तैयार किया हुआ रस सूक्ष्मजीव रहित है, चाहे उपकारी या हानिकारक ही क्यो न हो, इसका पूर्णज्ञान होते ही इसमे परिशुद्ध मदिरा प्रकिण्व (खमीर) संवर्धन को उसमें प्रवेश कराया जाता है। मदिरा प्रकिण्व संवर्धन मे पाये जाने वाले प्रकिण्वो का वैज्ञानिक नाम है—"साक्रोमाइसिस-इलिपसोइडियस"। जैसे दूध मे जावन मिलाया जाता है, इसी प्रकार इनका भी अंगूर रस मे जावन दिया जाता है। साधारणतया बाजार में भिन्न-भिन्न व्यावसायिक नामों से पाये जाते हैं—ग्रेप्स, होक, पामपेन आदि इनमें से कुछ हैं।

उपरोक्त प्रकिण्वो की प्रक्रिया के लिये कुछ विशेष परिस्थितियाँ अनिवार्य हैं—ये हैं, एक निश्चित ताप तथा निश्चित मात्रा की शर्करा। मदिरा के लिए तैयार किये हुये अंगूर रस में साधारणतया 12 से 24 प्रतिशत शर्करा पायी जानी चाहिये, अन्यथा ऊपर से शर्करा मिलाकर कमी को दूर किया जा सकता है। इस रस का 27° से 30° सेन्टीग्रेट ताप पर ऊष्मयान अनिवार्य है, तभी प्रकिण्व इस रस मे पाई जाने वाली शर्करा को मद्यसार

(ऐल्कोहॉल) में परिवर्तित कर पायेगा। लेकिन इसमें मिलाये गये प्रकिण्व संवर्घन की जाति, उपजाति इत्यादि के अनुरूप 12 से 18 प्रतिशत मद्यसार निर्माण कर पायेंगे। अंगूर रस मे प्रकिण्व किण्वन क्रिया से उपर्युक्त मात्रा के मद्यसार उत्पन्न करते ही खमीर (प्रकिण्व) अपनी क्रिया शक्ति को स्वयं रोक लेते हैं, क्योंकि 18 प्रतिशत से अधिक मद्यसार वाले पदार्थ में प्रकिण्व निष्क्रिय हो जाते हैं।

इसके अलावा, 18 प्रतिशत मद्यसार उत्पादन किये बिना ही किण्वन क्रियारत अंगूर रस को अगर 38° से 40.5° सेन्टीग्रेड ताप अचानक प्राप्त हो जाये तो भी प्रकिण्व निष्क्रिय हो जायेंगे, क्योंकि बढ़ते हुए तापमान पर उसकी प्रजनन तथा क्रियाशक्ति रुक जाती है। इसलिए इस परिस्थिति मे आप यह न समझ बैठें कि उसमे 18 प्रतिशत मद्यसार उत्पन्न हो चुका है। इसलिये उपर्युक्त तथ्य इस बात का संकेत देते हैं कि किण्वन क्रिया-रत अंगूर रस तथा वाहिका का 27° से 30° सेन्टीग्रेड तापमान पर रखना तथा उस रस में 12 से 24 प्रतिशत शर्करा का होना भी आवश्यक है। अंगूर के रस में होने वाली प्रक्रिया को हम इस प्रकार दिखा सकते हैं :—

$$\text{अंगूर रस} + \text{प्रकिण्व} \xrightarrow{27^\circ \text{ से } 30^\circ C} \text{मदिरा} + \text{कार्बनडाईऑक्साइड} \uparrow$$

प्रकिण्व की प्रक्रिया अंगूर रस में पाई जाने वाली शर्करा पर निर्भर करती है। इसलिए इस प्रक्रिया को एक समीकरण (Equation) द्वारा स्पष्ट कर सकते हैं—

$$\text{सुक्रोज} + \text{यीस्ट} \xrightarrow{27^\circ\text{–}30^\circ C} \text{इथेल ऐल्कोहॉल कार्बनडाईऑक्साइड} \uparrow$$

$$(C_6H_{12}O_6 + \text{yeast} \xrightarrow{27^\circ\text{–}30^\circ C} {}_2C_2H_5OH + CO_2) \uparrow$$

इसी प्रकार 100 ग्राम शर्करा किण्वन क्रिया से 51.1 ग्राम मद्यसार तथा 58·9 ग्राम कार्बनडाईऑक्साइड उत्पन्न करेगी। किण्वन क्रियारत द्राक्षारस में पाई जाने वाली ब्रिक्स डिग्री (22° ब्रिक्स माना जाय) को 0.57 से गुणा किया जाये तो प्राप्त (22 × 0 57 , 12·5 प्रतिशत) संख्या मदिरा में पाये जाने वाले मद्यसार के बराबर होगी।

मदिरा जावन निर्माण तथा प्रयोग

प्रकिण्व निर्माण के निर्देशानुसार चाहे प्रकिण्व संवर्धन जिस वाहिका मे रखा हुआ है उसमें अंगूर रस को डाल दे या प्रकिण्व संवर्धन को उस वाहिका मे डालें जिसमे अंगूर रस हो। प्रकिण्व संवर्धन जिस वाहिका में है, उसमे रस डाला जाता है तो वाहिका मे आधा हिस्सा ही भरना चाहिये और वाहिका के मुँह को निर्जर्मीकृत कपास से तुरन्त बन्द करना चाहिये। 24 घन्टे के अन्दर-अन्दर प्रजनन होकर वंशवृद्धि हो सकेगी। इसके लिये 21° से 24° सी ताप पर ऊष्मयान करना औचित्यपूर्ण होगा।

अब 3 से 4 लीटर अंगूर रस लेकर उसको 82·2°C ताप पर गर्म कर, ठण्डा कर (32° से 35°C ताप पर लाकर) एक बोतल में परिपूर्ण रूप से भरकर ढक्कन लगाकर रख दें। अगले दिन उसमें $\frac{1}{4}$ हिस्से को अलग कर बाकी $\frac{3}{4}$ भाग में उपरोक्त प्रकिण्व जावन मिलाकर तुरन्त बोतल को ऊपर नीचे कर मिला देना चाहिए ताकि वायु भी उसमें मिश्रित हो जाए। अब निर्जर्मीकृत कपास से मुँह बन्द कर ऊष्मयान करें। 2-3 दिन के अन्दर यह शक्तियुक्त रूप से किण्वनीकृत हो जाए तब उसमें प्रकिण्व संख्या अत्यधिक पाई जायेगी। यही असली प्रकिण्व जावन कहा जायेगा।

अब इस जावन को पीपे मे भरे हुए अंगूर रस में मिलाया जा सकता है । उपर्युक्त प्रकिण्व जावन (एक बोतल) 100 से 200 लीटर अंगूर-रस में मिलाया जा सकता है । यह रस पर्याप्त मात्रा में किण्वनीकृत हो जाये तो इसमें मे जावन निकालकर ऊष्मयान प्रयोग कर भविष्य मे रस मे मिलाया जा सकता है । फलस्वरूप विपणी से परिशुद्ध प्रकिण्व संवर्धन नही खरीदना पड़ेगा । अगर प्रकिण्व संवर्धन खराब हो जाए तो शुद्ध प्रकिण्व संवर्धन खरीद लेना चाहिये ।

जावन मिलाते ही सुयोग्य परिस्थिति में किण्वन क्रिया अंगूर रस मे तीव्र होगी । प्रथम चार-पाँच दिन इसके लिये 26° से 29°C ताप प्रदान करना अनिवार्य है । जावन मिलाते ही किण्वन ताला (Fermentation Lock) लगा देना चाहिए ।

पीपे के या बोतल के मुँह के केन्द्र भाग मे एक रबर कार्क लगाया जाता है जिसके केन्द्र भाग मे एक छिद्र होता है । इस छिद्र से वायुरुद्ध अवस्था मे एक थिसिलफनल (Thisil Funnel) लगाकर उसमे पायी जाने वाली 2 बल्ब मे मासवित-जल 'डिस्टल्डवाटर' या उबालकर ठण्डा किया हुआ पानी भर लेते हैं । फलस्वरूप बाहर से पीपे मे या बोतल के भीतर वायु प्रवेश सम्भव नही होगा । लेकिन किण्वन क्रिया काल मे वाहिका के भीतर उत्पन्न कार्बनडाईऑक्साइड थिसिलफनल के बल्बों मे पाये जाने वाले जल से होकर बाहर निकल जायेगी । फलस्वरूप भीतर किण्वन क्रियारत रस में बाहर से वायु या अन्य कोई सूक्ष्मजीव प्रवेश नही कर सकेंगे । उपर्युक्त परिस्थिति उत्पन्न करने के लिए लगायी जाने वाली उपस्कर को ही 'किण्वन ताला' (Fermentation Lock) कहा जाता है ।

इसके भीतर होने वाली किण्वन क्रिया की तीव्रता उसमें पाई जाने वाली शर्करा की मात्रा (ब्रिक्स डिग्री) पर आधारित होगी । यह तथ्य हम भली-भाँति जान चुके हैं । किण्वन क्रिया परिपूर्ण होते ही ब्रिक्स डिग्री या तो समाप्त हो जायेगी या न्यून हो जायेगी । ड्राईवाइट वाइन (मदिरा) में प्रत्येक 100 मिलीलीटर में 0·5 ग्राम या इससे कम मात्रा में शर्करा पायी जायेगी । इस मात्रा के पहले किण्वन क्रिया रुक जाए तो उसमे वायु-प्रवेश कराना होगा ।

दूसरी किस्म की मदिरा है—मीठी मदिरा । इसमें उपर्युक्त मदिरा से अधिक शर्करा रहनी चाहिए । इसलिये 0·1 ग्राम शर्करा के पहले ही किण्वन क्रिया रोकी जानी चाहिये ।

कुछ भी हो उपर्युक्त दोनों मदिराओं मे साधारणतया 6·5 प्रतिशत तथा 20 प्रतिशत के मध्य मद्यसार उत्पन्न होगा । 7 प्रतिशत से 9 प्रतिशत मद्यसार हो तो 'लघु-मदिरा' तथा 9 से 16 प्रतिशत मद्यसार युक्त मदिरा को मध्य श्रेणी की मदिरा कहा जाता है, परन्तु 1[illegible] से 20 प्रतिशत मद्यसार युक्त को 'तीव्र मदिरा' कहा जायेगा । मदिरा जिसमे 1[illegible] प्रतिशत से अधिक मद्यसार हो तो समझ लेना चाहिए कि उसमें ऊपर ऐल्कोहॉल मिलाई गई होगी ।

मदिरा का परिपक्वीकरण (Maturing (ageing) of wine)

किण्वन क्रिया परिपूर्ण रूप से सम्पन्न होते ही मदिरा स्वयं साफ दिखायी देगी, क्योंकि प्रकिण्व तथा अन्य कीट, वाहिका के पेंदे मे जम जायेंगे, लेकिन कोई पदार्थ तैरता दिखाई देगा । इसकी साइफनीकरण द्वारा वाहिका में से ऊपर के रस को (मदिरा को) दूसरी वाहिका में निकालना चाहिये ताकि पेंदे पर जमा हुआ कीट तथा प्रकिण्व उसमे मिश्रित

न हो पाएँ। भरते ही वाहिका को सीलबन्द कर 6 से 12 महीने तक संचयन कर दिया जाता है। व्यवसाय-शालाओं में साधारणतया काष्ठ पीपों का प्रयोग किया जाता है। यह पीपे 'ओक' नामक पेड़ की लकड़ी के बने होते हैं। इस रस का साधारणतया निर्मलीकरण नहीं किया जाता। फिर भी चाहे तो फल रस तथा सिरके की भाँति निर्मलीकरण किया जाता है—जैसे अण्डश्वेती तथा कुछ निस्यन्दन सहायकों का प्रयोग कर निर्मलीकरण किया जाता है।

पास्तुरीकरण

मदिरा को 82° से 88° सेन्टीग्रेड ताप पर 1–2 मिनट गर्म कर तुरन्त बोतलीकरण किया जाता है। इसको कार्क की सहायता से बन्द कर उसके ऊपर गर्म की हुई चपड़ी लगाकर सीलबन्द कर दिया जाता है।

मदिरा का वर्गीकरण

पहले ही चर्चा की जा चुकी है कि भारत में तथा विदेशों में आदिकाल से ही मदिरा अंगूर से ही बनाई जाती रही है, फिर भी आज सारे संसार में अन्य फल-तरकारियों से भी मदिरा निर्माण करते हैं। इसलिए मदिरा को द्राक्षा-मदिरा तथा अन्य फल-तरकारी मदिरा को दो प्रमुख रूपों में विभाजित किया गया है।

(अ) द्राक्षा मदिरा

1. शैम्पेन (Champagne)

फ्रांस में शैम्पेन नामक प्रदेश में निर्मित द्राक्षा से बनी श्वेत वर्ण की एक प्रसिद्ध मदिरा को ही शैम्पेन कहा जाता है। मदिरा पीने वाले बिना लेबल ही शैम्पेन को पहचान लेंगे। इसका स्वाद अपने आप में एक है।

2. पोर्ट (Port)

पोर्टगल के ओपेर्टो नामक क्षेत्र में निर्यात करने वाले द्राक्षा से बनी मदिरा जो लाल या श्वेत वर्ण की हो, को ही पोर्ट मदिरा कहा जाता है। इस मदिरा में ऊपर ऐलकोहल मिलाया हुआ होता है, फलस्वरूप इसमें 16 से 20 प्रतिशत मद्यसार होगा।

3. मस्काट (Muscat)

स्पेन में पैदा होने वाली मस्की अथवा मस्काट किस्म के अंगूर से बनी मदिरा को मस्काट मदिरा कहा जाता है। यह मदिरा उपर्युक्त अंगूर से आस्ट्रेलिया, ग्रीस, इटली, कैलीफोर्निया आदि देशों में भी बनाई जाती है। लेकिन मस्काट मदिरा की बराबरी नहीं कर पाती।

4. टोके (Tokay)

हंगरी के टोके नामक स्थान में उत्पन्न टोके किस्म के अंगूर से इस मदिरा का निर्माण किया जाता है। शक्तियुक्त इस मदिरा में अपनी अनोखी सुगन्ध, स्वाद तथा मिठास पाई जाती है।

5. शैरी (Sherry)

स्पेन में जरेस-डी-ला फ्रोंटेरा नामक क्षेत्र में उगाए गए श्वेत वर्ण के अंगूर से यह मदिरा बनाई जाती है। इस मदिरा को 120° से 140° फारेनहाइट ताप पर 3 से 4 महीने पूरा दिलाकर परिपक्वीकरण (एजिंग) किया जाता है।

(ब) मदिरा अन्य फल तरकारियों से

(1) सेब मदिरा (*Cider*)

अंगूर की मदिरा के बाद लोकप्रिय मदिरा मे दूसरा नम्बर सेब से बनी मदिरा का है। इसको आमतौर पर अंग्रेजी मे 'साइडर' के नाम से जाना जाता है। इसको भी मदिरा अंगूर की भाँति ही बनाई जाती है। लेकिन प्रत्येक 10 लाख भाग के लिए 100 भाग (100 पी० पी० एम०) के अनुपात मे सल्फर-डाई-ऑक्साइड (SO_2) तथा प्रकिण्व जावन के साथ 0.02 से 0.05 प्रतिशत अमोनियम हाइड्रोजन फॉस्फेट भी प्रकिण्व आहार के साथ मिलाया जाता है। भारत मे इसके निर्माण के लिए अच्छी किस्म का सेब पर्याप्त मात्रा में मिलता है। इस प्रकार बनाई गई सेब-मदिरा मे करीब 14 प्रतिशत मद्यसार पाया जायेगा। सेब-मदिरा को उसकी शक्ति के अनुसार ड्राई-साइडर तथा मीठी साइडर मे विभाजित किया जा सकता है।

(2) पेरी (Perry)

नासपाती से निर्मित मदिरा को विदेशों मे 'पेरी' कहा जाता है। पश्चिमी देशों मे बनायी जाने वाली यह मदिरा आमतौर पर कैनीकरण शाला के नासपाती अवशेषों से बनाई जाती है। भारत मे 'पेरी' बनाने की प्रथा नही है।

(3) सन्तरा मदिरा (*Orange Wine*)

अंगूर की भाँति ही सन्तरा रस से भी मदिरा बनाई जाती है। लेकिन इसमें आवश्यकतानुसार शर्करा मिला लेनी पड़ती है। यह भी ध्यान रखना पड़ता है कि सन्तरे से रस निकालते समय (मशीन द्वारा) सन्तरे के छिलके का तेल रस मे न मिल जाए। इसी प्रकार संसार में बनायी जाने वाली अन्य मदिराएँ कुछ अन्य फलों से भी बनाई जाती हैं। उनमें काजूसेब, सर्वश्रेष्ठ माना जाता है जो दक्षिण भारत के केरल, कर्नाटक, गोवा, तमिलनाडु तथा आन्ध्रप्रदेश मे पैदा किया जाता है।

(स) मदिरा—कुछ विशेष तरकारियों से

शकरकन्दी, आलू, गाजर, चुकन्दर इत्यादि तरकारियाँ मदिरा निर्माण के लिए काम में ली जा सकती हैं। इन्हे अच्छी तरह पानी मे रगड़कर धोना आवश्यक है, ताकि उनमें रेत और छोटी रोमरूपी जड़ बिल्कुल न रहे। खराब भाग को भी अलग कर दें। इन्हें 1.25 से० मीटर मोटाई के टुकड़ो मे कतर लें। 18 किलो आलू या शकरकन्दी के लिए 28 लीटर पानी, 22 किलो गाजर या चुकन्दर के लिए 28 लीटर जल मे क्रमश डालकर इन्हें उबालना चाहिए। ध्यान रखें कि ये तरकारियाँ अधिक न उबल जाएँ। जब पानी उबलने लग जाये, तब लगे हुए ढक्कन को हटा देना चाहिए। लेकिन जितना जल उससे वाष्पीकृत हो जायेगा, उसके बदले मे उतना ही जल पुनः मिला देना चाहिए। उबली हुई तरकारियों मे से पानी निथार लें। इस पानी को थमनी या कपड़े से छान लें। इन्हें आवश्यकतानुसार ठण्डा कर किण्वन क्रिया विधेयक बनाया जाता है। जावन मिलाने से पूर्व इसमें पाई जाने वाली शर्करा की मात्रा मालूम कर लें, ताकि उसमे उचित मात्रा मे शर्करा रह सके। "ब्रिक्स हाइड्रोमीटर" की सहायता से 'रिफ्रैक्ट्रोमीटर' की सहायता से शर्करा मात्रा मालूम की जा सकती है, जिसकी कैनीकरण अध्याय मे चर्चा की जा चुकी है। इसमें भी प्रकिण्व आहार मिलाना आवश्यक है तभी प्रकिण्व काफी मात्रा मे प्रजनन कर

मद्यसार बनाने में सहायक होंगे, साथ ही मदिरा को धुन्धलापन या अन्य कोई खराबी से भी बचाया जा सकेगा। प्रकिण्व आहार (Yeast food) बाजार में भी मिलते हैं। इन्हें मिलाने की जानकारी भी साथ मे उपलब्ध होती है। अधिक जानकारी केन्द्रीय खाद्य अनुसंधान संस्थान, मैसूर या स्थानीय कृषि विश्वविद्यालय के सम्बन्धित विभाग से सम्पर्क स्थापित कर प्राप्त की जा सकती है। अन्य क्रियाएँ वैसी ही हैं जैसे अंगूर से मदिरा बनाने की है।

सिरका निर्माण

उपर्युक्त सभी फल-तरकारियों से प्राप्त मदिरा को पुनः ऐसिटिक अम्ल किण्वन क्रिया विधेयक बनाया जाये तो सिरका निर्माण हो जायेगा। मदिरा के बाद संसार में निर्मित सबसे प्राचीन परिरक्षित पदार्थ सिरका है। इसमे 5 प्रतिशत ऐसिटिक अम्ल तथा स्थिरतापूर्ण अन्य अम्लों के अलावा कुछ वर्णक, लवण तथा किण्वनोत्पाद भी पाये जाते हैं। इसी प्रकार प्राप्त प्रत्येक 100 मिलीमीटर सिरके मे 4 ग्राम ऐसिटिक अम्ल पाया जायेगा। इसी प्रकार 0.0143 ग्राम मे से अधिक आर्सेनिक इसमें नहीं होना चाहिये।

सिरका कण (विनिगर ग्रेइन)

यह प्रत्येक सिरके मे पाई जाने वाली ऐसिटिक अम्ल की मात्रा को सूचित करते हैं। इस कण-शक्ति का व्यावसायिक-व्यापार क्षेत्र में प्रयोग किया जाता है। एक सिरके के लेबल पर अगर 25 कणशक्ति अंकित हो तो मालूम होना चाहिए कि उसमे 2.5 प्रतिशत ऐसिटिक अम्ल है। इसी प्रकार 5 प्रतिशत ऐसिटिक अम्ल वाले सिरके मे 50 कण-शक्ति लिखी हुई पायी जायेगी।

साधारणतया सिरका फल तथा तरकारियों में से बनाया जाता है। एक अन्य प्रमुख सिरका गन्ने के रस से बनाया जाता है। इसके अलावा शर्करा, गुड, जौ, जामुन आदि से भी सिरका बनाया जा सकता है।

कण सिरका

मद्यसार में जल मिलाकर उसे ऐसिटिक किण्वन क्रिया विधेयक बनाया जाये तो कण सिरका प्राप्त होगा, इसको ही कण सिरका कहा जाता है। 100 मिलीमीटर सिरका 20° सी० पर 4 ग्राम ऐसिटिक अम्ल उपलब्ध होगा। इसको आसव सिरका (स्प्रीट विनिगर) भी कहा जाता है।

अंगूर सिरका

अंगूर मदिरा में सिरका जावन मिलाकर ऐसिटिक किण्वन विधेयक बनाकर अंगूर सिरका या मदिरा सिरका बनाया जाता है। 100 मिलीमीटर इस सिरके में 4 ग्राम ऐसिटिक अम्ल तथा 13 ग्राम अंगूर भस्म मौजूद होते हैं।

सेब सिरका

सेब मदिरा को सिरका किण्वन विधेयक बनाने से सेब सिरका प्राप्त होता है। प्रत्येक 100 मिलीमीटर सिरके मे 4 ग्राम ऐसिटिक अम्ल तथा 1.6 ग्राम सेब घन पदार्थ तथा 50 प्रतिशत शर्करा पाई जायेगी।

अन्य सिरके

9 प्रतिशत शर्करायुक्त किसी भी फल से सिरका बनाया जा सकता है—जिसमे उपर्युक्त मात्रा में ऐसिटिक अम्ल पाया जायेगा।

सिरका निर्माण प्रक्रिया

सर्वप्रथम फलरस (शर्करायुक्त) को मद्यसार किण्वन क्रिया विधेयक द्वारा मदिरा में परिवर्तित कराकर, तुरन्त उसमे सिरका जीवाणुयुक्त जावन मिलाते समय, सिरका जीवाणु मद्यसार को किण्वन क्रिया से सिरके (ऐसिटिक अम्ल) मे परिवर्तित किया जाता है।

लघु शर्करा + प्रकिण्व ———→ मद्यसार + 2 + CO_2 ↑

मद्यसार + $2O_2$ + सिरका जीवाणु ———→ ऐसिटिक अम्ल + जल

सिरका निर्माण

सेव से सिरका बनाने के लिए फलो को पहले मदलन कर लेते है। अंगूर का भी इसी प्रकार मदलन कर रस निकालते हैं। लेकिन सन्तरों मे से रस निकालते समय ध्यान रखना चाहिए कि छिलके मे से सन्तरा-तेल रस मे न मिल जाये। नासपाती, आड़ूफल (पीच), खुबानी, प्लम, केला आदि को मंदलन कर पीसकर मद्यसार किण्वन विधेयक बनाया जाता है। किण्वन क्रिया से पूर्व रस मे एक पैक्टिक किण्वक मिलाना चाहिए। साधारणतया एक से दो ग्राम पैक्टिनोल ओ डब्ल्यू. या अन्य कोई उचित पैक्टिक किण्वक प्रत्येक प्रतिकिलो फलों के हिसाब से मिलाना चाहिए। अगर सूखे फलो को सिरके के लिए लिया जाये तो उनमें आवश्यकतानुसार जल मिलाना चाहिए ताकि उसकी शर्करा मात्रा 15 प्रतिशत रह जाये। सूखे फलो मे से 50 से 70 प्रतिशत शर्करा पाई जाती है। मद्यसार किण्वन क्रिया के बाद इन्हे निचोड़कर निकाल देना चाहिए। इस निचोड़ को तुरन्त सिरका किण्वन क्रिया विधेयक बना देना चाहिए।

तरकारियों को भी मदिरा की भांति तैयार कर रस निकालना चाहिए। उबालकर, निमारकर लिये हुए रस को 15.6° सेन्टीग्रेड पर ठण्डा कर उसमे डियस्टेड मिलाकर या मन्द धातु लवण मिलाकर जल-अपघटन क्रिया विधेयक के बाद मद्यसार-किण्वन-क्रिया-विधेयक बनाया जाता है। क्रुस का कथन है कि 2 से 5 प्रतिशत माल्ट भी मिलाया जा सकता है। मद्यसार मे तैयार किये हुए जौ (यव) चूर्ण को ही माल्ट (यव्य) कहा जाता है।

वनस्पति मण्ड + जल........माल्टोज (यवधु)

Starch + water ———→ Maltose

इसी प्रकार तैयार किये गए रस मे वनस्पतिमण्ड माल्टोज बना या नही, इसका पूर्ण विश्वास होना आवश्यक है। इसको आयोडिन घोल परीक्षण द्वारा मालूम किया जा सकता है। एक बूंद रस मे एक बूंद आयोडिन मिलाया जाये। यदि गाढ़ा नीलवर्ण हो जाये तो यह जानना चाहिए कि उसमे मण्ड है। तुरन्त डायस्टेज मिलाकर उसको माल्टोज बनाया जा सकता है। इसी प्रकार मद्यसार किण्वन विधेयक बना देना चाहिए। पैक्टिक किण्वकों के लिए केन्द्रीय खाद्य प्रौद्योगिकी अनुसंधान संस्थान से सम्पर्क स्थापित करें तो आवश्यक जानकारी प्राप्त हो जायेगी। इसके अलावा रोम एण्ड हास कम्पनी फिलाडेल्फिया,

ढाकामिल लैबोटरिज न्यूयार्क या संयुक्त राज्य अमेरिका के दूतावास द्वारा भी उनसे आवश्यक जानकारी प्राप्त की जा सकती है।

सिरका निर्माण के लिए उपयुक्त प्रकिण्व (खमीर)

सिरके के लिए काम में लिया जाने वाला मद्यसार, सैकोमाइसिस इलिपसोडियस, सै. मालो सै. सिरवीसेयी आदि यीस्ट की किस्मों में से कोई एक काम में ली जा सकती है। उपर्युक्त प्रक्रिया सम्पूर्ण होते ही प्रकिण्व (यीस्ट) मदिरा के नीचे बैठ जायेंगे (लेकिन उपर्युक्त प्रकिण्व किस्मों के अलावा अन्य किस्म के प्रकिण्वों में यह गुण नहीं पाया जाता) फलस्वरूप मदिरा निर्मलीकृत होकर ऊपर तैरती रहेगी। इसीलिए बिना किसी कठिनाई से मदिरा को ऊपर से साइफनीकरण द्वारा अलग किया जा सकता है। सै. इलिपसोडियस किस्म के प्रकिण्व अंगूर में स्वतः पाये जाते हैं। यह अन्य प्रकिण्वों में से मदिरा तथा सिरका बनाने में अधिक उपयोगी माना जाता है। लेकिन आलू, शक्करकन्दी आदि के रस में आमतौर पर सै. सिरविसियी किस्में ही काम में ली जानी चाहिएँ।

हानिकारक प्रकिण्व

फल-तरकारी के काम में आने वाले उपयोगी प्रकिण्वों के साथ कुछ विशेष हानिकारक प्रकिण्व तथा सूक्ष्मजीवी भी पाये जाते हैं। इन्हें आसानी से अलग नहीं किया जा सकता। इन्हें विशेषज्ञों द्वारा वैज्ञानिक विधि से ही अलग किया जाता है। कुछ दोषी प्रकिण्वों में "हानसेनिया अपिकुलाटा" तथा माइकोडरमा प्रमुख किस्में है।

शुद्ध प्रकिण्व संवर्द्धन

भारतीय विपणी में भी प्रकिण्व शुद्ध रूप में प्राप्त होते हैं। लेकिन यह आमतौर पर बेकरी उत्पादों के योग्य प्रकिण्व होते है। ये बेकरी यीस्ट के नाम से जाने जाते हैं जिनका वैज्ञानिक नाम साकोमाइसिस सिरवीसेयी है। परन्तु मानकीकृत मदिरा तथा सिरका निर्माण के लिए शुद्ध प्रकिण्व संवर्द्धन चाहिए। यह भारतीय विपणी में आमतौर पर प्राप्त नहीं होते। इसके लिए केन्द्रीय प्रकिण्व प्रौद्योगिक अनुसंधान संस्थान, मैसूर से या देश के अन्य किसी भी कृषि विश्वविद्यालय के सम्बन्धित वैज्ञानिकों से सम्पर्क स्थापित करने से प्राप्त हो सकते हैं। आप इन्हें आई. ए. आर. आई. पूसा नई दिल्ली से भी मंगा सकते हैं।

शुद्ध प्रकिण्व अगर-अगर युक्त पोषक पदार्थ माध्यम में प्राप्त होते है। हिमीकृत अवस्था में भी आजकल शुद्ध प्रकिण्व प्राप्त किया जा सकता है। विकसित देशों में सर्व साधारणतया प्रयोग किये जाने वाले व्यावसायिक प्रकिण्वों के नाम निम्नलिखित हैं:—माम्बलया, बरगन्डी, टोके इत्यादि कैलीफोर्निया में आमतौर पर इस्तेमाल किये जाते हैं। इनके अलावा पोर्टयीस्ट, बनार्कयीस्ट, क्लाइमयरजयीस्ट, शैरीयीस्ट, ग्रेवजयीस्ट, सटेनयीस्ट इत्यादि संसार के कई स्थानों में मदिरा बनाने के लिए काम में लिये जाते हैं। इनके पैकिंग के साथ ही इनकी प्रयोग विधि सूचना दी गई होती है।

प्रकिण्व जावन (यीस्ट स्टार्टर—Yeast starter)

उपर्युक्त प्रकिण्व संवर्द्धन अगर-अगर युक्त होते हैं जिसमें प्रकिण्व पोषक आहार मिलाये हुए होते है। उपर्युक्त संवर्द्धन कांच की फ्लास्क या टेस्ट ट्यूब (परखनली)

में पैक किये जाते हैं। इन प्रकिण्वों की निर्माण-विधि तथा प्रयोग-विधि के विषय में मदिरा-निर्माण में चर्चा की गई है।

प्रकिण्व तथा वायुमिश्रण

प्रकिण्वों की वंशवृद्धि के लिए "ऑक्सीजन" अनिवार्य है। यह प्राणवायु ऑक्सीजन अन्तरिक्ष वायु में से प्राप्त होती है। मदिरा किण्वन काल में ऑक्सीजन अधिक प्राप्त हो जाये तो वंशवृद्धि अधिक होकर प्रकिण्वों की संख्या बढ़ जायेगी, अगर प्राणवायु (ऑक्सीजन) उचित मात्रा में प्राप्त हो तो प्रकिण्व मद्यसार बनाने में व्यस्त रहेंगे। यह तथ्य मदिरा किण्वन काल में, उचित मात्रा में वायुमिश्रण के औचित्य को प्रबल बनाता है। मद्यसार किण्वन काल में रस में से कार्बनडाई-ऑक्साइड भी उत्पन्न होती है जो वाहिका में से बाहर निकलनी चाहिए। कार्बनडाई ऑक्साइड मदिरा किण्वनकाल में बाहर नहीं निकले तो प्रकिण्वों की प्रक्रिया लुप्त या समाप्त हो जाती है। इसलिए रस निकालते समय उचित मात्रा में वायुमिश्रण करा देना चाहिए। मद्यसार किण्वन के योग्य परिस्थितियाँ उत्पन्न कराने पर भी वायु के अभाव में किण्वन क्रिया समाप्त हो जायेगी। इस समय इसमें समुचित मात्रा में मद्यसार निर्माण नहीं हुआ हो तो वायुमिश्रण करा देना चाहिए।

वाहिका में से कार्बनडाई ऑक्साइड को निकालने तथा वायुमिश्रण तथा अन्य सूक्ष्मजीवियों का प्रवेश रोकने के लिए ही मदिरा किण्वनकाल में वाहिका में किण्वन ताला लगाया जाता है, जिसके विषय में पहले ही बताया जा चुका है।

किण्वन प्रक्रिया काल में ताप का प्रभाव

मद्यसार किण्वन क्रिया चलते समय उसमें से जो ऊर्जा उत्पन्न होती है, वह स्वतन्त्र हो जाती है। एक ग्राम शर्करा मद्यसार किण्वन प्रक्रिया काल में 120 कैलोरी ऊर्जा विसर्जित करती है। प्रत्येक 100 मिलीलीटर रस में एक ग्राम शर्करा होगी। आमतौर पर अंगूर रस में 22 ग्राम शर्करा होती है। इसमें से 47·5° फारनहीट ताप किण्वन क्रिया द्वारा विसर्जित की जाती है। क्रुम ने आगे यह भी कहा कि थोड़ी-बहुत ताप विकरण द्वारा किण्वन क्रिया चलने से 85° से 95° फारनहीट ताप उत्पन्न होती है। इस समय प्रकिण्व 85° से 95° फारनहीट में उनकी प्रक्रिया भी बन्द कर देते हैं। शीतकाल में वाहिकाओं में विकिरण द्वारा अधिक ताप नष्ट होता है लेकिन गर्मी में यह ताप नष्ट शून्य के बराबर होगा। उपर्युक्त बातों को ध्यान में रखते हुए गर्मी के मौसम में चाही गई ताप परिस्थिति प्रदान करनी चाहिए, अर्थात् किण्वन क्रिया के लिए 75° से 85° फारनहीट ताप परिस्थिति उपलब्ध करानी चाहिए। किण्वन क्रिया छोटी अवस्थाओं में कराई जाती है तो ऊष्मायान द्वारा (इनक्यूबेशन) तथा व्यावसायिक स्तर पर शीत जलयुक्त नलियों की सहायता से ताप नियन्त्रण किया जाता है। इसके विपरीत मद्यसार किण्वन अपूर्ण होगा। फलस्वरूप लैक्टिक जीवाणु, ऐसिटिक जीवाणु इत्यादि प्रवेश कर या उपस्थित उपर्युक्त जीवाणु (मदिरा में) भी नष्ट हो जाती है, फिर भी 7200 लीटर या उससे अधिक क्षमता वाली एक वाहिका में क्रियाशील होकर मदिरा को खराब कर सकते हैं।

प्रारम्भिक किण्वन अवस्था

मद्यसार किण्वन दो भिन्न-भिन्न अवस्थाओं में सम्पन्न होती है। प्रथम अवस्था को

तीव्र किण्वन अवस्था कहा जाता है। प्रारम्भ के 3 से 6 दिन के भीतर उसमें पाई जाने वाली अधिकांश शर्करा मद्यसार कार्बन डाई ऑक्साइड में बदल जायेगी। इस समय किण्वन क्रिया इतनी तीव्र हो जाती है, फलस्वरूप उसमें सम्भवतः पाये जाने वाले वाह्य परजीवियों का इस माध्यम में बढ़ना सम्भव नहीं होगा।

द्वितीय किण्वन अवस्था

द्वितीय किण्वन अवस्था में किण्वन प्रक्रिया प्रारम्भिक प्रक्रिया से धीमी रहेगी। यह किण्वन अवस्था 14 से 21 दिन तक चलेगी। इस अवस्था में वायुमिश्रण की आवश्यकता होती है, जिसमें बड़ी सावधानी की आवश्यकता होती है, अन्यथा अनचाहे सूक्ष्मजीव उसमें वायु के साथ प्रवेश कर सकते हैं। इस अवस्था में आमतौर पर लगने वाले सूक्ष्मजीव हैं— सिरका जीवाणु, मदिरा पुष्प, (Wine flowers) तथा लैक्टिक जीवाणु। अनुकूल परिस्थिति में किण्वन क्रिया 72 से 96 घंटों में सम्पन्न हो जायेगी। किण्वन क्रिया सम्पूर्ण रूप से हो जाये तो किण्वनीकृत उत्पाद में "ब्रिक्स डिग्री" शून्य रहेगी। किसी भी हालत में उसमें 0.3 प्रतिशत से अधिक शर्करा बिना परिवर्तन हुए नहीं रहनी चाहिए। किण्वनकाल में उसमें से गैस के बुलबुले निकलते रहेंगे तथा किण्वन प्रक्रिया बंद होते ही बुलबुले भी बंद हो जाएँगे।

किण्वन द्रव

मद्यसार किण्वन सम्पूर्ण होते ही प्रकिण्व तथा गूदांश वाहिका के पेंदे में जम जायेगा। इस समय तैरते हुए किण्वनीकृत द्रव को साइफन द्वारा दूसरी वाहिका में निकालना चाहिए। सिरका निर्माण के लिए मदिरा की भाँति किण्वनीकृत द्रव को अच्छी तरह निस्यदन (छानना) नहीं किया जाता। कुछ व्यवसायी लोग किण्वनीकृत द्रव को निस्यदन प्रस (फिल्टरप्रस) द्वारा छानकर काम में लेते हैं। इसी प्रकार निर्मलीकृत द्रव को बोतलों में या पीपों में उनके मुँह तक सम्पूर्ण भर लेते है, फलस्वरूप मदिरा पुष्प आदि अनचाहे सूक्ष्मजीवी उसमें आक्रमण नहीं करते। इसलिए उसमें पाये जाने वाला मद्यसार नष्ट नहीं होता।

ऐसिटिक अम्ल किण्वन

अगला कदम, बोतलों में या पीपों में भरे हुए मद्यसार किण्वनोत्पाद को ऐसिटिक अम्ल किण्वन क्रिया विधेयक बनाना है। इसके लिए ऐसिटोबैक्टर जीवाणुओं को आवश्यकतानुसार उपर्युक्त उत्पाद में प्रविष्ट कराया जाता है जैसे—फलरस में प्रकिण्व जावन देकर मदिरा बनायी जाती है। इसी प्रकार किण्वनोत्पाद में प्रवेश कराये गये ऐसिटोबैक्टर जीवाणु इथाइल ऐल्कोहॉल (इथाइल मद्यसार) को ऑक्सीकरण क्रिया से ऐसिटिक अम्ल में परिवर्तित करने की क्षमता रखता है। साधारणतया प्राप्य ऐसिटोबैक्टर जीवाणु निम्नलिखित हैं :— ऐसिटोबैक्टर ऐसिटी, अ सैंइलीनम इत्यादि। इसमें प्रथम ऐसिटोबैक्टर साधारणतया सिरका निर्माण के लिए प्रयुक्त किया किया जाता है।

मद्यसार परिमाण

मद्यसार किण्वन द्रव को सिरका किण्वन क्रिया विधेयक बनाने से पूर्व इस तथ्य का ज्ञान होना चाहिए कि उस द्रव में कितना मद्यसार है, क्योंकि एक निश्चित मात्रा से अधिक मद्यसार वाली मदिरा में सिरका जीवाणु काम नहीं कर पायेगा। इसी प्रकार कम हो जाने पर चाही गई मात्रा में ऐसिटिक अम्ल भी उत्पन्न हुए सिरके में प्राप्य नहीं होगा। इसके लिये मद्यसार किण्वन द्रव में 10 प्रतिशत मद्यसार होना अनिवार्य है।

किण्वन द्रव में सिरका जावन मिलाते ही वायुरुद्ध अवस्था में बन्द कर देना चाहिए। इसके लिए पहले ही कहा जा चुका है कि किण्वनोत्पाद से वाहिकाओं को सम्पूर्ण रूप से भरना चाहिए ताकि उनमें वायु प्रवेश न कर सके तथा साथ ही उसके मुँह को भी बन्द कर देना चाहिए। क्रुस का कथन है कि मदिरा से भरी वाहिका में 2 प्रतिशत ऐसिटिक अम्ल मिलाया जाये तो कठित मदिरा को बचाया जा सकता है।

अम्लीकृत मद्यसार किण्वनोत्पाद को दो भिन्न विधियों से सिरका किण्वन विधेयक बनाया जा सकता है। एक को मन्द विधि, दूसरे को शीघ्रविधि कहा जा सकता है।

(1) मन्द विधि

भारत में विशेषतौर से लघु उद्योग में मन्द विधि अपनाई गई है। पीपों में रस भरकर स्वयं किण्वन विधेयक बनाया जाता है। परन्तु पीपों में $\frac{3}{4}$ मात्रा में ही रस भरा जाता है तथा मुँह को एक कपड़े से ढक दिया जाता है। इन्हीं पीपों को उमस अवस्था में (ताप तथा आर्द्र अवस्था) रखते समय उसके भीतर का रस स्वतः ही सिरके में परिवर्तित हो जाता है। पीपों को कपड़े से ढकने से मदिरा-पुष्प-बाधा भी नहीं होती, तथा उसके भीतर वायु भी आवश्यकता के अनुसार प्राप्त होती रहेगी। इसी प्रकार रस-सिरका बनाने में करीब चार से पाँच दिन लगेंगे। परन्तु रस में पायी जाने वाली शर्करा का परिपूर्ण रूप से किण्वनीकरण कर मद्यसार नहीं बनता। फलस्वरूप सिरका निर्माण मन्द गति से होगा तथा ऐसिटिक अम्ल भी कम मात्रा में पाया जायेगा। इस विधि द्वारा बनाये गये सिरके को तीसरी श्रेणी में ही माना जाता है।

ओरलियन्स विधि द्वारा सिरका निर्माण

ओरलियन्स विधि फ्रांस में प्रचलित है, जहाँ अंगूर मदिरा से सिरका बनाया जाता है। लगभग यही विधि सारे पाश्चात्य देशों में अपनायी गयी है। पीपों में मद्यसार किण्वनोत्पाद भरकर 20 से 25 प्रतिशत सिरका जावन मिलाया जाता है, साथ ही शुद्ध सिरका जीवाणुओं को ही प्रवेश कराया जाता है। इन पीपों को लिटाकर उनके दोनों तरफ एक-एक द्वारा बनाया जाता है, लिटाते समय द्रव की सतह से करीब 5 सेन्टीमीटर ऊपर उपर्युक्त छिद्र बना होना चाहिए। प्रत्येक छिद्र लगभग 2 5 सेन्टीमीटर व्यास का होगा। अर्थात् कुल मिलाकर (मुख्य छिद्र सहित) 3 छिद्र पीपे में बनाने होंगे। इन तीनों को मलमल के कपड़े से ढक दिया जाता है, फलस्वरूप किण्वनोत्पाद को तथा उसमें से उत्पन्न सिरके को, सिरका-मक्खी बाधाओं से बचाया जा सकता है।

उपर्युक्त पीपों को 70° से 85° फारनहीट पर सग्रहन किया जाये तो तीन महीने में परिपूर्ण रूप से सिरका उत्पन्न हो जाता है। इसमें से 25 से 35 प्रतिशत सिरका निकालकर बोतलीकरण के लिए काम में लिया जाता है। बाकी में पुनः मद्यसार किण्वनोत्पाद मिलाकर 2 से 4 महीने रखते हैं, फलस्वरूप निर्मित सिरके में करीब 25.35 प्रतिशत पुन लेकर बोतलीकरण किया जाता है। इसी प्रकार दोहराते रहने से लगातार सिरका प्राप्त होता रहता है। इस विधि द्वारा निर्मित सिरका अधिक स्वादिष्ट तथा सुगन्धित होता है। फलस्वरूप इस विधि से बने सिरके को प्रथम श्रेणी का माना जाता है।

पास्तर के परिष्कार (किंचित् परिवर्तन)

ग्रोरलियन्स विधि द्वारा सिरका-निर्माण काल में यह देखा गया कि उस द्रव के ऊपर सिरका जीवाणुओं की एक परत जम जाती है। पास्तर ने यह मालूम किया कि यह परत वास्तविक रूप से द्रव को सिरके में परिवर्तित करती है। परन्तु मद्यसार किण्वनोत्पन्न को बार-बार डालने-निकालने से उपर्युक्त परत छिन्न-भिन्न होकर पेंदे पर बैठ जाती है। फलस्वरूप वायु के प्रभाव से सिरका उत्पादन कम हो जाता है। इस परत को छेड़े बिना उसमें उत्पन्न सिरका निकालना तथा पुनः मद्यसार किण्वनोत्पाद डालना असम्भव-सा है। इस कठिनाई को दूर करने के लिए पास्तर ने यह सुझाव दिया कि पीपों के प्रारम्भ में ही मद्यसार किण्वनोत्पाद के 3 सेण्टीमीटर नीचे एक काष्ट की बनी पट्टी लगाई जाये तो द्रव के ऊपर जमने वाली सिरका-जीवाणुपरत छिन्न-भिन्न नहीं होगी, तथा पीपे के पेंदे में नहीं बैठ पायेगी।

क्रुस का अभिप्राय

क्रुस का अभिप्राय है कि सिरका जीवाणुओं से बनी परत सिरका-निर्माण में किसी प्रकार की मदद नहीं करती, क्योंकि जब शुद्ध ऐसिटिक जीवाणुओं का जावन के रूप में प्रयोग किया जाता है तब उपर्युक्त परत पैदा ही नहीं होती। इस परत के बिना ही सिरका निर्माण प्रक्रिया तीव्रता से चलती रहती है। इन्होंने आगे कहा कि सिरका निकालते तथा पुन. किण्वनोत्पाद डालते समय वायु-मिश्रण हो जाता है, फलस्वरूप सिरका-निर्माण में कमी आ जाती है। इसलिए क्रुस का विचार पास्तर के विचार से भिन्न है। लेकिन यह भी सिद्ध होता है कि पास्तर के किंचित् परिवर्तन को अपनाने पर ऐसिटिक निर्माण (सिरका निर्माण) में तीव्रता आती है तथा ऐसिटिक अम्ल की मात्रा भी बढ़ती है, इसका खण्डन नहीं किया जा सकता।

(2) शीघ्र-विधि या जर्मन-विधि

किण्वनोत्पाद में अपेक्षित ऑक्सीजन तथा उसमें उत्पन्न अम्ल मात्रा, दोनों में एक आनुपातिक योग होता है, या यह भी कहा जा सकता है कि द्रव में जितनी ऑक्सीजन प्रयुक्त की जायेगी, उतनी ऐसिटिक अम्ल मात्रा प्राप्त होती है। इस आधार के अनुसार ही जर्मन विधि चलती है। इसके लिए एक विशेष प्रकार के जैनरेटर द्वारा सिरका बनाया जाता है। यह यन्त्र कुछ काष्ट स्तम्भनुमा होता है। इसकी ऊँचाई 4.2 से 4.6 मीटर तथा व्यास 1.2 से 1.5 मीटर होता है। इसको तीन कक्षों में विभाजित किया हुआ होता है। जैनरेटर का मध्य कक्ष सबसे बड़ा होता है, इसमें लकड़ी की छीलन (वुड सेविंग) भरा जाती है। ये सिरका को निथर-निथर कर बहने के लिए ही नहीं बल्कि सिरका बैक्टरियाओं को वहन करने तथा वृद्धि करने के लिए भी उपरोक्त काष्ट छीलन सहायक होती है। इसके बजाय भोपर्या (मक्का का दाना रहित भुट्टा) या तत्तुल्य कोई अन्य वस्तु भी भरी जा सकती है।

मध्य कक्ष के करीब 30 सेन्टीमीटर ऊपर तार की जाली से ऊपर के कक्ष को पृथक् किया हुआ होता है। इस प्रथम कक्ष के ऊपर अंग्रेजी के डब्ल्यू (W) के आकार की द्रोणिका लगी हुई होती है। इस द्रोणिका में जब मद्यसार किण्वनोत्पाद भरते हैं तब उसमें से निथर-निथर कर किण्वनोत्पाद काष्ट की छीलन में गिरता रहेगा। इस द्रोणिका में उसके

आकार के अनुरूप दो कक्ष होते हैं। एक भरते ही दूसरा स्वतः ही बन्द हो जाता है, दूसरा भरते ही पहला स्वयं बन्द हो जायेगा। इसकी बनावट जैनरेटर को लगातार चालू रखने के योग्य होती है।

ऊपर के वितरण कक्ष से, केन्द्र कक्ष मे वर्षित (बौछार रूप से) मद्यसार किण्वनोत्पाद छीलन से होते हुए बहते समय छीलन पर लगे हुए सिरका-जीवाणु, प्राणवायु (ऑक्सीजन) की सयुक्त प्रक्रिया से ऐसिटिक अम्ल मे परिवर्तित की जाती है। यह ऐसिटिक अम्ल निसर-निसर कर तीसरे कक्ष मे पहुँच जाता है।

ग्राही कक्ष भी ऊपर के वितरण कक्ष की भाँति छिद्रयुक्त काष्ट पट्टी की सहायता से केन्द्र-कक्ष से अलग किया हुआ होता है। नीचे से करीब $1\frac{1}{2}$ मीटर ऊँचाई पर कथित छिद्र युक्त काष्ट छलनी लगी हुई होती है। जैनरेटर के व्यास के बराबर व्यास वाली इस कक्ष की ऊँचाई $1\frac{1}{2}$ मीटर होगी।

जैनरेटर मे (मध्यकक्ष मे) भरी हुई काष्ट छीलन पूर्व मे ही सिरके द्वारा अम्लीकृत की हुई होगी, जो पास्तुरीकृत नही होगी। फलस्वरूप छीलन भरा मध्य कक्ष सिरका जीवाणुओं से भरपूर होगा। तुरन्त बहुत सावधानी के साथ मद्यसार किण्वनोत्पाद को अम्ल मिलाकर प्रथम कक्ष की द्रोणिका मे भरते हैं, इस द्रोणिका से द्रव निसर-निसर कर टपकने लगता है। यह क्रिया बहुत सावधानी के साथ प्रारम्भ करनी चाहिए, क्योंकि प्रथम प्रयोग से सिरका जीवाणुओं को उत्तेजित करना है ताकि इस क्रिया से सिरका जीवाणुओं को किण्वन के लिए सतर्क किया जा सके। इस क्रिया के कुछ समय बाद अगला कदम मद्यसार किण्वनोत्पाद को सिरका बनाने के लिए प्रथम कक्ष के ऊपर लगी हुई काष्ट द्रोणिका एक के बाद एक भरकर छीलन माध्यम से टपकाना है। पहले 3 से 3 5 प्रतिशत सिरका से अम्लीकृत किया जाता है, यानि 1 : 2 के अनुपात में मद्यसार तथा सिरका मिलाकर जैनरेटर मे चलाया जाता है, तब मद्यसार ऐसिटिक अम्ल के रूप में परिवर्तित हो जाता है। यह प्रक्रिया बिना किसी अवरोध के दोहराई जा सकती है। ऑक्सीकरण बराबर मात्रा मे हो रहा है कि नही, इसका ज्ञान जैनरेटर के नीचे ग्राही कक्ष (सचयन कक्ष) मे प्राप्त सिरके के निरीक्षण-परीक्षण द्वारा मालूम किया जा सकता है। अगर उसमे ऐसिटिक अम्ल मात्रा चाही गयी मात्रा मे हो तो यह समझ लेना चाहिए कि ऑक्सीकरण उचित मात्रा मे हो रहा है। इसको ही शीघ्रविधि कहा जाता है।

आज दो जैनरेटरो द्वारा ऐसिटिक अम्लीकरण सम्पन्न करने वाली शीघ्र विधि भी प्रचलित है। उपचारित मद्यसार किण्वनोत्पाद को प्रथम जैनरेटर में से चलाकर अम्लीकृत किया जाता है, तुरन्त बाद अम्लीकृत किण्वनोत्पाद को दूसरे जैनरेटर मे से प्रवाहित कराकर, उसको सम्पूर्ण रूप से अम्लीकृत किया जाता है, परन्तु परीक्षण द्वारा यह सिद्ध हुआ है कि पृथक्-पृथक् जैनरेटर मे बने सिरके मे अम्ल मात्रा कहाँ तक है।

आज बड़ी व्यवसाय-शालाओं मे यन्त्रीकृत जैनरेटर काम मे लिए जाते हैं। परिक्रमीकरण जैनरेटर, पुनः चक्रमण जैनरेटर इत्यादि संयुक्त राज्य अमेरिका मे प्रचलित है, जो सेब-सिरका-निर्माण के लिए काम मे लिए जाते हैं।

भारतीय आर्थिक परिस्थितियों को ध्यान मे रखते हुए लघुस्तर पर सिरका निर्माण के लिए उपयुक्त एक लघुयन्त्र केन्द्रीय खाद्य प्रौद्योगिक सस्थान मे विकसित किया गया है। इसका पूर्ण ज्ञान वहाँ से प्राप्त किया जा सकता है।

उत्पादनोपरान्त प्रक्रिया

परिपक्वीकरण

मंद विधि द्वारा तैयार किये हुए सिरके को तुरन्त परिपक्वीकरण के लिए रखा जाता है, क्योंकि अम्लीकरण परिपक्वीकरण साथ-साथ चलने वाली प्रक्रिया हैं। परन्तु यन्त्र सहायता से निर्मित सिरके का तुरन्त पक्वीकरण नहीं किया जाता। अगर तुरन्त पक्वीकरण विधेयक बनाया जाये तो उसमें अनचाही सुगन्ध हो जाती है। इसका मुख्य कारण ऊँचे दर्जे का मद्यसार, ऐसेटएल्डिहाइड तथा अम्ल ही उपर्युक्त अनचाही सुगन्ध के कारक हैं। इसलिये सिरके को जितना जल्दी हो सके उतना शीघ्र काष्ट पीपों में भरकर सीलकर 12 महीने संचयन करना चाहिए ताकि पक्वीकरण हो सके। मदिरा की भाँति सिरके के लिये भी ओक पेड़ से बने काष्ट पीपे या काँच की बरनियाँ काम में ली जा सकती हैं। कुछ प्रतिवेदनों से यह ज्ञात हुआ है कि बड़ी वाहिकाओं से छोटी वाहिकाएँ पक्वीकरण के लिए उत्तम होती हैं।

सिरका निर्मलीकरण

उत्पादित सिरका स्पष्ट तथा रंगीन होगा। सिरका निर्मलीकरण, निर्मलीकरण सहायकों, निस्यन्दन आदि क्रियाओं द्वारा सम्पन्न किया जाता है, जिसकी फल-रस निर्मली-करण के अवसर पर चर्चा की जायेगी। सिरका-कीट, वाहिका के पैंदे पर जम जाने के बाद तैरते हुए सिरके को साइफनीकरण द्वारा अलग कर उसको निस्यंदन कर या ईसिनग्लास, जलाटिन, केसीन, उच्च कोटि के बन्टोनाइट, चिकनी मिट्टी, स्पैनिस चिकनी मिट्टी आदि की सहायता से निर्मलीकृत किया जा सकता है, ताकि उसमें पाये जाने वाले अनचाहे कणों को अलग किया जा सके। इसी प्रकार शुद्ध किये गये सिरके को बोतलीकरण कर संचयन करने के बाद कभी भी उसमें किसी प्रकार के कीट पैंदे पर नहीं दिखाई देंगे, न ही सिरके में किसी प्रकार का धुँधलापन उत्पन्न होगा।

ईसिनग्लास (Isinglass)

जलाटिन के बारे में फल-रस निर्मलीकरण में चर्चा की जायेगी। ईसिनग्लास भी एक विशेष प्रकार का परिशुद्ध जलाटिन ही है। 1.1 लीटर जल को 28·4 ग्राम साइट्रिक अम्ल में अम्लीकृत कर लें। इस घोल में 28·4 ग्राम ईसिनग्लास मिलाकर 24 घण्टे तक भीगने दें। 24 घण्टे बाद सुपरफ्रश नामक घूमने वाली छलनी या तत्तुल्य यन्त्र की सहायता से छान लें। उपर्युक्त ईसिनग्लास घोल 180 लीटर सिरका-निर्मलीकरण कर सकता है। इसे पीपों में भरे हुए सिरके में ईसिनग्लास घोल अच्छी तरह मिलाकर बन्द कर दें तो 7 से 10 दिन के अन्दर सिरका साफ और निर्मलीकृत हो जायेगा।

केसिन से निर्मलीकरण करना हो तो केसिन को गर्म पानी में डालकर उबालें जिसकी मात्रा 2 प्रतिशत होनी चाहिए। इस प्रकार बनाये गये केसिन घोल से 100 लीटर सिरका निर्मलीकृत हो सकेगा। 2 लीटर जल में 57 ग्राम जलाटिन मिलाकर गर्म कर बनाये गये घोल से भी सिरका निर्मलीकृत किया जा सकता है लेकिन जलाटिन घोल मिलते ही सिरके में टैनिन भी मिलाना चाहिए जिसकी मात्रा 2 लीटर जल में 57 ग्राम टैनिन के अनुपात में होनी चाहिए। इसके अलावा फिल्टरप्रेस की सहायता से भी निर्मलीकरण किया जा सकता है।

पास्तुरीकरण

निर्मलीकरण के बाद अगला कदम सिरके को पास्तुरीकरण कर परिरक्षित करना है। इसके लिए सिरके को बिना ढक्कन से बर्तनों मे 150^0 फारनहीट पर ऊष्मीकरण कर भवन ताप में ठण्डा कर लिया जाता है। इसके लिए अन्य विधि भी अपनायी जा सकती है जैसे, क्षण पास्तुरीकरण इत्यादि, जो अन्यत्र चर्चित है।

जैसे भिन्न-भिन्न फलों के रस को निर्मलीकरण-निस्यन्दन क्रिया द्वारा परिरक्षित किया जाता है, उसी प्रकार सिरके को फिल्टर कर उसमे पाये जाने वाले सूक्ष्मजीवियों से परिरक्षित किया जा सकता है। इसमे ऊष्मा-प्रयोग की आवश्यकता नही होती। इसके लिए "जर्मप्रूफ फिल्टर प्रेस" काम मे लिया जाता है। इस क्रिया द्वारा तैयार सिरके को पूर्व में निर्मलीकरण की आवश्यकता भी नहीं होती, क्योकि निर्मलीकरण तथा निर्जर्मीकरण दोनो क्रियाएँ एक साथ सम्पन्न होती है। पास्तुरीकृत सिरके मे चाहे तो 'करामल' वर्ण मिलाकर बोतलीकरण किया जा सकता है। करामल वर्ण शर्करा से बनाया जाता है। निर्मलीकृत सिरके को बोतल मे भरकर पानी मे डालकर 140° फारनहीट पर गर्म करके भी पास्तुरीकरण किया जा सकता है। इसको जल-ऊष्मक संसाधन कहा जाता है। इसके अलावा निर्मलीकृत सिरके को 150 या 110 पी॰ पी॰ एम॰ के अनुपात मे सोडियमबाई सल्फाइट या सल्फरडाई-ऑक्साइड मिलाकर भी बोतल में भरकर सीलबन्द किया जाता है। फलस्वरूप परिरक्षक मिलाये गये सिरके को जल-ऊष्मक संसाधन की आवश्यकता नही होगी।

चाँदी के द्वारा भी पास्तुरीकरण किया जा सकता है। सिरके को सिल्वरयुक्त रेत से छान लिया जाता है, या इलेक्ट्रोलाइस किया जाता है, जहाँ बहुत निम्न स्तर की विद्युत् उत्पन्न होती हैं। यहाँ सिरका काफी मात्रा में (2 पी॰ ए॰ एम॰) सिल्वर आयन को ग्रहण कर निर्जर्मीकृत हो जाता है।

मद्यसार ऐसिटिक अम्ल-उत्पाद

100 भाग शर्करा मे से 53 8 भाग मद्यसार या 70 1 भाग ऐसिटिक अम्ल यथा-विधि प्राप्त हो जायेगा। मद्यसार ऐसिटिक अम्ल उत्पाद इस सिद्धान्त पर आधारित है। परन्तु कितनी भी सतर्कता बरतें, 45 से 47 भाग मद्यसार 50 से 55 भाग ऐसिटिक अम्ल मात्रा ही प्रयोगात्मक विधि से प्राप्त होगी, क्योकि किण्वनीकरण विधेयक फल रस मे पाये जाने वाली शर्करा में से कुछ अंश अकिण्व आ जाते हैं। इसके अलावा अल्प मात्रा मे मद्यसार तथा ऐसिटिक अम्ल वाष्पीकरण द्वारा भी नष्ट हो जाना स्वाभाविक है। इन्हीं कारणो से परिकल्पना तथा प्रयोगात्मकता दोनो मेल नही खा पाते। इसलिए परिकल्पना मे बताई हुई मात्रा से कम मात्रा में सिरका उत्पादित हो पाता है।

इसी प्रकार तैयार कर विपणन के लिए आये हुए सिरके मे 4 प्रतिशत ऐसिटिक अम्ल अवश्य पाया जायेगा। बड़े-बड़े व्यवसायी 45 ग्रण (4·5 प्रतिशत) से कम ऐसिटिक अम्ल युक्त सिरका विपणन के लिए नहीं भेजते। इसमे करीब 0·5 प्रतिशत मद्यसार तथा 0.3 प्रतिशत शर्करा पायी जानी अनिवार्य है।

सिरके में विकृतियाँ

(1) दुग्ध अम्ल जीवाणु बाधा

किण्वनीकरण प्रक्रियाओं के समय रस मे दुग्ध अम्ल जीवाणु का प्रवेश हो जाना स्वाभाविक है, फलस्वरूप सिरके मे धुँधलापन तथा दुर्गन्ध पैदा हो जाती है। इसके अलावा

ऐसिटिक अम्ल की बजाय दुग्धाम्ल (लैक्टिक अम्ल) का निर्माण भी हो जाता है। फलस्वरूप सिरके मे ऐसिटिक अम्ल की कमी हो जायेगी। इसलिए मद्यसार किण्वन के लिए शुद्ध प्रकिण्वो को या प्रकिण्व सवर्द्धनो का ही जावन के रूप मे प्रयोग करना चाहिए। मद्यसार किण्वनीकरण सम्पन्न होते ही उसमे 20 से 25 प्रतिशत अपास्तुरीकृत सिरके द्वारा अम्लीकरण किया जाये तो लेक्टिक जीवाणुओ (दुग्ध जीवाणु) को उसमे से दूर किया जा सकता है।

(2) मदिरा पुष्प बाधा

मदिरा पुष्प बाधा के बारे मे अन्यत्र चर्चा की जा चुकी है। एक विशेष किस्म की अनचाही प्रकिण्व बाधा के कारण एक पतली परत किण्वन-विधेयक-द्रव पर जम जाती है, जिसको मदिरा पुष्प-बाधा कहा जाता है। इस बाधा को रोकने के लिए द्रव के ऊपर मोम गर्म कर डालना चाहिए। इस प्रकार मदिरा-पुष्प-बाधा से होने वाली मद्यसार क्षति, गन्ध तथा धुंधलापन रोका जा सकता है। मोम-प्रयोग के बिना वाहिका के मुंह तक द्रव को भरकर भी मदिरा-पुष्प-बाधा रोकी जा सकती है।

(3) सिरका मक्खी-बाधा

जहाँ सिरका बनाया जाता है, वहाँ सिरके से मक्खियाँ आकर्षित होती हैं। यह ड्रासोफिला सिलरिस वर्ग की होती है।

व्यवसाय-शाला के परिसर मे पड़े हुये फलोत्पाद अवशिष्ट तथा सड़े-गले फलो के कारण मक्खियाँ पैदा हो जाती हैं। यह मक्खियाँ सिरके के गुण मे किसी प्रकार की क्षति नही करती, लेकिन वहाँ काम करने वालो को इनसे बाधा उत्पन्न होती है। इन्हे रोकने के लिए परिसर तथा व्यवसाय-शाला को साफ रखना चाहिये।

(4) सिरका "एल" (विनिगर) 'एल' बाधा

धागानुमा यह जीव अग्रेजी वर्णमाला के एस (S) आकार के होते हैं, इन्हें अग्वीगुल्ला कहते हैं, जो 1·25 से 1·16 इन्च लम्बे होते है। सिरके मे अगर यह जीव हो तो एक गिलास में भरकर शक्तियुक्त रोशनी के सामने पकड़ कर देखें तो अपने नग्न नेत्रो द्वारा भी ये दिखाई दे जायेंगे। यह जीव सिरके को नष्ट करता है। पास्तुरीकरण कर इस जीव को सिरके मे नष्ट किया सकता है या पूर्व वर्णित विधियो द्वारा निर्मलीकरण-निस्यन्दन क्रिया से भी दूर किया जा सकता है। सिरके को बोतल में भरते समय शून्य शीर्षस्थान रखा जाये तो भी वायु के अभाव में यह जीव नष्ट हो जायेंगे।

इनके अलावा कुछ अन्य पीडक जन्तु हैं, विनिगर लोम (Vinegar Louse), विनिगर माइट्स (Vinegar mites) आदि। विनिगर लोम एक प्रकार का एफिड (aphids) है जो जेनरेटर के चारो तरफ एकत्र हो जाता है लेकिन इससे कहीं अधिक दोषकारी जीव, विनिगर माइट्स है जो किण्वन क्रिया विधेयक द्रव मे प्रवेश कर मद्यसार के ऑक्सीकरण मे बाधा ही नहीं डालते, बल्कि प्रजनन करके तथा मरने के बाद वे मद्यसार की वाहिका के पेंदे पर जम जाते हैं। भविष्य मे सड़न-गलन होकर ऐसिटिक बैक्टीरिया को नष्ट कर सिरके को खराब कर देते है।

उपरोक्त बाधाओ को दूर करने के लिए निम्नलिखित पूर्वोपाय किये जाने चाहिएं—

सिरका निर्माण के लिए काम आने वाले पीपो, बोतलो, टंकियो तथा जेनरेटरो को शुद्ध परिस्थिति मे सुरक्षित रखें। काम करने के पहले तथा बाद मे तुरन्त साफ कर रखें।

इसके साथ मन्थक धूमीकरण कर (जब काम मे नही लिया जाता तब) रखें। इसके लिए हॉट सालसोडा काम मे लिया जाता है। फलस्वरूप सिरका जीवाणु, फफूंद इत्यादि के अलावा अन्य प्राणी भी नष्ट हो जायेंगे। एक बार धूमीकरण से ही इन्हे दूर किया जा सकता है, लेकिन यन्त्रों तथा उपस्करों को पुनः काम मे लेने के पहले साफ कर लेना चाहिये। जैनरेटर को लगातार सिरका निर्माण के लिए काम मे लेते रहे तो उसकी सिरका-निर्माण शक्ति कम हो जाती है। कभी-कभी उसमे सूक्ष्मजीव बाधा होकर मद्यसार को जल तथा कार्बनडाई-ऑक्साइड मे रूपान्तरित कर नष्ट कर लेते हैं। इसलिए जनरेटरों को लगातार काम में नही लेना चाहिये। बल्कि बीच-बीच में साफ कर प्रयोग करना चाहिये। इसके अलावा इसमे वायु-प्रवेश नियन्त्रण भी अनिवार्य है। साथ ही द्रोणिका से टपकने वाले मद्यसार किण्वन द्रव का प्रवाह भी समरूप होना चाहिए।

किण्वतोत्पन्न तथा अकिण्वतोत्पन्न

किण्वतोत्पन्नो के लिए काम में लिये गये कच्चे माल (फल-तरकारी) के स्वाभाविक गुण या स्वाद उसमे प्रगट नही होते, क्योंकि किण्वन क्रिया द्वारा उसके रंगरूप को बदल दिया जाता है। इस बदली हुई परिस्थिति मे ही वे परिरक्षित भी हो जाते हैं, फलस्वरूप उस पदार्थ मे हमारे द्वारा चाहे गये सूक्ष्म जीव (जैसे—प्रकिण्व, लैक्टिक अम्ल जीवाणु) के अलावा अन्य किसी सूक्ष्म जीव को उसमे प्रवेश करने या बढने का अवसर नहीं देते हैं। फलस्वरूप वे परिरक्षित हो जाते हैं। लेकिन अंगूर से बनी मदिरा तथा सेब से बनी मदिरा में अन्तर होता है। इसी प्रकार एक फल या तरकारी से बना किण्वनोत्पाद दूसरी फल तरकारी से बनी वही किण्वतोत्पाद से भिन्न होगी।

किन्तु अकिण्वतोत्पाद मे उपर्युक्त प्रक्रिया नही चलती बल्कि हर प्रकार के सूक्ष्म-जीवियों का नाश तथा रोक कराकर उन्हें परिरक्षित किया जाता है, इस क्रिया के लिए चाहे कच्चे माल के रंगरूप को यथाविधि बनाये रखते हुए या उसके रंगरूप को बदलकर या उसके रस को निचोड कर परिरक्षित किया जाता है, जिससे कच्चे माल का रंग, सुगन्ध व गुण अवश्य विद्यमान रहेगा।

□□□

अध्याय 5

फलरस तथा फलरस पेय परिरक्षण

(Fruit Juice and Fruit Juice Beverages)

रासायनिक परिरक्षक द्वारा

(By Chemical Preservatives)

भारत का अधिकांश भू-भाग ऊष्णमेखलीय है। फलस्वरूप वर्ष के करीब 5–6 महीने यहाँ का प्रत्येक व्यक्ति ठण्डे पेय पसन्द करता है। उत्तर तथा उत्तर-पश्चिम प्रदेश शुष्कीय होने के कारण वहाँ ठण्डे पेय का और भी अधिक महत्त्व है। आज विपणी मे प्राप्त पेयों में अधिकांश कृत्रिम होते हैं, जो बिना फलरस के होते है। जो प्रतिवर्ष 1,71,499 मैट्रिक टन उत्पादन किया जाता है, जिसमे अधिकांश सॉफ्ट ड्रिंक है। लेकिन उनका नाम, उसमे मिलायी गयी कृत्रिम सुगन्ध जिस फल का प्रतिनिधित्व करती है, उसके नाम पर रख दिया जाता है। इसलिए इसको मृदुपान (सॉफ्ट ड्रिंक) कहा जाता है। इसका मतलब यह नही कि सॉफ्ट ड्रिंक फल रस से नही बनते। कृत्रिम पेय में शर्करा या सैकरीन, साइट्रिक अम्ल, वर्ण तथा सुगन्ध मिश्रित होते है जबकि फल रस सॉफ्ट ड्रिंक मे निर्मलीकृत फलरस भी मिलाये हुए होते हैं जिसमें सुगन्ध मिलाना आवश्यकता पर निर्भर करता है।

फल पेय कृत्रिम पेय से अधिक, प्यास दूर करने के लिए ही नहीं बल्कि तन्दुरुस्ती को बढ़ाने मे भी काफी सहायक होते हैं। हमें भली-भाँति मालूम है कि फल तथा तरकारियाँ आरोग्य संरक्षक आहार मे आती हैं। शर्करा से हमे अधिक ऊर्जा प्राप्त होती है, परन्तु सैकरीन से ऊर्जा प्राप्त नही होती। मधुमेह के रोगी भी इसके लगातार प्रयोग से शारीरिक क्षति (विशेष तौर से दिमाग में एक प्रकार की बीमारी) के शिकार हो जाते है।

हमें यह भी मालूम है कि फलरस में विटामिन सी और धातुलवण अन्य आहारों से अधिक मात्रा मे पाया जाता है। फलस्वरूप शारीरिक प्रक्रिया सम्पन्न होती है। शरीर के मोटापे को कम करने मे भी फल-तरकारी तथा उसका रस बहुत सहायक होते हैं। जैम, जैली, मार्मलेट, फलमिश्री इत्यादि उत्पादो के निर्माणकाल मे विटामिन सी की जितनी मात्रा नष्ट हो जाती है, उतनी फलवर्ग पेयो मे नष्ट नही होती। दीर्घकाल तक संचयन किये गये पेयों के निरीक्षण-परीक्षण आदि से मालूम हुआ है कि उनमे 50 प्रतिशत के करीब विटामिन 'सी' अवशिष्ट रहा।

आज संसार मे उत्पादित फल वर्ग पेयो मे अधिकांश भाग नीबूवर्गीय फलों से ही प्राप्त किया जाता है। भारत मे बनाये गये कुछ विशेष फलपेयो की विदेश विपणी में माँग अधिक हो रही है। इसमे सर्वप्रथम आम पेय, कटहल पेय तथा काजू पेय काफी लोकप्रिय हो रहे है। राजस्थान, पंजाब तथा हरियाणा का एक प्रमुख फल है बेर। सेब से अधिक पौष्टिक इस फल से रस निर्माण का कार्य तथा परिरक्षण अब भी अध्ययन विषयक होना है, इस फल रस का प्रचलन भारत मे ही नहीं अपितु विदेशों में भी हो सकता है।

आज से 50 वर्ष पहले भारत मे फलरस तथा फल पेयों का उतना प्रचलन नहीं था जितना आज है। सन् 1960 के आंकड़ों के आधार पर कहा जा सकता है कि 5,748 टन फल पेय उस समय उत्पादित किये जाते थे। परन्तु आज भारत में प्रतिवर्ष 38,305 मैट्रिक टन से अधिक फल पेय उत्पादित किये जाते हैं। अधिक जानकारी के लिए सारणी-2 का अवलोकन करें। फलरस उत्पादन करीब 25,967 मैट्रिक टन है।

संयुक्त राज्य अमेरिका मे भी 100 साल पहले यही समझा जाता था कि फलरस (अंगूर रस तथा सेब रस) रोगियो के उपचार मे सहायक होता है, किन्तु आज केवल रोगियों के लिए ही नही अपितु स्वास्थ्य को लगातार बनाये रखने के लिए भी फल-रस सर्वश्रेष्ठ माना जाता है। फलस्वरूप वहाँ आज 6,50,000 से अधिक मैट्रिक टन विभिन्न फल रस उत्पादित किये जा रहे हैं। केवल अमेरिका मे ही नहीं अपितु अन्य पाश्चात्य देशों मे भी सवेरे के नाश्ते मे फलरस का होना अति आवश्यक माना जाता है। सन्तरा, चकोतरा, सेब अंगूर, अनन्नास, टमाटर, बैरी, सरसफल आदि फल, फलरस-पेय बनाने मे काफी मात्रा मे काम मे लिये जाते हैं।

भारत मे निर्मित फलरस अधिकांश सेब से निकाला जाता है। दूसरे फल आम, अनन्नास, अंगूर, अनार, जामुन, काजूफल आदि हैं। संयुक्त राज्य अमेरिका की भाँति भारत मे भी इस व्यवसाय पर सन् 1930 तक कोई विशेष ध्यान नही दिया गया था, परन्तु कुछ विशेष प्रकार के शर्बत आयुर्वेद विधि के आधार पर अवश्य बनाया करते थे। वे हैं– गुलाब, चन्दन, बादाम, खसखस, आम, नारा नपरिला (चिरायता) इत्यादि। यह गर्मियों मे बहुत लाभप्रद ही नही अपितु रक्त शुद्धीकरण तथा अन्य शारीरिक गुणों के लिए भी उपयुक्त माने जाते हैं, लेकिन आज उपर्युक्त शर्बत भी कृत्रिम रूप मे बनाये जाते हैं जिसमे शर्करा मिलाये या सैकरीन, शरीर के लिए यह गुणकारी नही होते। इसलिए इस क्षेत्र मे कार्यरत अधिकारियो तथा सरकार को विपणन हेतु निकाले गये खाद्य पदार्थों मे यह तथ्य अंकित कराने के लिए निर्माताओं को बाध्य करना चाहिए, ताकि उपभोक्ता को यह मालूम हो सके कि वे कृत्रिम या प्राकृतिक पेय खरीद रहे है, अन्यथा निर्माता को उपभोक्ता से धोखाधड़ी करने से रोका नही जा सकता।

अकिण्वन फलपेय

इस वर्ग मे फलरस, सान्द्रीकृत फलरस, फलशर्बत, फलपाक (स्क्वैश) तथा आर० टी० एस० बिवरेज आदि आते हैं।

(1) फलरस पेय

वैज्ञानिक तरीको से फलों से रस निकालकर परिरक्षण किये हुए रस को फल-रस-पेय कहा जाता है। इसमें शर्करा तथा आवश्यकता हो तो कुछ विशेष मसाले भी मिलाये जाते हैं। इसमे यह भी आवश्यक नही है कि परिरक्षक मिलाया जाये। इनके पोषक अंशों में परिरक्षित काल मे कोई कमी नही आती।

(2) सांद्रीकृत फलरस

निकाले गये फलरस को वैज्ञानिक तरीके मे सान्द्रीकरण कर परिरक्षित किया जाता है। यह सांद्रीकरण ऊष्मा प्रयोग से जलांश को वाष्प में बदलकर या उसमे पाये जाने वाले

जल को हिमीकरण द्वारा (बिना ऊष्मा प्रयोग) ठोस पदार्थ में परिवर्तित कर, उसमे से यान्त्रिक सहायता से जलांश को दूर कर गाढा बनाकर किया जाता है।

(3) फल शर्बत

फल शर्बत मे कम से कम 25 प्रतिशत फलरस, 60 प्रतिशत या अधिक शर्करा तथा शेष जल मिलाकर बनाया जाता है। साइट्रिक अम्ल या अन्य कोई फलाम्ल, वर्ण तथा सुगन्ध भी मिलायी जाती है। इसमें उपभोक्ता पुनः जल मिलाकर बर्फ के टुकड़े मिलाकर या न मिलाकर काम में लेते हैं।

(4) फल पानक

इसमे 25 प्रतिशत फलरस तथा 45 प्रतिशत या अधिक शर्करा मिलायी हुई होती है, लेकिन इसमें मिलाये गये फलरस मे उस फल का गूदा भी मिलाया जाता है, अर्थात् फलो मे से निकाले गये सम्पूर्ण रस तथा गूदे का प्रयोग किया जाता है। केवल बीज, अन्य फल-कण इत्यादि अलग किये जाते हैं। इसमे भी साइट्रिक अम्ल या टार्टरिक अम्ल जैसे कोई फलाम्ल तथा फलो का प्रतिनिधित्व करने वाले रंग तथा सुगन्ध (चाहे तो) मिलायी जाती है। इन्हे भी पानी तथा बर्फ मिलाकर काम मे लेते हैं।

(5) फल मधुपेय (फ्रूट कोर्डियल) (Fruit Cordial)

निर्मलीकृत फलरस (बिना गूदे के) 25 प्रतिशत तथा 35 से 50 प्रतिशत शर्करा मिलाकर फल मधुपेय बनाये जाते है। इनके लिए अधिकतर नीबूवर्गीय फलरस ही काम मे लेते हैं—विशेषतौर से कागजी नींबू का रस।

(6) यव-फलपेय (बारली वाटर) (Barley Water)

फलरसो मे यव (जौ) रस मिलाकर यह बनाये जाते हैं। प्रायः नींबूवर्गीय फल-रस ही इसके लिए काम मे लिये जाते हैं। यह रोगियों के लिए विशेष रूप मे लाभकारी है।

(7) आर. टी. एस. बिवरेज (झटपट पेय) (R. T. S. Beverages)

निर्मलीकृत फलरसों से बने एक विशेष पेय को ही आर० टी० एस० बिवरेज (झटपट पेय) के नाम से जाना जाता है। आजकल विभिन्न विपणन नामो से इस प्रकार के फल-पेय बाजार मे उपलब्ध हैं। इसमे 10 प्रतिशत फलरस तथा 12 प्रतिशत शर्करा होना अनिवार्य है। उपभोक्ताओ को कृत्रिम पेयों से दूर रखने तथा अधिक लाभकारी पेय उपलब्ध कराने के लिए केन्द्रीय खाद्य प्रौद्योगिकी अनुसन्धान संस्थान द्वारा विभिन्न फलो के आर.टी.एस बिवरेज तैयार किये हैं, वे विभिन्न विपणन नामो से निर्माताओ द्वारा बिक्री में उपलब्ध कराये जा रहे हैं।

(8) फ्रूट बेस्ड सोफ्ट बिवरेज (फल पर आधारित) (मृदुपेय (Fruit Based Soft Beverage)

केन्द्रीय खाद्य प्रौद्योगिकी अनुसंधान संस्थान, मैसूर मे विकसित किया गया फल पर आधारित एक मृदु फलपेय है। यह पेय आमतौर पर गूदेदार फलो से बनाया जाता है। जैसे केले, अमरूद इत्यादि। इन फलों को अलग अलग मदनन कर इनमे विकर सम्पन्न (एन्जाइमेटिक प्रोसेस) द्वारा शुद्ध रस निकालकर परिरक्षण किया जाता है। इस प्रकार

तैयार किये गये रस में काम में लिए गये फल की वास्तविक सुगन्ध, शर्करा, विटामिन पाये जायेंगे। इसको महीनों तक पास्तुरीकरण कर भण्डारण किया जा सकता है। इस रस को कार्बनीकरण करके या उसके बिना ही पी सकते हैं। इसकी तकनीकी जानकारी सी० एफ० टी० म्रार० म्राई०, मैसूर से प्राप्त कर सकते हैं।

फलरस पेयों के निर्माण में आवश्यक कुछ यन्त्र

लोहा, इस्पात इत्यादि फल या फलरस से सम्पर्क में आ जायें तो उन्हें काला कर देंगे। तांबा, पीतल आदि के सम्पर्क में आने से फलरस हरे रंग के हो जाते हैं। फलस्वरूप उपयोग योग्य नहीं रहते। उपर्युक्त धातु के साथ फल में पाई जाने वाली टेनिन, अम्ल, वर्ण, आदि के साथ प्रक्रिया करने से ही उपर्युक्त विकृति उत्पन्न होती है। इसलिए फल या फलरस के सम्पर्क में आने वाला बर्तन, उपस्कर आदि एल्युमीनियम, स्टेनलैसस्टील आदि से बना होना चाहिए। कम से कम वह पुर्जे आवश्यक स्टेनलैस स्टील या एल्युमीनियम या अन्य मत्तुल्य कोई संयुक्त धातु का बना हुआ होना चाहिए जो सीधे फल तथा फलरस के सम्पर्क में आते हैं।

सन् 1950 तक देश में जितने यन्त्र तथा उपस्करों की आवश्यकता होती थी उन्हें संयुक्त राज्य अमेरिका, ब्रिटेन आदि विदेशों से आयात किया जाता था। आज भारत में अपनी सामूहिक-आर्थिक दृष्टि के आधार पर चाहे गये अधिकांश यन्त्र, उपस्कर स्वयं निर्मित किये जाते हैं। किन्तु बड़े स्तर के व्यवसायियों के लिए उचित भीमाकार यन्त्रों के लिए आज भी भारत विदेशों पर आश्रित है।

श्रेणीकरण यन्त्र (Grading Machine)

फलरस निकालने के लिए चुने जाने वाले फल पूर्ण विकसित तथा पके होने चाहिएं। मातृपक्ष में पकने से ही जिन फलों का रंग, रूप, सुगन्ध तथा पोषकतत्व बना रहे, उन्हें पेड़ पर ही पकाकर एकत्रित करना चाहिए। अन्य फलों को पूर्ण विकसित होने के बाद मातृपक्ष से अलग कर सुचारु रूप से पकाकर काम में ले सकते हैं। इसी प्रकार काम में लिये जाने वाले फल चाहे छोटे हों या बड़े, या टेढ़े-मेढ़े हों, यह देखने की आवश्यकता नहीं होती किन्तु उपर्युक्त फल किसी प्रकार की चोट या सड़न-गलन से ग्रस्त नहीं होने चाहिएँ। इसलिए श्रेणीकरण यन्त्र का यहां कोई विशेष महत्व नहीं है। श्रेणीकरण यन्त्र के बारे में कैनीकरण अध्याय में चर्चा की गयी है।

प्रक्षालन यन्त्र (वाशिंग मशीन) (Washing Machine)

इस यन्त्र के बारे में भी विस्तृत रूप से कैनीकरण अध्याय में चर्चा की गई है। फल एकत्रित करने के पहले तथा बाद में अधिकाधिक धूल तथा सूक्ष्मजीव फलों में लग जाते हैं। वे मुख्यतः प्रकिण्व, फफूंद तथा जीवाणु हैं। इसके अलावा पौध-संरक्षण के लिए पेड़ों पर छिड़काये हुए पदार्थ (गन्धक, ताम्र, साबुन, चूना इत्यादि) भी फलों में लगे हुए होते हैं। अतः बिना धोये काम में लिये जाने से रस शीघ्र खराब हो जाता है, उसमें सड़न-गलन भी हो सकती है। इसलिए उपर्युक्त जीवों तथा रासायनिक पदार्थों को पूर्णरूप से धोकर काम में लेना चाहिए। रासायनिक पदार्थों को दूर करने के लिए गर्म पानी का प्रयोग उचित होगा।

फलों से रस निकालने से पूर्व कुछ ध्यान रखने योग्य बातें

जिन फलों से रस निकाला जाता है, उन फलों की रचना के बारे में ज्ञान होना आवश्यक है। इससे हमें यह पता लगेगा कि फल के कौन से भाग मे रस भरा हुआ होता है। सेब, अनानास, आम, काजूफल, अंगूर आदि का छिलका तथा बीज या गुठली छोड़, शेष सारे भाग मे रस पाया जाता है, परन्तु नींबूवर्गीय फलों के मणिमय स्कन्द में ही रस होता है। नींबूवर्गीय फलो का छिलका कड़वा होता है, इसलिए रस निकालते समय छिलका कूट कर उसका रस, फलरस मे प्रविष्ट नही होना चाहिए।

नींबूवर्गीय फलों से रस

आज संसार मे जितने फलरस निकाले जाते हैं, उनमे से अधिकांश रस नींबूवर्गीय फलो से प्राप्त किया जाता है। इनमे प्रमुख सन्तरा, सातुकुड़ी अथवा माल्टा, चकोतरा, कागजी नीबू आदि हैं। इनसे मे रस निकालने से पूर्व यन्त्र की सहायता से इन्हें दो टुकड़ो मे विभाजित कर दिया जाता है, यह यन्त्र हाथ से या बिजली से चलने वाला होता है। बिजली से चलने वाले यन्त्रो मे पुली तथा बैल्ट भी लगे हुए होते हैं। इनमे धातु निर्मित कप के आकार का फलधारक होता है। फलो को फलधारक मे लगाकर चलाने से धारक मे रहे फल, धारक के विपरीत लगे हुए वृत्ताकार के चाकू की सहायता से दो टुकडो मे कट जाते हैं, जो नीचे रखे हुए बर्तन मे एकत्र किया जाता है।

रस-निचोड़ यन्त्र (जूस एक्सट्रैक्टर) (Juice Extractor)

कतरे हुए फलो को हाथ से चलने वाली या विद्युतीकृत रीमिंग मशीन की सहायता से रस निकाला जाता है। विद्युतीकृत यन्त्र की सहायता से रस निकाला जाता है। विद्युतीकृत यन्त्र बैल्ट तथा पुली की सहायता से चलता है। फलस्वरूप फल के टुकड़ो को रीम मे लगातार चलाने से फलों के भीतर के मणिमय स्कन्दों में से रस निकलकर रीम से होता हुआ यन्त्र के नीचे रखे हुए बर्तन मे एकत्र होता रहता है। चलते यन्त्र मे जब फल टुकडो को रीम पर रखकर-दबाकर रस निकालते हैं तब उसमे से रस चारों ओर बिखर सकता है, जो अपकेन्द्रीकरण क्रिया से होता है, उसको रोकने के लिए प्रत्येक रीम के चारों तरफ एल्युमीनियम का या स्टेनलैसस्टील से बना आवरण लगा हुआ होता है, जिसमे रस निकालने के लिए नीचे एक छिद्र तथा फल यन्त्र मे रखने योग्य एक बड़ा द्वार भी होता है। एक यन्त्र में इसी प्रकार के दो रीम होते हैं—फलस्वरूप एक व्यक्ति एक फल के दो टुकड़ों को एक साथ दोनों तरफ लगाकर रस निकाल सकता है। रीम की आकृति फल टुकड़े की आकृति के विपरीत रूप की होती है। यह रीम बिना सुगन्ध की काष्ट या अल्युमीनियम या संयुक्त धातु से बना हुआ होता है। आजकल स्टेनलैसस्टील का रीम भी उपलब्ध हो रहा है।

उपर्युक्त विधि से जब रस निकाला जाता है तो फल का छिलका फटकर छिलके का तेल फलरस में मिलने की सम्भावना नही रहती। यन्त्र द्रुतगति से चलाया जाए तो छिलके का तेल फलरस मे मिलने की सम्भावना अवश्य रहती है। व्यवसाय शालाओं मे इसी प्रकार

रस निकाले गये नीबूवर्गीय फलों के छिलकों से पैक्टिन तथा मिश्री बनाई जाती है, जिसे उपोत्पन्न के रूप में तैयार कर अधिक मुनाफा कमाया जाता है।

स्क्रू टाइप एक्सट्रेक्टर (Screw Type Extractor)

नीबूवर्गीय फलों का छिलका, बीज तथा अनचाहे भागों को अलग कर उपर्युक्त मशीन की सहायता से रस निकाला जाता है। यह यन्त्र गुफानुमा होता है, जिसके ऊपर फलों को भीतर पहुँचाने के लिए एक द्वार होता है। गुफा के दोनों तरफ द्वार खुले हुए होते हैं जिसमें बेलननुमा पेच को लगाकर एक तरफ से नट-बोल्ट की सहायता से फिट किया होता है। दूसरी तरफ चलाने के लिए हैंडिल लगे हुए होते हैं। गुफानुमा काया के एक तरफ एक छिद्र होता है, जहाँ से एक नली द्वारा रस बाहर आ जाता है। पेच की तरफ के एक अन्य छिद्र से रस निकले हुए फलशेष निकलने का रास्ता बना होता है।

जब फलों को फल पहुँचाने के ऊपरी द्वार से एक बेलननुमा लकड़ी के दण्ड की सहायता से दबा-दबाकर अन्दर भेज दिया जाता है तो पेच को घुमाते समय फल पेच के तथा गुफानुमा काया की दीवारों में फँस जाता है और उसका रस निकल जाता है तथा उसका शेष भाग रगड़ते-रगड़ते आगे चलकर (रस को निकालते-निकालते) मशीन के आखिरी भाग, जहाँ बोल्ट लगा हुआ होता है, पर बने हुए छिद्र से बाहर निकल जाता है। इस फलशेष को जाँच कर यह अनुमान लगाया जा सकता है कि उसमें से सम्पूर्ण रस निकला कि नहीं। अगर पूर्ण रस नहीं निकला हो तो नट-बोल्ट कसकर चलाने से परिपूर्ण रूप से रस प्राप्त किया जा सकता है। अगर बोल्ट अधिक कस जाता है तो यन्त्र को चलाने में कठिनाई होती है। हाथ से चलने वाले लघु यन्त्र से लेकर विद्युत् से चलने वाले बड़े-बड़े यन्त्र तक आज घरेलू स्तर से लेकर बड़े-बड़े कारखानों तक में प्रचलित हैं। एक लघु उद्योग के लिए काम में आने वाले यन्त्र की क्षमता 800 से 1000 फलों का एक घण्टे में रस निकालने की है।

मल्टीपरपज जूस एक्सट्रेक्टर (Multipurpose Juice Extractor)

घर के लिए या लघु-परिरक्षण-शालाओं के लिए उपयुक्त बिजली से चलने वाले इस यन्त्र की सहायता से विभिन्न प्रकार के फल-तरकारियों से रस निकाला जा सकता है। अपकेन्द्रीकरण सिद्धान्त पर चलने वाले इस रस निचोड यन्त्र में फल से छिलका, गुठली आदि निकालकर यन्त्र में आवश्यकतानुसार कतरकर पहुँचाया जाये तो यन्त्र में से केवल रस प्राप्त होगा। अवशेष उसके भीतर ही रहेगा, जो समय-समय पर अलग कर लेना चाहिए। फलशेष यन्त्र की क्षमता के आधार पर रोक लेते हैं। इसके बाद फलशेष को अलग कर छननी तथा अन्य सहायक पुर्जों को साफ कर पुनः चलाया जाता है। क्षमता के बाद भी यन्त्र को चलाते रहें तो वह स्वयं ही बन्द हो जायेगा। इसको पुनः चालू करने के लिए उपर्युक्त बातों के अलावा उसमें पुनः चालू करने के लिए लगे हुए स्विच को दबाना पड़ेगा। इस यन्त्र की सहायता से अनन्नास, सन्तरा, आम, गाजर, टमाटर इत्यादि ही नहीं अपितु केला, अमरूद, आदि से भी रस निकाला जा सकता है। इसमें केवल आम, आड़ू जैसे फलों की गुठली तथा छिलका उतारा जाता है, परन्तु टमाटर, रसभरी जैसे फलों का बीज निकालने की आवश्यकता नहीं होती। कहने का तात्पर्य है, कठोर बीजयुक्त फलों (अमरूद) के बीज को अवश्य निकालना चाहिये।

रोलर टाइप प्रेस

विभिन्न फलों में से रस निकालने के लिए इस प्रकार का यन्त्र काम में आता है। इसमें मुख्यतः दो रोलर होते हैं, जो विपरीत दिशा में घूमते हैं। ये दोनों रोलर इस प्रकार से फिट किए हुए होते है कि फलों को दबाकर रस निकाल देते हैं परन्तु फलों के बीज बिना टूटे-फूटे वहां से फिसलकर अलग हो जाते हैं। नीबूवर्गीय फलों में से रस निकालते समय उनके छिलके में से फांकों को अलग कर यन्त्र में पहुंचाया जाता है। यह यन्त्र भी बिजली से चलने वाले होते है।

साइट्रस जूस एक्सट्रैक्टर (Citrus Juice Extractor)

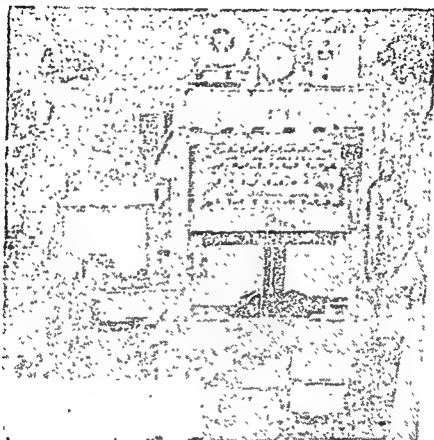
इसे नीबूवर्गीय फलरस निचोड़-यन्त्र भी कहा जा सकता है। यह रोलर टाइप प्रेस से कुछ भिन्न रूप का होता है। इसमें भी दो रोलर होते हैं जो दो विपरीत दिशा में चलते हैं। इसमें कटोरीनुमा फल धारक होते हैं। दोनों रोलरों के आगे नालियां भी होती हैं, रोलर में एक लाइन पर जितने फल धारक होते हैं, उतनी ही नालियां भी होती है। जब इसमें सन्तरा डाला जाता है तब एक-एक सन्तरा लाइन बनकर ढलानरूपी नालियों से चलकर उनके नीचे लगी हुई हाविंग मशीन (फलों के दो टुकड़े करने वाली मशीन या अर्द्ध-करणी) में पहुंचता है, जहां फल दो टुकड़ों में विभाजित होते ही एक-एक टुकड़ा एक-एक रोलर के फल धारकों में अपने आप फँस जाता है। मशीन की बनावट इस प्रकार रूपांकित की हुई होती है। यह फल-रोलर घूमने के कारण लाइन की लाइन आकर दूसरे रोलर में फिट किये हुए रोम के दबाव में आकर रस ही नहीं बल्कि सन्तरे के छिलके का तेल भी अलग रास्ते से होते हुए एकत्र हो जाता है तथा छिलका तीसरे स्थान पर।

भारतीय सामाजिक, आर्थिक परिस्थिति को ध्यान में रखकर यह यन्त्र केन्द्रीय खाद्य प्रौद्योगिक अनुसन्धान, मैसूर में बनाया गया है। जिसका चित्र अन्यत्र दिया हुआ है। यह यन्त्र भारतीय परिस्थिति के बड़े-बड़े उद्योगों में आज काम में लिया जाता है।

बास्केट प्रैस (Basket Press)

काष्ट से बनी एक ट्रे उसके ऊपर एक ही आकार तथा मोटाई की काष्ट की पट्टियों द्वारा निर्मित एक ढोलनुमा बास्केट रखी हुई होती है। इसके अन्दर काष्ट का बना एक चकलेनुमा पुर्जा होता है। ट्रे, बास्केट दोनों एक लोहे से बने ढांचे के बीच में रखे हुए होते हैं। लोहे के ढांचे के ऊपर सेंटर के केन्द्र में पेचनुमा हैंडिल लगा हुआ होता है, जिसके नीचे बास्केट के केन्द्र पर लोहे से बना छोटा-सा एक चकला लगा होता है। जिस फल में रस निकालना होता है उसे कपड़े में लपेटकर बास्केट के अन्दर रखकर उसके ऊपर काष्ट से बना चकला रखकर पेच वाली हैंडिल चलाने से पेच के नीचे लगा हुआ लोहे का चकला लकड़ी के चकले के केन्द्र पर पहुंचकर उस पर दबाव डालना जाता है, जो ऊपर के पेच वाले हैंडिल को घुमाने से उत्पन्न होता है, फलस्वरूप कपड़े में रखे हुए फल मर्दित होते हैं और उनमें से रस निचुड़कर नीचे रखी हुई ट्रे में एकत्र होता है, वहां से नली द्वारा बर्तन में एकत्र कर लिया जाता है। इसी प्रकार का यन्त्र आमतौर पर अंगूर का रस

निकालने के काम आता है, जो मदिरा, सिरका, फलरस आदि परिरक्षण करने के काम मे लिया जाता है। इस यन्त्र मे गाजर, चुकन्दर तथा अन्य फलो से भी रस निकाला जा सकता है।

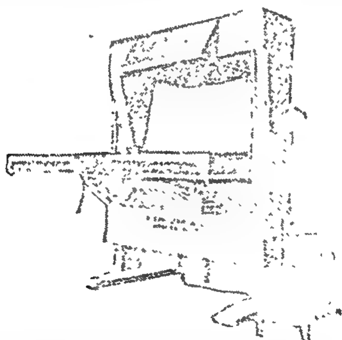


चित्र संख्या 22

बड़े-बड़े कारखानो मे नीबूवर्गीय फलो से रस ही नही अपितु साथ-साथ
उसके छिलके का तेल भी प्राप्त करने योग्य इस यन्त्र का
रूपांकन C. F. T. R. I. मे किया गया था जिसकी
भारत के बड़े-बड़े कारखानो मे ही नहीं अन्य
देशों में भी मांग है।

हाइड्रोलिक प्रेस (Hydraulic Press)

इसकी भी रचना बास्केट प्रेसनुमा ही है, (चित्र सख्या 23) लेकिन यह जल या तेल की सहायता से स्वचालित होते हैं। इसकी क्षमता के अनुसार इसमे दो या अधिक पोटलियां बनाकर एक के ऊपर एक रखकर रस निकाला जा सकता है। यह यन्त्र बड़े कारखानो म काम मे लिये जाते हैं। सेब का छिलका उतारकर, कतरकर इसमे पहुँचाया जाता है। सरमफल, काजूफल सन्दलन कर या कतरकर इसमे रखे जाते हैं, जैसे बास्केट प्रेस मे किया जाता है। अनन्नास का बाहरी छिलका उतारकर उसके बीच का पित्त (लकड़ी) निकालकर उपर्युक्त दोनो यन्त्रों म रस निकालने के लिए पहुंचाया जाता है। फलों को उपर्युक्त मशीन द्वारा रस निकालने के लिए सन्दलन करने की आवश्यकता होती है। इसके लिए फ्रूटमिल या फ्रूटक्रशर काम मे लिये जाते हैं। यह यन्त्र एक घण्टे मे 8 क्विण्टल फलो को सन्दलित कर देता है। सन्दलन, निचोड़ इत्यादि क्रियाएँ एक साथ सम्पन्न कराने वाला यन्त्र भी आज प्रचलित है। टमाटर, अंगूर, अनन्नास, आम आदि फलो का सन्दलन करने वाले एक यन्त्र का नाम है ग्रेपक्रशर, जो खासतौर मे अंगूर का सन्दलन करने के उद्देश्य से ही बनाया गया है। (चित्र 22)



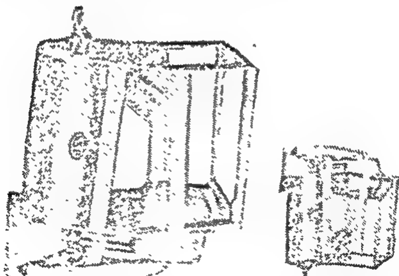
चित्र सख्या 23
फल-तरकारियों से रस निकालने को ही नहीं अपितु पॅक्टिन निचोड़ प्राप्त करने के लिये भी बड़े-बड़े कारखानो मे इस यन्त्र का प्रयोग किया जाता है, जिसको हाइड्रोलिक जूस प्रेस कहा जाता है। हाथ से चलने वाली एक अन्य जूस एक्सट्रैक्टर को बास्केटप्रेस कहा जाता है जो सन्दर्भ वर्णित है।

उपर्युक्त यन्त्रों के अलावा घरेलू स्तर पर तथा कुटीर-उद्योगों के योग्य बहुत से स्वचालित लघुयन्त्र आज भारतीय विपणी में प्राप्त किये जा सकते हैं, जो काष्ट, प्लास्टिक, एल्युमीनियम, स्टेनलैस स्टील आदि के बने होते हैं। इनमें किचनमास्टर, मिक्सी सार्वजनिक रूप से काम में लिये जाते हैं।

पल्पिंग मशीन (Pulping Machine)

इसको लुगदीकरण यन्त्र कहा जा सकता है। उपर्युक्त यन्त्र की सहायता से निकले हुए फलरस को छानने की आवश्यकता होती है, लेकिन पल्पिंग मशीन में लुगदीकरण किया जाए तो रसों को छानने योग्य छलनी, ब्रुश आदि इसमें लगे हुए होते हैं। बिजली से चलने वाले इस यन्त्र के कल-पुर्जे जो फल तथा फलरस के सम्पर्क में आते हैं, स्टेनलैसस्टील के बने होते हैं। आम, टमाटर, नीबूवर्गीय फल, अंगूर, अनन्नास आदि फलों का संदलन करने तथा उनमें से रस निकालने के लिए यह अत्यन्त उपयुक्त है। यह यन्त्र फलरस, जैम, केचप, चटनी आदि बनाने के विभिन्न कामों के लिए उपयुक्त है। इस प्रकार के एक छोटे यन्त्र की सहायता से 8 घण्टे में 1000 किलो तथा बड़े यन्त्र से 4000 से 8000 किलो फलों का लुगदीकरण किया जा सकता है या रस निकाला जा सकता है।

गुफानुमा इस यन्त्र के ऊपरी द्वार से जब फलों को भीतर पहुँचाकर चलाते हैं, दूसरे द्वार से फलरस तथा गूदा निकलते हैं, तीसरे द्वार से फल शेष निकल जाता है। इसी प्रकार इस यन्त्र को लगातार चलाया जा सकता है। (चित्र संख्या 24)।



चित्र संख्या–24

विभिन्न फल-तरकारी, विशेषकर आम, सेब, नासपाती, अमरूद, टमाटर इत्यादि को गूदा बनाने के लिये कारखानों में काम में लिये जाने वाले इस यन्त्र का नाम है–पल्पर। विभिन्न क्षमता से पल्परज् बाजार से प्राप्त हैं। चित्र में दो प्रमुख पल्पर दिखाये गये हैं।

फिल्टर प्रेस (निस्यन्दक प्रेस) (Filter Press)

पूर्व चर्चित यन्त्रों की सहायता से निकाले हुए रस में फलों के कण, पेक्टिन व गम,

गोंद इत्यादि मिले हुए होते हैं, जिन्हे छानने की आवश्यकता होती है। इस छनन-क्रिया को निस्यन्दन कहते हैं। इस क्रिया में कुछ विशेष प्रकार के फिल्टर प्रेस को काम में लिया जाता है। इसी प्रकार के निष्यन्दक प्रेस मे कैनवास, कपास, चीनी मिट्टी से बनी छिद्रदार पट्टियाँ, काष्ट पट्टियाँ एस्बस्टोस आदि की सहायता से निष्यन्दन क्रिया सम्पन्न कराई जाती है। ध्यान रखें कि उपर्युक्त वस्तुओं में से एक या दो को काम में लिया जाता है, परन्तु लघु उद्योगशाला में त्रिकोण आकृति के जाली बैगनुमा बनाये गये मोटे कपड़े से निर्मित थैले की सहायता से रस को छान लिया जाता है, लेकिन इन थैलियो मे भी निष्यन्दक सहायक (फिल्टर एड्स) भी मिलाये हुए होते है। साधारणतया इनफ्यू-सोरिया नामक मिट्टी इसके लिए प्रयोग मे लाई जाती है। कर्नाटक प्रान्त मे प्राप्त एक प्रकार की चिकनी मिट्टी भी इसके लिए योग्य मानी जाती है। यह मिट्टी कई बार धोकर निर्जमीकरण कर, चूर्ण बनाकर काम में ली जाती है। एक बार काम आने के बाद इसे वैद्युत भट्टियो (इलैक्ट्रिक ओवन) मे रखकर अग्निकरण कर, धोकर, सुखाकर पुनः काम मे लिया जाता है।

डीएरियेटर (Deareator) अथवा निर्वातनीकरणी

फल व तरकारियो का रस निकालते समय उसमें वायु मिश्रित हो जाना स्वाभाविक है। इस वायु-मिश्रण से फलरस के गुण मे कमी आ जाती है। इसलिए फलरस निकालते समय वायु मिश्रण नहीं होने देना चाहिए। इसी परिस्थिति मे ही बनाये गये यन्त्रो द्वारा रस निकालना चाहिए, लेकिन यह सम्भव नही है। इसलिए संयुक्त राज्य अमेरिका, कैनाडा, ब्रिटेन आदि विकसित देशों में डीएरियेटर की सहायता से फलरस में मिली हुई वायु को निकाला जाता है, परन्तु भारतीय परिस्थिति मे उपर्युक्त यन्त्र मंहगा पड़ता है। यन्त्रो की सहायता से "डीएरियेटर के" वैक्यूम चैम्बर (रिक्त कोष्ठ) में फलरस बर्षाकर, रस में मिश्रित वायु तथा अन्य गैस को बाहर निकाल दिया जाता है।

पास्तुरीकरणी तथा पास्तुरीकरण

फलरसों को 88° से 90·6 डिग्री सेन्टीग्रेड तक पास्तुरीकरण किया जाये तो उसमे प्रविष्ट प्रकिण्वों को निष्क्रिय बनाया जा सकता है, परन्तु पास्तुरीकरण द्वारा सूक्ष्मजीवों के बीजाणुओ का नाश नहीं होता। खासतौर से बेसिलस सबटलिस, बे० मसन्ट्रीकसन आदि। अम्लयुक्त फलरस में इसकी बढ़ोतरी नहीं होती। इसलिए फलरस मे फफूंद प्रकिण्व आदि को नाश करना ही पास्तुरीकरण का मुख्य उद्देश्य है। 60° से 66° सेन्टीग्रेड तक (140° से 150° एफ०) अल्प समय ताप देने से प्रकिण्व का नाश सम्भव है। परन्तु ऊष्मारोधी फफूंद के बीजाणुओ के नाश के लिए 79·4° से० (175° एफ०) से 20 मिनट गर्म करना काफी है। फफूंदों की बढ़ोत्तरी के लिए ऑक्सीजन (प्राणवायु) अनिवार्य है। इसलिए रस को कार्बनीकृत किया जाए तो फफूंद बाधा को रोका जा सकता है। कार्बनीकरण शक्तियुक्त हो तो उस रस को 65° से (150° एफ०) से अधिक ताप पर पास्तुरीकरण की आवश्यकता नहीं होगी व प्रकिण्व का नाश भी सम्भव होगा। फिर भी इस का अभिप्राय है कि साधारणतया अधिक अम्लयुक्त रस को 71° से० से 73° से० तक (160° से 165° एफ०) ताप मे तथा अल्प अम्ल वाले रस को 79.4° सेन्टीग्रेड (175° एफ०) ताप मे पास्तुरीकरण करना चाहिये। पास्तुरीकरण विभिन्न विधियों द्वारा सम्पन्न किया जा सकता है—स्वचालित यन्त्रों द्वारा या साधारण उपकरणों द्वारा। पास्तुरीकरण

को फ्लैश या क्षण पास्तुरीकरण, बल्क या ढेर पास्तुरीकरण, कंटाइनर या वाहिका में पास्तुरीकरण आदि वर्गों में विभाजित किया जा सकता है।

क्षण (फ्लैश) पास्तुरीकरण (Flash Pasturization)

ढेर या बल्क (Bulk) फलरस पास्तुरीकरण कर पीपों में रखे हुए फलरस की सुगन्ध, वर्ण आदि में कमी आ जाती है। दीर्घ समय तक ऊष्मीकरण प्रयोग से ही यह कमी आती है। इस कमी को दूर करने के लिए चस नामक वैज्ञानिक ने क्षण-पास्तुरीकरण की सलाह दी। एक निश्चित समय तक पास्तुरीकृत फलरस को तुरन्त शीतलीकरण कर, पहले से ही निर्जर्मीकरण की हुई बोतल में भरकर सीलबन्द करने की प्रक्रिया को भी 'क्षण पास्तुरीकरण' कहा जाता है। इसके योग्य यन्त्र भारत में प्रचलित नहीं हैं। इस क्रिया से फल की सुगन्ध व विटामिन 'सी' आदि को क्षति नहीं होती। इसके अलावा सचयन किये गये फलरस में धुंधलापन भी नहीं होता। इसके अलावा इसी प्रकार तैयार किये हुए फलरस में जला हुआ सा स्वाद भी नहीं होता। फलरस जिस वाहिका में संचयन किया हुआ है, वहाँ से लिपटी हुई ताम्र-नली में से होते हुए एक निश्चित वेग में बहता है। उपर्युक्त नलियों के ऊपर चारों तरफ दूसरी नलियों में शक्तियुक्त भाप प्रभावित होती है। एक निश्चित ताप में रस नीचे से ऊपर की तरफ तथा भाप ऊपर से नीचे की तरफ प्रवाहित होती रहती है। इसी प्रकार ऊष्मीकृत फलरस नीचे से बहकर ऊपर से होते हुए दूसरी नली के ऊपर होते हुए बहने लगता है, तब शीतजल इसके विपरीत अर्थात् नीचे से ऊपर बहकर बाहर निकल जाता है। इसी प्रकार एक निश्चित तापमान पर प्रथम नली में पास्तुरीकरण किये हुए फलरस को नली में से बाहर बिना आये ही दूसरी नली में भेजकर जल द्वारा निश्चित तापमान पर ठण्डा कर बिना वायु सम्पर्क से सीधे बोतलों में भरकर तुरन्त सील किया जाता है। यन्त्र के भीतर ताम्र-नलियों की क्षमता तथा चाहे गये तापमान के आधार पर भाप को प्रवेश कराया जाता है। ताप तथा भाप दबाव को नापने योग्य मीटर भी लगे हुए होते हैं। इस यन्त्र में जब पास्तुरीकरण किया जाता है तब वास्तव में चाहे गये तापमान से 8° से 10° अधिक ताप प्रदान करना आवश्यक है। विभिन्न पास्तुरीकरण के लिए भिन्न-भिन्न तापमान का प्रयोग किया जाता है। यह रस के निष्कासिता, गाढ़ापन, रस तथा जल की आपेक्षिक ऊष्मा, भाप चक्रमण, बाहर निकलने वाले गर्म जल के वेग आदि कारकों के आधार पर आधारित है।

बल्क (Bulk) या ढेर पास्तुरीकरण

बड़ी व्यवसायशालाओं में निर्यात करने के उद्देश्य से जब फलरस-पास्तुरीकरण किया जाता है तब यह क्रिया प्रयोग में ली जाती है। इसको दो प्रकार से सम्पन्न किया जा सकता है।

(1) कंटीन्यूअस या धारावाहिक पास्तुरीकरण

इस क्रिया के लिए काम में ली जाने वाली मशीन एल्युमीनियम, स्टेनलेसस्टील आदि से बनी एक या उससे अधिक नलियों से युक्त होती है, जिसके चारों तरफ दूसरी नलियों से पैक किया हुआ होता है। जब बीच के एल्युमीनियम, स्टेनलेसस्टील से बनी नलियों से रस बहते समय उसके चारों तरफ की दूसरी नलियों में से चाहे गये तापमान

पर ऊष्मीकृत जल या भाप को प्रवाहित कराकर रस के चाहे गये तापमान पर गर्म कर पास्तुरीकरण सम्पन्न किया जाता है। परन्तु उपर्युक्त क्रिया के लिए भाप की बजाय उबलते पानी को ही प्रयोग में लाया जाता है।

डिसकन्टीन्यूअस (Discontinuous) या अधारावाहिक पास्तुरीकरण

स्टीम जैकेटेड यानि जिस बर्तन की काया की दीवारों के भीतर भाप बहने लायक दूसरी दीवार हो, उसको ही भापयुक्त केतली कहा जाता है। इसी प्रकार की केतली जैम, जैली, कैचप, सॉस, इत्यादि बनाने के अलावा चाशनी बनाने तथा फल-तरकारियों के विवर्णीकरण के लिए भी काम में ली जाती है। यह एक बहुद्देश्यीय उपस्कर है।

उपर्युक्त केतली में जब भाप, प्रवेश कराकर पास्तुरीकरण सम्पन्न कराया जाता है तो इसे अधारावाहिक पास्तुरीकरण कहते हैं। इस प्रकार आप चाहें तो उपर्युक्त केतली के अभाव में एल्युमीनियम या स्टेनलैसस्टील भगोनों में रस भरकर धुंआ रहित चूल्हे में चाहे गये तापमान पर पास्तुरीकरण कर सकते हैं, लेकिन इसके लिए थर्मामीटर की सहायता से उचित तापमान पर आते ही इच्छित समय पर बन्द करना होगा। जब केतली में इस क्रिया को सम्पन्न कराते हैं तो यन्त्र स्वयं ही चाहा गया तापमान सूचित कर देगा। क्योंकि इसमें प्रेशर गेज लगा है।

उपर्युक्त क्रिया वैद्युत केतलियों द्वारा भी सम्पन्न करायी जा सकती है। इस प्रकार की केतली में रस भरकर कार्बन इलैक्ट्रोड द्वारा पास्तुरीकरण किया जाता है। इसके लिये 110 वाल्ट विद्युत् चाहिये। इलैक्ट्रोड्स स्वयं गर्म नहीं होती, इसलिए रसों में जला हुआ सा स्वाद उत्पन्न नहीं होता।

रसयुक्त सीलबन्द वाहिकाओं में पास्तुरीकरण

विधिवत् रूप से तैयार किये गये फलरस को निर्जर्मीकृत कैनों में या बोतलों में चाहा गया शीर्ष स्थान छोड़कर भर दिया जाता है तथा सीलबन्द कर इन्हें जल-ऊष्मक की सहायता से पास्तुरीकरण किया जाता है। भिन्न-भिन्न फलों को भिन्न-भिन्न समय देना आवश्यक है। यह प्रत्येक फलों के पास्तुरीकरण के समय व्यक्त किया गया है।

भराई विधि तथा उपस्कर

बड़ी व्यवसाय-शालाओं में स्वचालित यन्त्रों के प्रयोग से फल-तरकारी का रस ही नहीं, अन्य उत्पाद भी वाहिकाओं में भरा जाता है। कुछ व्यवसायशालाओं में अर्द्ध स्वचालित यन्त्रों द्वारा भराई का काम सम्पन्न कराया जाता है, परन्तु कुटीर तथा घरेलू स्तर के व्यवसायों से यह प्रक्रिया मानव स्वयं करता है।

स्वचालित यन्त्रों में वृत्ताकार रसयुक्त नलियाँ होती हैं। पोवर, निर्जर्मीकृत बोतल या कैन बेल्ट की सहायता से उपयुक्त यन्त्र में जहाँ रसयुक्त नलियाँ हैं पहुँचते ही वहाँ हरेक वाहिका के ऊपर लगी हुई टूंटी स्वयं खुलकर वाहिका में उचित मात्रा में रस भर देती है। फलस्वरूप निश्चित वजन से टूंटी बन्द हो जाती है, रस से भरी वाहिका उस टूंटी से हट-कर जहाँ सीलबन्द करने का यन्त्र है, वहाँ स्वयं पहुँचकर सीलयुक्त हो जाती है। यह प्रक्रिया पहले वाहिकाएँ एक सीधी रेखा की भांति बेल्ट की सहायता से जाकर पहले रस भरने के यन्त्र के चारों तरफ एक गोलाकृति बनाकर भराई तथा सीलबन्द आदि कर, फिर सीधी

लाइन से संचयन के लिए बैल्ट द्वारा ही पहुंच जाती है। इसमे भराई यन्त्र के चारों तरफ छोड़कर बाकी क्रियाएँ बैल्ट द्वारा सम्पन्न होती हैं। भराई मशीन के चारों तरफ के प्लेट-फार्म की सतह तथा भराई मशीन की टूंटियां एक-दूसरे से सम्बन्धित होने से, जब वाहिका खाली पहुंचते समय भराई मशीन के नीचे की सतह ऊंची रहती है—फलस्वरूप टूंटी खुल जाती है। जब वाहिका भर जाती है, उसकी भजन से टूंटी बन्द हो जाती है। इस वाहिका के हटते ही दूसरी वाहिका यन्त्र के स्वचलन से वहां पहुंच जाती है जिसमें उपर्युक्त क्रियाएँ होनी चालू हो जाती हैं। इसी प्रकार हजारों की तादाद में वाहिकाएँ भरी जाती हैं।

कुछ व्यवसायशालाओं मे रिक्तक (वैक्यूम) भराई यन्त्र द्वारा रस आदि वाहिकाओं मे भरा जाता है। इस यन्त्र मे बोतलों की लम्बाई के अनुसार यन्त्रों को क्रमीकरण किये जाने का प्रबन्ध भी है। बोतलों को यन्त्र द्वारा स्वयं ही रिक्तीकरण कर उसमे रस भरा जाता है।

रस निर्मलीकरण

फलों को जब निचोड़ा जाता है तब उसमें फलकण, गूदाकण, छिलकाकण, बीजकण, गोंद, प्रोटीन तथा पैक्टिन आदि के कण रस के साथ घुले हुए होते हैं। परन्तु यह पतली परत से पार नहीं कर पाते। उपर्युक्त पदार्थों को कलिलीय (कोलायडल) पदार्थ कहा जाता है तथा उस द्रव (फल-रस), जिसमें ये पदार्थ घुले हुए होते है, कलिलीय तरल (कोलायडल फ्लुइड) कहा जाता है। परिरक्षण व्यवसाय के प्रारम्भ मे पश्चिमी देशों में इस प्रकार के कणयुक्त फल-रस को पसन्द नही किया जाता था। इसलिये इन कणों को दूर करना, उस समय व्यवसायियों के लिये अनिवार्य था। परन्तु कलिलीय (कोलायडल) कणो को दूर करने से फलरस के यथार्थ गुण मे कमी आ जाती है। यह तथ्य बाद में मालूम हुआ। इसलिए आजकल कुछ फलरसों को छोड़कर अन्य फलरसो में से कोलायडल पदार्थ को अलग नही किया जाता है। कलिलीय (कोलायडल) पदार्थों को अलग करने की क्रिया को ही निर्मलीकरण या शुद्धीकरण कहा जाता है।

जब रस मे निर्मलीकरण की आवश्यकता महसूस की जाए तो उसको खासतौर से अंगूर, सेब, नीबूवर्गीय फलरस इत्यादि को, छलनी की सहायता से छाना जाता है या रस को कुछ दिनों के लिए रखकर उसमें पाये जाने वाले अनचाहे पदार्थों को उसके पैंदे मे बैठने दिया जाता है। इसके लिए गहरे पीपे या प्लास्टिक, कांच आदि से निर्मित गहरी बोतलें काम में ली जाती हैं। काफी समय बिना छेड़े ही रखने से सुस्पष्ट रस वाहिका के ऊपर तैरता नजर आयेगा। इस रस को बिना छेड़े सावधानी से रबर नली की सहायता से साई-फनीकरण द्वारा अलग किया जा सकता है। परन्तु कोलायडल पदार्थ अलग नहीं हो पाता। इन्हें यन्त्र की सहायता से छानते हैं। इन यन्त्रों में विभिन्न मेज की छलनियां लगी हुई होती हैं। इनके द्वारा रस का निस्यन्दन किया जाता है। इन यन्त्रों को स्ट्रेनिंग मशीन कहते हैं।

निर्मलीकरण सहायक

फलरस के निर्मलीकरण के लिए कुछ सहायक पदार्थ भी काम मे लिये जाते हैं, इन्हें ही निर्मलीकरण सहायक कहा जाता है। जलाटिन, टैनिन-जलाटिनमिश्र, दूध, अण्ड-श्वेती, केसीन (किलाडी) आदि शुद्धीकरण सहायक के रूप मे काम मे लिये जाते रहे हैं।

टैनिन-जलाटिनमिश्र, केसीन, बन्टोनाइट मिट्टी, विभिन्न किस्म के किण्वक (एन्जाइम), अन्डस्वेदी आदि आज भी सार्वजनिक रूप से काम मे लिए जाते हैं।

किण्वक (एन्जाइम)

किण्वक कलिलीय (कोलायडल) पदार्थों को छिन्न-भिन्न कर, अलग करने में मदद करते हैं, लेकिन जलाटिन, अण्डस्वेदी, केसीन आदि रासायनिक वस्तु की भाँति प्रक्रिया कर कलिलीय (कोलायडल) पदार्थ की घुलनशील शक्ति को बढाकर रस में से अलग करने में सहायक होती है।

अण्डस्वेदी (Egg Albumen)

अण्डस्वेदी चूर्ण बाजार में मिलता है, इसको उचित मात्रा में गर्म पानी में भिगोकर फेंट लिया जाता है। थोड़ी मात्रा में रस लेकर प्रथम परीक्षण कर निश्चित करने के बाद ही अधिक रस मे इसका प्रयोग करना चाहिए। क्रूस के कथानुसार लाल किस्म के अंगूर में 90 लीटर के लिये 100 से 150 ग्राम, मस्काट किस्म के अंगूर के लिये 200 ग्राम निर्जलीकृत अण्डस्वेदी चूर्ण की आवश्यकता होगी। इससे 71° से 80° सेन्टीग्रेड तक ताप में फलरस में मिलाया जाय तो अण्डस्वेदी घनीकरण से पेंदे पर जाकर बैठ जाती है। अपने साथ अण्डस्वेदी, कोलायडल पदार्थों को भी साथ ले जाती है। निर्मलीकरण पदार्थ मिलाकर पास्तुरीकरण करते समय तापमान थोड़ा बढाना भी आवश्यक होता है।

केसीन (किलाड़ी)

संघनीकृत दूध (मक्खन रहित) में हाइड्रोक्लोरिक अम्ल या अन्य कोई धातु अम्ल मिलाने से केसीन अलग हो जायेगी। यह घुलनशील क्षारीय पदार्थ में एक है। इसी प्रकार उपचारित केसीन भी बाजार में उपलब्ध है। दो प्रतिशत केसीन मिला हुआ घोल तैयार कर फलरस में मिलाया जाये, तो अम्लरस का स्यन्दन किया जायेगा। 48 घन्टे के अन्दर रस पूरी तरह निर्मलीकृत (स्यन्दनीकृत) हो जायेगा। फलस्वरूप ऊपर से निर्मलीकृत रस को अलग किया जाना सम्भव है।

जिलेटिन (Gelatine) या श्लेष

उपर्युक्त निर्मलीकरण पदार्थों से उत्तम है, जिलेटिन जानवरों के चमड़े तथा हड्डियों में पाया जाने वाला एक पदार्थ है। यह स्वेदी पदार्थ (एलब्युमिनिस सबस्टेंस) से बना हुआ होता है। इसमें किसी प्रकार की सुगन्ध, वर्ण या स्वाद नहीं होता, लेकिन रस मे इसका प्रयोग हर व्यक्ति द्वारा सम्भव नहीं है, इसमे अनुभव की अधिक आवश्यकता होती है। ढेर सारे रस मे इसका प्रयोग करने से पहले, थोड़ी मात्रा मे रस लेकर जलाटिन की प्रक्रिया शक्ति मालूम करके, बाद मे इसका प्रयोग ढेर सारे रस में करना चाहिए, क्योंकि भिन्न-भिन्न जलाटिन की क्रिया शक्ति भिन्न-भिन्न होती है।

यदि अनुभव की कमी से या लापरवाही से जलाटिन का प्रयोग किया जाता है तो फलरस एक दृष्टि से निर्मलीकृत लगेगा, लेकिन संचय के समय (भविष्य में) उसमें धुंधलापन हो जायेगा।

गिरधारीलाल तथा साथियों के अनुसार सेब रस के लिए खास तौर से थाल्डमिन यस्लोग्यूटन, विभिन्न किस्म के सेबों को 43.5 ग्राम टैनिन तथा 71 ग्राम जलाटिन मिलाया जाये तो सेब रस सुस्पष्ट हो जायेगा। परन्तु उनके द्वारा दिए गए प्रतिवेदनों के अनुसार

460 लीटर रस के लिए 42.6 से 170.4 ग्राम जलाटिन तथा 14 से 42.6 ग्राम टैनिन काफी है। रस को अच्छी तरह घोलकर टैनिन मिलानी चाहिए। यह रस 18 से 24 घण्टे के अन्दर अवक्षेपित (प्रिसिपिटेटेड) हो जाएगा, अर्थात् सारे मलिन पदार्थ नीचे बैठ जायेंगे तथा निर्मलीकृत रस स्पष्ट होकर ऊपर तैरता रहेगा।

ऐसे भी प्रतिवेदन मिलते हैं कि कागजी नींबू के रस में 8.4 प्रतिशत टैनिन, 11.2 प्रतिशत जलाटिन तथा 350 पी. पी. एम. के अनुपात में सल्फरडाईऑक्साइड मिलाया जाए तो निमलीकृत स्पष्ट रस प्राप्त हो जायेगा। केन्द्रीय खाद्य प्रौद्योगिकी अनुसन्धान सस्थान के अनुसार एक किलो काजू फल रस मे 440 मिलिग्राम जलाटिन मिलाकर 15 मिनट रखा जाए तो रस स्पष्ट हो जाता है।

इनफूसोरियल मिट्टी (Infusorial Earths)

इनफूसोरियल मिट्टी बाजार मे मिलती है। 100 मिलीलीटर जल मे 5 ग्राम के अनुपात मे यह मिट्टी मिलाकर कुछ दिन रखी जाये तो चिकनी मिट्टी परिक्षेपण (Precipitation) हो जायेगी। इसी प्रकार के घोल में से करीब 2.5 ग्राम चिकनी मिट्टी प्रति लीटर रस के हिसाब से मिलाकर 60° सेन्टीग्रेड ताप पर गर्म किया जाये तो शीघ्र स्वच्छीकृत हो जायेगा।

स्पेनिश चिकनी मिट्टी, कयोलिन, बेंटोनाइट चिकनी मिट्टी आदि इस वर्ग की कुछ अन्य मिट्टियाँ हैं जो निर्मलीकरण के लिए काम मे ली जाती हैं। इन्हें धोकर शुद्धीकरण कर 0.5 से 0.6 प्रतिशत मिलाकर फिल्टरप्रेस के द्वारा छान लिया जाता है। यह प्रतिवेदन गिरधारीलाल तथा साथियो का है।

"क्या कोयले के द्वारा भी फलरस का निर्मलीकरण हो सकता है ?" इसके सम्बन्ध में भी हुए अध्ययन से मालूम हुआ कि रस के वर्णांश, सुगन्ध आदि को भी कोयला अवशोषण करता है, फलस्वरूप कोयले से निर्मलीकरण उचित नही माना गया।

किण्वक (एन्जाइम) Enzyme

फलरस मे कुछ विशेष किण्वकों का निर्मलीकरण के लिये प्रयोग किया जाता है। किसी एक किण्वक को आवश्यकतानुसार जल मे घोल बनाकर 8 से 10 घण्टे बिना छेड़े रखा जाये तो पेक्टिन जल अपघटन होकर फलरस निर्मलीकृत हो जाता है। सेबरस को उपर्युक्त क्रिया के पश्चात् पास्तुरीकरण रहित अवस्था मे बोतलीकरण किया जाये तो भविष्य मे उस रस मे टैनिन बोतल के नीचे जमी हुई दिखाई देगी। किण्वक द्वारा फलरस मे पाया जाने वाला वनस्पतिमण्ड (स्टार्च) प्रोटीन आदि भी अलग किया जा सकता है। कुछ विशेष किण्वकों के नाम इस प्रकार हैं :—पेक्टिनोल, पेक्टोसाइन, ड्को, फिल्ट्रागोल आदि जो विपणी मे प्राप्त होते हैं। पेक्टिक एन्जाइम (पेक्टिक किण्वक) चूर्ण के तथा घोल के रूप में प्राप्त होते हैं, लेकिन भारत मे पेक्टिक एन्जाइम चूर्ण का निर्माण नहीं किया जाता। इसके लिये विदेशों पर निर्भर रहना पड़ता है, लेकिन आज इस कमी को दूर करने के लिए केन्द्रीय खाद्य प्रौद्योगिक अनुसन्धानशाला मे एक पेक्टिक एन्जाइम का निर्माण किया गया है जो विभिन्न फलो के रस का निर्मलीकरण करने के लिए उपयोगी सिद्ध हुआ। यह घोल के रूप मे है, इस पेक्टिन घोल को 1 से 2 प्रतिशत मिलाने से फलरस 7 से 8 दिन के भीतर निर्मलीकृत हो जाता है जबकि आमतौर पर 2 से 3 महीने का समय इस काम

के लिए लगता था। इसी प्रकार कागजी नींबू के रस मे उपर्युक्त पैक्टिक एंजाइम प्रयोग कर 48 से 72 घण्टे के अन्दर निर्मलीकरण किया गया, जबकि साधारणतया बिना पैक्टिक एन्जाइम प्रयोग से यह कार्य 3 से 6 महीने मे पूरा होता था। ऊष्मा तथा किण्वक के सम्बन्धात्मक अध्ययन की सेब-रस परिरक्षण के समय चर्चा की जायेगी।

पैक्टीनोल (Pectionl)

पैक्टीनोल ए०, बी०, सी०, आदि विविध किस्म के होते हैं। ये पैनसीलियम ग्लावकम नामक फफूंद से प्राप्त होते हैं। फलरस का निर्मलीकरण करने के लिये यह उपयुक्त किण्वक है। प्रत्येक फलरस में प्रत्येक प्रकार के पैक्टिनोल काम में लिये जाते हैं। अंगूर के रस तथा मदिरा के लिये डब्लू. ग्रेड, सेबरस के लिए ए० ग्रेड तथा सरसफल तथा अन्य शीत प्रदेशीय फलरसो के लिए एम. ग्रेड के पेक्टीनोल काम मे लिये जाते हैं।

फिल्ट्रागोल (Filtragol)

इस किण्वक के प्रयोग से रस में पाये जाने वाले पैक्टीन, पदार्थ को वाहिका के पेंदे में जमने के लिए प्रेरित करते हैं। ऊपर तैरते हुए स्पष्ट रस को ऊपर से निकाल कर निष्यन्दन किया जा सकता है। निष्यन्दन क्रिया से रस को निर्मलीकरण करते समय जो सुगन्ध, वर्ण आदि नष्ट होते हैं, वह किण्वक प्रयोग से नहीं होता।

फलरस तथा फलपेयों का परिरक्षण

उपर्युक्त यन्त्रो की सहायता से फलो को निचोड कर निकाले गए रस की निर्वातीकरण, निर्मलीकरण आदि चाही गई क्रियाएं सम्पन्न कराकर, उचित तरीके से पास्तुरीकरण कर इसमें परिरक्षक मिलाकर या बिना मिलाये ही बोतलीकरण किया जाता है। पहले ही कहा जा चुका है कि फलरस में से वायुमिश्रण को निकलकर तुरन्त इस रस को जर्मप्रूफ फिल्टरप्रैस द्वारा छानकर सीधे बोतलीकरण किया जाता है। इस क्रिया से फलरस निर्मलीकरण ही नहीं बल्कि निर्जर्मीकरण भी हो जाता है। इसलिए इसमें न तो पास्तुरीकरण की आवश्यकता होती है, न ही किसी प्रकार का परिरक्षण मिलाने की, परन्तु भारत जैसे विकासशील देशों के लिये जर्मप्रूफ फिल्टर प्रैस का प्रयोग आर्थिक दृष्टि से उचित नहीं माना गया, क्योंकि इस विधि से तैयार किया गया रस भारतीय उपभोक्ताओं की क्रयशक्ति के बाहर हो जाता है। इसलिए आज की परिस्थिति मे उपर्युक्त निष्यन्दक का प्रयोग अधिक औचित्यपूर्ण नहीं है।

रासायनिक परिरक्षक

अपास्तुरीकृत फलरस मे रासायनिक परिरक्षक मिलाना अनिवार्य है। इसके अलावा वाहिका में भरकर पास्तुरीकृत फलरस सील टूटते ही काम में लेना चाहिए, अन्यथा शीघ्र ही खराब हो जाने की सम्भावना है। पास्तुरीकृत रस में जला हुआ सा स्वाद उत्पन्न हो जाता है, जो विदेशी पसन्द नहीं करते हैं, परन्तु भारतीय आमतौर पर दूध को भी उबाल कर पीते हैं, इसलिए भारतीयों के लिए पास्तुरीकृत फलरस भी स्वीकार होगा। रस का ऊष्मीकरण कर उसमें पाये जाने वाले किण्वकों को निष्क्रिय बनाकर रासायनिक परिरक्षक मिलाया जाये तो वे विकृतिरहित रहेंगे। इसके अलावा एक बार सील टूटने के बावजूद गुरक तथा ठण्डी जगह पर रखने से कुछ समय और काम मे लिये जा सकते हैं। परन्तु फल

रस मे परिरक्षको का प्रयोग काफी सतर्कता से किया जाना चाहिये। जैसे कि पहले ही कहा जा चुका है, परिरक्षक उचित मात्रा मे लेकर मामूली पानी में घोलकर फलरस मे या अन्य उत्पादों मे अच्छी तरह मिला देना चाहिए। इसके अलावा इस बात का भी ध्यान रखना चाहिए कि काम मे लिया जाने वाला रासायनिक परिरक्षक पुराना तथा शक्तिहीन तो नही है ?

प्रत्येक ऋतु मे कुछ विशेष फल बहुत मात्रा मे बाजार में आते हैं। इस समय दाम भी बहुत कम हो जाते हैं, इस मौके को व्यवसायी, भविष्य के लिये फलो का रस या गूदायुक्त रस तैयार कर अपनी आवश्यकतानुसार परिरक्षक मिलाकर या पास्तुरीकरण कर पीपो मे या अन्य उचित वाहिकाओ मे सचयन कर लेते हैं। इसके लिए आमतौर पर 600 पी पी. एम के क्रम मे सल्फरडाई-ऑक्साइड मिलाने के लिए पोटेशियम मैटाबाई सल्फाइट या तद्‌तुल्य परिरक्षक मिलाकर सम्पन्न किया जाता है। सन् 1939 में इसलर तथा साथियों ने प्रतिवेदन दिया कि निर्वातीकरण किए हुए फलरस मे 0·05 से 0·1 प्रतिशत शुद्ध बैन्जोयेट मिलाना, सल्फरडाई ऑक्साइड से अधिक लाभप्रद होगा। उन्होने आगे कहा कि फलरस मे पायी जाने वाली ऑक्सीजन के कारण उसमें वर्ण फीके पड जाते हैं। इसका कारण बैन्जोयेट का प्रयोग नही है, परन्तु फलरस मे मिश्रित वायु (ऑक्सीजन) है। रिक्त (वैक्यूम) अवस्था मे फलरस निर्माण के लिए कीमती यन्त्रों की आवश्यकता होती है, जो फलरस का उत्पादन-मूल्य बढ़ा देता है। इसलिए बैन्जोयेट प्रयोग से उत्पादन-मूल्य मे नियन्त्रण रखा जा सकता है।

आज तक हुए अनुसन्धान प्रतिवेदनो के आधार पर हम कह सकते हैं कि फलरस मे बैन्जोयेट तथा सल्फरडाई ऑक्साइड के सयुक्त प्रयोग से फलरस को काफी ऊँचे दर्जे के रूप में परिरक्षित रखा जा सकता है क्योंकि बैन्जोयेट विकृतिकारक सूक्ष्मजीवियो का नाश करेगा तथा सल्फरडाई ऑक्साइड ऑक्सीकारी क्रियाओ को या तो रोकेगा या धीमी कर देगा। ध्यान रखें कि रासायनिक पदार्थों से केवल अम्लयुक्त फलरसो का परिरक्षण ही सम्भव है।

सूक्ष्मजीव-रोधक निष्यन्दक (जर्मप्रूफ फिल्टरप्रैस)

सूक्ष्मजीवरोधक निष्यन्दन क्रिया गद्दीदार निष्यन्दनों (पैड फिल्टरो) की सहायता से सम्पन्न कराई जाती है। धातुओं से बने ढाँचे के बीच-बीच मे पल्प, आस्बस्टोस, कपास या तद्‌तुल्य वस्तुओ में से किसी एक से बने पैडों से उपर्युक्त प्रैस काम करती है। ई. के. फिल्टर (E. K. Filter) नामक फिल्टर प्रैस बाजार मे भी मिलते हैं। निचोडकर, छान कर लिये हुए रस को उपर्युक्त निष्यन्दक की सहायता से पुनः छानकर, सल्फरडाई ऑक्साइड मे निर्जर्मीकृत (पोटेशियम मैटाबाई सल्फाइट घोल को बोतल मे डालकर धोया जाए तो बोतलें निर्जर्मीकृत हो जाएँगी) बोतलो तथा कैनों मे भरा जाता है। इसी प्रकार फिल्टर किये हुए रस मे खराबीकारक सूक्ष्मजीव, विशेषकर प्रकिण्व, जीवाणु आदि नही होंगे। फलस्वरूप परिरक्षण सम्भव हो जाएगा। परन्तु उपर्युक्त निष्यन्दन मे काम मे लिये गये पैडों को पुनः काम मे नही लिया जाता। यह परिरक्षण प्रणाली पश्चिमी देशों में तथा दक्षिण अफ्रीका मे प्रचलित है, जहाँ सेब, अगूर इत्यादि फलों के रस को परिरक्षण के लिए प्रयोग किया जाता है। इस यन्त्र को चलाना भी अनुभवी तकनीशियनो से ही सम्भव होगा, क्योंकि इसमें कई सावधानियाँ व ज्ञान पर्याप्त आवश्यक है।

शर्करा द्वारा

खाद्य पदार्थों में स्वतन्त्र जल की मात्रा जितनी अधिक होगी उतनी ही अधिक तथा शीघ्रता से उसमें सूक्ष्मजीवियों का प्रवेश तथा प्रजनन, वंशवृद्धि आदि सम्भव होगी। इसलिए फलरस में शर्करा मिलाने से फलरस का स्वतन्त्र जलांश नष्ट हो जाता है। 65 प्रतिशत या उससे अधिक शर्करा मिलाने से स्वतन्त्र जल शर्करा का घुलन कराकर अपने अस्तित्व को समाप्त कर देते हैं। फलस्वरूप उसकी आपेक्षिक सांद्रता 330 हो जाती है, इसलिए फलरस की जलांश मात्रा कम हो जाती है। जल की यह शून्य अवस्था सूक्ष्मजीवियों के प्रवेश तथा बढ़ोतरी में रुकावट पैदा कर देती है। जिसका मुख्य कारण परासरण प्रक्रिया ही है, जो पहले ही वर्णित है।

कार्बनीकरण द्वारा

वायुप्रिय सूक्ष्मजीव, फफूंद, प्रकिण्व आदि प्राण वायु (ऑक्सीजन) के अभाव में वंश-वृद्धि नहीं कर पाते, यही नहीं अपितु निष्क्रिय भी हो जाते हैं। इसलिए, जिन फल-पेयों में 65 प्रतिशत से कम शर्करा मिलायी जाती है, उन्हें कार्बनीकरण द्वारा अधिक दिन तक परिरक्षित रखा जा सकता है। फलरस को जर्मप्रूफ फिल्टर प्रेस द्वारा फिल्टर कर कार्बनीकरण परिरक्षित रखा जा सकता है। जिस बोतल में फलरस या फलपेय भरे हुए होते हैं, उसमें यन्त्र द्वारा कार्बनडाइ ऑक्साइड भरते समय उसके भीतर उपस्थित वायु पूर्णरूप से वहाँ से निकाली जाती है, फलस्वरूप बोतल के भीतर द्वारा परिरक्षक प्रक्रिया सम्पन्न होती है। अर्थात् वायु को निकाल कर तथा प्रकिण्व, फफूंद आदि को निष्क्रिय बनाकर यह द्वा-परिरक्षक प्रक्रिया सम्पन्न की जाती है।

साधारणतया साफ मीठे पानी में कार्बनडाई-ऑक्साइड मिलाकर सोडा वाटर के नाम से बाजार में प्रचलित है। इसी प्रकार कुछ विशेष फ्रूट-सोफ्ट-ड्रिंक तथा साधारण सोफ्ट-ड्रिंक (बिना फलरस के) भी कार्बनीकरण द्वारा परिरक्षित किए हुए बाजारों में प्राप्त होते हैं। उचित मात्रा में इसके प्रयोग से पेय अधिक स्वादिष्ट तथा उत्साहवर्द्धक होता है। इनके अलावा पेट में किसी प्रकार की पाचन क्रिया में गड़बड़ हो तो भी सोडावाटर उपयोगी है। इसमें अधिक शक्ति से कार्बनीकरण किया जाए तो फलरस तथा फलपेय के स्वाभाविक रंग तथा सुगन्ध भविष्य में नष्ट हो जाते हैं। परन्तु फ्रूट सोफ्ट ड्रिंक वर्ग के पेय दो-चार दिन के भीतर ही काम में लिये जाते हैं तथा अन्य फल-रहित सोफ्ट ड्रिंक में उपर्युक्त कमी होने की सम्भावना ही पैदा नहीं होती, क्योंकि वे फलरस-रहित होते हैं। उपर्युक्त पेयों में 100 से 110 पौंड (45·5 से 50 किलो) दबाव से कार्बनडाई-ऑक्साइड भरी जाती है।

अल्प-ताप-परिरक्षण

वैसे अल्प ताप परिरक्षण पर हम काफी चर्चा कर चुके हैं, परन्तु यहाँ फलरस से सम्बन्धित कुछ परिरक्षण विधियों के बारे में चर्चा की जा रही है, जो अन्यत्र विस्तृत रूप रूप से वर्णित नहीं है। इनके अलावा फलरस पेय तथा फलरस में इसका समावेश करना भी अधिक उचित मालूम पड़ता है।

अंगूर, सेब, नरसफल आदि का रस अपास्तुरीकरण कर, संकीर्ण वैसों में तथा बोतलों में भरकर 10° डिग्री से 15° फारनहीट पर गोदामों में संचयन किया जाए तो

वर्ण तथा सुगन्ध में किसी प्रकार की कमी बिना ही दो वर्ष तक परिरक्षित रहेगा, परन्तु 30° सेन्टीग्रेड पर संचयन किया हुआ रस फफूंद बाधा या किण्वन क्रिया के कारण खराब हुआ देखा गया। इसलिये फलरस का सचयन 25° सेन्टीग्रेड से अधिक तापमान पर नहीं होना चाहिए। सन्तरा, चकोतरा इत्यादि का फलरस रिक्त अवस्था में 0° फारनहीट में परिरक्षित किया जा सकता है। उपर्युक्त बातें क्रुस के अभिप्राय हैं।

जोसलिन-मार्म के अनुसार फलरसों को पहले निर्वातीकरण कर, नाइट्रोजन गैस से रिक्तक अवस्था को भंग कर वाहिकाओं को सील किया गया, उन्हें हिमीकरण करना अन्य परिरक्षण विधियों से श्रेष्ठ होगा। परन्तु इन्हें वाहिकाओं में भरते समय 10 प्रतिशत शीर्ष-स्थान छोड़ना चाहिए, क्योंकि हिमीकरण के समय रस का व्यास बढ़ता है। हिमीकृत रस 1° से 10° फारनहीट पर अधिक दिनों तक परिरक्षित रखा जा सकता है, लेकिन वह वायु सम्पर्क में नहीं आना चाहिए।

सांद्रीकरण परिरक्षण

इसके बारे में विशेषतौर से आगे चर्चा की जायेगी, परन्तु यहाँ फलरस सांद्रीकरण के बारे में थोड़ा प्रकाश अवश्य डाला जा रहा है। फलरस गर्म करते समय वाष्पीकरण द्वारा उसका जलांश नष्ट हो जाता है, फलस्वरूप सूक्ष्मजीवियों का प्रजनन तथा वृद्धि असम्भव हो जाती है। परन्तु इस प्रक्रिया से विटामिन 'सी' नष्ट हो जाता है। रिक्तावस्था में सांद्रीकरण किया जाये तो विटामिन सी सुरक्षित रखा जा सकता है। इसमें जला हुआ-सा-स्वाद अवश्य रहेगा। कांच लेपित बर्तनों में ही सांद्रीकरण सम्पन्न कराया जाता है। इस क्रिया को वाष्पीकरण-सांद्रीकरण कहा जाता है।

हिमीकरण सांद्रीकरण

फलरस का मन्द गति से हिमीकरण किया जाए तो उनमें उपलब्ध स्वतन्त्र जल हिम टुकड़ों में रूपान्तरित हो जायेगा (मणिमय हो जायेगा) इन्हें उचित समय पर रस में से निकालते रहें तो 50 प्रतिशत रस सांद्रीकृत हो जायेगा, अर्थात् 50 प्रतिशत जल उसमे से अलग किया जा सकता है। यह तथ्य सन् 1914 में सेब के रस में अनुसन्धान-अध्ययन के समय गोरे द्वारा देखा गया। इस विधि से परिरक्षित रस में अन्य विधि से परिरक्षित रस से अधिक गुण पाये गये। इसमें जला हुआ स्वाद होने की सम्भावना भी नहीं रहती।

फलरस को कैनों में भरकर शीतल लवणघोल भरी वाहिका के भीतर डुबोये रखने से वे घनीकृत हो जाते हैं। इन्हें तुरन्त खोलकर एक विशेष प्रकार के सेन्ट्रीफ्यूज द्वारा अप-केन्द्रीकरण किया जाये तो यन्त्र के चलने के वेग से उसमे से फलरस सांद्रीकृत रूप मे एकत्रित किया जा सकता है तथा जलांश उसमें से अलग हो जाता है। परन्तु यह देखा गया कि यह प्रक्रिया उतनी प्रयोगात्मक नहीं रही।

परन्तु गोरे की उपर्युक्त विधि मे क्राउस नामक वैज्ञानिक ने कुछ परिवर्तन करके देखा। क्राउस ने ऐसी वाहिकाओं में फलरस भरकर हिमीकरण किया ताकि वलय आकार का हिमीकृत फलरस प्राप्त किया जा सके। उपर्युक्त फलरस वाहिकाओं को शीत लवणघोल मे डुबोकर या फलरस वाहिकाओं पर धारावाहिक शीत लवणघोल की वर्षा कर हिमीकरण सम्पन्न कराया। इसी प्रकार हिमीकृत फलरस से बने वलयों को केज नामक एक विशेष सेन्ट्रीफ्यूज की सहायता से अपकेन्द्रीकरण कराया तो प्राप्त रस में 60 प्रतिशत घुलनशील

घन पदार्थ पाया गया । इस प्रकार प्राप्त रस बिना किसी प्रकार के परिरक्षक द्वारा दीर्घकाल तक परिरक्षित रहा ।

परन्तु इसमें से पेक्टिक पदार्थ किण्वक द्वारा अलग नहीं किया जाए तो 10 सेन्टीग्रेड में संचयन करने पर भी धुंधलापन हो जाता है, परन्तु मोरिस के अनुसार उपर्युक्त सांद्रीकृत फलरस को परिरक्षक के बिना भी काफी दिन तक परिरक्षित रखा जा सकता है ।

फलरस का निर्जलीकरण

इस विषय पर भी फल-तरकारी के निर्जलीकरण अध्याय में चर्चा की गई है ।

कुछ प्रमुख फलरसों की परिरक्षण विधि

(1) अंगूर रस

चुने हुए अंगूर के गुच्छे को पानी में धोकर निकाल लिया जाता है, उसमें से दाने अलग कर अनचाहे दानों (मुख्यतः सड़े-गले, कच्चे तथा अविकसित दानों) को अलग कर लेते हैं । इन्हें थोड़ा-सा जल मिलाकर या भाप द्वारा नर्म कर लिया जाता है । इन्हें किसी उचित यन्त्र की सहायता से (जिसके बारे में अन्यत्र चर्चा की गई है ।) रस निकाला जाता है । फलों को प्रेस में पहुँचाने से पहले ग्रेपक्रशर यन्त्र में संदलन कर लिया जाता है । कुटीर तथा घरेलू स्तर के व्यवसाय या घरों के लिए आवश्यक अंगूरों को नर्म एवं संदलन कर, मोटे जालीदार कपड़े की सहायता से या सुपरक्रशर नामक घूमने वाली छलनी की सहायता से भी रस निकालकर कपड़े से छानकर काम में लिया जा सकता है ।

उपर्युक्त अंगूर रस में 4 से 5 प्रतिशत शर्करा मिलाकर पुनः छानकर, बोतल में भरकर सीलबन्द कर जल-ऊष्मक में पास्तुरीकरण किया जा सकता है, जिसका जल तापमान 88° से 92° सेन्टीग्रेड पर 30 मिनिट का समय देकर पास्तुरीकरण समाप्त करें ।

बड़ी व्यवसाय-शालाओं में पास्तुरीकृत रस का बड़े-बड़े डिजस्टर बोतलों में भरकर 15 से 30 दिन तक संचयन कर निर्मलीकरण किया जाता है । इसके लिए 6 से 12 महीने संचयन करना भी होता है, जो फलों के आधार पर रहेगा । इसी प्रकार प्राप्त निर्मलीकृत रस में पुनः अण्डरसेदी, केसीन आदि में किसी एक का प्रयोग कर पुनः निर्मलीकरण किया जाता है । कुछ ऐसे भी किस्म के अंगूर होते हैं जिनके रस में उपर्युक्त क्रियाओं का प्रयोग कराने के बावजूद वाहिका में संचयन के बाद भविष्य में धुंधलापन आ सकता है । इस प्रकार के अंगूर के रस में पैक्टिन किण्वकों के प्रयोग से भी निर्मलीकरण किया जा सकता है ।

निर्मलीकृत रस को संकीकृत कैनों में या बोतलों में भरकर संसाधन कर संचयन किया जाता है । 1·125 लीटर धारक क्षमता की बोतलों को 80° से 85° सेन्टीग्रेड पर 30 मिनिट तथा कैनों का 72° सेन्टीग्रेड पर 20 मिनिट क्रमशः समय देकर जल ऊष्मक द्वारा पास्तुरीकरण कर लेते हैं । 0·1 प्रतिशत सोडियम बैंजोयेट मिलाकर वाहिका में भरें तो रस को पास्तुरीकरण करने की आवश्यकता भी नहीं होगी । परन्तु बोतलें पूर्व ही निर्जर्मीकृत की हुई होना आवश्यक है ।

(2) सेब रस

इसके लिए उच्चकोटि के रसदार सेबों को चुना जाता है, जिसमें किसी प्रकार की खराबी न हो । इन्हें अच्छी तरह धोकर 5 प्रतिशत हाइड्रोक्लोरिक अम्लयुक्त जल में

उपचार कर पुनः शुद्ध जल में धोकर काम में लिया जाता है। इसको स्टेनलैसस्टील के या तद्तुल्य किसी उचित धातु के धीयाकस में कसें या संदलन करें। इसमे आवश्यकतानुसार पोटेशियम मैटाबाई सल्फाइट पहले ही मिलाकर संदलन किया जाता है या रस निकाला जाता है, अन्यथा रस काला पड़ जायेगा। बड़े कारखानो में फ्रूट मिल भी काम मे ली जाती है, जो पहले चर्चित है। इसी प्रकार प्राप्त कसे हुए या सदलित सेवो से रस निकाला जाता है। घरेलू स्तर पर मलमल के कपड़े की सहायता से रस निकालकर परिरक्षित किया जा सकता है। उपर्युक्त रस में उचित मात्रा मे पैक्टिक एंजाइम मिलाकर 100° सेन्टीग्रेड पर गर्म कर सचयन करें तो निर्मलीकृत हो जाता है। तापमात्रा कम की जाये तो एंजाइम की मात्रा बढ़ती जायेगी, परन्तु निर्मलीकरण के लिए चाहे गये समय एंजाइम (किण्वक) मात्रा के आधार पर बढ़ती-घटती रहेगी, अर्थात् 45° सेन्टीग्रेड ताप के रस मे 846 ग्राम के क्रम मे प्रत्येक 306 लीटर में पैक्टिक एंजाइम मिलाया जाये तो 15 घन्टे में निर्मलीकरण पूर्ण होगा, परन्तु उसी मात्रा तथा ताप के रस मे 422 ग्राम मिलाया जाये तो 48 घन्टे मे ही निर्मलीकरण होगा। 15 5° सेन्टीग्रेड मे 306 लीटर रस में 505 ग्राम, 225 ग्राम, 168 ग्राम, के क्रम में पैक्टिक एंजाइम मिलाया जाये तो क्रमशः 15, 30, 48 घन्टे के समय-क्रम में निर्मलीकरण पूर्ण होगा। इसी प्रकार 37·8° सेन्टीग्रेड से 142 ग्राम पैक्टिक एजाइम की आवश्यकता होगी। इससे आप भली-भाँति समझ सकते हैं कि पैक्टिक एंजाइम तथा ऊष्मा मे कितना आपसी सहयोग रहता है। ऐसा भी प्रतिवेदन मिलता है कि उपर्युक्त विधियो से निर्मलीकृत रस को पुनः इन्फूसोरियल मिट्टी मिलाकर, छानकर 82° से 85° सेन्टीग्रेड मे 15 मिनट गर्मकर पूर्व में ही निर्जलीकरण किया हुआ बोतलो मे या कैनो में भरकर 0 से 15° फारनहीट वाले गोदामों में संचयन किया तो दो वर्ष तक किसी प्रकार की खराबी नहीं देखी गई। परन्तु उपरोक्त विधि से भरे हुए सेब-रस का ठण्डे किये बिना ही उसी ताप पर संचयन किया तो बोतल के रस में दुर्गन्ध महसूस की गई तथा लघु-उद्योग स्तर पर सेबों को संदलित कर उसमे 1 से 2 प्रतिशत पैक्टिक एजाइम घोल (जो सी० एफ० टी० आर० आई० में निर्मित) मिलाकर 24 घन्टे रखने के पश्चात् उसमें से रस निचोड़कर इन्फूसोरिया मिट्टी की उपस्थिति मे छानकर उसको पास्तुरीकरण कर परिरक्षित किया जा सकता है। इसके लिए रिक्त निष्यन्दन (वाक्योम्फिल्ट्रेशन) भी इस्तेमाल किया जा सकता है।

(3) अनन्नास रस

रस के लिए पेड में ही पूर्ण विकसित और पका हुआ अनन्नास अधिक उत्तम होता है, चाहे वे फल टेढे-मेढे होने के कारण विपणन योग्य न हों, परन्तु उसमें किसी प्रकार की बीमारी या सड़न-गलन नही होनी चाहिए। इसके अलावा कैनीकरण के पश्चात् बचे हुए, अनन्नास फल की छिलके-रहित परत टुकड़े तथा अच्छी किस्म के अनन्नास-फल के पित्त लकड़ी (क्रोड) आदि को भी रस के लिए काम मे लिया जा सकता है।

रस के लिए जब फलो को लिया जाता है, तो उनके मुकुट (क्राउन) को निकालकर फलों को पहले खूब धोया जाता है, जैसे कैनीकरण मे तथा अन्य परिरक्षणों के लिए किया जाता है, परन्तु बाद मे उनके ऊपरी छिलके निकाल दिये जाते हैं तथा इन्हें कतर लिया जाता है। कैनीकरण की भाँति फलों के भीतरी भाग की काँटेदार परत को निकालकर रस निकाला जाए तो शेष फलमेप को जैम बनाने के काम में लिया जा सकता है, यह प्रक्रिया घरेलू स्तर पर या कुटीर उद्योगो मे अपनायी जाती है, जहाँ सम्पूर्ण रस अनन्नास से निकरा

नही पाता, परन्तु बड़े-बड़े कारखानों में काँटेदार परत को निकालकर उन्हें कनरकर सम्पूर्ण फल से रस निकाला जाता है, फलस्वरूप शेष फलमेष शुष्क रह जाता है। प्राप्त रस को मलमल के कपड़े की सहायता से छोटे पैमाने मे छान लिया जाता है, लेकिन बड़े कारखानों में इसके लिए उचित यन्त्र की सहायता ली जाती है। इस रस मे शर्करा मिलाकर या बिना शर्करा के परिरक्षण किया जा सकता है। साधारणतया इसके लिए 6 से 8 प्रतिशत शर्करा मिलाई जा सकती है तथा 82° से 85° सेन्टीग्रेड शृंखला में गर्मकर साधारण कैन में भरकर मुहरबन्द कर संचयन किया जाता है। मिल्क साइज कैनों को 80° से 82° सेन्टीग्रेड में 25 मिनट का पास्तुरीकरण समय देना चाहिए। इन्हें पूर्व ही निर्जर्मीकरण की हुई वाहिकाओं में भरकर संसाधन किया जाता है।

(4) नींबूवर्गीय फलरस

इसके लिए पूर्ण विकसित तथा अच्छी तरह पके हुए नीबूवर्गीय फलों को ही चुना जाता है। आजकल विकसित देशों में ही नहीं अपितु विकासशील देशों में भी (भारत मे भी) नीबूवर्गीय फलों मे से रस निकालने के लिये साइट्रस जूस ऐक्सट्रैक्टर को काम मे लिया जाता है। स्वचालित यन्त्र में फलों को पहुँचाकर पहले दो टुकड़ों में कतर लिया जाता है, जो कटोरीनुमा होता है। यह टुकडे अपने आप एक-दूसरे के विपरीत घूमने वाले रोलर मे लगे कटोरीनुमा फल धारकों मे फँस जाते हैं, वह आगे चलकर उल्टा कटोरीनुमा रोस



चित्र 25

रीमी सहायता से रस तथा छिलके का रस दबाव के कारण निकलकर भिन्न-भिन्न रास्ते मे नीचे रखी वाहिकाओं में या रस फिल्टरप्रैस में छानने तथा वहां से पास्तुरीकरण तथा भरने के लिये यन्त्रों की सहायता से ही चले जाते हैं। भरे हुए कैन वहां से हटकर कैनीकरण

विभाग मे चले जाते है। ये भी बेल्ट की सहायता से यन्त्र ही चलाते हैं। छिलके के तेल मे भी कुछ फलरस मे मिला हुआ होता है। वह भी अलग कर दिया जाता है, इसके अलावा रस मे भी तेल मिला हुआ होता है जो मामूली होते हुए भी रस मे नाममात्र का तीखापन अवश्य पैदा कर देता है। तेल को उचित वाहिकाओं मे भरकर विपणन के लिए संचयन किया जाता है।

उपर्युक्त-सा ट्रस जूस ऐक्सट्रैक्टर कुछ परिवर्तनों से भारत मे निर्मित किया जाता है, जिसके बारे मे पहले चर्चा की जा चुकी है। उपर्युक्त रस निर्वातीकरण, निर्मलीकरण इत्यादि भी यन्त्र द्वारा ही भारत के बड़े-बड़े कारखानो में सम्पन्न किया जाता है। यन्त्रों की सहायता से ही रस वाहिकाओं में भरकर संसाधन किया जाता है, साधारणतया बोतल तथा कैनो मे भरकर सीलबन्द कर 91° सेन्टीग्रेड मे ससाधन कर, ठण्डा कर संचयन किया जाता है।

लघु तथा कुटीर उद्योगों के लिए फलरस को छोटे-बड़े यन्त्रों द्वारा निकालकर भविष्य के लिये बड़े-बड़े पीपो (कास्ट) में या बोतलो मे भरकर पोटेशियम मैटाबाई सल्फाइट मिलाकर सीलबन्द कर रखते हैं। इस विधि से रस-निर्मलीकरण भी हो जाता है, अगर निर्मलीकरण नही करना हो तो सम्पूर्ण रस को भविष्य मे स्क्वैश बनाने के काम मे आ जाता है।

ताजे फलरसों को 88° से 91° सें० तक गर्म करके पास्तुरीकरण कर उन्हें 80° सेन्टीग्रेड पर उतार कर इनामल कैनों मे भरकर सीलबन्द कर संचित किया जा सकता है। लेकिन कैनो मे भरते समय रस का तापमान 80° सेन्टीग्रेड से कम नही होना चाहिए। नीबू-वर्गीय फलरसों को 110° से 116° सेन्टीग्रेड में फ्लैश (क्षण) पास्तुरीकरण कर उन्हें 80° सेन्टीग्रेड पर ठण्डा कर कैनीकरण किया जाता है। इसी विधि से परिरक्षित रस मे भविष्य मे धुंधलापन नही होता, क्योंकि रस मे पाये जाने वाले किण्वक फ्लैश पास्तुरीकरण से निष्क्रिय हो जाते हैं। घरेलू स्तर पर रस निकाल कर 85° से 90° सेन्टीग्रेड मे गर्म कर पूर्व निर्जर्मीकृत बोतलो में भरकर परिरक्षण किया जा सकता है। लेकिन इस रस मे 350 पी. पी. एम. के अनुपात मे पोटेशियम मैटाबाई सल्फाइट अवश्य मिलानी चाहिए अथवा निकाले गये रस को थोड़ा गर्म कर, पूर्व निर्जर्मीकृत बोतलो मे भरकर सीलबन्द कर जल-ऊष्मक मे ससाधन कर संचय किया जा सकता है। यहाँ परिरक्षक मिलाने की आवश्यकता नहीं होती।

(5) काजू फलरस

काजूफल को 30 मिनिट तक भाप मे पकाया जाता है, इसके लिए उचित समय देकर प्रेशरकुकर या तत्तुल्य अन्य किसी यन्त्र की सहायता से भी पकाया जा सकता है। साधारणतया 0.35 से 0.7 किलो दबाव तक भापोपचार किया जाता है, पत्पश्चात् तुरन्त काजूफलो को बहते हुए जल की सहायता से ठण्डा किया जाता है। उपर्युक्त क्रिया से काजूफल नर्म ही नही हो जाते, बल्कि उसमें पायी जाने वाली खराश भी दूर हो जाती है। इन फलो में से अनन्नास की भाँति रस निकालना चाहिए। इस रस को छान लें। इसमे थोड़ा-सा नीबू रस मिलाकर रख दिया जाता है, ऊपर तैरते हुए स्पष्ट रस को रबर साईफन द्वारा अलग कर उसमें करीब 7 प्रतिशत शर्करा मिलाकर पास्तुरीकरण किया जाता है। इस रस को पूर्व निर्जर्मीकृत बोतलों में भरकर सीलबन्द कर 85° से 90° सेन्टीग्रेड

ताप पर 30 मिनट समय देकर संसाधन किया जाता है। बोतलों मे भरने से पहले किया गया पास्तुरीकरण तापमान 90° से 95° सेन्टीग्रेड होना आवश्यक है।

(6) अनार-रस

परिरक्षण के लिये कांतारी किस्म के अनार काम मे लिये जाते हैं। धोये हुए फलों को तोड़कर दाने अलग किये जाते हैं। इन दानों से बास्केट प्रेस या हाइड्रोलिक प्रेस की सहायता से रस निकाला जाता है। इस रस का एक प्रतिशत जलाटिन का उपचार कर निर्मलीकरण किया जाता है। इस रस को क्षण पास्तुरीकृत कर 24 घण्टे तक रखा जाये तो निर्मलीकृत हो जायेगा। इसे पुनः छानकर बोतल मे भरकर अंगूर-रस की भांति पुनः पास्तुरीकरण कर संचित किया जा सकता है।

(7) आम-रस

पेड़ो पर पके हुए पूर्ण विकसित, सुगन्धित व रंगीन आम चुनिए। इनको साफ पानी मे खूब धो लें। छिलका उतार कर या आम के रस को निचोड़कर निकाला जाये। गूदेदार आम का छिलका उतार कर गूदे को गुठली से अलग करके गूदे को मशीन से मलाईनुमा बना दें। गूदा जब मलाई जैसा हो जाये तब रेशे दूर करने के लिये साफ तथा जालीदार कपड़ों मे डालकर छान लें। अब इसमे 10 से 20 प्रतिशत शर्करा मिलाकर पुनः छान लें। आम की प्राकृतिक अम्लता को बनाये रखने के लिए मिलाई गई शर्करा की मात्रा के अनुसार आधा प्रतिशत साइट्रिक अम्ल मिलाकर गर्म करें। इस मिश्रण को धुंआरहित चूल्हे पर गर्म करें या 90° से 95° सेन्टीग्रेड ताप पर पास्तुरीकरण कर बोतलों मे भरकर सील-बन्द कर जल ऊष्मक में संसाधन करें। पास्तुरीकरण तापमान 85° से 90° सेन्टीग्रेड पर 30 मिनिट समय देना चाहिये।

इस रस को आप भविष्य मे स्क्वैश, या आमरस बनाने के लिए काम में ले सकते हैं।

(8) टमाटर-रस

सारे भारत मे करीब वर्ष भर टमाटर प्राप्त होता है। घुलनशील घन-पदार्थ अधिक वाले टमाटर शीतकालीन टमाटर ही हैं। इसलिए अधिकाधिक टमाटर-रस तथा अन्य उत्पाद शीतकाल मे ही बनाये जाते हैं। इसके अलावा टमाटर का उत्पादन भी शीतकाल मे बहुत अधिक होता है, फलस्वरूप दाम भी बहुत कम होते हैं। अन्य उत्पादो की भांति रस के लिये भी चुने जाने वाले टमाटर पूर्ण विकसित तथा पौधो मे पके हुये लाल टमाटर अधिक उपयुक्त होते हैं। इन टमाटरों मे पीला या हरा भाग बिल्कुल नहीं होना चाहिये, क्योंकि उपर्युक्त वर्ण के भाग मिलने से अन्य टमाटर उत्पादो की भांति रस मे लाल वर्ण प्राप्त नहीं होगा, इसका मुख्य कारण यह है कि हरे तथा पीले वर्ण ऑक्सीकरण द्वारा भूरापन ले लेते है। इसलिए पूर्ण रूप से लाल टमाटरो को चुनकर उनमे से सड़े-गले टमाटरो को अलग कर, धोकर काम में लेना चाहिए।

टमाटरों में से रस दो विभिन्न विधियों से निकाला जा सकता है:—

(1) तप्त विधि (हॉट ब्रेक प्रोसेस) Hot Brake Process

टमाटर को कतरकर उसके रस में ही चार से पाँच मिनट उबालें। इस समय इसमे

मामूली-सी चीनी मिलाने से टमाटर का रंग बनाये रखने में मदद मिलेगी। इसी प्रकार तैयार किये हुए रस को पल्पिंग मशीन की सहायता से या अन्य किसी यन्त्र की सहायता से गूदायुक्त रस निकालना चाहिए। इस विधि को अंग्रेजी में हाट ब्रेक प्रोसेस कहा जाता है। इसके बारे में सांद्रीकृत उत्पादों की चर्चा के समय प्रकाश डाला जायेगा।

(2) शीतल विधि (कोल्ड प्रोसेस) Cold Process

धोकर तैयार किये हुए टमाटरों को कतरकर सीधे पल्पिंग मशीन द्वारा गूदायुक्त रस निकाला जाता है। टमाटर रस में ही उबलते समय टमाटर के भीतरी ऊतक स्थित पैक्टिन बाहर आकर रस को गाढ़ा बना देती है, क्योंकि स्वतः टमाटर में पायी जाने वाली पैक्टोस नामक एन्जाइम (किण्वक) पैक्टिन को जल अपघटन क्रिया नहीं करने देती, फलस्वरूप टमाटर रस गाढ़ापन लिया हुआ होता है, तथा टमाटरों को गर्म करते समय किण्वक निष्क्रिय हो जाने के कारण यह क्रिया सम्पन्न होती है। इसके अलावा टमाटरों में सम्भवतः पाये जाने वाले सूक्ष्मजीव भी ऊष्मीकरण से नष्ट हो जाते हैं। इसके साथ टमाटर में पाये जाने वाले विटामिन 'सी' को ऑक्सीकरण द्वारा नष्ट करने वाले किण्वक भी गर्मी से नष्ट हो जाते हैं, इसके अलावा रंग भी बना रहता है। ऊष्मा विधि से प्राप्त रस की मात्रा शीतल-विधि से प्राप्त मात्रा से अधिक होती है।

शीतल विधि से जब रस निकाला जाता है तब उसमें वायु मिश्रित हो जाती है, फलस्वरूप रस झागयुक्त हो जाता है। यह झाग वायु मिश्रण से होता है जो टमाटर रस में पाये जाने वाले विटामिन 'सी' को ऑक्सीकरण द्वारा नष्ट करने में ऊष्मा से कहीं अधिक सहायक होता है।

आजकल वायु-रहित अवस्था में रस निकालने की सुविधाएँ होते हुए भी शीतल विधि से निकाले गये रस में होने वाली कमियों को दूर नहीं किया जा सका। यह भी देखा गया कि शीतल विधि से तैयार किया गया रस ऊष्मा विधि द्वारा तैयार किये गये रस से कहीं अधिक जल्दी खराब हो जाता है। इसलिए, इसे तुरन्त उत्पादों में परिवर्तित कर देना आवश्यक है। उपर्युक्त कठिनाइयों को देखते हुए तप्त विधि ही अधिक उपयुक्त मानी गई है।

तैयार रस में पाये जाने वाले छिलके के कण, बीज तथा बीजकण आदि को छानकर अलग कर देना चाहिए। इसी प्रकार छाना हुआ रस सामान्य तौर पर 20° सेन्टीग्रेड तापमान पर 1.0240 आपेक्षिक सान्द्रता युक्त होगा। इसमें 5.66 प्रतिशत घन-पदार्थ भी होंगे।

कुल घन-पदार्थ विभिन्न प्रकार से आंके जाते हैं—रेफरैक्ट्रोमीटर (अपवर्तनोकमापी), हाइड्रोमीटर आदि की सहायता से तथा एक निश्चित वजन के रस को सुखाकर व तोलकर। साधारणतया व्यवसायशालाओं में रेफरैक्ट्रोमीटर या हाइड्रोमीटर ही प्रयोग किये जाते हैं। शर्करा, चाशनी, दूध आदि के आपेक्षिक गुरुत्व जिस प्रकार मालूम किये जाते हैं, वैसे 20° सेन्टीग्रेड तापमान पर रस को लाकर हाइड्रोमीटर या रेफरैक्ट्रोमीटर में प्रयोग किया जाता है। अगर विभिन्न तापमान पर मालूम करें तो आपेक्षिक गुरुत्व सही नहीं मिलेगा। इसके लिये ताप सुधार की आवश्यकता पड़ेगी।

तैयार किये गये टमाटर रस को यन्त्र द्वारा समरूप (होमोजिनियम) कराकर उसमें एक प्रतिशत लवण (नमक), एक प्रतिशत शर्करा मिलाकर निर्जर्मीकरण कर वाहिकाओं

मे गर्म-गर्म भरकर सीलबन्द कर जल ऊष्मक मे संसाधन किया जाता है। भरते समय शीर्षस्थान भी छोड़ा जाता है। 341 से 454 एम० एल० बोतलों को जल ऊष्मक मे 30 मिनट समय देकर ससाधन किया जाता है। कैनो की धारक शक्ति के आधार पर ससाधन समय कम या अधिक हो सकता है। नम्बर 1, 2, $2\frac{1}{2}$, 10 इत्यादि कैनो को यथाक्रम 15; 25, 30, 40, मिनट के क्रम से समय देकर ससाधन किया जाता है। परन्तु इनमे 100° सेन्टीग्रेड ताप मे भरकर 82° से 85° सेन्टीग्रेड ताप मे संसाधन अवश्य करना चाहिये।

टमाटर रस मे भविष्य मे होने वाली सभावित खट्टी बदबू कारक सूक्ष्मजीवियों को नाश करने के लिए रस को पूर्ण निर्जर्मीकरण-क्रिया-विधेयक बना देना आवश्यक है। इसके लिये निम्नलिखित तालिका मे बताया गया तापमान तथा समय अवश्य प्रदान करना चाहिए।

सारणी–2

टमाटर के रस मे खट्टी बदबू कारक (ब० थर्मोडूरेन्स) सूक्ष्मजीव को नष्ट करने के लिये आवश्यक तापमान तथा समय—

रस को दी जाने वाली तापमान फारनहीट पर	तापमान कितने समय तक प्रदान की जाती है
240° एफ०	3. 3 मिनट
245° एफ०	1 5 मिनट
250° एफ०	0. 7 मिनट
255° एफ०	0 32 मिनट
260° एफ०	0 15 मिनट
265° एफ०	0. 07 (मिनट टुमलर तथा साथी 1970)

उपर्युक्त सारणी से यह स्पष्ट हो जाता है कि 250° फारनहीट पर 0 7 मिनट समय देने से निर्जर्मीकरण पूर्ण हो जाता है। व हिका मे भरने से पहले रस को, क्वथनांक बिन्दु से नीचे तक का तापमान ही देना चाहिये, अर्थात् रस को उबालने की आवश्यकता नही है। यह तापमान वाहिकाओं को निर्जर्मीकृत भी कर देगा।

टमाटर रस का रासायनिक विश्लेषण

लालसिंह तथा गिरधारीलाल ने भारतीय विपणी मे प्राप्त 6 विभिन्न कम्पनियों मे निर्मित रसो का अलग-अलग विश्लेषण किया है। इनमें दो भारत मे निर्मित तथा शेष चार विदेशों मे निर्मित थे। उन्होंने देखा कि भारतीय कम्पनी द्वारा बनाये गये रस मे घन-पदार्थ कहीं अधिक थे, अर्थात् 6.95 से 9.27 प्रतिशत घन-पदार्थ उस रस मे पाये गये। परन्तु विदेशों मे निर्मित उत्पादो मे घन-पदार्थ 5.6 प्रतिशत से 7.99 प्रतिशत ही पाये गये थे। इससे भली-भाँति समझ सकते हैं कि भारतीय टमाटर पश्चिमी देश के टमाटरों से अधिक घनपदार्थ-धारी होते हैं या यूं भी कह सकते हैं कि भारतीय कम्पनियाँ अधिक घनपदार्थ युक्त टमाटर रस का उत्पादन करती है।

फलरस पेयों का निर्माण तथा परिरक्षण

इस अध्याय मे विभिन्न फलो से रस निकालने की विधि, उसके लिए काम आने वाले यन्त्र तथा उपकरणों के बारे मे तथा रस निर्मलीकरण कर अथवा बिना निर्मलीकरण

किये ही परिरक्षण करने की विधियों के बारे मे चर्चा की जा चुकी है । मुख्य-मुख्य फल पेयों के बारे में इस अध्याय के प्रारम्भ मे ही उल्लेख है । यहाँ रस निकालने के बाद विभिन्न पेयों के निर्माण तथा परिरक्षण के बारे में अध्ययन करें । हमारे देश मे उत्पादित फल में अधिकांश फलरस तथा पेय बनाने के काम मे लिये जाते हैं । इससे आप भली-भाँति जान सकते हैं कि इसका कितना महत्त्व है ।

शर्बत, स्क्वैश (पानक), आदि बिना निर्मलीकृत फलरस अर्थात् फल से निचोड़े हुए, सम्पूर्ण रस को काम में लिया जाता है, जिसमे से केवल छिलका कण, बीज तथा बीजकण अलग किये जाते हैं, परन्तु फल वर्ग मधुपेयों के लिये निर्मलीकृत रस ही काम मे लिये जाते हैं, जिसमे फल का गूदा भी नहीं होता ।

ऑरेन्ज स्क्वैश (Orange Squash)

फल मे से स्क्वीज् (निचोड़) किये हुए सम्पूर्ण रस मे आवश्यकतानुसार शर्करा, जल, साइट्रिक अम्ल, सन्तरा सुगन्ध, सन्तरा वर्ण, परिरक्षक आदि मिलाकर ऑरेन्ज स्क्वैश बनाया जाता है । चाहे फलरस ताजा हो या पूर्व ही परिरक्षित किया हुआ हो, काम में लिया जा सकता है ।

भारत मे फल-तरकारी परिरक्षण विषय पर सर्वप्रथम गिरधारी लाल, सिद्धप्पा तथा टण्डन ने अंग्रेजी मे एक पुस्तक भारतीय जनता के समक्ष प्रस्तुत की । इस पुस्तक को सन् 1960 मे सर्वप्रथम आई० सी० ए० आर० ने प्रकाशित किया । इसके बाद भारतीय भाषाओं मे सर्वप्रथम सदाशिवन नायर ने सन् 1974 मे मलयालम में विश्वविद्यालय स्तर पर एक पाठ्य पुस्तक लिखी जो केरल भाषा संस्थान द्वारा प्रकाशित की गयी । इस पुस्तक मे उल्लिखित अधिकांश योग उपर्युक्त लेखकों तथा सी० एफ० टी० आर० आई० के अनुसंधानों पर आधारित हैं ।

योग संख्या 1 (Recipe 1)

योग संख्या 1 मे आप पाएँगे कि चार विभिन्न तरीकों से स्क्वैश बनाया जा सकता है । प्रथम दो में तो अम्लता तथा ब्रिक्स डिग्री एक समान है, परन्तु उनकी रस की मात्रा भिन्न है ।

दूसरी जोड़ी में प्रथम जोड़ी से अम्लता तथा शर्करा अधिक है परन्तु चारो विधियों मे फलरस 25 या $33\frac{1}{3}$ प्रतिशत ही है । उपर्युक्त चारो विधियों मे से जो विधि चाहें, अपनायी जा सकती है । इसके अनुसार योगांशों को एकत्र करें । साथ ही प्रत्येक विधि के लिए लगभग 425 से 500 बोतलों की आवश्यकता होगी । उन्हें पूर्व ही धोकर निर्जर्मीकृत कर तैयार रखें । इसके अलावा आवश्यकतानुसार ढक्कन, लेबल, गोंद इत्यादि भी ।

योग संख्या 1

ओरेन्ज स्क्वैश

क्र.सं.	योगांश किलोग्राम में	रस–25% ब्रिक्स–45° अम्लता–1·5%	रस–33$\frac{1}{3}$% ब्रिक्स–45° अम्लता–1·5%	रस–25% ब्रिक्स–65° अम्लता 2·0%	रस–33$\frac{1}{3}$% ब्रिक्स 65° अम्लता-2 5%
1.	सन्तरा रस (ब्रिक्स 10° अम्लता 1.8%)	100·000	100·000	100·000	100·000
2.	शर्करा	161·688	108·225	238·366	176·515
3.	साइट्रिक अम्ल	5·108	3·615	7·056	5·108
4.	जल	124·026	71·428	45.699	12·260
5.	सन्तरा सुगन्ध	2·554	1·846	3·247	2·43
6.	सन्तरा वर्ण (आवश्यकतानुसार) या	0·039	0·028	0·039	0·02
7.	परिरक्षक (पोटेशियम मैटाबाइसल्फाइट)	0·247	0·184	0·247	0·1

योग में बताई हुई सन्तरा सुगन्ध के एक अंश ओरेन्ज पील ऑयल (स छिलका तेल) मिलाया जाए, ओरेन्ज स्क्वैश अधिक आकर्षक व स्वादिष्ट हो। लिए प्रति किलो तैयार किये गये स्क्वैश के लिए 0 2 ग्राम (एम० एल०) ओरेन्ज ऑयल तथा बाकी ओरेन्ज एसेन्स (सुगन्ध) मिलाये जाते हैं। अगर सन्तरा तेल नहीं है तो 0·7 ग्राम (एम० एल०) ओरेन्ज एसेन्स प्रति किलो तैयार स्क्वैश में हि मिलाना चाहिए, जो योग संख्या–1 में बताया है।

उपर्युक्त योगांशों में से शर्करा, जल, साइट्रिक अम्ल मिलाकर चाशनी तैर छान लें ताकि उसकी गन्दगी दूर की जा सके। इस मिश्रण को यथाशीघ्र ठण्डा इसके लिए चाशनी युक्त बाल्टिका को या नली को शीतल जल (बर्फ मिलाये हुए) की से 20° से 25° सेन्टीग्रेड (भवन ताप) पर ठण्डा कर लें। अब यह देखना होग, चाशनी में चाही गई ब्रिक्स डिग्री शर्करा है कि नहीं। अगर कम हो तो बढ़ानी अधिक हो तो ब्रिक्स डिग्री कम करनी चाहिए। इसके लिए कम ब्रिक्स डिग्री की ब्रिक्स डिग्री की चाशनी मिलाई जा सकती है। ब्रिक्स डिग्री नापने के 20° पर देखा जाता है।

इस चाशनी में चाही गई मात्रा में सन्तरा रस मिलाएँ। साथ ही सन्तरा तथा परिरक्षक यथाविधि मिलाये जाते हैं, जो पूर्व वर्णित है इन्हें शुद्ध धोए बोतलों में भरा जाता है। बड़े कारखानों में स्वचालित यन्त्रों द्वारा भराई की

भराई के अध्याय मे यह चर्चित है। कुटीर तथा घरेलू स्तर पर कीप की सहायता से बोतलें यथा अधि भरी जाती है तथा तुरन्त सीलबन्द कर, बोतलों को धोकर और पोंछकर, लेबलीकरण आदि करके विपणन हेतु संचयन किया जाता है। भरते समय बोतलो में करीब दो से पाँच सेन्टीमीटर शीर्ष स्थान अवश्य छोड़ना चाहिए। बड़े कारखानो में भरी गयी बोतलों को लेबलीकरण के पूर्व यन्त्र से बाहर आते ही, लाइन मे ही तेज रोशनी के सामने से चलाकर निरीक्षण कर विश्वास कर लेते हैं कि उनमें किसी प्रकार के अनचाहे कण तो नहीं हैं।

फलरस निकालते समय ही योगाश में बताये हुए परिरक्षक मे से थोड़ी मात्रा लेकर इस बर्तन मे घोल बनाकर डाल दें तो रस निकालना प्रारम्भ करने से रस के चाशनी में मिलाये जाने तक उसमे सूक्ष्मजीवों की बढोतरी तथा आक्रमण को रोका जा सकता है। घरेलू स्तर पर ही किया जाता है। ध्यान रखना होगा कि स्क्वैश बनाने के बाद पूर्व फलरस मिलाये गये परिरक्षक की शेष मात्रा को ही बाद मे बनी स्क्वैश में मिलाना ए।

बड़े-बड़े कारखानो मे क्राउन कॉर्क, कैप्सूलकॉर्क, आदि से सीलबन्द किया जाता है। फिल्टरप्रूफ (भविष्य मे मिलावट को रोकने के लिए) भी लगाये जाते हैं। घरेलू इसके बजाय लकडी के ढक्कन (पित्त कार्क) लगाकर इसमे चपडी या मोम लगा-न्द किया जा सकता है। छोटे-बड़े कारखानो मे उपर्युक्त क्रियाएँ सेमीऑटोमैटिक नों की सहायता से सम्पन्न की जाती है। उपर्युक्त बातें करीब-करीब विविध पेय बनाने मे प्रयोग की जाती हैं। इसलिए इन बातो का ध्यान रखना

हिकाओं की निर्जर्मीकरण विधि

ों को पहले से ही जलभरी टंकियो मे भिगोया जाता है। इसके बाद प्रत्येक की सहायता से डिटरजेन्ट (विम, सर्फ, खार इत्यादि मे से कोई एक) डाल-ता है, ताकि उसमे किसी प्रकार का दाग या सुगन्ध न रह जाये। इसी प्रकार ों पुनः गर्म पानी से धोकर निर्जर्मीकरण के लिए रखा जाता है।

रखानो मे यह क्रिया स्वचालित यन्त्रो द्वारा सम्पन्न करायी जाती है। धोयी तो को जल ऊष्मक मे 30 मिनट तक लगातार उबालकर निर्जर्मीकरण किया जाता हैं तो रिटोर्ट, आटोक्लेव आदि मे भरकर 0·6 किलो दबाव पर 20 मिनट समय निर्जर्मीकरण किया जा सकता है। बड़े-बड़े कारखानो मे धोयी हुई बोतलो को शक्तियुक्त उपचार के लिए स्टीम चेम्बरो मे उचित समय तक रखकर निर्जर्मीकृत किया जाता है, ी बोतलें पंक्तिबद्ध भापकोष्ठ मे से होते हुए निश्चित समय के बाद बाहर आती है, तुरन्त फलपेय भरने के लिए भेजा जाता है, इनमे जलाश नहीं रहता। ऊष्मोपचार लिए प्रत्येक बोतल को 20 से 25 मिनट भापकोष्ठ मे रखा जाता है।

मेंगो स्क्वैश (ग्राम पानक)

मेंगो स्क्वैश के लिए पूर्ण विकसित अधिक रसदार सुगन्ध तथा रंगीन गूदायुक्त ग्राम चुनने चाहिए। रसदार ग्राम से रस को मल-मल के निचोड़ लिया जाता है, कम रसदार वाले ग्राम की गुठली, छिलका ग्रादि निकाल कर पल्पिंग मशीन या ग्रन्य कोई उचित यन्त्र की सहायता से रसयुक्त गूदा तैयार कर मानकीकृत कर लेना चाहिए, जैसे योग संख्या–2 में चर्चित है। भिन्न-भिन्न व्यवसाय-शालाग्रों मे ग्रपनायी गई मानकीकरण विधि भिन्न-भिन्न हो सकती है। फिर भी एक व्यवसाय-शाला में हमेशा उत्पादन मे एकरूपता रखने के लिए एक ही प्रकार मानकीकृत ग्रामरस काम में लिया जाता है। इसी प्रकार पहले ही परिरक्षित ग्राम-रस या ग्राम की क्रीम भी स्क्वैश बनाने के लिए काम मे ली जा सकती है। उदाहरण के लिए मान लें कि तैयार किया हुग्रा ग्राम-रस का ब्रिक्स 18 डिग्री तथा ग्रम्लता 15 प्रतिशत हो तो योग संख्या–2 मे बताये गये ग्रनुसार चार विभिन्न मेंगो स्क्वैश बनाये जा सकते है।

योग संख्या–2 मे ग्राप पायेंगे कि ग्राम के पानको मे नीबूवर्गीय फलो के पानकों से ग्रम्लता कम है, क्योंकि स्वतः ग्राम नींबूवर्गीय फलो से ग्रम्ल वाले होते हैं। इसलिए उसके उत्पादो मे भी ग्रम्लता होगी।

(योग संख्या–2, मेंगो स्क्वैश पृथक् पृष्ठ पर दी जा रही है)

योग-सख्या 2

मैंगो स्क्वैश

क्रम सख्या	योगाश किलोग्राम मे	रस–25 प्रतिशत ब्रिक्स–45° अम्लता–0·8 प्रतिशत	रस–33⅓ प्रतिशत ब्रिक्स–40° अम्लता–0.2 प्रतिशत	रस–25 प्रतिशत ब्रिक्स–50° अम्लता–1.0 प्रतिशत	रस–33⅓ प्रतिशत ब्रिक्स–50° अम्लता–1.0 प्रतिशत
1.	ग्राम की गूदाश्मीम या रस (ब्रिक्स 18° तथा ग्रम्ल 15 प्रतिशत)	100·000	100·000	100.000	100 000
2	शर्करा	126.700	97 440	175·311	127·260
3.	साइट्रिक ग्रम्ल	2.640	1 840	3.441	2.459
4.	ग्राम सुगन्ध	नही मिलाना चाहिए			
5.	वर्ण				
6.	जल	155.264	96.303	115 956	66.823
7.	परिरक्षक (पोटेशियम मेटावाई सल्फाइट तथा सोडियम बैन्जोयेट	0.123	0 092	0.123	0.092
		0.247	0.184	0.246	0.184

योग-संख्या 3

ग्रेपफ्रूट स्क्वैश

क्रम संख्या	योगांश किलोग्राम में	रस–25 प्रतिशत ब्रिक्स–45° अम्लता–1.5 %	रस–33⅓ प्रतिशत ब्रिक्स–45° अम्लता–1.5 %	रस–25 प्रतिशत ब्रिक्स–65° अम्लता–2.0 %	रस–33⅓ प्रतिशत ब्रिक्स–65° अम्लता–2.0 %
1.	ग्रेपफ्रूट (ब्रिक्स 10° अम्लता 1·25 प्रतिशत)	100.000	100.000	100·000	100·00
2.	शर्करा	162.147	123.575	238·788	177 390
3.	साइट्रिक अम्ल	4.762	3.197	6.638	4.761
4.	जल	129.621	71.861	45.887	12.225
5.	ग्रेपफ्रूट सुगन्ध तथा ग्रेपफ्रूट पील ऑयल	2.454	1.834	0.327	0.251
		या 0.2 ग्राम ग्रेपफ्रूट ऑयल तथा 0.7 ग्राम ग्रेपफ्रूट एसेन्स प्रतिकिलो स्क्वैश के अनुपात में मिलाने से उच्चकोटि का स्क्वैश उत्पादन होगा।			
6.	परिरक्षक (सल्फाइट)	0.246	0.184	0 246	0.184

योग-संख्या 4

लैमन स्क्वैश

क्रम संख्या	योगाश किलोग्राम मे	रस–25 प्रतिशत ब्रिक्स 45° ग्रम्लता 1·75%	रस–$33\frac{1}{3}$ प्रतिशत ब्रिक्स 45° ग्रम्लता 1.66%	रस–25 प्रतिशत ब्रिक्स 65° ग्रम्लता 2 0%	रस–$33\frac{1}{3}$ प्रतिशत ब्रिक्स 65° ग्रम्लता 1.66%
1.	लैमन रस (ब्रिक्स 10° ग्रम्लता 5 प्रतिशत)	100.000	100.000	100.000	100.000
2.	शर्करा	162 147	123.575	238.788	177 490
3.	साइट्रिक ग्रम्ल	4.662	3.187	6.600	4.761
4.	जल	125.291	71.861	45.887	12.225
5.	लैमन सुगन्ध	2.943	1.834	2.943	1.839
.6.	लैमन वर्ण (पीला)	0.035	0.026	0 035	0.251
7.	परिरक्षक पोटेशियम मेटाबाई सल्फाइट	0 246	0 184	0.246	0.184

योग-संख्या 5

लाइम स्क्वैश

क्रम संख्या	योगांश किलोग्राम में	रस–25 प्रतिशत ब्रिक्स 45° अम्लता 1.5%	रस–$33\frac{1}{3}$ प्रतिशत ब्रिक्स 45° अम्लता 2.0%	रस–25 प्रतिशत ब्रिक्स 65° अम्लता 1.5%	रस–$33\frac{1}{3}$ प्रतिशत ब्रिक्स 65° अम्लता 2.0%
1.	कागजी नींबू रस (ब्रिक्स 10° अम्लता 6 प्रतिशत)	100 000	100,000	100.000	100 000
2.	शर्करा	166.797	122.532	245.360	189.000
3	सिट्रिक अम्ल	आमतौर पर नही मिलाया जाता है, फिर भी चाही गयी अम्लता की पूर्ति हेतु मिलावे ।			
4.	जल	127.750	73.701	49.134	14.740
5.	सुगन्ध	0.2 ग्राम पील ऑयल तथा 0.7 ग्राम लाइम एसेन्स प्रतिकिलो के हिसाब से मिलावें ।			
6.	वर्ण (कागजी नींबू का)				
7.	परिरक्षक (पोटेशियम मेटाबाई सल्फाईट)	0 246	0.184	0.246	0.184

योग-संख्या 6

फैशन फ्रूट स्क्वैश

क्रम संख्या	योगांश किलोग्राम में	रस–25 प्रतिशत ब्रिक्स 45° अम्लता 1.5%	रस–33⅓ प्रतिशत ब्रिक्स 45° अम्लता 1 5%	रस–25 प्रतिशत ब्रिक्स 65° अम्लता 2.0%	रस–33⅓ प्रतिशत ब्रिक्स 65° अम्लता 2 0%
1.	फैशनफल रस (ब्रिक्स 18° अम्लता 3 प्रतिशत)	100.000	100 000	100.000	100.000
2.	शर्करा	162 640	115 931	239.290	177.996
3.	साइट्रिक अम्ल	2.640	1 472	4.913	2 948
4.	जल	135.610	81.563	56.995	22.602
5.	परिरक्षक				
	(1) पोटेशियम मैटाबाई सल्फाइट	0.098	0.073	0 098	0.073
	(2) सोडियम बैन्जोयेट	0.246	0.184	0 246	0.246

नींबूवर्गीय फल पानक (स्क्वैश)

ग्रेपफ्रूट स्क्वैश, लेमन स्क्वैश, लाइम स्क्वैश आदि का भी रस ओरेन्ज स्क्वैश की भाँति निकाला जाता है। उपर्युक्त फलों से बनी ग्रेपफ्रूट पानक, लेमन पानक, कागजी नीबू पानक आदि योग सं० 3, 4 तथा 5 मे क्रमश दी गई है। बाकी सब क्रियाएँ ओरेन्ज स्क्वैश निर्माण की भाँति ही हैं। (उपर्युक्त योग संख्या अलग-अलग पृष्ठों मे दी जा रही है।)

फैशनफ्रूट स्क्वैश (फैशनफल पानक)

फैशन फल आस्ट्रेलिया के प्रमुख फलो मे से एक है। पूर्ण विकसित पके हुए फल का रंग जामुनी होता है। भारत मे नीलगिरि, कुर्ग, मालबार तथा वयनाड आदि दक्षिणी क्षेत्र मे इसकी काफी मात्रा मे खेती की जाती है। इसकी आकर्षक तथा मोहक सुगन्ध के कारण आज इससे बने पेय को काफी प्रचार मिल रहा है।

पानक के लिये जामुनी वर्ण के फलो को चुना जाता है, अन्य क्रियाओं के बाद फल को दो भागो में कतरकर उसके भीतर के रसदार गूदे को बीज सहित बाहर निकाल लेते हैं और इसे पल्पर में पहुँचाकर बीज अलग किये जाते है। घरेलू स्तर पर तथा कुटीर उद्योग के लिए सुपरक्रशर छलनी द्वारा बीज अलग किये जा सकते है। यह यन्त्र हाथ से चलता है तथा इसमे विभिन्न मेस की छलनी व आवश्यकता के अनुसार लगायी जा सकती है। साधारणतया 20 से 30 मेस प्रति इन्च के होते हैं। फैशनफल स्क्वैश बनाने के लिए आवश्यक योगाश योग संख्या 6 में दिखाया गया है।

चीकू पानक (चीकू स्क्वैश)

पूर्ण विकसित पके हुए नर्म फल चुने जाते हैं, क्योंकि इसमे ही अच्छी सुगन्ध होती है। फलो को अच्छी तरह धोकर, छिलका उतारकर, बीज अलग कर पल्पिग मशीन से गूदा बना लेते हैं। घरेलू स्तर पर सुपरक्रशर या मिक्सी भी काम में ली जा सकती है। चीकू स्क्वैश बनाने की विधि योग संख्या 7 में बतायी गयी है।

योग-संख्या 7

चीकू स्क्वैश

योगाश कि० ग्रा० मे	ब्रिक्स 40°, रस 33 प्रतिशत, अम्लता 1.3 प्रतिशत
चीकू गूदा क्रीम	100 किलो
शर्करा	100 किलो
जल	100 किलो
साइट्रिक अम्ल/टार्टरिक अम्ल	4 किलो
रासायनिक परिरक्षक	
(1) K.M.S (के०एम०एस०)	210 ग्राम
(2) सोडियम बेंजोयेट	300 ग्राम

जामुन स्क्वैश (जामुन पानक)

व्यावसायिक स्तर पर चीकू पानक की भाँति जामुन पानक भी उतना प्रचलित नही है। परन्तु कुटीर-उद्योग तथा घरेलू स्तर पर इसका प्रचार अवश्य है। आयुर्वेद मे भी

जामुन से बने शर्बत की प्रशंसा की गई है। इसलिए भारतीय संस्कृति पर अटूट विश्वास रखने वाले घर पर ही जामुन स्क्वैश बनाकर प्रयोग करते हैं।

पूर्ण विकसित पके हुए फल गहरे बैंगनी रंग के होते है। इन्हें धोकर 60° सेन्टीग्रेड ताप पर 7 से 10 मिनट गर्म कर, नर्म कर लेना चाहिए। तुरन्त रस उचित यन्त्र की सहायता से निकालें। घरेलू स्तर पर जालीदार कपड़े में लपेटकर हाथ से रगड़-रगड़कर रस निकाला जा सकता है। इस रस से पानक बनाने की विधि योग संख्या 8 में दी गई है।

योग-संख्या 8
जामुन स्क्वैश

क्रम संख्या	योगांश	रस 50 प्रतिशत, ब्रिक्स 45°, अम्लता 1.5 प्रतिशत
1.	जामुन रस (ब्रिक्स 14°, अम्लता 0.75 प्रतिशत)	100 000 कि०ग्रा०
2.	शर्करा	71.735 कि०ग्रा०
3.	साइट्रिक अम्ल	0:048 कि०ग्रा०
4.	जल	23.584 कि०ग्रा०
5.	रासायनिक परिरक्षक (सोडियम बेन्जोयेट)	0.184 कि० ग्रा०
	रंग अथवा सुगन्ध	नहीं मिलायी जाती

वाटरमैलन स्क्वैश (तरबूज पानक)

राजस्थान, हरियाणा, पंजाब, उत्तर प्रदेश, बिहार, मध्यप्रदेश, गुजरात तथा आन्ध्र-प्रदेश राज्यों में तरबूज की खेती अधिकाधिक होती है जो गर्मी के मौसम में साधारणतया प्यास बुझाने के लिए खाये जाते हैं। तरबूज की कई उच्चकोटि की किस्मों का विकास किया गया है। लाल, पीले तथा पकने के बाद भी सफेद रंग (गूदा) धारी तरबूजों की अधिकाधिक खेती की जा रही है, जिसमें 6° से 16° ब्रिक्स वाले तरबूज भी होते है। इनका भी व्यावसायिक स्तर पर पानक नहीं बनाया जाता, लेकिन जामुन व चीकू की भाँति तरबूज पानक भी लोकप्रिय हो सकता है।

पूर्ण विकसित तरबूज को काटकर उसका गूदा निकालकर कपड़े में लपेटकर या मशीन द्वारा रस निकाला जाता है साधारणतया लाल गूदे वाले मीठे तरबूज अच्छे होते है। पीले गूदे वाले तरबूज भी बहुत अधिक आकर्षक होते हैं। तरबूज का रस निकालकर उसमें चीनी, साइट्रिक अम्ल मिलाकर हल्का (80° से 84° से० तक) गर्म किया जाता है। पानक बनाने की विधि योग संख्या–9 में बतायी गयी है।

योग-संख्या 9

वाटरमैलन स्क्वैश

क्रम संख्या	योगांश	ब्रिक्स 45° अम्लता 1 प्रतिशत
1.	तरबूज का रस (ब्रिक्स 6°, अम्लता 1 प्रतिशत)	100.000 कि० ग्रा०
2.	शर्करा	84.780 कि० ग्रा०
3.	साइट्रिक अम्ल	1.676 कि० ग्रा०
4.	परिरक्षक (सोडियम बैन्जोयेट)	0.200 कि० ग्रा०
5	रंग व सुगन्ध	नहीं मिलायी जाती

कमरख पानक (कारमपोला स्क्वैश)

पूर्ण विकसित पकी हुई कमरख भूरा रंग लिए हुए होनी है। इन्हें धोकर स्क्रूटाइप जूस एक्सट्रैक्टर, बास्केट प्रेस, मल्टीप्रेस जूस एक्सट्रैक्टर या सुपरक्रशर (हाथ से चलने वाली) आदि किसी एक की सहायता से रस निकाला जा सकता है कमरख का रस निकालकर उसमें शर्करा साइट्रिक अम्ल मिलाकर हल्का 80° से 84° से० तक गर्म किया जाता है। अगर परिरक्षक नहीं मिलाना चाहते हैं तो अन्य पानकों की भांति कमरख पानक को भी बोतलों में भरकर सीलबन्द कर ऊष्म ससाधन कर (जल ऊष्मक में) परिरक्षित किया जा सकता है। साधारणतया 340 एम० एल० बोतलों को उबलते पानी में (जब पानी का उबाल आ जाये तब से) 30 मिनट समय देकर संसाधन सम्पन्न करना चाहिए। (योग संख्या 10 देखिये)

योग-संख्या 10

कारमपोला स्क्वैश (कमरख पानक)

क्रम संख्या	योगांश	ब्रिक्स 55° रस 50 प्रतिशत
1	कमरख रस (ब्रिक्स 7°)	100.000 कि० ग्रा०
2.	शर्करा	100.000 कि० ग्रा०
3.	साइट्रिक अम्ल	0.400 कि० ग्रा०
4.	परिरक्षक (पोटेशियम मेटाबाई सल्फाइट)	0.120 कि० ग्रा०

पाइनऐपल स्क्वैश

फलरस पेय की भांति स्क्वैश बनाने के लिए भी चुने जाने वाले पाइनऐपल पूर्ण विकसित पेड़ पर पके, अधिक रस युक्त किस्म के अनन्नास होने चाहिए। कैनिंग के समय बच रहे फल अवशेषों को भी रस निकालने के लिए काम में लिया जाता है, जिसके बारे में अन्यत्र चर्चा की गई है। अनन्नास स्क्वैश अन्य फल स्क्वैश की अपेक्षा व्यावसायिक स्तर पर अधिक महत्त्व रखता है। विपणी में इसकी मांग अधिक होती है। पानक बनाने की विधि योग संख्या–11 में बताई गई है, जो पृष्ठ 262 पर दी जा रही है।

योग-संख्या 11

पाइनऐपल स्क्वैश

क्रम संख्या	योगांश किलोग्राम में	रस–25 प्रतिशत ब्रिक्स 45° अम्लता 1.5%	रस–33⅓ प्रतिशत ब्रिक्स 45° अम्लता 1 5%	रस–25 प्रतिशत ब्रिक्स 65° अम्लता 2%	रस–33⅓ प्रतिशत ब्रिक्स 65° अम्लता 2%
1.	अनन्नास रस (ब्रिक्स 8° अम्लता 1.5 प्रतिशत)	100 000	100 000	100.000	100.000
2.	शर्करा	165.584	127 750	242.233	180.939
3.	साइट्रिक अम्ल	5.420	3.930	7 377	5 404
4	जल	127.750	>73.701	49.134	14 740
5.	अनन्नास सुगन्ध	2.457	1.844	2.258	2.519
6.	वर्ण (पीला)	0.039	0.030	0 039	0.039
7.	परिरक्षक-पोटेशियम मेटाबाई सल्फाइट	0 246	0.184	0 246	0 184

नींबूवर्गीय यव पेयों का निर्माण

फ्रूट-बारली वाटर बनाने के लिए निर्मलीकृत फलरस ही काम मे लिये जाते है। घरेलू स्तर के लिए नीबूवर्गीय फल रस को शुद्ध बोतलो मे भरकर 0.15 प्रतिशत यानि प्रति किलो ग्राम रस मे 1½ ग्राम के अनुपात मे पोटेशियम मैटाबाई सल्फाइट मिलाकर कम मे कम 1 महीने रखकर निर्मलीकरण विधेयक बनाया जाकर साइफनीकरण से ऊपर तैरते हुए, रस को कपड़े से छानकर घरेलू स्तर पर लिया जा सकता है। बोतलों के पैंदे में प्रवशेष (Residue) जमा रहेगा। साइफनीकरण के समय यह ध्यान रखना चाहिए कि यह कीट तैरते हुए (निर्मलीकृत) रस में मिल न जाये। व्यावसायिक स्तर पर यन्त्रो की सहायता से निर्मलीकृत रस को छान लिया जाता है।

प्रत्येक योग में बतायी गयी मात्रा मे अच्छे किस्म के जौ का आटा लेकर थोड़ा जल मिलाकर चटनी-सी बना देनी चाहिए, इसमे चाही गई मात्रा मे योगाश के आधार पर पानी मिलाकर पकाना चाहिए। पके हुए को ठण्डा कर मलमल कपड़े से छान लिया जाये।

फलरस, यवजल तथा अन्य पदार्थों को जैसा प्रत्येक योगांशों मे बताया गया है, यथाविधि मिलाकर बोतलीकरण, लेबलीकरण इत्यादि कर ठण्डे तथा शुष्क स्थान पर संचयन करना चाहिये। साधारणतया बनाये जाने वाले कुछ नीबूवर्गीय यव पेयो के बारे में योग संख्या 12, 13, 14 व 15 मे बताया गया है।

योग-संख्या 12
ग्रेपफ्रूट बारलीवाटर

क्रम सख्या	योगांश किलोग्राम में	रस—25 प्रतिशत ब्रिक्स—45° अम्लता—1.5%.	रस—25 प्रतिशत ब्रिक्स—45° अम्लता 1.5%.
1	ग्रेपफ्रूट निर्मलीकृत रस (ब्रिक्स 10°, अम्लता 1.25%)	100 000	100.000
2	शर्करा	157.818	119.480
3.	साइट्रिक अम्ल	4.675	3.197
4.	सुगन्ध	2.459	1 887
5.	यवजल 1	125.541 लीटर	71.861 लीटर
6.	परिरक्षक (पोटेशियम मैटाबाई सल्फाइट)	0.246	0.183

योग-संख्या 13
लैमन बारलीवाटर

क्रम संख्या	योगांश किलोग्राम में	रस—25 प्रतिशत ब्रिक्स—45° अम्लता—1.5%	रस—$33\frac{1}{3}$ प्रतिशत ब्रिक्स—45° अम्लता—1 66%
1.	लैमन रस निर्मलीकृत (ब्रिक्स 10°, अम्लता 5 प्रतिशत)	100.000	100 000
2.	शर्करा	165 827	122.943
3	साइट्रिक अम्ल .	0.983	
4.	यवजल 2	125.541	71.861
5.	सुगन्ध	2.459	1.223
6.	परिरक्षक (पोटेशियम मैटाबाई सल्फाइट)	0.246	0.183

योग-संख्या 14
लाइम बारलीवाटर

क्रम संख्या	योगांश किलोग्राम में	रस—25 प्रतिशत ब्रिक्स—45° अम्लता—1 5%	रस—$33\frac{1}{3}$ प्रतिशत ब्रिक्स—45° अम्लता—2.0%
1	निर्मलीकृत कागजी नीबू रस (ब्रिक्स 10°, अम्लता 6 प्रतिशत)	100 000	100.000
2	शर्करा	167 099	122.943
3.	यवजल 3	128.138	74.459
4.	परिरक्षक (पोटेशियम मैटाबाई सल्फाइट)	0.246	0.183

1, 2, 3 तथा 4 इनके लिए 0.600 ग्राम (25 प्रतिशत रस के लिये) तथा 460 ग्राम ($33\frac{1}{3}$ प्रतिशत रस के लिये) के अनुपात में जौ का आटा लेकर, पका कर उसका रस छानकर यव-जल बनाया जाता है।

योग-संख्या 15
ओरेन्ज बारलीवाटर

क्रम संख्या	योगांश किलोग्राम मे	रस—25 प्रतिशत ब्रिक्स—45° अम्लता—1.5%	रस—33⅓ प्रतिशत ब्रिक्स—45° अम्लता—1.5%
1.	निर्मलीकृत सन्तरा रस (ब्रिक्स 10°, अम्लता 0.25%)	100.000	100.000
2.	शर्करा	167.640	119.480
3.	साइट्रिक अम्ल	5.108	3.636
4.	सन्तरा सुगन्ध या (ओरेन्ज पील ऑयल तथा सन्तरा सुगन्ध जैसे ओरेन्ज स्क्वैश मे बतायी गयी है)	2.459 एम.एल.	1.904 एम.एल.
5.	यवजल 4	108.225	70.995
6.	सन्तरा वर्ण	0.015 या आवश्यकतानुमार	0.011
7.	परिरक्षक (पोटेशियम मैटाबाई सल्फाइट)	0.246	0.184

लाइम कोरडियल

एक अन्य प्रमुख नीवूवर्गीय फलपेय है, कागजी नीबू कोरडियल (मधुपेय) है जो लाइम कोरडियल के नाम से विपणी मे तथा वैज्ञानिक क्षेत्र मे जाना जाता है। गिरधारीलाल तथा साथियो के सुझाव के आधार पर तैयार किये गये व र विभिन्न लाइम कोरडियल का एक योग, योग संख्या 16 मे दिया जा रहा है। इसमें परिपूर्ण रूप से निर्मलीकृत रस ही काम मे लिया जाता है। लाइम कोरडियल विशेषतौर से ऐल्कोहोलिक बिवरेज (मद्यसार पेय) मिलाकर पिये जाते हैं। इसलिए इसको कोरडियल (मधुपेय) नाम दिया गया है।

कुछ विशेष फल–शर्बत

सन् 1960 के आंकडो के आधार पर हम यह कह सकते है कि भारत मे लगभग 1,024 टन शर्बत का निर्माण किया जाता था, जिसका मूल्य उस समय करीब 21,42,000 रुपये था। आज इससे कही अधिक शर्बत उत्पादित किया जाता है, जो बिना फलरस का भी होता है, जो सन् 1980 तक 5,242 मीट्रिक टन रहा। परन्तु भारत के भिन्न-भिन्न क्षेत्रो मे घरेलू स्तर पर या कुटीर उद्योग पर कुछ विशेष शर्बत बनाये जाते है, ये है—मारासपरिल्ला (चिरायता), बादाम, अनन्नास तथा नीबूवर्गीय फलो के शर्बत। शर्बत मे शर्करा की मात्रा 65 प्रतिशत से कम नहीं होती। योग संख्या 17, 18 के अनिन योगांशो से विभिन्न शर्बत बनाये जा सकते है, जिनमे परिरक्षक मिलाने की आवश्यकता नहीं होती, लेकिन सीलबन्द बोतलो को जल ऊष्मक मे संसाधन करना आवश्यक है। भरते समय बोतलो मे 2 से 3 सेन्टीमीटर खाली स्थान छोडना आवश्यक है।

योग-संख्या 16

लाइम कोरडियल

क्र. स.	योगाश किलोग्राम में	रस–25 प्रति० ब्रिक्स–45° अम्लता–1.5 %	रस–$33\frac{1}{3}$ प्रति० ब्रिक्स–45° अम्लता–2 %	रस–25 प्रति० ब्रिक्स–65° अम्लता–1.5 %	रस–$33\frac{1}{3}$ प्रति ब्रिक्स–65° अम्लता–2 %
1.	कागजी नीबू रस (निर्मलीकृत) ब्रिक्स 10°, अम्लता 6.0 प्रतिशत	100.000	100.000	100.000	100.000
2.	शर्करा	130.000	96.916	191.639	140.969
3.	जल	171.806	105.727	110.132	61.674
4.	नींबूवर्ण		आवश्यकतानुसार		
5.	परिरक्षक (पोटेशियम मैटा बाई सल्फाइट)	0.251	0.187	0.251	0.187

ध्यान रखें इस अध्याय मे बताये गये विभिन्न फल पेयों की ब्रिक्स डिग्री पेय निर्माण करने के बाद भी परीक्षण कर (रेफरेक्ट्रोमीटर द्वारा) निश्चय कर लेना चाहिए कि योगाश मे या आप, पेय मे चाही गई ब्रिक्स उसमे है या नही । अगर कम हो तो अधिक ब्रिक्स डिग्री की चाशनी मिलाकर पूर्ण कर लेना चाहिए । इसी प्रकार अम्लता की जाँच भी कर लेनी चाहिए, ताकि हमेशा चाही गई रस मात्रा, ब्रिक्स डिग्री तथा अम्लता पेयों में पाई जाये ।

योग-संख्या 17

विभिन्न फलों का शर्बत

क्र० म.	योगांश	सन्तरा रस लीटर मे	लेमन रस लीटर मे	अनन्नास रस लीटर मे	रसबरी रस लीटर में	स्ट्राबरी रस लीटर मे
1	शर्बत 70° ब्रिक्स	1000.00	1000.00	1000.00	1000.00	1000.00
2	साइट्रिक अम्ल किग्रा.मे	1.804	3.260	1.804	0.891	0.543
3	वर्ण	आवश्यकतानुसार प्रत्येक फल का वर्ण प्रत्येक शर्बत मे मिलाना चाहिए ।				
4	सुगन्ध एम. एल. मे	1.804	5.326	0.913	1.804	1.804

योग संख्या 18

अंगूर शर्बत

क्र० म०	योगांश	मात्रा किलो ग्राम मे	टिप्पणी
1	नील वर्ण का अंगूर रस	100.000	तीनों को मिला
2	शर्करा	150.000	कर हल्का
3	साइट्रिक अम्ल	2.000 से 2.500	80° से 84 से०
4	परिरक्षक (सोडियम बेन्जोयेट)	0.375 मिलीग्राम प्रति किलोग्राम शर्बत के अनुपात मे या 1.75	तक गर्म करें ताकि चीनी घुल जाए

फ्रूट नेक्टर (फल मकरन्द)

फल-गूदे में शर्करा, साइट्रिक अम्ल, जल आदि मिलाकर पास्चरीकरण द्वारा बनाये उत्पाद को ही फ्रूट-नेक्टर (फल मकरन्द) कहा जाता है। पपाया, केला, अमरूद, चीकू, कटहल आदि फलों से फल-मकरन्द बनाया जा सकता है। इसमें से दो का वर्णन यहाँ किया गया है। योग संख्या 19, 20 तथा 21 मे बताये गये फ्रूट-नेक्टर निर्माण केन्द्रीय खाद्य प्रौद्योगिक अनुसन्धान संस्थान द्वारा निर्देशित योगो पर आधारित है।

(1) जैक फ्रूट नेक्टर (कटहल मकरन्द)

जैक फ्रूट-नेक्टर स्वादपूर्ण ही नही, अपितु मनमोहक सुगन्धयुक्त भी होता है। इसके लिए पूर्ण विकसित पका हुआ कटहल काम मे लिया जाता है। कटहल को धोकर, काटकर, कन्द को निकालकर उसके भीतर के बीज तथा अनचाहे भागो को अलग किया जाता है। इन्हें कतरकर योग सं. 19 के आधार पर जल मिलाकर, नर्म कर पत्थर या अन्य कोई यन्त्र की सहायता से गूदा बना लें। पूर्व ही अम्ल मिलाये गए 60° ब्रिक्स की शर्करा चाशनी रस मे मिला दी जाये। इसमे परिरक्षक जिसकी मात्रा योगांश मे बताई गई है, चाहें तो मिला सकते हैं अन्यथा तैयार किये मकरन्द को बोतलों मे भरकर ऊष्मा-संसाधन कर व पौट्राइज, निर्जमीकरण कर बाद मे अन्य उत्पादों की भाँति ठण्डे तथा शुष्क स्थान मे संग्रहन करें। ध्यान रखें कि बिना ऊष्मा-संसाधन के कैनो में भरे जाते हैं तो पोटेशियम मेटाबाई सल्फाइट नहीं मिलाते। कैनों में भरकर ऊष्मा संसाधन द्वारा ही परिरक्षण करना चाहिये

योग-संख्या 19

जैक फ्रूट नेक्टर

क्रम संख्या	योगांश	किलोग्राम में
1	कटहल स्कन्द गूदा	100.000
2	शर्करा	220.500
3	जल	150.000
4	साइट्रिक	9.700
5	परिरक्षक (पोटेशियम मैटाबाई सल्फाइट)	0 228

(2) पपाया नेक्टर

कैनीकरण की भाँति फलों को तैयार कर योग-संख्या 20 में बताये अनुसार योगांश एकत्र कर लें। जल, शर्करा, साइट्रिक अम्ल मिलाकर घोल बना लें। इस घोल को छानकर तैयार किये गये पपीते के गूदे में अच्छी तरह मिला दें। मिलाते समय शर्करा अम्ल मिश्रण का तापमान 20° सेन्टीग्रेड से अधिक होना चाहिये। योगांश को पूर्ण रूप से मिलाने के बाद यन्त्र द्वारा हॉमजीनियस (एकरूपता) करें। इसके बाद परिरक्षक मिलाकर वाहिका में भरकर, लेबलीकरण इत्यादि नियमानुसार कर लें। अगर परिरक्षक नहीं मिलाया जाता है तो मिश्रण को 85° से 88° सेन्टीग्रेड पर गर्मकर इन्हे पूर्व ही निर्जलीकृत साधारण कैनों में या लैकीकृत कैनों में गर्म-गर्म भरकर एक मिनिट उल्टा रखें। इन कैनों का 38° सेन्टीग्रेड ताप पर पहुँचने के बाद ही संचयन करना चाहिए।

योग-संख्या 20

पपाया नेक्टर

क्रम संख्या	योगांश	किलोग्राम
1	पपीता गूदा	100
2	जल	150 से 200
3	शर्करा	40
4	साइट्रिक	1.250 से 1.750
5	परिरक्षक	0 145

योग-संख्या 21

गोवा नेक्टर

क्रम संख्या	योगांश	किलोग्राम में
1	अमरूद गूदा	100
2	जल	90
3	शर्करा	40
4	साइट्रिक अम्ल	0 675
5	परिरक्षक	0.145

गोवा नेक्टर बनाने के लिए पूर्ण विकसित पके हुए पीले अमरूदों को चुनना चाहिए। इन्हें यथाविधि धोकर, चार टुकड़े करके पिटिंग-नाइफ से बीज अलग कर दें। इन बीजों में मामूली पानी डालकर, उबालकर, छलनी से बीजों को अलग कर दें। बीज के गूदे को भी कतरे हुए अमरूद में मिलाकर पुन. उबालें या कतरे हुए अमरूद को उबालने के बाद उसमें मिलावें। इसके लिए पूर्व चर्चित किसी एक यन्त्र की सहायता से गूदा बना लें। इस गूदा में योग संख्या–21 के अनुसार योगांशों को मिलाकर नेक्टर तैयार कर सकते हैं।

आर० टी० एस० बिवरेज

अन्य सोफ्ट ड्रिंक की भाँति दूकान से सीधे लेकर, ढक्कन खोलकर पीने योग्य अवस्था में तैयार किये हुए एक पेय को आर०टी०एस० बिवरेज के नाम से जाना जाता है। इसमें 10 से 20 प्रतिशत फलरस कुल जल विलेय घन-पदार्थ कम से कम 12 प्रतिशत होना अनिवार्य है। इसमें परिरक्षक भी नहीं मिलाया जाता। परन्तु जल-ऊष्मक में समाधन कर परिरक्षण किया जाता है। इसके अलावा इन्हें आइस बॉक्स में रखने से पेय ठण्डे भी हो जाते हैं। इसके लिए निर्मलीकृत फलरस ही काम में लिये जाते हैं। अंगूर के रस से आर० टी० एस० बिवरेज बनाने के लिए आवश्यक योगांश योग संख्या 22 में बताये गये हैं। आज भारत में (1980) 8587 मैट्रिक टन आर० टी० एस० बिवरेज उत्पाद किया है।

योग-संख्या 22

क्रम संख्या	योगांश	मात्रा किलोग्राम में
1	निर्मलीकृत नीलवर्ण का अंगूर रस (ब्रिक्स 15°, अम्लता 1.5 प्रतिशत)	100 000
2	जल	795 000
3	शर्करा	103.500
4	साइट्रिक अम्ल	1.500

फलपेय निर्माण तथा परिकलन

यहाँ फल-निर्माण के समय ध्यान रखने तथा फलपेय निर्माण स्पष्ट रूप से समझने के लिए आवश्यक कुछ बुनियादी परिकलनों (गणितों) के बारे में चर्चा की जा रही है। फल प्रत्येक ऋतु में उत्पादन अधिक होने से विपणी में सस्ता हो जाना स्वाभाविक है। इसके अलावा एक कारखाने में जब चाहे फलपेय निर्माण के लिए फलरसों को संचयन कर रखना अति आवश्यक है। वर्ष में कभी भी देश से या विदेश में फलपेयों की माँग आ सकती है। इस समय संचयन किये गये फलरस से ही माँग की पूर्ति की जाती है। जब व्यापारी व्यवसायियों से एक फलपेय माँगते हैं तब वे आमतौर से उनमें कितनी ब्रिक्स डिग्री, अम्लता तथा फलरस चाहते हैं उसका भी उल्लेख किया हुआ होता है। साथ ही यह भी माँग होती है कि उसमें परिरक्षक कौन-सा होना चाहिये और कितनी मात्रा में

होना चाहिये। उपर्युक्त बातों को ध्यान मे रखते हुए फैक्ट्री मे एक फलपेय का निर्माण किया जाता है। इसको स्पष्ट करने के लिए आपको निम्नलिखित कुछ गणितो के बारे मे बताया जा रहा है।

प्रश्न संख्या 1

मान लें कि आपको सचयन किये हुए सन्तरे के रस से स्क्वैश बनाना है। इस रस मे ब्रिक्स डिग्री 10, अम्लता 0.6 प्रतिशत और 600 पी० पी० एम० सल्फर-डाई-ऑक्साइड है। यदि 25 प्रतिशत रस, 45 प्रतिशत कुल घुलनशील घन पदार्थ (T S S), अम्लता 1 5 प्रतिशत तथा सल्फरडाई ऑक्साइड की मात्रा 350 पी० पी० एम० (मान लें पोटेशियम मैटाबाई सल्फाइट शतप्रतिशत शुद्ध है) वाला 1000 किलोग्राम ओरेञ्ज स्क्वैश बनाना हो, तो इसके लिए किन-किन पदार्थों की कितनी-कितनी मात्रा मे आवश्यकता होगी। इसके लिए दी गयी शर्करा चाशनी की ब्रिक्स 70° होगी।

(1) कुल ओरेञ्ज स्क्वैश की चाही गई मात्रा = 1000 कि ग्रा.
कुल आवश्यक सन्तरा रस 25 × 1000 = 250 कि. ग्रा.
दी गयी रस की ब्रिक्स डिग्री = 10°

रस मे उपस्थित शर्करा $\frac{10 \times 250}{100}$ = 25 किलोग्राम

दी गई रस की अम्लता = 0.6 प्रतिशत

इसलिए कुल अम्लता (रस मे) = $\frac{0.6 \times 250}{100}$ = 1.5 किलोग्राम

दी गई रस मे पायी जाने वाली पोटेशियम मैटाबाई सल्फाइट = 600 पी पी एम.

इसलिए कुल पोटेशियम मैटाबाई सल्फाइट = $\frac{600 \times 250}{100}$ = 0 15 किलोग्राम

(2) 1000 किलोग्राम पानक बनाने के लिए आवश्यक कुल घन-पदार्थ
(घुलनशील) $= \frac{45 \times 1000}{100}$ · 450 किलोग्राम

100 किलो पानक के लिए आवश्यक अम्लता

$$= \frac{1.5 \times 1000}{100} = 15 \text{ किलोग्राम}$$

1000 लीटर मे कुल पोटेशियम मैटाबाईसल्फाइट (चाही गई)

$$= \frac{350 \times 1000 \times 222}{1000,000 \times 128} = 0.6 \text{ किलोग्राम}$$

$$= 0{\cdot}6 - 0{\cdot}15 = 0{\cdot}45 \text{ किलोग्राम}$$

(3) पानक में अब आवश्यक अम्लता

आवश्यक अम्लता—रस की अम्लता = 15 − 1 5 = 13.5 किलोग्राम मिलाने के लिए आवश्यक कुल घुलनशील घन पदार्थ = चाहा गया कुल घुलनशील घन पदार्थ − रस में उपस्थित कुल घुलनशील घन पदार्थ

= 450 − (25 − 13 5 + 0 45) = 450 − 11.95
= 438 05 किलोग्राम

इसलिए आवश्यक वस्तु (योगार्श) = 438.05 किलोग्राम

(1) सन्तरा रस = 250 किलोग्राम (जिसका ब्रिक्स 10° तथा अम्लता 1 6 प्रतिशत हो)

(2) कुल अम्लता जो अब मिलानी है = 13.5 किलोग्राम

(3) शर्करा = 438 05 ,,

(4) पोटेशियम मैटाबाई सल्फाइट = 0 45 ,,

(5) जल = 1000 − (250 + 13.5 + 438.05 + 0 45)
= 1000 − 702 00
= 298 000
= 298 कि॰ग्रा॰

प्रश्न संख्या 2

मान लें, आपको संचयन किया हुआ कागजी नीबू रस दिया गया है, जिसका ब्रिक्स 8°, अम्लता 7 प्रतिशत तथा 800 पी॰ पी॰ एम॰ सल्फर-डाई-ऑक्साइड है तथा शर्करा चाशनी जो दी गयी है, उसका ब्रिक्स 80°, अम्लता 0.1 प्रतिशत हो तो बताइये कि 1000 किलोग्राम लाइम स्क्वैश बनाने के लिए किन-किन योगांशों की कितनी-कितनी मात्रा में आवश्यकता होगी। लाइम स्क्वैश में 25 प्रतिशत रस, 45 प्रतिशत कुल घुलनशील घन-पदार्थ, 1.5 प्रतिशत अम्लता तथा 350 पी॰ पी॰ एम॰ पोटेशियम मैटाबाई सल्फाइट होनी चाहिये।

(1) कुल चाहा गया लाइम स्क्वैश = 1000 किलोग्राम

इसलिए कुल लाइम जूस का भार $= \frac{25 \times 1000}{100} = 250$ किलोग्राम

रस का ब्रिक्स $= 8°$

इसलिए 250 किलोग्राम रस में पायी जाने वाली कुल शर्करा $= \frac{8 \times 250}{100} = 20$ किलोग्राम

रस में कुल अम्लता $= \frac{7 \times 250}{100} = 17.5$ किलोग्राम

250 किलोग्राम रस में मिली हुई पोटेशियम मैटाबाई सल्फाइट $= \frac{800 \times 250}{10,00,000} = 0.20$ किलोग्राम

(2) 1000 किलोग्राम स्क्वैश के लिए चाही गयी शर्करा $= \frac{45 \times 1000}{100} = 450$ किलोग्राम

(1) 1000 किलोग्राम स्क्वैश बनाने के लिए चाही गई अम्लता $= \frac{1.5 \times 1000}{100} = 15$ कि.ग्रा.

(2) कुल आवश्यक पोटेशियम मैटाबाई सल्फाइट $= \frac{350 \times 1000}{10,00,000} = 0.35$ कि.ग्रा.

(3) इसलिए आवश्यक शर्करा $= 450 - 20 = 430$ कि.ग्रा.

दी गई शर्करा चाशनी का ब्रिक्स $= 80^\circ$

इसलिए आवश्यक कुल शर्करा चाशनी $= \frac{100 \times 430}{80} = 537.500$ कि.ग्रा.

इसलिए चाशनी में पायी जाने वाली अम्लता $= \frac{0.1 \times 537\ 500}{100}$

$= 0\ 54$ कि ग्रा.

इसलिए स्क्वैश मे मिलाने हेतु आवश्यक अम्लता = चाही गयी अम्लता−रस मे रही अम्लता − चाशनी में पायी जाने वाली अम्लता

$= 15\ 0 - (17\ 50 + 0\ 54)$

$= 15\ 0 - 18\ 04$ हानि

$18\ 04 - 15\ 0$

$= 3\ 02$ किलोग्राम अम्लता अधिक है

आवश्यक पोटेशियम मैटाबाई सल्फाइट $= 0\ 6 - 0\ 20 = 0.400$

आवश्यक जल = रस + चाशनी + अम्ल + पोटेशियम मैटाबाई सल्फाइट

$= 250 + 537\ 500 + 3\ 02 + 0\ 400 = 790.925 = 1000$

$=$ $1000 - 790\ 920 = 209\ 080$

आवश्यक योगांश

(1) रस = 250 किलोग्राम (2) अम्ल = शून्य (क्योंकि अम्ल अधिक है)

(3) चाशनी = 437.500 (4) पो० मै० बा० सल्फाइट = 0 560

(5) जल = 209 080

प्रश्न संख्या 3

मान लें आपको सन्तरा रस जिसका ब्रिक्स 10°, अम्लता 0 5 प्रतिशत है तथा कागजी नीबू-रस जिसका ब्रिक्स 8° व अम्लता 6 प्रतिशत हो, दिया जाता है। आपको ओरेन्ज-लाइम स्क्वैश (2 : 1 अनुपात में) बनाना है। इस मिश्रण में कुल जूस 30 प्रतिशत, अम्लता 1·5, पोटेशियम मैटाबाई सल्फाइट 350 पी पी. एम. तथा कुल घुलनशील घन-पदार्थ 45° ब्रिक्स हो तो 900 किलोग्राम स्क्वैश बनाने के लिए आवश्यक योगांश तथा मात्रा बताइये।

(1) कुल आवश्यक रस $= \frac{30 \times 900}{100} = 270$ कि०ग्रा०

इसलिए आवश्यक सन्तरा रस $= \frac{2 \times 270}{3} = 180$ कि. ग्रा.

तथा आवश्यक कागजी नींबू रस $= 270 - 180 = 90$

सन्तरा रस का कुल,घुलनशील घन-पदार्थ $= \frac{10 \times 180}{100} = 18$ कि.ग्रा.

नीबूरस का कुल घुलनशील घन पदार्थ $= \frac{8 \times 90}{100} = 7.2$ कि.ग्रा.

नीबूरस का कुल अम्ल $= \frac{0.6 \times 90}{100} = 0.54$ कि.ग्रा.

सन्तरा रस का कुल अम्ल $= \frac{0.5 \times 180}{100} - 0.9$ कि.ग्रा.

270 किलोग्राम रस मे उपस्थित कुल
घुलनशील घन पदार्थ $= 18 + 7.2 = 25.2$ कि.ग्रा.
कुल अम्लता $= 0.54 + 0.9 = 1.44$ कि.ग्रा.

(2) 900 किलोग्राम स्क्वैश के लिए
आवश्यक शर्करा $= \frac{45 \times 900}{100} 405$ कि.ग्रा.
रस मे उपस्थित शर्करा $= 25.2$
इसलिए चाही गई अधिक शर्करा $= 405 - 25.2 = 379.8$ कि.ग्रा.

स्क्वैश मे आवश्यक अम्लता $= \frac{1.5 \times 900}{100} = 13.5$ कि.ग्रा.

इसलिए शेष अम्लता $= 13.5 - 1.44 = 12.06$ कि.ग्रा

आवश्यक पोटैशियम मैटाबाई सल्फाइट $= \frac{350 \times 900}{1000,000} = 0.36$ कि.ग्रा.

इसलिए 900 किलोग्राम औरेञ्ज लाइम स्क्वैश मिश्रण बनाने के लिए निम्नलिखित योगांगो की आवश्यकता होगी :—

(1) सन्तरा रस = 180 किलोग्राम
(2) कागजी नीबूरस = 90 „
(3) शर्करा = 380 „

(4) अम्ल = 12.06 किलोग्राम

(5) पो.मै.बा सल्फाइट = 0.36 किलोग्राम

(6) जल = 900 − 662.42 = 237.58 कि. ग्रा.

प्रश्न संख्या 4

मान लें आपको ताजा अंगूर रस (नीलवर्णी) दिया जाता है। इस रस की बिक्स डिग्री 15, अम्लता 1.5 है। बताइए कि 10 किलो आर॰टी॰एस॰ बिवरेज बनाने के लिए किन-किन योगांशों की कितनी मात्रा में आवश्यकता होगी। बिवरेज में 10 प्रतिशत रस, 12 प्रतिशत कुल घुलनशील घन-पदार्थ अम्लता 0 30 प्रतिशत होनी चाहिये।

(1) कुल चाहा गया आर॰ टी॰ एस॰ बिवरेज = 10 किलोग्राम

इसलिए आवश्यक अंगूर रस $= \frac{10 \times 10}{100} = 1$ किलोग्राम

रस मे पायी जाने वाली शर्करा $= \frac{15 \times 1}{100} = 0.015$ किलोग्राम

रस में पायी जाने वाली अम्लता $= \frac{1.5 \times 1}{100} = 0.015$ किलोग्राम

इसलिए 10 किलो आर॰ टी॰ एस॰ के लिए शर्करा $= \frac{12 \times 10}{100} = 1.2$ किलोग्राम

रस में पायी जाने वाली घुलनशील पदार्थ = 0 15 + 0.015 = 0.165

= 1 2 − 0.165

= 1.035

10 किलो आर॰ टी॰ एस॰ बिवरेज में पायी जाने जाने वाली कुल अम्लता $= \frac{0.3 \times 10}{100} = 0.03$ किलोग्राम

इसलिए आवश्यक अम्लता = 0.03 − 0.015

= 0 015

इसलिए शेष चाही गई अम्लता = 0.015

10 किलोग्राम आर० टी० एस० बिवरेज बनाने के लिए आवश्यक योगांश तथा मात्रा

1 अंगूर रस	= 1.000 किलो
2 शर्करा	= 1.035 ,,
3 अम्लता	= 0 015 ,,
4 जल	= 1 + 1.035 + 0 015
	= 2.050
	= 10 − 2 050 = 7.950 किलोग्राम जल

उपर्युक्त परिकलन (गणित) से आपको भली-भाँति मालूम हो गया कि कुल घुलनशील घन-पदार्थ केवल शर्करा ही नहीं, अपितु साइट्रिक अम्ल, रासायनिक पदार्थ, प्रति घुलनशील पदार्थ भी जोड़े हुए होते हैं। किसी-किसी पेय में लवण या मसाले मिलाये गये हों तो उन्हें भी जोड़ा जाता है। इसलिए इन सभी पदार्थों के जल विलेय या घुलनशील घन-पदार्थ (टी० एस० एस०) भी शामिल किये जाते हैं, चाहे वह कितने भी न्यून क्यों न हो।



भाग-3

ऊष्मा प्रयोग परिरक्षण

(ऊष्मा संसाधन)

(Heat Processing)

अध्याय 1

कैनीकरण व्यवसाय

(Commercial Canning)

कैनीकरण तथा मूल सिद्धान्त
(The Fondamental Principle of Canning)

फल-तरकारियों को, अन्य खाद्य-पदार्थों की भाँति यथाविधि तैयार कर वाहिकाओं में भरकर, वायुरुद्ध अवस्था में सीलबन्द कर, ऊष्मा-संसाधन कर, उसके भीतर स्वतः पाये जाने वाले विकृतिकारक सूक्ष्मजीवियों का सम्पूर्ण रूप से नाश किया जा सकता है और फल-तरकारी को खराबियों से बचाया जा सकता है। इसके अलावा इस प्रक्रिया से किण्वकों (एन्जाइम) की क्रियाशक्ति को भी रोका जा सकता है। ऊष्मा संसाधन क्रिया से सूक्ष्म-जीवियों का नाश होता है तथा किण्वक निष्क्रिय हो जाने से खाद्य-पदार्थ में विकृतियाँ नहीं होतीं। इसके अलावा आप भली-भाँति यह भी जानते हैं कि कुछ सूक्ष्मजीव वायु के अभाव में वृद्धि नहीं कर पाते। यह अवस्था भी संसाधन के समय वाहिकाओं में सम्पन्न करायी जाती है।

कैनीकरण चाहे बड़े व्यावसायिक स्तर पर हो या कुटीर उद्योग स्तर पर, मूल सिद्धान्त में कोई परिवर्तन नहीं आता, परन्तु मूल सिद्धान्तों को अधिक सतर्कता के साथ व्यावसायिक स्तर पर सम्पन्न करना अधिक आवश्यक है। इसके अलावा उत्पादन-क्षमता के अनुसार यन्त्र सामग्री, उपस्कर आदि का उचित मात्रा में, उचित ढग से क्रमीकरण किया होना आवश्यक है, क्योंकि व्यावसायिक स्तर के उत्पादों का साधारणतया एक वर्ष बाद ही विक्रय होता है। यह भी सम्भव है कि भारत जैसे ऊष्णमेखलीय प्रदेश में उत्पादित खाद्य-पदार्थ बिक्री के लिये रूस, संयुक्त राज्य अमेरिका जैसे शीत प्रदेशीय देशों में जाते हों। इसलिए अधिक सतर्कता के साथ उत्पादन करना पड़ता है।

इसके अलावा शीतकाल में कैनीकरण किया हुआ (ऊष्मा-संसाधित) खाद्य पदार्थ ऊष्णमेखलीय प्रदेशों में या ऊष्णकाल में बिक्री के लिए बाजारों में आता है। इसलिए उपर्युक्त बातों को कैनीकरण के समय ध्यान में रखना उचित होगा।

परन्तु लघु-उद्योग, कुटीर-उद्योग तथा घरेलू स्तर के उत्पादों की बिक्री आमतौर पर देश में या प्रान्त में या उसी क्षेत्र में होती है, इसलिए बड़ी व्यवसाय-शालाओं में अपनायी गयी सतर्कताएँ यहाँ पर आवश्यक नहीं हैं, क्योंकि यहाँ उत्पादित माल शीघ्र बिक जाने की सम्भावना है।

ऊष्मा संसाधन

ऊष्मा-संसाधन (Heat Processing), पाचनीकरण (Cooking), [illegible]

(Retorting) आदि विभिन्न नामों से जाना जाता है। ऊष्मा संसाधन से हमारा अभिप्राय विशेषतौर से निर्जर्मीकरण है। परन्तु फल-तरकारियों को, अन्य खाद्य पदार्थों की भाँति वाहिकाओं में भरकर ऊष्मा संसाधन करते समय पूर्ण निर्जर्मीकरण नहीं होता। फिर भी वाहिका के भीतर के आहार में पाये जाने वाले सूक्ष्मजीवियों का नाश या उनके निष्क्रिय हो जाने से प्रजनन में वंशवृद्धि भी नहीं होती, इसलिए खाद्य-पदार्थ खराब नहीं होते। अगर खाद्य-पदार्थ को वाहिका-रहित परिस्थिति में ऊष्मा-संसाधित किया जाये तो उसका सम्पूर्ण निर्जर्मीकरण तो हो जायेगा, परन्तु खाद्य पदार्थ का पोषक गुण नष्ट होने से परिरक्षण का उद्देश्य पूर्ण नहीं होगा। इसलिए आहार को वाहिका में भरकर किये जाने वाले ऊष्मा-संसाधन को व्यावसायिक निर्जर्मीकरण (Commercial Sterilization) कहा जाता है। पूर्ण निर्जर्मीकरण तथा व्यावसायिक निर्जर्मीकरण का अर्थ आप भली-भाँति जान गये होंगे। एक बात और बता देना चाहते है कि बिना वाहिका में निर्जर्मीकरण किया हुआ खाद्य पदार्थ, बाहर निकलते ही खुली हवा के सम्पर्क में पुनः सूक्ष्मजीवों के प्रवेश से खराब हो जाने की सम्भावना भी रहती है। इसलिए, वाहिका में भरकर सीलबन्द करके ही ऊष्मा संसाधन किया जाता है।

पूर्ण निर्जर्मीकरण के लिए आवश्यक ऊष्मा का खाद्य पदार्थ पर प्रयोग किया जाये तो पोषकगुण में ही नहीं बल्कि विटामिन, वर्ण, सुगन्ध आदि गुणों में भी कमी आ सकती है, परन्तु पूर्ण निर्जर्मीकरण के लिए आवश्यक ऊष्मा को एक निश्चित मात्रा में, निश्चित समय के लिए खाद्य पदार्थों से भरी सीलबन्द वाहिकाओं को दिया जाये, तुरन्त उन वाहिकाओं को रिटोर्ट में से निकालकर भवन-ताप (20^o से 25^o सेन्टीग्रेड) पर ठण्डा किया जाये तो वाहिका के भीतर रखे खाद्य पदार्थ पर किसी प्रकार का अवांछनीय (प्रतिकूल) प्रभाव नहीं पड़ेगा। साथ ही खाद्य पदार्थ का परिरक्षण भी सम्भव हो जायेगा। लेकिन आहारों (विशेषकर फल-तरकारी) की अम्लता, ऊष्मा-रोधक सूक्ष्मजीवियों की उपस्थिति, उनकी संख्या तथा आहार भरने के लिए ली गयी वाहिका की ऊष्मा-रोधक क्षमता आदि निर्जर्मीकरण तीव्रता का नियन्त्रणकारी है।

कैनीकरण प्रणाली

कैनीकरण के लिए चुने हुए फल-तरकारी एक ही किस्म के तथा समान रूप से पूर्ण विकसित समान आकार के होने चाहिए, जिनमें किसी प्रकार की विकृति न हो। उपर्युक्त फल या तरकारी चुनते समय यह भी ध्यान रखें कि वे आवश्यकता से अधिक पके हुए या आवश्यकता से अधिक विकसित हुए न हों।

तरकारी को चुनते समय कुछ अधिक सावधानियाँ रखनी होंगी। पूर्ण विकसित सेम मटर, भिण्डी गाजर, चुकन्दर, पत्तागोभी, फूलगोभी आदि कैनीकरण के लिए उचित नहीं हैं। इसके विपरीत टमाटर, पूर्ण विकसित तथा लाल होना आवश्यक है। इसी प्रकार आलू, कोला (काशीफल) आदि पूर्ण विकसित ही चुने जाते हैं। तरकारियाँ पेड़-पौधे से तोड़ते ही कैनीकरण के लिए यथाशीघ्र काम में ली जानी चाहिए, अन्यथा तरकारी उत्पादों में गुणों की कमी ही नहीं, अपितु कैनीकरण के पश्चात् खराबियाँ भी सम्भव है। अगर तुरन्त कैनीकरण के लिए सम्भव नहीं है तो इनका शीतगोदामों में संचयन करना होगा, किन्तु इसमें उत्पादन खर्च बढ़ेगा। एक कैनमाप-शाला में सम्भावित कठिनाइयों को देखते हुए शीत-गोदामों का होना भी आवश्यक है।

फल-तरकारी चयन तथा श्रेणीकरण

कैनीकरण के लिए ली जाने वाली फल-तरकारियाँ एक ही आकार तथा वजन की होनी अत्यावश्यक हैं। कुछ विशेष फलों जैसे आम, अनन्नास आदि का बड़े स्तर की व्यवसाय-शालाओं में भी मानव अपने हाथ से ही श्रेणीकरण करता है, क्योंकि या तो वहाँ श्रेणीकरण के योग्य यन्त्रों का अभाव होता है या यन्त्र से श्रेणीकरण करना ही असम्भव होता है। परन्तु जहाँ तक हो, यन्त्र की सहायता से श्रेणीकरण करना अति उत्तम होगा। संयुक्त राज्य अमेरिका, रूस, ब्रिटेन आदि विकसित देशों में ही नहीं, अपितु भारत के बड़े-बड़े कारखानों में भी फल-तरकारियों का श्रेणीकरण आमतौर पर यन्त्र द्वारा ही सम्पन्न होता है, ताकि उत्पादों में एकरूपता ही नहीं, अपितु वर्ण तथा सुगन्ध में भी समानता प्राप्त हो सके। यहाँ श्रेणीकरण के लिए काम में आने वाले कुछ यन्त्रों के बारे में चर्चा की जा रही है।

(1) स्क्रीन ग्रेडर (Screen Grader)

इसमें फल-तरकारियों का आकार के अनुसार श्रेणीकरण किया जाता है, जिसमें सर्वप्रथम बड़े, इसके बाद इससे छोटे के क्रम में फल-तरकारी को छाँटा जाता है। स्क्रीन ग्रेडर में इस क्रिया के लिए विभिन्न आकार की ताम्र-छलनियाँ लगी हुई होती हैं, वृत्ताकार छिद्रधारी छलनियाँ मोटर की सहायता से हिलते समय, छिद्र के आकार की फल-तरकारियाँ अपने-अपने छिद्र से होती हुई नीचे गिरती हैं, जहाँ एकत्र की जाती हैं। इस यन्त्र में आमतौर पर विभिन्न मोटाई की छः छलनियाँ लगी हुई होती हैं, लेकिन इस यन्त्र की सहायता से गोल आकृति के फल या तरकारियों का ही श्रेणीकरण किया जा सकता है।

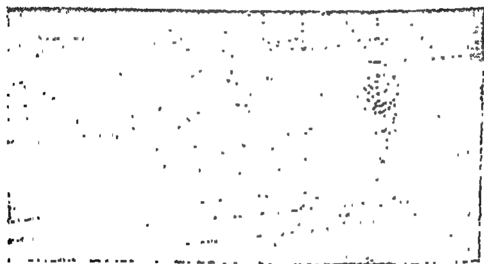
रोलर ग्रेडर (Roller Grader)

दो बाँसुरीनुमा पाइपों को एक तरफ से जोड़कर तथा दूसरी तरफ की ओर क्रमशः अलग करते हुए एक जोड़ी के बाद दूसरी जोड़ी, जोड़ी-दर-जोड़ी, जुड़े होकर एक बेल्ट की भाँति कार्य करने वाले यन्त्र को ही रोलर ग्रेडर कहा जाता है। प्रत्येक पाइपनुमा रोलर 5.1 सेन्टीमीटर व्यास का होता है। फल-तरकारियों को इन रोलरों में पहुँचाकर चलाया जाये तो गोलाकृति की फल-तरकारियों का श्रेणीकरण हो जाता है, किन्तु कतरी हुई फल-तरकारियों का श्रेणीकरण इनसे नहीं किया जा सकता।

ड्रम ग्रेडर (Drum Grader)

विभिन्न आकार के छिद्र वाला, एक से अधिक पीपों से बना ढोलकनुमा एक श्रेणीकरण यन्त्र को ही ड्रम ग्रेडर कहा जाता है। यह एल्युमीनियम या स्टेनलेसस्टील से बना हुआ होता है। जैसा पहले ही कहा जा चुका है, विभिन्न आकार के छिद्र वाले बाया रूपी छः ढोलकों से जुड़ा हुआ-सा होता है। प्रत्येक भाग एक निश्चित आकार के फल या तरकारी को अलग करने की क्षमता रखता है। प्रथम ढोलकनुमा ग्रेडर में 15 मिलीमीटर व्यास के छिद्र होते हैं तो दूसरे में 18 मिलीमीटर, तीसरे में क्रमशः 22, 25, 28 तथा

32 सेन्टीमीटर व्यास के छिद्र वाली काया बनी होती है। इस ग्रेडर को एक निश्चित डिग्री में टेढा करके जमीन पर फिट किया होता है, जिसको हाथ से या मोटर की सहायता से चलाया जाता है। फल या तरकारी उसमें पहुँचाकर चलाते समय ड्रम घूमते हैं, फलस्वरूप प्रथम ड्रम की काया से छोटे फल या तरकारी अलग हो जाती हैं तथा शेष को उस ड्रम से क्रमश: आगे चलकर भिन्न-भिन्न आकार के छिद्रों से होकर श्रेणीकरण किया जाता है। इस यन्त्र से पहले छोटे तथा बाद में क्रमश: बड़े-बड़े फल-तरकारियों का श्रेणीकरण किया जा सकता है। आज एक घण्टे में $1\frac{1}{2}$ टन फल या तरकारी का श्रेणीकरण करने की योग्य क्षमता वाले ड्रम ग्रेडर भी उपलब्ध हैं।



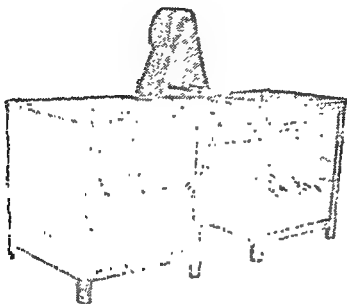
चित्र–26

वेट ग्रेडर (Weight Grader)

मोटर की सहायता से चलने वाले इस यन्त्र में कैनवास तथा यान्त्रिक तराजू लगी हुई होती हैं। इसमें फल या तरकारी पहुँचाई जाये तो वजन के अनुपात में फल या तरकारी अलग हो जायेगी। अधिक भार वाली को क्रमश: एक के बाद एक श्रेणीकरण किया जाता है। इस यन्त्र को चलाने के लिए अनुभवी व्यक्ति की आवश्यकता तथा अत्यधिक सतर्कता की आवश्यकता है।

प्रत्येक फल या तरकारी का श्रेणीकरण करने वाले यन्त्र भी प्रचलित हैं। आड़ूफल, पीच, अप्रीकाट, नाशपाती, आम, अनन्नास आदि कतरने के बाद फाँका का श्रेणीकरण किया जाता है। परन्तु सरसफल (बेरीज), प्लम, चेरी आदि फलों का बिना कतरे ही श्रेणीकरण किया जाता है। उपर्युक्त फलों का वर्गीकरण भारत में मानव अपने

हाथ से ही सम्पन्न करता है, क्योंकि विदेशों में विशेषकर विकसित देशों में मानव-श्रम, यन्त्र-श्रम से अधिक महँगा पड़ता है, जबकि भारत में यान्त्रिक-श्रम से मानव-श्रम सस्ता पड़ता है।



चित्र संख्या—27. इस यन्त्र की सहायता से बोतल ही नहीं, अपितु कैन तथा फल-तरकारियों को भिगोने तथा धोने का काम किया जाता है, इसको साधारणतया बोतल वाशिंग मशीन कहते हैं।

भिगोना तथा धोना

फल तथा तरकारियों पर असंख्य सूक्ष्मजीव अत्यधिक मात्रा में धूल, मिट्टी इत्यादि तथा पौध संरक्षण के लिए छिड़काई गई दवाओं के अंश; जैसे साबुन, गन्धक, ताम्रमय इत्यादि भी लगे हुए होते हैं। अच्छी तरह उपर्युक्त वस्तुओं को फलों से अलग नहीं किया जाता तो परिरक्षण के बाद संचयन काल में उत्पादों में विकृति या वर्णभेद हो सकता है।

इसलिए अन्य परिरक्षण विधियों की भाँति कैनीकरण के लिए भी फल-तरकारियों को जल भरी टंकियों में भिगो देते हैं, बाद में उन्हें बहते हुए पानी में धोकर निथारते हैं ताकि किसी प्रकार के अनचाहे बाहरी तत्त्व उनमें न रहें।

यह क्रिया व्यवसाय-शालाओं में हाथ से की जाती है, फलों की रचना के आधार पर उन्हें कुण्ड में रगड़कर और पानी में धोकर निकाल लिया जाता है। कुण्ड में रगड़े हुए कठोर छिलके वाले फल-तरकारियों पर जल की वर्षा (स्प्रे) कर भी धोया जाता है। इसके लिए प्रारम्भ में साधारण जल तथा उसके बाद गर्म जल से धोया जाये तो अधिक उपयुक्त रहेगा, क्योंकि साधारण पानी में अघुलनशील पदार्थ गर्म पानी में घुलनशील होकर धुल जायेंगे।

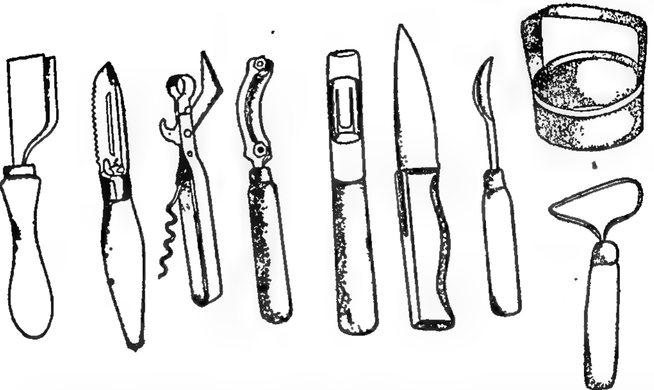
बड़े-बड़े कारखानों में यह क्रिया यन्त्र द्वारा भी सम्पन्न कराई जाती है। इसके लिए योग्य यन्त्र चित्र संख्या 30 में दिखाया गया है, जिसके बारे में अन्यत्र चर्चा की जायेगी।

फ्रूट एण्ड वैजीटेबल वाशिंग मशीन (फल-तरकारी प्रक्षालन यन्त्र)

आमतौर पर भारतीय व्यवसाय-शालाओं में काम में ली जाने वाली एक प्रक्षालन मशीन का वाशिंग सिलेण्डर (बेलननुमा) करीब 243 से.टीमीटर लम्बा तथा 70 सेन्टीमीटर व्यास का होता है। 50 बांसुरीनुमा पुर्जों से सिलेण्डर बनाया गया है। इन पुर्जों को 6 मिलीमीटर मोटाई की स्टील वृत्ताकार कड़ी में वेल्ड किया हुआ होता है। दो भीतरी कड़ियाँ 75 सेन्टीमीटर चौड़ी तथा दो बाहरी कड़ियाँ 150 मिलीमीटर होती हैं। 150 मिलीमीटर बड़ी कड़ी के नीचे पीतल से बने 150 मिलीमीटर व्यास के तथा 50 मिलीमीटर मोटाई के सिलेण्डर भी फिट किये होते हैं, जो उसे सही स्थान पर रखते है, साथ ही सिलेण्डर स्वतन्त्रता से घूमने में भी मदद करते हैं। फल-तरकारियों को जहाँ से यन्त्र में पहुँचाया जाता है, वहाँ भी एक गीयर व्हील होता है, जिसके साथ बांसुरीनुमा पुर्जे वेल्ड किये हुए होते हैं। इनमें काफी बड़े धारक लगाए हुए होते हैं, जो फल या तरकारी को यन्त्र में पहुँचाने के लिए होते है, जो सिलेण्डर के भीतर 150 मिलीमीटर तक पहुँची हुई होती है। इसी प्रकार बनाया हुआ होने के कारण फल-तरकारियाँ, जो सिलेण्डर में घुसती हैं, वह केवल मुरलीनुमा पुर्जों से ही सम्बन्ध रख पाती हैं। यह सिलेण्डर के भीतर केन्द्र-स्थान में जल-वर्षा कराने के लिए एक स्प्रे प्रणाली लगी हुई होती है। इस सिलेण्डर के बाहर नीचे की तरफ एल्युमीनियम की बनी हुई एक ट्रे लगी हुई होती है, जो सिलेण्डर के भीतर से आने वाले जल को एकत्र नहीं करती, अपितु सिलेण्डर की एक संरक्षक के रूप में रक्षा भी करती है। इसके दूसरी ओर जहाँ से फल-तरकारी धुलकर निकलते हैं, वहाँ ट्रे में पानी निकास की एक नली भी लगी हुई होती है। इसी प्रकार बने इस यन्त्र की द्रोणिका, सिलेण्डर, धारक आदि एक लोहे से बने मजबूत ढाँचे में फिट किये होते हैं और बिजली से चलाये जा सकते है।

छीलना

फल-तरकारियों के धुलने के बाद अगला कदम छिलका उतारने योग्य फलों का छिलका उतारना है। विकसित देशों की व्यवसाय-शालाओं में यह काम भी यन्त्र की सहायता से ही किया जाता है, परन्तु भारत जैसे विकासशील देश में यह काम विशेष प्रकार से बने चाकू, जिन्हें पीलिंग नाइफ कहते हैं, की सहायता से किया जाता है। घरेलू स्तर पर यह क्रिया साधारण चाकू से भी की जाती है।



चित्र संख्या 28. घरेलू तथा कुटीर उद्योगों में आवश्यक कुछ उपस्करें—(1) पाइनापल काँटो को दूर करने योग्य चाकू, जिसको पाइनापल आई रिमूवर कहते हैं। (2) आलू, आम, आपल इत्यादि का छिलका उतारने का चाकू जिसको पीलिंग नाइफ कहते हैं। (3) कैन, न इत्यादि को खोलने योग्य यन्त्र, इसे कैन ओपनर भी कहा जाता है। (4) एक दूसरा पीलिंग नाइफ (5) अनन्नास की कोर अलग करने उपस्कर जिसको कोरर कहते हैं। (6) साधारण स्टेनलेसस्टील चाकू (7) पीटिंग नाइफ, अमरूद, सेव इत्यादि से बीजकक्ष अलग किया ता है। (8) पाइनापल पीलर अनन्नास के बाहरी छिलका उतारते हैं। (9) कोरर या बीज अलग करने का उपस्कर।

इसी प्रकार फल-तरकारियों के अनचाहे केन्द्र भाग-पित्त (कोर) को, बीजो को, कंटक (Thorn) आदि को निकालने के लिए योग्य चाकुओं को क्रमशः पीलिंग नाइफ, कोरिंग नाइफ आदि नामों से जाना जाता है।

ऊष्म विधि से छिलका उतारना (Peeling by heat)

आलू, अरबी, शकरकद, चुकन्दर, आडूफल (पीच), टमाटर आदि तरकारी तथा फलों को पानी में एक निश्चित समय (1 से 2 मिनट) के लिए उबालकर या शक्तियुक्त भापोपचार कर तुरन्त शीतजल मे डुबाया जाये तो उसका छिलका मात्र ही फटेगा, फलस्वरूप छिलका आसानी से उतारा जा सकता है। बड़े-बड़े कारखानों में उत्पादन खर्च कम करने के लिए तथा शीघ्र छिलका उतारने के लिए यह विधि अपनायी जाती है। इस क्रिया से छिलका उतारने से काफी मात्रा मे फल या तरकारी का गूदा बचाया जा सकता है।

यन्त्र द्वारा छिलका उतारना

इसके अलावा 105° सेंटीग्रेड ताप वाले एक विशेष प्रकार के फरनेस मे 10 से 60 सेकण्ड तक यदि फल या तरकारी को रखा जाये तो उसका छिलका फट जायेगा, इसे सीधे ही उतारा जा सकता है।

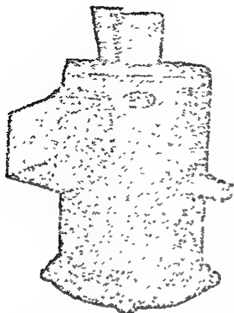
इसके अलावा छोटे-बड़े आकार की विभिन्न फल-तरकारियों का छिलका उतारने के यंत्र भी काम मे लिए जाते हैं, वे हैं—पीलर यन्त्र, कैरट, शलजम, चुकन्दर, आलू इत्यादि को रगड़कर छिलका उतारने वाली मशीन, जिसको अंग्रेजी में अब्रेसिव पीलर (Abrasive peeler) कहा जाता है, आदि प्रचलित है। इनमें से कुछ चित्र मे दिखाये गये हैं।

पीलर

यह यन्त्र केवल मटर का छिलका उतारने के लिए काम में लिया जाता है। इसके भीतर स्तम्भनुमा एक शाफ्ट फिट किया हुआ होता है, जो बालबियरिंग पर चलता है। पीलर का भीतरी शाफ्ट ढोलकनुमा होता है, जिसके ऊपर चार स्टैनलैसस्टील से बनी पत्तियाँ लगी हुई होती हैं, इनको आवश्यकता के अनुसार आगे-पीछे सरकाया जा सकता है। यह पत्तियाँ यन्त्र की लम्बाई के लगभग बराबर लम्बाई की होती हैं। यह यन्त्र विद्युत की सहायता से चलता है।

पोटेटो पीलर

आधुनिक तकनीकी ज्ञान के आधार पर बने आलू का छिलका उतारने वाले उपर्युक्त यन्त्र की सहायता से आलू का ही नहीं अपितु गाजर, सलजम, चुकन्दर आदि का भी छिलका उतारा जा सकता है। यह क्रिया अब्रेसिव पीलिंग (रगड़कर छिलका उतारना) द्वारा सम्पन्न होती है। इस यन्त्र का भीतरी भाग जो फल-तरकारी के सम्पर्क मे आता है, स्टैनलैसस्टील या तवतुल्य अन्य धातु से बना हुआ होता है। फलधारक बर्तननुमा होता है। इसके चारों तरफ उभरी हुई-सी चाकूनुमा वस्तु बनी होती है जिसको स्क्रेपर (कुचरनियाँ) कहा जाता है। जब आलू या अन्य कोई तरकारी उसमे डालकर चलाया जाता है तब उसके सेंट्रीफ्यूगल क्रिया से आलू चारों तरफ घूमता है। फलस्वरूप कुचरनियों से लग-लगकर भीतर ही उसका छिलका उतर जाता है। इसके साथ जेटस्प्रे (वर्षा) प्रणाली के द्वारा साथ के साथ धुलाई



(चित्र संख्या 29)

आलू, गाजर, चुकन्दर तथा शलजम इत्यादि का छिलका उतारने तथा धोने का यन्त्र। इसको साधारणतया पोटेटो पीलर कहते हैं जो विभिन्न क्षमता के होते हैं।

भी होती रहती है। एक मिनट के अन्दर इस मशीन की सहायता से 2 से 3 किलो आलू का छिलका उतारा जाता है। छिलका तथा पानी यन्त्र के भीतर से सेन्ट्रीफ्यूगल शक्ति से बाहर निकल जाता है। इस क्रिया को अब्रेसिव पीलिंग (छिलका उतारना) भी कहा जाता है।

क्षारीय क्रिया द्वारा

राख एक क्षारीय पदार्थ है। बर्तनों तथा उपस्करों की भाँति इसका तरकारियों पर उपचार करने में छिलका आसानी से निकल जाता है। इस प्रक्रिया को आदिकाल से ही मछली का छिलका उतारने में जाने या अनजाने भारतीय लोग काम में लेते आ रहे हैं। मछली की ही भाँति फल-तरकारियों का उपचर्म भी इस प्रक्रिया से सुगमता से निकाला जा सकता है।

सन् 1901 में वैज्ञानिकों ने इस प्रक्रिया को एक नया मोड़ दिया। उन्होंने राख के बजाय सोडियम कार्बोनेट, सोडियम हाइड्रोऑक्साइड आदि एल्कली (क्षार) को फल तरकारियों का छिलका उतारने के लिए अधिक उपयुक्त पाया, क्योंकि वे राख से अधिक शक्तिशाली क्षार हैं।

कैनीकरण के पूर्व फल-तरकारियों का छिलका उतारने के लिए सोडियम हाइड्रेट का 3 से 10 प्रतिशत जलीय घोल उपयुक्त पाया गया, लेकिन कुछ विशेष तरकारियों (स अर) के लिए 9 से 14 प्रतिशत सोडियम हाइड्रोऑक्साइड घोल की आवश्यकता होती है। यह प्रक्रिया साधारण जलीय घोल में मन्दगति से तथा तप्त घोल में तीव्रता से होती है, फलस्वरूप छिलका शीघ्र निकल जाता है। इसके लिए क्षारयुक्त जलीय घोल को क्वथनांक पर पहुँचाना आवश्यक है। क्षारीय घोल प्रयोग करने से पहले फल-तरकारियों को उबलते पानी में डुबोकर फिर तुरन्त क्षारीय घोल में डुबो दिया जाये तो अधिक लाभकारी [illegible] इसके लिए फल-तरकारियों को क्षारीय घोल में 20 से 40 सेकण्ड तक डुबोये आवश्यक है। यह समय फल-तरकारियों के उपचर्म की रचना के आधार पर [illegible]

घटता रहेगा। यह ज्ञान अनुभव से ही प्राप्त होता है। जो भी हो क्षारीय-क्रिया सम्पन्न होते ही, तुरन्त फल-तरकारियों को शीतजल से डुबा दिया जाये तो उपचर्म फटने लग जायेगा। इन छिलकों को हाथ से व चाकू की सहायता से निकाला जाता है।

टमाटर वसीय अम्लोपचार द्वारा छीलना (Tomato peeling by fatty acid)

आजकल व्यावसायिक स्तर पर टमाटर का छिलका, ऊष्मोपचार से, सोडियम हाइड्रोऑक्साइड घोल के उपचार से उतारा जाता है, (जिसको क्षारीय प्रक्रिया द्वारा छीलना कहा जाता है), जिसके बारे में अन्यत्र चर्चा की जा चुकी है।

विलियम जी० स्कूल्ट्स तथा साथियों (William G. Schultz & co-workers, 1979) ने प्रतिवेदन दिया कि ओक्टेनोइक अम्ल (Octanoic acid) नामक एक वसीय अम्ल (Fatty acid) के जलीय घोल में टमाटर को 3 मिनट उपचार किया जाये तथा उपचार के समय वसीय अम्ल के जलीय घोल का तापमान 150° फारनहीट (65° सें०) रखा जाये, तो वसीय अम्ल की प्रक्रिया से टमाटर का छिलका गूदा से ढीला होने के कारण अलग हो जायेगा तथा इसको छीलने में आसानी रहेगी। इसी प्रकार उपचारित टमाटरों को एक विशेष यन्त्र (Flat-bed of rotating rubber dies) में 15 सेकण्ड केवल घुमाने से टमाटर से छिलका रगड़ प्रक्रिया से अलग हो जाता है। क्षारीय क्रिया से छिलका उतारते समय 15 से 25 प्रतिशत गूदा नष्ट होती है। टमाटर छिलका वसीय अम्लोपचार द्वारा छीलने से गूदा नष्ट नही होती, बताई जाती है। परन्तु वसीय अम्लोपचार कुछ विशेष, ढीले छिलके वाले टमाटर किस्मों में ही प्रयोग किया जा सकता है। इसलिए वसीय अम्लोपचार द्वारा छीलने के लिए हर टमाटर उपयुक्त नही होता।

टमाटर छिलका वसीय अम्ल द्वारा छीलने का अनुसंधान अध्ययन संयुक्त राज्य अमेरिका के बर्कली स्थित वेस्टर्न रिजेनल रिसर्च सेन्टर (कृषि विभाग) में विकसित किया गया है।

विभिन्न कारबनेट द्वारा

कारबनेट कम शक्ति वाले होते है। इन्हे फल-तरकारियों की सतह से शीघ्र धोकर निकाला जा सकता है। इस प्रक्रिया के कारण उत्पादनों पर खर्च कम पड़ता है, लेकिन इस विधि से निकाले गये छिलको को पशु-आहार के रूप में नही लिया जा सकता। इसलिए उत्पादनों से मिलने वाले लाभ से व्यवसायी वंचित रह जाते है। आज विकसित देशों में, विशेषकर संयुक्त राज्य अमेरिका में एक टन फलों के लिए 2,200 किलोग्राम से 3,500 किलोग्राम तक क्षारीय वस्तु छिलका उतारने के लिए काम में ली जाती है।

फ्लेम पीलिंग (Flame Peeling)

प्याज-लहसुन आदि का ऊपरी सूखा छिलका तथा जड़ो को शीघ्र निकालने के लिए बड़े-बड़े कारखानों में फ्लेम पीलिंग (ज्वालीय छिलका उतारना) प्रणाली अपनाई जाती है। अग्नि ज्वलित कोष्ठ में होते हुए बेल्ट की सहायता से शीघ्र गति में प्याज या लहसुन को निकालते समय ज्वाला के लपेट में आकर उनका ऊपरी सूखा छिलका तथा सूखी जड़ें शीघ्र जलकर नष्ट हो जाती हैं, परन्तु प्याज या लहसुन के भीतरी गीले छिलकों में कोई हानि

नही पहुंचती, उतनी तीव्र गति से ही वे अग्नियुक्त कोष्ठ से बाहर चले आयेंगे तथा तुरन्त उन्हें बुझाने का प्रबन्ध भी इसी यन्त्र मे किया हुआ होता है। साधारणतया फ्लेम पीलिंग के लिए एक से दो सेकण्ड का समय दिया जाता है जिसका तापमान 1000° फारनहीट होता है। इस क्रिया के तुरन्त बाद जले हुए भागो को अलग कर लिया जाता है, जो आमतौर से हाथ से ही किया जाता है।

विवर्णीकरण (Blanching)

उपर्युक्त विधि से छिलका उतारे गये फल-तरकारियो तथा उन फल-तरकारियों को जिनका छिलका उतारने की आवश्यकता नही होती है, आवश्यकतानुसार मोटाई तथा आकार मे कतरे या बिना कतरे, उबलते हुए जल में या शक्तियुक्त भाप मे अल्प समय के लिए उपचार कर तुरन्त शीतजल में डुबोया जाता है, ताकि वे पकें नहीं। ठण्डा करते समय ध्यान रखना होगा कि उसका तापमान 20° से कम न हो जाय। इस क्रिया को पूर्व पाचकीकरण (प्रिकुकिंग) कहा जाता है। उपर्युक्त क्रिया को विवर्णीकरण कहा जाता है, जिसका मुख्य उद्देश्य किण्वकों (एन्जाइम्ज) को निष्क्रिय बनाना है, जो अपूर्ण विवर्णीकरण से सम्भव नहीं है। इसके अलावा इस क्रिया से कुछ हद तक फल-तरकारियो मे प्रायः पाये जाने वाले सूक्ष्मजीवियों की संख्या भी कम होगी। विवर्णीकरण से कुछ फल-तरकारियो का वर्ण, सुरक्षित रखने या अधिक चमकाने मे भी मदद मिलती है। इस क्रिया से यह भी देखा गया है कि कुछ विशेष फल-तरकारियों की अनचाही गन्ध तथा कुछ अन्य फल-तरकारियां जैसे—काजूफल की खराश भी दूर हो जाती है। इसके लिए साधारणतया 170° फारनहीट से अधिक ताप का प्रयोग नही होना चाहिए, जिसके लिए 2 से 6 मिनट विवर्णीकरण समय दिया जाता है, परन्तु फल-तरकारियों को सुचारु रूप से विवर्णीकरण करने के लिए अनुभव की अधिक आवश्यकता होती है।

नर्म हरे मटरों तथा हरे चनो पर विवर्णीकरण प्रयोग से उनका हरापन तेज हो जाता है, साथ ही उनमें उपस्थित किण्वकें निष्क्रिय होने से वे नर्म हो जाते हैं। सब्जियों के विवर्णीकरण उपचार से ही उन्हे कैनों में इच्छानुसार भरा जा सकेगा। पालक इस प्रक्रिया से अधिक सिकुड़ जाता है। फलस्वरूप कैनो मे अधिकाधिक भरा जा सकता है।

फलो का तरकारी की भांति साधारणतया विवर्णीकरणोपचार नहीं किया जाता, परन्तु क्षारीय प्रयोग द्वारा जिन-जिन फलो का छिलका उतारा गया हो, उनके भूरेपन को दूर करने के लिए विवर्णीकरण सहायक होता है। प्रयोगशाला तथा घरेलू स्तर पर विवर्णीकरण क्रिया इस प्रकार की जाती है :—एक भगोने मे पानी को उबाला जाय, जिसमे कतरी हुई तरकारी या फल को एक कपड़े मे पोटली बनाकर उबलते पानी मे उतारा जाय तथा पोटली को डीलाकर उबलते पानी मे कतरी हुई तरकारी या फल के प्रत्येक टुकड़ो को एक निश्चित समय के लिए उबलते पानी के सम्पर्क मे आने दिया जाय तथा तुरन्त उसमे से निकालकर पास रखे हुए ठण्डे पानी मे इसी प्रकार डीलाकर ठण्डा किया जाय। उनका तापमान भवन ताप के बराबर (20° से 25° सेन्टीग्रेड) हो जाय तो विवर्णीकरण हो जायेगा। यह क्रिया अनुभव से ही उचित रूप से सम्पन्न की जा सकेगी। विवर्णीकृत फल तरकारियो को उचित तापमान पर ठण्डा करने के लिए लगभग 1 से 5 मिनट का समय

घटता रहेगा। यह ज्ञान अनुभव से ही प्राप्त होता है। जो भी हो क्षारीय-क्रिया सम्पन्न होते ही, तुरन्त फल-तरकारियों को शीतजल से डुबा दिया जाये तो उपचर्म फटने लग जायेगा। इन छिलकों को हाथ से व चाकू की सहायता से निकाला जाता है।

टमाटर वसीय अम्लोपचार द्वारा छीलना (Tomato peeling by fatty acid)

आजकल व्यावसायिक स्तर पर टमाटर का छिलका, ऊष्मोपचार से, सोडियम हाइड्रोऑक्साइड घोल के उपचार से उतारा जाता है, (जिसको क्षारीय प्रक्रिया द्वारा छीलना कहा जाता है), जिसके बारे में अन्यत्र चर्चा की जा चुकी है।

विलियम जी० स्कूल्ट्स तथा साथियों (William G. Schultz & co-workers, 1979) ने प्रतिवेदन दिया कि ओक्टेनोइक अम्ल (Octanoic acid) नामक एक वसीय अम्ल (Fatty acid) के जलीय घोल में टमाटर को 3 मिनट उपचार किया जाये तथा उपचार के समय वसीय अम्ल के जलीय घोल का तापमान 150° फारनहीट (65° सें०) रखा जाये, तो वसीय अम्ल की प्रक्रिया से टमाटर का छिलका गूदा से ढीला होने के कारण अलग हो जायेगा तथा इसको छीलने में आसानी रहेगी। इसी प्रकार उपचारित टमाटरों को एक *विशेष यन्त्र (Flat-bed of rotating rubber dies) में 15 सेकण्ड* केवल घुमाने से टमाटर से छिलका रगड़ प्रक्रिया से अलग हो जाता है। क्षारीय क्रिया से छिलका उतारते समय 15 से 25 प्रतिशत गूदा नष्ट होती है। टमाटर छिलका वसीय अम्लोपचार द्वारा छीलने से गूदा नष्ट नहीं होती, बताई जाती है। परन्तु वसीय अम्लोपचार कुछ विशेष, ढीले छिलके वाले टमाटर किस्मों में ही प्रयोग किया जा सकता है। इसलिए वसीय अम्लोपचार द्वारा छीलने के लिए हर टमाटर उपयुक्त नहीं होता।

टमाटर छिलका वसीय अम्ल द्वारा छीलने का अनुसंधान अध्ययन संयुक्त राज्य *अमेरिका के बर्कली स्थित वेस्टन रिजेनल रिसर्च सेन्टर (कृषि विभाग) में* विकसित किया गया है।

विभिन्न कारबनेट द्वारा

कारबनेट कम शक्ति वाले होते हैं। इन्हें फल-तरकारियों की सतह से शीघ्र धोकर निकाला जा सकता है। इस प्रक्रिया के कारण उत्पादनों पर खर्च कम पड़ता है, लेकिन इस विधि से निकाले गये छिलकों को पशु-आहार के रूप में नहीं लिया जा सकता। इसलिए उत्पादनों से मिलने वाले लाभ से व्यवसायी वंचित रह जाते हैं। आज विकसित देशों में, *विशेषकर संयुक्त राज्य अमेरिका में एक टन फलों के लिए 2,200 किलोग्राम से 3,500* किलोग्राम तक क्षारीय वस्तु छिलका उतारने के लिए काम में ली जाती है।

फ्लेम पीलिंग (Flame Peeling)

प्याज-लहसुन आदि का ऊपरी सूखा छिलका तथा जड़ों को शीघ्र निकालने के लिए बड़े-बड़े कारखानों में फ्लेम पीलिंग (ज्वालीय छिलका उतारना) प्रणाली अपनाई जाती है। अग्नि ज्वलित कोष्ठ से होते हुए बेल्ट की सहायता से शीघ्र गति से प्याज या लहसुन को निकालते समय ज्वाला के संपर्क में आकर उनका ऊपरी सूखा छिलका तथा सूखी जड़ें शीघ्र जलकर नष्ट हो जाती हैं, परन्तु प्याज या लहसुन के भीतरी गीले छिलकों में कोई हानि

नही पहुंचती, उतनी तीव्र गति से ही वे अग्नियुक्त कोष्ठ से बाहर चले आयेंगे तथा तुरन्त उन्हें बुझाने का प्रबन्ध भी इसी यन्त्र में किया हुआ होता है। साधारणतया फ्लेम पीलिंग के लिए एक से दो सैकण्ड का समय दिया जाता है जिसका तापमान 1000° फारनहीट होता है। इस क्रिया के तुरन्त बाद जले हुए भागो को अलग कर लिया जाता है, जो आमतौर से हाथ से ही किया जाता है।

विवर्णीकरण (Blanching)

उपर्युक्त विधि से छिलका उतारे गये फल-तरकारियो तथा उन फल-तरकारियों को जिनका छिलका उतारने की आवश्यकता नही होती है, आवश्यकतानुसार मोटाई तथा आकार में कतरे या बिना कतरे, उबलते हुए जल में या शक्तियुक्त भाप मे अल्प समय के लिए उपचार कर तुरन्त शीतजल मे डुबोया जाता है, ताकि वे पकें नहीं। ठण्डा करते समय ध्यान रखना होगा कि उसका तापमान 20° से कम न हो जाय। इस क्रिया को पूर्व पाचकीकरण (प्रिकुकिंग) कहा जाता है। उपर्युक्त क्रिया को विवर्णीकरण कहा जाता है, जिसका मुख्य उद्देश्य किण्वको (एन्जाइम्ज) को निष्क्रिय बनाना है, जो अपूर्ण विवर्णीकरण से सम्भव नही है। इसके अलावा इस क्रिया से कुछ हद तक फल-तरकारियो मे प्रायः पाये जाने वाले सूक्ष्मजीवियो की संख्या भी कम होगी। विवर्णीकरण से कुछ फल-तरकारियों का वर्ण, सुरक्षित रखने या अधिक चमकाने में भी मदद मिलती है। इस क्रिया से यह भी देखा गया है कि कुछ विशेष फल-तरकारियों की अनचाही गन्ध तथा कुछ अन्य फल-तरकारियो जैसे—काजूफल की खराश भी दूर हो जाती है। इसके लिए साधारणतया 170° फारनहीट मे अधिक ताप का प्रयोग नही होना चाहिए, जिसके लिए 2 से 6 मिनट विवर्णीकरण समय दिया जाता है, परन्तु फल-तरकारियों को सुचारु रूप से विवर्णीकरण करने के लिए अनुभव की अधिक आवश्यकता होती है।

नर्म हरे मटरो तथा हरे चनो पर विवर्णीकरण प्रयोग से उनका हरापन तेज हो जाता है, साथ ही उनमे उपस्थित किण्वकें निष्क्रिय होने से वे नर्म हो जाते हैं। सदावरी के विवर्णीकरण उपचार से ही उन्हें कैनो मे इच्छानुसार भरा जा सकेगा। पालक इस प्रक्रिया से अधिक सिकुड जाता है। फलस्वरूप कैनो मे अधिकाधिक भरा जा सकता है।

फलों का तरकारी की भांति साधारणतया विवर्णीकरणोपचार नहीं किया जाता, परन्तु क्षारीय प्रयोग द्वारा जिन-जिन फलो का छिलका उतारा गया हो, उनके भूरेपन को दूर करने के लिए विवर्णीकरण सहायक होता है। प्रयोगशाला तथा घरेलू स्तर पर विवर्णीकरण क्रिया इस प्रकार की जाती है :—एक भगोने मे पानी को उबाला जाय, जिसमे कतरी हुई तरकारी या फल को एक कपडे मे पोटली बनाकर उबलते पानी मे उतारा जाय तथा पोटली को ढीलाकर उबलते पानी मे कतरी हुई तरकारी या फल के प्रत्येक टुकडो को एक निश्चित समय के लिए उबलते पानी के सम्पर्क में आने दिया जाय तथा तुरन्त उसमे से निकालकर पास रखे हुए ठण्डे पानी में इसी प्रकार ढीलाकर ठण्डा किया जाय। उसका तापमान भवन ताप के बराबर (20° से 25° सेन्टीग्रेड) हो जाय तो विवर्णीकरण हो जायेगा। यह क्रिया अनुभव से ही उचित रूप मे सम्पन्न की जा सकेगी। विवर्णीकृत फल तरकारियों को उचित तापमान पर ठण्डा करने के लिए लगभग 1 से 5 मिनट तक का समय

लग सकता है। इसके लिए कपड़े की बजाय जालीदार छलनियाँ भी काम में ली जा सकती हैं।

छोटे कारखानों में लाई-पीलिंग (Lye-Peeling) के लिए काम में ली जाने वाली टंकी या यन्त्र विवर्णीकरण के लिए भी काम में लिए जा सकते हैं। कुछ व्यवसायी कारखानों की स्टीम जैकटेड केतली जो जैम, जैली, कैचप इत्यादि बनाने के लिए काम में ली जाती है, को भी विवर्णीकरण क्रिया के लिए प्रयोग में लेते हैं।

बड़े स्तर के कारखानों में इस प्रक्रिया के लिए यन्त्र काम में लिया जाता है। यन्त्र द्वारा कतरे हुए फल या तरकारियां बैल्ट की सहायता से ही उबलते पानी या शक्तियुक्त भाप के कोष्ठों में निश्चित समय के लिए उपचार कर, उन्हें बाहर निकालकर तुरन्त ठण्डे पानी से होते हुए निकालते समय उचित रूप में विवर्णीकृत हो जाएंगे।

प्रत्येक फल-तरकारी का, उसकी जाति-उपजाति के आधार पर विवर्णीकरण का समय अलग-अलग होगा। इसके आधार पर यन्त्र-चालक बैल्ट की वेगता कम या अधिक कर लेते हैं, परिणामस्वरूप फल-तरकारी चाहे गए समय के भीतर विवर्णीकृत होकर शीतलीकरण के लिए ठण्डे पानी में पहुँच जायेंगे, जहाँ शीतलीकरण समय के अनुसार ठण्डे पानी से वाहिका की लम्बाई भी उसके अनुसार रहेगी। बैल्ट के ऊपर लगी ट्रे में फल-तरकारियों को सजाया जाकर, बैल्ट के साथ ट्रे भी आगे स्वयं चलकर उबलते पानी में से होती हुई या भाप कोष्ठ से होती हुई जाने से यह क्रिया सम्पन्न होती है। तप्त जल से यह क्रिया सम्पन्न कराने के लिए बैल्ट को जल-युक्त वाहिका में डूबने के लिए बैल्ट को नीचे उतारना पड़ता है, जिसके योग्य बैल्ट को चलाया जाता है। ध्यान रखें कि उपर्युक्त सभी क्रियाओं के लिए शुद्ध जल, अर्थात् नगरपालिका द्वारा वितरित या तत्तुल्य पानी को ही काम में लेना चाहिए, अन्यथा उत्पादित खाद्य खराब होने या उत्पाद कठोर हो जाने की सम्भावना रहती है। फलस्वरूप विपणन-मूल्य गिर जाता है।

भराई

कैनीकरण के लिए धुलाई, छिलका उतराई, कतराई, विवर्णीकरण इत्यादि के बाद अब आती है वाहिकाओं में भराई। व्यावसायिक स्तर पर इस क्रिया के लिए आजकल मुख्यतः कैन (डिब्बा) ही काम में लिया जाता है। किन्तु कांच से बनी बरनियों में भी भराई की जाती है। संयुक्त राज्य अमेरिका जैसे विकसित देशों में कुछ विशेष फलों, जैसे पीच, (आडू) को आज भी कांच की बरनियों में ही भरा जाता है। संसार भर में घरेलू स्तर के कैनीकरण के लिए भी फल-तरकारियाँ कांच की बरनियों में ही भरे जाते हैं, क्योंकि इन बरनियों को बार-बार काम में लिया जा सकता है, तथा इनको वायुरुद्ध अवस्था में सील-बन्द करने के लिए कुछ विशेष यन्त्रों की आवश्यकता नहीं पड़ती, जबकि कैनों के लिए मशीनों की अधिक आवश्यकता होती है।

व्यावसायिक स्तर पर कांच की बरनियों से कैन अधिक प्रयोगात्मक होते हैं, जो पूर्व-वर्णित हैं। कांच की बरनियों की भांति कैनों को भी पहले साधारण जल से, बाद में गर्म पानी में अच्छी तरह धोकर उल्टा रखा जाता है। कुछ कैनों में शक्तियुक्त भापोपचार कराकर निर्जर्मीकरण किया जाता है। कांच की बरनियों के उबलते पानी के उपचार से भी यह क्रिया सम्पन्न कराई जा सकती है।

कुटीर तथा घरेलू स्तर के कारखानों पर तराजू से निश्चित भाग तोलकर भराई का कार्य किया जाता है। इसके लिए तराजू के एक पलडे मे एक वाहिका रखी जाती है, साथ ही जितना वजन भरना होता है, उसका तत्तुल्य बाट भी। दूसरे पलडे में वाहिका रखकर उसमे भरी जाती है, ताकि बराबर वजन मे भराई हो सके। परन्तु लघु तथा बड़े उद्योगो मे यह क्रियाएँ स्वचालित यन्त्र की सहायता से सम्पन्न की जाती हैं तो कहीं अर्द्ध-स्वचालित यन्त्र भी काम मे लिये जाते हैं,जो विभिन्न चित्रों में दिखाये गये हैं। (चित्र संख्या 36)

शर्करा चाशनी निर्माण तथा भराई

तैयार कर वाहिका में भरे गये फलों को शर्करा, चाशनी, जल या उसी फल के रस इत्यादि मे से एक से भरा जाता है, आवश्यकतानुसार शीर्षस्थान छोड़कर वायुरुद्ध अवस्था मे सीलबन्द कर दिया जाता है। आमतौर पर फलो मे शर्करा चाशनी से तैराया जाता है। फलस्वरूप फलों की स्वाभाविक सुगन्ध भी नष्ट नही होती। कभी-कभी कुछ विशेष फलो, विशेषकर अनन्नास, आम इत्यादि की सुगन्ध और मोहक हो जाती है। इसके अलावा फल के स्वाभाविक वर्ण को बनाये रखने मे भी शर्करा मदद करती है।

विविध शर्करा

संसार मे उत्पादित शर्कराओं में अधिकांश गन्ने से तैयार की जाती है। दूसरा नम्बर चुकन्दर का है, जो अधिकतर पश्चिमी देशो में शर्करा बनाने के लिए काम में लिया जाता है। चुकन्दर दो किस्म के होते हैं—एक रंगीन (लाल) व दूसरा सफेद, जो अधिक लम्बा तथा मोटा होता है। इसमे शर्करा की मात्रा भी अधिक होती है। भारत में भी यह दोनो किस्में पाई जाती है। चुकन्दर से शर्करा-निर्माण करने का प्रयास भारत मे भी चल रहा है। राजस्थान मे गंगानगर शुगर मिल मे चुकन्दर से चीनी बनाने की एक योजना तैयार की जा रही है, क्योंकि क्षारीय भूमि मे चुकन्दर की खेती आसानी से की जा सकती है। यह अन्य फसलो के लिए उपयुक्त नही है। भारत मे अधिक क्षारीय भूमि भी राजस्थान मे ही है। इसलिए गंगानगर तथा आसपास के क्षेत्र मे ही नही अपितु जयपुर क्षेत्र मे भी चुकन्दर की खेती सम्भव है। जो भी हो, उपर्युक्त दोनो कृषि उत्पादों से बनी शर्करा वैज्ञानिक दृष्टि से सुक्रोस (Sucrose) है।

भारत में साधारणतया सुक्रोस क्रिस्टलीय (मणिमय) रूप में प्राप्त होता है तथा इसे ही फल-परिरक्षण में काम मे लिया जाता है। मणिमय शर्करा दानेदार चीनी के नाम से प्रसिद्ध है; परन्तु विकसित देशो में विशेष रूप से संयुक्त राज्य अमेरिका मे शुगर मिल मे से प्राप्त शर्करा चाशनी, यानी क्रिस्टलीय होने से पूर्व के द्रव को फल-परिरक्षण के लिए पैकिंग किया जाता है। इस द्रव मे आवश्यकतानुसार जल या क्रिस्टलीय शर्करा मिलाकर काम मे लिया जाता है। इसके कारण शर्करा चाशनी बनाने की प्रक्रिया के कई लाभ हैं, जैसे—उत्पादन खर्च कम होना तथा शुगर मिल मे शर्करा बनाने का खर्च भी कम होना। इससे कही अधिक लाभ उच्चकोटि के फल-उत्पादन मे मिलता है तथा फल-उत्पाद गन्धक-दूषण से भी बचे रहते हैं, क्योंकि शुगर मिलो में से शर्करा-द्रव को उच्चकोटि की सफेद दानेदार चीनी बनाने के लिए गन्धक भी काम मे ली जाती है। फलस्वरूप दानेदार शर्करा में गन्धक-दूषण होना स्वाभाविक है, परन्तु गन्धकोपचार के पूर्व के द्रव को काम मे लिया जाये तो इस दूषण से फल-तरकारी परिरक्षण उत्पाद को को भविष्य मे बचाया जा सकेगा। इसके लिए

लग सकता है। इसके लिए कपड़े की बजाय जालीदार छलनियाँ भी काम में ली जा सकती हैं।

छोटे कारखानों में लाई-पीलिंग (Lye-Peeling) के लिए काम में ली जाने वाली टंकी या यन्त्र विवर्णीकरण के लिए भी काम में लिए जा सकते हैं। कुछ व्यवसायी कारखानों की स्टीम जैकटेड केतली जो जैम, जैली, कैचप इत्यादि बनाने के लिए काम में ली जाती है, को भी विवर्णीकरण क्रिया के लिए प्रयोग में लेते हैं।

बड़े स्तर के कारखानों में इस प्रक्रिया के लिए यन्त्र काम में लिया जाता है। यन्त्र द्वारा कतरे हुए फल या तरकारियाँ बैल्ट की सहायता से ही उबलते पानी या शक्तियुक्त भाप के कोष्ठों में निश्चित समय के लिए उपचार कर, उन्हें बाहर निकालकर तुरन्त ठण्डे पानी से होते हुए निकालते समय उचित रूप में विवर्णीकृत हो जाएँगे।

प्रत्येक फल-तरकारी का, उसकी जाति-उपजाति के आधार पर विवर्णीकरण का समय अलग-अलग होगा। इसके आधार पर यन्त्र-चालक बैल्ट की वेगता कम या अधिक कर लेते हैं, परिणामस्वरूप फल-तरकारी चाहे गए समय के भीतर विवर्णीकृत होकर शीतली-करण के लिए ठण्डे पानी में पहुँच जायेंगे, जहाँ शीतलीकरण समय के अनुसार ठण्डे पानी में वाहिका की लम्बाई भी उसके अनुसार रहेगी। बैल्ट के ऊपर लगी ट्रे में फल-तरकारियों को सजाया जाकर, बैल्ट के साथ ट्रे भी अपने स्वयं चलकर उबलते पानी में से होती हुई या भाप कोष्ठ से होती हुई जाने से यह क्रिया सम्पन्न होती है। तप्त जल से यह क्रिया सम्पन्न कराने के लिए बैल्ट को जल-युक्त वाहिका में डूबने के लिए बैल्ट को नीचे उतारना पड़ता है, जिसके योग्य बैल्ट को चलाया जाता है। ध्यान रखें कि उपर्युक्त सभी क्रियाओं के लिए शुद्ध जल, अर्थात् नगरपालिका द्वारा वितरित या तत्तुल्य पानी को ही काम में लेना चाहिए, अन्यथा उत्पादित खाद्य खराब होने या उत्पाद कठोर हो जाने की सम्भावना रहती है। फलस्वरूप विपणन-मूल्य गिर जाता है।

भराई

कैनीकरण के लिए धुलाई, छिलका उतराई, कतराई, विवर्णीकरण इत्यादि के बाद अब आती है वाहिकाओं में भराई। व्यावसायिक स्तर पर इस क्रिया के लिए आजकल मुख्यतः कैन (डिब्बा) ही काम में लिया जाता है। किन्तु काँच से बनी बरनियों में भी भराई की जाती है। संयुक्त राज्य अमेरिका जैसे विकसित देशों में कुछ विशेष फलों, जैसे पीच, (आड़ू) को आज काँच की बरनियों में ही भरा जाता है। संसार भर में घरेलू स्तर के कैनीकरण के लिए भी फल-तरकारियाँ काँच की बरनियों में ही भरे जाते हैं, क्योंकि इन बरनियों को बार-बार काम में लिया जा सकता है, तथा इनको वायुरुद्ध अवस्था में सील-बन्द करने के लिए कुछ विशेष यन्त्रों की आवश्यकता नहीं पड़ती, जबकि कैनों के लिए मशीनों की अधिक आवश्यकता होती है।

व्यावसायिक स्तर पर काँच की बरनियों से कैन अधिक प्रयोगात्मक होते हैं, जो पूर्व-वर्णित है। काँच की बरनियों की भाँति कैनों को भी पहले साधारण जल में, बाद में गर्म पानी में अच्छी तरह धोकर उल्टा रखा जाता है। कुछ कैनों में शक्तियुक्त भापोपचार कराकर निर्जर्मीकरण किया जाता है। काँच की बरनियों में उबलते पानी के उपचार से भी सम्पन्न कराई जा सकती है।

कुटीर तथा घरेलू स्तर के कारखानों पर तराजू से निश्चित भाग तोलकर भराई का कार्य किया जाता है। इसके लिए तराजू के एक पलड़े मे एक वाहिका रखी जाती है, साथ ही जितना वजन भरना होता है, उसका तत्तुल्य बाट भी। दूसरे पलडे मे वाहिका रखकर उसमे भरी जाती है, ताकि बराबर वजन मे भराई हो सके। परन्तु लघु तथा बड़े उद्योगो मे यह क्रियाएँ स्वचालित यन्त्र की सहायता से सम्पन्न की जाती है तो कही अर्द्ध-स्वचालित यन्त्र भी काम मे लिये जाते हैं,जो विभिन्न चित्रो में दिखाये गये हैं। (चित्र संख्या 36)

शर्करा चाशनी निर्माण तथा भराई

तैयार कर वाहिका मे भरे गये फलो को शर्करा, चाशनी, जल या उसी फल के रस इत्यादि मे से एक से भरा जाता है, आवश्यकतानुसार शीर्षस्थान छोड़कर वायुरुद्ध अवस्था मे सीलबन्द कर दिया जाता है। आमतौर पर फलो मे शर्करा चाशनी से तैराया जाता है। फलस्वरूप फलों की स्वाभाविक सुगन्ध भी नष्ट नही होती। कभी-कभी कुछ विशेष फलों, विशेषकर अनन्नास, आम इत्यादि की सुगन्ध और मोहक हो जाती है। इसके अलावा फल के स्वाभाविक वर्ण को बनाये रखने में भी शर्करा मदद करती है।

विविध शर्करा

संसार मे उत्पादित शर्कराओं में अधिकांश गन्ने से तैयार की जाती है। दूसरा नम्बर चुकन्दर का है, जो अधिकतर पश्चिमी देशों मे शर्करा बनाने के लिए काम में लिया जाता है। चुकन्दर दो किस्म के होते है—एक रगीन (लाल) व दूसरा सफेद, जो अधिक लम्बा तथा मोटा होता है। इसमे शर्करा की मात्रा भी अधिक होती है। भारत में भी यह दोनों किस्में पाई जाती है। चुकन्दर से शर्करा-निर्माण करने का प्रयास भारत मे भी चल रहा है। राजस्थान मे गगानगर शुगर मिल मे चुकन्दर से चीनी बनाने की एक योजना तैयार की जा रही है, क्योकि क्षारीय भूमि में चुकन्दर की खेती आसानी से की जा सकती है। यह अन्य फसलो के लिए उपयुक्त नही है। भारत मे अधिक क्षारीय भूमि भी राजस्थान मे ही है। इस लिए गगानगर तथा आसपास के क्षेत्र मे ही नही अपितु जयपुर क्षेत्र में भी चुकंन्दर की खेती सम्भव है। जो भी हो, उपर्युक्त दोनों कृषि उत्पादो से बनी शर्करा वैज्ञानिक दृष्टि से सुक्रोस (Sucrose) है।

भारत में साधारणतया सुक्रोस क्रिस्टलीय (मणिमय) रूप मे प्राप्त होता है तथा इसे ही फल-परिरक्षण मे काम मे लिया जाता है। मणिमय शर्करा दानेदार चीनी के नाम से प्रसिद्ध है; परन्तु विकसित देशो मे विशेष रूप से संयुक्त राज्य अमेरिका मे शुगर मिल मे से प्राप्त शर्करा चाशनी, यानी क्रिस्टलीय होने से पूर्व के द्रव को फल-परिरक्षण के लिए पैकिंग किया जाता है। इस द्रव मे आवश्यकतानुसार जल या क्रिस्टलीय शर्करा मिलाकर काम मे लिया जाता है। इसके कारण शर्करा चाशनी बनाने की प्रक्रिया के कई लाभ हैं, जैसे—उत्पादन खर्च कम होना तथा शुगर मिल मे शर्करा बनाने का खर्च भी कम होना। इससे कही अधिक लाभ उच्चकोटि के फल-उत्पादन मे मिलता है तथा फल-उत्पाद गन्धक-दूषण से भी बचे रहते हैं, क्योंकि शुगर मिलों मे से शर्करा-द्रव को उच्चकोटि की सफेद दानेदार चीनी बनाने के लिए गन्धक भी काम मे ली जाती है। फलस्वरूप दानेदार शर्करा मे गन्धक-दूषण होना स्वाभाविक है, परन्तु गन्धकोपचार के पूर्व के द्रव को काम मे लिया जाये तो इस दूषण से फल-तरकारी परिरक्षण उत्पाद को भविष्य मे बचाया जा सकेगा। इसके लिए

काम में ली जाने वाली शर्करा द्रव करीब 67° ब्रिक्स के होते हैं। फल तथा तरकारी-परिरक्षण उद्योग विकसित देशों की भाँति भारत में अब भी विकसित नहीं हुआ है। इसलिए अधिक मात्रा में शर्करा चाशनी की मांग नहीं होने के कारण शुगर मिल वाले गन्धक-दूषण रहित शर्करा-चाशनी विपणी में नहीं भेजते। परन्तु भारतीय विपणी में प्राप्त दानेदार शर्करा में अधिकाधिक 99 प्रतिशत शुद्ध शर्करा ही प्राप्त होती है, बाकी अन्य पदार्थों से मिली हुई होती है। यद्यपि दानेदार शर्करा आजकल सल्फर-डाई-ऑक्साइड के स्थान में कार्बनीकरण विधि द्वारा भी बनायी जाती है, जिसमें गन्धक-दूषण नहीं होता, अपितु उससे उत्तम दानेदार शर्करा प्राप्त होने में भी मदद मिलती है। लेकिन कुछ व्यवसायियों ने अब भी गन्धक उपचार द्वारा शर्करा बनाने की प्रक्रिया को चालू रखा है। इसलिए उपर्युक्त बातों को ध्यान में रखते हुए काम में ली जाने वाली शर्करा गन्धक-दूषण से दूर है या नहीं, इसका विश्वास हर व्यवसायी को होना चाहिए ताकि सल्फर-दूषण से होने वाली विकृतियों से उत्पादों को भविष्य में बचाया जा सके।

इनवर्ट शुगर (Invert Sugar) या प्रतीप शर्करा

आप भली-भाँति जानते हैं कि जब शर्करा (सुक्रोस) जल-विलेय हो जाती है तो जल विघटन (Hydrolysis) के कारण ग्लूकोज तथा फ्रुक्टोस (Glucose and Fructose) में बदल जाती है। इन्हें ही इनवर्ट शुगर कहा जाता है। चाहे तो इस चाशनी से पूर्व सुक्रोस, क्रिस्टलीय रूप में बनाया जा सकता है। अगर जल-विलेय शर्करा में साइट्रिक अम्ल आवश्यकतानुसार मिलाया जाये, इनवर्ट शुगर पुनः सुक्रोस नहीं बनेगी। सुक्रोस-चाशनी में उचित मात्रा में ग्लूकोज मिलाकर भी यह अवस्था प्राप्त की जा सकती है। परन्तु भारतीय परिस्थिति में ग्लूकोज के बजाय अम्ल द्वारा ही सुक्रोस को इनवर्ट करना अधिक लाभदायक है, क्योंकि ग्लूकोज सुक्रोस से अधिक कीमती है।

शर्करा चाशनी निर्माण

जैसा पहले ही कहा जा चुका है, देश में शर्करा-चाशनी शुगर मिल से प्राप्त नहीं होती। इसलिए फल तथा तरकारी-परिरक्षण व्यवसाय-शालाओं के लिए आवश्यक शर्करा चाशनी दानेदार शर्करा से ही बनायी जाती है।

शर्करा-चाशनी दो विभिन्न विधियों द्वारा सम्पन्न की जाती है—(1) शीतल विधि (कोल्ड प्रोसेस), (2) ताप विधि (होट प्रोसेस)।

(1) शीतल विधि

कारखानों में शर्करा चाशनी जिन टंकियों में संचयित की जाती है, वे टंकियाँ तथा जिस बर्तन में चाशनी बनायी जाती है, वे बर्तन स्टेनलैसस्टील से बने हुए होते हैं, या बर्तनों के भीतर काँच लेपन किया हुआ होता है। कुटीर उद्योग तथा घरेलू स्तर पर चाशनी बनाने के लिए एल्युमीनियम या स्टेनलैसस्टील के बर्तन काम में लिये जाते हैं। घर में साधारणतया रांगालेपित बर्तन चाशनी बनाने के लिए काम में लिये जाते हैं। परन्तु इनका रांगालेपन पूर्णरूपेण से किया हुआ होना चाहिये, अन्यथा धातु-दूषण से चाशनी तथा भविष्य में उत्पाद खराब होने की सम्भावना रहती है। इसलिये जहाँ तक हो सके एल्युमीनियम या स्टेनलैसस्टील के बर्तन ही काम में लिये जाने चाहिएँ।

कारखानो मे एक निश्चित डिग्री ब्रिक्स की चाशनी बनाने के लिए शर्करा तोलकर टंकी मे डाली जाती है तथा उसमें आवश्यकतानुसार जल मिलाकर घोल बना लेते है, तुरन्त बाद इसको कपडे, फलालैन, कपास आदि की सहायता से छानकर संचयन टंकियों मे भरा जाता है, जो साधारणतया कैनीकरण-शाला की भराई-मेजो के ऊपर लगी हुई होती है। फलस्वरूप गुरुत्वाकर्षण के कारण बिना यन्त्र के सहारे वाहिका मे भर सकते है। शीतल-विधि से मन्द शर्करा घोल ही बना सकते हैं तथा यह चाशनी धुंधलापन लिये हुए होती है। इसके अलावा यह चाशनी सूक्ष्मजीव रहित नही होती।

(2) ताप विधि

एक निश्चित मात्रा की शर्करा को एक निश्चित मात्रा के जल मे (एक निश्चित डिग्री ब्रिक्स चाशनी के लिए) घोल लिया जाता है, इसे तुरन्त ही उबालते है। गाढ़ी शर्करा चाशनी के लिए करीब 0.1 प्रतिशत साइट्रिक अम्ल भी मिलाया जाता है, ताकि इनवर्ट शुगर सुक्रोस में पुनः न बदल जाये। इस प्रकार तैयार की हुई चाशनी को छानकर संचयन-टंकियो मे भरा जाता है। बड़े कारखानों मे सचयन टंकियाँ अंशांकित होती है तथा उनमे चाशनी भाप द्वारा उबालने के योग्य कोपर-क्वाइल्स लगी हुई होती है, जो बॉयलर से आने वाली शक्तियुक्त भाप की प्रधान नलियों से जुडी हुई होती हैं। इसमे एक निश्चित मात्रा मे पानी सीधे नल से डाला जाता है तथा आवश्यकतानुसार उसमे शर्करा मिलाकर, समय-समय अंशांकित द्वारा यह निश्चित कर लेते हैं कि उचित मात्रा मे शर्करा तथा जल है कि नही। इसमे छलनी भी लगी हुई होती है। भाप-प्रयोग से चाशनी तैयार गुरुत्वाकर्षण से भराई मेजो की टूंटियो में आ जाती है या यन्त्र के सहारे भराई करने वाले कारखानो मे यह क्रिया स्वचालित यन्त्र द्वारा सम्पन्न कराई जाती है।

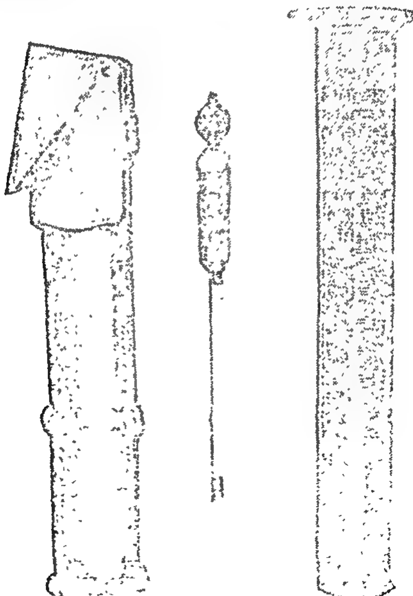


चित्र संख्या 30
विभिन्न आकार तथा क्षमता की सचयन टंकियाँ जिन्हे रस, चाशनी इत्यादि तरल पदार्थों को सचयन करने में बड़े कारखानो मे काम मे लिया जाता है।

साधारणतया 10° से 55° ब्रिक्स की चाशनी की आवश्यकता होती है। इसके लिए 55° से 75° ब्रिक्स की चाशनी तैयार कर उसको आवश्यकतानुसार मंद चाशनी मे बदल दिया जाता है। यह प्रक्रिया कुटीर तथा लघु-उद्योगों मे अपनायी जाती है। बहुद्देशीय टंकियाँ जिनमे शर्करा चाशनी संचयन की जाती है।

ब्रिक्स

चाशनी के जल तथा शर्करा का प्रतिशत मालूम करने के लिए जो यन्त्र काम मे लिया जाता है उसे रेफरेक्टोमीटर तथा उसमे सूचित करने वाले अंको को ब्रिक्स डिग्री कहा



चित्र संख्या 31 (a) चित्र संख्या 31 (b)

जाता है। यह प्रक्रिया हाइड्रोमीटर द्वारा भी सम्पन्न की
ही कहा जा चुका है, शर्करा 100 प्रतिशत शुद्ध नही मि
एक ही श्रेणी की नही होती। किसी में 99 प्रतिशत शर्
या किसी में 97 प्रतिशत भी हो सकती है। इसलिए ए
मिलायी गयी शर्करा चाशनी मे यह सम्भव नही होगा कि
एक निश्चित प्रतिशत शर्करायुक्त चाशनी प्राप्त करने।
हाइड्रोमीटर की सहायता ली जाती है।

साधारण चाशनी को ब्रिक्स डिग्री बॉलिंग हाइड्रोमी
द्वारा ली जाती है। ब्रिक्स हाइड्रोमीटरो मे साधारणतया 6
(17.5 या 20° सेन्टीग्रेड) मे प्रयोग करने योग्य अवस्था
प्रत्येक हाइड्रोमीटरों मे यह अंकित किया हुआ होगा कि वि
को ही उसमे प्रयोग करना चाहिये, जैसे एक हाइड्रोमीटर में
20° सेन्टीग्रेड, इसका मतलब यह होगा कि सही प्रतिशत
के लिए चाशनी का तापमान 20° सेन्टीग्रेड पर लाकर
चाहिए। अगर आप मनचाहे चाशनी के तापमान प
हाइड्रोमीटर प्रयोग करते हैं तो प्राप्त ब्रिक्स डिग्री के साथ
प्रत्येक हाइड्रोमीटर 0° से 10° ब्रिक्स तक की सूचना ही
ब्रिक्स तक सूचना प्राप्त करने के लिए चार विभिन्न ह
आवश्यक है।

बावमी हाइड्रोमीटर (Baume Hydrometer)

शर्करा चाशनी की शर्करा का प्रतिशत नापने के लि
हाइड्रोमीटर का नाम है—बावमी हाइड्रोमीटर। इसका
किया जाता है। इसका न्यूनतम अंश 0° तथा अधिकतम
लवण घोल मे डालकर प्राप्त सूचित स्थान पर 10° अंकि
मे विभाजित की हुई होती है। फलस्वरूप बावमी हाइड्रोमी
लवण-घोल दोनो का प्रतिशत मालूम किया जा सकत
डिग्री के सम्बन्धात्मक अध्यया सारणी में दिये हुए हैं।

रिफ्रेक्टोमीटर (Refractometer)

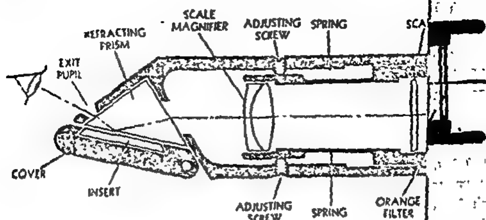
चाशनी मे कितने प्रतिशत शर्करा की मात्रा है,
लिये जाने वाले मापी का नाम है—रिफ्रेक्टोमीटर। य
इसलिए इसको अपवर्तनाकमापी भी कहा जा सकता है।
सहायता से फल-तरकारियो मे उपस्थित कुल घुलनशील
किया जा सकता है। इसी प्रकार जैम, जैली, विभिन्न
घुलनशील घन-पदार्थों की ब्रिक्स डिग्री को (प्रतिश
उपर्युक्त हाइड्रोमीटरो की कार्य-कुशलता को मालूम करने
लिया जाता है (चित्र 31)।

जा सकती है, परन्तु जैसे पहले
लती। विपणी मे प्राप्त शर्करा
रा होती है तो किसी मे 98%
क निश्चित प्रतिशत तोलकर
उतनी प्रतिशत शर्करा हो।
के लिए रेफ़रेक्ट्रोमीटर तथा

टर (Balling Hydrometer)
3.5 डिग्री मे या 68° फारनहीट
मे निर्माण किया हुआ है।
तनी डिग्री तापमान की चाशनी
यह लिखा होगा कि ब्रिक्स डिग्री
(सही डिग्री ब्रिक्स) मालूम करने
हाइड्रोमीटर को प्रयोग मे लाना
(20° से० से ऊपर या नीचे)
पशोधन की आवश्यकता होगी।
पाते हैं। इसलिए 0° से 60°
इड्रोमीटर कारखानो मे होना

लए काम मे आने वाले एक अन्य
शाकन जल-ऊष्मा के आधार पर
अंश 70° है। इन्हे 10 प्रतिशत
त की जाती है। ये पुन. 10 भागो
टर की सहायता से चाशनी तथा
है। ब्रिक्स डिग्री तथा बावमी

यह मालूम करने के लिए प्रयोग मे
ह अपवर्तन से सूचित करता है,
इसके अलावा रिफ्रेक्टोमीटर की
घन-पदार्थों का भी प्रतिशत मालूम
फल-पेय तथा कैचप आदि कुल
त) मालूम किया जा सकता है।
के लिए भी रिफ्रेक्टोमीटर काम में



चित्र संख्या 32 (a)

शर्करा चाशनी ही नहीं अपितु अन्य फल-तरकारी तथा उसके उत्पाद कुल घुलनशील ठोस-पदार्थ को मालूम करने के लिए प्रयोग करने वाले इस यन्त्र का नाम है—रिफ्रैक्टोमीटर।

साधारणतया कारखानों में 10°, 20°, 25°, 30°, 40°, 50°, 55 विभिन्न चाशनियों की आवश्यकता होती है। इन्हें मानकीकृत शर्करा चाशनी क

मान लें कि एक कम्पनी द्वारा बनाये गये एक फल-उत्पाद में 40° ब्रिक्स काम में ली गई है—तो फलस्वरूप उस उत्पाद की विपणी में अधिक माँग होगी लापरवाही से इस ब्रिक्स में मामूली भी अन्तर आ जाए तो वह कम्पनी दो कार नुकसान उठा सकती है। मान लें कि 40° ब्रिक्स की बजाय तैयार किये गये प 39° ब्रिक्स ही रह गया तो उस उत्पाद के जमे हुए स्वाद तथा वर्ण इत्यादि आयेगा, फलस्वरूप विपणी में उसकी माँग कम हो जायेगी। इसके विपरीत 4 जाये तो व्यवसायियों को आर्थिक नुकसान उठाना पड़ेगा। उदाहरण के लिए, 40° ब्रिक्स की चाशनी तैयार करने के लिए 30000 किलोग्राम शर्करा लापरवाही से बनी 41° चाशनी में 300 किलोग्राम शर्करा अधिक डाली, परन्तु दाम केवल 40° के उत्पाद का ही मिलेगा। फलस्वरूप आज के चीन अनुपात में 990 रुपये की हानि उठानी पड़ेगी। यह केवल एक उदाहरण है भली-भाँति जान गये होंगे कि उपर्युक्त विभिन्न मीटरों की सहायता से चाही ग डिग्री की चाशनी बनाई जा सकती है।

ताप-शोधन (Temperature Corrections)

जैसा कहा जा चुका है कि शर्करा चाशनी का सही प्रतिशत मालूम कर हाइड्रोमीटर या रिफ्रैक्टोमीटर काम में लिये जाते हैं, तब उन मीट तापमान पर चाशनी को लाकर प्रयोग करना चाहिये या चाशनी में उपर्यु प्रयोग कर प्राप्त तापमान तथा ब्रिक्स डिग्री को पुनः 20° सेन्टीग्रेड ताप पर शो ... प्रतिशत शर्करा मात्रा मालूम की जा सकती है। इसके लिए रिफ्रै ... ोटर के साथ थर्मामीटर भी प्रयोग करना आवश्यक है। कुछ

गर्म-शर्करा चाशनी को एक विशेष नली, जिसके चारों तरफ ठण्डा पानी बहता है, के द्वारा चाहे गये तापमान (20° से०) पर लाकर एक सिलैण्डर में भरकर उसमे तुरन्त हाइड्रोमीटर तथा थर्मामीटर डालकर ब्रिक्स डिग्री मालूम कर लेते है। थर्मामीटर इसलिए काम मे लेते है ताकि यह निश्चित हो सके कि शर्करा-चाशनी का तापमान 20° से० से नीचे नही गया है। फलस्वरूप इसके ताप-शोधन की आवश्यकता नही होगी। परन्तु इसके विपरीत तैयार की गयी शर्करा-चाशनी को एक सिलेण्डर में भरकर उसमें थर्मामीटर तथा हाइड्रोमीटर यथाविधि डालकर तापमान तथा ब्रिक्स डिग्री नोट कर लेते है। इस ब्रिक्स डिग्री को 20° से० पर ताप-शोधन कर सही प्रतिशत-शर्करा ब्रिक्स डिग्री में मालूम कर लेते हैं।

दोनों विधियो से ब्रिक्स तथा तापमान नापते समय यह ध्यान रखना होगा कि सिलेण्डर पूर्णरूप से भरा रहे तथा उसमे झाग न हो। यह भी ध्यान रखना होगा कि ब्रिक्स हाइड्रोमीटर उसमे उतारते समय उसका बल्ब सिलेण्डर के पैंदे मे, बाजू मे टकराकर टूट न जाये। ब्रिक्स डिग्री उस समय नापनी चाहिये, जब हाइड्रोमीटर चाशनी मे अटल रहे। चाशनी की ऊपरी सतह तथा हाइड्रोमीटर की अंशांकन-रेखा जिस सूचना पर ठहरती है, वही डिग्री नोट कर लें।

यदि उपर्युक्त विधि से नापी गयी शर्करा-चाशनी की ब्रिक्स 50° हो तथा तापमान 70° से० हो तो उसकी यथार्थ ब्रिक्स डिग्री 20° से० तापमान पर यह देखें कि कितनी होगी? इसके लिए अगले पृष्ठ की सारणी मे देखें कि 50° ब्रिक्स तथा 70° से० ताप को आपस मे दो सीधी लाइनें खीचकर या स्केल के सहारे जोड़ा जाये तो वह दोनो जिस बिन्दु पर मिलेंगे, वहाँ 4 7 अंकित हुआ दिखाई देगा। 70° से० 20° से० से अधिक है, इसलिए 50° ब्रिक्स के साथ 4.7 जोड़ने से प्राप्त संख्या 54.7° ब्रिक्स होगी। यह 54.7° ब्रिक्स 20° से० पर ली हुई उसी चाशनी के ब्रिक्स डिग्री के बराबर पाई जायेगी। परन्तु 20° से कम प्राप्त संख्या को, जोड़ने के बजाय घटाना चाहिये, क्योंकि ताप बढने से चाशनी का गाढापन कम होता जायेगा, परन्तु ताप कम होने से चाशनी का गाढापन बढ़ता जायेगा।

एक अन्य शर्करा घोल का ब्रिक्स 35° तथा तापमान 18° हो तो ताप-शोधन निम्न प्रकार लिया जा सकता है। सारणी (संख्या 1) मे 35° ब्रिक्स तथा 18° से० ताप दोनों को सीधी लाइन द्वारा मिलाया जाये तो जिस बिन्दु पर आपस मे मिलेंगे वहाँ 0.14 अंकित मिलेगा। इस संख्या को 35° ब्रिक्स मे से घटाया जाये तो प्राप्त संख्या 34.86° ब्रिक्स 20° से० पर सही पायी जायेगी।

सारणी संख्या 1

विविध शर्करा चाशनियों को 20° से॰ पर (ताप) ताप-शोधन की तालिका

तापमान सेन्टीग्रेड में	निरीक्षण की गयी शर्करा-मात्रा (प्रतिशत में)													
	0	5	10	15	20	25	30	35	40	45	50	55	60	70
	निरीक्षण किये गए प्रतिशत मे से कम करना है													
0	0.30	0.49	0.65	0.77	0.89	0.99	1.08	0.16	1.24	1.31	1.37	1.41	1.44	1.49
5	0.36	0.47	0.56	0.65	0.73	0.80	0.86	0.91	0.97	1.01	1.05	1.08	0.10	0.14
10	0.32	0.38	0.43	0.48	0.52	0.57	0.60	0.64	0.67	0 70	0.72	0.74	0 75	0.77
11	0.31	0.35	0 40	0.44	0.48	0.51	0.55	0.58	0 60	0.63	0 65	0.66	0.68	0.70
12	0.29	0.32	0.36	0.40	0 43	0 46	0.50	0.52	0.54	0.56	0 58	0.59	0.60	0.62
13	0.26	0.29	0 32	0.35	0.38	0.41	0.44	0.46	0.48	0.49	0.51	0.52	0.53	0.55
14	0.24	0.26	0.29	0.31	0.34	0.36	0.38	0.40	0.41	0 42	0.44	0.45	0.46	0 47
15	0.20	0.22	0.24	0.26	0.28	0.30	0.32	0.33	0.34	0 36	0 36	0 37	0.38	0.39
16	0.17	0.18	0.20	0.22	0.23	0.25	0.26	0.27	0.28	0.28	0.29	0.30	0.31	0.32

17	0.13	0.14	0.15	0.16	0.18	0.19	0.20	0.20	0.21	0.21	0.22	0.23	0·23	0.24
17.5	0.11	0·12	0.12	0.14	0.15	0.16	0.16	0.17	0.17	0.18	0.18	0.19	0.19	0.20
18	0 09	0.10	0.10	0.11	0.12	0.13	0.13	0.14	0.14	0.14	0.15	0.15	0.15	0.16
19	0.05	0 05	0.05	0.06	0.06	0.06	0.07	0 07	0.07	0.07	0.08	0.08	0.08	0.08
निरीक्षण किये गये प्रतिशत के साथ (उपर्युक्त सारणी में) जोड़ा जाये														
21	0.04	0.05	0.06	0.06	0.06	0.07	0.07	0.07	0.07	0.08	0.08	0.08	0.08	0·09
22	0.10	0 10	0.11	0.12	0 12	0.13	0.14	0.14	0.15	0.15	0.16	0.16	0.16	0.16
23	0.16	0 16	0.17	0.17	0.19	0.20	0.21	0.21	0.22	0.23	0.24	0.24	0.24	0.24
24	0.21	0.22	0.23	0.24	0.26	0.27	0.28	0.29	0.30	0.31	0.32	0.32	0.32	0.32
25	0 27	0.28	0.30	0.31	0.32	0.34	0.35	0.36	0.38	0.38	0.39	0.39	0.40	0.39
26	0.33	0.34	0.36	0.37	0.40	0.40	0.42	0.44	0.46	0.47	0.47	0.48	0.48	0.48
27	0.40	0.41	0.42	0.44	0.46	0.48	0.50	0.52	0.54	0 54	0.55	0.56	0.56	0.56
28	0.46	0.47	0 49	0.51	0 54	0 56	0.58	0.60	0.61	0.62	0.63	0.64	0.64	0.64
29	0.54	0.55	0.56	0.59	0.61	0.63	0.66	0.68	0.70	0.70	0.71	0.72	0.72	0.72
30	0 61	0 62	0·63	0.66	0.68	0.71	0.73	0.76	0.78	0.78	0.79	0.80	0.80	0.81
35	0.99	0 01	1.02	1.06	1.10	1.13	11.6	1.18	1.20	1.21	1.22	1.22	1.23	1.22

40	1.42	1.45	1.47	1.51	1.54	1 57	1.60	1.62	1.64	1.65	1 65	1 65	1 66	1.65
45	1.91	1.94	1.96	2.00	2 03	2 05	2.07	2.09	2.10	2 10	2 10	2.10	2.10	2.08
50	2.46	2.48	2.50	2.53	2 56	2.57	2 58	2.59	2 59	2 58	2 58	2 57	2 56	2 52
55	3 03	3.07	3 09	3 12	3 12	3.12	3 12	3.11	3 10	3 08	3 07	3.05	3.03	2.97
60	3.69	3.72	3.73	3.73	3.72	3 70	3.67	3 65	3.62	3.60	3 57	3 54	3 50	3.53
65	4.4	4.4	4.4	4.4	4.4	4.4	4.3	4.2	4.2	4.1	4.1	4 0	4.0	4.0
70	5.1	5.1	5.1	5.0	5.0	5.0	4.9	4.8	4.8	4.7	4.7	4.6	4.6	4.4
75	6.1	6.0	6.0	5.9	5.8	5.8	5.7	5.6	5.5	5.4	5.4	5.3	5.2	5.0
80	7.1	7.0	7.0	6.9	6.8	6.7	6.6	6 4	6.3	6.2	6 1	6.0	5.9	5.6

कहने का तात्पर्य यह है कि निरीक्षण किया गया ब्रिक्स डिग्री का तापमान 19° या उससे कम हो तो निरीक्षण से प्राप्त ब्रिक्स डिग्री से संख्या को घटाना चाहिए या 21° से० या उससे अधिक हो तो अन्तर संख्या को निरीक्षित ब्रिक्स डिग्री के साथ जोड़ना चाहिए अथवा यों भी कहा जा सकता है कि 20° से० पर नापी गई एक चाशनी का ब्रिक्स 45° हो और उस चाशनी को 55° से० पर नापा जाये तो प्राप्त ब्रिक्स डिग्री 41.92 ब्रिक्स होगा। इसी प्रकार तापमान मे आने वाले अन्तर की वजह से चाशनी मे होने वाली ब्रिक्स डिग्री के अन्तर को एक निश्चित तापमान पर लाकर ब्रिक्स डिग्री को भी निश्चित किया जाता है। इसके लिए ताप-शोधन की आवश्यकता होती है जो फल परिरक्षण मे बहुत महत्त्व रखती है।

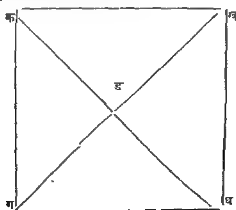
शर्करा चाशनी निर्माण के लिए आवश्यक गणित

पहले ही चर्चा की गयी है कि लघु तथा कुटीर उद्योगो मे सर्वप्रथम गाढी शर्करा चाशनी बनायी जाती है, उसमे आवश्यकतानुसार जल या पतली शर्करा चाशनी मिलाकर चाही गई ब्रिक्स डिग्री की चाशनी में परिवर्तित की जाती है। इसके लिए बनायी गयी गाढी शर्करा-चाशनी जो संचयन-टंकियो मे हैं, उसका ब्रिक्स 60° से 70° श्रृंखला मे होगा। कतरे फलों से भरी वाहिका मे चाशनी भरने के पहले संचयन टंकी से आने वाली गाढी शर्करा-चाशनी को पहले ही आवश्यकतानुसार पतली कर लेते है या वाहिका में गाढी चाशनी को उचित मात्रा मे भरकर शेष भाग जल द्वारा पूरा करके चाही गई ब्रिक्स डिग्री की पतली चाशनी प्राप्त की जाती है। साधारणतया भरने से पूर्व गाढी चाशनी पतली करके भरी जाती है। ठीक इसी प्रकार गाढी चाशनी को विभिन्न डिग्री ब्रिक्स की पतली चाशनी आसानी से बनाने के लिए पियर्सन स्क्वायर (पियर्सन वर्ग) विधि को आसानी से अपनाया जा सकता है।

प्रश्न संख्या 1

यदि ब्रिक्स 70° व ताप 20° की चाशनी से 50° ब्रिक्स की एक दूसरी चाशनी बनानी है, जिसका तापमान भी 20° से० होगा तो 70° ब्रिक्स की शर्करा घोल के साथ कितना शुद्ध जल (जिसका तापमान भी 20° से० है) मिलाने से 50° ब्रिक्स का कितना शर्करा घोल मिल सकेगा, मात्रा अनुपात में बतावें ?

इसके लिए पहले-पहल एक चौकोर बनावें,



40	1.42	1.45	1.47	1.51	1.54	1.57	1 60	1.62	1 64	1.65	1 65	1 65	1 66	1.65
45	1.91	1.94	1.96	2.00	2 03	2 05	2.07	2.09	2.10	2 10	2.10	2.10	2.10	2.08
50	2.46	2.48	2.50	2.53	2 56	2.57	2 58	2.59	2 59	2 58	2 58	2 57	2 56	2 52
55	3.03	3.07	3.09	3.12	3.12	3.12	3 12	3.11	3 10	3.08	3 07	3.05	3 03	2.97
60	3.69	3.72	3.73	3.73	3.72	3 70	3.67	3 65	3.62	3 60	3 57	3.54	3 50	3.53
65	4 4	4.4	4.4	4.4	4.4	4.4	4.3	4.2	4.2	4.1	4.1	4.0	4.0	4.0
70	5.1	5.1	5.1	5.0	5.0	5.0	4.9	4.8	4.8	4.7	4.7	4.6	4.6	4.4
75	6.1	6.0	6.0	5.9	5.8	5.8	5.7	5.6	5.5	5.4	5.4	5.3	5.2	5.0
80	7.1	7.0	7.0	6.9	6.8	6.7	6.6	6.4	6.3	6.2	6.1	6.0	5.9	5.6

कहने का तात्पर्य यह है कि निरीक्षण किया गया ब्रिक्स डिग्री का तापमान 19° या उससे कम हो तो निरीक्षण से प्राप्त ब्रिक्स डिग्री से संख्या को घटाना चाहिए या 21° से० या उससे अधिक हो तो अन्तर संख्या को निरीक्षित ब्रिक्स डिग्री के साथ जोडना चाहिए अथवा यों भी कहा जा सकता है कि 20° से० पर नापी गई एक चाशनी का ब्रिक्स 45° हो और उस चाशनी को 55° से० पर नापा जाये तो प्राप्त ब्रिक्स डिग्री 41.92 ब्रिक्स होगा। इसी प्रकार तापमान मे आने वाले अन्तर की वजह से चाशनी मे होने वाली ब्रिक्स डिग्री के अन्तर को एक निश्चित तापमान पर लाकर ब्रिक्स डिग्री को भी निश्चित किया जाता है। इसके लिए ताप-शोधन की आवश्यकता होती है जो फल परिरक्षण मे बहुत महत्त्व रखती है।

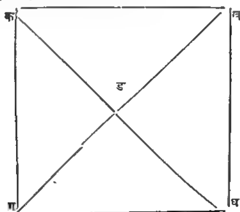
शर्करा चाशनी निर्माण के लिए आवश्यक गणित

पहले ही चर्चा की गयी है कि लघु तथा कुटीर उद्योगों मे सर्वप्रथम गाढी शर्करा चाशनी बनायी जाती है, उसमे आवश्यकतानुसार जल या पतली शर्करा चाशनी मिलाकर चाही गई ब्रिक्स डिग्री की चाशनी में परिवर्तित की जाती है। इसके लिए बनायी गयी गाढी शर्करा-चाशनी जो संचयन-टंकियों में हैं, उसका ब्रिक्स 60° से 70° श्रखला मे होगा। कतरे फलों से भरी वाहिका मे चाशनी भरने के पहले संचयन टंकी से आने वाली गाढी शर्करा-चाशनी को पहले ही आवश्यकतानुसार पतली कर लेते है या वाहिका मे गाढी चाशनी को उचित मात्रा में भरकर शेष भाग जल द्वारा पूरा करके चाही गई ब्रिक्स डिग्री की पतली चाशनी प्राप्त की जाती है। साधारणतया भरने से पूर्व गाढी चाशनी पतली करके भरी जाती है। ठीक इसी प्रकार गाढी चाशनी को विभिन्न डिग्री ब्रिक्स की पतली चाशनी आसानी से बनाने के लिए पियर्सन स्क्वायर (पियर्सन वर्ग) विधि को आसानी से अपनाया जा सकता है।

प्रश्न संख्या 1

यदि ब्रिक्स 70° व ताप 20° की चाशनी से 50° ब्रिक्स की एक दूसरी चाशनी बनानी है, जिसका तापमान भी 20° से० होगा तो 70° ब्रिक्स की शर्करा घोल के साथ कितना शुद्ध जल (जिसका तापमान भी 20° से० है) मिलाने से 50° ब्रिक्स का कितना शर्करा घोल मिल सकेगा, मात्रा अनुपात मे बतावें ?

इसके लिए पहले-पहल एक चौकोर बनावें,



जैसा कि चित्र में दिखाया गया है, उसके चारो कोणों को परस्पर मिलावें, क के स्थान पर गाढी शर्करा चाशनी की ब्रिक्स डिग्री, घ के स्थान पर पतली चाशनी या जल की ब्रिक्स अंकित करें (घ = 0) ब्रिक्स जहाँ 'ङ' अंकित किया हुआ है वहाँ चाही गई ब्रिक्स डिग्री (50° ब्रिक्स) अंकित करें तो जब कोण से कोण मिलाकर बड़ी संख्या से छोटी संख्या घटाई जाये तो प्राप्त संख्या ग तथा ग के स्थानों में अंकित करें। यह संख्या बतायेगी कि किस अनुपात में गाढी चाशनी में जल मिलाना चाहिये।

उपर्युक्त प्रश्न के आधार पर—
गाढी चाशनी की ब्रिक्स संख्या (क) = 70°
जल की ब्रिक्स संख्या (घ) = 0°
चाही गयी पतली चाशनी की ब्रिक्स
संख्या (ङ) = 20°
इसलिए, 20 : 50 या 50 : 20° = 5 : 2

अर्थात् 70° ब्रिक्स की चाशनी (20° सेन्टीग्रेड) 5 भाग तथा जल जिसका ब्रिक्स 0° तापमान 20° से० 2 भाग मिलाने से उसी तापमान पर (20° से०) पर 50° ब्रिक्स की एक पतली चाशनी प्राप्त होगी, जिसका तापमान भी 20° से० होगा।

प्रश्न संख्या 2

मान लें 80° ब्रिक्स की एक शर्करा चाशनी आपको दी गयी है, जिसका तापमान 20° से० है, तो उसके साथ 5° ब्रिक्स की कितनी मात्रा शर्करा चाशनी मिलाने से 30° ब्रिक्स का एक शर्करा-घोल प्राप्त होगा ?

उत्तर—2 : 1 अनुपात में मिलाने से प्राप्त होगा।

प्रश्न संख्या 3

मान लें 60° ब्रिक्स की 1000 लीटर शर्करा चाशनी आपको दी गयी है, जिसका तापमान 20° से० है। इसमें से 40° ब्रिक्स की एक दूसरी चाशनी बनानी है, जिसका तापमान भी 10° से० होगा, तो बताइये कि 60° ब्रिक्स का कितना लीटर जल मिलाने से 40° ब्रिक्स की एक चाशनी मिलेगी जिसका तापमान 20° से० होगा।

उत्तर—2 : 1 के अनुपात में अर्थात् 20° से० के 500 लीटर जल उसी तापमानी में 1000 लीटर चाशनी जिसका ब्रिक्स 60° है, मिलाने से 20° से० की एक चाशनी मिलेगी, जिसका ब्रिक्स 40° होगा।

प्रश्न संख्या 4

40° ब्रिक्स की 1000 लीटर शर्करा चाशनी बनानी है, तो तीसरे प्रश्न के आधार पर बताइये कि 10° ब्रिक्स के शर्करा-घोल के साथ कितना जल मिलाना होगा ?

उत्तर—जल 333.33 लीटर तथा 60° ब्रिक्स की चाशनी 666.67 लीटर शर्करा-घोल में मिलाने से 40° ब्रिक्स की 1000 लीटर शर्करा चाशनी प्राप्त होगी।

प्रश्न संख्या 5

70° ब्रिक्स की 1000 लीटर शर्करा चाशनी दी गयी है, जिसका तापमान 20° है। इसके साथ 20° ब्रिक्स की एक चाशनी कुल 400 लीटर जिसका तापमान भी 20° से० है, तो बताइये कि दोनों को मिलाने से प्राप्त शर्करा चाशनी का ब्रिक्स कितना होगा ?

कुल घोल 14·00 लीटर

मान लें कि $70°$ ब्रिक्स $+ 20^0$ ब्रिक्स $=$ क° ब्रिक्स

इसलिए 1400 क° ब्रिक्स $= (1000 \times 70) + (400 \times 20)$

1400 क° $= 70000 + 8000 = 78000$

इसलिए क° $= \frac{78000}{1400} = 55.7$

उत्तर— दोनों को मिलाने से प्राप्त चाशनी की ब्रिक्स डिग्री $20°$ से० पर $55.7°$ ब्रिक्स होगा।

उपर्युक्त विधियो तथा नियमो के आधार पर तैयार की जाने वाली शर्करा चाशनी प्रत्येक कैनो मे उसकी धारक-शक्ति के आधार पर एक निश्चित मात्रा मे ही शर्करा चाशनी मिलायी जाती है। चाशनी की भरी हुई मात्रा उसमें भरे हुए फलों के तोल के अनुपात पर रहेगी। किसी वाहिका मे फल कम तथा चाशनी अधिक हो जाये तो भविष्य मे उसमे भरी गयी चाशनी की ब्रिक्स डिग्री मे भी बढोतरी पायी जायेगी। इसके विपरीत चाशनी कम और फल अधिक हो जायें तो वाहिका मे रही चाशनी की ब्रिक्स डिग्री कम हो जायेगी। इसलिए एक ही धारक-शक्ति की समस्त वाहिकाओ मे भरी जाने वाली फल तथा चाशनी की मात्रा बराबर मे होनी चाहिये।

लवण तथा लवण घोल निर्माण

कैनीकरण मे जिस प्रकार शर्करा चाशनी फलों में भरी जाती है, उसी प्रकार तरकारियों के कैनीकरण मे लवण-घोल का प्रयोग किया जाता है। यहाँ लवण का मतलब खाने योग्य नमक से है। कुछ विशेष तरकारियो जैसे—हरा मटर, भुट्टे का दाना आदि मे लवण-घोल के साथ मामूली शर्करा मिलाकर कैनीकरण किया जाता है।

लवण-घोल बनाते समय शर्करा-चाशनी की भांति सतर्कता नही बरतनी पड़ती है, क्योंकि नमक शर्करा से सस्ता है। परन्तु लवण-घोल के लिए चुना जाने वाला नमक बिल्कुल शुद्ध होना चाहिये। नमक मे लोहांश, कैल्शियम लवण तथा सोडियम, मैग्नीशियम आदि का सल्फेट भी मिला हुआ होता है। उपर्युक्त पदार्थ नमक मे दो प्रतिशत से अधिक नही होने चाहिऐं। अधिक लोहांश वाली लवण-घोल भविष्य मे, कैनीकृत तरकारियो को काला कर सकता है। तरकारियों मे पायी जाने वाली टैनिन के साथ प्रक्रिया कर, तरकारियो को काला कर देता है। लवण में कैल्शियम मिला हुआ हो तो कैनीकृत तरकारियो मे आगे चलकर सफेद-सा अवक्षेप (प्रिसिपिटेट) पाया जायेगा। कैल्शियम मे विभिन्न बाईकार्बोनेट युक्त लवण-घोल तैयार करते समय (उबालते समय) कार्बोनेट बन जाते हैं। सोडियम मैग्नीशियम आदि के विभिन्न सल्फेटों की उपस्थिति मे कैनीकृत उत्पादो मे से भविष्य मे दुर्गन्ध पैदा हो सकती है। उपर्युक्त कारणों से आप भली-भाँति जान गये होगे कि शुद्ध नमक का प्रयोग कैनीकरण के लिए ही नही, अपितु अन्य परिरक्षण के लिए भी अत्यावश्यक है।

सारणी संख्या 2

5 लीटर लवण-घोल निर्माण के लिए आवश्यक नमक का भार तथा उस लवण-घोल मे रहे नमक के प्रतिशत तथा उसके अनुपात मे सालोमीटर द्वारा सूचित अंक ।

5 लीटर लवण-घोल के लिए वांछित नमक किलोग्राम मे	लवण-घोल मे उपस्थित नमक का प्रतिशत	सालोमीटर सूचक अंक
0.114	2.12	8
0.171	3.18	12
0.223	4.24	16
0.289	5.30	20
0.342	6.36	24
0.381	7.42	28
0.473	8.48	32
0.525	9.54	36
0.591	10.06	40
0.919	15.09	60
1.261	21.02	80
1.682	26.05	100

लवण-घोल निर्माण (Brine Preparation)

लवण-घोल भी उन्हीं बर्तनों मे बनाया जाता है, जिनमे शर्करा चाशनी बनायी जाती है। शर्करा चाशनी की भांति, बर्तनो में जितना पानी चाहिये, उतना डालकर बर्तन की अंशांकित सूची मे मात्रा का पता लगाकर आवश्यकतानुसार इसमे नमक मिला दिया जाता है। उबालकर, छानकर शर्करा-चाशनी की भांति संचयन-टंकियो मे इस घोल को भरा जाता है। इसी प्रकार तैयार किये गये घोल मे करीब 2 से 2.25 प्रतिशत नमक होगा जो साधारणतया कैनीकरण में काम मे लिया जाता है। वैसे तो अन्य कामों के लिए चाहे गये प्रतिशत के अनुसार लवण-घोल बनाया जा सकता है। अंशांकित एक मापक में 114 ग्राम नमक डालकर 5 लीटर जल मिलाकर घोल बना दिया जाये तो करीब 2 प्रतिशत नमक वाला एक लवण-घोल तैयार मिलेगा।

सालोमीटर

एक लवण-घोल मे कितना प्रतिशत नमक है, यह जानने के लिए सालोमीटर (Salemeter or Salinometer) काम मे लेते हैं। इसमे 0 से 100° तक अंशांकित किये होते हैं। एक लवण-घोल मे एक सालोमीटर से प्रयोग कर देखें, जो 100° सूचित करता है तो मालूम होना चाहिये कि उसमे 26 प्रतिशत नमक है (सारणी संख्या 2 देखें)।

नमक का प्रतिशत नापने का एक अन्य मीटर है बावमी। इसके बारे में अन्यत्र चर्चा हो चुकी है। बावमी सूचना को 4 से गुणा करने से प्राप्त संख्या सालोमीटर सूचना के बराबर होगी। बावमी मीटर नमक के प्रतिशत को सीधा सूचित करता है।

उपर्युक्त विधि से बनायी गयी शर्करा-चाशनी हो या लवण-घोल, इन्हें भरते समय का तापमान 175° से 180° फारनहिट होना अनिवार्य है।

निर्वातीकरण

वाहिकाओं में फल या तरकारी भरकर उसमे शर्करा-चाशनी या लवण-घोल मिला कर वायुरुद्ध अवस्था मे सीलवन्द करने के पूर्व एक निश्चित तापमान पर गर्म किया जाता है। इस प्रक्रिया से वाहिका मे भरे खाद्य-पदार्थों मे रह जाने वाली वायु को वाहर निकाल लेते हैं जिससे वाहिका का विकास भी हो जाता है और इस स्थान पर भाप भर जाती है। इस क्रिया के तुरन्त वाद वाहिका को वायुरुद्ध अवस्था में सीलवन्द कर ससाधन क्रिया-विधेयक वनाकर ठण्डा करते समय वाहिका के भीतर की भाप पानी बन जाने के कारण तथा वाहिका सिकुड़ने के कारण उसके भीतर वायु-रहित अवस्था उत्पन्न हो जाती है। इसी प्रकार वायु-रहित अवस्था (रिक्तकावस्था) वनाने की प्रक्रिया को निर्वातीकरण कहा जाता है।

वाहिका की रिक्तकावस्था

वायुमण्डल की वायु का दवाव तथा सीलवन्द वाहिका के भीतरी दवाव मे आने वाले अन्तर को ही वाहिका रिक्तकावस्था कहा जाता है। उदाहरण के लिए अन्तरिक्ष दवाव 28.5 इन्च तथा कैन का भीतरी दवाव 16 5 इन्च है, तो कैन की रिक्तक सख्या 28.5 – 16 5 = 12 इन्च होगी। कैन का भीतर रिक्तक मालूम करने के लिए वैक्यूम टैस्टर काम मे लिया जाता है। निर्वातीकरण क्रिया कुछ लघु तथा कुछ अन्य जटिल प्रक्रियाओं से सम्पन्न होती है।

जल-ऊष्मक द्वारा निर्वातीकरण

जल-ऊष्मक को अग्रेजी में वाटरवाथ विधि कहा जाता है। यह एक लघु प्रक्रिया है। विद्यालयो की प्रयोगशालाओ मे तथा घरेलू स्तर के कैनीकरण आदि के लिए जल-ऊष्मक विधि अपनायी जाती है। इसके लिए चुने जाने वाला वर्तन अर्थात् भगोना, उसमे रखने वाली वाहिकाओ के आकार तथा सख्या के आधार पर छोटे या वड़े हो सकते है। इस भगोने के भीतर एक कपड़ा या कोई अन्य लोहे या लकड़ी से बना हुआ चकला डाल दिया जाये तो पानी उवलते समय वाहिका सीधे भगोने के पैदे के सम्पर्क मे नही आयेगी, परन्तु उपर्युक्त चकलो मे अधिकाधिक छिद्र होने अनिवार्य है। अगर कपड़ा डालते है तो उन्हें दो-तीन परत वनाकर विछाना चाहिये, इसके ऊपर जिन वाहिकाओ का निर्वातीकरण करना है, उन्हें सजाया जाये। वाहिकाओं के ढक्कनों को भी वाहिका के ऊपर ढीले रख देना चाहिये। वाहिका के तापमान के अनुसार तप्त जल उस भगोने मे भरा जाये, लेकिन वाहिका के भीतर रखे हुए फल या तरकारियो मे जल नही गिरना चाहिये। जल भरते समय भी ध्यान रखना होगा कि भगोने के अन्दर रखी हुई वाहिका के मुँह से करीब 50 से 60 मिलीमीटर नीचे पानी की सतह रहनी चाहिये। वाहिका युक्त भगोने तथा जल को स्टोव, अंगीठी या विजली के चूल्हे आदि की सहायता से गर्म करें ताकि प्रत्येक वाहिका के केन्द्र का तापमान 80° से 85° सें० पहुँच जाये। यह तापमान पहुँचते ही समय नोट कर लें तथा 10 से 12 मिनट के बाद भगोने मे से प्रत्येक वाहिका को वाहर निकाल लें। खाद्य पदार्थ युक्त निर्वातीकृत वाहिकाओ को जल-ऊष्मक से सावधानी से निकालना चाहिए। इसके लिए कपड़ा तथा स्टेनलेसस्टील से वनी सण्डासी काम मे ली जा सकती है। इसी प्रकार प्रत्येक वाहिकाओ को वाहर निकालते ही तुरन्त यथाविधि वायुरुद्ध अवस्था मे सीलवन्द कर दें। प्रत्येक वाहिका के केन्द्र स्थान का तापमान मालूम करने के लिए उपयुक्त थर्मामीटर काम मे लाया जा सकता है, जो वाहिका को जल-ऊष्मक मे रहते समय ही प्रयोग कर लेना चाहिए।

एक्सहास्ट बॉक्स (Exhaust Box)

एक्सहास्ट बॉक्स को निर्वातीकरणी कहा जा सकता है। भाप से चलने वाला यह यन्त्र बेल्ट से वाहिकाओं को एक तरफ से निर्वातीकरणी के भीतर से होता हुआ बाहर निकालता है। एक साधारण एक्सहास्ट बॉक्स की लम्बाई करीब 45.70 सेन्टीमीटर होगी। इसमें शक्तियुक्त भाप भरे कक्ष की लम्बाई 36·50 सेन्टीमीटर होती है। लोहे से निर्मित इस यन्त्र के चारो ओर एल्युमीनियम से बना ढक्कन लगा हुआ होता है। इसके भीतर 2 5 मेमी० का गलवनीकृत पाइप होता है। यह पाइप बॉयलर से आने वाले भापयुक्त मुख्य पाइप से जुड़ा हुआ होता है, जो पूरी तरह इन्सुलेट किया हुआ होता है, ताकि भाप का तापमान यथाविधि बनाया रख सके। जब यह यन्त्र चालू किया जाता है तब पहले स्टीम छोड़ी जाती है, ताकि निर्वातीकरण के भीतर का तापमान 82° से 88° से० पहुँच जाय तथा उसके भीतर की वायु भी निकाली जा सके। इस समय भरी हुई कैनों को या बोतलों को एक्सहास्ट बॉक्स के बेल्ट में एक तरफ क्रमश. रखा जाता है तथा बेल्ट के चलने की वजह से धीरे-धीरे भाप-कोष्ठ के भीतर वाहिका प्रवेश कर, वाहिका की भीतरी वायु को निकालने, वाहिका के विकास कराने तथा भाप के कैनों को सम्पूर्ण रूप से भरने का कार्य हो सके, ताकि निर्वातीकरण सम्पन्न हो सकें। वाहिका वाहक बेल्ट की गति को नियन्त्रित करने का प्रबन्ध भी उसमें किया हुआ होता है। फल तथा तरकारी के अनुसार उसको दिया जाने वाला निर्वातीकरण समय भी भिन्न-भिन्न होता है, उसके आधार पर बेल्ट की गति को कम-ज्यादा करना अनिवार्य है, फलस्वरूप बाहर आने वाली प्रत्येक वाहिका का भीतरी तापमान 80° से० 85° से० तापमान रहेगा। बीच-बीच के वाहिकाओं के निरीक्षण-परीक्षण से इस तापमान को वाहिकाओं में कायम रखा जाता है। वाहिकाओं का मुँह जितना चौड़ा होगा, उतनी ही यह क्रिया मन्द गति से सम्पन्न होगी। जितना मुँह संकड़ा होगा, उतनी ही शीघ्र गर्म हो जायेगी। इसी प्रकार बाहर आने वाली प्रत्येक कैनों को तुरन्त वायुरुद्ध अवस्था में सीलबन्द कर लेते हैं ताकि उसकी भीतरी अवस्था में कोई अन्तर न आ सके। इसके लिए सीलिंग मशीन की सहायता ली जाती है। इसी प्रकार कांच से बनी वाहिकाओं को भी यन्त्र से या हाथ से तुरन्त सीलबन्द कर देना चाहिये।

उपर्युक्त एक्सहास्ट बॉक्स (निर्वातीकरणी) जल से भी चलाया जा सकता है। भाप की बजाय जल से ऊष्मीकरण किया सम्पन्न की जाती है, लेकिन जल को गर्म करने के लिए भाप ही काम में ली जाती है। इसी प्रकार के एक्सहास्ट बॉक्स भरे रहने को एक लम्बी द्रोणिका होगी। जैसे पहले चर्चा की गई है, वैसे ही बेल्ट की सहायता से भरी हुई वाहिका निश्चित गति में गर्म पानी से भरी हुई द्रोणिका में पहुँचती है, तो प्रत्येक वाहिका का करीब 13 से 20 मिलीमीटर ऊपरी भाग जल के बाहर रहेगा। इन वाहिकाओं के ऊपर ढक्कन ढीले रखे होते हैं। इस समय गर्म पानी (82° से 88° से०) में वाहिका ऊष्मायारण करती है। इसी प्रकार 80° से 85° से० प्रत्येक कैन के या कांच की वाहिका के केन्द्र में पहुँचने के लिए करीब 5 से 10 मिनट का समय लगेगा। बेल्ट को भी इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए चलाया जाता है, फलस्वरूप एक तरफ से पहुँचाई हुई वाहिकाएँ निर्वातीकरण के पश्चात् दूसरी तरफ से निकलती हैं, जिनको एक-एक करके तुरन्त वायुरुद्ध अवस्था में सीलबन्द किया जाता है। इसके लिए सुयोग्य यन्त्रों को निर्वातीकरणी के पास ही लगाया हुआ होता है। (चित्र सं० 40)



चित्र संख्या 33
फल-तरकारियों को निर्वातीकरण के लिए बड़े कारखानों में इस यन्त्र की सहायता से निर्वातीकरण सम्पन्न किया जाता है, जिसको एक्सहास्ट बॉक्स कहते हैं, जो शक्तियुक्त भाप से सम्पन्न कराया जाता है।

रिक्तक प्रभावी कारक

ऑक्सीजन

हम भली-भाँति जानते हैं कि अन्तरिक्ष वायु में एक-बटा पाँच भाग केवल ऑक्सीजन होती है। फलस्वरूप भरी वाहिकाओं के भीतर उपस्थित वायु में भी इसी अनुपात पर ऑक्सीजन होना स्वाभाविक है। राँगा लेपित कैनों में ससाधन किये गये खाद्य पदार्थों का परीक्षण किया गया तो मालूम हुआ कि उनमें ऑक्सीजन नहीं थी। परन्तु हाइड्रोजन तथा कार्बनडाईऑक्साइड अल्प मात्रा में उपस्थित थी, क्योंकि कैन के भीतर की वायु में उपस्थित ऑक्सीजन कैन-काया (लोहा चद्दर से बनी) से संक्षारण क्रिया हो जाने के कारण समाप्त हो गई। यह प्रक्रिया कैन के भीतर रिक्तावस्था बढ़ाने के लिए प्रेरक रही है। परन्तु राँगा-लेपित लोहा-चद्दर से बनी कैनों में खाद्य-पदार्थ संसाधन कर दीर्घकाल गोदामों में संचयन करने के बावजूद उपर्युक्त संक्षारण क्रिया सम्पन्न हुई। राँगालेपन में होने वाली त्रुटियों से इस संक्षारण प्रक्रिया में तीव्रता आ सकती है। संक्षारण क्रिया से खाद्य पदार्थ से भरी कैन भविष्य में नाइट्रोजन गैस निर्माण के कारण फूल सकती है, फलस्वरूप फल-तरकारी में पाये जाने वाले विटामिन सी का नाश हो जाता है। उपर्युक्त कमी को दूर करने के लिए खाद्य पदार्थों के स्वभाव तथा गुणों के आधार पर लोहा-चद्दरों को उचित रूप से राँगा-लेपन करें या लैकीकरण अथवा इनामल करें, ताकि फल में उपस्थित अम्ल से या गन्धक से कैन तथा खाद्य-पदार्थों में भविष्य में विकृति न हो पाए।

खाद्य पदार्थ तथा ऊष्मोपचार

कैन में या काँच की वाहिका में भरे कुछ खाद्य-पदार्थ ऊष्मा धारण कर सिकुड़ते हैं, तो कुछ फैलते भी है। चना, हरा मटर, भुट्टा आदि लवणघोल की उपस्थिति में ऊष्मोपचार किया जाये तो फूलने लगते हैं, परन्तु सरसफल (बेरी), शर्करा-चाशनी की उपस्थिति में सिकुड़ जाती है। इन दोनों दोषों को निर्वातीकरण क्रिया से दूर किया जा सकता है। अर्थात् निर्वातीकरण के बाद जो पदार्थ फूलते हैं, उनमे से आवश्यकतानुसार कुछ मात्रा कम

कर लेते हैं तथा सिकुडने वाले खाद्य-पदार्थ पुनः भरकर चाहा गया शीर्षस्थान प्रदान कर रिक्तकावस्था वाहिकाओं के भीतर सम्पन्न की जाती है। जैसे पहले चर्चा की जा चुकी है, अल्प ताप में दीर्घ समय तक ऊष्मीकरण करने से वाहिकाओं में भरे खाद्य-पदार्थों के बीच के तथा उसके ऊतकों में पाये जाने वाले वायुअंश वाहिका से बाहर आ जाते हैं। फलस्वरूप उसके भीतर रिक्तावस्था उत्पन्न हो जाती है। निर्वातीकरण क्रिया खाद्य पदार्थों को नर्म बनाने में भी सहायक सिद्ध होती है, ये बातें पहले ही स्पष्ट हो चुकी हैं।

शीर्ष स्थान तथा उसका महत्व

निर्वातीकरण के तुरन्त बाद वायुरुद्ध अवस्था में सीलबन्द (हरमैटीकल सीलिंग) कर, संसाधन कर, ठण्डा करने के बाद उसके भीतर की भाप ठण्डी हो जायेगी और जलांश खाद्य पदार्थ के द्रव में मिल जायेगा, फलस्वरूप उसके भीतर रिक्तकावस्था उत्पन्न होती है। यह रिक्तकावस्था वाहिकाओं में भराई के समय दिए गए शीर्ष स्थान के आधार पर रहेगी। गिरधारी लाल तथा साथियों का कथन है कि शीर्षस्थान जितना ही कम होगा, रिक्तकावस्था उतनी ही बढ़ेगी। इसके अलावा निर्वातीकरण के लिए दी गई ताप मात्रा, दिया गया समय कैनीकरणशाला स्थित स्थान की ऊँचाई आदि पर निर्भर रहेगी। इसके लिए प्रत्येक खाद्य पदार्थ को कितना शीर्षस्थान छोडकर भरना चाहिए, और कितना ताप कितने समय तक देना चाहिए, यह पृथक् पृथक् फल-तरकारियों के लिए अनुसन्धान द्वारा निर्धारित किया हुआ है।

कैनीकरणशाला तथा ऊँचाई

मान लें कि कैनीकरणशाला समुद्र के तट पर स्थित है, तो इस कैनीकरणशाला में संसाधित कैनों को अगर 3000 मीटर या उससे अधिक ऊँचाई वाले स्थान पर ले जाकर निरीक्षण करें तो मालूम होगा कि जो रिक्त स्थान समुद्रतट पर, उस कैन में पाया गया था, उससे कम रिक्तकावस्था समुद्र तट से ऊँचे स्थान पर पायी जायेगी अथवा हम इस प्रकार भी कह सकते हैं कि ऊँचे स्थान स्थित कैनीकरण शाला में संसाधित कैनीकरण पदार्थों को समुद्र तट पर लाकर निरीक्षण किया जाये तो मालूम पडेगा कि कैनों के भीतर रिक्तक अवस्था बढ़ गई है। यह ज्ञान हमें इस बात की ओर आकृष्ट करता है कि कैनीकरण पदार्थ जिस स्थान को भेजे जाते हैं (विपणन के लिए) वहाँ की भौगोलिक परिस्थिति, जैसी ऊँचाई तापमान इत्यादि, को विशेष रूप से ध्यान में रखते हुए कैनों में रिक्तकावस्था उत्पन्न कर देनी चाहिए। इसलिए कैनीकरणशाला स्थित स्थान की ऊँचाई संसाधन में महत्व रखती है।

भाप प्रवाह सीलिंग (मुद्रांकन)

इसके बारे में निर्वातीकरणी (एग्जहास्ट बॉक्स) की चर्चा के समय बताया जा चुका है। आज विदेशों में ही नहीं, अपितु भारत की अधिकांश कैनीकरणशालाओं में निर्वातीकरण भाप सीलिंग द्वारा ही संसाधन-क्रिया सम्पन्न करायी जाती है। भापयुक्त कोष्ट में बेल्ट की सहायता से पहुँचाने वाली खाद्य-पदार्थ भरी हुई वाहिकाओं की वायु को भाप द्वारा निकालकर खाद्य-पदार्थ निश्चित समय के बाद भाप-कोष्ट के बाहर आते हैं, और उनका तुरन्त सीलिंग किया जाता है। यह क्रियाएँ स्वचालित यन्त्र की सहायता से सम्पन्न करते हैं, जो भाप कोष्ठ से बाहर आते ही स्वचालित कैन-सीलर उन्हें प्राप्त कर अपने-आप

शीघ्रता से ढक्कन लगाकर वायुरुद्ध अवस्था प्रदान कर देते हैं। अगर कैनीकरण कांच की बरनी मे किया जाता है, तो अर्द्ध वायुरुद्ध अवस्था ही प्रदान करते हैं, और रिपोटिंग (ऊष्मा संसाधन) के बाद पुनः सम्पूर्ण रूप से वायुरुद्ध अवस्था मे सीलबन्द कर देते हैं। रिपोटिंग के बाद वाहिकाओं को उचित तापमान पर ठण्डा करते समय उसके भीतर की भाप ठण्डी होकर बनी जल वाहिका में भरे हुए द्रव मे मिल जाती है।

वायुरुद्ध अवस्था में सीलिंग (हरमेटिकल सीलिंग Hermetical Seeling)

निर्वातीकरण गर्म पानी की सहायता से या भाप-प्रवाह-विधि से या यन्त्र की सहायता से सम्पन्न कराकर उसके भीतर की वायु को वहाँ से हटाकर वाहिकाओं को वायुरुद्ध अवस्था मे सीलबन्द कर दिया जाता है, ताकि उसमे पुनः वायु का आवागमन न हो सके। इस क्रिया को ही वायुरुद्ध सीलिंग (मुद्रांकन) कहा जाता है, जिसको अंग्रेजी मे हरमेटिकल सीलिंग (Hermetical Seeling) कहा जाता है। इसके बारे मे वाहिका-अध्याय मे प्रकाश डाला जा चुका है।

ऊष्मा संसाधन (हीट प्रोसेसिंग Heat Processing)

वायुरुद्ध अवस्था मे सीलबन्द की हुई वाहिकाओ को ऊष्मा द्वारा पाचकीकरण करने की क्रिया को हीट-प्रोसेसिंग या ऊष्मा संसाधन कहा जाता है। खाद्य पदार्थों की स्वाभाविक रचना के आधार पर उसमे दी जाने वाली ऊष्मा मात्रा तथा ऊष्मा ससाधन मे दिये जाने वाले समय में भिन्नता आ जायेगी। अम्लयुक्त फलो को जल-ऊष्मक मे 212° फारनहीट ताप मे, अम्ल रहित तरकारियो को रिटार्टर मे या तद्‌तुल्य अन्य प्रेशर कुकरो मे 240° से 250° फारनहीट तापोपचार कर ऊष्मा संसाधन सम्पन्न किया जाता है। ऊष्मा ससाधन के विभिन्न पहलुओ पर चर्चा करने के पहले ऊष्मा तथा ऊष्मा स्थानान्तरण के बारे मे कुछ ज्ञान अवश्य प्राप्त कर लेना चाहिए।

साधारण भाषा मे ऊष्मा का मतलब है, गर्मी। यदि किसी वस्तु को जलने दिया जाये तो गर्मी अनुभव होगी। यह गर्मी अथवा ऊष्मा उस वस्तु मे सगृहीत ऊर्जा के अनुपात मे रहेगी, अर्थात् हम यह भी कह सकते हैं कि ऊष्मा ऊर्जा का एक दूसरा रूप है। इस कारण से इन्हें कैलोरी में तथा ब्रिटिश थर्मल यूनिट मे (ब्रिटिश तापमान) आंका जाता है। ऊष्मा का न तो रूप है और न ही आकार। इसकी उपस्थिति केवल अनुभव से ही मालूम की जा सकती है। प्रकृति का एक प्रमुख ऊष्मा स्रोत सूर्य है। इसके अतिरिक्त विद्युत, परमाणु शक्ति तथा अन्य प्राकृतिक ईंधन पदार्थ है, जैसे—लकड़ी, पत्थर कोयला, कोयला पेट्रोलियम उत्पाद, जो मानव के सांस्कृतिक विकास के साथ क्रमशः अपनाये जाते रहे हैं।

ऊष्मा व्यापन

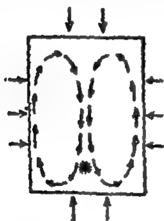
जल का प्रवाह ऊँचे स्थान से नीचे की ओर होता है, लेकिन ऊष्मा व्यापन अधिक ऊष्मा वाले स्थान से कम ऊष्मा वाले स्थान की ओर होता है, जो चाहे ऊपर की ओर हो अथवा नीचे या अन्य वस्तुओ मे। अर्थात् ऊष्मा चारो तरफ फैलती है, जहाँ इसकी कमी है। उपर्युक्त ऊष्मा-व्यापन निम्नलिखित तीन विभिन्न प्रकार से सम्पन्न होता है :—

(1) संवहन ऊष्मीकरण क्रिया (Convection Heating)

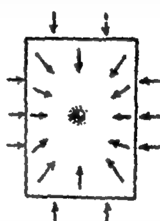
एक जलयुक्त वाहिका को गर्म किया जाए तो एक कण गर्म होकर दूसरे कणों को क्रमश. गर्म करने लगता है, इसी प्रकार ऊष्मा स्थानान्तरण क्रिया को ही संवहन ऊष्मीकरण

कहा जाता है। एक बर्तन के घोल को गर्म करते समय, घोल नीचे से ऊपर की ओर गर्म होता है, इस समय ऊष्मा ठण्डे कणों को स्थानान्तरण करने की वजह से घोल के सतह पर पहुँचते-पहुँचते वे कण ठण्डे हो जाते हैं, परन्तु ऊष्मीकरण क्रिया लगातार चालू रखें तो उपर्युक्त ठण्डे कण ऊपर से नीचे की ओर बहकर पुनः गर्म होकर अपनी क्रिया चालू रखते हैं। इसी प्रकार बर्तन का सारा घोल गर्म हो जाता है। कैनों के भीतर का घोल दो प्रकार से यह क्रिया सम्पन्न कराता है। जैसे (चित्र संख्या 34) में दिखाया गया है, वैसे एक कैन

34 (क)



34 (ख)



चित्र संख्या 34

कैनों को (खाद्य पदार्थ या तरल पदार्थ भरने के बाद) संसाधन करते समय होने वाली भाप प्रवाह को चित्रांकन किया गया है। 34 (क) में संवहन ऊष्मीकरण के कारण उत्पन्न ऊष्मा प्रवाह तथा शीत बिन्दु दर्शाया गया है—तो 34 (ख) में चालन ऊष्मीकरण से ऊष्मा प्रवाह की गति तथा शीत बिन्दु दर्शायी गई है।

मे दो विभिन्न प्रकार से ऊष्मीकरण क्रिया सम्पन्न होती है। कैनों को रिटार्टर मे संसाधन कराते समय रिटॉर्ट के भीतर के गर्म जल से या भाप से ऊष्मा चारो तरफ से कैनो मे लग कर पहले कैनकाया को गर्म करती है, फलस्वरूप भीतर के द्रव को या घोल को कैन के भीतरी दाहिनी तरफ से ऊपर की ओर गर्म होने लगती है, तब दूसरी तरफ बायी ओर से ऊपर की ओर चलकर बीच की ओर आकर गर्म करने लगती है, इसी प्रकार से कैन के भीतर दो चक्राकार तरीके से यह क्रिया सम्पन्न होती है, जो संवहन ऊष्मा स्थापन से होती है। परन्तु इस क्रिया द्वारा सम्पूर्ण कैन एक समान गर्म नही होती। इसलिए कैन के नीचे जैसे चित्र मे दिखाया गया है, वैसे एक स्थान उत्पन्न होता है, जो उतना गर्म नही होता। इस स्थान को कोल्ड पॉइण्ट यानि शीत-बिन्दु कहा जाता है। यह प्रक्रिया फल-तरकारियों के सर्वरस घोल मे या लवणघोल मे कैनीकरण के समय सम्पन्न होती है।

(2) चालन ऊष्मीकरण (Conducting Heating)

एक सरिये के टुकड़े के एक किनारे को लगातार गर्म किया जाए तो दूसरा किनारा भी गर्म (उष्ण) हो जायेगा। यहाँ लोहे का एक कण गर्म होकर दूसरे को व दूसरा तीसरे को गर्म करता है। और इसी क्रम मे सभी कण गर्म होते जाते हैं। इसको चालन ऊष्मीकरण कहा जाता है, परन्तु सब्जी तथा तत्सम्य वस्तुओं मे यह क्रिया सम्भव नही है।

इसलिए चालन ऊष्मीकरण से बचने के लिए लोहे से बने बर्तनों तथा उसके हत्थो पर लकड़ी,प्लास्टिक ग्रादि को लगाया जाता है ।

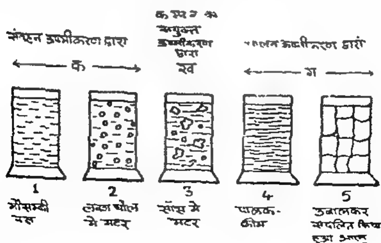
इसी प्रकार शोरवा (Puree) सा या लेइ (Paste) रूपी खाद्य पदार्थों (जैसे काशीफल शकरकन्द, टमाटर ग्रादि) से भरी सम्पूर्ण-वाहिकाग्रो मे ऊष्मा एक समान नहीं पहुँच पाती। यहाँ ऊष्मीकरण क्रिया चालन ऊष्मीकरण से सम्पन्न होती है । एक स्थान ग्रधिक गर्म होने के बाद ही दूसरी तरफ गर्मी स्थानान्तरण होगी । यहाँ ऊष्मायापन सवहन ऊष्मीकरण की भाँति नहीं होती, क्योंकि उपर्युक्त पदार्थ ऊपर-नीचे बहने योग्य पतले नही होते । इसीलिए उपर्युक्त वस्तु ऊँचे दर्जे की ऊष्माचालक नही है ।

(3) विकिरण ऊष्मीकरण (Radiation Heating)

ग्रधिक गर्म एक पदार्थ को हमसे दूर रखा जाए तो भी हमे गर्मी महसूस होगी, जैसे सर्दी मे हीटर की सहायता से हम ग्रपने शरीर को गर्म करते हैं । इसी प्रकार ऊष्मीकरण प्राप्त कर गर्म होने वाली क्रिया को भी विकिरण ऊष्मीकरण कहा जाता है । धूप में सुखाना, सूर्य ताप से होने वाली विकिरण क्रिया से भी सम्पन्न किया जाता है। इस प्रक्रिया से ग्राज कैनीकरण ही नही ग्रपितु निर्जलीकरण क्रिया भी सम्पन्न की जाती है, जो सौर ऊर्जा के ग्रलावा विभिन्न किरणीकरणी (Irradiator) की सहायता से भी सम्पन्न की जाती है ।

कैनीकरण तथा ऊष्मा का प्रवेश

खाद्य पदार्थों को कैनो में भरकर 116° फारनहीट मे वायुरुद्ध ग्रवस्था मे सीलबन्द करके रिटॉर्ट मे सजाकर भाप दबाव से चलाया जाए (प्रतिवर्ग सेन्टीमीटर को 0·7 किलोग्राम के ग्रनुपात मे भाप प्रवाहित करके) तो ग्रधिक ऊष्मा उत्पन्न होने के कारण तथा भीतर सजाये हुए कैनो के भीतर गर्म कम होने के कारण, चालन ऊष्मीकरण क्रिया द्वारा पहले कैनो को गर्म किया जाता है, तथा फिर उनके भीतर के खाद्य पदार्थों को । ग्रब कैन के भीतर भरे हुए पदार्थ की रचना के ग्रनुसार उसमे सवहन, चालन या दोनों का संयुक्त ऊष्मीकरण सम्पन्न होता है । जैसे रस हो तो वहाँ सवहन-ऊष्मीकरण तथा पालक, ग्रालू या



चित्र संख्या 35

तत्तुल्य पदार्थ भरा हुआ हो, तो उसमे चालन ऊष्मीकरण द्वारा ऊष्मीकरण सम्पन्न होता है। शर्करा-चाशनी या लवणघोल इत्यादि के माध्यम में अगर फल या तरकारी भरी हुई हो, तो संवहन-चालन ऊष्मीकरण की संयुक्त प्रक्रिया से ऊष्मीकरण सम्पन्न होगा। (चित्र संख्या 35 देखें)। साधारणतया खाद्य पदार्थों मे किसी भी प्रकार के तरीके से ऊष्मा आरम्भ होती है तथा उसके तुरन्त बाद दूसरे तरीके के ऊष्माचालन अनुगमन करते है। अधिक जानकारी के लिए सारणी संख्या 3 देखें।

सारणी संख्या 3

कैनीकरण रिटोर्ट मे होने वाला भाप-दबाव तथा फलस्वरूप उत्पन्न ताप मात्रा तथा उसका अनुपात।

प्रत्येक वर्ग इन्च मे उत्पन्न दबाव (पौण्ड मे)	तापमान (फारनहीट मे)	प्रत्येक वर्ग सेन्टीमीटर मे उत्पन्न दबाव (किलोग्राम मे)	तापमान (सेन्टीग्रेड मे)
1	215.2	0.07	102
2	218.3	0.14	104
3	221 3	0.21	105
4	224.2	0.28	107
5	226 9	0.35	108
6	229.5	0.42	110
7	231 9	0 49	111
8	233.3	0.56	112
9	236.6	0.63	114
10	238.8	0.70	115
11	241.0	0.77	116
12	243.0	0 84	117
13	245 3	0.91	119
14	247.3	0.98	120
15	249.1	1.05	121

क्रूस 1958

ऊष्मा मापन (Measuring of Heat)

ऊष्मा मापन के लिए काम में आने वाली एक तापमानपी को थर्मामीटर कहते है। विभिन्न प्रकार के कार्यों के लिए विभिन्न प्रकार के थर्मामीटर काम मे लिए जाते है। भाप दबाव से चलने वाले रिटोर्ट की ऊष्मा अपने-आप सूचित करने वाले थर्मामीटर, रिटार्ट मे लगे हुए होते है। इसका एक हिस्सा रिटोर्ट के भीतर तथा दूसरा भाग एक डायल मे लगा हुआ होता है। जब रिटोर्ट के भीतर ताप उत्पन्न होता है, तब वहाँ की तापमात्रा को डायल सूचित करता है, इसके अनुकूल उसकी बनावट होती है। परन्तु इस थर्मामीटर का पारा वायुमण्डल के ताप के अनुपात मे काम करता है, फलस्वरूप यह थर्मामीटर रिटोर्ट के वास्तविक ताप को सही रूप से सूचित करने मे असफल रहता है।

ऊष्मा-विद्युत् युग्म (Thermo couple)

रिटॉर्टर के भीतर रखे हुए कैनों के भीतर कितनी मात्रा मे ताप पहुँच गया है, यह मालूम करने के लिए ऊष्मा-विद्युत-युग्म (थरमोकोपिल) नामक उपकरण काम मे लिया जाता है। भिन्न-भिन्न गुणो वाले दो अलग-अलग धातुओं से बने दो तारो के एक-एक किनारे को जोडकर उसको ताप में रखा जाये तो एक वोल्टेज उत्पन्न होगा, जिसको नापा जा सकता है। यह वोल्टेज जुडे हुए भाग पर उपस्थित तापमान की मात्रा के अनुकूल होगा। इसी प्रकार भिन्न-भिन्न गुणो वाले तार से जुडे हुए भाग को ऊष्मा-विद्युत् सन्धि या जोड (Thermo-couple junction) कहा जाता है। इस ऊष्मा-विद्युत् युग्म के साथ दोनों बिना जुडे हुए तारों को एक युक्त प्रणाली में लगा दिया जाये जिसको "पोटेनस्यो मीटर" कहते हैं तथा इस मीटर मे अंशशोधन (Calibrate) किया हुआ होता है जिससे ताप मापा जा सकता है। इस मीटर की सहायता से रिटॉर्टर के भीतर रखी हुई कैनों या कांच की वाहिकाओं के अन्दर उत्पन्न तापमान को बाहर से ही नापा जा सकता है। साधारणतया ऊष्मा-विद्युत-युग्म प्रणाली कॉपर कोन्स्टेन्ट वायर (Copper constant wires) तथा एक पोटेन्स्यो मीटर से बनी हुई होती है।

जैसा कि पहले कहा जा चुका है, कैन के केन्द्र स्थान को शीत-बिन्दु कहा जाता है। यहाँ गर्मी सबसे अन्त मे पहुँचती है। इसलिए कैन की काया को वेध कर ऊष्मा-विद्युत्-युग्म की सन्धि या जोड वाले भाग को उचित रूप मे उसके भीतर लगाया जाता है, ताकि ऊष्मा-विद्युत् युग्म सन्धि की नोंक कैन के शीत-बिन्दु मे घुसी रहे।

जिन-जिन कैनीकृत पदार्थों के भीतर होने वाली ऊष्माव्यापन को मालूम करना होता है, उसे एक विशेष रिटॉर्टर के द्वारा ही मालूम किया जा सकता है। इसके लिए पहले ऊष्मा-विद्युत-युग्म को रिटॉर्टर की काया मे बने हुए छेद से अन्दर ले जाकर उन्हें एक-एक करके प्रत्येक कैनो के भीतर लगा दिया जाता है। इसी प्रकार कांच की वाहिका मे ऊष्माव्यापन जानना हो, तो कांच की वाहिका के ढक्कन के केन्द्र स्थान से अन्दर लगाया जाता है। ऊष्मा-विद्युत्-युग्म के दूसरे किनारे को पोटेन्स्यो मीटर से लगा दिया जाता है, अब इसी प्रकार सारी कैनों को सजाने के बाद रिटॉर्टर सुचारु रूप से बन्द कर दिया जाता है ताकि वह वायुरुद्ध अवस्था मे काम करे। याद रखे कि रिटार्टर के भीतर रखी हुई कैनें या वाहिकाएँ भिन्न भिन्न स्वभाव के खाद्य-पदार्थों से भरी हुई होगी। अब इसके भीतर चाही गई मात्रा मे भाप प्रवेश कराकर उचित मात्रा के दबाव पर उचित समय मे रिटॉर्टर को चलाकर प्रत्येक कैन मे होने वाली ऊष्माव्यापन पोटेन्स्यो मीटर द्वारा बाहर से ही मालूम कर लेते है। मान ले कि भीतर फल-रस, लवण-घोल के माध्यम मे भरी मटर, फल का गूदा तथा पालक आदि चार भिन्न-भिन्न फल-तरकारियो से भरी हुई वाहिकाएँ हों तो ऊष्मा-विद्युत्-युग्म, पोटेन्स्यो मीटर की सहायता से मालूम हो जायेगा कि कौन-सा पदार्थ शीघ्र ऊष्मीकृत हो जाता है तथा उसका शीत-बिन्दु उचित तापमान पर पहुँचाने के लिए कितना समय लगेगा, क्योंकि प्रत्येक वस्तु-युक्त कैनो के भीतर प्रत्येक ऊष्मा-विद्युत्-युग्म लगे हुए होते है।

नये-नये उत्पादो के कैनीकरण के पहले उपर्युक्त विधि द्वारा ही प्रत्येक खाद्य-पदार्थ का कैनीकरण तापमान तथा समय-संसाधन के लिए निश्चित किया जाता है, इसको जा.ने

के लिए उपर्युक्त परीक्षण तथा निरीक्षण उपयोगी होता है। कैनों में ऊष्माव्यापन अध्ययन संयुक्त राज्य अमेरिका जैसे विकसित देशों में पहले ही चल रहा है, परन्तु हमारे देश में केन्द्रीय खाद्य परिरक्षण प्रौद्योगिक संस्थान, मैसूर विभिन्न कैनीकृत खाद्य-पदार्थों पर, भारतीय परिस्थिति में अध्ययनरत है। वहाँ कैन के आकार, वाहिका की आकृति, प्रकृति तथा भरे हुए खाद्य-पदार्थ की रचना के आधार पर यह अध्ययन किया जाता है।

अगर उपर्युक्त क्रियाएँ काँच की बरनियों में की जाती हैं, तो प्रत्येक ऊष्मा-विद्युत्-युग्म अलग-अलग बरनियों के ढक्कनों के केन्द्र भाग को बेधकर लगा दिया जाता है, ताकि भिन्न-भिन्न आहार वाली बरनियों से हुए ऊष्माव्यापन के बारे में अध्ययन कर सकें। प्रत्येक वाहिका में प्रत्येक ऊष्मा-विद्युत् युग्म लगाया जाता है तथा उसके अनुसार पोटेंस्यो मीटर चलाकर वाहिकाओं में उत्पन्न तापमान को चार्ट में अंकित किया जाता है।

ऊष्मा संसाधन विधि तथा उपस्कर

ऊष्मा-संसाधन के लिए पृथक्-पृथक् उपकरण समय-समय पर काम में लिये जाते रहे हैं, उनमें कई परिवर्तन एवं नवीनताएँ भी आई हैं जिनके बारे में यहाँ चर्चा करेंगे।

(1) जल-ऊष्मक

इसके बारे में पहले ही चर्चा कर चुके हैं कि यह जल-ऊष्मक विधि कैनीकरण इतिहास काल के प्रारम्भ खण्ड में ही काम में ली गई थी। जल-ऊष्मक में रखे हुए खाद्य-पदार्थ का आमतौर पर अम्लीय होना अनिवार्य है। इस उपकरण की सहायता से खाद्य-पदार्थों को 100° सें० (212° फारनहीट) पर संसाधित किया जा सकता है। इन वाहिकाओं को 20 से 30 मिनट समय देकर उपर्युक्त तापमान (100° सें०) पर संसाधन करने से अम्लयुक्त खाद्य-पदार्थ ऊष्मारोधी जीवाणुओं को तथा उनके बीजाणुओं को या तो नष्ट कर देंगे या निष्क्रिय बना देंगे। घरेलू स्तर के लिए चलाये जाने वाले जल-ऊष्मक में जब पानी उबलने लगता है, तब समय नोट कर लें तथा प्रत्येक आहार को चाहा गया समय प्रदान कर संसाधन सम्पन्न करा सकते हैं। यहाँ थर्मामीटर की आवश्यकता नहीं होगी, परन्तु अम्लरहित खाद्य-पदार्थ को इस विधि से संसाधित नहीं किया जा सकता है, क्योंकि इन खाद्य-पदार्थों में पाये जाने वाले ऊष्मासह जीवाणुओं तथा उनके बीजाणुओं को मारने या निष्क्रिय बनाने के लिए अधिक ताप की आवश्यकता होती है, जो 116° सें० से 121° सें० (240° से 250° एफ०) है। यह उपर्युक्त जल-ऊष्मक में 100° सें० से अधिक तापमान प्राप्त नहीं होता। इसलिए इस जल-ऊष्मक के जल में सोडियम क्लोराइड या कैल्सियम क्लोराइड मिलाने से जल का क्वथनांक बढ़ जायेगा, ताकि अम्लरहित खाद्य-पदार्थों विशेषकर तरकारियों के लिए चाहा गया तापमान प्राप्त हो सके। इसके लिए यह पाया गया कि सोडियम-क्लोराइड या कैल्सियम क्लोराइड का एक निश्चित प्रतिशत मिलाने से कुछ सीमा तक जल का तापमान बढ़ाया जा सकता है, जो सारणी संख्या 4 में बताया गया है।

सारणी संख्या-4

एक निश्चित ताप प्राप्ति के लिए जलीय घोल में चाहा गया सोडियम तथा कैल्शियम क्लोराइडों का प्रतिशत तथा उत्पन्न क्वथनांक :

तापमान डिग्री फारनहीट मे	सोडियम क्लोराइड (प्रतिशत मे)	कैल्शियम क्लोराइड (प्रतिशत में)
212	0	0
215	9.5	8.5
220	19.0	18.5
225	25.5	24.5
230	—	29.3
240	—	36.3
250	—	42.0
270	—	45.8

उपर्युक्त विधि से मिलाने से चाहा गया तापमान प्राप्त हो जायेगा, परन्तु संसाधन के समय कैन फट जाते हैं, इसके अलावा बाहर निकाली गई कैनों के तथा बरनियो के ढक्कनों पर लवण-अंश लगाकर शीघ्र संक्षारण-कारक बन जाते है। लवण जमने वाली क्रिया को संसाधन के तुरन्त बाद वाहिकाओ को धोकर दूर किया जा सकता है।

उपर्युक्त कठिनाइयों को दूर करने के लिए क्रुस ने यह प्रतिवेदन दिया कि तरकारियो का अम्लीकरण किया जाये, बाद मे उन्हें साधारण जल-ऊष्मक मे (100° से०) संसाधन जा सकता है। इसी प्रकार कैनीकृत उत्पादो को कैन से निकालकर मामूली बेकिंग सोडा मिलाकर उदासीन किया जाये तो अम्लरहित तरकारी प्राप्त हो सकेगी। अम्लीकरण क्रिया सतर्कता से करानी चाहिये, अन्यथा कम अम्लावस्था मे क्लस्टोडियम-बोटूलिनम नामक जीवाणु का नाश सम्भव नहीं होगा, चाहे तरकारियो के ससाधन के लिए आवश्यक 116° से० से 121° से० तापमान ही क्यो न दिया गया हो।

उपर्युक्त अम्लीकरण के लिए 46 लीटर लवण-घोल मे 4·540 किलो कागजी नीबू का रस मिलाकर यह क्रिया सम्पन्न की जा सकती है, परन्तु इन दोनो का मिश्रण 46 लीटर मे अधिक नही होना चाहिए, इसका ध्यान अवश्य रखें। अब आप भली-भांति समझ गये होगे कि भिन्न-भिन्न फल-तरकारियो को भिन्न-भिन्न तापमान तथा ससाधन समय की आवश्यकता होती है। उपर्युक्त कठिनाइयों को दूर करने करने के लिए वैज्ञानिको ने कुछ विशेष पाचक यन्त्रो का आविष्कार किया, जो आज भी प्रचलित है।

ढक्कन रहित पाचकीकरणों (टोप ओपन कुकर्स Top Open Cookers)

काष्ठ तथा विभिन्न धातुओं से बने टंकीनुमा उपर्युक्त बर्तनों को सीधे अग्नि की सहायता से या बॉयलर मे उत्पादित शक्तियुक्त भाप के पाइपो की सहायता से टंकियो मे भरे हुए पानी को उबालकर, इसके भीतर खाद्य-पदार्थ युक्त वाहिकाओ को क्रेटो मे भरकर उसमे उतारकर संसाधित किया जाता है। इसके लिए टंकियो के ऊपर पुल्ली तथा हुक की सहायता से क्रेटों को उतारने और निकालने का काम सम्पन्न किया जाता है। क्रेट भी टंकीनुमा

आकार के होते है, इनमे अधिकाधिक छिद्र होते हैं अथवा ये उचित ताकत के तारों से बने होते हैं। यह पाचकीकरणी विशेषकर बड़े कारखानों में काम में आती है। आज भी विकसित देशों मे इसका काफी प्रचार है। घरेलू स्तर पर काम मे ली जाने वाली यह पाचकीकरणी चित्र मे दिखायी गयी है।

निरन्तर चलायमान पाचकीकरणी (Continuous Cookers)

यह स्वचालित पाचकीकरणी है। इसमे लम्बाई में एक द्रोणिका तथा उसके बीच मे स्क्रू-टाइप एक बेलननुमा डण्डा लगा हुआ होता है, जो द्रोणिका की लम्बाई के बराबर होता है। इसके भीतर द्रोणिका मे उबलता हुआ पानी या शक्ति-युक्त भाप होती है। उबलता पानी हो तो वाहिकाओं तथा स्क्रू-दण्ड को पूरी तरह डुबोकर रखने योग्य मात्रा मे होना है। भाप हो तो द्रोणिका के स्थान पर भाप-कोष्ठ होता है जो कोष्ठ-जल तथा भाप के सयुक्त प्रयोग के योग्य होता है। इस पाचकीकरणी के एक ओर ऐसी व्यवस्था की गई होती है, जहाँ से वाहिकाओं को, विशेष तौर से कैनो को पहुँचाया जाता है। पाचकीकरणी मे वाहिकाओं को पहुँचाने के पहले पानी को उबाला जाता है या शक्ति-युक्त भाप का प्रवेश कराया जाता है या दोनो का सयुक्त प्रयोग किया जाता है, ताकि चाहा गया तापमान उसमे उत्पन्न कराया जा सके। अब संसाधन के लिए चाहे गये समय के आधार पर तन्त्र की गति नियन्त्रित की जाती है। अब कैनो को एक-एक करके यन्त्र में भेज दिया जाता है। यह क्रिया मानव-शक्ति से या यन्त्र-शक्ति से सम्पन्न करायी जा सकती है। स्क्रू-टाइप दण्ड मे कैन पहुँचते ही स्क्रू के घूमने के कारण कैन भी साथ-साथ ऊपर-नीचे होते हुए आगे की तरफ बढ़ते हैं, फलस्वरूप कोष्ठ मे उत्पन्न भाप ऊष्मा से संसाधन शुरू हो जाता है और ये कैन चाहे गये समय पर पाचकीकरणी मे घूमते-घूमते दूसरी तरफ से निकलकर उसी यन्त्र के साथ जुड़े हुए शीत-जल-युक्त दूसरी प्रणाली में प्रवेश कर उचित मात्रा मे ठण्डी होकर बाहर आ जाते हैं। उपर्युक्त विधि में ससाधित कैनो के केन्द्र मे (भीतर) शीत-बिन्दु नही रहेगा। जैसा कि चलन-रहित (बिना ढक्कन के पाचकीकरणी की भांति) पाचकीकरण मे होता है। इसी प्रकार की पाचकीकरणी मे थर्मामीटर या थर्मोस्टेट अथवा दोनो ही लगे हुए होते है, फलस्वरूप चालक को यह मालूम हो जाता है कि चाहा गया तापमान उसमे उत्पन्न हुआ कि नही। अगर तापमान बढ़ जाये तो थर्मोस्टेट की सहायता से उसका नियन्त्रण भी सम्भव है।

□□□

अध्याय **2**

अम्लरहित तरकारियों का कैनीकरण

(Canning of Non-Acid Vegetables)

हम भली-भाँति जानते हैं कि ऐसी अधिकांश तरकारियाँ अम्लरहित होती है, जो मिट्टी के अधिक सम्पर्क में रहती हैं, फलस्वरूप इनमें अधिकाधिक जीवाणु, (बैक्टीरिया) होना आवश्यक है। अन्य परिरक्षणों की भाँति कैनीकरण के लिए भी सूक्ष्मजीवियों की संख्या को भिन्न-भिन्न पूर्व-परिरक्षण उपचारों, (जैसे धुलाई, विवर्णीकरण इत्यादि) द्वारा सम्पन्न कराने के बावजूद उसमें सूक्ष्मजीव रह जाते हैं। इनका नाश या क्रियाशीलता को रोकने के लिए 240° से 270° फारनहीट तापोपचार करना अनिवार्य है। यह तापमान पूर्वचर्चित पाचकीकरणी में सम्पन्न नहीं किया जा सकता। इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए ही सन् 1851 में कैंवलियन-अपांट ने सर्वप्रथम प्रेशर कुकर का आविष्कार किया। आज प्रेशर कुकर में कई तरह के संशोधन किये गये हैं। आज छोटे-बड़े तथा भीमाकार प्रेशर कुकर भी बनाये जाते हैं। यह प्रेशर कुकर जल, भाप या दोनों के संयुक्त प्रयोग से चलने वाले होते हैं। इनमें ऊष्मा-स्रोत विद्युत् अंगीठी, स्टोव, गैस तथा भाप होते हैं। ये प्रेशर कुकर आकार तथा उपयोग के आधार पर, "प्रेशर कुकर ऑटोक्लेव" तथा 'रिटोर्ट" आदि नामों से जाने जाते हैं। व्यवसाय-स्तर पर कैनीकरण के लिए काम में लिये जाने वाले प्रेशर कुकर को रिटोर्ट कहते हैं।

रिटोर्ट

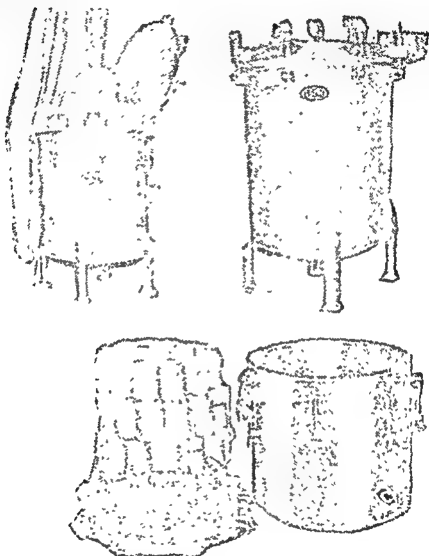
एक कारखाने की आवश्यकतानुसार भिन्न-भिन्न क्षमता के अनेक रिटॉर्ट काम में लिये जाते हैं। यह सॉफ्ट-स्टील से बने होते हैं, जिसकी बनावट जटिल है, क्योंकि इसमें दबाव-रिक्तक, ताप-मात्रा आदि को सूचित करने योग्य विभिन्न उपकरण लगे हुये होते हैं। इसके अलावा दुर्घटना से बचने के लिए योग्य सेफ्टीवाल्व (रक्षावाल्व) भी होता है। कैनीकरण कारखाने में काम आने वाला रिटॉर्ट साधारणतया भाप-दबाव से चलने वाला होता है।

भारत में निर्मित विभिन्न आकार के रिटॉर्ट 50 से 3000 तक कैन एक साथ संसाधित करने की क्षमता वाले होते हैं। आज विकसित देशों में स्वचालित तथा निरन्तर चलने वाले रिटॉर्ट प्रचलित हैं, ये मुख्यतया दो प्रकार के होते हैं।

(1) सपट रिटोर्ट (Horizontal Retort)

सपट रिटोर्ट को जमीन पर सपट अवस्था में फिट किया होता है, जिसका रूपी ढक्कन खोलकर वाहिकाओं से भरी ट्रॉली (क्रेट के बजाय), अन्दर सुचारु सजायी जाती है तथा ढक्कन वायुरुद्ध अवस्था में कसकर चलाने योग्य अवस्था

किया होता है। इस प्रकार के रिटोर्ट माल भरने तथा समाधन करके निकालने में अधिक सुविधाजनक हैं। (चित्र संख्या 45 क, ख)



चित्र संख्या–36
विभिन्न क्षमता के खड़े रिटोर्ट (वर्टीकल रिटोर्ट) तथा पेंदे में भरी केन समाधन के लिए रखी गयी है।

(2) खड़ा रिटोर्ट (Vertical Retort)

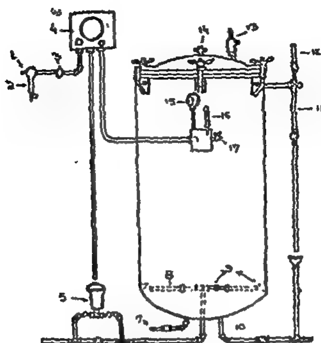
खड़े रिटोर्ट की ऊँचाई करीब 18.5 मीटर तक होती है। इसमें वाहिका पेटी को पुली तथा चेन की सहायता से रिटोर्ट में उतारा तथा निकाला जाता है। यह सपाट रिटोर्टों की भाँति सुविधाजनक नहीं होते, फिर भी भारत में यही प्रचलित है (चित्र संख्या 47 ग, घ)।

रिटोर्ट का प्रकार्य (Functions of Retort)

रिटोर्ट के प्रकार्य को समझने के लिए उसके विभिन्न कल-पुर्जों को जानना आवश्यक है। साधारण रिटोर्टो में निम्नलिखित पुर्जे होते हैं—(1) काया, (2) पाया, (3) निसरक (Bleeder), (4) प्रेशरगेज, (5) सेफ्टीवाल्व (सुरक्षावाल्व), (6) नट-बोल्ट, (7) ढक्कन, (8) आभासी पेंदा (फाल्स बॉटम), (9) थर्मामीटर इत्यादि।

परन्तु बड़ी व्यवसाय-शालाओं में काम आने वाले भीमाकार रिटोर्टो में इससे कहीं अधिक कल-पुर्जे होते हैं। पेंदे प्रथम चर्चित रिटोर्ट आमतौर पर पानी में चलाया जाता है। आभासी पेंदे रखकर उसमें आवश्यकतानुसार जल डालकर (निर्माताओं के निर्देशानुसार निर्धारित जल डालना चाहिये) इसके अन्दर वाहिकाओं से भरी क्रेट उतारी जाती है। इसके बाद ढक्कन लगाकर नट-बोल्ट से कस दिया जाता है ताकि रिटोर्ट वायुरुद्ध अवस्था में हो जाये। ब्लीडर (निसरक) खुला रखने के कारण रिटोर्ट को ऊष्मोपचार करते समय नीचे लगी हुई आग के कारण पानी उबलने लगता है और भाप अन्दर ही एकत्र होती है, परन्तु इसके भीतर पहले से ही रही वायु, उत्पन्न भाप के कारण ब्लीडर के द्वार से बाहर निकल जाती है। फलस्वरूप रिटोर्ट के भीतर वायु-रहित अवस्था उत्पन्न हो जाती है। इसके तुरन्त बाद ब्लीडर से भापयुक्त जल टपकने लगता है तथा शक्तियुक्त भाप उसके तुरन्त बाद आने लगती है। इस समय समझ लेना चाहिये कि रिटोर्ट के भीतर वायु बिल्कुल नहीं है तथा वहाँ रिक्त स्थान उत्पन्न हो चुका है। इस समय प्रेशरगेज की सुई शून्य दर्शाती हुई दिखाई देगी। इस समय ब्लीडर बन्द कर देना चाहिये। आग लगातार जलते रहने के कारण रिटोर्टर का पानी उबालकर भाप से भर जायेगा। जब प्रेशर गेज चाहा गया दबाव अंक (मान लें 7.5 किलो प्रति स्क्वायर सेन्टीमीटर या 15 पौण्ड प्रतिवर्ग इन्च हो तो) सूचित करते समय, समय नोट कर लें। मान लें कि रिटोर्ट में रखे हुए कैनीकृत पदार्थ को 0.7 किलो प्रति वर्ग सेन्टीमीटर के दबाव पर 10 मिनिट समय देकर ससाधन करना है तो निर्धारित समय पूरा होते ही ऊष्मीकरण बन्द कर देना चाहिये। चाहा गया दबाव पहुँचने के बावजूद अगर प्रेशरगेज आगे बढ़ता है तो ऊष्मीकरण शक्ति जो चल रही है, उसे कम करके, प्रेशर रिलीज (दबाव विमोचन) कराकर चाहे गये दबाव पर लाकर ऊष्मीकरण बन्द करना चाहिये। इसी प्रकार चलाने से रिटोर्टर में रखा हुआ कैनीकृत पदार्थ निर्जर्मीकृत हो जायेगा, साथ ही खाद्य-पदार्थ में किसी प्रकार का दोष भी उत्पन्न नहीं होगा।

परन्तु दूसरी तरह के रिटोर्ट की बनावट जटिल तो है ही, उसमें कल-पुर्जे भी अधिक होते हैं। इसके पुर्जे कुछ तो भाप से चलने वाले होते हैं तो कुछ अन्य भाप तथा वायु के मिश्रण से। इसमें प्रथम रिटोर्ट कैनीकृत खाद्य-पदार्थों को ससाधित करने के लिए काम आते हैं तथा दूसरा रिटोर्ट काँच की वाहिकाओं में भरे खाद्य-पदार्थ को ससाधित करने के काम में आते हैं। भाप से चलने वाले रिटोर्ट तथा उसके विभिन्न कल-पुर्जे (चित्र संख्या 48) में दिखाये गये हैं। इनके किवाड़ (ढक्कन) खोलकर अन्य रिटोर्टो की भाँति कैनीकृत उत्पादों से सजाकर बन्द करके भाप को प्रवेश करा दिया जाता है। फलस्वरूप ब्लीडर के द्वारा शेष बची हुई वायु बाहर आती है। जब वायु पूर्ण रूप से आती है तब उस ब्लीडर से शक्तियुक्त भाप निकलता है, तब ब्लीडर बन्द कर दि



रिटॉर्ट के भिन्न-भिन्न भाग

चित्र संख्या 37

1 वायु नियन्त्रक, 2 वायु फिल्टर, 3. वाल्व, 4. नियन्त्रक, 5 नियन्त्रक वाल्व, 6. भाप, 7 जल, 8 भाप-वाहक, 9. जालीदार भापसी पैदा, 10. जल निर्गमन नली, 11 पीवर पनो, 12. वेन्ट (Vent), 13 सेफ्टी वाल्व या रक्षा वाल्व, 14 ब्लोडर, 15 प्रेशरगेज (दाबमापी), 16 थर्मामीटर, 17. ब्लीडर ।

भीतर भाप को अधिक प्रवेश कराकर चाहे गये दबाव पर पहुँचाते हैं जो रिटॉर्ट के प्रेशरगेज से मालूम किया जाता है । चाहा गया समय देकर उन्हें संसाधन क्रिया सम्पन्न करा लेते हैं । इसमें दबाव के अनुपात में चाहा गया तापमान भी उत्पन्न हुआ या नहीं, यह मालूम करने के लिए थर्मामीटर लगा हुआ होना है । इसलिए चाहे गये तापमान पर, चाहा गया समय देकर संसाधन करने में सहायक होती है । फलस्वरूप सम्पूर्ण संसाधन प्राप्त होने में किसी प्रकार का सन्देह नहीं रहता, अर्थात् रिटॉर्ट का थर्मामीटर 115 5° सेन्टीग्रेड (240° फारनहीट) दिखाता है, तो उसके बराबर दबाव 0.7 किलो ग्राम प्रति वर्ग सेन्टीमीटर रिटॉर्ट का प्रेशरगेज सूचित करेगा । प्रेशरगेज उसी तापमान पर अधिक दबाव सूचित करता है तो मान लेना चाहिये कि रिटॉर्ट में से वायु पूर्णरूप से नहीं निकली थी ।

संसाधन क्रिया पूर्ण होते ही रिटॉर्ट में भाप-प्रवाह बन्द कर रिटॉर्ट में से दबाव विमोचन (प्रेशर रिलीज) धीरे-धीरे घटाकर बढ़ाना चाहिये, ताकि प्रेशरगेज में सूचना शून्य हो जाये । दबाव विमोचन प्रक्रिया में जल्दबाजी नहीं होनी चाहिये, क्योंकि शीघ्र दबाव विमोचन से रिटॉर्ट के भीतर उत्पन्न दबाव में होने वाले दबाव परिवर्तन से कैन फट

जाने की सम्भावना रहती है, इसलिए दबाव विमोचन धीरे-धीरे सम्पन्न कराना चाहिये, प्रेशरगेज में सूचना शून्य मिलने के बाद ढक्कन या किवाड़ इस तरह खोलना चाहिये कि चालक के ऊपर भाप की बौछार न हो।

ऊँचाई तथा संसाधन

समुद्र तट से ऊँचाई के स्थानों में संसाधन करते समय जल का क्वथनांक [redacted] मिनट प्रति 150 मीटर ऊँचाई के अनुपात में कम हो जायेगा। इसलिए संसाधन के लिए चाहे गये समय में भी 2 मिनट की वृद्धि करनी होगी समुद्र तट में नम्बर 10 (नम्बर टेन) आकार की कैनों में आम के फलों का ससाधन करने के लिए 10 मिनट का समय दिया जाता है तो 600 से 619 मीटर ऊँचाई पर 8 मिनट अधिक समय देना होगा, अर्थात् कुल 18 मिनट संसाधन समय देना है। (सारणी संख्या 5 देखें) इसके अनुरूप दबाव भी देना आवश्यक होगा (सारणी संख्या 6 देखें)।

सारणी संख्या–5

समुद्र तट से ऊँचे स्थानों में जब ससाधन किया जाता है, तब तापमान तथा समय में होने वाला अन्तर :

कारखाना स्थित स्थान की ऊँचाई	जल का क्वथनांक °से०	°एफ०	जल उबलने के लिए अतिरिक्त समय	अतिरिक्त दबाव इन्च²	सेमी²
0	100	212	0	0 इन्च	0
150	99.5	211	2	$1\frac{1}{4},,^{2}$	0.070^{2}
300–308	99	210	4	,,	,,
600–619	98	208	8	,,	,,
900–936	97	206	12	$2\frac{1}{4},,^{2}$	0.141^{2}
1200–1251	96	204	16	,,	,,
1500–1568	94	202	20	$3\frac{1}{4},,^{2}$	$0\ 211\frac{1}{4},,^{2}$
1800–1891	93	200	25	$3\frac{1}{4},,^{2}$	$0.\ 11\frac{1}{4},,^{2}$
2100–2214	92	198	30	$4\frac{1}{4},,^{2}$	$0.281\frac{1}{4},,^{2}$

सारणी संख्या–6

ऊँचाई में होने वाले अन्तर के अनुरूप दबावमापी में चाहा गया परिवर्तन

तापमान		दबावमापी का दबाव किलोग्राम में—समुद्रतट से ऊँचे स्थान की ऊँचाई मीटर में						
°से०	°एफ०	समुद्रतट	300	600	900	1200	1500	1800
100	212	0	0 036	0.070	0.105	0.146	0.169	6.204
104.4	220	0 176	0 211	0.239	0.274	0 309	0.345	0.373
110	230	0.429	0.464	0.499	0.534	0.562	0 597	0.633
116.5	340	0 724	0.754	0.794	0 823	0.858	0.893	0.921
121	250	1.062	1.097	1.032	1.067	1.202	1.230	1 266

कनरंस एसोसियेशन बुलेटिन—26

रिटोर्ट के प्रकार्य तथा सतर्कताएँ

(1) रिटोर्ट में लगा हुआ थर्मामीटर तथा थर्मोस्टेट सुचारु रूप से चलने वाला होगा, फिर भी रिटोर्ट को चलाने के पूर्व इसकी कार्य-कुशलता को परख लेना चाहिये।

(2) खड़ी रिटोर्ट में केवल प्रेशरगेज हो सकता है।

(3) सपाट रिटोर्ट में प्रेशरगेज दो थर्मामीटर दोनों बाजुओं मे लगी हुई होनी चाहिये।

(4) बॉयलर में से रिटोर्ट में आने वाली भापयुक्त पाइपों को उचित मात्रा में उचित ढंग से इन्सुलेट (ऊष्मारोधक) किया हुआ होना चाहिये।

(5) रिटोर्ट के प्रकार्य के बारे में अनुचित आत्म-विश्वास नहीं रखना चाहिये। इसके लिए रिटोर्ट को समय-समय पर चलाकर ही आत्म-विश्वास रखना चाहिये, क्योंकि लगातार कार्य करने से रिटोर्ट अन्य यन्त्रों की भाँति बलहीन हो जाता है। साधारणतया 0.7 किलोग्राम दबाव में प्रकार्य रिटोर्ट को 1.40 किलोग्राम में चलाकर देखें। अगर सही चलते हैं तो आप निडर होकर 0.7 किलोग्राम (10 पौण्ड) दबाव पर खाद्य-पदार्थों को संसाधित कर सकते हैं।

(6) इसी प्रकार ब्लीडर, वाल्व, जल-निष्कासक आदि भी सुचारु रूप से चल रहा है कि नहीं, यह देखते रहना चाहिये।

संसाधित खाद्य-पदार्थों का शीतलीकरण

कैनीकृत खाद्य-पदार्थों को संसाधित करते ही, तुरन्त यथाशीघ्र उन्हें चाहे गये तापमान पर ठण्डा कर लेना चाहिए। इस क्रिया से कैन के भीतर व्याप्त ऊष्मा का विमोचन तुरन्त हो जायेगा, अन्यथा खाद्य-पदार्थ आवश्यकता से अधिक पक जायेंगे। यह क्रिया विभिन्न प्रकार से सम्पन्न की जाती है। एक विधि की हम इस अध्याय के 'निरन्तर चलायमान पास्चरीकरण' शीर्षक में चर्चा कर चुके हैं। रिटोर्ट में से बाहर निकाले गये कैनों पर यन्त्र द्वारा शीत-जल की वर्षा कराकर उन्हें आवश्यकतानुसार (20° से 25° से०) ठण्डा कर लेते हैं या यह कार्य बहते हुए पानी की टंकियों में डालकर सम्पन्न कराया जाता है। पानी तथा पानी से होने वाले व्यय को दूर करने के लिए शीत-प्रदेशीय या अन्य क्षेत्रों में शीत-काल में संसाधित खाद्य-पदार्थों को संसाधन के तुरन्त पश्चात् कारखाने के बाहर सजाया जाता है ताकि उचित मात्रा में ठण्डा किया जा सके।

कुछ रिटोर्टों की बनावट ही ऐसी होती है कि संसाधन क्रिया सम्पूर्ण होते ही रिटोर्टों में लगा हुआ जल-पाइप खोलकर इसके भीतर जल प्रवेश कराकर कैनों को ठण्डा कर लेते हैं।

ऊष्म-मैदानीय प्रदेशों में खासतौर से उत्तर भारत में अप्रैल, मई महीनों में जहाँ कैनीकरण चलता है, वहाँ संसाधित खाद्य-पदार्थों को शीघ्र ठण्डा करने के लिए हिम-युक्त पानी भी काम में ले सकते हैं। इसी प्रकार शीतलीकृत कैनों का तापमान 20° से 25° से. मात्र पर आकर शीतलीकरण क्रिया रोकनी चाहिए। इससे अधिक ताप कैनों में रह जाये तो खाद्य-पदार्थ आवश्यकता से अधिक पक जाता है। फलस्वरूप खाद्य-पदार्थों में वर्णभेद हो जाता है। इस तापक्रम, अर्थात् 20° से 25° से० या तत्तुल्य तापमान फारनहीट पर होना चाहिए। इससे कम हो जाये तो कैनों में गलारण (जंग लगना) होने का भी भय

रहता है। शीतलीकरण के लिए काम मे लेने वाले वर्तन गलवनीकृत लोहे से बने होने अनिवार्य हैं।

बोतलीकृत चलता है, वहाँ संसाधित क्रिया के बाद उपर्युक्त क्रिया द्वारा शीतलीकरण नही किया जाता। परन्तु इन्हे काष्ठ के तख्ते या ऐसी ही अन्य वस्तुओं पर सजाकर स्वयं ठण्डा होने दिया जाता है, जो साधारणतया वायु-मण्डल की हवा से ही ठण्डे हो जाते हैं। परन्तु शीतकाल की ठण्डी हवा लग जाये तो बोतलें टूटने का भय रहता है। इसी प्रकार बोतलों को सीमेन्ट से बने फर्श पर या तत्तुल्य न्यून तापमान वाले अन्य स्थान पर अथवा ऐसे स्थान पर, जो कि बैड कण्डक्टर ऑफ हीट (Bad Conductor of Heat) न हो, रखने से भी बोतलें टूटने की सम्भावना रहती है। बोतलो को संसाधन के बाद बाहर निकालते ही, कांच की बरनी के ढक्कन वायुरुद्ध अवस्था मे है कि नही, इसका विश्वास कर लेना चाहिये। इसके लिए प्रत्येक बरनी के ढक्कनों को टाइट करके देखें।

क्लोरीकरण (Chlorination)

शीतलीकरण के लिए काम मे आने वाला जल नगरपालिका द्वारा वितरित होना चाहिये, अन्यथा जल का क्लोरीकरण करना आवश्यक है। इसके लिए 203 पी० पी० एम० के अनुपात में क्लोरीन मिलानी चाहिये, क्योंकि संसाधन क्रिया के समय ऊष्मा से कैन विकसित हो जाती है, खासतौर से कैनों के जोड़ के स्थान। फलस्वरूप अदृश्य छिद्र हो जाना भी सम्भव है। इन छिद्रों से कैनो के भीतर जल प्रविष्ट हो सकता है। अगर यह जल क्लोरीकृत न हो, तो इसमे रह जाने वाले सूक्ष्मजीव जल के द्वारा कैनो मे प्रवेश कर भविष्य में खाद्य-पदार्थों मे विकृति उत्पन्न कर सकते हैं। इसलिए परिरक्षण की अन्य क्रियाओ की भांति शीतलीकरण मे भी क्लोरीकरण द्वारा सूक्ष्मजीवियो को नष्ट करना या निष्क्रिय बनाना अति आवश्यक है।

कैनीकृत खाद्य-पदार्थों में रिक्तावस्था तथा सम्भावित त्रुटियां

संसाधन किये हुए खाद्य पदार्थों मे सम्भावित त्रुटियो को तकनीशियन अपने अनुभव मे ही या यन्त्र की सहायता से शीघ्र पहचान लेते हैं, दोनों का सयुक्त प्रयोग कर इसको अधिक प्रयोगात्मक बना सकते हैं। कैनीकृत उत्पादो पर एक छोटे तार के डण्डे से हल्का-सा मारकर देखा जाता है। पूर्ण रूप मे वायुरुद्ध अवस्था मे चाही गयी रिक्तावस्था प्रदान की हुई कैनो पर मार पड़ते ही घण्टी (झालरनुमा) की नाद निकालती है। अन्य त्रुटि वाली कैनों मे निकलने वाली नाद धुम-धुम-सी होगी।

कैनो की रिक्त अवस्था मालूम करने के लिए दो विभिन्न यन्त्र काम मे लिये जाते हैं, जिन्हे (1) वैक्यूम गेज (रिक्तका मापी), वैक्यूम टेंम्टर (रिक्तक शोधनी) कहा जाता है (चित्र संख्या 38, 39, 40)।

वैक्यूम गेज मे एक तरफ एक मापक लगा हुआ होता है, जिसमे डायल तथा सुई होती है, जहाँ कलिब्रेटट (अंशाकन किया हुआ) होता है। इसका दूसरा कोना नुकीला होता है। इसके ऊपर एक बोल्ट लगा हुआ होना है तथा उसके नीचे नुकीले स्थान पर रबड गैसकेट लगाकर सुरक्षित किया होता है। सन्देहास्पद कैनों को या नमूनो को चुनकर उनके पऊर (ऊपरी ढक्कन के केन्द्र मे) इस गेज के नुकीले स्थान को कैनो में प्रवेश कराते समय वायुरुद्ध अवस्था होना आवश्यक है, इसके लिए उपयुक्त रबर गैस केट ही कार्य करते है।

रिटोर्ट के प्रकार्य तथा सतर्कताएँ

(1) रिटोर्ट में लगा हुआ थर्मामीटर तथा थर्मोस्टेट सुचारु रूप से चलने वाला होगा, फिर भी रिटोर्ट को चलाने के पूर्व इसकी कार्य-कुशलता को परख लेना चाहिये।

(2) खड़ी रिटोर्ट में केवल प्रेशरगेज हो सकता है।

(3) सपाट रिटोर्ट में प्रेशरगेज दो थर्मामीटर दोनों बाजुओं में लगी हुई होनी चाहिये।

(4) बॉयलर में से रिटोर्ट में आने वाली भापयुक्त पाइपों को उचित मात्रा में उचित ढंग से इन्सुलेट (ऊष्मारोधक) किया हुआ होना चाहिये।

(5) रिटोर्ट के प्रकार्य के बारे में अनुचित आत्म-विश्वास नहीं रखना चाहिये। इसके लिए रिटोर्ट को समय-समय पर चलाकर ही आत्म-विश्वास रखना चाहिये, क्योंकि लगातार कार्य करने से रिटोर्ट अन्य यन्त्रों की भाँति बलहीन हो जाता है। साधारणतया 0.7 किलोग्राम दबाव में प्रकार्य रिटोर्ट को 1.40 किलोग्राम में चलाकर देखें। अगर सही चलते हैं तो आप निडर होकर 0.7 किलोग्राम (10 पौण्ड) दबाव पर खाद्य-पदार्थों को ससाधित कर सकते हैं।

(6) इसी प्रकार ब्लीडर, वाल्व, जल-निष्कासक आदि भी सुचारु रूप से चल रहा है कि नहीं, यह देखते रहना चाहिये।

संसाधित खाद्य-पदार्थों का शीतलीकरण

कैनीकृत खाद्य-पदार्थों को संसाधित करते ही, तुरन्त यथाशीघ्र उन्हें चाहे गये तापमान पर ठण्डा कर लेना चाहिए। इस क्रिया से कैन के भीतर व्याप्त ऊष्मा का विमोचन तुरन्त हो जायेगा, अन्यथा खाद्य-पदार्थ आवश्यकता से अधिक पक जायेंगे। यह क्रिया विभिन्न प्रकार से सम्पन्न की जाती है। एक विधि की हम इस अध्याय के 'निरन्तर चलायमान पाचकीकरणी' शीर्षक में चर्चा कर चुके हैं। रिटोर्ट में से बाहर निकाले गये कैनों पर यन्त्र द्वारा शीत-जल की वर्षा कराकर उन्हें आवश्यकतानुसार (20° से 25° से०) ठण्डा कर लेते हैं या यह कार्य बहते हुए पानी की टंकियों में डालकर सम्पन्न कराया जाता है। पानी तथा पानी से होने वाले व्यय को दूर करने के लिए शीत-प्रदेशीय या अन्य क्षेत्रों में शीत-काल में ससाधित खाद्य-पदार्थों को ससोधन के तुरन्त पश्चात् कारखाने के बाहर सजाया जाता है ताकि उचित मात्रा में ठण्डा किया जा सके।

कुछ रिटोर्टों की बनावट ही ऐसी होती है कि संसाधन क्रिया सम्पूर्ण होते ही रिटोर्टों में लगा हुआ जल-पाइप खोलकर इसके भीतर जल प्रवेश कराकर कैनों को ठण्डा कर लेते हैं।

ऊष्म-मेखलीय प्रदेशों में खासतौर से उत्तर भारत में अप्रैल, मई महीनों में जहाँ कैनीकरण चलता है, वहाँ संसाधित खाद्य-पदार्थों को शीघ्र ठण्डा करने के लिए हिम-युक्त पानी भी काम में ले सकते हैं। इसी प्रकार शीतलीकृत कैनों का तापमान 20° से 25° से. ताप पर लाकर शीतलीकरण क्रिया रोकनी चाहिए। इससे अधिक ताप कैनों में रह जाये तो खाद्य-पदार्थ आवश्यकता से अधिक पक जाता है। फलस्वरूप खाद्य-पदार्थों में वर्णभेद हो जाता [redacted]। इस तापक्रम, अर्थात् 20° से 25° से० या तत्तुल्य तापमान फारनहीट पर होना चाहिए। इससे कम हो जाये तो कैनों में संक्षारण (जंग लगना) होने का भी भय

रहता है। शीतलीकरण के लिए काम में लेने वाले बर्तन गलवनीकृत लोहे से बने होने अनिवार्य हैं।

बोतलीकृत चलता है, वहाँ संसाधित क्रिया के बाद उपर्युक्त क्रिया द्वारा शीतलीकरण नही किया जाता। परन्तु इन्हें काष्ठ के तख्ते या ऐसी ही अन्य वस्तुओं पर सजाकर स्वयं ठण्डा होने दिया जाता है, जो साधारणतया वायु-मण्डल की हवा से ही ठण्डे हो जाते हैं। परन्तु शीतकाल की ठण्डी हवा लग जाये तो बोतलें टूटने का भय रहता है। इसी प्रकार बोतलों को सीमेन्ट से बने फर्श पर या तत्तुल्य न्यून तापमान वाले अन्य स्थान पर अथवा ऐसे स्थान पर, जो कि बैड कण्डक्टर ऑफ हीट (Bad Conductor of Heat) न हो, रखने से भी बोतलें टूटने की सम्भावना रहती है। बोतलो को ससाधन के बाद बाहर निकालते ही, कॉच की बरनी के ढक्कन वायुरुद्ध अवस्था में है कि नहीं, इसका विश्वास कर लेना चाहिये। इसके लिए प्रत्येक बरनी के ढक्कनों को टाइट करके देखें।

क्लोरीकरण (Chlorination)

शीतलीकरण के लिए काम में आने वाला जल नगरपालिका द्वारा वितरित होना चाहिये, अन्यथा जल का क्लोरीकरण करना आवश्यक है। इसके लिए 203 पी० पी० एम० के अनुपात मे क्लोरीन मिलानी चाहिये, क्योंकि संसाधन क्रिया के समय ऊष्मा से कैन विकसित हो जाती है, खासतौर से कैनो के जोड़ के स्थान। फलस्वरूप अदृश्य छिद्र हो जाना भी सम्भव है। इन छिद्रो से कैनो के भीतर जल प्रविष्ट हो सकता है। अगर यह जल क्लोरीकृत न हो, तो इसमे रह जाने वाले सूक्ष्मजीव जल के द्वारा कैनो मे प्रवेश कर भविष्य में खाद्य-पदार्थों में विकृति उत्पन्न कर सकते हैं। इसलिए परिरक्षण की अन्य क्रियाओ की भाँति शीतलीकरण मे भी क्लोरीकरण द्वारा सूक्ष्मजीवियों को नष्ट करना या निष्क्रिय बनाना अति आवश्यक है।

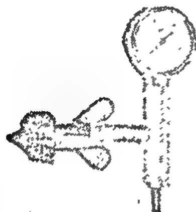
कैनीकृत खाद्य-पदार्थों में रिक्तावस्था तथा सम्भावित त्रुटियाँ

संसाधन किये हुए खाद्य पदार्थों मे सम्भावित त्रुटियो को तकनीशियन अपने अनुभव मे ही या यन्त्र की सहायता से शीघ्र पहचान लेते हैं, दोनो का सयुक्त प्रयोग कर इसको अधिक प्रयोगात्मक बना सकते हैं। कैनीकृत उत्पादो पर एक छोटे तार के डण्डे से हल्का-सा मारकर देखा जाता है। पूर्ण रूप से वायुरुद्ध अवस्था मे चाही गयी रिक्तावस्था प्रदान की हुई कैनो पर मार पड़ते ही घण्टी (झालरनुमा) की नाद निकालती है। अन्य त्रुटि वाली कैनो में निकलने वाली नाद धुम-धुम-सी होगी।

कैनो की रिक्त अवस्था मालूम करने के लिए दो विभिन्न यन्त्र काम मे लिये जाते हैं, जिन्हें (1) वैक्यूम गेज (रिक्तका मापी), वैक्यूम टैम्स्टर (रिक्तक शोधनी) कहा जाता है (चित्र सख्या 38, 39, 40)।

वैक्यूम गेज मे एक तरफ एक मापक लगा हुआ होता है, जिसमे डायल तथा सुई होती है, जहाँ कलिब्रेटट (अशाकन किया हुआ) होता है। इसका दूसरा कोना नुकीला होना है। इसके ऊपर एक बोल्ट लगा हुआ होता है तथा उसके नीचे नुकीले स्थान पर रबड़ गैस केट लगाकर सुरक्षित किया होता है। सन्देहास्पद कैनों को या नमूनो को चुनकर उनके पऊर (ऊपरी ढक्कन के केन्द्र मे) इस गेज के नुकीले स्थान को कैनों मे प्रवेश कराते समय वायुरुद्ध अवस्था होना आवश्यक है, इसके लिए उपयुक्त रबर गैस केट ही कार्य करते हैं।

फलस्वरूप बाहर से कैन के भीतर या भीतर से बाहर वायु प्रवाह सम्भव नहीं होगा, अगर होगा तो गलत तरीका अपनाने से ही हुआ होगा। सुचारु रूप से प्रवेशित वैक्यूम गेज की सूई, जो अंक दिखायेगी, कैन के भीतर की यथार्थ रिक्तावस्था होगी। इससे यह पता लग जायेगा कि चाही गई रिक्तावस्था कैनो के भीतर उत्पन्न हुई कि नहीं। कैनीकृत



चित्र संख्या 38
हैण्ड कैन टेस्टर
कैनो के दोनों ढक्कन बन्द होने के बाद कैन में लीक है कि नहीं मालूम करने के लिए योग्य हैण्ड कैन टेस्टर।



चित्र संख्या 39
वैक्यूम टेस्टर
कैन में खाद्य पदार्थ भरने के बाद ऊपर का ढक्कन लगने के पश्चात् मानका कैनों को चुनकर देखा जाता है कि चाहा गया रिक्त स्थान उसके भीतर है कि नहीं। इसके लिए वैक्यूम टेस्टर काम में लिया जाता है।

खाद्य-पदार्थों में रिक्तता (Vaccum) का बहुत बड़ा महत्व है, ताकि खाद्य की सुगन्धता, पौष्टता, परिरक्षकता आदि कैनीकृत खाद्य-पदार्थों में बनाये रखा जा सके। कैनीकृत खाद्य-पदार्थों की रिक्तता मालूम करते समय कैन की क्षति हो जाती है।

इस क्षति को दूर करने के लिए सी० ई० ई० आर० (सी० एस० आई० आर० के एक परिसर, तारामनी, मद्रास) ने एक ऐसे यन्त्र का रूपाकन किया। उसके द्वारा सोलबन्द



कैनों के बिना क्षति पहुँचाये ही रिक्तता ही मालूम कर सकते है, इस उपस्कर का नाम है—विब्रोटोन (Vibrotone) (देखें चित्र संख्या 40)।

रिक्तक दबाव तथा कैनीकरणोत्पाद

वायु-प्रिय सूक्ष्मजीवियो मे खाद्य-पदार्थो को परिरक्षित करने के लिए कैनीकरणोत्पादो मे रिक्तावस्था होनी अति आवश्यक है। इसका अर्थ यह नही कि संसाधन क्रिया से सूक्ष्मजीवो का नाश नही होता। संसाधन एक विधि है, जिसके द्वारा परिरक्षण सम्पन्न किया जाता है, परन्तु रिक्तावस्था एक तकनीक है, जिसके द्वारा परिरक्षण सम्पूर्ण करने के लिए बरती गयी एक सतर्कता है, क्योकि संसाधन समय मे किसी प्रकार से बचकर निकलने वाले या निष्क्रिय सूक्ष्मजीवियो को पुन: प्रजनन से रोकने के लिए अवायु-अवस्था सहायक होती है।

इसके अलावा वायु कैन के भीतर रह जाने से खाद्य-पदार्थों का वर्ण, सुगन्ध तथा विटामिनो का नाश सम्भव है। कभी-कभी वायु की उपस्थिति में बदबू भी उत्पन्न हो

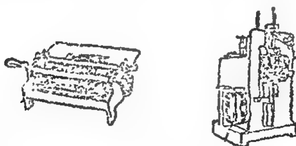
जाती है। इसके अलावा कैनों में तथा कांच की बरनी के टिन से बने हुए ढक्कनों का भीतरी भाग वायु के प्रभाव से संक्षारण क्रिया द्वारा खराब हो जाता है और उनमें अदृश्य छिद्र बन जाते है, जो रिक्तावस्था भंग करने मे ही नही, अपितु खाद्य-पदार्थों को खराब करने मे भी सहायक होते हैं। इससे आप रिक्तावस्था के औचित्य से भली-भांति परिचित हो गये होंगे।

वाहिकाओं में रिक्तक प्रेरक कारक

वाहिकाओ मे भरे गये आहार की मात्रा, भरते समय रहे आहार का तापमान, भरने निर्वातीकरण के लिए लिया गया समय तथा बन्द करने के बीच लिया गया समय, दिये गये शीर्षस्थान की मात्रा, निर्वातीकरण की विधि इत्यादि बातों पर अधिक चर्चा इस अध्याय के अन्त मे की जायेगी।

लेबलीकरण, पैकीकरण तथा संचयन

उचित मात्रा मे शीतलीकरण करते ही अगला कदम वाहिकाओं को, विशेषकर कैनों को, कपड़े से रगड़कर साफ कर दिया जाता है, जिसे विपिंग कहा जाता है। इसके बाद लेबल लगा दिया जाता है। लेबल में कैनीकृत पदार्थ का नाम, संसाधन-तिथि, इसके साथ ही उसके उपयोग शून्य होने की तिथि आदि के अलावा सर्वोपरि निर्माताओं तथा वितरकों के नाम पृथक्-पृथक् छपे हुए होने चाहिये। आजकल इन लेबलों में मात्रा या वजन तथा उसका मूल्य भी अंकित करना आवश्यक है। इसके साथ प्राप्त अनुज्ञा-पत्र (लाइसेन्स) नम्बर तथा मिलाये गये रासायनिक पदार्थ तथा रंग का भी हवाला देना होता है। विकसित देशो मे ही नहीं, अपितु आजकल भारत जैसे विकासशील देश मे भी उपर्युक्त क्रियाएँ बड़े-बड़े कारखानों में यन्त्र की सहायता से ही की जाती है। (चित्र संख्या 41)।



चित्र संख्या 41

कैनो, बोतलों, बरनी, प्लास्टिक वाहिका इत्यादि मे ससाधन के बाद लेबल लगाने की मशीन जिसे लेबलिंग मशीन कहते हैं। पहली मशीन कुटीर-उद्योग मे तथा दूसरी बड़े कारखानो मे काम मे ली जाती है, जहाँ यन्त्र स्वयं वाहिकाओ मे लेबल लगाते हैं।

उपर्युक्त कार्यों का लघुकरण करने तथा मानव-शक्ति का कम प्रयोग करने की दृष्टि से तथा उत्पादों मे होने वाली धोखाधडी से बचने के लिए आजकल बड़े-बड़े कारखानो मे उन टिन-शीटों से कैन बनाये जाते है, जिनमे पहले से ही कारखाने के नाम तथा अन्य बातो का लेबल कैन मे ही प्रिन्ट किया हुआ हो। फलस्वरूप कैनीकरण उत्पाद अधिक आकर्षक बन जाते हैं। उपर्युक्त प्रकार के कैन-निर्माण मे मैटल बॉक्स कम्पनी का योगदान भारत मे बहुत महत्त्व रखता है।

इन कैनीकृत उत्पादो को पुट्ठे से बनी पेटी (कार्टून) या काष्ठ से बनी पेटी आदि में इस तरह जमाया जाता है कि परहन के समय तथा वाहनो मे रहते समय उत्पादों में किसी प्रकार की मोच, खरोच आदि न हो सके या कांच की बनी वाहिकाएँ टूटे नहीं। इसके लिए प्रत्येक वाहिका को गद्देदार पदार्थों से लपेटा जाना चाहिये। इन पैकेटों को ऐसे गादामो में भरा जाता है, जो शुष्क तथा ठण्डे हों।



अध्याय 3

तरकारी कैनीकरण प्रणाली

तरकारी मे फलो की भाँति शर्करा तथा अम्ल नही पाये जाते, परन्तु वनस्पति मंड (स्टार्च) अधिक पाया जाता है ।

हम पहले ही चर्चा कर चुके हैं कि फलों से कही अधिक सूक्ष्मजीव तथा गन्दगी तरकारियों मे लगी हुई होती है । अतः इनके निर्जर्मीकरण पर अधिक जोर दिया जाता है । संसार मे कैनीकरण उत्पादों मे हरा मटर, भुट्टा, टमाटर, कुक्करमुत्ता आदि तरकारियाँ प्रमुख हैं । इनके अतिरिक्त सदावरी, पालक, आलू, शकरकन्द, काशीफल (कोला या कद्दू) आदि का भी कैनीकरण किया जाता है । इनकी यहाँ चर्चा की जायेगी ।

मटर

मटर शीतकालीन तरकारी है । इसकी उत्तर भारत मे पंजाब, हरियाणा, हिमाचल-प्रदेश, उत्तर-प्रदेश, राजस्थान, गुजरात तथा दक्षिण मे कर्नाटक, कोडाइकनाल तथा अन्य हाईरेन्जो मे खेती की जाती है । इसके मौसम मे मटर एक रुपये के 2 किलो भी प्राप्त हो जाना आश्चर्य की बात नही । अन्य समय मे मटर का दाम 10/– रुपये प्रति किलो तक पहुँच जाता है । इसका कैनीकरण, निर्जलीकरण, हिमीकरण आदि कर लाभ उठाया जा सकता है, जो कृषको, व्यवसायियों तथा उपभोक्ताओं को लाभप्रद हो सकता है ।

अधिक प्रोटीन-युक्त तरकारियों में मटर का स्थान प्रमुख है । इसकी कुछ विशेष किस्मे—थौमस, लक्सटोटन, लिंगन इत्यादि कैनीकरणोपयोगी मानी जाती हैं । भारत मे पाई जाने वाली किस्मे हैं—बोनविल्ला, परफैक्शन, एन पी-29 इत्यादि ।

मटर की फलियाँ गहरे हरे रंग से फीके हरे रंग की होते ही फूली हुई-सी नजर आयेंगी । पूर्ण विकसित होते ही मटर मे उपर्युक्त गुण दिखाई देंगे, इस समय इसमे शर्करा अधिकाधिक मात्रा मे पाई जायेगी । फलस्वरूप मिठास अधिक होना स्वाभाविक है ।

इस अवस्था मे आते ही यदि फलियों को नही तोड़ा जाता है तो दूसरे दिन उसमे बनी शर्करा मंड मे परिवर्तित हो जायेगी । फलस्वरूप मटर मीठी नही रहेगी । इसलिए उचित समय पर फलियो को एकत्र करना, कैनीकरण के लिए अति आवश्यक है । संयुक्त राज्य अमेरिका जैसे विकसित देशो मे ऐसी किस्मे विकसित की गई है, जो सारे खेत मे एक साथ बोकर एक साथ फूलती हैं तथा पूर्ण विकास भी एक साथ सम्पन्न होता है । मटर अधिक धिक मीठी स्थिति मे होते ही मटरो के पौधो को यन्त्र की सहायता से एकत्र किया जाता है तथा इसमे से फलियाँ तथा फलियो मे से दाने अलग कर श्रेणीकरण किया जाता है । प्रत्येक मटर दाने की मोटाई 5 से 9 मिलीमीटर होगी । इन्हे 1.040 से 1.070 आपेक्षिक गुरुत्व के लवण-घोल की सहायता से भारत मे वर्गीकरण किया जा सकता है । परन्तु विकसित देशो

में तथा भारत के बड़े-बड़े कारखानों मे श्रेणीकरण यन्त्र की सहायता से सम्पन्न किया जाता है ।

विवर्णीकरण

मटर का उनके आकार तथा पक्वता के आधार पर 3 से 5 मिनट समय देकर उबलते पानी मे विवर्णीकरण किया जाता है । नर्म होते ही इन्हें तुरन्त ठण्डे जल में डुबो कर मटर को पकने से रोका जाता है । इन्हें पानी से निकालकर गन्धकसक (सल्फर रसिस्टेण्ट) कैनों में भरकर मामूली चीनी मिले दो प्रतिशत लवण-घोल से तैराया जाता है । यह केन्द्रीय खाद्य प्रौद्योगिकी अनुसंधान केन्द्र द्वारा निर्देशित है, जबकि गिरधारीलाल तथा साथियों का कहना है कि मटर को 2.1 प्रतिशत लवण तथा 2 5 प्रतिशत शर्करायुक्त मिश्रित घोल से तैराना चाहिए ।

नम्बर 2½ कैनो मे 540 से 570 ग्राम, बटर साइज कैनो मे 340 से 400 ग्राम तक मटर भरा जा सकता है । 568 ग्राम धारक शक्ति की कांच की बरनियो मे 280 से 310 ग्राम मटर भरा जा सकता है । घोल मिलाने के बावजूद वाहिका में 6 मिलीमीटर से 10 मिलीमीटर तक शीर्षस्थान रहना आवश्यक है । इन्हे निर्वातीकृत सीलबन्द आदि करके संसाधित किया जाता है ।

कच्ची विधि

यह एक घरेलू स्तर पर की जाने वाली कैनीकरण विधि है । कांच की बरनी मे विवर्णीकृत मटरो को भरकर उसमे आधा चम्मच नमक मिलाया जाता है तथा उसमें उबलता पानी मिलाया जाता है, किन्तु 25 मिलीमीटर शीर्षस्थान अवश्य रहे। इन्हें निर्वातीकरण कर ऐसे प्रैशर कुकर मे संसाधित किया जाता है, जिसमे प्रैशर गेज लगी हुई हो। 568 तथा 1137 ग्राम धारक शक्ति की काच बरनियों को 40 मिनट समय प्रदान कर संसाधन किया जाता है । प्रैशर कुकर में इसका दाब 0.7 किलो प्रति वर्ग सेन्टीमीटर या 10 पौण्ड प्रति वर्ग इन्च होना चाहिए । इसी प्रकार कैनों में भी भरकर ससाधन किया जा सकता है, जहाँ 6 मिलीमीटर शीर्षस्थान छोड़ना चाहिए । नम्बर टू कैनो मे आधा चम्मच तथा नम्बर 2½ कैनों में एक चम्मच नमक मिलाना चाहिए, इन्हे 40 तथा 45 मिनट समय देकर संसाधन करना चाहिए ।

तप्त विधि

मटर के दानो को स्टीम जैकटेड केतली मे या भगोने मे पानी तथा मटर डालकर उबाला जाता है, उबलते ही इन्हें तुरन्त वाहिका मे भरकर शर्करा तथा लवण मिलाकर (उपर्युक्त मात्रा मे) निर्वातीकरण कर ससाधित किया जाता है ।

सूखे मटरों का कैनीकरण

पूर्ण रूप से विकसित होकर फली से स्वयं निकले हुए मटर के सूखे और पके दानो को 16 से 18 घण्टे भिगोते हैं । इसके बाद ककर के ठोस-ठोस दानो को अलग किया जाता है। नर्म दानों को 5 से 7 मिनट उबलते पानी मे और नर्म कर उपर्युक्त विधि से कैनीकरण किया जाता है, इसमे शर्करा की मात्रा ही नही, हरा रंग भी मिलाकर संसाधन करना चाहिए ।

सेम

कैनीकरण के लिए जिन सेमों को चुना जाता है, वे नर्म तथा हरे रंग के हों। अधिक गूदेयुक्त फलियाँ उपयुक्त होती हैं। वैसे तो भारत में भी भिन्न-भिन्न किस्म की सेमों की फली की खेती की जाती है, लेकिन इसका अधिकांश कैनीकरण विकसित देशों में, विशेषकर पश्चिमी देशों में होता है। भारत में आज भी सेम की फली को ही अन्य तरकारियों की भाँति ताजी खाने की ही प्रथा है। सेम में भी प्रोटीन होता है। संयुक्त राज्य अमेरिका में कैनीकरण के लिए जो किस्में ली जाती हैं, वे हैं—ब्लूलेक, मिचिकनरोवस्ट, यू आई ग्रेट नार्थन, यू एस नम्बर फाइव रफूजी, विस्कोनसिनरिफूजी आदि। भारतीय किस्मों में कैनीकरण योग्य सेमों का अध्ययन अभी तक पूर्ण हुआ दिखाई नहीं देता। घरेलू स्तर पर कैनीकरण किस्म के आधार पर न होकर स्थानीय खेती से प्राप्ति के आधार पर किया जाता है। किन्तु इनसे उपर्युक्त गुण होने चाहिए, चाहे हरी या रंगीन फली क्यों न हो।

चुनी हुई सेम की फलियों को सुचारु रूप से धोकर श्रेणीकरण किया जाता है, इसके बाद दोनों सिरे काटकर बाजुओं के रेशे को अलग किया जाता है। इन्हें 25 मिलीमीटर से 38 मिलीमीटर लम्बाई में कतरा जाता है। छोटी सेम को बिना कतरे ही काम में लिया जा सकता है। इन सेमों को कतरने के पहले ही इनका विवर्णीकरण करना उचित होगा।

उपचारित फलियों को वाहिकाओं में भरकर $2\frac{1}{2}$ प्रतिशत लवणयुक्त उबलते घोल में तैराकर संसाधन किया जाता है। कैनों में करें तो प्लेन कैन में भरना चाहिए। कैन में 6 मिलीमीटर तथा कांच की बरनियों में 13 मिलीमीटर शीर्ष-स्थान छोड़कर, भरकर निर्वातीकरण करना चाहिए, ताकि वाहिका के भीतर 170° एफ० पहुँच जाय या 190° से 212° फारनहीट पर 7 से 10 मिनट समय देना चाहिए।

इन्हें वायुरुद्ध अवस्था में सीलबन्द कर रिटोर्ट में या प्रेशर कुकर में संसाधित किया जाता है, जिसमें 0 7 किलो प्रति वर्ग सेन्टीमीटर दबाव है। नम्बर टू तथा नम्बर $2\frac{1}{2}$ कैनों को 40 मिनट समय, नम्बर 10 कैनों को 75 मिनट समय तथा पौण्ड जारों को 35 मिनट तथा क्वार्ट जारों को 60 मिनट का समय देकर समाधिन किया जाना चाहिए।

कच्ची विधि

कच्ची विधि में सेम का विवर्णीकरण नहीं किया जाता। वाहिका में भरकर नमक मिलाकर जैसा पहले बताया जा चुका है, उसमें उबलते पानी में तैराया जाता है, ताकि इसमें 13 मिलीमीटर शीर्षस्थान रह सके। कांच की वाहिकाओं को 20 से 25 मिनट समय प्रदान कर प्रेशर कुकर में संसाधन किया जा सकता है। साधारण कैनों में भरकर उपर्युक्त विधि द्वारा नमक तथा उबलता पानी मिलाकर ससाधन करना चाहिए, जहाँ 6 मिलीमीटर-शीर्ष-स्थान छोड़ना अनिवार्य है।

तप्त विधि

कच्ची विधि से तप्त विधि का अन्तर इतना है कि कतरी हुई सेम, जल तथा लवण तीनों को 5 मिनट उबालकर वाहिकाओं में भरा जाता है, अन्य क्रियाएँ समान हैं।

लीमा सेम

नर्म लीमा सेमों की फलियों से दाना निकालकर श्रेणीकरण किया जाता है। इन दानों को साइज के अनुसार अलग-अलग करके विवर्णीकरण किया जाता है। इसके लिए 5 मिनट समय दिया जाता है, ताकि प्रत्येक श्रेणीकृत लीमा दाने समान रूप से विवर्णीकृत हो सकें। इन्हे तप्त अवस्था मे ही पानी से निकालकर वाहिकाओ मे भरा जाता है तथा 1 प्रतिशत लवण-घोल से तैराया जाता है। इसके निर्वातीकरण कर संसाधन किया जाता है।

कच्ची विधि

लीमा सेमों के दानों को बिना विवर्णीकरण के ही कांच की बरनियों में भरकर नमक तथा जल मिलाया जाता है, जिसमे 13 मिलीमीटर शीर्षस्थान छोड़कर निर्वातीकरण, सीलबन्द कर संसाधन विधेयक बनाते हैं।

तप्त विधि

इसमे लीमा सेमो के दाने, जल, नमक तीनों को एक साथ 5 मिनट उबालकर वाहिकाओ मे भरकर संसाधन किया जाता है। संसाधन-समय वाहिका के आधार पर दिया जाता है, जो पहले ही बताया जा चुका है। नम्बर 2 तथा नम्बर $2\frac{1}{2}$ कैनों को 30 मिनट तथा कांच की बरनियों (पिण्ड) को 35 मिनट समय प्रदान कर संसाधन सम्पूर्ण करना चाहिए।

सदावरी

सदावरी की गाँठें (कन्द) एक औषधि है। इसके बारे मे आयुर्वेद मे वर्णन किया गया है, परन्तु सदावरी के अंकुर तरकारी के रूप मे भी काम मे लिये जाते हैं। संयुक्त राज्य अमेरिका, कनाडा, इंग्लैण्ड आदि पश्चिमी देशों की एक प्रमुख तरकारी है—सदावरी। यह भारत मे भी सर्व-सुलभ है।

साधारणतया हरी तथा सफेद वर्ण की सदावरी को कैनीकरण के लिए चुना जाता है। नर्म सदावरी अंकुरो को चुना जाता है। इन्हे अच्छी तरह धोकर छिलका (परत) तथा कठोर भाग उतार दिये जाते हैं। इन्हें 25 से 28 मिलीमीटर लम्बाई में कतर लिया जाता है। कतरी हुई सदावरी का उबलते पानी मे या भापोपचार से विवर्णीकरण किया जाता है, इसमें 3 से 4 मिनट का समय लगेगा। बिना विवर्णीकरण इन्हे भरना मुश्किल है। सदावरी को वाहिकाओ मे भरकर 2. 25 प्रतिशत लवणघोल या उबलते पानी से तैराकर निर्वातीकरण किया जाना है। कैनों मे 6 मिलीमीटर तथा कांच की बरनियों मे 13 मिमी० शीर्षस्थान प्रदान करना चाहिए।

हरा चना

मटर की भाँति हरे चने का भी कैनीकरण किया जा सकता है। इन्हें श्रेणीकरण, विवर्णीकरण (4 से 6 मिनट समय देकर) कर संसाधित किया जा सकता है।

भिण्डी

सारे भारत मे समान रूप से प्रचलित प्रमुख तरकारियो मे भिण्डी भी एक है। जननेन्द्रिय सम्बन्धी रोगो के लिए तथा पेचिस आदि उदर-रोगो के लिए भी एक

को गर्म-गर्म, कांच की बरनी में भरा जाय, आवश्यकतानुसार नमक तथा प्रस्कारबिक अम्लयुक्त घोल से तैरादिया जाय। भरते समय 13 मिलीमीटर शीर्ष-स्थान छोड़ना चाहिए। ससाधन रिटोर्ट में या प्रेशर कुकर में करते मम कांच की बरनियों को 30 मिनट समय प्रदान कर ससाधन करना चाहिए।

गिरधारीलाल तथा साथियो का कथन है कि कुकुरमुत्ता को कतरने के पहले उसके छातो को सोडियम सलफाइट घोल या साइट्रिक अम्ल घोल मे ब्लीचिंग कराने के बाद उन्हें कतरा जाता है। कुकुरमुत्ता को एकत्र करना, धोना, डण्ठल अलग करना आदि सारी क्रियाएँ विकसित देशो मे स्वचालित यन्त्रो द्वारा सम्पन्न की जाती है। इसके लिए नीदरलैण्ड की एक फैक्ट्री द्वारा उपयुक्त यन्त्र का आविष्कार किया गया है जो धोने, विवर्णीकरण करने, कतरने तथा श्रेणीकरण कर ससाधन करने योग्य है। इन्हें चाहे तो अलग-अलग काम के लिए अलग-अलग यूनिट मे भी प्राप्त किया जा सकता है। वैसे तो कुकुरमुत्ता को प्लेन कैनो मे भरा जाता है, जिसमें दो प्रतिशत लवण-घोल मिलाकर, निर्वातीकरण कर प्रेशर कुकर मे या रिटोर्ट मे ससाधन किया जाता है, जिसमे 0.7 किलो प्रति वर्ग सेन्टीमीटर भाप दबाव हो। नम्बर 2, नम्बर 2½ कैनो को 25 मिनट, नम्बर 10 केनो को 40 मिनट तथा पिण्ड, क्वार्ट जारो को 30, 50 मिनट समय क्रमशः प्रदान कर ससाधन किया जाता है।

काशीफल (कोला या कद्दू)

भारत के अधिकांश भागो में इसकी खेती होती है। परन्तु इसका कैनीकरण भारत मे व्यावसायिक स्तर पर प्रचलित नहीं है। पश्चिमी देशों में एक प्रमुख कैनीकृत उत्पाद है—काशीफल।

कैनीकरण के लिए काशीफल पूर्ण विकसित तथा पका हुआ होना चाहिए। इसका छिलका कठोर तथा गूदा स्वर्णवर्णधारी और मिठास-युक्त होना है। फलो को पहले ब्रुश से रगड़कर धोया जाता है। इन्हें कतरकर छिलका, बीज तथा बीज कक्ष के अन्य अनचाहे भागों को अलग कर बराबर मोटाई में कतर लिया जाता है। इन टुकड़ो को भाप मे पका कर पल्पिंग मशीन के द्वारा गूदा बना दिया जाता है। इन्हे उबालकर तुरन्त लैकीकृत कैनो में भरा जाता है, जिसमे 10 से 12 मिलीमीटर शीर्ष-स्थान छोड़ते हैं। फिर इन्हें तुरन्त सीलबन्द कर ससाधित किया जाता है। ससाधन 116° सेन्टीग्रेड या 0.7 किलोग्राम वाष्पदाब पर, नम्बर 2 तथा नम्बर 2½ केनो को 70 व 95 यथाक्रम समय देकर किया जाता है, जो कांच की पिण्ड बरनियो को 75 मिनट समय ही प्रदान किया जाता है। इसका निर्वातीकरण नही होता। कैनीकृत उत्पादो को कुछ दिन बाद नमूने के तौर पर खोलकर देखें तो 12 मिलीमीटर शीर्ष-स्थान उसमे पाया जाना चाहिये। इसके गूदा में वर्णभेद नही होगा।

काशीफल को चौकोर टुकड़ो भी कतरकर कैनीकरण किया जाता है, जिनकी 25 मिलीमीटर मोटाई हो। कतरे हुए फलो मे जल मिलाकर उबालना चाहिये। उबाल आते ही उतारकर वाहिकाओं मे भरा जाये। कैनो मे 6 मिलीमीटर तथा 13 मिलीमीटर शीर्षस्थान रहे। इसके बाद नमक मिलाकर टुकड़ो को उबलते जल से तैराया जाये। शीर्ष-स्थान नही रहेगा। इन्हें वाष्पदाब पर नम्बर 2, 2½ कैनों को 30 मिनट तथा पिण्ड

जारो को 35 मिनट समय प्रदान कर संसाधन करना चाहिये। पानी से तैराने के तुरन्त बाद इन्हें यथाविधि निर्वातीकरण करने के पश्चात् ही संसाधित करना चाहिये।

पालक

पालक साधारणतया शीतकालीन हरा शाक है। इसलिए सम्पूर्ण वर्ष मिलना असम्भव है। पालक वैसे तो उत्तम तरकारियो मे आता है, जो अल्प-रक्तक रोग मे एक औषधि है। सार्वजनिक रूप से इसका खुलकर उपयोग करना नीरोग रखने के लिए सहायक सिद्ध होता है, क्योकि इसमे अधिक धातु-लवण तथा विटामिन्स पाये जाते हैं। पश्चिमी देशों में इसका कैनीकरण अधिक प्रचलित है। पालक भूमि की सतह पर उगने वाली तरकारियों मे एक है, फलस्वरूप इसमें अधिक गन्दगी, मिट्टी तथा सूक्ष्मजीव रहना स्वाभाविक है। इसके अलावा अन्य प्राणी जैसे मकड़ी, चीटी आदि भी इसमे शरण लेते है। इसलिए पालक को सतर्कता से चुनकर, धोकर काम मे लेना चाहिये। वैसे तो पके हुए पालक-पत्ते तथा डण्ठलो को अलग कर इन्हे विवर्णीकरण किया जाता है। विवर्णीकरण 170° फारनहीट पर 10 मिनट समय देते हैं। पालक को बर्तनो मे भरकर मामूली पानी डालकर 15 मिनट गर्म करने से पालक अन्य हरे शाको की भाँति नर्म हो जायेगा। इन्हें साधारण कैनो मे भरकर संसाधन किया जाता है। नम्बर 2 कैनो में 300 ग्राम, नम्बर 2½ कैनो मे 550 ग्राम तथा पिण्ड बरनियो मे 290 ग्राम भरा जाता है। इसके ऊपर 2 प्रतिशत लवण-घोल तैराकर विवर्णीकरण कर वाष्पदाब पर ससाधन किया जाता है। नम्बर 2 कैनों को 50 मिनट, नम्बर 2½ को 55 मिनट तथा पिण्ड जार को 50 मिनट ससाधन समय देना चाहिये।

शकरकन्द

उष्ण-मेखलीय तथा सम-शीतोष्ण-मेखलीय दोनों ही प्रदेशो में इसकी खेती की जाती है, लेकिन भारत मे इसका भी कैनीकरण नहीं किया जाता, परन्तु पश्चिमी देशों मे अवश्य किया जाता है। अगर भारत में भी इन तरकारियो का कैनीकरण किया जाये तो अकाल के समय, बाढग्रस्त लोगों के लिए, हिमालय के क्षेत्रों मे तैनात जवानो के लिए यथाशीघ्र खाद्य-पदार्थ उपलब्ध कराने मे अन्य परिरक्षित खाद्य-पदर्थों की भाँति इन्हे भी स्थान दिया जा सकता है।

सन् 1965 मे डी० बी० एस० चौहान ने प्रतिवेदन दिया कि शकरकन्द में पेक्टिन अधिक है, इस पेक्टिन से जैली, मारमलेट आदि भी बना सकते हैं, लेकिन इसकी पुष्टि कही और नही प्राप्त होती है।

देश मे शकरकन्द की दो प्रमुख किस्मे पायी जाती हैं—लाल तथा सफेद। कैनीकरण के लिए इन्हें अच्छी तरह रगडकर, धोकर, भापोपचार कर नर्म किया जाता है, जिसके लिए 20 से 30 मिनट समय देना चाहिये। कारखानों मे इसके लिए रिटोर्ट काम मे लिया जाता है। भापोपचार किये शकरकन्द के छिलके फट जाते हैं, फलस्वरूप छिलका आसानी से निकाला जा सकता है। पुराने शकरकन्द का छिलका क्षारीय प्रक्रिया से उतारा जाता है। इसके बाद इसके ऊपर का छिलका जल वर्षा कर ब्रुश की सहायता से उतारा जाता है। छिलके उतारकर शकरकन्दों को आवश्यक मोटाई में कतरा जाता है।

कुछ कारखानो मे चौकोर आकृति में कतरा जाता है। प्रत्येक टुकड़ो की मोटाई 13 मिलीमीटर होनी चाहिये। अगर बिना कतरे भरना हो तो 6 सेन्टीमीटर से अधिक बडी शकरकन्दी नही होनी चाहिये। इन्हे कांच की बरनियो में भरा जाये तो 25 मिलीमीटर शीर्षस्थान छोडना चाहिये। इसके ऊपर 2 प्रतिशत लवण-घोल तैराया जाये, ताकि चाहा गया शीर्षस्थान बना रहे। कुछ व्यवसायियो द्वारा लवण-घोल के बजाय शर्करा-घोल तैराया जाता है, जिसकी ब्रिक्स डिग्री 30 से 40 डिग्री हो सकती है। निर्वातीकरण कर इन्हे सीलबन्द करते हैं तथा वाष्पदाब पर नम्बर 2 कैनों को 115 मिनट, $2\frac{1}{2}$ कैनो को 145 मिनट तथा कांच की पिण्ड बरनियों को 120 मिनट समय प्रदान कर संसाधन किया जाता है।

आलू

शकरकन्द की भांति आलू की भी करीब करीब सारे देश में खेती होती है, विशेषकर समशीतोष्ण, शीत प्रदेशो मे। आलू की विभिन्न किस्मे होती हैं। कैनीकरण के लिए पूर्ण विकसित स्वस्थ आलू चुनना चाहिये, जो एक ही किस्म के हो। इन्हे सुचारु रूप से धोकर छिलका उतारा जाता है। कारखानों में आलू का छिलका उतारना, पोटेटो पीलर की सहायता से सम्पन्न किया जाता है। यन्त्र में छिलके उतरे हुए आलुओ का पुन निरीक्षण कर बचे रहे छिलके तथा आँखें चाकू की सहायता से अलग किये जाते हैं, इन्हें तुरन्त 2 प्रतिशत लवण-घोल मे डाला जाता है, ताकि वर्णभेद न हो सके। छिलके-रहित आलुओं के 13 मिलीमीटर मोटाई के चौकोर टुकडे बनाये जाते है। छोटे आलुओ, जिसका साइज 6 सेन्टीमीटर हो, को बिना कतरे ही भरा जा सकता है। कतरे हुए आलुओ को भी लवण-घोल मे ही उस समय तक रखा जाता है, जब तक पूरा आलू कतर न लिया जाये। कतरे हुए आलुओ को लवण-घोल से निकालकर 2 से 3 मिनट उबलते पानी मे विवर्णीकरण कर, ठण्डा कर वाहिका मे भरते है। इसमे 2 प्रतिशत लवण-घोल ऊपर से तैराया जाता है। कांच की बरनी मे हो तो 13 मिलीमीटर तथा कैन हो तो 6 मिलीमीटर शीर्षस्थान देना चाहिये। निर्वातीकरण के तुरन्त बाद सीलबन्द कर वाष्पदाब पर (0 7 किलोग्राम वर्ग सेन्टीमीटर) नम्बर 2 कैनो को 35, नम्बर $2\frac{1}{2}$ को 40 तथा पिण्ड जार को 40 मिनट समय प्रदान कर संसाधित किया जाता है।

आलू का छिलका उतारते समय कुछ अधिक आलू का भाग पानी मे घुलकर चला जाता है। इन्हें एकत्र कर रखा जाये तो टंकियो के पेंदे मे आलू की मण्ड जमी हुई मिलेगी। इसे सुचारु रूप से तैयार कर आलू का आटा उपोत्पाद के रूप मे काम मे लिया जा सकता है। आज देश मे उत्पादित अधिकांश कैनीकृत आलू रक्षा-सेनाओ के लिए ही काम मे आता है।

चुकन्दर

यह भी एक शीतकालीन तरकारी है। इसको अंग्रेजी मे बीटरूट कहते हैं, जो पकने के बाद कलेजानुमा लगता है। चुकन्दर की एक दूसरी किस्म है—सुगरबीट। सुगरबीट (सफेद रग के चुकन्दर) से शर्करा बनाई जाती है। लाल चुकन्दर से सफेद चुकन्दर मे शर्करा अधिक होती है। पश्चिमी देशो मे जहाँ गन्ने की खेती नही की जाती, वहाँ शर्करा

का स्रोत सुगरबीट ही है। आजकल देश मे भी सुगरबीट से शर्करा बनाने का प्रयास जारी है, परन्तु बीटरूट तरकारी के रूप में, विशेषकर सलाद के रूप मे लिया जाता है। लेकिन शिक्षित तथा धनी लोग ही चुकन्दर को अधिक पसन्द करते हैं।

पूर्ण विकसित चुकन्दरों को एकत्र कर पत्ते तथा जडो को अलग कर खूब धोया जाता है। इसके तुरन्त बाद इनका श्रेणीकरण किया जाता है। चुकन्दर को कच्चा तथा पकाकर भी कैनीकरण किया जाता है। पकाते समय बर्तन मे जल डालकर उबालते है तथा उबलते ही 15 से 25 मिनट समय देकर उतारते हैं। इन्हे छिलका उतारकर कतरा जाता है। प्रत्येक टुकडे की मोटाई 2·5 सेन्टीमीटर होनी चाहिए। वाहिका में आवश्यकतानुसार शीर्षस्थान छोडकर इन्हें भरा जाता है तथा करीब 2 प्रतिशत लवण-घोल मिलाकर तैराया जाता है। अगर कच्ची विधि से भरना है तो चुकन्दरो को धोकर, छिलका उतारकर कतरा जाता है, फिर तुरन्त वाहिकाओं में भरकर 2 प्रतिशत लवणघोल से तैरा देते हैं। अन्य तरकारियों के कैनीकरण की भाँति काँच की बरनी को 13 तथा कैनो को 6 मिलीमीटर शीर्षस्थान दिया जाता है।

भरी हुई कैनों का निर्वातीकरण कर, सीलबन्द कर संसाधन किया जाता है। ध्यान रखें कि रंगीन फलों की भाँति चुकन्दर को भी लैकीकृत कैनो मे भरा जाता है। संसाधन समय नम्बर 2 तथा नम्बर 2½ कैनों को 30 मिनट तथा काँच की पिण्ड बरनियों को 35 मिनट क्रमशः समय प्रदान कर संसाधन किया जाता है।

गाजर

भारत मे चुकन्दर से अधिक लोकप्रिय तरकारी है, गाजर। यह भी एक शीतकालीन तरकारी है। इसमे विटामिन-ए कैरोटिन के रूप मे पाया जाता है। यह कैरोटिन मानव-शरीर को विटामिन-ए के रूप मे उपलब्ध होने के लिए दूध की वसा की उपस्थिति मे ही प्राप्त हो सकता है। इस तथ्य से आदिकाल से ही भारतीय जनता जानकार थी। इसी कारण गाय, भैंस से प्राप्त दूध मे तथा घी मे हलवा बनाकर इसका उपयोग किया जाता रहा है। आजकल गाजर को दूध मे खीर बनाकर भी खाया जाता है।

गाजर को दो प्रमुख वर्गो मे विभाजित किया जा सकता है—एक एशियाई, दूसरा यूरोपी। एशियाई वर्ग की गाजर विभिन्न रंगो की होती है, इसके अलावा ऊष्म-सह्य भी होती है। यूरोपी छोटी तथा नर्म होती है। देश मे तीन प्रकार की गाजरों की खेती होती है—एक-जामुनी रंग के छिलके-युक्त, दूसरी सन्तरा वर्ण की तथा तीसरी पीले रंग की होती हैं। इसमें प्रथम आकार मे बडी होती है। यह साधारणतया पशु-आहार के रूप मे ली जाती है। तीसरी सबसे छोटी होती है। सन्तरा वर्ण तथा पीले रंग की दोनो गाजरें मनुष्य का आहार है। यह दोनो कैनीकरण के लिए भी ली जाती हैं।

अन्य कन्दो की भाँति गाजर को भी खूब धोया जाता है। इसके बाद छिलका उतारा जाता है। आज भारत में भी इसका छिलका तथा रेशा निकालने के लिए यन्त्र काम मे लिया जाता है। विदेशो मे क्षारीय प्रणाली से छिलका उतारा जाता है। इसके लिए 3 से 5 प्रतिशत क्षारीय-घोल काम मे लिया जाता है। इसके बाद क्षार दूर कर दोनों सिरे अलग कर कतरा जाता है। प्रत्येक टुकड़े की मोटाई 25 से 32 मिलीमीटर

होनी चाहिए। अन्य छोटी गाजरो को बिना कतरे ही काम मे लिया जा सकता है। कैनों मे भरने के पहले कतरी हुई गाजरो का विवर्णीकरण करें, इसके लिए उबलते पानी या भाप का प्रयोग कर सकते हैं। विवर्णीकरण के लिए 2 से 3 मिनट, बिना कतरी हुई को 3 से 5 मिनट समय देना चाहिए। वाहिकाम्रो मे भरकर, 1.5 से 2 प्रतिशत लवणघोल से तैराया जाय व 13 तथा 6 मिलीमीटर शीर्षस्थान यथाक्रम कांच वाहिकाम्रो मे व कैनों मे दिया जाना चाहिए। भरी हुई कैनो का निर्वातीकरण, सीलबन्दी आदि कर वाष्पदाब पर ससाधन किया जाय। नम्बर 2 तथा नम्बर 2½ के साधारण कैनों (प्लेन कैन) को 30 मिनट तथा कांच की पिण्ड बरनियो को 35 मिनट यथाक्रम समय प्रदान कर संसाधन करें।

कच्ची विधि

कतरी हुई गाजरो को एक वाहिका मे यथाविधि भरकर उबलते पानी से तैराया जाता है। जिसमे 0.5 से 1 चम्मच नमक वाहिका की धारक-शक्ति के आधार पर मिलाकर निर्वातीकरण के बाद संसाधन किया जाता है।

तप्त विधि

कतरी हुई गाजर तथा लवण-घोल दोनो को एक साथ 5 मिनट उबालकर वाहिकाम्रो-मे भरकर ससाधन किया जाता है, जिसको तप्त विधि कहते हैं।

गाजर-मटर-संसाधन

गाजर तथा मटर को यथाविधि पूर्ण ससाधन क्रिया विधेयक बनाकर 50 : 50 या 60 40 के अनुपात मे वाहिकाम्रो मे भरकर निर्वातीकरण इत्यादि के पश्चात् संसाधन किया जाता है। नम्बर 10 कैनो के लिए 60 मिनट ससाधन समय देना चाहिये।

फूलगोभी

यह भी एक शीतकालीन अनूठी तरकारी है, जो ससार भर मे बड़े चाव के साथ खाई जाती है, मगर अन्य तरकारियों की भाँति इसमे पोषक गुण उतने नहीं हैं। फूलगोभी को फूल तो कहते हैं, किन्तु वास्तव मे यह फूल नही है, अपितु अंकुरों का एक गुच्छा है। फूलगोभी हिम-तुल्य या पीले रंग की होती है, इसमे हिम-तुल्य फूलगोभियो को अधिक पसन्द किया जाता है। फूलो को तोड़कर, जल वर्षा कर खूब धोया जाता है, क्योंकि इसमे सूक्ष्मजीव, धूल इत्यादि ही नही, अपितु अन्य जीव-जन्तु तथा कीड़े भी लगे होते हैं। इसके बाद ऊपर के फूल के गुच्छो को अलग-अलग किया जाता है। इन अंकुरों का श्रेणीकरण कर पुनः जल वर्षा कर धोया जाता है। इन्हें 4 से [illegible] प्रतिशत अम्लयुक्त जल मे विवर्णीकरण किया जाता है, इसके लिए अम्ल-घोल उबलते ही फूलगोभी को उसमे डाल दिया जाता है। इन फूलगोभियों का शीत-जल मे उपचार कर, निसारकर वाहिकाम्रो मे भरा जाता है तथा [illegible] प्रतिशत लवण-घोल तैराया जाता है। निर्वातीकरण सीलबन्दी आदि के पश्चात् ससाधन विधेयक बनाया जाता है।

केन्द्रीय खाद्य प्रौद्योगिक अनुसंधान संस्थान के आधार पर हम कह सकते हैं कि इन्हे पीन लवण-घोल में रखने के बाद 3 मिनट उबाला जाये, तुरन्त बाद वाहिकाम्रो मे भरकर

संसाधन किया जाये। नम्बर 2, नम्बर 2½ साधारण कैनों को 25 मिनट तथा कांच की पिण्ड बरनियों को 30 मिनट समय देकर संसाधन करना चाहिये।

पत्तागोभी

पत्तागोभी को बन्दगोभी या करमकल्ला भी कहते हैं। शीतकालीन पत्तागोभी, फूलगोभी के वर्ग की ही है। यह पत्ते की एक गांठ है। एकत्र की हुई पत्तागोभी जितनी भारी होगी उतनी ही अच्छी मानी जाती है। इसके ऊपर के एक या दो पत्ते अलग कर खूब धोया जाता है। इसमें कीड़े लगे हुए नहीं होने चाहिएँ। इन्हें 4 से 8 टुकड़े कर कतरा जाता है। प्रत्येक पत्ते का आकार करीब 2.5 सेन्टीमीटर होना चाहिये। इन्हें 5 से 6 प्रतिशत लवण-घोल मे 10 मिनट समय देकर फूलगोभी की भांति विवर्णीकरण कर, शीतजल उपचार कर साधारण कैन मे भरा जाता है। इसमें नमक डालकर पानी से तैराकर या एक प्रतिशत टार्टरिक अम्ल मिलाकर भी संसाधन किया जा सकता है। नम्बर 2 तथा नम्बर 2½ कैनो को 40–45 मिनट समय देकर संसाधन करते हैं तो कांच की पिण्ड बरनियों को 45 मिनट समय दिया जाता है।

ब्रुसल स्प्राउट

ब्रुसल स्प्राउट छोटी पत्तागोभीनुमा होती है। यह भी शीतकालीन तरकारी है। इसे पौधे से एकत्र कर, धोकर पत्तागोभी की भांति कतर लिया जाता है। कुछ कारखानो मे इनका साबुत भी कैनीकरण किया जाता है। इन्हे विवर्णीकरण के लिए 4 मिनट का समय दिया जाता है। कैनों मे भरकर नमक छिड़ककर उबलते पानी से तैराया जाता है या 2 प्रतिशत लवण-घोल से भरकर निर्वातीकरण आदि कैनीकरण क्रियाओ के बाद रिटोर्ट में सजाकर अन्य तरकारियो की भांति 116° सेन्टीग्रेड या 0.7 किलोग्राम वाष्पदाब पर संसाधित किया जाता है। नम्बर 2 कैनों को 20 तथा 2½ कैनों को 25 मिनट समय प्रदान कर संसाधन सम्पन्न किया जाता है।

शलजम

शलजम भी शीतकालीन कन्दवर्गीय तरकारी है। शलजम नर्म तथा बिना रेशे की होनी चाहिये। इसे भी चुकन्दर की भांति पूर्व-कैनीकरण क्रिया विधेयक बनाकर कतरा जाता है। प्रत्येक टुकड़े की मोटाई 10 मिलीमीटर होनी चाहिये। उबलते पानी मे 3 से 4 मिनट विवर्णीकरण कर वाहिकाओ मे भरें, जैसे अन्य तरकारियो मे किया जाता है। नम्बर 2 व नम्बर 2½ साधारण कैनों मे हो तो 30 मिनट तथा कांच की पिण्ड बरनियों को भी 30 मिनट क्रमशः समय प्रदान कर संसाधन किया जाता है।

हरी मिर्च

कैनीकरण के लिए पूर्ण विकसित हरी मिर्च चुनी जाती है। डण्ठल अलग कर खूब धोकर निकाला जाता है। इन्हें 1.5 से 2 मिनट समय देकर विवर्णीकरण कर ठण्डे जल मे उपचार कर वाहिका मे भरकर 2 प्रतिशत लवण-घोल से तैरा दें। इसके साथ 100 ग्राम मिर्च के लिए 5 ग्राम साइट्रिक अम्ल के अनुपात से मिलाकर निर्वातीकरण किया जाये, तुरन्त बाद मोलवन्द कर जल-ऊष्मक मे संसाधन किया जाये। एक पौण्ड जैम जार में 171 ग्राम तथा 157 ग्राम लवण-घोल मिलाया जाता है। इसको 30 मिनट

संसाधन समय देना चाहिये। भारत में हरी मिर्च का व्यावसायिक स्तर पर कैनिंग नहीं किया जाता।

मसाला-युक्त तरकारी कैनीकरण

विदेशों में कैनीकृत तरकारियों या ताजा तरकारियों को उबालकर उसमें मसाले तथा गर्म मसाले बुरकाकर खाया जाता है। परन्तु भारतीय भू-खण्ड में, जैसे—भारत, पाकिस्तान, बांगलादेश, नेपाल, बर्मा, श्रीलंका, सिंगापुर, मलाया इत्यादि देशों में तेल या घी आवश्यकतानुसार गर्मकर उसमें मसाले मिलाकर तरकारी तैयार की जाती है, जिसमें इच्छानुसार गर्म मसाले भी मिलाये जाते हैं। विदेशों में रहने वाले भारतीयों को तथा हिमालय के सीमान्त प्रान्त में कार्यरत रक्षा सेनाओं को ध्यान में रखते हुए तथा प्रकृति-कोप के अवसर पर फँसे लोगों को उचित भोजन-व्यवस्था हेतु उपयोगी एक पाचकीकृत तरकारी का कैनीकरण केन्द्रीय खाद्य प्रौद्योगिक अनुसंधान संस्थान द्वारा पकी-पकायी तरकारियों की कैनीकरण विधि निर्धारित की है जो सर्वमान्य दिखाई देती है। कैनीकृत यह तरकारी केवल बसे प्रवासी भारतीयों के लिए ही नहीं, अपितु वहाँ के अन्य लोगों में भारतीय खाद्य पदार्थ के प्रचार होने में भी सहायक है। सी० एफ० टी० आर० आई० द्वारा निर्देशित योगांशों के आधार पर बनाई गई दो बनी-बनाई तरकारियों की कैनीकरण विधियों की यहाँ चर्चा की जा रही है। इसके लिए फूलगोभी, टमाटर, आलू, मटर, कच्ची कटहल आदि तरकारियाँ ले सकते हैं।

योगांश

क्र० सं०	योगांश	मात्रा
1.	राई	200 ग्राम
2	धनिया (चूर्ण)	200 ग्राम
3.	लाल मिर्च (चूर्ण)	150 से 200 ग्राम
4.	जीरा	200 ग्राम
5.	हल्दी (चूर्ण)	400 से 500 ग्राम
6.	नमक (चूर्ण)	900 ग्राम
7.	वनस्पति घी	4 किलोग्राम

(उपर्युक्त योगांश के आधार पर मसाले का शोरबा बनाइये जो नम्बर $2\frac{1}{2}$ की 120 कैनों में भरा जा सके।)

इसके लिए काम में लेने वाले सब बर्तन तथा उपस्कर कैनीकरण की भाँति स्टेनलेसस्टील या एल्युमिनियम से बने होने आवश्यक हैं।

एक भगोने में योगांश में बताया वनस्पति घी लेकर गर्म करें व राई डाल दें। राई फटने लगे तो तुरन्त योगांश में बताये अन्य सभी मसालों को मिलाकर पकावें, किन्तु जल न जाये। इसमें आवश्यकतानुसार पानी मिलाकर उबालकर शोरबा तैयार करें।

कैनीकरण की भाँति उपर्युक्त तरकारियों को तैयार कर कैनों में भरा जाये व उसके ऊपर शोरबा तैरा दिया जाये। (अधोलिखित सारणी के आधार पर) इन्हें निर्वाती-करण, सीलबन्दी कर ससाधन किया जाये तथा 60 से 75 मिनट संसाधन समय देना आवश्यक है। संसाधन रिटोर्ट में किया जाता है। इसी विधि से अन्य तरकारियों का भी नम्बर $2\frac{1}{2}$ कैनों में उपर्युक्त समय देकर कैनीकरण किया जा सकता है।

सारणी

	जोड़ीदार तरकारियाँ	भार किलोग्राम में	शोरबा किलोग्राम में
1	आलू+फूलगोभी	4.800 से 5.000	3.000 से 3.200
2	आलू+फूलगोभी+टमाटर	5.000	2.400
3	आलू+टमाटर	6.800	1.100
4	आलू+मटर	4.250	3.700
5	आलू+मटर+फूलगोभी	4.500	3.400

□□□

अध्याय 4

फल कैनीकरण
(Canning of Fruits)

आम

आम ऊष्ण-मेखलीय प्रदेश का एक प्रमुख फल है। आम के लिए भारत संसार में सुप्रसिद्ध है। यह उत्पादित फलो में करीब 60 प्रतिशत आम का उत्पादन होता है। भारत में करीब 45 किस्म के आम उत्पादित होते हैं, इसमें सफेदा, सरोली, दशहरी, आदि उत्तर प्रदेश में, अलफान्सो बादामी, नीलम, मालगोवा आदि तमिलनाडु-कर्नाटक आदि (दक्षिणी भारत) मे होते हैं। कैनीकरण के लिए फल ऐसा होना चाहिए जिसका आकार बडा हो, तथा जो सुगन्धित तथा अच्छे वर्ण का हो। इसके अलावा इसमे कम से कम रेशे वाला होना अनिवार्य है। आज भारत में कैनीकरण के लिए अधिकांशतः तोतापुरी आम का प्रयोग किया जाता है, जिसको बेंगलोरा भी कहा जाता है। उपर्युक्त सारे गुणयुक्त तोतापुरी की गुठली भी पतली होती है।

आम का चयन

अन्य परिरक्षण की भांति कैनीकरण के लिए भी पेड में पूर्ण विकसित आम को, पेड़ मे से तोड़कर (नीचे गिरे बिना) उन्हें भूसे मे लपेटकर पकने के लिए रखा जाता है। इनके आकार, पक्वता, वर्ण आदि के आधार पर इनका श्रेणीकरण कर लेना चाहिए, परन्तु एक समय कैनीकरण के लिए एक ही किस्म के आम को चुनना चाहिए। विकृत फलों का उपयोग नही करना चाहिए, परन्तु ऐसे फल जो विपणन योग्य नही हो, किन्तु खराब नही हों, उन्हें कैनीकरण के लिए लिया जा सकता है।

अगला कदम आमो का धोना तथा उसका छिलका उतारना है। इसके लिए एक विशेष प्रकार का चाकू काम मे लिया मे लिया जाता है, जिसे पीलिंग नाइफ कहा जाता है। इसके बाद प्रत्येक आम को 6 से 8 फांको में कतर लिया जाता है, जो करीब-करीब एक ही आकार की होती है। इन कतरी हुई फांको को तुरन्त 2 प्रतिशत लवण-घोल मे डाल देना चाहिए, ताकि उनमे भूरापन न हो सके। भरी जाने वाली कैन की साइज को दृष्टि मे रखते हुए कतरे हुए टुकडो का भी आकार निश्चित किया जा सकता है। चौकोर आकृति के टुकडे भी कतरे जा सकते हैं। कैनीकरण के लिए काम मे लिये जाने वाले आम का पी. एच. (P.H.) अधिक होता है, इसलिए इसमे 0 3 से 0.5 प्रतिशत साइट्रिक अम्ल मिलाना चाहिये, इसके लिए शर्करा चाशनी बनाते समय 0.5 प्रतिशत साइट्रिक अम्ल मिलाकर चाशनी बनाई जाए तो चाशनी मे अम्लता बढ़ेगी और साफ चाशनी भी प्राप्त हो सकेगी।

ग्राम के कैनीकरण के लिए साधारण कैन ही काम में ली जाती हैं। ए० ($2\frac{1}{2}$) (A. $2\frac{1}{2}$) आकार की कैनों में 500 से 550 ग्राम ग्राम के कतरे हुए टुकड़े, बटर साइज कैनों मे 340 से 400 ग्राम टुकडे के अनुपात में भरे जाने हैं। इसके लिए 700 से 900 ग्राम साबुत ग्राम की आवश्यकता होगी। ग्राम के कैनीकरण के लिए ली जाने वाली शर्करा सिरप का ब्रिक्स साधारणतया 40 से 50 डिग्री ब्रिक्स होता है। परन्तु शर्करा सिरप की शक्ति मे उपभोक्ताग्रो की आवश्यकता के आधार पर भिन्नता आ सकती है। ग्रामो को कांच की बरनी मे भी भरा जा सकता है। ग्रामो को वाहिकाग्रो में भरकर चाशनी से तैराकर उचित शीर्ष-स्थान देकर निर्वातीकरण के लिए (75° से 85° से० या 165° से 176° फारनहीट) तापमान वाहिका के केन्द्र स्थान मे आते ही 6 से 9 मिनट समय देकर निर्वातीकरण किया जाता है। इन्हें तुरन्त वायुरुद्ध अवस्था मे सीलबन्द, ससाधन, शीतलीकरण इत्यादि क्रिया विधेयक बना लेना चाहिए। ग्रामो का ससाधन ग्रन्य फलो की भाँति साधारणतया जल ऊष्मक मे किया जाता है, जिसका तापमान 100° से० (212° एफ०) होना चाहिए। नम्बर टू कैनो को 20 से 25 मिनट, नम्बर $2\frac{1}{2}$ कैनों को 30 मिनट समय प्रदान कर संसाधन करना चाहिए।

सन् 1956 मे सिद्धप्पा तथा भाटिया ने कुछ अध्ययन किया जो ग्राम के कैनीकरण मे पी० एच० के महत्व पर आधारित था। रसपुरी ग्राम की फाँकों का पी० एच० करीब 3 5, बादाम किस्म के ग्राम का पी० एच० 3 8 से 4.5, परन्तु रसपुरी ग्राम के भार की आधी शर्करा चाशनी मे एक प्रतिशत ग्रम्ल मिलाने से उसकी पी० एच० मात्रा 3.60 से 2.95 हो जायेगी। यही तथ्य बादामी ग्राम के लिए भी निर्धारित किया गया है, परन्तु बादामी ग्राम को सतर्कता से संसाधित करने के लिए शर्करा चाशनी मे 0.3 से 0 5 प्रतिशत ग्रम्ल मिलाना पर्याप्त बताया गया है। उन्होने आगे कहा कि हर परिस्थिति मे शर्करा चाशनी को ग्रम्लीकरण करने की आवश्यकता नही होती। बैंगलोरा ग्राम को, जिसका पी० एच० 4.8 से 4 52 होता है, कटहल, केला, संन्तरा इत्यादि की फाँको के साथ कैनीकरण किया जाये, तो पी० एच० को नियन्त्रित किया जा सकता है। उसी समय बादामी ग्रामो को ग्रनन्नास के माध्यम मे कैनीकरण कर जल-ऊष्मक मे ससाधन किया जाता है।

सन् 1935 मे सिद्धप्पा तथा भाटिया ने प्रस्तुत किया था कि विभिन्न किस्मों के ग्रामो, जैसे—रसपुरी, बैंगलोरा आदि, को छिलके बिना उतारे ही फाँके बनाकर कैनीकरण किया तो पाया कि उनमे स्वाद ग्रच्छा नही था। परन्तु बादामी, नीलम, मालगोवा आदि किस्मो के स्वाद मे किसी प्रकार की कमी नही दिखाई दी। सन् 1958 मे डोनाल्ड सरमैन तथा साथियों ने कुछ हवाई ग्रामों के व्यावसायिक स्तर पर कैनीकरण योग्यता पर अध्ययन कर बताया कि :—

(1) ग्रामों को ग्रच्छी तरह धोकर, श्रेणीकरण कर छिलका उतारना चाहिए। साथ ही ग्रनचाहे भागो तुरन्त निकाल देना चाहिए।

(2) ग्रामों का यान्त्रिक शक्ति से छिलका उतारा जाय तो अधिक ग्रच्छा रहेगा। ग्रामो का छिलका पूर्णरूप से निकाल देना चाहिए।

(3) छिले हुए ग्रामो को निरीक्षण मेज पर बिछाकर देख लेना चाहिए कि उन पर छिलका तो नही रह गया है। ग्रनचाहे रगीन भागों को गोदकर निकाल देना चाहिए, ताकि भविष्य मे ग्रनचाही गन्ध कैनीकरण उत्पाद मे न हो सके।

(4) फलो की लम्बाई मे फाकें काटनी चाहिए ताकि बराबर फाँकें मिल जायें। इन्हें चाहें तो कैनों में भर सकते हैं या कतरने के लिए यन्त्रो मे डाल दिया जाता है। गुठली मे लगे हुए गूदे को आवश्यकतानुसार आकार में कतर लेना चाहिए या गूदा बनाने के लिए यन्त्रों मे भेज देना चाहिए।

(5) उपर्युक्त विधि से तैयार की हुई फांकों के टुकडे इत्यादि को उचित वाहिकाओ मे भरकर 40° ब्रिक्स की शर्करा चाशनी मे तैराना चाहिए। इन्हें निर्वातीकरण के लिए रखना चाहिए ताकि उसके भीतर 165° फारनहीट ताप पर पहुँच जाये। इन्हे तुरन्त कैनसीलर की सहायता से सीलबन्द कर जल-ऊष्मक मे संसाधित किया जाना जाना चाहिए, ताकि उसके भीतर 195° फारनहीट ताप पहुँच सके। इसके लिए करीब 10 मिनट समय प्रदान करना चाहिए। इन कैनो को भवनताप मे ठण्डा कर लेबलीकरण करें।

(6) आम के कैनीकरण मे प्राप्त गुठली, कतरे हुए टुकड़ों के अवशेष आदि को पल्पिंग मशीन द्वारा गूदा बनाकर 0.062 इन्च गेज वाली छलनी की सहायता से छान लें। इस गूदे का ऊष्म-ससाधन द्वारा कैनीकरण किया जा सकता है, जैसे—फांको का किया जाता है। चाहें तो इन्हे पास्तुरीकरण कर आम का शोरबा बनाकर या हिमीकरण कर संचयन किया जा सकता है।

अनन्नास

आज ससार मे उत्पादित कैनीकृत फलो मे अनन्नास उत्पाद सर्वाधिक है। भारत में केरल, आसाम, कर्नाटक, आन्ध्रप्रदेश के गोदावरी जिले, तमिलनाडु के कोडाइकनाल पहाड़ियाँ तथा बगाल आदि प्रदेश मे अनन्नास की खेती अधिकाधिक की जाती है। संयुक्त राज्य अमेरिका के हवाई द्वीप तथा फ्लोरिडा तथा अन्य देश जैसे—फिलिपाइन्स, श्रीलका, मलाया, सिंगापुर, इण्डोनेशिया (हिन्द एशिया), मौरिशस आदि देशो मे भी अनन्नास की खेती की जाती है।

भारत मे बोयी जाने वाली कुछ प्रमुख किस्मे हैं :—जाइण्ट-क्यू, क्वीन, मौरिशस, क्यू इत्यादि। इनके अलावा देशी किस्म का अनन्नास भरपूर पैदा होता है। किन्तु वह व्यापारिक दृष्टि से उपयुक्त नहीं माना जाता।

जाइण्ट क्यू (Giant Kew)

यह अण्डाकृति के होते हैं, इसके नीचे का स्थान मोटा तथा मुकुट की ओर पतला होता जाता है। केरल मे करीब 4 किलो वजन के फल होते है, लेकिन 10 किलो तक के भार वाले भी असाधारण नही है। ये फल अगस्त, सितम्बर, महीने मे पूर्ण विकसित होकर पौधे मे पकने लगते है। इसके कटको के स्थान की गहराई मालूम होती है, पौधे मे पूर्ण विकसित पके हुए फल का रंग पीला होता है, जो सुयोग्य है।

क्वीन (Queen)

पके हुए क्वीन अनन्नास पीले रग के, लम्बे तथा गोल आकृति के होते हैं। यह जून, जुलाई महीनो मे पकने वाली किस्म है तथा करीब-करीब सभी फल एक साथ पकते हैं। प्रत्येक फल करीब 2 से 3 किलो वजन का ही होता है, परन्तु इसके कटक की आँखें बहुत बड़ी होती हैं। फलस्वरूप कैनीकरण के लिए उपयुक्त नही माने जाते, परन्तु यह बहुत स्वादिष्ट फल होता है, फाँकें पारदर्शक होती हैं, इसलिए यह कच्चा ही खाने मे मजेदार होता है।

मॉरिशस (Mauritius)

मॉरिशस किस्म के अनन्नास जुलाई, अगस्त महीने मे पकते हैं। प्रत्येक फल करीब 2 से 3 किलो वजन के होते हैं। मॉरिशस अनन्नास पीले तथा लाल वर्ण के मिलते है। इसका मुकुट अन्य किस्मो से अधिक कटकधारी होता है तथा इसका गूदा अन्य किस्मो से अधिक गहरे पीले वर्ण का होता है। अधिक रसधारी इस अनन्नास मे मिठास कम होता है। इसके विपरीत लाल वर्ण के मॉरिशस मे अधिक मिठास होती है।

क्यू

क्यू किस्म के अनन्नास भी दो अलग-अलग उप-जाति के होते हैं। एक का नाम आसाम क्यू तथा दूसरे का नाम मद्रास क्यू है। यह फल साधारणतया बड़ा होता है तथा कैनीकरण योग्य सभी गुण इसमें पाये जाते हैं।

फल-पौधों से तोड़ने का समय

अनन्नास साधारणतया फरवरी-अप्रेल महीने में फूलते हैं तथा जुलाई-सितम्बर महीने मे पकने लगते है। फल मे अधिकाधिक स्वाद, सुगन्ध, मिठास, वर्ण तथा गुण आदि प्राप्त करने के लिए इन फलो को पौधे पर ही पूर्ण विकसित होने तथा पकने देना चाहिए। फल पकने प्रारम्भ हो जायें तो उनके छिलके का रग बदलने लगता है इस समय इन्हे तोड़ लेना चाहिए तथा तुरन्त कैनीकरण क्रिया विधेयक बना लेना चाहिए। भारत मे इस फल का सर्वाधिक परिरक्षण केरल प्रान्त में होता है। त्रिसूर, पुनुलूर, कोटायम आदि क्षेत्र इसके लिए प्रसिद्ध है। इसके अलावा दक्षिणी कर्नाटक तथा गोदावरी जिले मे भी इसके कैनीकरण का प्रचार हो रहा है। भारत मे अधिकांश कैनीकरण क्रिया जैसे—पौधो से तोडना, धोना, मुकुट निकालना, कतरना, छिलका उतारना आदि मानव-शक्ति पर निर्भर है, परन्तु विकसित देशो मे विशेषकर संयुक्त राज्य अमेरिका के हवाई द्वीप मे, जहाँ अनन्नास की सर्वाधिक खेती होती है, वहाँ उपर्युक्त सभी कार्य स्वचालित यन्त्रो द्वारा किये जाते हैं। भारत के कुछ बड़े कारखानो मे फल कतरने का कार्य यन्त्र द्वारा अवश्य किया जाता है, परन्तु छिलका उतारना, बीच का कोर (पित्त) निकालना आदि कार्य पचर तथा कोरिंग नाइफ की सहायता से मानव-शक्ति से सम्पन्न किये जाते हैं।

जिनाका मशीन

हवाई-द्वीप के कैनीकरण कारखानो में अनन्नास को यन्त्र द्वारा श्रेणीकृत कर जिनाका यन्त्र मे भेज दिया जाता है ताकि चाहे गए आकार मे कतरा जा सके। प्रत्येक श्रेणी के फलो के लिए जिनाका यन्त्र का तदनुसार समायोजन किया जाता है। इस यन्त्र मे अनन्नास फलो को गोलाकृति में कतरना, उनके चारों तरफ के काटेदार अनचाहे भागो को तथा फल के बीच के कोर (पित्त) को निकालना आदि ,सारी क्रियाएँ की जाती हैं। जिनाका यन्त्र से निकले प्रत्येक फल-वलय की मोटाई 1 25 सेन्टीमीटर होगी। इसी प्रकार कतरे हुए फल-वलय को एक ही परिरक्षण शाला मे दो विभिन्न उत्पादो के लिए काम मे लिया जाता है। एक हिमीकरण के लिए, दूसरा कैनीकरण के लिए। हिमीकरण प्रक्रिया के बारे में पूर्व चर्चा की जा चुकी है। यहाँ तक दोनो की क्रिया एक समान हैं।

जिनाका यन्त्र से निकले कतरे हुए फल-वलय स्वचालित बेल्ट की सहायता से भराई-मेज पर पहुँचते हैं, जहाँ श्रेणी के अनुसार वाहिकाओं में भराई की जाती है। साधारणतया एक कैन मे 5 से 6 फल-वलय रखे जाते है, जिनका प्रत्येक का आकार 1.25 से० मी० होना है। इन फल-वलय से भरे कैनों मे 40° से 50° ब्रिक्स की शर्करा चाशनी तैरायी जाती है, तुरन्त बाद निर्वातीकरण कर, वायुरुद्ध अवस्था मे सीलबन्द कर (डबल सीमर की सहायता से) ससाधन, शीतलीकरण, लेबलीकरण आदि यथाविधि कर संचयन किया जाता है।

जहाँ उपर्युक्त क्रियाएँ हाथ से की जाती है, वहाँ अनन्नास फलो का कतरना, भरना आदि क्रियाओ के समय हाथो मे दस्ताने (ग्लोव्स) पहनना चाहिए, अन्यथा अनन्नास मे पाया जाने वाला एक विशेष किण्वक जिसको ब्रोमोलिन एन्जाइम (*Bromoline Engyme*) कहा जाता है, सम्पर्क मे आने से हाथों मे खुजली तथा जलन पैदा हो जायेगी।

सन् 1954 मे प्रुति तथा साथियो ने भारत मे प्राप्त कुछ विशेष अनन्नास-क्यू, जाइण्टक्यू, मौरिशस आदि अनन्नास को कैनीकरण कर अध्ययन किया तो मालूम हुआ कि मौरिशस कैनीकरण योग्य नही है, क्योकि इसमे 9 7 से 11.4 प्रतिशत केवल उचित फल-वलय प्राप्त होता है, परन्तु जाइण्ट-क्यू मे 24 से 32 प्रतिशत तथा क्यू मे से 13.7 से 20.8 प्रतिशत फल-वलय प्राप्त हुआ बताया गया है। अम्ल तथा विटामिन-सी में भी थोड़ा-बहुत अन्तर अवश्य देखा गया। परन्तु रासायनिक दृष्टि से कोई विशेष अन्तर देखने को नही मिला। उपर्युक्त सभी किस्मो मे सुक्रोस, ग्लूकोस, फ्रक्टोज आदि शर्करा तथा साइट्रिक अम्ल व मलिक अम्ल भी पाये गये थे। उन्होने आगे यह भी देखा कि कैनीकरण कर 12 महीने भवन-ताप पर (24° से 30° से०) रखे गये फलो मे 72 3 प्रतिशत अस्कार्बिक अम्ल (विटामिन-सी) धारणीय रहा।

पपीता

आम के बाद उत्तर भारत का एक प्रमुख फल है—पपीता। पपीते मे औषधिगुण भी पाये जाते हैं। आमाशय तथा आतडियो मे लगने वाले कृमियो को नष्ट करने तथा पाचन-शक्ति को बढाने मे पपीता सहायक होता है। कच्चे पपीते के ऊपरी छिलके से प्राप्त दूध को पपाइन कहा जाता है। यह दूध उपर्युक्त गुणो का स्रोत है। पपाइन एक विशेष रासायनिक पदार्थ है, जिसके द्वारा अधिक मुनाफा कमाया जा सकता है। जैसा पहले भी कहा जा चुका है कि पपाइन निकाला गया पपीता बाजार मे आसानी से नही बिकता, क्योकि यह चोट लगा, बदसूरत-सा नजर आता है। परन्तु यह खाने योग्य है। इसलिए ऐसे फलो को कैनीकरण के लिए लिया जाए तो अधिक उत्तम रहेगा।

कुछ विशेष पपीते की किस्मे इस प्रकार हैं :—वाशिंगटन, हनिड्यू, मडगास्कर, आस्ट्रेलियन, न्यूजीलैण्ड, जावाब्लू, सिंगापुर, सिलोनिज, बैंगलोर, गुजराती, सहारनपुर, कुक हनीड्यू, रांची इत्यादि।

कैनीकरण के लिए ऐसे पूर्ण विकसित बराबर पके हुए ठोस फलो का ही चयन करना चाहिए, जिनमें अधिकाधिक मिठास तथा सुगन्ध हो। इन फलो को यथाविधि धोकर छिलका उतारकर, लम्बाई मे कतर लें तथा भीतरी बीज तथा बीजकक्ष के अनचाहे भाग को अलग कर दें। इन फाको को चौकोर आकृति के टुकड़ो मे कतर लें, जिनकी मोटाई 25 से 40

मिलीमीटर होनी चाहिए। कुछ व्यवसाय-शालाओं मे अनन्नास की भाँति वलय बनाकर भी इसका कैनीकरण किया जाता है।

ए० 1 आकार की कैनों मे 285 ग्राम तथा ए० $2\frac{1}{2}$ आकार की कैनों मे 540 ग्राम फल भरने के बाद उसमे 33° से 42° ब्रिक्स का शर्करा घोल तैराया जाता है जिसमे 0.2 से 0.5 प्रतिशत अम्ल अवश्य होना चाहिए। भरते समय कैनो मे 6 मिलीमीटर शीर्षस्थान छोडकर अन्य क्रियाएँ सम्पन्न कराकर संसाधन करना चाहिए। साधारणतया नम्बर 2 कैनो को 25 मिनट समय तथा ए $2\frac{1}{2}$ को 30 मिनट समय प्रदान कर ससाधन किया जाता है।

दास तथा सिद्धप्पा (1954) ने प्रस्तुत किया कि पपीते के गूदे में करीब 2 प्रतिशत शर्करा तथा 0·25 प्रतिशत अम्ल दोनों मिलाकर कैनीकरण किया गया तथा उनका भवन ताप पर (24° से 30° से०) 12 महीने सचयन कर देखा गया तो उसमें किसी प्रकार की खराबी दिखाई नही दी। सन् 1956 मे सिद्धप्पा तथा भाटिया ने प्रतिवेदन दिया कि कैनीकृत पपीते तथा **मक्खनीया पपीते** में 52 प्रतिशत तथा 64 प्रतिशत बीटाकरोटिन यथाक्रम पाया गया।

खरबूजा

सूखे जलवायु प्रदेश का एक प्रमुख फल है—खरबूजा। इसके उत्पादन का मुख्य स्थान राजस्थान, हरियाणा, पजाब तथा उत्तरप्रदेश है। राजस्थान मे टौंक जिला खरबूजो के लिए प्रसिद्ध है। कुछ अच्छी किस्म के नाम इस प्रकार है :—सफेदा, गोला, धारीदार, लखनऊ-स्वीट, दुर्गापुरा-स्वीट इत्यादि। खरबूजे का व्यवसाय-स्तर पर कैनीकरण नही किया जाता, परन्तु इसकी अच्छी विपणी मिलने की सम्भावनाओं का पता लगाना है।

बेल मे पूर्ण विकसित पके हुए मोटे, गूदेदार और ठोस फलो का कैनीकरण के लिए चयन किया जाता है। तोडते ही कैनीकरण विधेयक बनाना आवश्यक है। उपर्युक्त सभी किस्में कैनीकरण के लिए सुयोग्य हैं, क्योंकि इनमें मिठास व सुगन्ध भरपूर पायी जाती है, तोडे हुए फलो को श्रेणीकरण कर, ब्रुश से रगड़-रगड़ कर खूब धो लेना चाहिए, क्योकि यह मिट्टी के सम्पर्क मे रहते हैं। इन्हे पपीते की भाँति छिलका, बीज तथा रेशे निकालकर लम्बाई मे फाँके कतरनी चाहिए। प्रत्येक फाँक की 30 से 40 मिलीमीटर मोटी होनी चाहिए। 1 पौण्ड जैम कैनो मे 227 ग्राम खरबूजा है तथा 128 ग्राम शर्करा चाशनी, जिसका ब्रिक्स 40 डिग्री हो, भरी जा सकती है। इन्हे 77° से० ताप पहुँचने तक निर्वातीकरण कर तुरन्त बाद सीलबन्द कर जल-ऊष्मक मे 30 मिनट ससाधित किया जाना चाहिए।

अमरूद

अमरूद की सारे भारत मे खेती की जाती है, परन्तु उत्तर प्रदेश अमरूद की खेती के लिए प्रसिद्ध है। लखनऊ तथा उसके आसपास के क्षेत्र मे की जाने वाली अमरूद की किस्में जैसे—सफेदा, चित्तीदार, करेला, लखनऊ-49, आदि देश की अन्य किस्मों से आकार मे ही नही, अपितु स्वाद, सुगन्ध आदि मे भी उत्तम हैं। दक्षिण भारत मे पैदा होने वाले अमरूद छोटे होते हैं, परन्तु लाल रग के गूदेदार होते हैं, मिठास कम होते हुए भी इनमे विटामिन 'सी' काफी मात्रा मे पाया जाता है। इनमे कैल्शियम तथा फास्फोरस इत्यादि भी काफी मात्रा में होना है।

अन्य फलो की भाँति कैनीकरण के लिए उन फलो को चुनना चाहिए जो एक ही किस्म के हो, पूर्ण विकसित एक-समान पके हुए हो तथा ठोस हों। कम बीजदार कैनीकरण के लिए अधिक उत्तम है। आज ऐसे भी अमरूदो की खेती होती है जिनके अन्दर सिर्फ एक या दो बीज होते है।

अमरूद का यथाविधि श्रेणीकरण कर इन्हे दो या चार टुकड़ो मे कतर लेते हैं। कुछ लोग अमरूद के छिलके चाकू से या ऊष्मोपचार से उतार लेते हैं। इसके बाद इनकी बीज-कक्षा अलग कर दी जाती है। इसके लिये कोरिंग नाईफ या साधारण चद्दर से बनी स्टेनलेसस्टील की छोटी चम्मच भी काम मे ली जा सकती है। इसके बाद बीज-रहित टुकड़ो को 2 प्रतिशत लवण-घोल मे 2 मिनट रखा जाता है, ताकि उनमें वर्णभेद न हो सके। लवण-घोल से निकालकर, धोकर, पानी निथरने दिया जाय। इन टुकड़ों को साधारण कैनो मे भरा जा सकता है। इनमे तैराया जाने वाला शर्करा-घोल का ब्रिक्स 35° से 40° होना चाहिए। इन्हे अन्य फलो के कैनीकरण की भाँति निर्वातीकरण आदि के बाद जल ऊष्मक मे संसाधित किया जाता है। निर्वातीकरण के लिए 8 से 10 मिनट तथा ससाधन के लिए 20–25 मिनट यथाक्रम नम्बर टू तथा नम्बर 2½ कैनो को समय प्रदान कर, संसाधन सम्पन्न कराना चाहिए। इनका भवन-ताप पर लेबलीकरण आदि के बाद संचयन किया जाता है।

कैनीकरण किया हुआ फल, स्वाद तथा सुगन्ध मे अन्य फलो की भाँति श्रेष्ठ नही पाया गया, परन्तु उसके गुण मे कोई विशेष अन्तर नही देखा गया। कैनीकरण से बचे हुए छिलके, बीज-कक्ष आदि से जैम, जैली आदि का निर्माण किया जा सकता है, परन्तु क्षारीय-क्रिया विषेयक छिलका अन्य फलों की भाँति उपयोगी नही है।

केला

दक्षिण एशिया का एक प्रमुख फल है, केला। सस्कृत में इसे कदली कहते है। भारतीय सस्कृति से जुड़ा हुआ यह फल नारियल, धान इत्यादि की भाँति लोकप्रिय है। भारत मे दो लाख हैक्टेयर भूमि मे केले की खेती की जा रही है, जो अधिकांश भारत के समुद्र-तटीय प्रदेशों मे है। अधिकांश केले की खेती तमिलनाडु मे होती है। दूसरा स्थान केरल का है। भारत से लगाई जाने वाली केले की कुछ विशेष किस्में करीब 200 हैं जिनमे प्रमुख हैं—पूवन, बसराई, हरीचाल, रसताली, नाणीपूवन, बम्बकतली, नेन्द्रण, मोतन, पचसाले, चन्द्रवाले, चक्नपुरी-कोडन, वण्णन इत्यादि।

सन् 1955 मे दास, जैन तथा गिरधारीलाल ने 20 विभिन्न किस्म के केलो को कैनीकृत कर बताया कि पंचसाले, चन्द्रवाले, नेन्द्रण, चक्नपुरीकोडन, पूवन, वण्णन आदि कैनीकरण के लिए उपयुक्त हैं।

कैनीकरण के लिए पूर्ण विकसित एक ही आकार तथा मोटाई के ठोस फलो को चुनना चाहिए। इन्हें यथाविधि धोकर छिलका उतारकर 13 मिलीमीटर से 20 मिलीमीटर मोटाई की फाँकें काटी जायें, जो लम्बाई में हों। केले के दोनों किनारो को थोडा-सा कतर लिया जाये तो सारी फाँकें एक-समान रहेंगी (छोटे टुकडों को जैम बनाने या एन्जाइम उपचार द्वारा केले का रस बनाने के काम मे लिया जा सकता है)। साधारणतया केले की फाँको का पी० एच० 4.5 से 5.3 होगा, इसलिए शर्करा-घोल मे 0.2 से 0.5 प्रतिशत

अम्ल मिला हुआ होना चाहिये। केले के कैनीकरण के लिए ली जाने वाली शर्करा चाशनी का ब्रिक्स 25° से 30° होना चाहिये। इन्हे बटर साइज कैनो मे भरकर संसाधन किया जाता है। 4 8 पी० एच० तथा उससे कम पी० एच० के केलो का संसाधन जल-ऊष्मक मे 15 मिनट समय देकर कर सकते हैं तथा अधिक पी० एच० वाले केलो का रिटोर्ट मे संसाधन किया जाना चाहिये, जो 0.7 किलो प्रति वर्ग सेन्टीमीर दवाव मे होता है या रिटोर्ट का तापमान 227° फारनहीट या तत्तुल्य तापमान सेन्टीग्रेड मे होना चाहिये। वड़े-बड़े रिटोर्रो मे प्रेशर तथा तत्तुल्य तापमान दोनो का समावेश कर, समाधन करना एक सतर्कता है। ससाधित केले के उत्पादों की शोतनीकरण, लेबलीकरण, पेटियों मे पैकीकरण, सचयन इत्यादि क्रियाएँ अन्य फलों के कैनीकरण की भाँति ही सम्पन्न होती हैं।

कटहल

देश के अधिकांश प्रदेशों मे कटहल की खेती होती है, विशेषकर केरल, आसाम, कर्नाटक, तमिलनाडु, पश्चिमी बंगाल, उत्तर प्रदेश, महाराष्ट्र इत्यादि। दक्षिण भारत मे कच्चे कटहल को तरकारी के रूप मे तथा फलो को फल के रूप मे अधिक पसन्द करते हैं। कटहल के बीज को तरकारी बनाने तथा नमकीन बनाने के काम मे लिया जाता है, परन्तु उत्तर भारत मे कटहल साधारणतया तरकारी के रूप मे तथा अचार बनाने के काम मे लिया जाता है।

कटहल साधारणतया दो विभिन्न किस्मो मे पाया जाता है। एक आकार में छोटा तथा पकने के बाद ठोस फल वाला होता है। इन्हे विदेशी कहा जाता है। दूसरा देशी होता है, जिसका पकने के बाद फल ढीला हो जाता है। पका कटहल दक्षिण भारत मे विशेषकर केरल मे विभिन्न पकवान बनाने के काम मे लिया जाता है। देशी कटहल से विदेशी कटहल अधिक सुगन्ध-युक्त तथा चमकीला व अधिक मिठास वाला होता है। कटहल मे चुनी हुई दो किस्मे होती हैं, वे हैं—गैटाक्षी तथा सिंगापुरी। सिंगापुरी को सीलोन कटहल भी कहा जाता है। एक कटहल दो किलो से लेकर 18 किलो वजन का भी पाया जाता है।

कटहल पका हुआ हो या कच्चा, दोनो ही प्रकार का कैनीकरण के काम मे लिया जाता है। नर्म कटहल, जो अचार के लिए काम मे लिया जाता है, उसे भी कैनीकरण किया जाता है। कटहल का फल पकने के बाद ढीला हो जाता है, इसलिए उसे पूरा पकने के पहले काम मे लेना चाहिये।

पूर्ण विकसित कटहल के कुल्हाडी या अन्य उपस्कर से काटकर टुकड़े किये जाते है। इसके बाद उसमे से स्कन्द (कोए) निकाले जाते है, इस हाथ मे वनस्पति तेल लगा हुआ होना चाहिये ताकि उसमे से निकलने वाला गोंद रूपी दूध (लेटेक्स) हाथ मे न लगे। इन स्कन्दो के बीज तथा अनचाहे भागो को अलग कर गर्म पानी मे धोकर इसके नीचे का हिस्सा जो कडा (ठोस) होता है, उसे अलग कर लेते हैं।

पके हुए कोए को साधारण कैनो मे भरकर 50° ब्रिक्स की शर्करा-घोल मे तैराया जाता है, जो 0 5 से 1 प्रतिशत अम्लीकृत होता है। ए० $2\frac{1}{2}$ आकार की कैनों मे 500 से 550 ग्राम, बटर साइज कैनो मे 340 से 400 ग्राम तक स्कन्द भरा जा सकता है। शर्करा-घोल भरते समय उसका तापमान 80° से 88° से० होना अनिवार्य है तथा शीर्ष-स्थान

6 मिलीमीटर छोड़ना चाहिये। इसके बाद उन्हें निर्वातीकरण (कैन के केन्द्रीय भाग में 82° से० जब ताप पहुँच जाये तो 7 से 10 मिनट समय देना आवश्यक है), वायुरुद्ध अवस्था में सीलबन्द कर ससाधन करें। इसके लिए जल-ऊष्मक में 30 मिनट समय प्रदान कर संसाधन करना चाहिये।

उपर्युक्त विधि से तैयार किये गये कटहल उत्पादों में मन-मोहक सुगन्ध पाई जाती है। केन्द्रीय खाद्य प्रौद्योगिक अनुसंधान संस्थान के अनुसार इस फल को व्यावसायिक कैनीकरण स्तर पर प्रचार मिल सकता है।

कटहल के ऊपरी छिलके पर बहुत अधिक पेक्टिन पाया जाता है। जहाँ कटहल की अधिक मात्रा में खेती की जाती है या उत्पादन होता है, वहाँ कटहल से पेक्टिन भी व्यावसायिक-स्तर पर बनाकर लाभ उठाया जा सकता है, क्योंकि 1 किग्रा पेक्टिन का आज खरीद मूल्य 250 रुपये से कम नहीं है। पेक्टिन से जैली ही नहीं बनती, अपितु इसे सॉस, कैचप, जैम इत्यादि में भी सयोजी के रूप में काम में लिया जाता है, जिसको ऐडिटिव (Additive) कहा जाता है। इसके अलावा पेक्टिन अन्य व्यापारिक क्षेत्र में भी उपयोगी है। अधिक जानकारी उपोत्पाद के अध्याय में दी जायेगी।

चीकू

चीकू को सपोटा भी कहा जाता है। ऊष्ण-मेखलीय प्रदेशों समुद्रीय-तट के क्षेत्रों में इसकी खेती बहुत अधिक होती है। हमारे देश में महाराष्ट्र, तमिलनाडु, पश्चिम बगाल आन्ध्र प्रदेश आदि प्रान्तों में कुल मिलाकर करीब 310 हेक्टेयर भूमि पर इसकी खेती होती है। आलूनुमा इस फल का गूदा अत्यधिक मीठा होता है। पूर्ण विकसित पका हुआ फल खायें तो मुँह में चीनी के दाने जैसा अनुभव होगा, ऐसा अन्य फलों में नहीं होता। साधारणतया इसमें 13 प्रतिशत शर्करा पाई जाती है। इसमें अधिकाधिक 4 चमकीले बीज पाये जाते हैं, जिसमें सफेद धारी दिखाई देती है। अच्छे किस्म के चीकुओं में बीज कम होते हैं। इसकी प्रमुख किस्में है—कालीपट्टी, छतरी, क्रिकेटबाल, द्वारापुडि, बैंगलोर, बावोवलसा, कीर्तवरती, जोनावलसा, पाला आदि।

पूर्ण विकसित फलों को धोकर, छिलका उतारकर फांकें अलग कर ली जाती है। इन्हें साधारण कैनों में भरा जाता है। ए० $2\frac{1}{2}$ कैनों में 550 ग्राम तथा बटर साइज कैनों में 280 ग्राम फांकें भरी जाती है। 56° ब्रिक्स के शर्करा-घोल में इन्हें तैराया जाता है, जिसमें 0.2 से 0.5 प्रतिशत अम्ल मिला हुआ होना चाहिये। 12.5 मिलीमीटर शीर्ष-स्थान छोड़कर भरी हुई कैनों का निर्वातीकरण, सीलिंग, ससाधन आदि कर यथाविधि अन्य फलों की भांति सचयन करना चाहिये।

अंगूर

सारे ससार में अनादि काल से ही मानव-जीवन में एक अग बना हुआ यह फल पुराणों में भी चर्चित है। अंगूर समशीतोष्ण (मॉडरेट क्लाइमेट) मेखलीय प्रदेशों का एक प्रमुख फल है। इस फल में थकावट दूर करने वाला पोषक अश अधिक होता है। संसार में मेती किये जाने वाले समस्त फलों में अंगूर की खेती 50 प्रतिशत होती है। अंगूर, अंगूर-रस तथा अंगूर-मदिरा के बारे में ससार के विभिन्न साहित्यों में अधिकाधिक वर्णन मिलता है। अंगूर-मदिरा के बाद अधिकाल से बनने वाला एक और उत्पाद है, किशमिश।

कैनीकरण के लिए काम मे लिये जाने वाले अंगूर के दाने मोटे होने चाहिये। अगूर के गुच्छो में से दाने अलग कर श्रेणीकरण किया जाता है। विदेशो मे भी अगूर के दाने हाथ से ही निकाले जाते हैं। श्रेणीकरण अवश्य ही यन्त्रो की सहायता से किया जाता है, जिसमे क्रमशः 16, 17, 19, 21 सेन्टीमीटर आकार के छेदवाली चार भिन्न-भिन्न छलनियाँ होती है। इनके द्वारा श्रेणीकरण कर, धोकर, पानी निसरने दिया जाता है। सफेद अगूरो को साधारण कैनो मे तथा रगीन अंगूरो को लैकोकृत कैनो में भरा जाता है। इनमे 10 से 40° ब्रिक्स की चाशनी भरी जाती है, जो उपभोक्ताओ की माँग पर निर्भर करती है। कुछ व्यवसाय-शालाओ मे शुद्ध जल के माध्यम से भी कैनीकरण किया जाता है। भारत मे कैनीकरण के लिए किशमिश तथा हाईदा किस्म के अगूरो का उपयोग किया जाता है।

अजीर

मैडिटेरेनियम ऋतु वाले प्रदेशो मे इसकी खेती अधिक होती है। भारत मे अजीर की खेती पश्चिमी तट के प्रदेशो मे अधिक होती है। सूखे मेवे के रूप में आदिकाल से अजीर काम में लिया जाता रहा है। इसमें 45 से 65 प्रतिशत शर्करा पायी जाती है, परन्तु ताजा फल मे करीब 10 से 28 प्रतिशत ही होती है। अंजीर सर्वाधिक धातुलवण-युक्त फल है। आज अजीर को वैज्ञानिक विधि से सुखाया ही नही जाता, अपितु कैनीकरण कर सचयन भी किया जा सकता है। कैनीकरण के लिए सब किस्मो को उपयोगी नही माना जाता, परन्तु काडोटा, सिलिस्टे, स्मोयरना, मगनोलिया आदि को कैनीकरण के लिए उपयुक्त माना जाता है। अजीर पेड पर पके हुए अधिक उपयुक्त माने जाते हैं। एकत्र किये हुए फलो को यन्त्र की सहायता से श्रेणीकृत किया जाता है, परन्तु भारत में हाथ से ही किया जाता है। अधिक पके हुए तथा फटे हुए फलो को अलग कर देना चाहिए। इन फलो की धुलाई जल-वर्षा (स्प्रे) द्वारा की जाती है। इसके बाद इन्हे 180 फारनहीट या तत्नुल्य तापमान सेन्टीग्रेड के जल मे डुबोकर निकाला जाता है। इसके लिए 2 मिनट का समय देना औचित्यपूर्ण होगा। अगला कदम क्षारीय क्रिया द्वारा अंजीर का छिलका उतारना है और तुरन्त धोकर निकाले गये अंजीरो का 10 से 20 मिनट तक विवर्णीकरण कर वाहिकाओ मे भरा जाता है, जिसमे 45°, 48°, 55° ब्रिक्स का शर्करा-घोल तैराया जाता है। इस घोल मे नीबू-रस मिलाकर अम्लीकरण करना चाहिए।

सन्तरा

सन्तरे की शीत-प्रदेशो को छोडकर बाकी सब प्रदेशो मे खेती की जाती है। आम तथा केले के बाद भारत मे सन्तरे का स्थान तीसरा है। साधारणतया आसाम, महाराष्ट्र, मध्यप्रदेश, उत्तरप्रदेश, कर्नाटक प्रान्त के कुर्ग जिले, कोडाइकनाल पहाडियाँ तथा केरल की हाई रेन्जो (ऊँची पहाडियो) मे सन्तरे की खेती अधिक होती है। आज सन्तरे का प्रमुख स्थान भारत मे नागपुर तथा कुर्ग (मैसूर) है, जहाँ ढीले छिलके वाले सन्तरो की खेती अधिक होती है, परन्तु ठोस छिलके वाला सन्तरा जिसको सातकुडी कहते हैं, की खेती अधिकांश रूप से तमिलनाडु, आन्ध्रप्रदेश, महाराष्ट्र, मध्यप्रदेश, बिहार, उडीसा, पजाब तथा राजस्थान के गगानगर क्षेत्र मे की जाती है। सातकुडी को उत्तर भारत मे मौसमी भी कहा जाता। इसकी कुछ प्रमुख किस्मे हैं—ब्लडरमाल्टा, पाइनापल इत्यादि। गगानगर मे जाने वाली कुछ उच्चकोटि की माल्टा किस्मों का रूस में निर्यात किया जाता है।

पैदा होने वाले ढीले छिलके-युक्त सन्तरों में कुर्ग सन्तरा कैनिंग में ही नहीं अपितु सन्तरा रस, सांद्रीकरणोत्पाद इत्यादि के लिए भी अधिक उपयोगी माना जाता है, क्योंकि इसकी माँग विदेशों में अधिक है।

कैनीकरण के लिए नागपुर, कुर्ग सन्तरा तथा सातकुडी (माल्टा या मौसमी) किस्में उपयुक्त मानी जाती हैं। एक ही किस्म के सन्तरे एक लाट में कैनीकरण के लिए चुने जाते हैं। ये सन्तरे पूर्ण विकसित तथा पके हुए होने चाहिएँ। इन्हें धोकर, गर्म पानी में पुनः धोकर, छिलका उतारा जाता है या सीधे भी उतारा जा सकता है। इसके बाद फाँकें अलग कर, रेशे अलग कर लेते हैं। इसके लिए 1 से 2 प्रतिशत क्षारीय-घोल में 25 से 35 सैकण्ड डुबोकर रखा जाता है तथा तुरन्त बाद 0 5 से 1 0 प्रतिशत हाइड्रोक्लोरिक अम्ल-घोल में उपचार कर क्षारीय अंश दूर किया जा सकता है। इन्हें पुन. शीत-जल में धोकर, बीज निकाल दिये जाते है। यह कार्य बहुत सावधानी के साथ करना पड़ता है। इसके लिए 50° ब्रिक्स का शर्करा-घोल चाहिए। इन दोनों का संयुक्त मिश्रण कर 175° से 185° फारनहीट पर 20 तक गर्म करना चाहिए, तुरन्त उसी तापमान से कैनों में भरकर सीलबन्द कर जल-ऊष्मक में ससाधन करना चाहिए, जिसका तापमान 185° फारनहीट पर 15 से 20 मिनट ससाधन समय प्रदान कर निकालना चाहिए। इसी प्रकार ऊष्म-ससाधित सन्तरा-उत्पाद में सुगन्ध कम हो जाती है। इस कमी को सन्तरा-सुगन्ध या ओरेञ्ज-पीलआयल तथा सन्तरा सुगन्ध के सयुक्त प्रयोग द्वारा पूरा किया जा सकता है।

कुर्ग सन्तरों के कैनीकरण के फलस्वरूप 14 से 16 प्रतिशत विटामिन-सी नष्ट होता देखा गया। सातकुडी सन्तरो का कैनीकरण सन्तरो को वलय रूप में कतरकर भी किया जा सकता है।

चकोतरा

कैनीकरण के लिए पूर्ण विकसित चकोतरा पेड़ पर पका हुआ तथा बीजरहित अधिक उत्तम है। फोस्टर, मार्शसिडलस, डुनकान आदि किस्में उपयुक्त गुण-युक्त होती हैं। तोड़े हुए फलों को तुरन्त कैनीकरण-विधियक बना देना चाहिए। इन्हें उनके आकार तथा पक्वता के आधार पर वर्गीकृत कर, धोकर, गर्म पानी से 2 से 3 मिनट उपचार करना चाहिए, जिसका तापमान 200° से 206° फारनहीट या तत्तुल्य तापमान सेंटीग्रेड में हो। इसी प्रकार गर्म कर छिलका उतारा जाता है, जो विदेशों में भी प्रचलित है। इसके बाद फाँकें खाने योग्य रूप में अलग की जाती है। छिलके उतरे हुए फलों को 2·5 प्रतिशत क्षारीय-घोल में 20 से 30 मिनट उपचार कर अनचाहे भागों को दूर किया जा सकता है। इन फलों को धोकर फाँकें अलग की जाती है। कैनों में भरी हुई फाँकों को 35° से 60° ब्रिक्स की शर्करा-चाशनी में तैराया जाता है। वैसे तो क्रिस्टलीय (मणिमय) शर्करा माध्यम से भी कैनीकरण किया जाता है, परन्तु 60° ब्रिक्स का शर्करा-घोल अधिक उत्तम माना गया है। 500 किलो चकोतरे को ए॰ 2 आकार के 33 कैनों में भरा जा सकता है। अन्य ससाधन क्रियाएँ अन्य फलों की भाँति ही हैं।

लीची

भारत में अल्प-क्षेत्र में ही (लगभग एक प्रतिशत) इसकी खेती की जाती है। प्रमुख रूप से बिहार में लगभग बारह हजार हेक्टेयर भूमि में इसकी खेती की जाती है।

उत्तर प्रदेश, उड़ीसा, पश्चिमी बंगाल के कुछ क्षेत्रों में लीची की खेती की जाती है। भारत का पश्चिमी प्रदेश इसके लिए अधिक उपयुक्त माना जाता है, परन्तु खेती की बजाय पश्चिमी तट की पहाड़ियों मे एक जंगली पौधे की भाँति यह स्वय ही पैदा हो जाती है।

इसकी कुछ प्रमुख किस्में हैं—चीन, दहरीरोज, देशीपूर्वी, बेदाना इत्यादि। उपर्युक्त किस्मो की बिहार में खेती होती है, लेकिन उत्तर प्रदेश मे सीडलस उरेली, सीडलसलेट, एयरली लार्ज रेड, कलकत्ता, रोससेन्डन्ट, खट्टी, गुलाबी इत्यादि किस्मों की खेती होती है।

कैनीकरण के लिए पेड़ में पके फल उत्तम माने जाते हैं, इनके छिलके अलग कर भीतर से बीज निकालकर गूदा अलग किया जाता है। इन्हें साधारण कैनों में भरकर 40° ब्रिक्स की चाशनी से, जिसमे 0.5 प्रतिशत अम्ल मिला हुआ हो, तैराया जाता है। इसके बाद निर्वातीकरण, संसाधन आदि अन्य फलो की भाँति, विधेयक बनाकर पूर्ण रूप से शीतलीकरण करना चाहिए ताकि भवन-ताप से कम ताप मे ठण्डी हो जाय, अन्यथा कैनीकरण के पश्चात् उत्पाद मे लाल वर्ण हो जाता है।

लोकाट

लोकाट की जन्म-भूमि जापान मानी जाती है। इसकी खेती उत्तर भारत के कुछ क्षेत्रो जैसे—उत्तर प्रदेश, पजाब, दिल्ली, महाराष्ट्र तथा पूर्वी क्षेत्र मे आसाम, दक्षिण मे तमिलनाडु, कर्नाटक आदि में होती है। इसकी 1012 हैक्टेयर भूमि मे खेती की जाती है। इसकी कुछ प्रमुख किस्में हैं, गोल्डनयैलो, इम्प्रूवट, तोम्सप्राइड, लार्जआगरा, तनाका, फैयरबोल इत्यादि। पेड़ मे पूर्ण रूप से विकसित पके फलों में अधिक सुगन्ध तथा मिठास होता है। इन्ही फलों को कैनीकरण के लिए चुना जाता है। फलों को धोकर उसका पतला छिलका उतार लिया जाता है, तुरन्त बाद इन्हें दो भागो में कतर लिया जाता है। कतरे हुए फलों को काँच की बरनियों में भरकर 40° ब्रिक्स को शर्करा-चाशनी से तैराया जाता है। शीर्षस्थान 1·25 सेंटीमीटर छोड़ना चाहिए। इन्हें जल-ऊष्मक में 71° से 77° सेंटीग्रेड तक गर्म कर उसी तापमान मे 10 से 12 मिनट तक समय प्रदान कर निर्वातीकरण किया जाता है। तुरन्त बाद सीलबन्द कर जल-ऊष्मक मे 25 से 30 मिनट समय देकर संसाधन किया जाता है। बाकी सब क्रियायें अन्य फलो की भाँति सम्पन्न की जाती हैं।

शहतूत

यह शीत तथा समशीतोष्ण-मेखलीय फल है। भारत मे कर्नाटक प्रान्त में इसकी खेती अधिक होती है। इस फलवृक्ष का जन्म स्थान भी जापान है। भारत मे इसकी दो किस्में पाई जाती हैं—मोरसअलबा तथा मोरस रूबा।

पेड़ो में पके फलो को एकत्र कर कैंची से उसके डण्ठल कतर लेते हैं, साथ ही फलो का श्रेणीकरण भी किया जाता है। इन्हें अच्छी तरह धोकर, पानी निसारकर (छालनी से). सीधे कैनों में भरा जाता है, परन्तु कैन लैकीकृत हुआ होना आवश्यक है। इन्हे 40° से 50° ब्रिक्स की शर्करा चाशनी से तैरा दिया जाता है। इसके निर्वातीकरण, ससाधन आदि क्रियायें अन्य फलो की भाँति सम्पन्न करायी जाती हैं।

शीत-प्रदेशीय फलों का कैनीकरण

सेव

भारत में सेब की खेती साधारणतया हिमालय की घाटियों, उत्तर-प्रदेश, हिमाचल प्रदेश, पंजाब, जम्मू-कश्मीर, आसाम, नीलगिरि पहाड़ आदि क्षेत्रों में की जाती है। भारत के सेब की कुछ अच्छी किस्में हैं—डेलीशियस, यैलोन्यूटन, पिपिन, वाइनसैप, स्पीटनबर्क, रूसेट, वैंडमिन, जोनाथान, रोमब्यूटी इत्यादि।

कैनीकरण के लिए ऐसे सेबों को चुना जाता है जो अधिक सुगन्धित तथा ठोस हों। इसके लिए एक ही आकार तथा एक ही किस्म के सेबों को ही चुना जाना चाहिए। चुने हुए सेबों में किसी प्रकार की विकृति नहीं होनी चाहिए।

सेबों को खूब धोना चाहिए ताकि पौध-संरक्षण के लिए प्रयोग की गयी ताम्रयुक्त रसायन का अंश भी धुल जाये। इस विषय में पहले ही चर्चा की जा चुकी है। अगला कदम छिलका उतारना है। यह भी मानव-शक्ति या यन्त्र-शक्ति से किया जाता है। इसके बाद फलों को चार बराबर फाँकों में कतरा जाता है तथा बीज-कक्षा को निकाला जाता है। इस क्रिया को कोरिंग कहते हैं। प्रत्येक फाँक की 32 से 64 मिलीमीटर मोटाई रखी जा सकती है, लेकिन छिलका उतारकर कोरिंग के तुरन्त बाद इन्हें दो प्रतिशत लवण-घोल में रखना चाहिए, अन्यथा फल में बभ्रुकरण हो जायेगा—जो ऑक्सीकरण से होता है। ऑक्सीकरण, सेब के फल में पायी जाने वाली किण्वक (एंजाइम) के कारण सम्पन्न होता है। लवणघोल में डालने से किण्वक क्रिया बन्द हो जाती है, क्योंकि वायु का सम्पर्क टूट जाता है और लवण बभ्रुकरण को रोकता है।

सम्पूर्ण रूप से कतरने के बाद टुकड़ों को लवणघोल से निकालकर साधारण पानी में धोया जाता है, तुरन्त बाद विवर्णीकरण के लिए भापयुक्त कोष्ठ में रखा जाता है। वैसे तो जल-ऊष्मक में भी विवर्णीकरण किया जा सकता है। फलस्वरूप सेब के टुकड़ों में रहे ऑक्सीडेज नामक किण्वक निष्क्रिय ही नहीं हो जाते अपितु फलों के टुकड़ों में पायी जाने वाली वायु भी वहाँ से निकल जाती है। इस क्रिया से भविष्य में कैनीकृत सेब उत्पाद खराब नहीं होता। इसके अलावा कैनों में अदृश्य छिद्र भी नहीं होने देते। इसके बाद इन्हें मसाधन किया जाता है। कैनों में भरे फलों को तैराने के लिए कम मात्रा की शर्करा-चाशनी (50° ब्रिक्स की) काफी है। सन् 1951 में मोरिस ने प्रतिवेदन दिया कि उपर्युक्त परिस्थिति में कैनीकृत सेबों में सुगन्ध तथा वर्ण धारित रहा।

कैनों में से वायु पूर्ण रूप से निकाली नहीं जाती तो भी अदृश्य छिद्र, संक्षारण आदि के लिए प्रेरक बन जाते हैं। सेब में पाया जाने वाला मलिक अम्ल भी संक्षारण के लिए सहायक होता है। इस दोष को दूर करने के लिए भी विवर्णीकरण तथा निर्वातीकरण आदि की क्रियाएँ सतर्कता से सम्पन्न की जानी चाहिए।

सेब के कैनीकरण के समय करीब 35 प्रतिशत अवशेष, जैसे—छिलका, बीज-कक्ष आदि छोड़ दिया जाता है। व्यावसायिक स्तर पर इसमें जैली, पैक्टिन, सिरका आदि बनाया जा सकता है।

नासपाती

सेब की भाँति नासपाती भी विदेशों द्वारा भारत मे लाई गई थी। आज इसकी खेती समुद्र-तट से 1525 से 2135 मीटर ऊँचाई प्रदेशो मे विशेषकर काश्मीर, पंजाब, कुलुवैली, नालगिरि, कोडाइकनाल आदि क्षेत्रों में की जाती है।

पेड़ पर पूर्ण विकसित नासपाती फलों को ही कैनीकरण के लिए चुना जाता है। इसकी पक्वता परीक्षण द्वारा मालूम की जाती है। प्लंजर नामक उपस्कर द्वारा इसका परीक्षण किया जाता है। ऐसे एक-दो फलों को तोड़कर लाते हैं, जिनके पूर्ण विकसित होने का आभास हो। तुरन्त इनका छिलका उतारा जाता है तथा प्लजर को उसमें घुसाते है। यदि प्लजर 8 सेंटीमीटर फल में घुस जाता है और 17 से 18 पौण्ड दबाव उसके स्केल मे अंकित होता है, तो समझ लेना चाहिए कि परीक्षित फल की श्रेणी के सम्पूर्ण फल उचित स्तर तक विकसित हो चुके हैं तथा उन्हें तोड़ सकते हैं, अन्यथा नही। परन्तु लालसिंह तथा गिरधारी लाल के अनुसार कुलुघाटी की विलियम किस्म की नासपातियों का दबाव अगर 13 से 14 पौण्ड हो तो कैनीकरण के लिए इन्हें चुना जा सकता है।

उपर्युक्त विधि से तोड़े गये फलों को यथाविधि पेटियों मे पैकिंग कर विपणन के लिए अथवा केनीकरण के लिए भेजा जाता है। चाहे गये स्थान पर पहुँचने के लिए 4 से 9 दिन का समय लगता है। इस बीच मे नासपाती पक भी जाती है। फलस्वरूप नासपाती के परिवहन समय मे खराब होने की सम्भावना नही रहती। भारत की कुछ विशेष किस्मे हैं—लिकोटे, कीफर, बाहुगोसा, विलियम्स, नासपाती, नाख, विण्डर, मैलिस बीयूरेहारडी, बासक्यू, क्रस्तुमस, स्वीट इत्यादि।

जैसा कि पहले ही कहा जा चुका है, पूर्ण विकसित नासपाती को श्रेणीकृत कर धो लेते है। तुरन्त बाद इनके छिलके तथा अनचाहे भाग को अलग किया जाता है। सेबों की भाँति कतरकर बीज-कक्ष अलग कर 2 प्रतिशत लवण-घोल मे डालकर वभ्रूकरण को रोकते है। नमक के बजाय साधारण जल भी इसके लिए काम मे लिया जा सकता है। लवण-घोल से निकालकर फलो को साधारण पानी में धोकर केनों में भर दिया जाता है। बटर साइज केनों में 310 ग्राम तथा 0 3 प्रतिशत अम्लयुक्त शर्करा-घोल, जिसका ब्रिक्स 40° हो, से तैरा देना चाहिये। तदुपरान्त अन्य केनीकरण विधियों को अपनाकर संसाधन किया जा सकता है। विदेशों में उपभोक्ताओं के आग्रह पर 10 से 40 डिग्री ब्रिक्स के भिन्न-भिन्न शर्करा-घोल में भी नासपाती का कैनीकरण किया जाता है, इसमें अम्लीकरण अनिवार्य होता है।

निर्वातीकरण 78° से 80° सेन्टीग्रेड (140° से 145° एफ०) तापमान में 10 मिनट रखकर सम्पन्न किया जाता है, तुरन्त बाद वायुरुद्ध अवस्था में सीलबन्द कर जल-ऊष्मक में 30 मिनट समय देकर संसाधन किया जाता है। नासपाती के कैनीकरण में भी करीब 32 प्रतिशत अवशेष मिलते हैं, जिनसे ब्राण्डी, सिरका आदि बना सकते है या उन्हे पशु-आहार के रूप में विपणन कर लाभ उठाया जा सकता है।

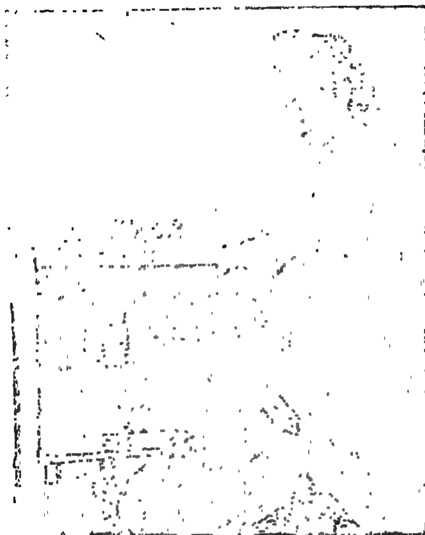
आडू या पीच

देश के उत्तर-पश्चिम सीमान्त प्रदेश मे इसकी अधिकाँश खेती होती है। हिमालय घाटी मे भी इसकी खेती का प्रसार आजकल हो रहा है। इसकी कुछ विशेष किस्में हैं—अलकसण्डर, ड्यूक ऑफ यार्क, ऐयरलीब्रिड्स, ऐयरली रिवर्स, एलबर्ट, नोवल्स, ट्रिम्ब इत्यादि।

भारत मे इसका कैनीकरण नही होता, परन्तु भविष्य मे होने की सम्भावना को अस्वीकार नही किया जा सकता। ससार का एक प्रमुख कैनीकरणोत्पाद है, पीच। संयुक्त राज्य अमेरिका में यह एक प्रमुख फल माना जाता है, जहाँ विलगस्टोन, टुस्कान अथवा टुस्कैटा, मिटसुमर ग्रुप्स, कुछ फिस्टोन, ग्रुपस्टोन इत्यादि किस्में कैनीकरण के लिए वहाँ ली जाती है।

कैनीकरण के लिए अन्य फलो की भाँति एक ही किस्म के एक ही आकार के समान परिपक्व ठोस फल चुने जाते हैं। इन्हे उबलते पानी मे या एक से दो प्रतिशत क्षारीय-घोल मे 30 से 60 सेकिण्ड डुबोया जाता है। इसके बाद ठण्डे जल मे डाला जाता है। एकदम तप्त अवस्था के फल, एकदम ठण्डी अवस्था मे पहुँचाने से उनका पतला छिलका फट जाता है, इन्हें किसी पत्ती के सहारे हाथ से निकाला जा सकता है। छिलका उतारने के तुरन्त बाद 80° से० के (172° एफ०) तापमान जल मे धोकर निकालते हैं, ताकि क्षारीय अंश उसमें से दूर किया जा सके। साथ ही साथ ऑक्सीडेज नामक किण्वक को भी निष्क्रिय बनाया जा सके।

इन फलों की उनकी धारी के आधार पर फाँके बनाई जाती हैं, कुछ कारखानो में चार फाँकों मे भी कतरा जाता है। इसके साथ ही बीज भी अलग किया जा सकता है। इन फाँकों को 2 प्रतिशत लवण-घोल मे रखा जाता है, फलस्वरूप उनमे किण्वक बभ्रूकरण नही होगा। वाहिकाओ मे भरने के पहले निकालकर, धोकर, भरा जाये। ए० 2½ कैनों मे 525 ग्राम से 600 ग्राम फल भरा जा सकता है। इसमे साधारणतः 10° से 55° ब्रिक्स की शर्करा-चाशनी मिलाई जाती है। उपभोक्ताओं की इच्छा को दृष्टि मे रखते हुए 55° ब्रिक्स की चाशनी से भरा जाना भी सामान्य है। इसके बाद अन्य कैनीकरण प्रक्रिया विधेयक बनाकर 100° से 110° एफ० पर ठण्डा कर संचयन किया जाता है। कुछ कारखानों मे मसाले भी मिलाये जाते हैं, फलस्वरूप 3 महीने तक संचयन के बाद भी यह देखा गया कि उसमे काफी सुगन्ध है। (चित्र संख्या 42)



चित्र संख्या 42

प्लम या आलूबुखारा

आलूबुखारे को रैडप्लम भी कहा जाता है। इसका कैनीकरण इंग्लैण्ड की एक विशेषता है। इसके लिए कुछ योग्य,किस्में हैं—ग्रीनगेज, यैलोऐग, रैड विक्टोरिया, परपोर, इत्यादि। संयुक्त राज्य अमेरिका में भी इन्हीं किस्मों को कैनीकरण के लिए चुना जाता है। इनका वर्गीकरण कर, धोकर, प्रत्येक फल को आंवले की भाँति गोद लिया जाता है। कुछ बड़े फलों में से बीज निकाले जाते हैं। इसके लिए फलों को दो टुकडों में कतरा जाता है। आलूबुखारा का दो प्रकार से कैनीकरण होता है, एक तप्त विधि द्वारा दूसरा कच्ची विधि द्वारा।

तप्त विधि

40° ब्रिक्स शर्करा-चाशनी तैयार कर उसमे तैयार किये फल मिलाकर उबालें। अगर आलूबुखारे की किस्म रसदार हो तो उसमे बराबर मात्रा में शर्करा मिलाकर उबालना चाहिए। इन्हें गर्म-गर्म, वाहिकाओ मे भर लें, काँच की बरनियों मे भरें तो 13 मिलीमीटर शीर्षस्थान छोड़कर भरना चाहिए और इसके बाद शर्करा-चाशनी से तैरा दिया जाये। इस समय उपर्युक्त शीर्ष-स्थान बनाये रखना चाहिए। कैन में भरते हैं तो 6 मिलीमीटर शीर्षस्थान छोड़ना काफी होगा। निर्वातीकरण 170° फारनहीट पर 10 मिनट समय देकर सम्पन्न कराना चाहिए तथा अन्य कैनीकरण प्रक्रियाएँ यथाविधि सम्पन्न कराई जाये।

कच्ची विधि

इसमे फल तथा चाशनी या रसदार फल तथा शर्करा को बिना उबाले वाहिकाओ मे भरा जाता है। अन्य कैनीकरण क्रियायें उपर्युक्त फलो के कैनीकरण की तरह ही सम्पन्न की जाती हैं। ध्यान रखें कि कैन मे भरे जाते हैं तो वे फूट लैकीकृत होने चाहिए, अन्यथा सचयन काल मे अवश्य छिद्र पैदा होकर उत्पाद खराब होने की सम्भावना रहती है।

ऐप्रीकाट या खुबानी

खुबानी या ऐप्रीकाट की खेती काश्मीर, उत्तर प्रदेश, पंजाब आदि प्रदेशों मे की जाती है। इसकी कुछ विशेष किस्में हैं—कैशा, न्यूकास्टल, शिवली ऐरली, सैंट अम्ब्रोइस, मोरपार्क, टिलटन इत्यादि। खुबानी दो रंगो में पाई जाती है—सफेद तथा पीली। पीले रग वाली सुगन्ध-युक्त होती है। यह फल कैनीकरण के योग्य है, परन्तु चुने हुए फल ठोस ही नहीं, अपितु रगीन तथा सुगन्ध वाले होने चाहिएँ। इस अवस्था वाले फलो को कैनीकरण-पक्वता कहा जाता है। इसके लिए पेड़ो मे पूर्ण विकसित फल होने चाहिएँ, जिसमें हरा वर्ण रहे। कैनीकरण के लिए खुबानी का छिलका नही उतारा जाता। अन्य सारी कैनीकरण प्रक्रियाएँ समान है।

चैरी या जिलासा

चैरी को पजाबी मे जिलासा कहते है। यह दो विभिन्न किस्मो की होती है, एक मीठी जिलासा तथा दूसरी खट्टी। मीठी जिलासा को प्रूनस सिरासस कहा जाता है। इसकी अधिकांश खेती काश्मीर घाटी मे होती है, परन्तु कैनीकरण के लिए प्राप्त नही होती। चैरी संयुक्त राज्य अमेरिका तथा अन्य विकसित देशो का एक प्रमुख कैनीकरण योग्य फल है।

कैनीकरण के लिए खट्टी जिलासा चुनी जाती है, इसकी अधिक अम्ल वाली तथा कम अम्ल वाली दो उप-किस्में होती है। कैनीकरण के लिए योग्य किस्मे हैं—मैरीड्यूक, कॅडिसरॅड, फिलिप्स इत्यादि। मोरेलो नामक किस्म का रग श्याम-वर्ण होता है जो बड़े आकार की होती है। कैनीकरण के लिए साधारणतया 45° ब्रिक्स की शकरा चाशनी काम मे ली जाती है।

मीठी जिलासा का वर्ण गहरा लाल या गुलाबी होता है। इसके गूदे का रग मलाईनुमा होता है। फल छोटे होते हैं, परन्तु वाईटहार्ट चैरी बड़ी तथा मलाईनुमा गूदायुक्त होती है। रॉयल एन, बिगरेऊ नेपालियन, कैन्डिस बिगरेऊ इत्यादि किस्मे भी कैनीकरण के लिए उपयोगी हैं।

फलों को धोकर श्रेणीकरण किया जाता है, एक बार के लिए एक ही किस्म की जिलासा काम मे ली जाती है। मीठी जिलासा को साबुत तथा खट्टी को दो फांक कर, बीज निकाल दिया जाता है। कैनीकरण के लिए इसमे 10° से 45° ब्रिक्स की शर्करा-चाशनी काम में ली जाती है। भारत में खट्टी जिलासा के लिए 45° तथा मीठी के लिए 40° ब्रिक्स का शर्करा-घोल काम में लिया जाता है। इसके लिए कैन हो तो फ्रूट लैकीकृत होना अनिवार्य है।

कच्ची विधि

कांच की बरनियों मे जिलासा को ठूंस-ठूंस कर भरा जाता है, तुरन्त बाद शर्करा-चाशनी से तैराया जाता है। शीर्षस्थान 13 मिलीमीटर छोडते हैं, इन्हें निर्वातीकरण कर तुरन्त सीलबन्द कर जल-ऊष्मक मे 212° से० मे ससाधन किया जाता है। कैनो में भी ये इसी प्रकार भरी जाती है। शीर्षस्थान 6 मिलीमीटर छोड़ना काफी होगा। निर्वातीकरण 170° एफ० पर 10 मिनट समय देकर सम्पन्न कराकर जल-ऊष्मक मे संसाधन करना चाहिये। नम्बर टू कैनो के लिए 20 मिनट तथा नम्बर $2\frac{1}{2}$ कैनों के लिए 25 मिनट ससाधन समय प्रदान करना आवश्यक है।

तप्त विधि

एक बर्तन मे जिलासा लेकर उसमें आवश्यकतानुसार शर्करा मिलाई जाती है। बिना कतरे हुए फलो मे थोड़ा पानी भी डाला जा सकता है। इन्हें उबालकर, कांच की बरनियो में भरकर, निर्वातीकरण कर, सीलबन्द कर जल-ऊष्मक मे संसाधन किया जाता है। 568 ग्राम धारक-शक्ति की कांच की बरनियो को 20 मिनट तथा 1137 ग्राम की बरनियों को 3 मिनट समय प्रदान कर ससाधन करें। ससाधन के बाद बरनियो को काष्ठ के तख्ते पर या तत्तुल्य वस्तु पर शीतलीकरण के लिए रखा जाता है। कैनो को 170° फारनहीट मे 10 मिनट समय देकर निर्वातीकरण कर जल-ऊष्मक मे ससाधन किया जाता है। नम्बर टू कैनो के लिए 15 मिनट तथा $2\frac{1}{2}$ कैनो के लिए 20 मिनट समय देकर ससाधन किया जाता है।

सरस फल या बरीज

देश मे यह फल उतना सर्व-साधारण नहीं है, परन्तु संयुक्त राज्य अमेरिका, ब्रिटेन तथा अन्य पश्चिमी देशो मे यह अधिक पाया जाता है। वे है—ब्लैकबरीज, रसबरीज, स्ट्राबरीज इत्यादि। भारत मे इसकी एक किस्म ही पायी जाती है, जिसको रसभरी कहते हैं। सरसफलों को तोड़ते ही कैनीकरण विधेयक बनाना चाहिए।

कच्ची विधि

स्ट्राबरी छोड अन्य सरसफलो को कांच की बरनियों मे 13 मिलीमीटर शीर्षस्थान छोड़कर सरसफल भरा जाता है तथा 40° या 50° ब्रिक्स की शर्करा-चाशनी से तैराया जाता है, ताकि उपर्युक्त शीर्षस्थान बना रहे। इन्हें निर्वातीकरण कर जल-ऊष्मक मे ससाधन किया जाता हैं। 568 ग्राम धारक शक्ति की कांच की बरनियो को 20 मिनट तथा 1137 ग्राम की बरनियो को 30 मिनट समय देकर संसाधन करना चाहिए। कैनो मे भरते समय 6 मिलीमीटर शीर्षस्थान छोड़ना चाहिए तथा नम्बर टू कैनों के लिए 10 मिनट, नम्बर

$2\frac{1}{2}$ कैनो के लिए 12 मिनट तथा नम्बर 10 के लिए 25 मिनट समय देकर संसाधन करना चाहिए, जो ऊष्मक में होता है।

तप्त विधि

सरसफलो मे आवश्यकतानुसार शर्करा मिलाकर 8 मिनट उबालना चाहिए। कांच की बरनियो मे भरकर जैसे कच्ची विधि मे बताया गया है, उसी अनुसार संसाधन किया जाता है। कैनो मे भरते समय 13 मिलीमीटर शीर्षस्थान छोड़ना आवश्यक है। बाकी सब क्रियाएँ अन्य कच्ची विधि के अनुसार ही हैं।

स्ट्राबरीज

स्ट्राबरीज को ठोस तथा अच्छे वर्ण, सुगन्ध-युक्त होना चाहिए। इसकी दो प्रमुख किस्में हैं, बिलोनसिस तथा बस्का। स्ट्राबरीज की हिमालय के 1524 से 3048 मीटर ऊँचे क्षेत्रों मे खेती की जाती है। इन्हें एक-एक करके ट्रे में भरा जाता है। यदि अन्य फलों की भाँति एक के ऊपर एक रख दिया जाये, तो शीघ्र खराब हो जाते है। इसलिए फलों को एक दूसरे के सम्पर्क मे तथा एक के ऊपर एक नही रखना चाहिए। फलो को एकत्र करते ही कैनीकरण क्रिया विधियक बना दिया जाता है। कैनीकरण फ्रूट लैकीकृत कैनो मे किया जाता है, अन्य संसाधन क्रियाएँ इस प्रकार हैं—फलो को धोकर, उसका डण्ठल निकालकर, लैकीकृत कैनों मे भरा जाता है। उसमे भरी जाने वाली चाशनी ब्रिक्स 50° की होनी चाहिए। शीर्ष-स्थान 13 मिलीमीटर छोड़ें। नम्बर 2, नम्बर $2\frac{1}{2}$ तथा नम्बर 10 कैनों को क्रमश: 10, 15, 20 मिनट समय तथा 568 ग्राम धारक कांच की बरनियो को तथा 1137 ग्राम की बरनियो को यथा-विधि 15 मिनट समय प्रदान कर ससाधन करना चाहिए। अन्य क्रियाएँ अन्य फलो की भांति हैं।

कुछ मिश्रित फलों का कैनीकरण

इसमे मुख्यतया खरबूजे को एक या दो अन्य फलों के साथ कैनीकृत किया जाय तो अधिक स्वाद तथा नवीनता पाई जायेगी। इसके लिए निम्न प्रकार मिश्रण किया जा सकता है। भराई, शीर्षस्थान, निर्वातीकरण, ससाधन क्रिया आदि कैनीकरण प्रक्रिया अन्य फलो की भाँति ही है। शर्करा चाशनी की ब्रिक्स डिग्री 40 रखी जा सकती है।

मिश्रण 1	खरबूजा + रसपुरी आम	(4 : 6 या 6 . 4)
,, 2	,, + अनन्नास	(,,)
,, 3	,, + अगूर	(,,)
,, 4	,, + रसपुरी आम अनन्नास	(4 : 2 : 4)
,, 5	,, + पपीता + अनन्नास	(4 : 2 : 4)
,, 6	,, + पपीता + अगूर	(,,)
,, 7	,, + केला + अनन्नास	(,,)
,, 8	,, + केला + अम्लीकृत शर्करा	(4 : 6)

विभिन्न फल-रसों का कैनीकरण

फलो मे से फलरस यथाविधि निकालकर उसमे आवश्यतानुसार, चाहें तो शर्करा मिला सकते हैं। रस बनाने की विधि पहले ही बताई जा चुकी है। फलरस को 185° सेंटीग्रेड से 210° फारनहीट तक गर्म (पास्तुरीकरण) किया जाना चाहिए, लेकिन उबलने न दें। कांच की बरनियो में 13 मिलीमीटर शीर्ष-स्थान छोड़कर, भर कर, सीलबन्द कर, 212° एफ० पर जल-ऊष्मक में ससाधन करें। कैनो में 6 से 8 मिलीमीटर शीर्ष-स्थान छोड, भरकर सीलवन्द कर जल-ऊष्मक में संसाधन किया जाय। इसी प्रकार आप विभिन्न फलो के रस कैनीकरण कर सकते हैं।

लेहनुमा फल-गूदा (Fruit Puree)

कुछ कम रसदार फलों का छिलका तथा बीज अलग कर, पल्पिग मशीन की सहायता से गूदा बना लेते हैं। इन्हें 180° से 210° फारनहीट तापमान पर ऊष्मीकरण कर छान लेते हैं, ताकि इनका रेशा आदि अनचाहे भाग अलग हो जायें। इसके लिए एक विशेष छननी काम में ली जा सकती है, जहां घरेलू-स्तर पर बनाया जाता है, तो छाने हुए फल-गूदे को पुनः गर्म किया जाता है। कांच की बरनियो में 13 मिलीमीटर शीर्षस्थान छोड़कर सीलबन्द कर जल-ऊष्मक में (212° एफ०) तापमान पर 10 मिनट समय प्रदान कर संसाधन करना चाहिए।

कैन में भरते समय शीर्ष-स्थान देने की आवश्यकता नही होती, परन्तु 170° फारनहीट ताप कैन के केन्द्र में पहुँचने के लिए निर्वातीकरण करना चाहिए, तुरन्त बाद सीलबन्द कर जल-ऊष्मक में 10 मिनट समय देकर ससाधन करना चाहिए। इसी प्रकार आम, कटहल, खरबूजा, पपीता, आदि के फल-गूदे का कैनीकरण कर भविष्य में काम में लिया जा सकता है।

आम का छिलका उतारकर, गूदे को अलग करें। इस गूदे को दबाव से चलने वाली छलनी की सहायता से छाप लें ताकि रेशे अलग हो जायें। इसमें 30 प्रतिशत शर्करा तथा 0·5 प्रतिशत साइट्रिक अम्ल मिलाकर (जैसे पहले बताया जा चुका है) छानकर, बोतल, कांच की बरनी या कैनो में भरकर जल-ऊष्मक में संसाधन किया जा सकता है और यह भविष्य में आम-रस तथा अन्य फल-पेय बनाने के लिए काम में लिया जा सकता है। अगर दशहरी, लगड़ा, नीलम आदि आमों को चुना जाये तो अधिक उत्तम रहता है। आम के अन्य उत्पादो की भाँति इसमें भी रंग या सुगन्ध नही मिलानी चाहिए।

टमाटर

फल तथा तरकारी को जोडने वाली एक तरकारी है, टमाटर। इसमें अम्ल पाये जाने के कारण इसकी परिरक्षण प्रक्रिया फलो की भाँति होती है। इसके अलावा टमाटर में विटामिन-सी भी अधिक होता है। कैनीकरण के लिए उन्ही टमाटरो को चुनना चाहिए, जो पौधे पर ही पूर्ण विकसित होकर पके हुए हो। इनका रग भी सुर्ख लाल होना चाहिये। कैनीकरण के लिए चुनने वाली किस्मों में अधिक गूदा तथा कम जलांश होना चाहिये। इसके लिए शीतकालीन टमाटर अधिक उत्तम माना जाता है। एकत्र होते ही इनका तुरन्त कैनीकरण विधेयक बना देना चाहिये।

टमाटर छीलना

टमाटरो को बड़ी टंकियो मे पहले भिगो दिया जाता है, जहाँ इसके डण्ठल ग्रादि ग्रनचाहे भाग ग्रलग कर, धोकर, जल वर्षा द्वारा पुनः धोकर टमाटरो को उबलते पानी में या शक्ति-युक्त भापकोष्ठ मे $1\frac{1}{2}$ या 3 मिनट समय देकर ऊष्मोपचार किया जाता है, तुरन्त बाद इन्हे पास वाले ठण्डे जल मे डुबोकर पीच की भांति छिलका उतारा जाता है। उपर्युक्त क्रिया से टमाटर का छिलका फट जाता है, इन्हे हाथ से शीघ्र निकाल लेना चाहिये। बड़े-बड़े कारखानो मे उपर्युक्त क्रियाएँ यन्त्र द्वारा ही की जाती हैं। छिलका उतरे हुए टमाटरो को स्ट्राबरी की भांति ट्रे मे दूर-दूर सजाया जाता है, ताकि वे फटें नहीं। इन टमाटरो को ग्राकार के ग्राधार पर दो या चार टुकड़ो मे कतरकर या साबुत ही वाहिका मे भरा जा सकता है।

कच्ची विधि

कांच की 568 तथा 1137 ग्राम धारक शक्ति की बरनियो मे 13 मिलीमीटर शीर्षस्थान छोड़कर भरना चाहिये। इसमें चाय की ग्राधी चम्मच नमक तथा चाहे तो ग्राधा चम्मच शर्करा मिलाकर उसमे उबलता पानी या उबलता टमाटर रस मिलाकर, निर्वातीकरण कर, वायुरुद्ध ग्रवस्था मे सीलबन्दी कर जल-ऊष्मक में (212° एफ०) 35 तथा 55 मिनट यथाक्रम समय प्रदान कर, संसाधन करें। कैनो मे इसी प्रकार टमाटर टुकड़ो को भरें, लेकिन कैनो को गद्दीदार फर्श पर धीरे-धीरे ठोक-ठोककर भरा जाना चाहिये, ताकि उचित मात्रा मे भराई हो सके ग्रौर उसमें वायु न रह सके। इसमे भी यदि चाहें तो उपर्युक्त मात्रा मे नमक तथा शर्करा मिलाई जाती है ग्रौर जल या टमाटर रस भी। इन्हे 170° फारनहीट पर 15 मिनट निर्वातीकरण कर विभिन्न कैनो को क्षमतानुसार समय प्रदान कर संसाधन करना चाहिये, जो पूर्व-वर्णित है।

तप्त विधि

उपर्युक्त विधि से कतरे हुए टमाटर-टुकड़ो को उबाला जाता है, लेकिन ये बर्तन के पैंदे मे लगकर जलने नही चाहिये। फिर इन्हे वाहिकाग्रो मे भरकर धारक शक्ति के ग्राधार पर कैनीकरण क्रिया सम्पन्न कराई जाती है।

टमाटर रस

इसके लिए गूदे कम ग्रौर ग्रधिक रस वाले ऐसे टमाटर चुनने चाहियें, जिनका रंग सुर्ख लाल हो। इन्हें भी ग्रन्य सभी पूर्ण कैनीकरण क्रिया विधेयक बनाकर, कतरकर, उसी के रस मे 10 से 15 मिनट उबालकर यन्त्र की सहायता से रस निकाला जाता है। इसमे 4 प्रतिशत शुद्ध नमक तथा 0.1 प्रतिशत शर्करा मिलाकर उबाला जाता है। उबलते ही इन्हें कांच की बोतलों में या बरनियो में 13 मिलीमीटर शीर्ष-स्थान तथा कैनो मे बिना शीर्ष-स्थान ही भरकर तुरन्त सीलबन्द कर, जल-ऊष्मक में वाहिका की धारक शक्ति के ग्राधार पर 10 से 30 मिनट समय देकर संसाधन कर संचयन किया जाता है। ध्यान रखें सभी उत्पादों का संसाधन करते समय समुद्र-तट ऊँचाई जितनी ग्रधिक होगी, उसके ग्राधार पर संसाधन समय में भी बढ़ोतरी होगी।

उपर्युक्त फलो के उत्पादो के ग्रलावा सेव, ग्रांवला इत्यादि फलो के मुरब्बे ग्रादि तथा विभिन्न फल-तरकारियों मिश्रियों (पेठा) ग्रौर रसगुल्ला, गुलाब-जामुन ग्रादि को भी ग्रन्य खाद्य-पदार्थों की भांति कैनीकरण किया जाता है।

कैनीकृत उत्पादों में संभावित खराबियाँ

कैनीकृत उत्पादों के सचयन काल मे, चाहे सचयन गोदामो मे हों या विपणी मे, उनमे भिन्न-भिन्न कारणो से खराबियां हो सकती हैं। कुछ कैन फूले हुए नजर आयेंगे तो कुछ सिकुड़ जाते हैं। कुछ अन्य कैन निसरते भी नजर आते हैं। अगर कांच की वाहिकाओ मे बोतलीकरण किया हुआ हो तो उन्हे दुकान से लेते समय आप पाएँगे कि उसका वर्ण-भेद हो चुका है। फलस्वरूप उसमे मन-मोहकता प्रकट नही होती, चाहे फल या तरकारी खाद्य-योग्य क्यों न हो।

कुछ कैनीकृत पदार्थ घर ले जाकर खोलते समय उसमे दुर्गन्ध आती है या वर्ण-भेद हुआ दिखाई देता है अथवा खट्टापन महसूस होता है। उपर्युक्त सब कारणो से समझ लेना चाहिए कि कैनीकरण उत्पाद खराब हो चुका है। इसका मुख्य कारण सूक्ष्मजीवियो द्वारा उत्पन्न खराबियां तथा रासायनिक प्रक्रियाएँ होती है। यहां इस सम्बन्ध में कुछ अध्ययन करें।

(1) कैनों में सूजन (Can Swell)

कैनीकरण के समय हुई असावधानियों के कारण प्रविष्ठ सूक्ष्मजीव खाद्य-पदार्थ मे प्रक्रिया कर कार्बन-डाई-ऑक्साइड गैस छोड़ते हैं। फलस्वरूप कैन फूलने लगते हैं। प्रथम चरण में दोनों ढक्कन ऊँचे उठते नजर आयेंगे। इन्हे दाब दिया जाय तो दब जायेंगे। दबाव छोड़ते ही पुनः पूर्व अवस्था में आ जाते हैं। अगर आप इस प्रकार के कैनो को खोलकर देखें तो दुर्गन्ध महसूस होगी। भीतर रखे हुए खाद्य-पदार्थ का वर्ण भी बदल गया होगा। इस खराबी का मुख्य कारण क्लोस्ट्रिडियम बोटलीनम (Clostridium botulinum) नामक बैक्टीरिया की उपस्थिति है। यह सूक्ष्मजीव जान लेने वाले विष उत्पन्न करते हैं, जिसके बारे में अन्यत्र चर्चा की गई है। इसलिए उपर्युक्त खराबी वाले कैनीकृत खाद्य पदार्थों को तुरन्त नष्ट कर देना चाहिए, ताकि मानव का ही नही, अन्य जीवो को भी नुकसान न पहुँचे।

(2) हाइड्रोजन सूजन (Hydrogen Swell)

फलों में पाई जाने वाली अम्ल कैन के या कांच वाहिका के टिन से बनी ढक्कन से प्रक्रिया कर हाइड्रोजन गैस का निर्माण होता है, जो कैनों को विशेषकर फुला देते हैं। इस प्रक्रिया को सक्षारण (Corrosion) कहा जाता है। इस प्रक्रिया से पहले की भांति दोनों ढक्कनें फूलने लगती हैं। इस सूजन के कारण सूक्ष्मजीव नहो हैं, परन्तु यह खाने योग्य होते हुए भी विपणन योग्य नहो हैं।

(3) उठना या फूटना (Springer)

कैनीकरण के समय लापरवाही से कैनों में खाद्य-पदार्थों को ठूंस-ठूंस कर भरने से न्यून शीर्षस्थान छोड़ने से या पूर्णरूप से निर्वातीकरण न करने के फलस्वरूप उक्त खराबी उत्पन्न हो सकती है। इससे कैनों के ऊपरी ढक्कन या दोनों ढक्कनों में मामूली-सी फुल आ जाती है जिसको उठना या फूटना कहते हैं, जिसको अंग्रेजी में स्प्रिंजर कहते हैं। फूले हुए भागो को दबाने से यह दब जाते हैं तथा दबाव छोड़ते ही पुनः उठ जाते है। किन्तु खराबी से ग्रसित खाद्य-पदार्थ खाने योग्य होते है।

(4) प्रथम सूजन (Flipper)

कैनों को भरते समय आवश्यकतानुसार शीर्षस्थान न देना तथा अपूर्ण निर्वातीकरण क्रिया इत्यादि की वजह से प्राथमिक सूजन आ जाती है, इस खराबी वाले कैनों को एक दृष्टि में पहचानना कठिन है, इसलिए प्रत्येक कैन को मेज के किनारे पर हल्का-सा बजाकर देखते है तो वे तुरन्त फूलते हैं। इसको प्रथम सूजन या फ्लिपर कहते हैं।

(5) खट्टी बदबू (Flat Sour)

खट्टी बदबू आमतौर पर कैनीकृत फलो में नहीं पाई जाती परन्तु कैनीकृत तरकारी मे पाई जाती है। अम्ल-रहित खाद्य पदार्थों को अपूर्ण रूप से संसाधन करने से ऊष्मासह जीवाणुओं (बैक्टीरिया) का नाश नही होता। इसके अलावा जिस वाहिका मे खाद्य-पदार्थों को भरा जाता है, उन्हें सुचारु रूप से निर्जर्मीकृत न करना, तरकारियो को अच्छी तरह धोकर उसमे सम्भवतः पाये जाने वाले सूक्ष्मजीवियो की संख्या को कम न करना, संसाधन के बाद शीतलीकरण के लिए काम मे लिए गये पानी की अशुद्धता, कैनो मे अदृश्य छिद्र हो जाना—फलस्वरूप उसमे भीतर उपर्युक्त जल भर जाना, कैनो को रिटोर्ट मे उसकी क्षमता से अधिक सजाना या चाहा गया तापमान निर्धारित समय तक न देना आदि कारणो से या किसी एक कारण से संसाधित कैनीकृतोत्पाद भविष्य में खट्टी बदबू देने लगते है। इस प्रकार के पदार्थ में साधारणतया पायी जाने वाली अम्लता से अधिक अम्ल भी पाया जायेगा, लेकिन इस प्रकार की खराबीयुक्त कैनो को खोले बिना पहचानना असम्भव है। खट्टी बदबूदार कैनीकृत खाद्य-पदार्थों को खाना नही चाहिए।

(6) निसरना

संसाधन के बाद किया जाने वाला शीतलीकरण अगर भवनताप से कम हो जाये तो कैन के बाहर संक्षारण (जंग लगना) होकर, या भीतर होने वाली प्रक्रिया से कैन के भीतरी भाग में संक्षारण हो जाता है, इनमें से एक या दोनो के संयुक्त कारण से कैन मे अदृश्य छिद्र हो जाते हैं। इसके अलावा कैन निर्माण-शाला मे की जाने वाली संस्तरण (फैक्ट्रयन्ड) में या कैनीकरण शाला मे की जाने वाली संस्तरण (कैनरीयन्ड) मे होने वाली कमियों से निसरना होता है। इसके अलावा संचयन के समय मे तथा परिवहन के समय होने वाली लापरवाही के कारण रगड़ खाकर कैन मे छिद्र होकर निसरने लगता है, इसलिए कथित सब दोषों को दूर करने के लिए सावधानी बरतनी चाहिए।

(7) वायु संचार (Breather)

उपर्युक्त कारणो की वजह से होने वाले छिद्रों के कारण बाहर से वायु-प्रवेश होकर कैन के भीतर की रिक्तावस्था भग हो जाती है। इसको वायु संचार कहते हैं। इस दोष से खराब हुए खाद्य पदार्थ खाने के अयोग्य नही समझे जाते। कैन के भीतर भी उतना ही दबाव मिलेगा जितना वायु-मण्डल मे है।

(8) कैन फटना (Bursting of Cans)

कैन मे भरे हुए खाद्य-पदार्थ की सड़न-गलन की वजह से उत्पन्न गैस तीव्र रहे तो गैस के दबाव की वजह से कैन फटने लगते हैं। विभिन्न प्रकार की गैसें कैनो मे उत्पन्न हो जाती है, जिनके बारे मे हम पहले चर्चा कर चुके हैं।

कैनीकृत खाद्य पदार्थों में वर्णभेद

कैनीकृत खाद्य-पदार्थों मे उसके यथार्थ वर्ण में अन्तर तीन विभिन्न कारणो से होता है, वे हैं—(1) जैविक कारण (Biological), (2) धातुमालिन्य (Metallic Condamination), (3) अनियमित पाचकीकरण (Over Cooking) आदि।

(1) जैविक कारण

सेब, नासपाती आदि फलों का छिलका उतारते या कतरते समय भूरा रंग (बभ्रू) लगता दिखाई देगा। यह क्रिया किण्वक अर्थात् एन्जाइम के कारण होने वाली ऑक्सीकरण से है। इसको रोकने के लिए कैनीकरण पूर्व-क्रिया के अवसर पर जलोपचार या लवणोपचार किया जाता है, जिसके बारे मे उपयुक्त स्थानो पर चर्चा की जा चुकी है। अगर उपर्युक्त उपचार नियमितता एवं सतर्कता से नही किया जाता है, तो कैनीकृत खाद्य-पदार्थ मे वर्ण-भेद हो जाता है, जिसको जैविक कारण से होने वाला वर्ण-भेद कहा जाता है। इसके अलावा नाइट्रोजनी पदार्थ, शर्करा तथा जैविक अम्ल (फल अम्ल) की परस्पर क्रिया की वजह से वर्ण-भेद (बभ्रूकरण) हो सकता है। इसको मलाड क्रिया अथवा प्रक्रिया कहते हैं।

(2) धातुमालिन्य

निम्न श्रेणी के एल्युमीनियम, स्टेनलेसस्टील इत्यादि से बने बर्तनों या अधिक प्रयोग किये गये बर्तनो मे लगातार पाचकीकरण करने से तथा अन्य उपस्करो के सम्पर्क से खाद्य-पदार्थ मे धातु मिल जाती है, फलस्वरूप कैनीकरण उत्पाद मे वर्ण-भेद हो जाते है। मुख्य धातुमालिन्य, लोह-लवण, ताम्र-लवण आदि से उत्पन्न होता है।

ताम्र-मालिन्य

कैनीकरण की विभिन्न क्रियाओ के समय खाद्य-पदार्थों मे या उसमे मिलाये जाने वाले घोल में जाने या अनजाने ताम्र लग जाये तो वर्ण-भेद हो सकता है। भराई के यन्त्र ताम्र से बने होते हैं, जिसके ऊपर रांगालेपित होता है, कालान्तर मे रांगा हट जाने से फल मे ताम्र के सम्पर्क मे आकर वर्ण-भेद हो जाता है। सर्वप्रथम यह खराबी भुट्टे के कैनीकृत उत्पाद मे पायी गयी, जिसको ब्ल्यू ग्रे प्रभाव (Blue Gray Effect) कहा जाता है। ताम्र तथा पीतल से बने उपस्कर तथा यन्त्र सामग्रियो पर ताम्र ऑक्साइड जमी हुई दिख ई देती है। इन्हे कितना ही धोकर अलग करने की कोशिश करें, फिर भी कुछ न कुछ अंश खाद्य-पदार्थों में लग ही जाता है। आरम्भ मे इसकी मात्रा अधिक खाद्य-पदार्थों मे लगती है, बाद में मात्रा कम होती जाती है। इसी प्रकार उपर्युक्त धातुओं से बने उपस्कर तथा यन्त्रों के सम्पर्क में आने वाले खाद्य-पदार्थ कैनीकरण के बाद खाद्य-पदार्थ तथा हाइड्रोजन सल्फाइट दोनो की संयुक्त प्रक्रिया से ताम्र सल्फाइड बनती है। फलस्वरूप खाद्य-पदार्थ में वर्ण-भेद हो जाता है।

उपर्युक्त खराबियाँ पहले-पहले कैनीकृत मक्का के दानो (भुट्टा) में पाई गई थी, जहां एक तरह की सुर्ख हरा रंग-बाधा या कैनो की भीतरी दीवार में स्याही-सी निशानियाँ हो जाती हैं इन्ही कारणो से कैनीकृत उत्पाद काले पड़ जाते हैं, लेकिन उपर्युक्त दोष आधुनिक कैनीकरणोत्पाद में नहीं होता, क्योंकि आजकल करीब-करीब सभी यन्त्र उपस्कर एल्युमीनियम तथा स्टेनलेसस्टील से बनाए हुए होते हैं।

लोह सल्फाइड

कैनीकरण प्रक्रिया के समय जाने-अनजाने लोहा, फल तथा तरकारियों के सम्पर्क में आ जाये तो लोह-सल्फाइड उत्पन्न हो जाता है। इसके अलावा शुद्ध शर्करा के कारण उसमें पाई जाने वाली गन्धक ऑक्साइड भी इसका एक कारक है, क्योंकि हिमतुल्य शर्करा प्राप्त करने के लिए उसमें गन्धक-संयुक्त से उपचार किया जाता है। कैनीकृत पदार्थ में पाई जाने वाली यह सल्फर, संयुक्त कैन की काया से प्रक्रिया कर लोह सल्फाइड बनती है, क्योंकि कैन में किये हुए रांगालेपन में हुए दोष के कारण लोह सल्फाइड बनना सम्भव है। वाहिका में विघटन के कारण भी लोह सल्फाइड उत्पन्न हो जाती है। उपर्युक्त सभी दोषों से कैनीकृत आहार को दूर रखा जाये तो भी कैन में भरे हुए फल-उत्पादों में पाई जाने वाली अम्ल कैन के भीतरी दीवार में क्रिया कर लोह सल्फाइड का निर्माण करती है जो काले वर्ण की होती है। यह सारे खाद्य-पदार्थ में पहुँचकर खराबी कर देती है। सन् 1924 में बोहरट ने प्रतिवेदन दिया कि लोह सल्फाइड-निर्माण को रोकने के लिए कैनों में जिंक ऑक्साइड का लेपन किया जाना चाहिए, क्योंकि जब कैनों के भीतर हाइड्रोजन सल्फाइड उत्पन्न होगी तो वह हाइड्रोजन सल्फाइड जिंक सल्फाइड के रूप में परिवर्तित हो जाती है। इस जिंक सल्फाइड का रंग सफेद होता है, फलस्वरूप खाद्य पदार्थ काले नहीं होते, इसलिए जिन खाद्य-पदार्थों में हाइड्रोजन सल्फाइड बनने की सम्भावना हो, उन्हें जिंक लेपित कैनों में भरना चाहिए।

यह भी देखा गया है कि कैनीकृत मटर भी काले हो जाते हैं, इसका भी कारण प्रोटीन विघटन ही है। कैनीकरण के पूर्व मटर का ऊष्मोपचार तथा उसके तुरन्त बाद अवक्षेपण (Precipitation) के कारण प्रोटीन विघटन उत्पन्न होता है। इसलिए मटर के कैनीकरण के लिए विवर्णीकरण कर, शीतकाल के पश्चात् उसमें अवक्षेपण नहीं होने देना चाहिए। सुचारु रूप से विवर्णीकरण कर सी० इनामेल कैनों में भरकर निर्वातीकरण कर संसाधन करना चाहिए।

फेरिक टानेट (Ferric Tannate)

कुछ फल तरकारियों में टैनिन होती है। इसके अलावा खाद्य-पदार्थों में मिलाये जाने वाले मसाले में भी टैनिन पायी जाती है। कैनीकरण के बाद संचयन काल में यह टैनिन कैन के भीतर की काया से सम्पर्क कर फेरिक टानेट का निर्माण करती है। यह काले रंग की होती है, जो खाद्य-पदार्थों को काला कर देती है। लौंग इत्यादि मिलाते समय उसका शीर्ष अलग कर देना चाहिए, क्योंकि इसमें टैनिन अधिक होती है।

हाइड्रोजन

कैन में होने वाली हाइड्रोजन गैस निर्माण को रोकने के लिए कैन लैकीकृत होनी चाहिए। परन्तु कुछ लोगों द्वारा लैकीकृत कैनों में संसाधन किए हुए खाद्य-पदार्थों में भी यह दोष देखा गया तथा अनुसन्धान से पता लगा कि लैकीकृत टिन चद्दरों से कैन बनाते समय बरती गई असावधानी के कारण उसमें खरोंच आ गई, फलस्वरूप हाइड्रोजन का निर्माण हुआ था। खाद्य-पदार्थों में, विशेषकर फल में पायी जाने वाली अम्ल कैन के भीतर चद्दर से प्रक्रिया कर हाइड्रोजन गैस का निर्माण करती है। यह गैस रंगीन फलोत्पाद में वर्णभेद कर देती है।

(3) अनियमित पकाई

अधिक ऊष्मा वाले प्रदेश में कैनीकरण किए हुए आड़ूफल (पीच), नासपाती इत्यादि में गुलाबी रंग फैलता हुआ देखा गया। फल तोड़ने के बाद तुरन्त कैनीकरण विधेयक न बनाने के कारण हुई देरी मे उसमें ऊष्मा लग जाने से ही उपर्युक्त दोष हो जाता है। इसलिए फल तोडते ही कैनीकरण विधेयक बना देना चाहिए। इसके अलावा चाहा गया संसाधन समय निश्चित तापमान पर शीतलीकरण कर उपर्युक्त दोषो से बचाया जा सकता है।

अमीनो संयुक्तों के कारण होने वाला सक्षारण (Corrosion due to Amino Compounds) :

काशीफल में अमीनो सयुक्त होता है, फलस्वरूप कैनीकरण के पश्चात् संचयन के समय काशीफल उत्पाद काले होते देखे गये। इसी प्रकार सेबों का आवश्यकतानुसार निर्वातीकरण न किया जाये तो भी भविष्य मे कालापन हो सकता है। आड़ूफल विवर्णीकरण करते ही गर्म-गर्म भरकर कैनीकरण करना चाहिए, अन्यथा काला हो जाता है। इसका कारण ऑक्सीकरण है। शकरकन्द मे पाई जाने वाली शर्करा कैन की भीतरी चद्दर से प्रक्रिया कर फैरिक आयरन सयुक्त का निर्माण करती है। फलस्वरूप कैनीकृत शकरकन्द भी काली हो जाती है। इसी प्रकार सदाबरी मे भी रूटिन नामक एक पदार्थ है। फैरिक आयरन तथा रूटिन का अपघटन कैनीकृत सदाबरी को काला कर देते है।

दोषों से बचने के कुछ उपाय

कैन निर्माण के लिए चुने जाने वाला चद्दर उच्च-कोटि का होना चाहिये तथा उस पर वैज्ञानिक ढग मे राँगालेपन किया हुआ होना चाहिये, अन्यथा निम्न-स्तर का चद्दर चुना जाये तो उसमे 378 ग्राम राँगा केवल प्रत्येक बेस बॉक्स के लिए काम मे लिया जाता है, परन्तु उच्चकोटि के लिए 1 14 किलोग्राम राँगे का प्रयोग किया जाता है, इसके अलावा फलो को जाति तथा उप-जाति स्वाभाविक गुण, वर्ण आदि के आधार पर फ्रूट लैकीकृत सी-इनामेल युक्त, गन्धक प्रतिरोधक इनामेल लेपित कैनो मे भरा जाना चाहिये। न्यून अम्ल की फल-तरकारियो मे अधिक अम्ल मिलाकर कैनीकरण किया जाये तो उन्हें खराबियो से बचाया जा सकता है।

प्रत्येक खाद्य-पदार्थ को निर्देशित तापमान समय देकर निर्वातीकरण, संसाधन, शीतलीकरण तथा सचयन (भवन ताप पर) इत्यादि सावधानी के साथ सम्पन्न कराया जाये तो सम्भावित खराबियो से फल-तरकारियो के उत्पादन को बचाया जा सकता है। साधारणतया भवन-ताप से अधिक तापमान वाले गोदामो मे रखे हुए कैनीकृत खाद्य-पदार्थ शीघ्रता से खराब हो सकते हैं। इसके अलावा गर्मी के मौसम मे साधारण भवन ताप चाहे गये गोदाम के भवन ताप (20° से 26° से०) से कही अधिक हो जाता है। फलस्वरूप खाद्य-पदार्थ खराब हो सकता है। इसके अलावा उचित मात्रा मे शीर्षस्थान भी देना अनिवार्य है।

. सन् 1966 मे बोर्ड ने प्रतिवेदन दिया कि रिटोर्ट मे कैन भरते समय प्रत्येक के चारों तरफ ऊष्मा-व्यापन के लिए उपयुक्त परिस्थिति उत्पन्न नहीं को जाकर कि

एक के ऊपर एक कैन भरी जाये तो अपूर्ण ससाधन क्रिया के कारण भविष्य में खाद्य-पदार्थ खराब हो सकता है। इसके लिए कैन जिस क्रेट मे सजाये जाते हैं, उसका सविधान ऐसा होना चाहिये कि एक कैन दूसरे कैन के सम्पर्क मे न आ सके।

कैनीकृत फल-तरकारी कब तक परिरक्षित रह सकती है ?

हम भली-भाँति जानते हैं कि फल-तरकारियों का इसलिए कैनीकरण किया जाता है कि वे अधिकाधिक समय (दीर्घकाल) के लिए परिरक्षित रखी जा सकें। परन्तु हमने यह भी देखा कि कुछ खाद्य-पदार्थ सचयन के समय खराब हो जाते हैं। इसके कारण और सावधानियों के बारे मे चर्चा की जा चुकी है।

लालसिंह, गिरधारीलाल, सदाशिवन तथा जैन ने कैनीकृत प्लम, पीच, ऐप्रीकाट तथा टमाटर उत्पाद मे हाइड्रोजन सृजन के बारे मे अध्ययन किया और बताया कि संचयन काल मे अगर तापमान बढ जाये तो हाइड्रोजन निर्माण तीव्र होगा या कैनों मे स्थानीय सक्षारण तथा छिद्र हो जायेंगे। हाइड्रोजन निर्माण कई कारकों से होता है, ये कारक हैं—टिन-प्लेट की श्रेणी, फल की रचना तथा स्वभाव, कैनीकरण के लिए ली गयी कैन (साधारण/लैकीकृत/गन्धकरोधी इत्यादि) काम मे ली गई चाशनी की श्रेणी, ऊपर से मिलाये गये अम्ल की मात्रा, निर्वातीकरण, सीलबन्दी, रिक्तावस्था, शीर्षस्थान तथा शीतलीकरण तापमान आदि। इनकी पहले ही चर्चा की जा चुकी है। अगर खाद्य-पदार्थ को इन बातों को दृष्टि में रखते हुए कैनीकरण किया जाये तो दीर्घकालीन तक गोदामों मे या विपणी मे उपयोग करने के समय तक सुरक्षित रखा जा सकता है। इसके अलावा कैनीकृत उत्पादों मे से कुछ नमूनों को एकत्र कर कारखाने की प्रयोगशालाओं में, कैनीकरण करते ही परीक्षण (जाँच) कर उसकी परिरक्षण अवधि के बारे मे आप भरोसा कर सकते हैं।

उत्पादों के नमूनों का विश्लेषण तथा निरीक्षण

कैनीकरण-शाला चाहे बडी हो चाहे छोटी, बहुत अधिक तकनीकी जानकारी के बिना, मामूली खर्च के छोटे-छोटे उपस्करों के प्रयोग के खाद्य-पदार्थों के परिरक्षण-काल के बारे मे आप भरोसा कर सकते हैं।

(1) कैनीकरण कारखाने मे स्थान की कमी हो तो फैक्ट्री के एक कोने मे एक मेज डालकर कुछ निरीक्षण तथा प्रयोग किये जा सकते हैं।

(2) सर्वप्रथम मेज पर रजिस्टर रखा जावे तथा उसमे प्रतिदिन उत्पादित वस्तुओं का निरीक्षण कर उसके बाहरी गुण तथा दोष को समय-समय पर लिखा जाये, फलस्वरूप भविष्य मे कैनीकृत उत्पादों मे प्रायः होने वाली खराबियों को मालूम करने के लिए तथा उनको रोकने के लिए कुछ उपाय आप अपना सकेंगे। उत्पादों का नाम, वाहिकाओं की किस्म तथा धारक-शक्ति, उत्पन्नों के साकेतिक चिह्न, उनका कुल भार, वाहिका के बिना उत्पाद का भार, टुकड़ों के अक, भरे हुए घोल का स्वभाव, ब्रिक्स डिग्री, सालिनोमीटर डिग्री, उत्पादों के लिए काम मे लिये गये कच्चे माल के गुण-दोष इत्यादि बातों को सक्षेप मे रजिस्टर में लिखना चाहिये।

(3) कैन ओपनर (कैन खोलने की चाबी) कैन कैलीपर, त्रिकोणाकृति की आरी एक चिमटी इत्यादि कैनों मे प्रायः होने वाली खराबियों को मालूम करने के लिए अत्यन्त

आवश्यक हैं। सही ढग से खोलने के लिए उपयोगी तराजू मैट्रिक मान मे होनी चाहिए। छलनियो का प्रत्येक छिद्र 0.64 सेन्टीमीटर व्यास का होना चाहिये और वह स्टेनलेस स्टील से निर्मित होना चाहिए। प्रत्येक छलनी 15 से 30 सेन्टीमीटर व्यास की होनी चाहिए, क्योकि कैनीकृत फलो को इस फलनी द्वारा निसारकर फलों का वजन तोला जाता है।

कैनो मे भरी गई चाशनी की ब्रिक्स डिग्री तथा नमक की मात्रा मालूम करने के लिए (चाशनी बनाते समय तथा कैनीकृत फलो के सचयन के बाद रही चाशनी की ब्रिक्स डिग्री नापने के लिए) ब्रिक्स हाइड्रोमीटर, रेफरेक्ट्रोमीटर, सालिनोमीटर इत्यादि आवश्यकतानुसार रखने चाहिएँ।

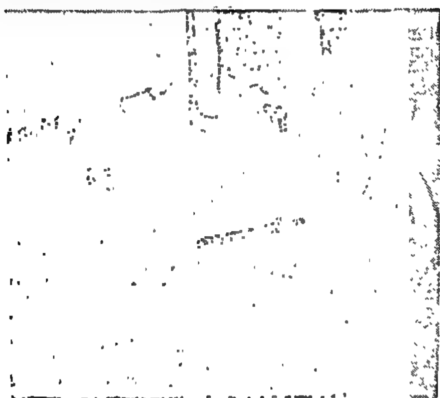
कैनीकृत फल-तरकारियाँ भविष्य मे खराब हो सकती है या नहीं ? इसके लिए कैनीकृत उत्पाद के नमूने निरीक्षण तथा परीक्षण विधेयक बने हो, वे हैं—

(1) 86° से 100° फारनहीट (30° से 38° से०) तापमान मे कुछ चुने हुए नमूनो को ऊष्मायन किया जाये और अगर कैनो मे सूजन आ जाये तो समझ लेना चाहिए या भविष्यवाणी कर सकते है कि कैनीकृत उत्पाद भविष्य मे खराब हो सकते हैं तथा निरीक्षित तापमान (जाँच की गई) मे टिक नही पायेंगे।

(2) कैनीकृत नमूनो को 122° से 130° फारनहीट (50° से 54.4° से०) तापमान में 15 दिन रखकर मालूम किया जा सकता है कि उत्पादो मे भविष्य मे खट्टी बदबू आयेगी कि नही, क्योकि इसके लिए प्रेरक ऊष्मारोधक जीवाणु अगर पदार्थ में हो तो उपर्युक्त तापमान (जाँच किये गये) में उसकी क्रियाशीलता बढ जायेगी। अगर खट्टी बदबू से नमूना मुक्त रहे तो 122° से 130° फारनहीट तापमान वाले प्रदेश मे परिरक्षित रहेगा। इसके अलावा अधिक ऊष्मायन परीक्षण अन्य असावधानियो से उत्पन्न खराबियो को भी पूर्व मे ही सूचित करते हैं, जैसे—शीर्ष-स्थान की कमी या अधिकता या कैनो मे ठूँस-ठूँसकर भरने मे होने वाली खराबियाँ तथा निर्वातीकरण मे होने वाली अनियमितताएँ इत्यादि। ऊष्मायन परीक्षण द्वारा अधिकतर रासायनिक तथा जैविक कारणो से होने वाली खराबियों को पूर्व मे ही मालूम किया जाता है, इसलिए इसको (ऊष्मायन परीक्षण) एक जैविक खाद्य-परीक्षण भी कहा जाता है।

इसके अलावा एक ही फल या तरकारी कैनीकरण करते समय उसी फल-तरकारी की दूसरी किस्म आ जाये तो उसके उचित तापमान, समाधनार्थ चाहिए, उन्हे पता लगाने के लिए ऊष्म-विद्युत्-युग्म, अर्थात् थर्मोकोपल, उसके लिए रूपांकित किये हुए विशेष कैनों मे फल या तरकारी को (जिसकी पहले ही कैनीकरण विधि तथा तापमान का पता नही लगा हुआ हो) भरकर उसमे थर्मोकोपल लगाकर चाहा गया संसाधन तापमान तथा समय का पता लगाते है, क्योंकि कच्चे माल मे आने वाली मामूली रचना के अन्तर के कारण संसाधन तापमान तथा समय या तो अधिक हो जाएगा या कम। अगर एक फल या तरकारी को अन्य खाद्य-पदार्थों की भाँति अनुमानित (मनमानी) ढग से समाधन किया जाये तो, या तो उत्पादन आवश्यकता से कम या आवश्यकता से अधिक संसाधित हो जायेगा।

फलस्वरूप खाद्य-पदार्थ भविष्य मे खराब हो जाना स्वाभाविक है। इसलिए प्रत्येक कारखानो को चाहिए कि वे उन पदार्थों का ही ससाधन करें, जिनको चाहा गया तापमान (वाष्पदाब) तथा ससाधन समय मालूम हो। इसके लिए वे जिन-जिन फल-तरकारियो को या खाद्य-पदार्थों को ससाधित (कैनीकरण) करना चाहे उन्ही वस्तुओ का संसाधन समय, तापमान तथा वाष्पदाब इत्यादि चार्ट मे लिखकर कारखानो मे यथास्थान पर लगावें जैसा प्रयोगशाला चित्र मे दिखाये गये है (चित्र संख्या 43)।



चित्र संख्या—43

निरीक्षण और परीक्षणों से जिन-जिन कैनीकृत उत्पादो मे त्रुटि पाई गई हो, उन्हे पुनः संसाधन करना चाहिए या उसमें जो दोष पाये गये हैं, उन्हें दूर करने के उपाय कर लेने चाहिएँ। वैक्यूमगेज (रिक्तकमापी) की सहायता से कैनीकृत उत्पादो का परीक्षण किया जाता है। इसके लिए नमूना कैनों को 95° फारनहीट ताप के जल मे उपचार करें, जिस तापमान वाले प्रदेशो मे उन्हे भेजना है तथा यह तापमान उस देश के या प्रदेश का औसत तापमान होना चाहिए। इसके बाद कैनो की भीतरी रिक्तावस्था नापी जाती है। कैनो को खोलने के लिए आवश्यक उपकरणो के बारे मे पहले ही चर्चा की जा चुकी है।

कैनीकृत खाद्य-पदार्थों तथा फल-पेयों के निर्जर्मीकरण परीक्षण तथा कुछ ऊष्मायन के बारे मे प्रिजर्वेशन त्रैमासिक पत्रिका मे चर्चा आती रहती है, इसलिए उपर्युक्त पत्रिका का तथा भारत मे प्रकाशित फूट साइन्स एण्ड टेक्नोलोजी, इण्डियन फूट पैकर आदि का

समय-समय पर समुचित अध्ययन किया जाये तो कैनीकरण मे ही नही, अपितु अन्य परीक्षण-शालाओं मे भी आने वाली त्रुटियों, खराबियो से उत्पादो को बचाया जा सकता है। भारत में तथा विदेशों मे अनुसधानो, सर्वेक्षण आदि द्वारा प्राप्त जानकारियाँ उपर्युक्त पत्रिकाओ मे प्रकाशित होती रहती हैं। इन पत्रिकाओ मे नये-नये उत्पादो की भी चर्चा मिलती रहती है। प्रत्येक व्यवसायियों को चाहिए, (चाहे वे छोटे कारखाने वाले हो या बड़े) कि वे ऐसोसियेशन ऑफ फूड साइन्स एण्ड टेक्नोलोजिस्ट के सदस्य बनें। फलस्वरूप वैज्ञानिकों, टेक्नोलोजिस्टों तथा अन्य प्रतिभाशाली व्यवसायियों के सम्पर्क मे आकर उनकी कठिनाइयो को सरल बनाने में मदद मिलेगी।

ज्वाला निर्जर्मीकरण (Flame Sterilization)

जब खाद्य-पदार्थों को कैनों (डिब्बों) मे भरकर ऊष्मा से निर्जर्मीकरण पानी मे या वाष्प मे कराया जाता है तब उसका पोषक मूल्य जैसे—सुगन्ध, वर्ण, संरचना इत्यादि मे कमी आ जाती है। जिन निम्न कारणो से पोषक मूल्यों की क्षति हो सकती है, वे हैं—

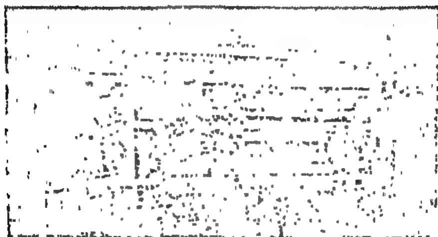
1. ऊष्मीकरण गति।
2. अधिक ऊष्मा तक पहुँचने के बाद खाद्य-पदार्थों को उस ऊष्मा में कब तक के लिए रखा गया था।
3. शीतलीकरण-गति इत्यादि।

इन क्षतियों को कम करने के लिए जो नवीनतम विधि अब अपनायी जा रही है, उसको ज्वाला-निर्जर्मीकरण कहते है।

कुछ फ्रांसिसी अनुसधान-कार्यकर्त्ताओं ने इस ज्वाला-निर्जर्मीकरण प्रणाली का आविष्कार किया, जिसमे ज्वाला के ऊपर कैन को एक निश्चित समय तक गर्म करके चाहे गये तापमान पर पहुँचाकर निर्जर्मीकरण कराया जाता है। उसके तुरन्त बाद यथाविधि कैन को भवन-ताप पर ठण्डा कर संचयन किया जाता है। इसमे भी कुछ असुविधाएँ थी। इसलिए आस्ट्रेलिया स्थित राष्ट्र मण्डल सस्थान सी० एम० आई० आर० ओ० के खाद्य-विभाग के कुछ वैज्ञानिकों ने फ्रांसिसी वैज्ञानिको द्वारा रूपांकित एकल ज्वालक (बर्नर) निर्जर्मीकरणी (Sterilizer) में कुछ परिवर्तन कर एक ऐसा निर्जर्मीकरण का रूपांकन किया, जिसकी सहायता से एक मिनट मे चौदह कैनो का निर्जर्मीकरण किया जा सकता है। इसके लिए उस निर्जर्मीकरणी मे ग्यारह ज्वालक लगे हुए हैं, प्रत्येक कैन एक मिनट मे छप्पन बार ज्वाला के ऊपर से घूमती है। इस निर्जर्मीकरण मे तीन रैक होते है। दूसरे रैक मे ज्वालक लगे हुए होते हैं, ऊपर के रैक मे पानी की टंकी है, जहाँ भाप को रोके रखने की अनुकूल परिस्थिति बनी होती है। नीचे के रैक मे भी पानी की टकी रखी है। जब ज्वालक जलने लगते हैं, तब उनमे से निकलने वाली ऊष्मा को रोककर ऊपर की टकी का पानी उबलकर, भाप बनकर कोष्ठ में भर जाता है। जब खाद्य-पदार्थ को एक-एक कर (कैनो मे) बेल्ट की सहायता से प्रथम रैक के भाप-कोष्ठ मे प्रवेश कराकर आगे सरकाते हैं तो कैन मे भरे खाद्य-पदार्थ गर्म हो जाते हैं। ये समान रूप से गर्म होते हैं। इस क्रिया को पूर्व ऊष्मा-क्रिया कहते है, यहाँ भी प्रत्येक कैन घूमते-घूमते आगे बढते हैं। रैक के अन्त मे जाकर, पल्टा खाकर मशीन के दूसरे छोर पर जाकर बेल्ट की सहायता से ज्वालक के ऊपर से घूमते-घूमते दूसरे छोर पर पहुँचकर फिर पल्टा खाकर नीचे यानि तीसरी रैक मे

रखे हुए ठण्डे पानी की टंकी मे पहुँचते हैं, जहाँ घूमते-घूमते प्रत्येक कैन निश्चित तापमान पर ठण्डा होकर बाहर निकलता है।

ग्यारह ज्वालक युक्त एक निर्जर्मीकरणी मे एक कैन छप्पन बार घूमा करेगा तथा यह एक मिनट मे चौदह कैनों का निर्जर्मीकरण करेगी (चित्र संख्या–44 देखें)।



चित्र संख्या–44

कैसीमर डी० जे० तथा साथियो ने (1976) मत व्यक्त किया है कि ज्वाला-निर्वातीकरण तथा ज्वाला-निर्जर्मीकरण द्वारा खाद्य-पदार्थों का निर्जर्मीकरण करके आजकल प्रचलित रिटॉर्टीकरण से होने वाली खामियों को दूर किया जा सकता है तथा कैनिंग व्यवसाय मे ज्वाला-निर्जर्मीकरण अधिक उपयोगी सिद्ध होगा। फलस्वरूप उच्च-कोटि के कैनीकृत उत्पाद तैयार किये जा सकेंगे।

लेकिन यह प्रणाली अभी भारत में ही नही, अपितु अन्य विकसित देशो में भी व्यावसायिक स्तर पर प्रचलित नही हुई है।

□□□

अध्याय 5

फल-तरकारियों को सुखाना तथा निर्जलीकरण करना

(Dehydration and Sundrying of Fruits and Vegetables)

मानव द्वारा आदिकाल से ही अपनायी गयी एक परिरक्षण विधि है, धूप में फल-तरकारियों को (अन्य खाद्य-पदार्थों की भाँति) सुखाना। आज भी कई फल-तरकारियों को हमारे देश में ही नहीं, अपितु विकसित देशों में भी धूप में ही सुखाया जाता है। संसार में फलों को अधिकाधिक सुखाने वाले प्रदेश संयुक्त राज्य अमेरिका का कैलीफोर्निया, एशिया-माईनार, ग्रीस, स्पेन, मेडिटरेनियन प्रदेश, आस्ट्रेलिया, अरबिया, अफगानिस्तान तथा पाकिस्तान हैं।

विविधता में एकता की भाँति संसार में भारत एक ऐसा देश है, जहाँ संसार में पाई जाने वाली करीब-करीब सभी फल-तरकारियों की खेती होती है जो एक वरदान माना जाता है। आज भारत में 29 मिलियन टन फल तथा 17 मिलियन टन तरकारी का उत्पादन होता है। इसमें से 20 से 25 प्रतिशत तोड़ने से लेकर विपणन तक सड़न-गलन से नष्ट हो जाती है; जो करीब 1 5 करोड़ मिलियन टन फल-तरकारियाँ होती हैं जो दस अरब रुपये मूल्य की होती है। यह सब फल-तरकारी परिरक्षण की ओर तथा पोस्ट हारवेस्ट टेक्नोलोजी पर आवश्यक सुधारों के लिए हमें प्रेरणा देती है, ताकि देश आर्थिक दृष्टि से उन्नति पा सके।

आज भारत में विभिन्न कारखानों द्वारा 1,00,000 टन संसाधित फल-तरकारियों का उत्पादन किया जाता है। इसमें से 16,000 टन रक्षा सैनिकों के लिए होती है, 30,000 टन निर्यात करने के लिए तथा बाकी 54,000 टन देश के अन्दर विपणन के लिए होती है। इनमें अधिकांश उत्पाद बड़े होटलों (फाइवस्टार), विमान सेवाओं, रेलवे में भोजन व्यवस्था के काम में आती हैं।

उपर्युक्त उत्पादों में से करीब 1,660 टन निर्जलीकृत फल-तरकारियाँ है, इसमें से केवल 48 टन निर्जलीकृत फल हैं; जिनमें से 1,063 टन विदेशों में निर्यात की जाती है, शेष देश में रक्षा सेना आदि के भोजन के लिए काम आती है। इसमें अधिकांश तरकारियाँ हैं। यह उत्पाद देश के केवल आठ कारखानों में तैयार किये जाते हैं, लेकिन सूखे प्याज, आलू की ही माँग करीब 10,000 टन आँकी जाती है। अधिकांश माँग विदेशों से है। इससे करीब 1,00,00,000 रुपये की विदेशी मुद्रा का अर्जन होता है। इसके लिए देश के आठ कारखाने कार्यरत हैं, जिनमें करीब 3 से 4 करोड़ रुपये की लागत आती है, लेकिन निर्जलीकरण के लिए विदेशों के उपभोक्ताओं की माँग के आधार पर देश में कच्चा माल

प्राप्त नही होता। इसी प्रकार से कुछ अन्य तथ्य भी सन् 1977 में भारतीय खाद्य निगम के दिल्ली स्थित भवन के आडिटोरियम में हुई। उत्तर क्षेत्रीय ए० एफ० एस० टी० की शाखा द्वारा बुलाई गई संगोष्ठी (सिम्पोजियम) पर प्रस्तुत किये गये थे। निर्जलीकरण योग्य प्याज तथा मटर के उत्पादों पर चर्चा करते हुए डॉ० विष्णुस्वरूप ने प्रतिवेदन दिया कि भारत में करीब 1,64,000 हैक्टेयर भूमि पर प्याज की खेती होती है, इसका कुल उत्पाद 1.4 मिलियन टन है और यह मुख्यतया महाराष्ट्र, कर्नाटक, उड़ीसा, तमिलनाडु, आन्ध्र प्रदेश, बिहार, मध्य प्रदेश, गुजरात, राजस्थान तथा उत्तर प्रदेश में क्रमशः होता है, लेकिन देश में गुलाबी तथा लाल प्याज की खेती अधिक होती है। इसके विपरीत हमारे देश के अधिकतर डीहाइड्रेटड (निर्जलीकृत) फूड इण्डस्ट्री वाले सफेद प्याज की ही माँग करते हैं, जिनकी महाराष्ट्र के नासिक, निफाड, जलगाँव, गुजरात तथा बिहार के कुछ क्षेत्रों में ही खेती की जाती है। इसलिए सफेद प्याज की माँग को आज देश पूरा करने में असमर्थ है, इसकी ओर किसानों तथा अधिकारियों का ध्यान आकर्षित किया गया था, क्योंकि निर्जलीकरण के लिए ली जाने वाली प्याज में अधिक तीक्ष्णता (तीखापन), हिम-तुल्य सफेदी तथा 15 से 20 प्रतिशत या अधिक कुल घुलनशील घन-पदार्थ (टी० एस० एस०) होना चाहिये। किसी भी हालत में अघुलनशील पदार्थ एक प्रतिशत से कम नही होना चाहिये। इसी प्रकार लघुकारक शर्करा तथा अलघुकारक शर्करा (Reducing and Non-Reducing Sugar) का अनुपात भी न्यून होना चाहिये। इसके अलावा प्याज गोलाकृति के होने चाहिएँ तथा पतली गर्दन तथा कम जड़ीय स्थान-युक्त भी होनी चाहिये। आकार 5 से 6 मिलीमीटर मोटा होना चाहिये।

आज देश में करीब 2,88,000 टन मटर का उत्पादन किया जाता है। मुख्यतया इसकी खेती उत्तर प्रदेश, बिहार, मध्य प्रदेश तथा महाराष्ट्र में की जाती है। वैसे तो राजस्थान, पंजाब, हरियाणा आदि प्रदेशों में भी खेती की जाती है, लेकिन निर्जलीकरण के उद्देश्य से नहीं।

निर्जलीकरण के लिए मटर का दाना मोटा और सुर्ख हरितवर्ण होना चाहिये। फलियाँ अधिक दानों से भरी हुई तथा निर्जलीकरण के पश्चात् अधिक वजन देने वाली होनी चाहिएँ। इसके अलावा मटर मीठी होना भी आवश्यक है। साधारणतया फली में से 40 से 50 प्रतिशत दाना मिलता है तथा सूखे मटर करीब 20 से 24 प्रतिशत होते हैं। भिन्न-भिन्न किस्मों की मात्रा भिन्न-भिन्न होती है।

कैनीकरण की भाँति निर्जलीकरण के लिए भी फलियों को उचित पक्वता पर तोड़ना चाहिये अन्यथा मटर में पाई जाने वाली शर्करा मण्ड में परिवर्तित हो जायेगी। इसलिए मटर की फलियाँ विकसित होकर भरी हुई अवस्था में तोड़कर देखना चाहिये कि दाने में शर्करा की मात्रा कितनी है। उसके पूर्ण पक्वता पर पहुँचते ही शर्करा की मात्रा भी अधिकाधिक पाई जायेगी। उसी समय तोड़ना चाहिये। इस अवस्था को मालूम करने के लिए विदेशों में टेण्डरोमीटर अथवा मैचूरोमीटर काम में लिये जाते हैं, जहाँ ऐल्कोहॉल की सहायता से मटर के अघुलनशील घन-पदार्थ को मालूम कर मटर के गुणावगुण को देखा जाता है। साधारणतया अघुलनशील ठोस पदार्थ मटरसार में करीब 11 से 16 प्रतिशत होता।

सूखे फल-तरकारियों की श्रेष्ठताएं

सूखे फल तथा तरकारियाँ अन्य परिरक्षित खाद्य-पदार्थों से बहुत कम जलांशयुक्त होती हैं या यह भी कह सकते हैं कि वे अधिक सान्द्रीकृत ठोस खाद्य-पदार्थ हैं। इसके अलावा अन्य परिरक्षण विधियों के लिए चाही गई जटिल यन्त्र सामग्रियों की आवश्यकता भी इस विधि के लिए नही होती। साथ ही मजदूरो की भी कम आवश्यकता होती है। फलस्वरूप उत्पादन खर्च कम होता है। इन्हे सचयन करने के लिए अधिक क्षेत्रफल वाले गोदामों की भी आवश्यकता नही होती, क्योकि सूखे फल उसके कच्चे माल की मात्रा के करीब 6 से 15 प्रतिशत तथा तरकारियाँ 10 से 30 प्रतिशत ही रह जायेंगी। इसी प्रकार परिवहन तथा अन्य किराया भाडा भी कम खर्च होता है। फलस्वरूप उपभोक्ताओं को अन्य परिरक्षित खाद्य-पदार्थों से कम दाम मे सूखी फल-तरकारी प्राप्त हो जायेंगी। परन्तु देश मे सूखे फल-तरकारियों के गुणो की कम जानकारी के कारण निर्जलीकृत या सूखे फल-तरकारियों की तरफ उपभोक्ताओं का झुकाव कम है।

धूप में सुखाने के लिए आवश्यक सुविधाएँ

जिस कारखाने मे फल तथा तरकारियाँ सुखाई जाती है, वहाँ एक प्राँगण होना चाहिये, जहाँ फल-तरकारियो को ट्रे मे सजाकर बिना रुकावट धूप दिखाई जा सके। इस आँगन को ड्राइंग यार्ड (शोषक प्राँगण) कहते है। अगर यह स्थान आकस्मिक वर्षा तथा धूल-आँधी वाला क्षेत्र हो तो तुरन्त उन्हें वर्षा से बचाने के लिए योग्य तरीके अपनाने चाहिएँ या ऐसी पहियो वाली मेजों पर ट्रे को रखना चाहिये कि तुरन्त यहाँ से हटाया जा सके। कारखाने में फल-तरकारियो को धोने के लिए टकी, छिलका उतारने व कतरने आदि के लिए आवश्यक मेज, चाकू, यन्त्र, क्षारीय क्रिया के लिए आवश्यक टकियाँ, पेटी, क्रेट इत्यादि की आवश्यकता होती है। इसके अलावा गन्धकीकरण, कोष्ठ की भी आवश्यकता होती है। अधिक जानकारी पृथक्-पृथक् फल या तरकारी के सूखने की क्रिया के वर्णन के समय दी जायेगी।

कारखाने तथा शोषक (सूखन) प्राँगण वहाँ काम मे ली जाने वाली फल-तरकारियो की क्षमता के अनुसार छोटे-बड़े हो सकते है। अधिक धूप पडने वाले शुष्क प्रदेश मे फल-तरकारियाँ शीघ्र सूख जाती है। फलस्वरूप ऐसे क्षेत्रो मे जहाँ धूप तेज हो, फिर भी आर्द्रता अधिक हो, कारखाने का क्षेत्रफल अनुपात मे कम चाहिये।

कारखाने, जहाँ फल-तरकारियाँ सुखाई जाती हैं, वे स्वास्थ्य की दृष्टि से स्थापित होने चाहिएँ। गन्दे नाले, पानी ठहरने योग्य गड्ढे म्युनिसिपल टाउन की गन्दगी इत्यादि कारखाने के परिसर मे नही होने चाहिएँ, ताकि सुखाने के लिए रखी हुई फल-तरकारियो मे गन्दगी से मक्खियाँ तथा अन्य सूक्ष्मजीवियों का आक्रमण न हो सके।

विदेशों मे जहाँ फलो की खेती होती है, उसी खेत पर उन्ही फलो को सुखाये जाने की प्रथा है, विशेषतौर से अगूरो को। इन्हें दो पक्तियो के (अंगूर के पौधो की) बीच छोडे हुए खाली स्थान में एकत्रित अगूर के गुच्छो को कागज की ट्रे मे सजाकर, फैलाकर सुखाया जाता है। फलस्वरूप अगूर के गुच्छो को कारखानो तक पहुँचाते समय सम्भावित क्षतियो से ही नही, अपितु परिवहन खर्च को भी कम कर उत्पादन खर्च कम करने मे मदद मिलती है। जब अंगूर पकते हैं, उस समय उन क्षेत्रों में वर्षा होने की सम्भावना भी नही होती। इसलिए वे निडर होकर खेत मे सुखाते है।

फल-तरकारियों का निर्जलीकरण—एक परिचय

धूप में सुखाने की प्रक्रिया आदिकाल से चली आ रही है। कुछ मधुर फलों, जैसे—अंगूर, पिण्ड-खजूर, बेर, केला, ऐप्रीकाट तथा कुकुरमुत्ता को ही नहीं, अपितु माँस, मछलियों को भी मानव धूप में सुखाता है। लेकिन धूप में सुखाने की इस प्रक्रिया के बीच ऐसी भी कठिनाइयाँ उत्पन्न हुई, जैसे सर्दी की वजह से धूप की शक्ति कम हो जाना या वर्षा हो जाना इत्यादि। फलस्वरूप उपर्युक्त खाद्य-पदार्थों पर फफूँद आदि लगाकर वे खराब हो जाते हैं। इनसे बचने के लिए आग की पूरक-क्रिया की सहायता से उन्हें सुखाकर परिरक्षित किया जाता है। धूप में सुखाने की प्रक्रिया भी एक वाष्पीकरण क्रिया ही है। इसी प्रकार की कठिनाइयों को दूर करने के लिए एक के बाद एक परिवर्तन लाकर आग से सुखाने की प्रक्रिया में उन्नति प्राप्त की गई। इस क्रिया को ही आज निर्जलीकरण प्रक्रिया कहते हैं जो एक आधुनिक प्रौद्योगिकी में परिवर्तित हुई है।

परन्तु निर्जलीकरण में उपर्युक्त दोनों प्रक्रियाओं (धूप तथा आग) से काफी अन्तर है। निर्जलीकरण के लिए ऊष्मा, वायु आदि को नियन्त्रीकरण योग्य अवस्था में सम्पन्न किया जाता है, परन्तु धूप तथा आग की सहायता से जहाँ सुखाया जाता है, वहाँ दोनों का नियन्त्रण अपने हाथ में नहीं रहता। फिर भी आज संसार में सुखाये जाने वाली अधिकांश फल-तरकारियों को सुखाने की क्रिया दोनों विधियों (धूप तथा निर्जलीकरण) से सम्पन्न की जाती है, चाहे वह विकसित हो या विकासशील।

निर्जलीकरण की परिभाषा

खाद्य-पदार्थों को एक ऐसी कक्षा में सुचारु रूप से सजाकर, एक सुनिश्चित मात्रा के तापमान, आर्द्रता, वायु-परिक्रमा इत्यादि की परिस्थिति में बड़ी सावधानी के साथ रखकर, कृत्रिम तरीके से निर्मित आग (ऊष्मा) की सहायता से कोष्ठ में रखे हुए उनके जलांश को वाष्परूप में परिवर्तित कर बाहर निकालकर सुखाने की क्रिया को ही निर्जलीकरण कहा जाता है।

निर्जलीकरण के मूल सिद्धान्त

निर्जलीकरण के लिए ऊष्मा तथा वायु की आवश्यकता होती है। ऊष्मीकरण चालन या विकिरण ऊष्मीकरण से सम्पन्न किया जा सकता है।

चालन ऊष्मीकरण

इस क्रिया में दहन-जन्य वस्तुओं को वायु की उपस्थिति में जलाकर उसको उस कक्षा में प्रवेश कराया जाता है, जहाँ खाद्य-पदार्थ रखा हुआ होता है। परन्तु चालन ऊष्मीकरण से अधिक गर्मी ही नहीं, अपितु कभी-कभी खाद्य-पदार्थों पर चिंगारियाँ तथा धुआँ भी लग जाता है।

विकिरण ऊष्मीकरण

वायु को भाप-युक्त नलियों की सहायता से गर्म कर फल-तरकारियों को सुखाने के लिए उनके ऊपर प्रयोग किया जाता है, दूसरा गर्म गैस को पाइपों में भेजकर वायु को गर्म कर खाद्य-पदार्थों को सुखाया जाता है।

वायु को बाहर से खींचकर, गर्म करके खाद्य-पदार्थों पर फेंक कर भी शुष्कन प्रक्रिया सम्पन्न की जा सकती है। व्यावसायिक क्षेत्रो मे अधिकांश इस विधि से ही फल-तरकारियो को सुखाया जाता है, क्योंकि कम खर्चीली विधि होने के कारण इसमे उत्पादन खर्च कम होता है। पदार्थों से जलांश को निकालकर, ग्रहण कर बाहर फेंकने की क्षमता वायु मे अधिक होती है। इसके अलावा यन्त्र कक्षा के भीतर रखी हुई फल-तरकारियो में वायु लगने से उसमे से जल भी नही टपकता, क्योंकि खाद्य-पदार्थों से वायु जलांश का शीघ्र शोषण कर लेती है। इसका मतलब यह नही कि वायु निर्जलीकरण क्रिया करती है, वस्तुतः ऊष्मा ही फल-तरकारियो को सुखाती है। केवल वायु होने से ही निर्जलीकरण क्रिया सम्पन्न नही हो सकेगी। किन्तु वायु की परिक्रमा (सारे यन्त्र में समान वेग से चलकर बाहर आना तथा ताजी हवा पुनः प्रवेश कर उपर्युक्त परिक्रमा को चालू रखना) भी आवश्यक है।

454 ग्राम जल वाष्पीकरण के लिए 1000 ब्रिटिश ऊष्मीय मात्रा अथवा ब्रिटिश थर्मल यूनिट (B.T.U.) आवश्यक है। इस ऊष्मीय मात्रा को जल के गुप्त वाष्पन ऊष्मा (Latent Heat of Vaporization of Water) कहा जाता है, ताप मात्राओं के आधार पर इसमे अन्तर आ सकता है।

इसी प्रकार ऊष्मीकृत वायु खाद्य-पदार्थों को ऊष्मीकरण कर उसके जलांश को वाष्प रूप में बदल दिया जाता है, इस वाष्प को वायु ग्रहण करने मे कोई कठिनाई नही होती। इन्ही कारणो से ही कहा जाता है कि निर्जलीकरण क्रिया मे ऊष्मा स्थानान्तरण ही नही अपितु धन स्थानान्तरण भी होता है।

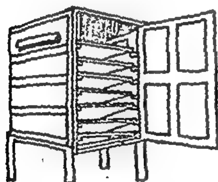
डी-हाईड्रेटर्स (De-hydrators)

डी-हाईड्रेटर को निर्जलीकरणी कहा जा सकता है। साधारणतया आलू, प्याज, मटर, लहसुन तथा गाजर इत्यादि तरकारियो का निर्जलीकरण किया जाता है। इसके अलावा अन्य कृषि उत्पाद जैसे—इलायची, नारियल, मिर्च, अदरक आदि तथा पेय पदार्थ, जैसे—दूध, कॉफी, चाय, कोको आदि का भी निर्जलीकरण किया जाता है। इसके अलावा आजकल तैयार हुआ खाद्य-पदार्थ जैसे—भात (पके हुए चावल), पुलाव, सांभर, रसम, पकी हुई दाल इत्यादि का भी निर्जलीकरण किया जाता है। इसके लिए विभिन्न क्षमता के तथा आकार की कई निर्जलीकरणियां आज प्रचलित हैं, जिसकी चर्चा आगे की जायेगी।

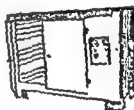
(1) होम डिहाइड्रेटर (Home Dehydrators)

इन्हें घरेलू निर्जलीकरण भी कहा जा सकता है। इस प्रकार के यन्त्र केवल घर में ही नही, अपितु विद्यालयो की प्रयोगशालाओ तथा परीक्षणशालाओ मे, आमतौर पर, भारत में काम मे लिये जाते हैं। भारतीय परिस्थिति को ध्यान में रखते हुए बनाई गई एक निर्जलीकरणी करीब 90 × 60 × 90 सेन्टीमीटर आकार की होती है। इसका निर्माण गलवनीकृत (जस्तालेपित) लोहे की चद्दरों से किया जाता है। यह अलमारीनुमा होती है। इसका आखिरी तल (पेंदा) छिद्र वाले लोहे की चद्दर से बना हुआ होता है। यह भाग छोड़कर बाकी चारो तरफ काष्ठ मे ऊष्मारोधक किया हुआ होता है। इसका एक हिस्सा एक अलमारी की भाँति खोलने तथा बन्द करने की अनुकूल परिस्थिति में बनाया हुआ होता है। इसके भीतर बराबर दूरी पर सात खाने बनाये हुए होते हैं, जहाँ एक-एक ट

आराम से निकालने तथा रखने की सुयोग्य अवस्था में बनाई हुई होती है। प्रत्येक ट्रे का आकार 80 × 60 सेंटीमीटर (लम्बाई तथा चौड़ाई) होता है। यह छेद वाली एल्युमीनियम चद्दरों से बनाई हुई हो तो अधिक उत्तम रहती है, परन्तु लोहे की जालियों से बनी ट्रे भी काम में ली जाती है। ऐसी ट्रे में फल-तरकारियों को अन्य ट्रे में सजाकर रखना होगा ताकि फल-तरकारी लोहे के सम्पर्क में न आ सके। एल्युमीनियम या स्टेनलैसस्टील से बनी ट्रे हो तो उस पर सीधे ही फल-तरकारियों को सजाया जा सकता है। किवाड़ के दोनों तरफ ऊपर से 10 सेंटीमीटर नीचे 60 × 4 सेंटीमीटर भाग काटकर, अलग कर उसके स्थान में उसी साइज से थोड़ी बड़ी चद्दर से एक लम्बी खिड़की-सी बनी हुई होती है जो आवश्यकतानुसार खोलने तथा बन्द करने के योग्य बनी हुई होती है। फलस्वरूप भीतर की गर्मी तथा वायु-परिक्रमा को नियन्त्रित किया जा सके। इस निर्जलीकरण को लोहे से निर्मित एक चारपाया में बिठाया हुआ होता है (चित्र संख्या 45) इस चारपाया की करीब 40 सेन्टीमीटर ऊँचाई होगी। इस प्रकार की निर्जलीकरणियों में फल-तरकारियों को यथाविधि ट्रे में फैलाकर, उन्हें बन्द कर, पत्थर कोयले से, स्टोव की सहायता से ऊष्मीकरण कर सुखाया जाता है। स्टोव या अंगीठी को निर्जलीकरणी के नीचे सजाना चाहिये ताकि सम्पूर्ण निर्जलीकरणी करीब-करीब एक समान गर्म हो सके। जब नीचे की सतह की वायु गर्म होती है, तब वहाँ से हटकर वायु निर्जलीकरणी के ऊपर की ओर चलने लगती है, फलस्वरूप ऊपर की वायु नीचे आकर गर्म होती है। ऊपर पहुँची हुई वायु फल-तरकारियों



चित्र संख्या 45
घरेलू स्तर की निर्जलीकरणी



चित्र संख्या 46
कैबिनेट ड्रायर

को ऊष्मा देकर उसमें पाये जाने वाले जलांश को वाष्प में बदलकर, ग्रहण कर लेती हैं तथा वह निर्जलीकरण के ऊपर के निकास (खिड़कीनुमा) द्वारा बाहर निकल जाती है। उसके बदले में ताज़ा वायु निर्जलीकरणी के नीचे से प्रवेश कर उपर्युक्त क्रिया को चालू रखते हैं। फलस्वरूप निर्जलीकरण क्रिया सारे यन्त्र में समान रूप से होकर खाद्य-पदार्थ सूख जाते हैं। इस यन्त्र में सुखाने के लिए 6 से 10 घण्टे तक समय लग सकता है। लेकिन इसके अन्दर के तापमान तथा वायु परिक्रमा को नियन्त्रित नहीं किया जा सकता। इसके अलावा इसमें सुखाने के लिए एक व्यक्ति की उपस्थिति आवश्यक है, ताकि कुछ समय चलने के बाद निर्जलीकरणी के सबसे नीचे की ट्रे सबसे ऊपर, और सबसे ऊपर की ट्रे सबसे

नीचे के क्रम में बदली जा सके, अन्यथा निर्जलीकृत उत्पाद एक समान, एक साथ प्राप्त नहीं होंगे। इसके अलावा सतर्कता नहीं बरतें, तो नीचे की ट्रे अधिक सूख जायेगी और उत्पाद जल भी ले सकते हैं। ऊपर की ट्रे या तो बराबर सूखेंगी या उसके उत्पाद कच्चे रह जायेंगे, इसलिए निर्जलीकरणी की ट्रे को ऊपर-नीचे बदलते रहना चाहिये ताकि समान रूप से खाद्य-पदार्थ को सुखा सकें।

व्यावसायिक स्तर की कुछ निर्जलीकरणियाँ
(Commercial De-hydrators)

खाद्य-पदार्थों को, विशेषकर फल-तरकारियों को, सुखाने के लिए व्यावसायिक स्तर पर कुछ अधिक डी-हाईड्रेटर्ज काम में लिये जाते हैं। इसके बारे में यहाँ चर्चा की जा रही है—

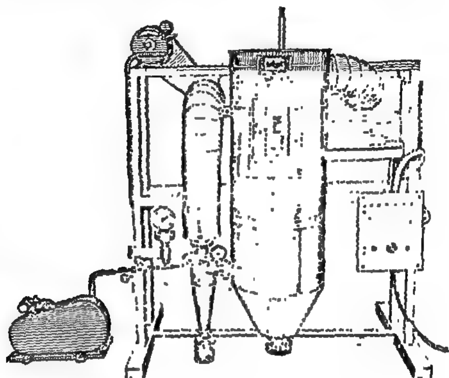
(1) कैबिनेट ड्राइयर्ज (Cabinet Driers)

विद्युत् चूल्हों से चलने वाली यह निर्जलीकरणी घरेलू स्तर की निर्जलीकरणी की भाँति ही होती है, परन्तु इसमें वायु चक्रमण को सुचारु रूप से सम्पन्न कराने के लिए पंखे भी लगे हुए होते हैं। ये पंखे या तो बिजली के चूल्हे के नीचे लगे हुए होते हैं, या निर्जलीकरणी की ऊपरी छत पर। इसमें तापमान को नियन्त्रित करने के लिए थर्मोस्टेट तथा तापमान का पता लगाने के लिए थर्मामीटर भी लगे हुए होते हैं। फलस्वरूप जिस पदार्थ को जितने तापमान में सुखाना चाहिये, उतने तापमान पर निर्जलीकरणी के थर्मामीटर की सहायता से थर्मोस्टेट को व्यवस्थित कराया जा सकता है। इसमें भी निर्जलीकरणी की क्षमता के आधार पर ट्रे दो या अधिक लगी हुई होती हैं, जो विद्यालयों तथा छोटी-मोटी फल-तरकारी प्रयोगशालाओं के लिए उपयुक्त होती हैं, परन्तु लघु उद्योगों के लिए काम आने वाली कैबिनेट ड्राइयर्ज अधिक बडी आकार की होती हैं तथा ट्रे के बदले में ट्रे से भरी ट्रॉलियाँ उसके भीतर रखने के योग्य रूपांकित होती हैं। इसकी सहायता से आमतौर पर फल तथा तरकारी को भी सुखाया जाता है (चित्र संख्या 46)।

(2) किन ड्राइयर्ज (Kiln Driers)

किन ड्राइयर्ज एक प्रकार के दो मंजिले मकान की भाँति होता है, प्रथम मंजिल के कमरे की छत की फर्श, पतली स्लेटी पत्थर से बनाई होती है, जिसके ऊपर खाद्य-पदार्थ को फैलाकर सुखाया जा सकता है। प्रथम मंजिल के कमरे-रूपी कक्ष में तैयार की हुई गर्म वायु को ऊपर बिछाए हुए खाद्य पदार्थ के ऊपर चलाकर सुखाया जाता है, इसके लिए या तो गर्म वायु स्वतः रसोई की चिमनी के जैसे मार्ग से होती हुई छत पर बिछाये हुए खाद्य-पदार्थों को सुखाती है या इस गर्मवायु को पंखों की सहायता से निश्चित स्थान पर पहुँचाया जाता है। किन निर्जलीकरणियों को ऊष्मारोध अवस्था में बनाये रखते हैं। इसकी सहायता से कतरे हुए सेब, आलू चिप्स इत्यादि को सुखाया जा सकता है, लेकिन खाद्य-पदार्थों को बार-बार उल्टा-पल्टी करते रहना चाहिये। आरम्भ में वायु का तापमान तथा उसकी परिक्रमा अधिक तथा बाद में तापमान कम कर देने की आवश्यकता भी होती है, क्योंकि फल-तरकारियों में से पानी आरम्भ में अधिक निकलता है तथा बाद में कम।

फल-तरकारियों को सुखाते समय उसमें से आरम्भ में जो जल निसरने लगता है, वह फर्श पर गिरते ही सूखने लायक तापमान-युक्त वेग से वायु की परिक्रमा होती रहनी चाहिये। इसके साथ ही इन्हें पलटते भी रहना चाहिये, अन्यथा ऊपरी हिस्सा सूख जायेगा व नीचे का हिस्सा गीला (कच्चा) रह जायेगा।



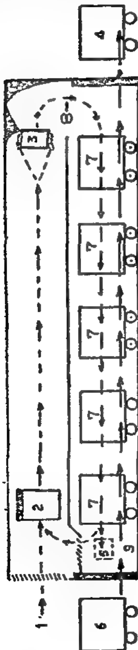
चित्र संख्या 47

स्प्रे ड्रायर, इसकी सहायता से तरल खाद्य-पदार्थों को सुखाकर चूर्ण बनाया जाता है।

(3) टनल ड्राइयर्स (Tunnel Driers)

फल तथा तरकारियों को सुखाने के योग्य आधुनिक निर्जलीकरणी में टनल ड्राइयर्स 12 से 15 मीटर लम्बाई की एक गुफानुमा होता है, (चित्र संख्या 47) चौड़ाई करीब 1 मीटर होती है। इसके ऊपर एक छोटी-सी गुफा (सुरंग) और होती है जो छत से अलग की हुई होती है, लेकिन एक द्वार द्वारा दोनों सुरंगों को जोड़ा हुआ होता है, जो सुरंग के एक किनारे से जुड़ा हुआ होता है। ऊपरी सुरंग पर विद्युत् चूल्हे लगे हुए होते हैं। यह वायु-प्रवेश द्वार पर ही लगे हुए होते हैं। ऊपर की सुरंग तथा नीचे की सुरंग दोनों जहाँ खुली हुई होती हैं, वहाँ वायु को ऊपरी सुरंग से नीचे की सुरंग में फेंकने लायक अवस्था बनाई हुई होती है। इन दोनों सुरंगों को ऊष्मारोधक किया हुआ होता है, ताकि इनमें से गर्मी नष्ट न हो सके।

फल तथा तरकारियों को सुरंग के भीतर भेजने के पहले, इन्हें चलाने से बाहर से वायु ऊपर की सुरंग में प्रवेश करती है। फिर जलते बिजली के चूल्हों में से होती हुई जाती है। फलस्वरूप वायु गर्म हो जाती है। यह क्रिया लगातार चलती रहती है तथा पंखे इस गर्म वायु को खींचकर नीचे की सुखाने वाली सुरंग के भीतर फेंकते है। फलस्वरूप सारी



टनल ड्रायर

चित्र संख्या 48—(1) अन्तरिक्ष से वायु प्रवेश द्वार। (2) हीटर (विद्युत् चूल्हा)। (3) ब्लोवर (गर्म हवा फेंकने वाला यन्त्र)। (4) सूखे फल-तरकारी बाहर निकलते हुए। (5) एक्सहास्ट पंखा। (6) तैयार फल-तरकारी टनल ड्रायर के भीतर भेजे जा रहे हैं। (7) फल-तरकारी युक्त ट्रॉली ड्रायर के भीतर सूखते जा रहे है। (8) गर्म हवा ब्लोवर की सहायता से ऊपर के टनल से नीचे के टनल की ओर फेंकी जा रही है, फलस्वरूप तीर की गति की ओर जाते-जाते वायु की गर्मी न्यून होती जाती है, जिससे फल-तरकारी एक समान सूखती जाती है। (9) यह तीर ट्रॉली की गति को दिखाते है।

सुरंग एक समान गर्म हो जाती है। इसका तापमान थर्मामीटर (उसमें लगे हुए) द्वारा आंका जा सकता है, यह 60° से 100° से० होता है। इसके भीतर उत्पन्न आर्द्रता

मालूम करने के लिए उपयुक्त तापमापी (Thermometer) भी लगा हुआ होता है। चाहा गया तापमान टनल मे उत्पन्न होते ही तैयार किये गये फल या तरकारी को सुरंग की क्षमता के आधार पर बनी ट्रॉलियो में सजाकर सुरंग के भीतर पहियो की सहायता से भेज दिया जाता है। एक-एक ट्रॉली मे कई ट्रे पर फल या तरकारी फैलाकर रखी हुई होती है। प्रत्येक ट्रॉली 40 से 50 ट्रे वहन करेगी, प्रत्येक ट्रे 0.5 वर्गमीटर की हो सकती है। प्रत्येक ट्रे के छिद्र 3 से 20 मेम व्यास के होते है। जिस सुरंग से ताजा वायु ऊपरी सुरंग मे भेजी जाती है, उसके नीचे वाले स्थान के द्वार से बड़ी सुरंग के अन्दर एक ट्रॉली को चढाया जाता है। इसी प्रकार एक के बाद एक के क्रम मे धीरे-धीरे ट्रॉलियाँ अन्दर भेजी जाती हैं। इस समय सुरंग की गर्मी से फल या तरकारी सूखने लगती हैं, साथ ही साथ, ताजी गर्म हवा ट्रॉलियो की चाल के विपरीत लगातार चलने के कारण प्रत्येक ट्रे मे रखी हुई फल या तरकारी गर्म वायु के सम्पर्क से सूखती जाती है। सूखे फल या तरकारी-युक्त ट्रॉली इसी प्रकार सूखने के बाद एक के बाद एक बाहर निकलती रहती है। इसके लिए 4 से 8 घण्टे के समय की आवश्यकता होती है। इसके साथ-साथ कच्चे फल या तरकारियों वाली ट्रॉलियो को पुनः अन्दर भेजा जाता है। इसमे कार्य करने वाले को यह जानकारी भली-भाँति होती है कि प्रत्येक ट्रॉली कितने समय तक सुरंग मे रहनी चाहिये। ध्यान रखें ट्रॉलियो को जहाँ से टनल के अन्दर भेजते हैं, उनके पीछे एक के बाद एक करके ट्रॉलियाँ क्षमतानुसार भर देते हैं।

टनल के भीतर रखी हुई फल या तरकारी पर लगने वाली गर्म वायु जब ट्रॉलियो मे से होती हुई बाहर निकलती है, (जहाँ से कच्चे माल-युक्त ट्रॉलियाँ चढाई जाती है) तब उसका तापमान कम होता है तथा आर्द्रता अधिक होती है।

उपर्युक्त टनल ड्राइयर्स मे ट्रॉलियो के बजाय स्टेनलेसस्टील से बनी बैल्ट पर फल या तरकारी को यथाविधि तैयार कर फैलाया जाता है तो यह बैल्ट सुरंग के भीतर एक तरफ से प्रवेश कर दूसरी तरफ से निकलते समय आवश्यकतानुसार सुखाने लायक गति से चलाने योग्य परिस्थिति मे बनी हुई होती है। तैयार की हुई तरकारियो को स्वय-चलित यन्त्र द्वारा बैल्ट पर फैलाया जाता है जो छिद्र वाली होती है। इसकी सहायता से चलने वाली डी-हाइड्रेटर्स मे 4 से 6 घण्टे मे किसी खाद्य-पदार्थ को सुखाया जा सकता है, फलस्वरूप मजदूरी-खर्च कम आता है। एक समान फल या तरकारी को सुखाया भी जा सकता है। परन्तु उपर्युक्त टनल ड्राइयर्स की लागत अधिक होती है।

(4) ड्रम ड्राइयर्स (Drum Driers)

यह निर्जलीकरण एक ड्रमनुमा होती है। इसका व्यास करीब 60 सेन्टीमीटर से 180 सेन्टीमीटर तक होता है। इसके भीतर दो ड्रम पास-पास ऐसे जुड़े हुए होते है कि दोनों घूमते समय आपस मे कोई रुकावट पैदा नही करते, यह ड्रम भी स्टेनलेस-स्टील की चद्दरो से बने हुए होते हैं और एक ही दिशा मे घूमने वाले होते हैं। इन दोनो ड्रमो को भाप (वायलर मे से आने वाली) द्वारा गर्म किया जाता है। इनके दोनो तरफ, अर्थात् प्रत्येक ड्रम की बगल मे एक पत्ती लगी हुई होती है। यह पत्ती ड्रम को कुचरकर सूखे खाद्य-पदार्थ को गिराने लायक अवस्था मे लगी हुई होती है। इनके नीचे एक्जॉस्ट फैन

(रिक्तीकरण पंखा) लगा हुआ होता है। यह भीतरी वायु को बाहर कर, अन्दर रिक्तावस्था उत्पन्न करता है। दोनों ड्रमो के बगल मे लगी हुई पत्ती (ब्लैंड) के नीचे दो वाहिकाएँ रखी होती हैं, यहाँ की वायु नमीहीन होती है। वहाँ की बनावट आर्द्रता-रहित अवस्था उत्पन्न कराकर नमीहीन अवस्था पैदा कर देती है।

जब ड्रम ड्राइयर्ज को चलाते हैं, तब फल-तरकारी अथवा सुखाये जाने वाले किसी भी अन्य तरल-पदार्थ को चलते हुए दोनो ड्रमो के बीचो-बीच गिराते हैं, तब दोनो ड्रमो के चारों तरफ जो बहुत ही पतली-सी परत होती है, वह सारे ड्रमो पर एक-समान फैलने लायक अवस्था मे समायोजित की हुई होती है। ड्रम वहाँ से घूमकर ऊपर ब्लैंड के स्थान पर पहुँचते ही भाप-ऊष्मा की वजह से ड्रम की परत गर्म होकर, उसके ऊपर लगी हुई पतली तरल परत को सुखा देती है, जो वाहिका मे गिरती रहती है। ड्रम की चौडाई के बराबर पत्ती की चौडाई भी होती है, इसलिए सम्पूर्ण रस चूर्ण को कुरेदने मे सफल रहती है। इन सभी भीतरी भागों को समुचित रूप से पैक किया हुआ होता है। इसके बाहरी-भीतरी तापमान दबाव आदि को बनाये रखने तथा उसको मालूम करने की उचित मापियाँ भी लगी हुई होनी हैं। इसके साथ ड्रम को घुमाने की पुल्ली तथा बैल्ट लगी हुई होती है।

(5) स्प्रे ड्राइयर्ज (Spray Driers)

तरल पदार्थों, जैसे—फल-तरकारी का रस या अन्य खाद्य-योग्य तरल पदार्थों को अदृश्य बिन्दुओ द्वारा यन्त्र के भीतर वर्षा कर, तप्त वायु की सहायता से सुखाने के यन्त्र को स्प्रे ड्राइयर्ज कहा जाता है। यह ड्राइयर्ज त्रिकोण आकृति के होते हैं, जिसके ऊपर गर्म हवा उसके भीतर फैंकने के लायक अवस्था मे रूपांकित की हुई होती है। इसके साथ उस कक्ष के ऊपर तरल खाद्य-पदार्थ जैसे—फल या तरकारी-रस को यन्त्र की सहायता से महीन अदृश्य बूँदो के रूप मे वर्षा कर सुखाया जाता है। ड्राइंग चैम्बर (सूखन कक्ष) की भीतरी वायु की गर्मी 160° से 200° से० तापमान तक पहुँचने के अनुरूप गर्म हवा को भीतर भेजते रहते है। इस समय फल रस या अन्य कोई भी तरल पदार्थ समुचित अवस्था मे पूर्व ही सान्द्रीकरण कर उसके अन्दर यन्त्र की सहायता से स्प्रे कराते समय कक्ष के अन्तरिक्ष में ही वह सूख जाते है, क्योकि वहाँ की वायु का तापमान उसके सूखने योग्य अवस्था में रहता है, जो नीचे गिरता रहता है। इसको एकत्र करने तथा वाहिकाओ में भरने की व्यवस्था की हुई होती है। यह बिल्कुल ही चूर्ण होने के कारण इसको पुन: पीसने की आवश्यकता नही होती, लेकिन यह चूर्ण (पाउडर) वायु सम्पर्क मे आ जाये तो वायु मे उपस्थित जल का अवशोषण कर इसके विकृत होने की सम्भावना बनी रहती है। इसलिए काफी सतर्कता बरतनी पडती है। फल-तरकारी रसों के अलावा तरल-दूध, बाल-आहार, अण्डा, इन्सेन्ड कॉफी, टी (तुरन्त पीने की चाय) इत्यादि को भी इस यन्त्र की सहायता से सुखाया जाता है। इस सिद्धान्त पर बनाये गये विभिन्न प्रकार के स्प्रे ड्राइयर्ज आज भी काम मे लिये जाते हैं। सुखाने के बाद वायु का तापमान 100° से 110° से० होते ही इन्हें कक्ष से बाहर निकाला जाता है, ताकि चाहा गया भीतरी तापमान बनाया रखा जा सके। इसके लिए ताजा गर्म हवा का प्रवाह लगातार चालू रखना चाहिये। उपर्युक्त सिद्धान्त पर चलने वाला एक यन्त्र राष्ट्र मण्डलीय वैज्ञानिक तथा व्यावसायिक अनुसंधान संस्थान (सी० एस० आई० आर० ओ०) के आस्ट्रेलिया स्थित खाद्य अनुसंधान संस्थान द्वारा रूपांकित किया गया है (चित्र संख्या 47)।

(6) एयर लिफ्ट ड्राइयर्ज (Air Lift Driers)

इसको वायु उत्थापन निर्जलीकरण कहा जा सकता है। इस निर्जलीकरण का आकार जैड (z) नुमा मिकुड़ी गुफा-सा होता है, जिसके अन्तिम हिस्से में वायु निकास तथा उसके ठीक नीचे सूखी वस्तुओं को नियन्त्रित कर वाहिका मे गिराने के योग्य निर्गम लगा हुआ होता है। गुफा के प्रथम प्रवेश द्वार से निर्जलीकरण के भीतर वायु फेंकने के योग्य पखें, उसके आगे विद्युत् चूल्हे लगे हुए होते हैं। चूल्हे के आगे गुफा के ऊपर कीपनुमा एक प्रवेश द्वार होता है, जिसके द्वारा सुखाने की वस्तु को अन्दर भेज दिया जाता है।

जब बिजली द्वारा उपर्युक्त एयर लिफ्ट ड्राइयर्ज को चलाते हैं तब चूल्हे (हीटर) जलने लगते है, इस समय पखें उसके भीतर बाहर से वायु को फेंकते हैं। यह वायु जलते हुए हीटरों से होती हुई भीतर की ओर प्रवाह करती है। चाहे गये वेग में वायु का प्रवाह तथा ऊष्मा पहुँचते ही तैयार किये गये आलू या तत्तुल्य चाही गई तरकारी की कतरनों (ग्रेन्यूल्ज) को प्रवेश द्वार द्वारा भीतर पहुँचाया जाता है। इस समय इन कतरनों को हवा गुफा के आगे ले जाती है, तब वे सूखने लगते है। लगभग सूखे हुए कणों को गुफा के आगे ऊपर स्तम्भनुमा खड़ी गुफा की ओर (धारावाहिक) हवा के साथ कतरनें भी (कतरी हुई आलू मान लें) उठने लगती हैं, लेकिन जब तक पूर्ण रूप से सूख नहीं जायेगी, तब तक हवा में तैरती रहेगी या कच्ची हो तो नीचे रहेगी। लेकिन नमी गृहीत वायु निकास द्वारा बाहर चली जायेगी। सूखने वाले आलू की कतरनें हल्की होते ही शक्तियुक्त गर्म वायु में फँसकर ऊपर की ओर उठती है तथा वायु मे तैरती रहती है। पूर्णरूप से सूखते ही वह आलू कतरनों को निर्जलीकरणी के बाहर उसके लिए सुनियोजित मार्ग से फेंकते हैं, जो वाहिका मे एकत्रित होती रहती है। इस प्रणाली से चलने वाली निर्जलीकरणी को एयर लिफ्ट ड्राइयर्ज कहा जाता है।

(7) फोम-मेट ड्राइयर्ज (Foam mat Driers)

फल-तरकारियों का गूदा बनाकर और उसे झागनुमा बनाकर सुखाने की प्रणाली फोम-मेट ड्राइयर्ज कहा जाता है। झागनुमा होने के कारण फल या तरकारी से अधिक क्षेत्रफल से नमी निकाली जा सकती है, इसके लिए अधिक तापमान की आवश्यकता नहीं होती। झागनुमा पदार्थों को एक-समान मोटाई मे छिद्रयुक्त ट्रे पर जलेबी की भाँति बनाकर, फैलाकर ऐसे निर्जलीकरणी मे रखकर सुखाते हैं जो गर्म वायु के प्रवाह से सूख जाते हैं। इसको सूखने के लिए 12 मिनट लगते हैं। सूखे हुए पदार्थ मे लगभग 2 से 3 प्रतिशत जलांश रहेगा। इसको भी वायु सम्पर्क से बचाकर रखना आवश्यक है, अन्यथा वायु से ऊष्मा ग्रहण कर खराब हो जायेगा। झागनुमा फल-तरकारियों को सुखाने के लिए कैबिनेट ड्राइयर्ज काम मे ले सकते हैं। इन्हें लगभग 65° से० ताप पर चलाया जाये तो 1 घण्टे मे झागनुमा फल-तरकारियों को सुखाया जा सकता है, फिर उसे पाउडर पर पैक किया जा सकता है।

(8) वायकुम-शेल्फ-ड्राइयर्ज (Vacuum-Shelf-Driers)

इस निर्जलीकरण की कक्षा कास्ट आयरन या स्टील चद्दरों से बनाई हुई होती है, जो रिक्तावस्था मे चलने वाली होती है। कास्ट आयरन से स्थापित कक्षा वर्गाकार या लम्ब वर्गाकार की होगी, लेकिन स्टील चद्दरों से बनी हुई बेलननुमा या वर्गाकार होनी है।

कक्ष के आकार के अनुरूप एक या दो द्वार भी हो सकते हैं। यह द्वार गास्केट पदार्थों से बने होते हैं। इसके भीतर कई ताकें होती हैं, जो भाप या गर्म जल की परिक्रमा से गर्म होती हैं। निर्जलीकरणी की क्षमता के आधार पर 4 से 20 ताक तक हो सकती हैं। जो वस्तु सुखानी होती है, उसे ट्रे मे सजाकर ताक में रखा जाता है। प्रत्येक ट्रे के प्रत्येक वर्गमीटर क्षेत्र में 5 से 7 किलो कच्चे फल या तरकारी को सजाया जा सकता है। वैक्यूम पम्प की सहायता से निर्जलीकरणी के कक्ष मे रिक्तावस्था उत्पन्न कराते हैं। ताकों को 60° से 80° सेन्टीग्रेड के तापमान पर परिक्रमा कराकर भीतर रखे हुए पदार्थों को सुखाते हैं, इसके लिए करीब 4 से 8 घण्टे का समय लगता है। इसकी सहायता से द्रव रूप वाले खाद्य-पदार्थ ही सुखाये जा सकते हैं।

सौर-ऊर्जा द्वारा निर्जलीकरण

उपर्युक्त सभी निर्जलीकरणियों को चलाने के लिए बिजली, मिट्टी के तेल इत्यादि की आवश्यकता होती है, जो उत्पादन-खर्च बढाते हैं। इसलिए भारत के ही नही, समस्त संसार के वैज्ञानिक ऊर्जा संकट से उबरने के लिए अन्य उद्योगो की भाँति खाद्य-पदार्थों के निर्जलीकरण के लिए भी सौर-ऊर्जा के प्रयोग के परीक्षण किये जा रहे हैं। सौर-ऊर्जा संग्राहक बनाये जा रहे हैं, जो वायु को गर्म कर उपर्युक्त निर्जलीकरणी को चलाने लायक रूप में रूपांकन करने के काम में लगे हुए हैं। फलस्वरूप फल-तरकारी उत्पादन खर्च कम हो जाने की सम्भावना है। इसी क्रम में विभिन्न संस्थाओं द्वारा बनायी गयी निर्जलीकरणियों के बारे मे यहाँ चर्चा की जा रही है।

(1) लघु सौर-ऊर्जा-निर्जलीकरणी

यह भी कैबिनेट ड्राइयर्ज की भाँति बना होता है, और यह रीजनल रिसर्च लेबोरेट्रीज जम्मू द्वारा रूपांकित किया गया है। जम्मू के लद्दाख क्षेत्र में एप्रीकाट की खेती अधिक होती है, जिन्हें तुरन्त विपणन नही कर पाते हैं। इसको मकान की छत पर, चट्टानों पर, धूप दिखाकर सुखाया जाता रहा है, जिससे उच्चकोटि का उत्पाद प्राप्त नही होता। इस कठिनाई को दूर करने के लिए सोलार ड्राइयर्ज (सौर ऊर्जा निर्जलीकरणी) गलवनीकृत आयरन से बनाया गया। यह चार ट्रे वाला है, जो कैबिनेट ड्राइयर्जनुमा होता है। इस निर्जलीकरणी के भीतरी भाग तथा ट्रे को काले पेंट से रंगा गया, ताकि सौर ऊर्जा का अधिकाधिक सग्रह कर सके। ऊष्मानाश को रोकने के लिए कैबिनेट को चारों तरफ लकड़ी की छीलन (वुड सेविंग) से ऊष्मा-शोषक कर उसके चारो तरफ काष्ठ मे पैक किया गया। 3 मिलीमीटर मोटाई की कांच की एक चद्दर कैबिनेट के ऊपर लगाई गई, ताकि सौर विकिरण प्राप्त किया जा सके तथा प्राप्त ऊर्जा को क्षति को भी रोका जा सके। इसको दिन-भर सौर ऊर्जा प्राप्त करने योग्य अवस्था में टेढ़े-मेढ़े रखकर सौर ऊर्जा प्राप्त की जाती है। प्रत्येक वर्गमीटर क्षेत्र मे 15 किलो के हिसाब से ट्रे मे फलो को फैलाकर भीतर रखा जाता है। यह ट्रे छिद्र-युक्त होती हैं। सौर-ऊर्जा से गर्म हुई वायु फलों पर लगकर नमी को सोख जाती है। इसमें ऊष्मा से फल सीधे ही ऊर्जा प्राप्त कर लेते हैं और पानी वाष्प बनकर निकल जाता है, इससे फल सूख जाते हैं। तापमान को नियन्त्रित करने के लिए 50 मिलीमीटर व्यास के निकास भी बने हुए होते हैं, जिनको आवश्यकतानुसार खोला जा सकता है। इसके भीतर 78° से० तापमान पाया गया। जबकि धूप का बाहरी तापमान

केवल 34° से० था। भीतर रखे हुए फलों को 4 से 6 घण्टे में सुखाने के लिए ट्रे की अदला-बदली तथा फलों की अलटा-पलटी भी आवश्यक हुई। हामेन (Halman) किस्म के ऐप्रीकॉट को धूप में सुखाने के लिए 19 दिन आवश्यक हुए, जबकि सोलार ड्राइयर्ज की सहायता से तीन दिन में ही सुखाना सम्भव हुआ। इसी प्रकार रक्‍ची कारपो (Rakchay-Karpo) किस्म तथा कोबान (Koban) किस्म को धूप में सुखाने के लिए क्रमशः 18 से 25 दिन आवश्यक हुए, किन्तु सोलार ड्राइयर्ज की सहायता से 3 से 3.5 दिन में ही उक्त क्रिया सम्पन्न की जा सकी।

भाटिया ए० के० सन् 1977 के अनुसार सौर-ऊर्जा निर्जलीकरणी, जो उन्होंने रूपांकित की थी तथा जिसका कुल खर्चा 500.00 रुपये बताया जाता है, उसमें एक बार में 45 किलो फलों को सुखाया जा सकता है। यह लद्दाख क्षेत्र में दिन-प्रतिदिन प्रचलित होती जा रही है।

(2) सोलार स्प्रे ड्राइयर्ज

इसकी बनावट भी पूर्व-चर्चित स्प्रे ड्राइयर्ज की भाँति ही होती है। फर्क इतना ही है कि ऊष्मा स्रोत सौर-ऊर्जा से प्राप्त की जाती है। सोलार स्प्रे ड्राइयर्ज भारत में ही नहीं, अपितु सारे संसार में केवल गुजरात में स्थित अमूल डेयरी में ही स्थापित किया गया है, जिसका रूपांकन वहाँ के इन्जीनियरों द्वारा ही किया गया है। चन्द्रन् टी० सी० 1977 ने इसके बारे में जो प्रतिवेदन प्रस्तुत किया है, उसके अनुसार वहाँ बड़े पैमाने पर दूध को सुखाने के लिए सौर-ऊर्जा काम में ली जा रही है। फलस्वरूप कीमती ईंधन की समस्या का समाधान हो सका है। इसी प्रकार की सौर-ऊर्जा से चलने वाली स्प्रे ड्राइयर की सहायता से दूध ही नहीं, अपितु अन्य तरल खाद्य-पदार्थ भी सुखाये जा सकते हैं।

भारत प्रौद्योगिक स्तर पर विकासशील देशों में प्रथम स्थान पर है, इसके अलावा भारत के अधिकांश क्षेत्र पर सौर-ऊर्जा अधिक प्राप्त की जा सकती है, इसलिए सौर-ऊर्जा पर आधारित प्रौद्योगिकी विकास अन्य देशों से शीघ्रता से सम्पन्न किया जा सकता है। फलस्वरूप सौर-ऊर्जा से चालित निर्जलीकरणियाँ बनाने में देश समर्थ हो सकेगा।

पूर्व-निर्जलीकरण क्रियाएँ

फल-तरकारियों को सुखाने के पहले अन्य परिरक्षणों की भाँति उनके छिलके, बीज-कक्ष आदि अनचाहे भागों को अलग कर कतरनें, (चित्र संख्या 49) विवर्णीकरण करने आदि को पूर्व-निर्जलीकरण या सुखाने के पूर्व की क्रियाएँ कहा जा सकता है; परन्तु अंगूर, आदि कुछ विशेष फलों का छिलका नहीं उतारा जाता, बल्कि उन्हें साबुत ही सुखाया जाता है। इसके पहले क्षारीय-क्रिया विधेयक अवश्य बनाया जाता है।

क्षारीय अभिक्रिया

सोडियम हाइड्रो-ऑक्साइड, सोडियम कार्बोनेट आदि को साधारणतया क्षारीय अभिक्रिया के लिए प्रयोग किया जाता है। लोहे से निर्मित टंकियों में रासायनिक-घोल बनाकर उन्हें उबाला जाता है। इसी प्रकार उबलते क्षारीय-घोल में कुछ प्रत्येक फलों का उपचार कर छिलका उतारा जाता है। इसके लिए फलों को उचित आकार तथा क्षमता में बनी तार की टोकरियों में भरकर जितने समय तक उपचार करना है, उतने (चाहे गये)

समय तक घोल मे डुबोकर उपचार किया जाता है। साधारणतया सोडियम हाइड्रोऑक्साइड ही क्षारीय घोल के लिए काम में ली जाती है। परन्तु फलों की किस्मों के अनुसार घोल की शक्ति (प्रतिशत) बढती या घटती रहेगी। इसको ही निर्जलीकरण पूर्व उपचार कहा जाता है। इस क्रिया से फलो का छिलका फट जाता है, फलस्वरूप शीघ्र सूखने मे मदद मिलती है। याद रखें, फलों का छिलका नही उतारा जाता।

गन्धकीकरण

अगला कदम फलों का गन्धकोपचार करना है। गन्धकोपचार से फलो के सूखने के बाद या पहले वर्ण-भेद नही होता। इससे सूक्ष्मजीवियों का आक्रमण भी असम्भव हो जाता है। फलस्वरूप सूखे फल खराब नही होते। गंन्धकोपचार के लिए कुछ विशेष प्रकार के कक्ष की आवश्यकता होती है, जो काम में लिये जाने वाले फलों की क्षमता के आधार पर



चित्र संख्या–49
इन यन्त्रो की सहायता से फल-तरकारियो को भिन्न-भिन्न आकार मे कतरा जाता है, इनको फ्रूट वेजिटेबल मिल कहा जाता है।

छोटे-बड़े हो सकते हैं। व्यावसायिक स्तर पर काष्ठ, ईंट, एस्बेस्टॉस, सीमेन्ट आदि से कोष्ठ बनाये जा सकते हैं। वायु-रोधक अवस्था मे बनाया हुआ यह कक्ष जब चाहे खोलने तथा बाहर से वायु को भीतर भेजने लायक परिस्थिति में बनाया हुआ होता है। एक कैबिनेट ड्राइयर की भाँति रूपांकित इस कक्ष के भीतर कई ट्रे में फलों को फैलाकर रखा जाता है। प्रत्येक ट्रे मे प्रत्येक फलों के चारो तरफ गन्धक धुआं पहुँचाने के लिए ट्रे जाली से या छिद्र वाली चद्दर से बनी हुई होती है। इस कक्ष के पीछे एक छोटा-सा किवाड होता है, जिसके द्वारा गन्धक एक कटोरी में रखकर, जलाकर तुरन्त भीतर रखा

इसके बाद किवाड को बन्द कर दिया जाता है। फलस्वरूप गन्धक धूप-कक्ष के बाहर निकलकर वहाँ काम करने वाले श्रमिकों पर अपना असर नहीं करती। एक क्विण्टल फलों का गन्धकोपचार करने के लिए करीब 400 से 800 ग्राम गन्धक अनिवार्य है।

प्रयोगशाला के गन्धकोपचार कक्ष

प्रयोगशाला में या घरेलू-स्तर के एक गन्धकोपचार कक्ष का आकार 90 × 60 × 90 सेन्टीमीटर होना चाहिये, जो घरेलू-स्तर की निर्जलीकरणी के बराबर होता है। इसमें 80 × 60 सेन्टीमीटर आकार की ट्रेज को सुविधानुसार रखने या उठाने की अनुकूल परिस्थिति बनायी हुई होती है। इसके भीतर करीब 25 किग्रा फलों का गन्धकोपचार किया जा सकता है। इसके लिए करीब 100 से 200 ग्राम गन्धक की आवश्यकता होती है। इसी प्रकार फल-वर्गों में किये जाने वाले गन्धकीकृत सूखे फलों में निम्न सारणी में निर्देशित मात्रा से अधिक गन्धकाश नहीं होना चाहिये। विभिन्न देशों के लिए भिन्न-भिन्न मात्रा बतायी गयी है।

सारणी संख्या-1

विभिन्न देशों में फलोत्पाद (निर्जलीकृत तथा सूखे) में निर्देशित गन्धकांश की मात्रा तथा उस देश का नाम :

क्रम संख्या	राष्ट्र या प्रान्त	सल्फरडाई-ऑक्साइड पी० पी० एम० के अनुपात में (प्रत्येक 10 लाख फलों के लिए कितने भाग सल्फरडाई-ऑक्साइड के अनुपात में)
1.	ग्रेट ब्रिटेन	2000 पी० पी० एम०
2.	कैनेडा	2500 ,,
3.	स्विट्जरलैण्ड	2000 ,,
4.	जर्मनी, आस्ट्रेलिया, हंगरी	1250 ,,
5.	चेकोस्लोवाकिया	1250 ,, (केवल अंगूर के लिए)
6.	फ्रांस	1000 ,,
7.	जापान	1000 ,, (ऐप्रीकाट) अन्य सूखे पदार्थों में वर्जित है।
8.	संयुक्त राज्य अमेरिका (न्यूयार्क प्रान्त)	2000 ,,

उपर्युक्त अनुपात में गन्धकोपचार घरेलू-स्तर पर ही नहीं, कुटीर उद्योगों के लिए भी उपयुक्त है। इसके लिए काम में ली जाने वाली ट्रे बलशाली, परन्तु भारहीन होनी चाहिये। साधारणतया प्रत्येक ट्रे का आकार 90 × 60 × 5 सेन्टीमीटर होता है। फलों को कतरने के लिए जिस मेज की सहायता ली जाती है, उसका क्षेत्रफल करीब 240 × 90 सेन्टीमीटर तथा ऊँचाई 90 से 100 सेन्टीमीटर होनी चाहिये। इसके पैरों पर पहिये लगे हुए हों, तो सिलाई मशीन की भाँति इन्हें एक स्थान से दूसरे स्थान पर आसानी से लाया, ले जाया जा सकता है। इसमें विविध आकार की ट्रेज को रखने में सुविधा होगी।

सूखे फलों का स्वेदीकरण (Sweating of dried fruits)

सूखे फलो को निर्जलीकरणी से निकालकर उचित वाहिकाओ मे भरकर रखने से उसके भीतर पसीने जैसी नमी उत्पन्न होती है, उसको ही स्वेदीकरण कहा जाता है। यह नमी सूखे फलों के भीतर से बाहर आकर समान रूप से प्रत्येक फलो को मुलायम बना देती है। इसी क्रिया को स्वेदीकरण कहा जाता है। प्रत्येक पेटी की गहराई 120 से 240 सेंटीमीटर होनी चाहिए। प्रत्येक फलों को एक निश्चित अवधि के लिए इन पेटियो मे भरकर रख दिया जाता है, ताकि उसमे स्वेदीकरण हो जाये।

सूखे मेवों के नाम से बेचे जाने वाले फलो में करीब 15 से 55 प्रतिशत नमी पायी जाती है। इन्हे चाहें तो आप धूप में सुखा सकते हैं या कैबिनेट ड्राइयर, टनल ड्राइयर आदि उचित निर्जलीकरणियों मे से किसी एक मे सुचारु रूप से सुखाया जा सकता है। फल-रसो को ड्रम ड्राइटर मे या स्प्रे-ड्राइयर की सहायता से सुखाने से पूर्व उन्हे आवश्यकतानुसार गर्मकर सान्द्रीकरण किया जाता है। जब निर्जलीकरण किया जाता है, तो प्राप्त सूखे फल उत्पाद, धूप में सूखे फल उत्पादों से उच्चकोटि के रूप-रंग और गुणो वाले होते हैं। साधारणतया सेब, ऐप्रीकाट, पीच, नासपाती, अंगूर, अंजीर, केला, अमरूद, अनन्नास, आम इत्यादि धूप में या निर्जलीकरणी द्वारा सुखाये जाते हैं, जिनकी अलग-अलग चर्चा की जायेगी।

(1) सेब

सुखाने के लिए भी कैनीकरण योग्य सेब ही लिए जाते हैं। इसके लिए सेब की यल्लोन्यूटन, पिपिन, वाइनसेप, ज्वानाथान इत्यादि किस्मे उपयुक्त हैं। उपर्युक्त सेबो को कैनीकरण की भांति पूर्व-क्रिया विधेयक बनाकर 6 मिलीमीटर मोटाई मे कतरकर, उन्हे 10 से 30 मिनट समय तक गन्धकोपचार कर, निर्जलीकरणियो मे सजाकर सुखाया जाता है। जिसके लिए 140° से 160° फारनहीट ताप निर्जलीकरणी मे प्रदान कर 6 से 10 घण्टे मे सुखाया जा सकता है। सूखे फल करीब 10 से 25 प्रतिशत होगे।

अगर सेब का छिलका नही उतारा जाता है, तो इन्हे कतरकर 2 से 3 प्रतिशत लवणघोल उपचार कर उसके बाद 1.5 से 2.5 प्रतिशत सोडियम सल्फाइट घोल में उपचार करने से आवश्यक गन्धकोपचार हो जायेगा। इन्हे चाहे धूप मे या निर्जलीकरणी की सहायता से सुखाया जा सकता है।

(2) ऐप्रीकाट (खुबानी)

सुखाने के लिए पेड पर पकी हुई ऐप्रीकाट उत्तम रहती है। इन्हे तोड़कर, दो टुकड़े कर बीज अलग किये जाते हैं तथा कटोरी की भांति इन्हे ट्रे मे फैलाकर गन्धकोपचार कर धूप मे सुखाया जाता है, ताकि 2 से 5 दिन मे सूख जाए। ऐप्रीकाट को 3 घण्टे गन्धकोपचार करना अनिवार्य है। निर्जलीकरणी मे सुखाया जाये तो 135° से 155° फारनहीट ताप पर 10 से 20 घण्टे मे सूख जायेंगी। परन्तु जम्मू के रीजनल रिसर्च लैबोरेटरीज मे रूपांकन की गई लघु सौर ऊर्जा निर्जलीकरणी के भीतर 78° सेंटीग्रेड तापमान उत्पन्न किया जायेगा। फलस्वरूप उसमे 4 से 6 घण्टे में ऐप्रीकाट सूख जाती है। इसके बारे में अन्यत्र चर्चा की जा चुकी है। सूखने के बाद 15 से 20 प्रतिशत उत्पाद प्राप्त हो जायेंगे।

भारत में अधिकांश ऐप्रीकाट जम्मू के लद्दाख क्षेत्र में ही पैदा होती है।

(3) पीच (आड़ूफल)

पीच को पेड़ों में नर्म होते ही एकत्र किया जाता है। अन्य क्रिया ऐप्रीकाट की भाँति ही सम्पन्न की जाती है, लेकिन गन्धकोपचार 4 से 6 घण्टे किया जाता है। आड़ूफल को धूप में सुखाने के लिए ऐप्रीकाट से अधिक समय चाहिए। पूर्ण रूप से सूखे आड़ूफलों का वर्ण सोने (स्वर्ण) जैसा होता है। इन्हें दो भागों में कर, बीज निकालकर 15 से 20 मिनट गन्धकोपचार कर $145°$ से $155°$ फारनहीट पर रखा जाये तो 15 से 24 घण्टे में सूख जायेंगे। प्राप्त सूखा उत्पाद 15 से 20 प्रतिशत रहेगा, लेकिन क्रुस के अनुसार आड़ूफलों को 4 से 6 घण्टे तक गन्धकोपचार या 5 मिनट शक्तियुक्त भापोपचार किया जाना चाहिए।

मृक तथा फफ के अनुसार आड़ूफलों को भाप द्वारा विवर्णीकरण कर गन्धकोपचार कर, सुखाया जाये तो वे पारदर्शक ही नहीं, अपितु सुगन्ध-युक्त भी होंगे।

(4) नासपाती

सुखाने के लिए साधारणतया बार्टलेट किस्म की नासपाती चुनी जाती है। जो नासपाती कच्ची खाने के योग्य होती है, उन्हें ही सुखाने के लिए लिया जाता है। अधिक पका हुआ फल सुखाने योग्य नहीं होता। इन्हें भी दो भागों में कतरकर कटोरी की भाँति सीधे ट्रे में सजाया जाता है। इनके ऊपर जल या मंद लवण से वर्षा करा देते हैं। इस क्रिया से गन्धकोपचार के समय फलों में गन्धक लग जाती है और उन्हें वर्णभेद से भी बचाती है। कुछ देशों में 8 से 24 घण्टे तक गन्धकोपचार विधेयक बनाया जाता है, क्योंकि नासपाती अन्य फलों की भाँति गन्धक-स्वीकारी नहीं है।

इन्हें 12 घण्टे से 48 घण्टे तक धूप में या $140°$ से $145°$ फारनहीट पर निर्जलीकरणी में रखकर सुखाया जा सकता है। इसके लिए 15 से 24 घण्टे समय लग सकता है। सूखे फलों का भार करीब 15 से 20 प्रतिशत होगा। इसके अलावा सरस फलों को ही नहीं, फूलम, बेरी (जिलासा) आदि को भी निर्जलीकृत किया जाता है।

(5) केला

केला भारत के प्रमुख फलों में से एक है। इसीलिए भारत में आदिकाल से केले से चूर्ण तथा सूखे फल इत्यादि बनाये जाते रहे हैं।

केले का सूखन

केले कई किस्म के होते हैं। सब किस्में सूखन के लिए नहीं चुनी जातीं। दक्षिण में विशेषकर केरल तथा आस-पास के क्षेत्र में उगाई जाने वाली एक विशेष किस्म (नेन्द्रण) के केले को सूखन के लिए सुयोग्य माना जाता है। केले को छिलके सहित धोकर तुरन्त बाद छिलका उतार दिया जाता है। इन्हें 12 मिलीमीटर मोटाई की फाँकों में कतरा जाता है। इन फाँकों को 15 से 20 मिनट तक गन्धकोपचार कर धूप में या निर्जलीकरणी की सहायता से सुखाया जाता है। निर्जलीकरणी का तापमान $130°$ से $160°$ फारनहीट हो तो 18 से 20 घण्टे में केला सूख जायेगा। सूखे फलों का वजन लगभग 15 से 1[redacted] प्रतिशत होगा।

फाँकों [redacted] 1 प्रतिशत सोडियम कार्बोनेट घोल में उपचार किया जाये तथा उसके बाद 0.05 प्रतिशत साइट्रिक अम्ल घोल में डुबो लिया जाये, उसके बाद 1 घण्टे गन्धकोपचार किया जाये, उसके बाद निर्जलीकरणी में सुखाया जाये तो अधिक श्रेष्ठ सूखा उत्पाद

प्राप्त होगा। 100 किलो फलों के गन्धकोपचार के लिए 3.600 किलो गन्धक आवश्यक होगी। इन्हें स्वेदीकरण के बाद देखा जाये तो ये आपस में चिपचिपाहट से नहीं जुड़ेंगे। साथ ही प्रत्येक सूखन मुड़ने लायक अवस्था में नर्म होगी।

उपर्युक्त विधि से तैयार किये गये सूखे फलों को 300 गज के पोलथलिन लिफाफों में भरकर वायुरुद्ध अवस्था में सीलबन्द कर रखा जाये तो 6 महीने तक किसी प्रकार का विकार नहीं होगा, परन्तु गेज की मात्रा बढ़ाकर सचयन अवधि बढ़ाई जा सकती है। यह तो हुआ पके केले का धूप में सूखना या निर्जलीकरण।

कच्चे केले का आटा

इसके लिए भी पूर्ण विकसित कच्चे नेन्द्रण केले को ही काम में लिया जाता है। वैसे किसी भी किस्म के केले काम में लिये जा सकते हैं। केले को यथाविधि धोकर, छिलका उतारा जाता है। इन्हें कतरकर गन्धकोपचार किया जाता है। इसके बाद धूप में या निर्जलीकरणी में सुखाया जाता है। जब केले के चिप्स मुरमुरी अवस्था पर आ जायें तथा रंग सफेद-सा रहे तो इनका आटा बनाया जाता है। पिसे हुए आटे को कपड़े से छानकर, कांच की बरनियों में या पोलथलिन लिफाफों में भरकर वायुरुद्ध अवस्था में पैक किया जाता है। कतरे हुए टुकड़ों की मोटाई करीब 3 से 4 मिलीमीटर होनी चाहिये। अगर आटा नहीं बनाना है तो इन्हें तेल में तलकर भी नमकीन की भांति काम में लिया जा सकता है। केले का आटा आदिकाल में एक भारतीय शिशु-आहार माना जाता है, जिसके बारे में आयुर्वेद में चर्चा की गई है।

केले को झागनुमा कर, निर्जलीकरण

यह एक आधुनिक प्रौद्योगिक विधि है। फलों का मन्थन कर झागनुमा कर, पतली परत बनाकर, सुखाकर चूर्ण बनाने की एक नई विधि है। केले का झागनुमा निर्जलीकरण। इसको होम-मेट-ड्राइंग कहा जाता है। यह विधि आस्ट्रेलिया में स्थित सयुक्त राष्ट्र के सस्थान सी० एस० आई० आर० ओ० की खाद्य अनुसन्धान-शाला में किये गये अनुसन्धान पर आधारित है। यह विधि सन् 1968 में सिन्हागाजन तथा मैकबीन ने रिपोर्ट की थी, जो इस प्रकार है—

कैवेन्डिस (Cavendis) केले फलों को धोकर, छिलका उतारकर, फ्रूट ग्राइण्डर की सहायता से गूदा बना दिया जाता है। (बड़े स्तर के लिए पूर्व-चर्चित कोई पल्पिंग मशीन काम में ले सकते हैं) अब इस गूदे में गिलसरियल मोनोस्टीयरेट (Glyceryl Monostearate) या मिवरोल (Myverol) 18 00, स्थायीकरण पदार्थ के रूप में मिलाये जाते हैं, जो 2 प्रतिशत होंगे। उपर्युक्त मात्रा में तोलकर लिये हुए रासायनिक पदार्थ का 145° से 155° फारनहीट ताप के जल में घोल बना दिया जाता है, जो इसी तापमान पर 1 मिनट रखते हैं, ताकि उसका कण अदृश्य हो जाये। इसके साथ 5 प्रतिशत सोडियम मैटाबाई-सल्फाइट, 1000 पी० पी० एम० के अनुपात से मिलाते हैं, ताकि उसमें 0.1 प्रतिशत सल्फर-डाई-ऑक्साइड रह सके।

झागीकरण (फोमिंग)

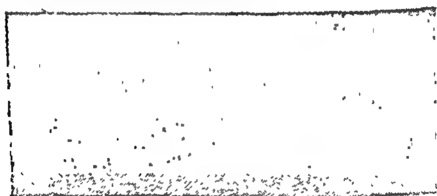
अब उपर्युक्त केले के गूदे तथा रासायनिक पदार्थ के घोल को मिलाकर झागीकरण किया जाता है। इसके लिए उन्होंने होबर्ट मिक्सर (Hobart Mixer) प्रयोग किया तथा

उसमें वायर ह्विप (Wire Whip) लगातार 20° से 25° सेन्टीग्रेड तापमान पर उस समय तक मन्थन किया गया, जब तक उसका झाग 3 गुणा बढ़ न गया। इसके लिए 4 से 5 मिनट तक समय दिया गया था। इसी प्रकार तैयार किया गया झागनुमा केवल सख्त तथा वायर मे से बनी ट्रे पर $\frac{1}{8}$ इंच मोटाई की परत बनाने में भी आसान रहता है

सूखन

उपर्युक्त तरीके से परत बनायी हुई ट्रे को क्रॉसफ्लो (दोनों तरफ से चलने वाली गर्म हवा-युक्त निर्जलीकरणी) डी-हाइड्रेटर की सहायता से सुखाया गया। पहले के 30 मिनट में निर्जलीकरणी का तापमान 210° फारनहीट बाद मे 30 मिनट तक 180° फारनहीट प्रदान करने के पश्चात् निर्जलीकरणी के तापमान को 150° फारनहीट पर उस समय तक रखा गया, जब तक वह पूर्ण रूप से सूख न गया। निर्जलीकरणी के भीतर की वायु परिक्रमा की गति 1,000 फीट प्रति मिनट के अनुपात मे रही।

इन्हें सुखाने के लिए कुल 2 घण्टे दिये गये तो प्राप्त केले के झागनुमा चूर्ण में 5 प्रतिशत आर्द्रता पाई गई थी, उन्हें लगातार दो घण्टे का समय अतिरिक्त दिया गया तो 2 5 प्रतिशत आर्द्रता ही चूर्ण मे रह गई थी (चित्र संख्या 50)।



चित्र संख्या—50
फोम-मेट ड्राइंग द्वारा सूखा कच्चे केले का चूर्ण

उपर्युक्त विधि से प्राप्त किये गये केले के चूर्ण को कैनों मे भरकर वायुरुद्ध अवस्था में मोहरबन्द कर 2, 4 तथा 9 सप्ताह के क्रम मे गोदाम में रखा गया तथा गोदाम का तापमान 30° सेन्टीग्रेड रखा गया तो पाया कि 20° से 25° सेन्टीग्रेड तापमान पर रखे गये झागनुमा बनाकर सुखाये गये केले का चूर्ण 9 से 12 महीने तक खाने योग्य अवस्था में पाया गया तथा उसमें ताजा केले की सुगन्ध भी पायी गयी थी।

आज संसार में अधिकांश केला चूर्ण ब्राजील तथा इक्यूडोर मे उत्पादन किया जाता है, वहां स्प्रे या ड्रम-ड्राइंग प्रणाली द्वारा केला चूर्ण बनाया जाता है। यह चूर्ण अधिकांश संयुक्त राज्य अमेरिका, जर्मनी, फेडरल रिपब्लिक तथा जापान में भेजा जाता है। जापान तथा कुछ अन्य पश्चिमी यूरोपीय देशों में भी इसकी अधिक मांग है। भारत केला उत्पादन

मे एक मुख्य देश माना जाता है। इसलिए विदेशी मुद्रा अर्जन के लिए केला चूर्ण उत्पादन तथा निर्यात एक नई दिशा प्रदान कर सकेगा।

(6) आम

कच्चे आमो का छिलका उतारकर, फाँकें बनाकर, धूप मे सुखाया जाना तो भारत मे आम बात है। इसके अलावा इन्हें चूर्ण बनाकर भी सुरक्षित रखा जा सकता है। इन दोनो को आम्र-चूर्ण कहा जाता है। इन्हे कुछ तरकारियो तथा विशेष चटनियो मे मसाले के रूप में, विशेषकर खटाई के लिए काम मे लिया जाता है। इस आदिकाल से प्रत्येक भारतीय परिवार अपनाता रहा है।

इसी प्रकार पके आम का रस निकालकर रस को बाँस की फरचटो पर पतली परत के रूप मे फैलाकर सुखाते आये हैं। सूखते ही ऊपर चाहे तो थोड़ी शर्करा बुरकाकर पुनः आम-रस का लेपन करते हैं। इस प्रक्रिया की उस समय तक पुनरावृत्ति की जाती है, जब तक सूखे आम-रस की मोटाई 13 से 26 मिलीमीटर न हो जाये। सुखाया गया यह आम-रस अधिक दिन तक नही रह पाता, क्योकि इसमे वर्णभेद हो जाता है, साथ ही प्राणी तथा सूक्ष्मजीवियों का आक्रमण भी हो जाता है, परन्तु उपर्युक्त तरीके से सुखाये गये आम-रस को यदि गन्धकोपचार कर पोलिथलिन लिफाफो मे वायुरुद्ध अवस्था में पैक किया जाये तो दीर्घकाल तक परिरक्षित रह सकता है तथा विदेशी मुद्रा अर्जन में सहायक भी हो सकता है, क्योकि पश्चिम के विकसित देशों मे तथा रूस मे आम तथा आम के उत्पादों की पर्याप्त माँग है।

आम-फाँकों का सूखन

आम की फाँकों के सूखन के लिए अधिक सुगन्ध युक्त, पतली गुठली के, कम रस वाले तथा सख्त गूदे वाले आम अधिक उपयुक्त हैं। इसके लिए रेशे वाले आम नही होने चाहिएँ। आमो को भी यथाविधि धोकर, छिलका उतारकर 12 मिलीमीटर मोटाई की फाँकों मे कतर लेना चाहिए, फिर तुरन्त 1 प्रतिशत पोटेशियम मैटावाई सल्फाइट घोल मे डाल दिया जाये तथा उन्हे 16 घण्टे के बाद निकालकर, जल निसारकर, गन्धकोपचार किया जाता है। इसके बाद निर्जलीकरण की सहायता से सुखाया जाता है। इन्हे धूप मे भी सुखाया जाता है। सूखन को पोलिथलिन लिफाफे मे वायुरुद्ध अवस्था मे पैक करके रखना चाहिए (चित्र सख्या 51)।

(7) अनन्नास

सुखाने के लिए अनन्नास भी कम रसयुक्त किस्म के होने चाहिए। ये पौधे मे ही पूर्ण विकसित होकर पके हुए होने चाहिए। कैनीकरण की भाँति पूर्व क्रिया कर, छिलका उतारकर, उसकी ऊपरी परत को कतरकर अलग किया जाता है, ताकि काँटेदार भाग उसमे न रह सके। इसके लिए एक विशेष उपस्कर काम मे लिया जाता है जिसको पाइनेपल पचर तथा कोरर कहा जाता है। पाइनेपल पचर से कतरे हुए अनन्नास के वलयो मे से कंटकयुक्त बाहरी छिलके को अलग किया जाता है तथा कोरर अनन्नास के वलय के बीच के कोर(पित्त) को अलग किया जाता है। फलस्वरूप छिलका तथा कोर अलग किये हुए अनन्नास के वलयो मे कंटक बिल्कुल नही रहता, शेष काँटेदार भागों में से तथा पित्त से रस निकाला जा सकता है। यह रस स्ववॅश (पानक) आदि पेय बनाने में उपयोगी है।

अनन्नास की उपर्युक्त वलयों की मोटाई करीब 6 से 9 मिलीमीटर होनी चाहिए या इसी मोटाई की फांकें बना ली जाती हैं। इन्हें एक प्रतिशत पोटेशियम मैटाबाइ सल्फाइट में 16 घण्टे रखने के पश्चात् निकालकर गन्धकोपचार कर सुखाया जाता है। अनन्नास की फांकों को बिना विवर्णीकरण से ही एक घण्टे तक गन्धकोपचार कर 150° फारनहीट पर सुखाया जाता है।

बाद में इन सूखनों को पानी में उबाला गया तो पाया कि फांकें सुन्दर तथा सुगन्ध युक्त हैं। परन्तु विवर्णीकृत सूखा अनन्नास देखने में अच्छा पाया गया था। दो घण्टे गन्धकोपचार किया गया अनन्नास हिमतुल्य था, किन्तु इसे पाजकीकरण करने के बावजूद इसमें गन्धक की सुगन्ध महसूस हुई, परन्तु शर्करा घोल में डुबोकर सुखाया गया अनन्नास मीठी गोली की भांति हो रहा, इसे पाचकीकरण किया गया तो पाया कि इसमें सुगन्ध नहीं थी। उपर्युक्त बातें क्रूस तथा साथियों ने अपनी रिपोर्ट में बताई है।

(8) पपीता

सूखने के लिए पूर्ण विकसित पेड़ में पका ठोस पपीता ही चुनना चाहिए, जिसके गूदे की मोटाई अधिकाधिक हो। यथाविधि पूर्व क्रिया विवेचक बनाकर, फांकें बनाली जाती हैं। इनकी मोटाई 6 से 9 मिलीमीटर होनी चाहिए। इन्हें 2 घण्टे गन्धकोपचार कर निर्जलीकरणी में सुखाया जाता है।

(9) कटहल

सुखाने के लिए अन्य फलों की भाँति कटहल भी पूर्ण विकसित, पका हुआ तथा ठोस कोये वाला चुनना चाहिए, स्कन्द एक विशेष किस्म के कटहल में उपयुक्त गुण पाये जाते है जिसको वरिका कहा जाता है। पके स्कन्द को कटहल में से उसी प्रकार निकाला जाता है, जिस प्रकार कैनीकरण के लिए निकाला जाता है। प्रत्येक स्कन्द के एक भाग को चीर कर बीज निकाल दिया जाता है तथा उसको ट्रे पर सजाया जाता है। इन्हे 1 घण्टे गन्धकोपचार कर धूप में या निर्जलीकरणी में 30° से 55° सेन्टीग्रेड पर सुखाया जा सकता है।

(10) लीची

लीची फलों को भी धोकर, छिलका उतारकर, एक प्रतिशत पोटेशियम मैटाबाई सल्फाइट घोल में 18 घण्टे उपचार कर, पानी निसारकर 10 से 15 मिनट गन्धकोपचार किया जाता है। इन्हे 50° से 55° से० तापमान पर निर्जलीकरणी की सहायता से सुखाकर वायुरुद्ध अवस्था में पैक किया जाना चाहिए। इसके लिए पोलिथलिन भी काम में ली जा सकती है।

(11) अनार

पूर्ण विकसित पके अनारो में से दाना निकालकर इन्हें सीधे 30° से 45° सेन्टीग्रेड पर निर्जलीकरणी में सुखाया जाता है। धूप में सुखाने की प्रथा तो पहले ही प्रचलित है। अनारदाने का रस निकालने के बाद शेष बीज को भी सुखाया जाता है। इन्हें अमचूर की भांति शाक-सब्जी, चटनी में ही नहीं, अपितु औषधि के रूप में भी अनार दाना काम में लिया जाता है। इसको भी वायुरुद्ध अवस्था में पैक नहीं किया जाता तो खराब होने की सम्भावना है।

(12) अंजीर

संसार में अंजीर दक्षिणी एशिया माइनर तथा कैलीफोर्निया में अधिकतम सुखाया जाता है। सुखाने के लिए पेड़ में पककर गिरे हुए फल ही उचित माने जाते हैं, अन्यथा उसमे खटास होगी तथा सूक्ष्मजीवियों का आक्रमण भी अधिक होगा। इसलिए पेड़ से गिरे फलों को शीघ्रातिशीघ्र एकत्र कर लेते हैं, अन्यथा उसमें सूक्ष्मजीवो तथा अन्य जीव भी लग जाते हैं।

एकत्र किये हुए फलो को 10 प्रतिशत लवण तथा 10 प्रतिशत चूना मिश्रित घोल में उपचार कर लेते हैं, ताकि फलो के ऊपर के रोम जैसे रेशे अलग हो सकें तथा अच्छा वर्ण भी प्राप्त हो सके। इससे फल का छिलका नर्म भी हो जाता है। अंजीरों को 3 घण्टे तक अधिकाधिक गन्धकोपचार करने से उसमें लगे हुए जीवों का नाश हो जाता है। इन्हें धूप मे सुखाया जाता है। निर्जलीकरणी में 66° सेन्टीग्रेड में सुखाया जाता है। इसके लिए करीब 10 से 12 घण्टे का समय लगता है। सूखे फलों को हाथ से दबाने पर रस नही निकले तो समझ लेना चाहिये कि फल सूख गये हैं। धूप मे भी सुखाते समय इसी प्रकार प्रयोग कर सन्तोष कर सकते हैं। कुछ लोग अंजीरो को दो भागों में कतरकर सुखाते है तो कुछ लोग साबुत ही सुखाते है।

(13) अंगूर

सूखे अंगूर किशमिश तथा मुनक्का के नाम से जाने जाते हैं। किशमिश बिना बीज के सूखे अंगूर होते हैं। ये छोटे होते हैं। मुनक्का बीज वाले तथा बड़े अंगूर होते हैं। यह हाइता किस्म के अंगूर होते हैं। सुखाने के लिए धूप या निर्जलीकरणी की सहायता ले सकते हैं। भारत में प्राप्त अधिकांश सूखे अंगूर विदेशों से एशिया माइनर, स्पेन, ग्रीस आदि देशों से आयात किये जाते हैं। पिछले 15 वर्षों के भीतर अंगूर की खेती का विकास देश में काफी बढ़ रहा है। फिर भी इसका उत्पादन इतना अधिक नही है कि इन्हें परिरक्षण के लिए प्राप्त किया जा सके, क्योंकि कच्चे माल (अंगूर फल) की मात्रा ही उपभोक्ताओं के लिए पर्याप्त नही होती है, फिर भी ससार में सूखे फलो मे अंगूर का प्रमुख स्थान है। इसलिए यदि वर्तमान के लिए नहीं तो भविष्य के लिए इसकी सुखाने की जानकारी देश में अनिवार्य है।

तोमसन अंगूरों का सूखन

अधिकांश अंगूर विकसित देशों तक मे आज भी धूप से ही सुखाये जाते हैं। तोमसन किस्म के अंगूर गुच्छो को, जब वे पूर्ण विकसित होकर पक जाते हैं, कतर कर लाते हैं। व्यावसायिक स्तर पर सुखाने के लिए खेती किया जाने वाला अंगूर एक साथ फूलने-फलने तथा पकने वाला होना अत्यावश्यक है। जब अंगूर पूर्णरूप से पक जाते हैं, तब उसकी ब्रिक्स डिग्री 18° से 26° होना आवश्यक है। यह रेफरेक्ट्रोमीटर (पॉकेट साइज) की सहायता से मालूम किया जाता है। जैसा कि पहले ही कहा जा चुका है, कैलीफोर्निया, आस्ट्रेलिया आदि देशों मे गुच्छों को कतरकर अंगूर के खेत मे ही, कतारों के बीच खाली स्थान पर, कागज की ट्रे मे फैलाकर सुखाया जाता है।

कुछ लोगो का विचार है कि कागज की ट्रे में सुखाने मे अंगूर में जीव लग जाते हैं। इसको रोकने के लिए कुछ प्रदेशो मे धातु से निर्मित या काष्ठ से निर्मित ट्रे काम मे ली जाती है।

जहाँ कागज काम मे लिया जाता है, वहाँ प्रतिदिन शाम को उसी स्थान पर कागज को लपेटकर रख दिया जाता है, तथा पुनः सुखाने के लिए प्रातः फैला दिया जाता है। पूर्ण रूप से सूखते ही इन्हें पेटियों मे भरकर गन्धकोपचार किया जाता है। इसके बाद स्वेदोकरण किया जाता है। तत्पश्चात् इन्हें पैक किया जाता है।

सुल्ताना किस्म के अंगूर सुखाने की विधि

आस्ट्रेलिया के सुल्ताना किस्म के अंगूर तथा कैलीफोर्निया के तोमसन किस्म के अंगूरों में कोई विशेष अन्तर नहीं हैं। इन्हें कतरकर गलवनीकृत छिद्र वाले कनस्तरों मे, जिसका आकार 36 × 28 × 10.2 सेमी० होता है, में भरते हैं। इन्हे उबलते हुए क्षारीय घोल मे 4 से 7 मिनट उपचार कर लेते हैं। यह क्षारीय घोल वनस्पति तेल, क्षारीय लवण, सल्फोनेट आदि मिला हुआ एक मिश्रण है। फलस्वरूप अंगूर 7 से 14 दिन के भीतर सूख जायेंगे। यदि इन्हे क्षारीय उपचार के बिना सुखाया जाये तो आस्ट्रेलिया तथा कैलीफोर्निया के देशों मे करीब 20 से 30 दिन सूखने में लगेंगे।

क्षारीय उपचार किये हुए फलों को धूप में रखे रैकों पर फैला दिया जाता है। इन्हें करीब-करीब सूखने के बाद धूप मे बिछाये हुए कपड़ो (Hessin Cloth) पर फैला कर सुखाते हैं। इन्हें बार-बार पलटते है ताकि समान रूप से सूख जायें।

मस्कट्स (Muscats)

कैलीफोर्निया में मस्कट अंगूर भी तोमसन सीडलस किस्म के बीज रहित अंगूरों की भाँति खेत मे ही सुखाये जाते हैं, परन्तु आधा सूखने के बाद उन्हें पलटते हैं, क्योंकि मस्कट, तोमसन सीडलस किस्म से बड़े होते हैं। मस्कट-किशमिश का उत्पादन आस्ट्रेलिया मे सुल्ताना किस्म की भाँति होता है।

उपर्युक्त विधि से क्षारीय उपचार किये हुए अंगूरों को मैदान मे फैलाकर धूप दिखाकर सुखाते हैं। कागज की तश्तरियो में सुखाने से किशमिश का रंग आकर्षक हो जाता है। इसका वर्ण स्वर्णिम भी रहता है। उपभोक्ताओं की आवश्यकता को दृष्टि में रखते हुए इन पर 2 से 4 घण्टे तक गन्धकोपचार किया जाता है।

अंगूर का निर्जलीकरण

सुखाने के लिए काम में लिये जाने वाले अंगूरों का क्षारीय उपचार उसके छिलके की कठोरता पर निर्भर करेगा। जैसे—कठोर छिलके वाले मस्कट किस्म के अंगूरों को क्षारीय उपचार करने के लिए 2 से 3 प्रतिशत क्षारयुक्त घोल चाहिये। नर्म छिलके वाले सुल्तान, तोमसन तथा टोके किस्म के लिए 0.25 से 0.5 प्रतिशत क्षारीय घोल ही काफी होता है।

क्षारीय उपचार के बाद निर्जलीकरण के लिए निर्जलीकरणी मे सजाया जाता है, जिसका तापमान 43° से 48° सेन्टीग्रेड पहले तथा बाद में 71° से 74° सेन्टीग्रेड होना आवश्यक है या प्रथम तापमान 88° सेन्टीग्रेड पर सुखाकर तुरन्त उसको 71° सेन्टीग्रेड में पूर्णरूप से सूखने तक रखना चाहिये। उपर्युक्त तापमान मे सुखाने के लिए 20 से 21 घण्टे का समय लगेगा। किशमिश को गन्धकोपचार कर 1 दिन धूप दिखाई जाये तो इसका हरापन दूर हो जायेगा।

केन्द्रीय खाद्य प्रौद्योगिक अनुसन्धान शाला के आधार पर अंगूरों (मस्काट तथा थाइन किस्म के) को 2.5 प्रतिशत कास्टिक पोटाश के उबलते घोल में उपचार कर ट्रे में फैलाना चाहिये। (प्रति वर्गमीटर में 15 किलो के अनुपात में) तथा उन्हें 60 मिनट गन्धकोपचार कर 66° सेन्टीग्रेड तापमान पर घरेलू स्तर की निर्जलीकरणी में सुखाने का सुझाव भी दिया गया है। इसी प्रकार सुखाये हुए अंगूरों की मात्रा 4 : 1 के अनुपात में होगी।

(14) पिण्ड खजूर

संसार में पिण्ड खजूर का उत्पादन अधिकांश नील नदी की घाटी, ट्यूनीशिया, अल्जीरिया, सहारा मरुस्थल के ओइसिस, कैलीफोर्निया, अरिजोना आदि स्थानों में होता है। इसके अलावा अफगानिस्तान, बिलोचिस्तान, पाकिस्तान तथा भारत में पंजाब, राजस्थान आदि प्रदेशों में भी इसकी खेती वैज्ञानिक तरीकों से की जाने लगी है।

मिश्र, परसियन खाड़ी के प्रदेशों तथा उत्तरी अफ्रीका में साधारणतया खजूर की सकोटी, डिग्लैट नूर, खड्रावी, हलावी आदि किस्मों की खेती होती है।

साधारणतया भारतीय मण्डी में प्राप्त पिण्ड खजूर पूर्ण सूखा हुआ नहीं होता, इसमें पायी जाने वाली शर्करा सुक्रोस तथा उसके प्रतिरूप में पायी जाती है। परन्तु सम्पूर्ण सूखे हुए पिण्ड खजूर में केवल सुक्रोस ही पाई जाती है। पूर्ण सूखे पिण्ड खजूर को छुहारा कहा जाता है तथा आधे सूखे हुए फलों को पिण्ड खजूर कहा जाता है। इसमें प्रतीप शर्करा पाई जाती है। मिश्र के उत्तरी प्रान्त की सकोटिन किस्मों को पिण्ड खजूर बनाने के काम में तथा डिग्लैट नूर किस्मों को छुहारा बनाने के काम में लिया जाता है। खड्रावी पिण्ड खजूर प्रतीप शर्करा वाली किस्म की होती है।

भारत में पेड़ पर ही फलों के किनारे भूरे रंग के होते ही फलों को तोड़ लिया जाता है, इन्हें 5 से 8 दिन तक तराई (Curing) करने के लिए फैलाकर रखते हैं, लेकिन इसके लिए कई बार पेड़ पर चढ़ना पड़ता है। लेकिन लालसिंह तथा बालसिंह के अनुसार पेड़ पर पिण्ड खजूर जब भूरे रंग के होने लगते हैं, उन्हें उससे 3 से 4 दिन पहले ही तोड़ लेना चाहिये, उन्हें तुरन्त 0.5 से 0.25 प्रतिशत कास्टिक सोडा घोल में 30 सैकण्ड से 2 मिनट तक समय प्रदान कर क्षारीय उपचार किया जाये तथा उसके बाद सुखाया जाये तो अधिक उत्तम उत्पाद प्राप्त हो सकेगा। इसके अलावा पिण्ड खजूर के मौसम में आने वाली धूल भरी आंधियों से सम्भावित क्षति से भी पिण्ड खजूर को बचाया जा सकता है।

कुछ अन्य देशों में पेड़ से उतरे हुए पिण्ड खजूर को [illegible] या मिथाइल ब्रोमाइड की सहायता से धूमीकरण कर कीट-आक्रमण से पिण्ड खजूर को [illegible] रखा जा सकता है।

इसके बाद छलनियों में फैलाकर जेट स्प्रे की भांति (पानी छिड़क के) [illegible] करा कर ब्रुश की सहायता से धोकर, निथारकर उन्हें पकने के लिए, या सीधे सुखाने के लिए पेटियों में भरा जाता है। जिन पिण्ड खजूरों को [illegible] कुछ दिन तक कमरे में फुलाते हैं। इस कमरे का तापमान 32° से 35° [illegible] चाहिये। विकसित पके हुए पिण्ड खजूरों को 110° से 120° फारेनहीट

प्रणाली भी प्रचलित है। अगर उच्च-कोटि के पिण्ड खजूर चाहिये तो उन्हें पेड़ पर ही सूखने देना चाहिये तथा जीव-जन्तु व सूक्ष्मजीवियों से बचाने के लिए पौध-संरक्षण प्रणाली अपनानी चाहिये।

(15) अमरूद

पूर्ण विकसित पके हुए अमरूदों को केनीकरण की भाँति धोकर, चाहें तो छिलका उतारकर, 12 मि०मी० मोटाई में कतरकर 1 से 2 प्रतिशत लवण-घोल में डालते जाएँ तथा पूरे अमरूदों को कतरने तक पड़ा रहने दें। अमरूदों को गोल आकृति में कतरकर बीज कक्ष अलग कर वलय रूप में या मन पसन्द अन्य रूप में भी कतरा जा सकता है। लवण-घोल उपचारित अमरूदों को केले के सूखन की भाँति गन्धकोपचार कर धूप में या निर्जलीकरणी में सुखाया जा सकता है। इसके लिए पके हुए सख्त फलों को ही चुना जाना चाहिये।

अमरूद के गूदे को झागनुमा करके सुखाना

पके हुए केले को झागनुमा कर सुखाने की विधि तो पहले ही बताई जा चुकी है। यहाँ अमरूद-गूदे को झागनुमा कर कैसे सुखाया जाये, इसके बारे में चर्चा की जा रही है। इसके लिए पूर्णरूप से विकसित पके हुए फलों को यथाविधि धोकर, छिलका उतारकर, 2 फाँकों में करके बीज-कक्ष अलग कर देते हैं। इसके लिए बीज-रहित अमरूद अधिक उत्तम रहता है। इनको उचित रूप से गूदा बना ली जाती है। इस गूदे में बराबर शर्करा मिलाकर मिक्सी में फेंटा जाता है। अभी फल तथा शर्करा के भार के अनुपात में एक प्रतिशत अण्ड-श्वेदी चूर्ण तथा 2.5 प्रतिशत जल लेकर दोनों को फेंटकर फल तथा चीनी वाले मिश्रण में मिलाकर पुनः फेंटा जाये। जिस प्रकार केले को झागनुमा करके सूखन बनाया जाता है, उसी प्रकार अमरूद में सूखन बनाया जाता है। मथन किए हुए झागनुमा अमरूद के गूदे को जलेबी की भाँति कपड़े की सहायता से निर्जलीकरणी की ट्रे में फैला दें, इन्हीं ट्रेज को कैबिनेट ड्रायर में 65° से० तापमान देकर सुखाया जाये तो एक घण्टे में ही अमरूद का गूदा सूख जायेगा। इन्हें पाउडर कर वायुरुद्ध अवस्था में पैक करना चाहिए। इस उत्पादन में अमरूद का वास्तविक स्वाद तथा सुगन्ध पायी जायेगी।

(16) ओसमोटिक डीहाइड्रेशन (परासरणिक निर्जलीकरण) (Osmotic Dehydration)

अधिकांश फलों का निर्जलीकरण कैबिनेट ड्रायर्ज तथा अन्य वैक्यूम ड्रायर्ज द्वारा सम्पन्न कराया जाता है, किन्तु इनमें फल की वास्तविक खुशबू, वर्ण तथा रचना को पूर्ण रूप से सुरक्षित नहीं रख पाते हैं, लेकिन इसके विपरीत हिमीकरण निर्जलीकरण द्वारा फलों को सुखाने पर उपर्युक्त गुणों को सुरक्षित रखा जा सकता है। परन्तु इस विधि द्वारा सुखाने में उत्पादन खर्च अधिक होता है, इसलिए ओसमोटिक डीहाइड्रेशन पर अनुसंधानकर्ताओं का ध्यान गया है।

उपर्युक्त विधि पर आज भारत में भाभा एटामिक रिसर्च सेन्ट्रल के फूड टैक्नोलोजी डिवीजन बॉम्बे में तथा सेन्ट्रल फूड टैक्नोलोजीकल रिसर्च इन्स्टीट्यूट मैसूर, में ओसमोटिक

डीहाइड्रेशन प्रणाली में, संसार के अन्य केन्द्रों के साथ-साथ अनुसन्धान चल रहा है। आज केला, आम, सेब इत्यादि पर राममूर्ति तथा साथियों ने परासरणी निर्जलीकरण कर जो अध्ययन किया है, वह इस प्रकार है :—

पके हुए फलो को चाहे गये आकार मे कतरकर 0.25 प्रतिशत सोडियम मैटाबाई-सल्फाइट घोल मे 10 से 15 मिनट भवन ताप मे रखा जाता है। इन फलों को टंकी के 70 प्रतिशत शर्करा घोल जिसका तापमान 50° सेन्टीग्रेड है, में 3 घण्टे रखा जाता है। इस शर्करा घोल को एक पम्प की सहायता से परिक्रमा करायी जाती है, इसके बाद फलो के टुकड़ो से चाशनी को निसारकर लेते हैं। इन टुकड़ों पर जल वर्षा कर चाशनी को धोया जाता है। इसी प्रकार प्राप्त शर्करा घोल को पुनः काम मे लिया जाता है। धोकर निकाले गये फल टुकड़ों को वैक्यूम ड्राइयर्स द्वारा (रिक्त सूखन) सुखाया जाता है, जिसका तापमान 60 ± 2° सेन्टीग्रेड पर 8 घण्टे रखकर सुखाया जाता है। इसके लिए ड्रायर की भीतरी रिक्तावस्था 736 एम०एम० होगी, ताकि फलों में केवल 3 प्रतिशत नमी ही शेष रह सके। इसी प्रकार सुखाये गये उत्पाद को तुरन्त पैक किया जाता है। इसी प्रकार तैयार किये गये फलों को यथाविधि अनुसन्धान कर अध्ययन करने से इस निष्कर्ष पर पहुँचा गया कि परासरणिक निर्जलीकरण से प्राप्त उत्पाद हिमीकरण निर्जलीकरण विधि से प्राप्त उत्पाद के बराबर गुणयुक्त होते हैं तथा इसका उत्पादन खर्च भी कम होता है।

परासरणिक निर्जलीकरण उत्पाद तथा हिमीकरण निर्जलीकरण उत्पादों को 6 से 12 महीने तक एक ही अवस्था मे संचयन कर अध्ययन करने से प्राप्त आँकड़े निम्नलिखित सारणी मे दिये जा रहे हैं (सारणी संख्या 2 देखें)।

इसी प्रकार नन्जून्डा स्वामी तथा साथियों ने कुछ ऊष्णमेखलीय फलो (अनन्नास, पपीता, आम, कटहल, अमरूद इत्यादि) को परासरणिक निर्जलीकरण प्रणाली द्वारा सुखाने की एक विधि तैयार की है। उक्त विधि से तैयार किये गये फलो में पाइनेपल (अनन्नास) अधिक उत्तम माना गया तथा सूखे फलों को पुनः पानी मे भिगोते समय कैनीकृत फलो की फाँको की भाँति पूर्वरूप में हो जाता है। इस विधि से फलो के परासरण प्रयोग के बाद शेष शर्करा चाशनी को कम से कम 6 बार पुनः परासरणिक निर्जलीकरण के लिए प्रयोग में लिया जा सकता है। इसके पश्चात् शेष रही शर्करा चाशनी पाइनेपल सिरप के नाम से विपणन योग्य पाई गयी।

नन्जून्डा स्वामी तथा साथियो ने फलो की फाँको को गाढ़े शर्करा घोल मे डुबोकर रखा ताकि परासरण क्रिया से फल में पाये जाने वाले स्वतन्त्र जल के करीब 35 से 40 प्रतिशत जल को उसमे से निकाला जा सके। इसके बाद उन्होने फलो के टुकड़ों को धोकर, चाशनी साफ कर, वैक्यूम ड्रायर की सहायता से सुखाया गया, प्राप्त फल वर्ण मे ही नही, अपितु सुगन्ध मे भी उन्ही फलों की निर्जलीकरण के बाद प्राप्त सूखे फलो से उत्तम पाया गया, क्योंकि शर्कराघोल का फलो के ऊपर एक सरक्षक का सा प्रभाव पड़ा था। इसी प्रकार परासरणिक निर्जलीकरण के लिए न तो फलों पर ऊष्मा का प्रभाव पड़ता है, न ही अधिक सल्फरडाइ ऑक्साइड के उपचार की आवश्यकता होती है। इसलिए भविष्य मे इस प्रणाली द्वारा होने वाले निर्जलीकृत उत्पादों की सम्भावना अधिक है। इससे तरकारी भी सुखाई जा सकती है।

सारणी संख्या–2

हिमीकरण, निर्जलीकरण तथा परासरणिक निर्जलीकरण के उपरान्त सचयन किये गये अल्फासो आमों मे हुए परिवर्तन (12 महीने तक)

	संचयनकाल (महीनों मे)					
	हिमीकरण निर्जलीकृत उत्पाद			परासरणिक निर्जलीकृत उत्पाद		
	0	6	12	0	6	12
विटामिन सी (एम॰ जी॰/100 जी)	34.1(32)	28.8(42)	22.5(57)	27.2(46)	24.1(52)	20.1(60)
कुल करोटिनोइड (एम॰ जी॰/100 जी)	4 6(73)	3.7(78)	3.1(82)	4.6(73)	3 9(77)	3.3(80)
(कुल शर्करा जी/100 जी)	6.2(38)	4.4(56)	3.1(69)	6.5(35)	5.5(45)	4.7(53)
लघुकारक शर्करा (रेड्यूसिंग सुगर) जी/100 जी	3.4(15)	2.9(27)	2.3(42)	3.7(77)	3.4(15)	2.6(35)
पुनः जलयोजन (रिहाइड्रेशन) अनुपात	4.44	3.9	3.8	3.7	3.36	3.24

राममूर्ति तथा साथी, 1977

(17) सूखे फल मिश्री

भारत मे आदिकाल से कुछ विशेष फलों तथा तरकारियो को गाढ़े शर्करा घोल मे कुछ समय तक उपचार कर सुखाने की विधि प्रचलित है। इसी प्रकार के फल-मिश्री के बारे मे शर्करा साद्रीकरण परिरक्षण अध्याय मे चर्चा की जायेगी।

तरकारियों को सुखाना

तरकारियों के निर्जलीकरण या सुखाने के लिए उसमें पायी जाने वाली किण्वक प्रणाली (एंजाइम सिस्टम) को निष्क्रिय करना आवश्यक है। यह परिस्थिति तरकारियों को उबलते पानी में या शक्ति-युक्त भाप मे उपचार कर, सम्पन्न की जा सकती है। कुछ तरकारियो मे सल्फरडाई ऑक्साइड के उपचार से भी किण्वको को निष्क्रिय बनाया जा सकता है। सूखी तरकारी को संचयन करने के लिए उसमे 4 प्रतिशत से कम जलाश होना आवश्यक है। अगर सूखी तरकारी को वायुरुद्ध अवस्था मे सुचारु रूप से पैक नही किया जाता है, तो 4 प्रतिशत से कम जलांश होते हुए भी खराब हो सकती है।

तरकारियो को टनल, बैल्ट ड्रायर या कैबिनेट ड्रायर्ज मे सुखाया जा सकता है। परन्तु प्याज तथा तत्तुल्य अन्य तरकारियो के रस को फलरस की भाँति ड्रम ड्रायर मे भी सुखाया जाता है। भारत मे आमतौर पर आदिकाल से आलू, करेला, भिण्डी, ग्वार की फली, कच्चा चना, चनाशाक (पत्ता), काचरी, सांगरी, गाजर इत्यादि का सूखन किया जाता रहा है।

आज वैज्ञानिक आधार पर इन्हें धूप के अतिरिक्त निर्जलीकरण से भी सुखाने लगे है, यह विधि उच्चकोटि के उत्पाद प्राप्त कराने में सहायक हुई है। प्रत्येक तरकारी के धूप मे सूखन या निर्जलीकरण के बारे मे यहाँ अध्ययन करेंगे।

सूखन पूर्व क्रियायें

तरकारियो को सुचारु रूप से धोना चाहिए, जिसके बारे मे हमने समय-समय पर जोर दिया है। कर्तीकरण के लिए जैसे छिलका उतारा जाता है, उसी प्रकार उचित तरीके से निर्जलीकरण के लिए भी छिलका उतारना आवश्यक है। उसके बाद चाहे गये आकार मे कतरकर, विवर्णीकरण, गन्धकोपचार कर निर्जलीकरणी मे या धूप मे सुखाया जा सकता है। अधिक जलाश वाली तरकारियो को कैबिनेट ड्रायर में सुखाते है, तो 35° से 45° से० पर सुखाना शुरू कर, क्रमशः चाहे गये तापमान पर पहुँचाना आवश्यक है, अन्यथा तरकारियों मे से जल निसरन हो सकता है। फलो को सुखाने के समय भी इस बात का ध्यान रखना चाहिए, लेकिन ऐसी निर्जलीकरणी में, जिसमे वायु-परिक्रमा उचित रूप से चलती है, इस प्रकार की सावधानी की आवश्यकता नही होती।

विवर्णीकरण

प्याज, लहसुन इत्यादि तरकारियो को छोड लगभग अन्य सभी तरकारियो का विवर्णीकरण किया जाता है। यह क्रिया घरेलू स्तर पर साधारणतया उबलते पानी मे या औद्योगिक स्तर पर शक्तियुक्त भाप मे सम्पन्न की जाती है। हरे मटर, हरे चने, सेम के दाने, पालक तथा अन्य हरे शाकों को 0.8 प्रतिशत मैग्नीशियम ऑक्साइड, 0.1 प्रतिशत सोडियम-

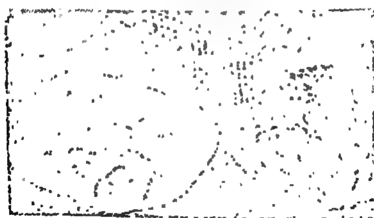
कार्बोनेट, 0.5 प्रतिशत पोटेशियम मैटाबाई सल्फाइट आदि में से किसी एक से मिश्रित जल मे या विवर्णीकरण के बाद जिस जल में उन्हे ठण्डा किया जाता है, उसमें मिलाकर उपचार करने से भी उसका स्वाभाविक वर्ण रोका जा सकता है। इसके लिए 0·1 से 0·25 प्रतिशत पोटेशियम मैटाबाई सल्फाइट घोल में उपचार करने से गन्धकोपचार हो जायेगा। चुकन्दर का विवर्णीकरण या उसके पश्चात् गन्धकोपचार नहीं किया जाता। उचित समय प्रदान कर विवर्णीकरण करने से तरकारियों मे पाये जाने वाले पर-ऑक्सीडेज एंज़ाइम (किण्वक) निष्क्रिय हो जाते हैं, परन्तु पत्तागोभी में पर-ऑक्सीडेज एन्जाइम के स्थान पर कटालेज नामक एन्जाइम पाया जाता है।

उपर्युक्त विधि से विवर्णीकरण कर, ठण्डी की हुई (20° से 25° से० पर) तरकारियों को पानी निथराकर निर्जलीकरणी की ट्रे पर समान रूप से फैलाते हैं। प्रत्येक ट्रे में 5 से 10 किलो प्रति वर्गमीटर के अनुपात से फैलाना उचित होगा। वैसे भिन्न-भिन्न तरकारियों के लिए भिन्न-भिन्न भार निर्धारित है। आमतौर पर कच्चे शाक 5 किलो तथा अन्य तरकारियाँ, जैसे सेम, गाजर इत्यादि 10 किलो के अनुपात में सुखाई जा सकती है।

विभिन्न तरकारियों का सूखन :

(1) हरा मटर

कैनीकरण के लिए जो मटर काम मे लेते है, उससे थोडा और नर्म मटर ही सूखन के लिए चुनना चाहिये। मटरों को एकत्र करते ही कैनीकरण की भाँति तुरन्त निर्जलीकरण



चित्र संख्या–51
मटर श्रेणीकरण यन्त्र जो बड़े कारखाने के योग्य है।

विधेयक बनाना चाहिए, क्योकि मीठे मटरो की अधिकांश शर्करा 24 घण्टे के अन्दर मण्ड मे परिवर्तित हो जाती है। इसलिए जितना सुखाने में विलम्ब करेंगे उतनी ही मटर की मिठास भी कम हो जायेगी, चाहे आपने कितने ही ऊँचे किस्म के नर्म, मीठे मटर क्यो न चुने हो।

फली में से मटर निकालकर कैनीकरण की भाँति श्रेणीकरण (चित्र संख्या 51), विवर्णीकरण आदि के पश्चात् इस प्रकार ट्रे मे फैलावें कि करीब 7 से 8 किलो प्रति वर्गमीटर पर समान रूप से फैल सके। इन्हें निर्जलीकरणी की सहायता से सुखाएँ, किन्तु उसका अन्तिम तापमान 65° सेन्टीग्रेड रहे।

सूखन के लिए मटर की उपयुक्त किस्में इस प्रकार हैं—बोनविल्ला (शुष्क पदार्थ 23 से 33 प्रतिशत), जवाहर मटर–1 (24 से 26 प्रतिशत शुष्क पदार्थ), अरकल (20 से 22 प्रतिशत शुष्क पदार्थ), एयरली–दिसम्बर तथा जवाहर मटर–2। उपर्युक्त सभी किस्मों के दाने मोटे और गहरे हरे भी होते हैं। इन सभी किस्म की मटर फलियो से केवल 40 से 45 या 45 से 50 प्रतिशत मटर का दाना प्राप्त होता है। इनमें सर्वश्रेष्ठ किस्म कैनीकरण की भाँति निर्जलीकरण के लिए भी बोनविल्ला मटर ही मानी जाती है।

(2) गाजर

सुखाने के लिए पीले गाजर अधिक उत्तम हैं। इन्हें भी कैनीकरण की भाँति तैयार कर लेते हैं, परन्तु दो या चार लम्बी फाँको में कतर ली जाती है, जिनकी प्रत्येक की मोटाई 10 मिलीमीटर हो। इन्हे 3 से 4 मिनट समय देकर उबलते पानी मे या भाप में विवर्णीकरण कर 10 मिनट पोटेशियम मैटाबाई सल्फाइट के ठण्डे घोल में उपचार कर लेते हैं, जिनमें 0 125 प्रतिशत पोटेशियम मैटाबाई सल्फाइट मिलाया गया हो। इन्हें निर्जलीकरणी मे सुखाया जाता है, जिसका अन्तिम तापमान 65° से० रहे। सूखने के लिए करीब 15 घण्टे समय की आवश्यकता होगी। प्रत्येक टुकड़ा टूटने लायक हो जाये तो इसमें 5.5 प्रतिशत भार होगा।

घीयाकस या तद्तुल्य यन्त्र की सहायता से उचित मोटाई में कसकर उपर्युक्त क्रिया विधेयक बनाकर भी सुखाया जा सकता है, लेकिन इनका विवर्णीकरण जल से नहीं किया जाता, बल्कि 1 से 2 मिनट समय देकर भापोपचार आवश्यक है। इन्हें धूप में भी सुखाया जा सकता है।

(3) फूलगोभी

फूलगोभी को सुखाने के लिए भी कैनीकरण की भाँति पूर्व-क्रिया विधेयक बनाकर फूलों को तोड़ लिया जाता है। प्रत्येक-फूल के टुकड़े की मोटाई 10 से 12 मिलीमीटर होनी चाहिये। इनका 0 125 प्रतिशत पोटेशिमय मैटाबाई सल्फाइट घोल मे विवर्णीकरण करना चाहिये। इसके लिए अन्य तरकारियों की भाँति प्रति किलोग्राम फूलगोभी के लिए 0.5 लीटर घोल की आवश्यकता होगी। इन्हें निर्जलीकरणी में सुखाया जाता है, जिसका अन्तिम तापमान 50° सेन्टीग्रेड रखा जाता है।

(4) पत्तागोभी

पत्तागोभी को सुखाने के लिए पूर्व-चर्चित तरकारियों की भाँति पूर्वोपचार कर कतर लिया जाता है। इसके टुकड़ो की मोटाई 4 से 8 मिलीमीटर होनी चाहिये।

इसका भी गाजर की भाँति विवर्णीकरण कर (3 से 4 मिनट समय देकर) 0.2 प्रतिशत पोटेशियम मैटाबाई सल्फाइट घोल मे 2 से 3 मिनट समय, उपचार किया जाता है। इसके लिए प्रति किलोग्राम कतरी हुई पत्तागोभी के लिए 0.5 किलो घोल की आवश्यकता होती है।

0.5 प्रतिशत सल्फाइट तथा बाई सल्फाइट वाले मिश्रित घोल में गन्धकोपचार की हुई पत्तागोभी मे 1000 से 2000 पी०पी०एम० के हिसाब से गन्धक पायी गई।

(5) आलू

निर्जलीकरण के लिए भी उपयुक्त आलू वही है जो कैनीकरण के लिए चुना जाता है। आलू को भी उसी प्रकार पूर्व-क्रिया विधेयक बनाकर 6 से 10 मिलीमीटर मोटाई के टुकड़ो मे कतरा जाता है, आलू के चौकोर टुकड़े भी आजकल अधिक पसन्द किये जाते हैं। कतरे हुए आलुओ को जल मे या 0.05 प्रतिशत पोटेशियम मैटाबाई सल्फाइट घोल मे डालते रहने से उनमे ऑक्सीकरण से होने वाले वर्ण-भेद को रोका जा सकता है।

आलू को पूरा कतरने के बाद घोल से निकालकर 3 से 4 मिनट समय देकर उसका विवर्णीकरण किया जाता है तथा तुरन्त बाद 0.1 प्रतिशत पोटेशियम मैटाबाई सल्फाइट में 10 मिनट रखा जाता है। यदि आलुओ को विवर्णीकरण के पूर्व पोटेशियम मैटाबाई सल्फाइट घोल मे नही रखा गया हो तो विवर्णीकरण के बाद 0.13 प्रतिशत घोल में रखना चाहिए, फिर इन्हें निथारकर निर्जलीकरणी मे सुखाया जाता है, जिसका अधिकतम तापमान 65° से० होता है। सूखने के लिए 6 से 8 घण्टे समय लगेगा। सूखे आलू करीब 14 प्रतिशत रहेंगे।

उपर्युक्त विधि से तैयार किये गये सूखे आलुओ को 65° के बजाय 93° से० पर सुखाकर आटा बनाकर परिरक्षित किया जाता है। यह प्रणाली कैलीफोर्निया मे प्रचलित है। भारत में आलू को साबुत उबालकर, छिलका उतारकर 6 से 9 मिलीटर मोटाई मे, गोल आकृति मे कतरकर सुखाते है। अगर कच्चे आलू को कतरकर उपर्युक्त क्रिया विधेयक बनाकर धूप में सुखाया जाता है तो अधिक उत्तम चिप्स प्राप्त होते है।

डीप फैट ड्राइंग (तीव्र वसा सूखन)

कच्चे आलू को धोकर, छिलका उतारकर, पतले कतरकर पोटेशियम मैटाबाई सल्फाइट घोल मे उपचार कर, उसका पानी निथारकर तीव्र वसा मे तलकर निकालने के तरीके को डीप फैट ड्राइंग अर्थात् तीव्र वसा सूखन विधि कहा जाता है। इस प्रकार के चिप्स को पोटेटो वेफर्स कहा जाता है। अमेरिका मे तथा अन्य विकासशील देशो में इसी प्रकार तैयार किये गये आलू के चिप्स को एक विशेष प्रकार के सेन्ट्रीफ्यूज (अपकेन्द्रीकरण यन्त्र की सहायता से चिप्स (तले हुए) मे से वसा को या तेल को निकालकर पैकिंग किया जाता है, ताकि उसमे तेल की मात्रा न्यून हो जाये। भारत में तेल मे तलने की प्रथा तो है, परन्तु उसमें से तेल को दूर करने का प्रचलन नहीं है। अगर तले हुए पदार्थों से उपर्युक्त विधि से तैल या वसा को अलग किया जावे तो उत्पाद अधिक उत्तम रहेगा तथा वह संग्रहण के समय विकृतगन्धी नहीं होगा।

(6) टमाटर

सुखाने के लिए भी सुर्ख लाल तथा कम रस वाले गूदेदार सख्त टमाटर ही चुने जाते हैं। भापोपचार या उबलते पानी मे डालकर, उबलते ही टमाटरों को निकालकर तुरन्त ठण्डे पानी में डुबोते है। एकदम गर्मी से एकदम ठण्डे पानी मे चले के कारण टमाटर का छिलका फट जाता है। इसके बाद छिलका उतारकर, इन्हें सलाद-सा कतर लिया जाता है, ताकि गोल आकृति मे रह सकें। इन्हे 66° से० पर रखने के पूर्व गन्धकोपचार कर सुखाना चाहिये। सूखने के लिए 9 से 10 घण्टे का समय चाहिये, इसके बाद टमाटर टूटने लगेंगे तथा दबाने से रस नही आयेगा। सूखा टमाटर करीब 3 से 4 प्रतिशत होगा। इन्हें चूर्ण बनाकर भी रखा जा सकता है। कुछ लोग छिलके सहित भी सुखाते हैं।

(7) पालक तथा अन्य हरे शाक

कैनीकरण की भांति इन्हें भी सावधानी के साथ चुनकर, धोकर, मोटे सिरो को अलग कर, पत्तों को 12 मिलीमीटर मोटाई पर कतरा जाता है। इन्हे 2 मिनट भापोपचार द्वारा विवर्णीकरण कर 60° से० तापमान पर सुखाया जाता है। सूखने के लिए 6 से 8 घण्टे का समय लगेगा। रखे गये कच्चे माल का करीब 6 से 7 प्रतिशत सूखा उत्पाद प्राप्त होगा।

(8) प्याज

व्यावसायिक स्तर पर सुखाये जाने वाली एक मुख्य तरकारी है, प्याज। विदेशो मे विशेषत: पश्चिमी देशो में सफेद प्याज की मांग अधिक होती है। फ्लाइम पीलिंग (ज्वाला द्वारा छिलका उतारने की विधि) द्वारा इनके छिलके तथा जडो को जलाकर इन्हे तैयार किया जाता है, परन्तु देश मे प्याज का छिलका तथा गांठो को श्रमिक अपने हाथ से निकालते हैं। इन्हे यन्त्र द्वारा 4 से 6 मिलीमीटर मोटाई पर कतरा जाता है, कतरी हुई प्याज को 5 प्रतिशत लवण-घोल मे 10 मिनट रखा जाता है। तुरन्त बाद निकालकर पानी निसराकर 140° से 150° फारनहीट तापमान पर रखकर निर्जलीकरणी मे सुखाया जाता है (चित्र संख्या 51), इसके लिए 10 से 12 घण्टे का समय लगता है। सूखा प्याज करीब 10 प्रतिशत रहेगा। कुछ लोग इसका चूर्ण बनाकर भी पैकिंग करते है। *प्याज के सूखे वलय को उसके भार के 5 से 6 गुणा पानी मे 2 घण्टे भिगोकर, अन्य सूखे* शाको की भांति काम मे लेते हैं, परन्तु सूखे प्याज चूर्ण को सीधे तरकारियो (पकी-पकायी) में बुरकाया जाता है।

प्याज को गन्धकोपचार कर सुखाया गया तो विपरीत परिणाम रहा। गन्धकोपचार कर सुखाये गये प्याज की सुगन्ध नष्ट हो गई। इसलिए गन्धकोपचार न करके प्याज को पूर्व-चर्चित विधि से ही प्याज भी सुखाया जाता है।

लेकिन कुछ अन्य तरकारियो की भांति इसको भी डीप.फैट फाइंग (तीव्र वसा मे तलकर) द्वारा सूखने की विधि पर कुछ वैज्ञानिको द्वारा जोर दिया जा रहा है। तेल मे या घी में तैयार की हुई तरकारियों को सेन्ट्रीफ्यूज द्वारा उसमे बचे घी या तेल को तलने के तुरन्त बाद अलग किया जाता है। परन्तु भारत में यह प्रणाली प्रचलित नहीं है। सम्भवतः भविष्य मे प्रचलित हो सकेगी।

भाटिया बी० एस० 1977 ने प्रस्तुत किया कि प्याज को 5 मिलीमीटर मोटाई में कतरकर उसके भार के चार गुणा तेल में 45 मिनट समय देकर तल लिया जाए तो 5 प्रतिशत नमी रह जायेगी, लेकिन तेल का तापमान तलने के पहले 190° सेंटीग्रेड तथा तलते समय 120° सेंटीग्रेड रखना चाहिए इसके तेल के अंश को 50 से 24 प्रतिशत कम करने के लिए मिलिंग मशीन काम में ली जा सकती है। इन्हें पेपर फॉइल पोलिथिन (Polythene) में पैक किया गया तो पाया गया कि 1 वर्ष तक उसमें विकृतगंध नहीं पाई गई। लेकिन इसके लिए स्टेबल फैट (स्थिरीय वसा) काम में लिया जाना चाहिए। इसी प्रकार अन्य तरकारियों पर भी संसार के विभिन्न देशों में अनुसन्धान कार्य चल रहे हैं। आलू के सूखन के बारे में चर्चा करते समय तलने पर आलू में रहे तेल के अंश को कम करने के लिये वहाँ सेंट्रीफ्यूज (एक विशेष सेन्ट्रीफ्यूज) काम में लिया जाता है, इसकी चर्चा की जा चुकी है।

निर्जलीकरण के लिए प्याज की तीन प्रमुख किस्मों को उपयुक्त माना गया है, क्योंकि इन सभी प्याजों का कुल घुलनशील ठोस पदार्थ (T.S.S.) करीब 13° ब्रिक्स है तथा ये मोटे भी हैं। ये किस्में—नम्बर 106, नम्बर 113, औ. आई. सी. ए. आर. द्वारा विकसित की गई हैं तथा एस-48 पंजाब एग्रीकल्चरल यूनिवर्सिटी द्वारा विकसित है।

(9) लहसुन

सेठ के० के० 1977 के अनुसार देश में अधिकांश लहसुन की खेती गुजरात तथा मध्य प्रदेश में होती है। लहसुन को सुखाने के लिए ये ही दो प्रान्त देश की आठ डी-हाइड्रेशन इण्डस्ट्रीज को सप्लाई कर सकते हैं। इसके उपरान्त भी विपणी में कच्चे लहसुन की खपत पर कोई विपरीत असर नहीं पड़ेगा, क्योंकि उपर्युक्त दोनों प्रान्तों में काफी अधिक लहसुन का उत्पादन किया जाता है।

इसके अलावा देश में ओनियन डी-हाइड्रेशन प्लांट्स वर्ष भर प्याज के अभाव में चल नहीं पाता, इसकी पूर्ति हेतु उपर्युक्त प्याज निर्जलीकरण कारखानों में लहसुन को सुखाना चाहिए ताकि कारखाना लगातार चल सके। साथ ही डी-हाइड्रेशन प्लांट की क्षमता दुगुनी हो जायेगी, क्योंकि लहसुन का निर्जलीकरण अनुपात अन्य तरकारियों की तुलना में बहुत कम होता है।

भारतीय लहसुन की विदेशों में अधिक-मांग है। अन्तर्देशीय विपणी में सूखे लहसुन की अधिक मांग होते हुए भी भारत इसकी पूर्ति करने में असमर्थ है, क्योंकि सूखी तरकारियों के उत्पादन में डी-हाइड्रेशन इण्डस्ट्रीज को जो 20% नकद सहायता दी जाती है, वह लहसुन के लिए नहीं दी जा रही है, क्योंकि लहसुन को तरकारी में नहीं माना जाता है।

अगर प्याज को तरकारी माना गया है तो लहसुन को भी मानकर इस व्यवसाय को प्रोत्साहन देने हेतु सहायता दी जानी चाहिए, लेकिन अब तक प्राप्त आँकड़ों के अनुसार यह कहना असम्भव है कि कितने सूखे लहसुन का निर्यात किया गया है। सेठ के अनुसार पिछले 5 वर्षों में सम्भवतः कोनार (जिरर्यंट) सूखे लहसुन का निर्यात किया जा चुका होगा।

सूखे लहसुन के व्यवसाय को बढ़ावा मिलने से प्रति टन सूखा लहसुन तैयार करने के लिए करीब 350 मजदूरों की और आवश्यकता होगी। इस अनुपात से कुछ सीमा तक देश की बेरोजगारी-समस्या का समाधान भी हो सकेगा।

लहसुन साधारणतया छिलका उतारकर 6 मिलीमीटर मोटाई मे कतरा जाता है, उनमे से भरे हुए लहसुन को हटाकर अधिकतम 55° सेन्टीग्रेड तापमान पर सुखाया जाता है, परन्तु नई फसल के समय मे सुखाया जाये तो मरा हुआ लहसुन नही होगा। सूखे हुए लहसुन मे करीब 8 प्रतिशत जलांश होगा। रूस के अनुसार लहसुन को 104° से 110° फारनहीट (43° से 50° सेंटीग्रेड) पर सुखाया जा सकता है। इसका पाउडर कर पैकिंग किया जाता है। आजकल लहसुन को सीधे सुखाकर, छिलका निकालकर, इन्हे चूर्ण बनाकर पैकिंग करने के गुणावगुणो पर केन्द्रीय खाद्य प्रौद्योगिक अनुसधान शाला मे अध्ययन किया जा रहा है। यह विधि उपर्युक्त विधियो से अधिक उत्तम रहेगी। इस सम्भावना से इन्कार नही किया जा सकता।

(10) भिण्डी

देश भर मे प्रचलित एक दूसरी प्रमुख तरकारी है—भिण्डी। भिण्डियो को अच्छी तरह धोकर लेना चाहिए। यह भी सावधानी से मालूम कर लेना चाहिए कि उसमें किसी प्रकार की कीट-बाधा तो नही है। छोटी भिण्डियो को बिना कतरे काम में लेते है, परन्तु मोटे डण्ठल तथा सिरे अलग कर लेते हैं। इस समय ध्यान रखना चाहिए कि भिण्डी का बीज बाहर से नजर नही आ सके। बड़ी भिण्डियो को 6 मिलीमीटर मोटाई मे कतर लें।

इन्हे इनके साइज के आधार पर 3 से 5 मिनट तक विवर्णीकरण कर 0 125 पोटेशियम मैटाबाई सल्फाइट घोल मे 10 मिनट उपचार कर सुखाते है। विवर्णीकरण उबलते पानी में या शक्तियुक्त भापोपचार से कर सकते है। भिण्डी के विवर्णीकरण के पश्चात् गन्धकोपचार भी कर सकते हैं। इसके लिए ही 0 25 प्रतिशत पोटेशियम मैटाबाई सल्फाइट घोल में उपचार किया जाता है। इसके लिए 1 किलो टुकडो के लिए आधा लीटर घोल की आवश्यकता होगी। इन्हें 60° से० ताप पर सुखाया जाता है। धूप मे सुखाया जा सकता है।

(11) करेला

भिण्डी की भाँति सारे देशवासियों की एक प्रमुख तरकारी है, करेला। सुखाने के लिए चुने गए करेले पूर्ण विकसित परन्तु नर्म होना चाहिएँ। इन्हे धोकर 3 से 6 मिलीमीटर मोटाई में कतरकर 15 से 25 प्रतिशत लवण घोल मे उपचार किया जाता है। आधे घण्टे तक लवणघोल मे रखने के बाद इन्हें निसारकर धूप में सुखाकर पैकिंग किया जा सकता है। देश मे कच्चे करेले को विना उपचार किये ही धूप में सुखाने की प्रथा तो है ही, लेकिन उपचार किये हुए सूखे करेले अधिक दिन तक विकार-रहित रहेंगे।

लेकिन कतरे हुए करेलो को उबलते पानी मे या भाप में लगभग 5 मिनट का समय प्रदान कर विवर्णीकरण कर, ठण्डा अधिकतम 60° सेंटीग्रेड तापमान पर सुखाया जाए तो और भी उचित उत्पाद प्राप्त हो सकेगा। सूखे करेले को चिप्स की भाँति तेल में तलकर या पुनः जल में भिगोकर ताजा तरकारी की भाँति पकाया जा सकता है।

(12) कोला (कद्दू)

कोला हर प्रान्त के लोग तरकारी के रूप में तो काम मे लेते हैं, परन्तु सूखे कोले का प्रयोग देखने मे नही आया है। कोला पूर्ण विकसित होने पर, तोड़कर रखा जाए तो साधारण भवन ताप पर 3 से 4 महीने ज्यो का त्यो रहता है, परन्तु पश्चिमी देशो मे, भारत की भाँति अधिक मात्रा मे कोले की खेती नही की जाती। इसलिए वहाँ संसाधित कोले को ही काम में लिया जाता है। परन्तु देश के आपातकालीन परिस्थिति मे सूखे कोले को भी ससाधित उत्पादों की भाँति काम में लेने के लिए सुखाया जाए तो उचित ही है।

पूर्ण विकसित पके हुए कोले को सुचारु रूप से धोकर, कतरकर, छिलका, बीजकक्ष तथा अन्य अनचाहे भागो को अलग कर 8 मिलीमीटर मोटाई के चौकोर टुकड़ो को तुरन्त 2 प्रतिशत लवणघोल मे उपचार के लिए डाल दिया जाता है। कतरने के बाद टुकड़ो को निकालकर 2 प्रतिशत लवणघोल वाले उबलते पानी में 5 से 10 मिनट समय प्रदान कर विवर्णीकरण करते हैं। इन्हे ठण्डा कर, निसारकर 65° से० ताप पर सुखाया जाता है। इसके लिए 8 से 11 घंटे समय की आवश्यकता होगी तथा कच्चे माल का करीब 5 प्रतिशत सूखन प्राप्त होगा। उपर्युक्त विधि से सूखे काशीफल की सूखन मे 6 प्रतिशत जलांश रहेगा। इसे आटा बनाकर भी पैकिंग किया जा सकता है। संयुक्त राज्य अमेरिका के होटलो तथा बेकरियो मे इसकी अधिकाधिक खपत होती है।

(13) सेम का दाना

पूर्ण विकसित नर्म सेम की फलियों से दाना निकालकर एक प्रतिशत सोडियम कार्बोनेट के उबलते घोल मे 5 से 7 मिनट उबाला जाता है। इसके बाद ठण्डे पानी मे डालकर, ऊपरी छिलका उतारा जाता है। इसे दो मिनट समय देकर विवर्णीकरण कर, 60° सेन्टीग्रेड तापमान पर सुखाया जाता है। सुखाने के लिए 7 से 9 घण्टे का समय लगेगा। प्रारम्भिक भार का करीब 15 प्रतिशत सूखन प्राप्त हो सकेगा।

(14) हरी सेम

सेम की फली पूर्ण विकसित होने के पूर्व, चपटी अवस्था में एकत्र करनी चाहिए। इसी प्रकार की नर्म फलियो को अच्छी तरह धोकर, अनचाहे भागों को अलग कर, 6 मिलीमीटर लम्बाई मे कतरा जाता है। इन्हें 3 से 5 मिनट तक विवर्णीकरण कर गन्धकोपचार कर धूप मे या निर्जलीकरणी मे सुखाया जाता है। इसकी सूखन करीब 5 प्रतिशत प्राप्त होती है।

(15) हरी मेथी

मेथी दो किस्मो की होती है, एक दाने के लिए, दूसरी हरे शाक के लिए। पत्ते को एकत्र कर, मोटे डण्ठलो को अलग कर खूब धोया जाता है ताकि उसमे किसी प्रकार के सूक्ष्मजीव तथा घातक की भाँति अन्य कीड़े-मकोड़े भी न रह सकें। इन्हें 2 मिनट तक विवर्णीकरण कर 60° से० तापमान पर सुखाया जा सकता है। इसी प्रकार हरी सरसो, हरी मूली को भी सुखाया जा सकता है।

(16) बैंगन

पूर्ण विकसित नर्म बैंगनों को चुना जाता है, चाहे बैंगनिया रंग के बैंगन हों या हरे अथवा सफेद। लम्बे तथा अण्डाकार के अलावा पतले तथा छोटे गुच्छेदार बैंगनो की भी खेती की जाती है। इन्हे धोकर डण्ठल अलग कर 6 मिलीमीटर मोटाई मे या चक्र रूप मे या लम्बाई मे कतर सकते हैं। कतरते समय होने वाले कालेपन को रोकने के लिए 0 5 प्रतिशत पोटेशियम मैटाबाई सल्फाइट घोल मे प्रत्येक टुकड़े को कतरते ही डालते रहे। कतरे हुए बैंगनो को 90 मिनट रखा जाना चाहिए। इन्हे करीब 4 मिनट का समय देकर विवर्णीकरण कर 50° सेन्टीग्रेड ताप पर सुखाया जा सकता है। सूखने मे करीब 9 घण्टे का समय लगता है।

सूखी फल-तरकारियों का पैकिंग तथा संचयन

सूखी तथा निर्जलीकृत फल-तरकारियो को उपभोक्ताओ तक पहुँचने तक उनकी सुगन्ध तथा अन्य गुणो को यथावत् उनमे बनाये रखना ही उत्पादको का या फूड पैकरो का प्राथमिक उद्देश्य होता है। अक्सर उत्पादन-केन्द्रो से उपभोक्ताओ के केन्द्रो की दूरी काफी अधिक रहेगी, कभी-कभी फल-तरकारी उत्पादो को भूगोल की आधी दूरी तय करनी होती है, फिर भी उत्पादको का यही उद्देश्य रहता है कि वे महीनो बाद भी उपभोक्ताओ तक, सही-सलामत पहुँच जाये। इसके लिए सूखी या निर्जलीकृत फल-तरकारियो को अपनी यात्रा के दौरान भिन्न-भिन्न जलवायु वाले प्रदेशो को पार करना पड़ता है, कही तापमान अधिक होता है तो कही आर्द्रता अधिक होती है। कुछ ऐसे भी स्थान आ सकते है, जहाँ अधिक तापमान तथा अधिक आर्द्रता हो। उत्पादक को इन सब बातो को ध्यान मे रखना आवश्यक है तथा इस दृष्टि मे ही सूखी फल-तरकारियो का पैकिंग किया जाना आवश्यक है। पैकिंग साधनों को चुनते समय यह भी ध्यान रखना होगा कि वे कम से कम दामो मे प्राप्त हो तथा उनके द्वारा बाहर से अन्दर रखे उत्पादो मे किसी प्रकार की गन्दगी न प्रवेश कर सके। परिवहन के समय होने वाले धक्के-मुक्को को सहन करने योग्य पैकिंग हो तथा ऐसा पैकिंग हो कि उठाने-रखने मे किसी प्रकार की दिक्कत न हो। साथ ही स्थान घेरने वाला न हो, सर्वोपरि न्यून भार का हो, इत्यादि ध्यान रखना आवश्यक है।

आजकल उपर्युक्त बातो को ध्यान में रखते हुए कुछ विशेष संवेष्टन पदार्थ व्यवसाय मे काम मे लिये जा रहे हैं, जैसे—कागजी उत्पाद, बाँस उत्पाद, पोलिथलिन पर्लैक्सिबिल फिल्म, एल्युमीनियम फाइल, काँच, टिन, हेसियन तथा काष्ठ वाहिकाएँ। उत्पादों के स्वाभाविक गुणो के आधार पर संवेष्टन-पदार्थों को चुना जाता है।

आज भारतीय विपणी मे सूखा हरा मटर, भिण्डी तथा प्याज सामान्यत देखा जाता है। उपर्युक्त उत्पाद अधिकांश नम्यवाहिका मे पैक किये जाते है, लेकिन इन वाहिकाओं को बार-बार काम में नही लिया जा सकता, यह अधिक आर्द्रता-रोधक होती है।

सूखी भिण्डी, हरे मटर आदि को धूल, सूक्ष्मजीव तथा अन्य प्राणियों से बचाकर पोलिथलिन से निर्मित लिफाफो मे भरकर कागज या टिन के डिब्बो मे रखकर सीलबन्द किया जाता है, परन्तु व्यावसायिक स्तर पर सूखे उत्पादो का तुरन्त पैकिंग सम्भव नही है,

इसलिए इन्हें उपर्युक्त अवस्था में ही (ढेर में) गोदामों में संचयन किया जाता है। साथ ही अन्य सावधानियाँ भी बरती जाती हैं, ताकि भविष्य में सुविधानुसार पैकिंग किया जा सके। ध्यान रखें, इसी प्रकार की (संसाधन के बाद) पैकिंग विधि उन देशों में अपनायी गयी है, जहाँ श्रमिकों का अभाव है, परन्तु भारत जैसे विकासशील देशों में श्रमिकों की कमी नहीं है। यहाँ कुछ श्रमिक संसाधन तथा सम्बन्धित काम में लगाये जाते हैं, उसी समय पर दूसरे श्रमिकों द्वारा ससाधित पदार्थों का पैकिंग भी साथ ही साथ सम्पन्न किया जाता है।

सूखे उत्पादों पर साधारणतया भृंग (भँवर) तथा पतंगों (शलभ) का आक्रमण होता है, चाहे कितना ही उचित रूप से सुखाकर सचयन क्यों न किया हो। आक्रमण न केवल सूखन को खाते हैं, अपितु इनमें जीवों के टुकड़े मिल जाते हैं तथा जीव मल-विसर्जन भी कर जाते हैं। पतंगों की प्रमुख जातियाँ जो सूखे उत्पादों को खराब करती हैं, पोलोडिया इण्टरपक्चेटेला (Polodia Interpunetella) "इन्फेसरिया पिगुलीलेला गैगसन" (Ephestia Pigulileua) इन्फेसरिया काटेल्ला वाक (Ephestia Cantella Walk) इत्यादि हैं।

उपर्युक्त प्राणियों से उत्पादों को बचाने के लिए विकसित देशों के कारखानों में कई प्रकार की सावधानियाँ बरती जाती हैं। गोदाम खाली होते ही उन्हें तुरन्त साफ करके ऊष्मीकरण, धूमीकरण आदि करके गोदामों की दीवारों, ऊपरी छत तथा फर्श पर छिपे हुए प्राणियों तथा उनके अण्डों को मार दिया जाता है।

ऊष्मीकरण

गोदामों की चारदीवारी, फर्श तथा छत में से ब्लोलेम की सहायता से प्राणियों को मार दिया जाता है। ब्लोलेम को चलाकर सम्पूर्ण स्थान को प्राणी रहित कर दिया जाता है।

सूखे फलों पर पुन. ऊष्मीकरण प्रयोग भी किया जाता है। सूखे अंगूर, अन्जीर इत्यादि को उबलते पानी में या सोडियम बाइ सल्फाइट घोल में उपचार कर तुरन्त सुखाया जाये तो जीव आक्रमण से उन्हें बचाया जा सकता है।

कुछ कारखानों में शुष्क ऊष्मीकरण की सहायता से सूखे फलों को जीव आक्रमण से मुक्त कराया जाता है। इसके लिए 63° से 65° सेन्टीग्रेड की भाप्युक्त धातु-कुण्डलियों में या भाप के स्थान पर गैस या वायु की सहायता से भी ऊष्मीकरण किया जाता है। परन्तु इस प्रयोग के तुरन्त बाद फलों का पैकीकरण आवश्यक होता है।

धूमीकरण

गोदामों का कुछ विशेष रसायन द्वारा धूमीकरणोपचार कराने से इन्हें जीव-आक्रमण तथा सूक्ष्मजीवियों से भी बचाया जा सकता है, परन्तु इसके लिए काम में लिए जाने वाले रसायन से सूखे फलों की सुगन्ध, गुण, वर्ण तथा रचना पर किसी प्रकार का प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड़ना चाहिए। इसी प्रकार का उपचार विकसित देशों में ही सम्भव होता है। आज सूखे उत्पादों का संचयन करने के लिए अग्रलिखित रासायनिक पदार्थों को धूमीकरण के लिए काम में लिया जाता है :—

(1) मिथाइल ब्रोमाइड

मिथाइल ब्रोमाइड विस्फोटक-रहित एक धूमीकरण रसायन है, परन्तु जीवो के साथ-साथ मानव के लिए भी यह एक जहर है, लेकिन एक घोल होने के कारण इसका प्रयोग करने वाले मुंह पर मास्क (मुख आवरण) लगाकर अपने को बचा सकते हैं। विदेशो मे तो यह क्रिया यन्त्र की सहायता से ही की जाती है। संयुक्त राज्य अमेरिका मे प्रचलित इस धूमीकरण-रसायन से फलो मे किसी प्रकार का विपाश पाये जाने की शिकायत नही मिली है।

(2) इथलिन डाईक्लोराइड-कार्बन टेट्राक्लोराइड

यह एक धूमीकरण मिश्रण है। प्रत्येक पेटी के अन्दर 10 सी०सी० प्रति 11 किलो के अनुपात से मिलाकर बन्द किया जाये तो जीव आक्रमण से सूखे फलो को बचाया जा सकता है, लेकिन बडे कारखानो मे इसका प्रयोग असम्भव-सा है। इसका लगातार श्वसन करना मानव के लिए हानिकारक है।

(3) क्लोरोपिकरिन

क्लोरोपिकरिन धूमू गैस है। यह भी विस्फोटक नही होती, इसे सूखे फलों मे छिड़क कर पैक किया जाता है। इसके लिए भी उपचारक के मुंह पर मास्क लगा हुआ होना चाहिए।

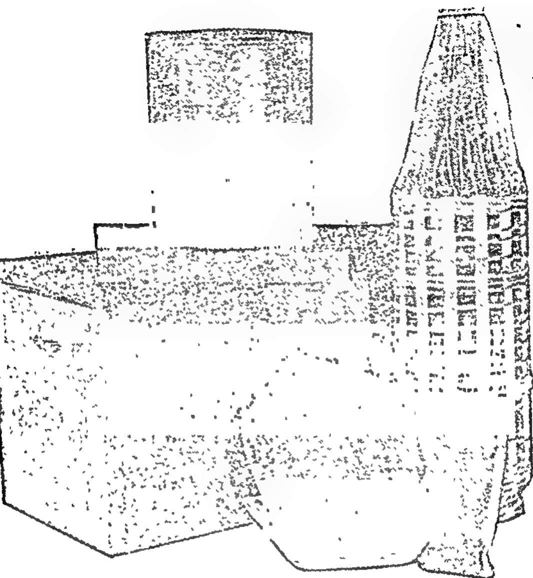
(4) सल्फरडाई ऑक्साइड

इसके बारे मे पहले ही चर्चा कर चुके हैं। पारकर के अनुसार फल-तरकारियों का सल्फरडाई ऑक्साइड से उपचार किया जाये तो उन्हे जीव-आक्रमण से मुक्त रखा जा सकता, है। इसके बारे मे समय-समय पर चर्चा की जा चुकी है।

इससे आप भली-भांति समझ गये होगे कि बिना गन्धकोपचार किये हुए सुखाये गये फल-तरकारियों मे ही जीवो का आक्रमण अधिक होगा। इसलिए उन पदार्थों का जिनमे गन्धकीकरण नहीं किया हुआ हो, धूमीकरण कर सचयन करना चाहिए।

(5) पैकीकरण

सूखे उत्पादो का संवेष्टन उन्हें जीव, सूक्ष्मजीव, आर्द्रता, वायु आदि को बचाते हुए करना चाहिए। साथ ही संवेष्टन पदार्थ ही नही, सूखे फल-तरकारी की नमी का शोषण करने वाला या उसे नष्ट करने वाला नही होना चाहिए। इसके लिए टिन कैन ही उचित माना जाता है, क्योंकि इसके भीतर किसी उचित गैस को प्रवेश कराकर भी सरक्षण किया जा सकता है। अगर इनका अधिक दिनो तक संचयन करना हो तो न्यून तापमान पर रखना आवश्यक होगा। अस्कार्बिक अम्ल को पदार्थों मे अधिकाधिक रोकने के लिए सूखे फलो को नाइट्रोजन की उपस्थिति में पैक कर 120° फारनहीट तापमान पर रखा जाना चाहिए।



चित्र संख्या—52

भुने आलू का पैकीकरण जो पोलिथिलिन लिफाफे में भरा है। पीछे तथा आगे भुने आलू का पैकेट दिखाई दे रहा है। बाजू में विभिन्न प्रकार के पैकिंग पदार्थ तथा डिब्बिकाएँ बताई गई हैं।

घरेलू स्तर पर सूखे फल-तरकारियो को भी जितना हो सके, जीव-आक्रमणो से बचाना चाहिए। इसके लिए बाजरा, दूध आदि की नई टिन वाहिकाओ को साफ कर, पोछ कर काम मे लिया जा सकता है। सूखे फल-तरकारियो को आवश्यकतानुसार छोटे-छोटे पोलिथलिन बैगो मे भरकर (चित्र सख्या 52) मोमबत्ती की सहायता से सीलबन्द कर, टिन-वाहिकाओ मे रखकर ढक्कन लगा देना चाहिए, ताकि उसके भीतर वायु या नमी प्रवेश न कर पावे। आजकल प्लास्टिक तथा अन्य पदार्थो से बनी कई वाहिकाएँ भी बाजार मे मिलती है, जो इसके लिए काम में ली जा सकती है। वायुरुद्ध अवस्था मे पैक करने के लिए गोंद-युक्त टेप का प्रयोग करना चाहिए, ताकि पैंकिग सुचारु रूप से हो सके।

फल-तरकारी उत्पादक जब पैंकिग पदार्थो को चुने तब उन्हें यह भी ध्यान रखना चाहिए कि उपभोक्ता को वह संवेष्टन-पदार्थ स्वीकार होगा ही नही। सवेष्टन-पदार्थ जल्दी खोलने योग्य होना चाहिए। इसके अलावा उपभोक्ता यह भी देखते है कि सवेष्टन-पदार्थ दुबारा बेचा जा सकता है कि नही। पैंकिग-पदार्थ ऐसा होना चाहिए कि उपभोक्ता आसानी से अपने घर रख सके। सर्वोपरि संवेष्टन-पदार्थ भौतिक तथा रासायनिक प्रक्रिया रहित होना चाहिए, ताकि खाद्य पदार्थ मे प्रतिकूल असर न पडे।

□□□

अध्याय 6

शर्करा सान्द्रता परिरक्षण

(Preservation of Sugar Concentrate)

आप भली-भाँति जानते हैं कि खाद्य पदार्थों से स्वतन्त्र जल को वाष्पीकरण द्वारा बाहर निकाल दिया जाये तो उनके ठोस घन पदार्थ की मात्रा बढ़ जायेगी। फलस्वरूप उन पदार्थों का परिरक्षण सम्भव हो सकेगा, क्योंकि सूक्ष्मजीवियों का आक्रमण तथा प्रजनन उन पदार्थों में तीव्रता से होता है, जिनमें स्वतन्त्र जल पाया जाता है। ठोस पदार्थ जिनमें अधिक होगा, उनमें जलांश कम होगा, फलस्वरूप सूक्ष्मजीवियों का आक्रमण भी कम होगा, जैसे निर्जलीकृत या धूप में सुखाये खाद्य पदार्थ में सूक्ष्मजीवियों का आक्रमण कम होता है। स्वतन्त्र जल को ऊष्मोपचार द्वारा वाष्प बनाकर बाहर निकाले बिना ही स्वतन्त्र जल की अवस्था को ठोस पदार्थ में रूपान्तरण कर न्यून ताप पर संचयन करने की एक दूसरी विधि है, हिमीकरण। इसका भी आप अध्ययन कर चुके हैं। अब हम एक तीसरी विधि के बारे में चर्चा करेंगे जो उपर्युक्त विधियों से भिन्न है, इनमें न तो स्वतन्त्र जल को ऊष्मीकरण द्वारा सुखाते है, न ही स्वतन्त्र जल को हिमीकरण द्वारा ठोस पदार्थ में परिवर्तित करते हैं, परन्तु खाद्य पदार्थों (फल या तरकारी) में शर्करा मिलाकर उसमें स्वतः पाये जाने वाले स्वतन्त्र जल की अवस्था को भंग कर ठोस पदार्थ का प्रतिशत बढ़ाकर परिरक्षण किया जाता है। इस विधि को ही शर्करा सान्द्रीकरण-परिरक्षण कहा जाता है।

किसी फल-तरकारी का सान्द्रीकरण कर उसके घुलनशील ठोस पदार्थ का 65 प्रतिशत पहुँचाकर, समुचित अम्लता की उपस्थिति में मन्द ऊष्मोपचार द्वारा उसे परिरक्षित किया जा सकता है, परन्तु 70 प्रतिशत से अधिक ठोस पदार्थ उत्पन्न कराया जाये तो अम्लता बिना ही परिरक्षण सम्भव हो सकेगा।

उपर्युक्त सिद्धान्त पर आधारित कुछ परिरक्षित खाद्य-पदार्थ हैं—फ्रूट जैली, जैम, मारमलेड, फ्रूटबटर, फ्रूटचीज, मुरब्बा, पेठा इत्यादि। उपर्युक्त पदार्थों में से कुछ तो व्यवसायशाला के अवशेषों से भी बनाये जाते हैं, परन्तु घरेलू तथा कुटीर उद्योगों में उपर्युक्त अधिकांश उत्पाद सीधे फलों से ही बनाये जाते हैं, अवशेषों से नहीं। फलों के अलावा कुछ विशेष तरकारियों तथा फूलों का भी मुरब्बा तथा पेठा बनाने के लिए काम में लिया जाता है।

भारतीय घरों में अचार, मुरब्बा, चटनी इत्यादि की भाँति पाश्चात्य देशों में भी प्राचीनकाल से जैम, जैली, मारमलेड इत्यादि बनाये जाते रहे हैं। भारत की भाँति विदेशों में भी जैम, जैली आदि का निर्माण घर में से बढ़कर आज कारखानों में वैज्ञानिक तरीकों से होने लगा है। दूसरे विश्व महायुद्ध के समय उपर्युक्त खाद्य पदार्थ विदेशों से, विशेषकर संयुक्त राज्य अमेरिका, ग्रेट ब्रिटेन, आस्ट्रेलिया आदि से आयात किये गये थे। आज अधिकांश आवश्यकताएँ देश में ही उत्पादन कर पूरी की जा रही हैं।

फ्रूट जैली

समुद्र से मछली पकडते समय, मछुओ के जाल में, मछली के साथ छत्रित मछलियाँ भी फँस जाती हैं। इन छत्रित मछलियो को अंग्रेजी मे जैली-फिश कहा जाता है, यह लाल तथा सफेद रंग की होती है। इनसे समानता के कारण ही एक फलोत्पाद का नाम जैली पडा है। फलों को कतरकर पानी मे अथवा बिना पानी के फल-रस मे ही उबालकर तथा फिर निसारे हुए रस मे शर्करा तथा अम्ल उचित मात्रा मे मिलाकर सान्द्रीकरण किया जाता है, इस पदार्थ को उचित वाहिका मे भरकर जमा दिया जाता है। यदि इस जमे हुए उत्पाद को दूसरे बर्तन मे साबुत बाहर निकालकर देखें तो छत्रित मछलियो की भाँति दिखाई देगा। शायद इसी कारण अंग्रेजो ने इस खाद्य-पदार्थ को भी जैली नाम दिया होगा।

परिभाषा

"कतरे हुए फलों मे जल मिलाकर या बिना जल के, फलरस मे ही उन्हें उबालकर, निचोड़कर लिये गये रस में, शर्करा मिलाकर सान्द्रीकरण करके ठण्डा करने से वह जलाटिनीकृत हो जाता है। शुद्ध जैली साफ, चमकीली तथा पारदर्शक ही नही, अपितु मनमोहक वर्णधारी भी होगी। यह जिस वाहिका में रखी जाये उसका एक दूसरी प्लेट पर साबुत निकाला जाये तो उसी बर्तन का आकार प्राप्त करेगी जिसमे जमाई गई थी। इस समय उस पर हल्का-सा आघात किया जाये तो वह कम्पन्न करेगी, परन्तु बहेगी नही। चाशनी की भाँति इसमे चिपचिपाहट भी नहीं रहेगी। इसके लिए काम मे लिये गये फल की सुगन्ध भी इसमें पायी जायेगी। जैली तेज चाकू से कतरने के लायक अवस्था मे नर्म, ठोस तथा चमकीली भी होनी चाहिए।"

यह परिभाषा सुप्रसिद्ध फल-तरकारी परिरक्षण वैज्ञानिक क्रूस की है। करीब यही परिभाषा भारतीय वैज्ञानिको द्वारा भी दी गई है, परन्तु संयुक्त राज्य अमेरिका के अधिकारियों द्वारा इस प्रकार से परिभाषा दी गई है :—

"45 भाग (भार) के फल मे 55 भाग (भार) शर्करा मिलाकर निर्मित अर्द्ध ठोस खाद्य पदार्थ है, जैली। इसमे 65 प्रतिशत घुलनशील ठोस पदार्थ जब तक नहीं हो जायेगा, तब तक सान्द्रीकरण करना होगा। अगर चाहें तो सुगन्ध तथा वर्ण भी मिलाया जा सकता है। फल मे पैक्टिन कम हो तो व्यावसायिक पैक्टिन तथा अम्ल भी मिलाया जा सकता है।

जैली के संघटक (Constituents of Jelly)

जैली निर्माण के लिए पैक्टिन, अम्ल तथा शर्करा अनिवार्य है। इन्हीं को जैली के संघटक कहा जाता है। पैक्टिन फलों के अलावा तरकारियो से भी प्राप्त होती है, परन्तु तरकारी से प्राप्त पैक्टिन मे बनाई गई जैली को फल-जैली नही कहा जायेगा। फल-जैली के लिए पैक्टिन फल से ही प्राप्त करना होगा।

पैक्टिन

वनस्पतियो में, विशेषकर फल तथा तरकारियो के सल्यूलोस के आसपास पैक्टिन कोश-भित्तियो मे पाया जाता है। यह पैक्टिन साधारणतया प्रोटोपैक्टिन के रूप मे वनस्पति मे पाया जाता है।

अध्याय 6

शर्करा सान्द्रता परिरक्षण

(Preservation of Sugar Concentrate)

आप भली-भाँति जानते हैं कि खाद्य पदार्थों से स्वतन्त्र जल को वाष्पीकरण द्वारा बाहर निकाल दिया जाये तो उनके ठोस घन पदार्थ की मात्रा बढ़ जायेगी। फलस्वरूप उन पदार्थों का परिरक्षण सम्भव हो सकेगा, क्योंकि सूक्ष्मजीवियों का आक्रमण तथा प्रजनन उन पदार्थों में तीव्रता से होता है, जिनमें स्वतन्त्र जल पाया जाता है। ठोस पदार्थ जितने अधिक होगा, उनमें जलांश कम होगा, फलस्वरूप सूक्ष्मजीवियों का आक्रमण भी कम होगा, जैसे निर्जलीकृत या धूप में सुखाये खाद्य पदार्थ में सूक्ष्मजीवियों का आक्रमण कम होता है। स्वतन्त्र जल को ऊष्मोपचार द्वारा वाष्प बनाकर बाहर निकाले बिना ही स्वतन्त्र जल की अवस्था को ठोस पदार्थ में रूपान्तरण कर न्यून ताप पर संचयन करने की एक दूसरी विधि है, हिमीकरण। इसका भी आप अध्ययन कर चुके हैं। अब हम एक तीसरी विधि के बारे में चर्चा करेंगे जो उपर्युक्त विधियों से भिन्न है, इनमें न तो स्वतन्त्र जल को ऊष्मीकरण द्वारा सुखाते है, न ही स्वतन्त्र जल को हिमीकरण द्वारा ठोस पदार्थ में परिवर्तित करते हैं, परन्तु खाद्य पदार्थों (फल या तरकारी) में शर्करा मिलाकर उसमें स्वतः पाये जाने वाले स्वतन्त्र जल की अवस्था को भग कर ठोस पदार्थ का प्रतिशत बढ़ाकर परिरक्षण किया जाता है। इस विधि को ही शर्करा सान्द्रीकरण-परिरक्षण कहा जाता है।

किसी फल-तरकारी का सान्द्रीकरण कर उसके घुलनशील ठोस पदार्थ का 65 प्रतिशत पहुँचाकर, समुचित अम्लता की उपस्थिति में मन्द ऊष्मोपचार द्वारा उसे परिरक्षित किया जा सकता है, परन्तु 70 प्रतिशत से अधिक ठोस पदार्थ उत्पन्न कराया जाये तो अम्लता बिना ही परिरक्षण सम्भव हो सकेगा।

उपर्युक्त सिद्धान्त पर आधारित कुछ परिरक्षित खाद्य-पदार्थ हैं—फ्रूट जैली, जैम, मारमलेड, फ्रूटबटर, फ्रूटचीज, मुरब्बा, पेठा इत्यादि। उपर्युक्त पदार्थों में से कुछ तो व्यवसायशाला के अवशेषों से भी बनाये जाते हैं, परन्तु घरेलू तथा कुटीर उद्योगों में उपर्युक्त अधिकांश उत्पाद सीधे फलों से ही बनाये जाते हैं, अवशेषों से नहीं। फलों के अलावा कुछ विशेष तरकारियों तथा फूलों का भी मुरब्बा तथा पेठा बनाने के लिए काम में लिया जाता है।

भारतीय घरों में अचार, मुरब्बा, सूखन इत्यादि की भाँति पाश्चात्य देशों में भी आदिकाल से जैम, जैली, मारमलेट इत्यादि बनाये जाते रहे है। भारत की भाँति विदेशों में भी जैम, जैली आदि का निर्माण घर में से बढकर आज कारखानों में वैज्ञानिक तरीकों से होने लगा है। दूसरे विश्व महायुद्ध के समय उपर्युक्त खाद्य पदार्थ विदेशों से, विशेषकर संयुक्त राज्य अमेरिका, ग्रेट ब्रिटेन, आस्ट्रेलिया आदि में आयात किये गये थे। आज अधिकांश आवश्यकताएँ देश में ही उत्पादन कर पूरी की जा रही हैं।

फ्रूट जैली

समुद्र से मछली पकड़ते समय, मछुओं के जाल में, मछली के साथ छत्रित मछलियाँ भी फँस जाती हैं। इन छत्रित मछलियों को अंग्रेजों में जैली-फिश कहा जाता है, यह लाल तथा सफेद रंग की होती है। इनसे समानता के कारण ही एक फलोत्पाद का नाम जैली पड़ा है। फलों को कतरकर पानी में अथवा बिना पानी के फल-रस में ही उबालकर तथा फिर निसारे हुए रस में शर्करा तथा अम्ल उचित मात्रा में मिलाकर सान्द्रीकरण किया जाता है, इस पदार्थ को उचित वाहिका में भरकर जमा दिया जाता है। यदि इस जमे हुए उत्पाद को दूसरे बर्तन में साबुत बाहर निकालकर देखें तो छत्रित मछलियों की भाँति दिखाई देगा। शायद इसी कारण अंग्रेजों ने इस खाद्य-पदार्थ को भी जैली नाम दिया होगा।

परिभाषा

"कतरे हुए फलों में जल मिलाकर या बिना जल के, फलरस में ही उन्हें उबालकर, निचोड़कर लिये गये रस में, शर्करा मिलाकर सान्द्रीकरण करके ठण्डा करने से वह जलाटिनीकृत हो जाता है। शुद्ध जैली साफ, चमकीली तथा पारदर्शक ही नहीं, अपितु मनमोहक वर्णधारी भी होगी। यह जिस वाहिका में रखी जाये उसको एक दूसरी प्लेट पर साबुत निकाला जाये तो उसी बर्तन का आकार प्राप्त करेगी जिसमें जमाई गई थी। इस समय उस पर हल्का-सा आघात किया जाये तो वह कम्पन्न करेगी, परन्तु बहेगी नहीं। चाशनी की भाँति इसमें चिपचिपाहट भी नहीं रहेगी। इसके लिए काम में लिये गये फल की सुगन्ध भी इसमें पायी जायेगी। जैली तेज चाकू से कतरने के लायक अवस्था में नर्म, ठोस तथा चमकीली भी होनी चाहिए।"

यह परिभाषा सुप्रसिद्ध फल-तरकारी परिरक्षण वैज्ञानिक क्रूस की है। करीब यही परिभाषा भारतीय वैज्ञानिकों द्वारा भी दी गई है, परन्तु संयुक्त राज्य अमेरिका के अधिकारियों द्वारा इस प्रकार से परिभाषा दी गई है :—

"45 भाग (भार) के फल में 55 भाग (भार) शर्करा मिलाकर निर्मित अर्द्ध ठोस खाद्य पदार्थ है, जैली। इसमें 65 प्रतिशत घुलनशील ठोस पदार्थ जब तक नहीं हो जायेगा, तब तक सान्द्रीकरण करना होगा। अगर चाहें तो सुगन्ध तथा वर्ण भी मिलाया जा सकता है। फल में पैक्टिन कम हो तो व्यावसायिक पैक्टिन तथा अम्ल भी मिलाया जा सकता है।

जैली के संघटक (Constituents of Jelly)

जैली निर्माण के लिए पैक्टिन, अम्ल तथा शर्करा अनिवार्य है। इन्हीं को जैली के संघटक कहा जाता है। पैक्टिन फलों के अलावा तरकारियों से भी प्राप्त होती है, परन्तु तरकारी से प्राप्त पैक्टिन से बनाई गई जैली को फल-जैली नहीं कहा जायेगा। फल-जैली के लिए पैक्टिन फल से ही प्राप्त करना होगा।

पैक्टिन

वनस्पतियों में, विशेषकर फल तथा तरकारियों के सैल्यूलोस के आसपास पैक्टिन कोश-भित्तियों में पाया जाता है। यह पैक्टिन साधारणतया प्रोटोपैक्टिन के रूप में वनस्पति में पाया जाता है।

प्रोटोपैक्टिन

प्रोटोपैक्टिन जटिल कार्बोहाइड्रेट ग्रुप में आता है। अन्य रासायनिक पदार्थों से मिला हुआ प्रोटोपैक्टिन जल में घुलनशील नहीं होता, साथ ही इसमें जलाटिनीकरण शक्ति भी नहीं होती। इनमें कुछ विशेष किण्वक (एन्जाइम) प्रक्रिया कर पैक्टिन में रूपान्तरित किए जाते हैं। इस किण्वक का नाम है, प्रोटोपैक्टिनेज (पैक्टोसिस)। इस प्रकार परिवर्तित पैक्टिन-जल में घुलनशील होता है, परन्तु इस पैक्टिन में, अगर पैक्टोज नामक किण्वक से प्रक्रिया की जाये तो पैक्टिन, पैक्टिक अम्ल में परिवर्तित हो जायेगी। इस पैक्टिक अम्ल में जलाटिनीकृत शक्ति (जैली जमने की) नहीं होती। पैक्टिनेज में पैक्टिन तथा पैक्टिक अम्ल को घुलनशील बनाने की शक्ति है। इन लघु पदार्थों को विदलित (Cleavage Products) उत्पादन कहा जाता है। अरबिनोज, गलक्टोज, गलक्टोनिक अम्ल इत्यादि विदलित पदार्थों में आते हैं। जैली, जैम, मारमलेट इत्यादि जमाने के लिए हमें चाहिए पैक्टिन, प्रोटोपैक्टिन जल-विलेय नहीं है। पैक्टिक अम्ल जल विलेय तो है, परन्तु जलाटिनीकृत शक्ति नहीं है।

पैक्टिन का आविष्कार

सन् 1825 में ब्राकोनाट नामक फ्रांसिसी वैज्ञानिक ने सर्वप्रथम पैक्टिन का आविष्कार किया था। प्रोटोपैक्टिन के पैक्टिन में रूपान्तरित हो जाने पर ही अम्ल की उपस्थिति में जलाटिनीकरण करके जैली-निर्माण करेगी।

जैली बनाने योग्य फल

जैली के लिए जो फल चुना जाएगा, उसमें आवश्यकतानुसार पैक्टिन तथा अम्ल पाया जाना चाहिए। कुछ फलों में यह दोनों पदार्थ आवश्यकतानुसार होंगे, परन्तु कुछ फलों में पैक्टिन अधिक होगा, तो अम्ल कम होगा। कुछ अन्य फलों में अम्ल अधिक होगा तो पैक्टिन कम। कुछ तीसरे वर्ग के फलों में दोनों की ही मात्रा कम होगी। हमारे देश के फलों में आँवला, अमरूद खट्टा सेब, खट्टा सन्तरा आदि फलों में पैक्टिन तथा अम्ल बहुतायत में पाया जाता है, परन्तु कटहल, बेलफल, कच्चे केले, कच्चे पपीते, लोकाट आदि में पैक्टिन अधिक परन्तु अम्ल कम होता है। कमरख, करौंदे, खट्टे खुबानी, खट्टी पीच, अनन्नास इत्यादि में पैक्टिन कम तथा अम्लता अधिक होती है। (अधिक जानकारी के लिए सारणी संख्या 1 देखें)।

जैली के लिए फलों को चुनते समय निम्न बातों का ध्यान रखना आवश्यक है :— फल अधिक पैक्टिन युक्त हों, व पूर्ण विकसित होकर पकने के स्तर पर पहुँचे हुए सुगन्धित होने चाहिए। कुछ फल अब तक पूर्ण रूप से नहीं पक जायेंगे, उनमें सुगन्ध नहीं आयेगी। इस वर्ग के फलों में से पैक्टिन निकालते समय उसमें पके हुए फल भी कुछ मात्रा में मिलाने चाहिए। फल तोड़ते ही यथाशीघ्र जैली बनाने के लिए पैक्टिन निचोड़ (Pectin extract) यथाशीघ्र निकालना चाहिए। अन्यथा पैक्टिन का अपघटन (Decomposition) हो जायेगा, क्योंकि जब फल पकने लगते हैं तो प्रोटोपैक्टिन किण्वक क्रिया के कारण पैक्टिन तथा पैक्टिन से मिथाइल एल्कोहल तथा पैक्टिक अम्ल में रूपान्तरित हो जाते है। इनमें प्रोटोपैक्टिन, पैक्टिक अम्ल तथा मिथाइल मद्यसार में जलाटिनीकरण की शक्ति नहीं है।

सारणी संख्या-1

जैली के लिए उपयुक्त फलों का वर्गीकरण

(पैक्टिन तथा अम्ल के आधार पर)

अधिक पैक्टिन तथा अधिक अम्ल-युक्त फल	पैक्टिन तथा अम्ल कम वाले फल	फल जो अधिक पैक्टिन तथा कम अम्ल के	पैक्टिन कम तथा अम्ल अधिक वाले फल	पैक्टिन तथा अम्ल अल्पाल्प वाले फल
खट्टा सेब तथा जंगली सेब	पका हुआ सेब	अल्प अम्ल वाला सेब	खट्टी खुबानी	मीठी खुबानी
ब्लैक बरीज (खट्टी)	ब्लैक बरीज	—	—	एल्डर बरीज
क्रेन बरीज	चेरीज (खट्टी किस्में)	कच्चा केला	मीठी किस्म के चेरीज	पीच (पका हुआ) अनार
गूसबरीज	अंगूर (कैली-फोर्निया)	कच्ची अंजीर	अनन्नास	रसबरीज
अमरूद (खट्टे)	लोकाट	—	रूबर्ब	स्ट्राबरीज
लेमन	—	संतरे का छिलका	—	—

'सदाशिवन नायर, 1974'

इसी प्रकार चुने हुए फलों मे से प्राप्त 'पैक्टिन-निचोड़' मे अगर पर्याप्त मात्रा में पैक्टिन नही होता तो पैक्टिन रहित फल-रस मे सुगन्धहीन फल या तरकारियो मे से प्राप्त गाढा पैक्टिन, मिलाया जा सकता है, ताकि जैली निर्माण सम्भव हो सके। इसके लिए कटहल का छिलका तथा अन्य पदार्थ (स्कन्द को छोड़कर) काम मे लिया जा सकता है, क्योंकि इसमे अधिक पैक्टिन पाया जाता है। साथ ही कटहल मे (पकने के पूर्व) किसी प्रकार की सुगन्ध भी नही होती। इसी प्रकार आंवले को उबालकर, उसका निचोड़ निकाल कर भी प्रयोग किया जा सकता है, इसमे अम्लता भी पर्याप्त मात्रा मे पाई जाएगी, फलस्वरूप आंवले को पानी में उबालकर (बराबर मात्रा में) प्राप्त निचोड़ मे चीनी के अलावा अम्ल मिलाने की आवश्यकता नहीं होगी। इस आंवला के निचोड़ को तथा शर्करा के मिश्रण को पका कर जैली बनायी जा सकती है।

व्यावसायिक स्तर पर पैक्टिन रहित फलो मे से जैली बनाने के लिए पैक्टिन पाउडर मिलाया जाता है। इस पैक्टिन को कॉमर्शियल पैक्टिन (व्यावसायिक पैक्टिन) कहा जाता है जो घोल या चूर्ण रूप मे प्राप्त होता है। अगर 'फल-निचोड़' में अम्लता कम हो जाये तो कम पैक्टिन वाले तथा अधिक अम्ल युक्त फलों का निचोड़ भी घरेलू स्तर के लिए काम मे लिया जा सकता है, परन्तु व्यावसायिक स्तर पर साइट्रिक अम्ल या टार्टरिक अम्ल आदि फल धर्म अम्लों मे से एक का प्रयोग करते हैं, जो साधारणतया दाने के रूप में मिलता है।

पूर्व क्रिया

अन्य परिरक्षणों की भाँति जैली निर्माण के पहले फलों को सुचारु रूप से धोना चाहिए। पौध संरक्षण के लिए काम मे लिए गए कीटनाशक, फफूंदनाशक के अंशों को तथा अन्य रासायनिक उर्वरकों के अंश को, जो प्रायः फलों में लगे हुए होते हैं, दूर करने के लिए गर्म किये हुए एक प्रतिशत हाइड्रोक्लोरिक अम्लयुक्त घोल से धोकर पुनः शुद्ध जल से धोना चाहिए अन्यथा जैली संचयन काल के समय विकृत हो सकती है।

कतरना

जैली बनाने के लिए काम मे लिए जाने वाले फलों को छोटे-छोटे टुकड़ों में कतरा जाता है, परन्तु उसमे पाये जाने वाले अनचाहे फल भागो को अलग कर देना चाहिए। परन्तु साधारणतया छिलका नही उतारा जाता। सेब, कच्चे केले, सरसफल इत्यादि को बिना छिलका उतारे ही कतरा जाता है, परन्तु कच्चे पपीते का छिलका तथा बीज तथा अन्य भाग अलग कर केवल फल को कतरा जाता है। इसके विपरीत कटहल से जैली बनाने के लिए उसके काँटो को छोड़कर अन्य सारे भाग को कतर लिया जाता है, लेकिन नीबूवर्गीय फलो के छिलके की ऊपरी सतह कुतरकर अलग कर दी जाती है, ताकि केवल छिलके का सफेद भाग ही काम मे आ सके, अन्यथा नीबूवर्गीय फलो से प्राप्त पेक्टिन में कड़वापन रहेगा।

पैक्टिन-निचोड़ लेने के लिए कतरे जाने वाले फलो की मोटाई 3 से 6 मिलीमीटर तथा लम्बाई करीब $2\frac{1}{2}$ मिलीमीटर होनी चाहिए। सेब, अमरूद इत्यादि को व्यावसायिक स्तर पर कतरने के बजाय संदलन कर भी काम में लिया जा सकता है।

पैक्टिन एक्सट्रैक्ट (निचोड़)

कतरे हुए फलों में उसके भार के बराबर साधारणतया जल मिलाकर उबाला जाता है, उबाल आते ही, समय नोट कर लेते है, तथा उस समय से 30 मिनट तक समय प्रदान कर उबालते रहते हैं। इस समय उसमें थोड़ी-सी मात्रा मे कोई फलाम्ल मिलाना चाहिए, इससे प्रोटोपैक्टिन को पैक्टिन मे परिवर्तित करने मे ही नही, अपितु पैक्टिन को फलों मे से अधिकाधिक बाहर निकालने मे भी मदद मिलेगी। इसी प्रकार उबाले गये फल को जैली-बैग या मलमल के कपड़े की सहायता से छानकर पैक्टिन एक्स्ट्रैक्ट निकालना चाहिए। इसमें पैक्टिन होगा। इस प्रकार पैक्टिनयुक्त रस को तैयार करने की क्रिया को पैक्टिन एक्सट्रैक्सन', यानी 'पैक्टिन-निष्कर्षण' कहा जाता है। इस पैक्टिन-निचोड़ मे, काम में लिए गए फल की सुगन्ध रहेगी। फल में पाई जाने वाली पैक्टिन मात्रा के आधार पर इसमे मिलाये जाने वाली जल की मात्रा में भी अन्तर आ सकता है। लोकाट, कमरख इत्यादि मे उसके भार के बराबर जल तथा अमरूद, कटहल, सन्तरे, पपीते इत्यादि में उसके भार के डेढ़ गुणा जल मिलाया जाता है, परन्तु अंगूर मे जल नही मिलाया जाता है। इसके रस मे ही इसे पकाकर पैक्टिन-निचोड़ निकाला जाता है।

अगर उपर्युक्त मात्रा से कम मात्रा मे फल में जल मिलाया जाए तथा पैक्टिन-निचोड़ निकाला जाए तो प्राप्त निचोड़ गाढ़ा होगा तथा गोंद जैसा रहेगा। इसके विपरीत जल

अधिक हो जाए तो उससे पैक्टिन कम मात्रा में पाया जायेगा, फलस्वरूप जैली निर्माण में कठिनाई उत्पन्न होगी। पतले पैक्टिन-निचोड़ को सान्द्रीकरण कर सकते हैं, लेकिन अधिक ऊष्मा के कारण जो कुछ पैक्टिन उसमें है, हो सकता है उसकी जलाटिनीकरण-शक्ति अधिक ऊष्मा प्रयोग से नष्ट हो जायेगी। इसके अलावा सान्द्रीकरण से उत्पादन खर्च भी बढ़ सकता है। इसलिए ऊपर से व्यावसायिक पैक्टिन मिलाना अधिक उचित होगा।

पैक्टिन तथा ऊष्मा

फल से प्राप्त पैक्टिन की मात्रा, फल में पायी जाने वाली प्रोटोपैक्टिन की मात्रा, तथा उस पर ऊष्मा के प्रभाव शक्ति पर निर्भर रहती है। ऊष्मा प्रयोग से अधिकांश प्रोटोपैक्टिन पैक्टिन में रूपान्तरित होने के बावजूद अनियमित ऊष्मा प्रयोग से पैक्टिन की जलाटिनीकरण शक्ति नष्ट हो सकती है। कम गर्मी पर तैयार किये गये पैक्टिन-निचोड़ से बहुत सुगंध वाला तथा जैली निर्माण-शक्ति युक्त पैक्टिन होता है। अर्थात् शक्तियुक्त ऊष्मा प्रयोग से प्राप्त पैक्टिन-निचोड़ में पायी जाने वाली पैक्टिन जैली-निर्माण-शक्ति उतनी अधिक नहीं होगी।

हिण्डन ने सन् 1939 में प्रतिवेदन दिया कि पैक्टिन का 100° से० में 30 मिनट ऊष्मोपचार किया तो उसकी जलाटिनीकरण शक्ति 50 प्रतिशत कम हो गई। बंनीसन तथा मोरिस (1939) ने बताया कि जब दबाव क्रिया से पैक्टिन-निचोड़ प्राप्त किया तो उसमें जैली के गुण नष्ट हुए पाये गए, परन्तु 80° से० ताप में उपरोक्त दोष नहीं पाये गये। टार तथा बेकर (1925) ने प्रतिवेदन दिया कि शर्करा की उपस्थिति में ऊष्मोपचार से पैक्टिन में किसी प्रकार का प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड़ता। इसलिए उन्होंने आगे कहा कि पैक्टिन-निचोड़ को शर्करा के बिना, अम्लता होते हुए भी गर्म नहीं करना चाहिए।

हैलिन (1945) ने प्रतिवेदन दिया कि व्यावसायिक पैक्टिन तथा प्राकृतिक पैक्टिन दोनों को 100° से० में 60 मिनट तक ऊष्मोपचार करने पर भी उसमें कोई विशेष परिवर्तन नहीं देखा गया, परन्तु 105° से० या उससे अधिक तापमान पर पैक्टिन का डिग्रेडेशन अवकर्षण हो जायेगा।

कहने का तात्पर्य है, प्रत्येक फल के स्वभाव तथा रचना के अनुकूल उचित समय देकर ताप-प्रयोग करना चाहिए, ताकि पैक्टिन-निचोड़ में पर्याप्त पैक्टिन हो सके। अगर प्राप्त पैक्टिन-निचोड़ में आवश्यकतानुसार पैक्टिन की मात्रा नहीं है, तो उसमें कटहल या अन्य योग्य फल या तरकारी में प्राप्त बिना सुगन्ध का पैक्टिन-निचोड़ मिलाया जा सकता है, लेकिन इसमें अधिक पैक्टिनयुक्त निचोड़ होना आवश्यक है। व्यावसायिक स्तर पर विपणी में प्राप्त पैक्टिन-चूर्ण या पैक्टिन द्रव मिलाया जाता है। अधिक जानकारी चर्चा की प्रत्येक फल से जैली-निर्माण के समय की जायेगी। घरेलू स्तर पर जैली निर्माण के लिए आवश्यक जल, उसमें चाही गई जल की मात्रा, ऊष्मीकरण-उपचार-समय तथा प्राप्त पैक्टिन-निचोड़ में मिलाई जाने वाली शर्करा-मात्रा इत्यादि अग्रांकित सारणी में (सारणी संख्या–2) दी जा रही है।

सारणी संख्या–2

फल का नाम	कतरे हुए प्रत्येक 454 ग्राम फलों के लिए आवश्यक जल (कप के अनुपात में)	फल तथा जल उबलते ही कितने समय तक उबालते रहना चाहिये (मिनट में)	प्राप्त पैक्टिन-निचोड़ में कितनी मात्रा में शर्करा मिलानी चाहिये (कप के अनुपात में)
सेब	1	20–25	$\frac{3}{4}$
जगली सेब (क्रेप ऐपल)	1	"	1
ब्लैक बरीज़	$\frac{1}{4}$	5–10	$\frac{3}{4}$ से 1
ब्लैक बरीज नर्म	—	"	"
काली रसबरीज	—	"	1
गूज बरीज	$\frac{1}{4}$	"	1
जंगली अगूर	$\frac{1}{2}$	15–20	$\frac{3}{4}$
लाल रसबरीज	—	5–10	1

गिरधारीलाल तथा साथी, 1960

फल-जल मिश्रण का ऊष्मोपचार

साधारणतया घरेलू-स्तर पर कतरे हुए फल तथा जल को स्टेनलेस स्टील या एल्युमीनियम के भगोनों में उबाला जाता है, परन्तु व्यावसायिक स्तर पर भापयुक्त केतलियों (स्टीम जैकेटेट केटल्स) में पकाया जाता है। भापयुक्त केतलियाँ आजकल स्टेनलैस स्टील से ही बनाई जाती हैं। रांगा, काँच या इनामल पेण्ट लेपित केतलियाँ आज भी कुछ कारखानों में काम में ली जा रही हैं। काँच-लेपित केतलियाँ अधिक मोटी होने के कारण गर्म होने में अधिक समय लेती हैं। पीतल से बनी केतलियों में चाहे कितना ही रांगा-लेपित किया जाये तो भी उसमें अधिक अम्ल-युक्त खाद्य-पदार्थों को पकाते समय खराबियाँ उत्पन्न होना स्वाभाविक है। एल्युमीनियम से निर्मित केतली या भगोने के दीर्घकाल तक अधिक अम्लयुक्त आहार के सम्पर्क में आने से खाद्य-पदार्थ, खासतौर पर फल-उत्पादों का खराब होना स्वाभाविक है। कहने का तात्पर्य है कि बार-बार काम में लिये जाने वाले बर्तन स्टेनलैस स्टील से बने होने चाहिए।

कतरे हुए भारतीय फलों को, चाहे जल मिलाया गया हो या फल-रस, 20 से 60 मिनट तक साधारणतया उबाला जाता है, परन्तु शीतकालीन फलों को औसतन 5 से 25 मिनट ही उबाला जाता है। फल उबलते ही समय नोट कर लें तथा प्रत्येक फल को चाहे गये समय तक उबालते रहना चाहिये। अधिक जानकारी के लिए अग्रलिखित सारणी का अध्ययन करें।

सारणी संख्या-3

क्रम संख्या	फल का नाम	प्रथम उबाल आते ही कब तक उबालते रहना चाहिये (मिनट में)
1.	अमरूद	30–35
2.	चकोतरा	20–25
3.	जामुन	45–60
4	सन्तरा	45–60
5.	कटहल	30–35
6.	पपीता	30
7.	आँवला	20–25
8.	कमरख	15–20
9.	लोकाट	25–30
10.	सेब	20–25

एस० सदाशिवन नायर, 1974

उपर्युक्त समय देकर फलों को सावधानी के साथ उबाला जाये तो आवश्यकतानुसार साफ पैक्टिन प्राप्त होगा। इससे अधिक उबालने से प्राप्त पैक्टिन अधिक ऊष्मा प्रयोग से पैक्टिक-अम्ल में परिवर्तित हो जायेगा। इसलिए बिना ऊष्मा प्रयोग से प्राप्त फल के निचोड़ में जैसे पैक्टिन नहीं पाया जाता, वैसे अधिक ऊष्मा प्रयोग किये हुये फल के पैक्टिन-निचोड़ में भी पैक्टिन आवश्यक मात्रा में नहीं होगा, क्योंकि बिना ऊष्मा प्रयोग वाले पैक्टिन-निचोड़ में प्रोटोपैक्टिन के रूप में ही रह जाता है तो अधिक ऊष्मा प्रयोग वाले में पैक्टिक अम्ल के रूप में पाया जाता है। ये दोनों जैली-निर्माण के लिए उपयोगी नहीं हैं।

विभिन्न पैक्टिन

फल-तरकारियों में पैक्टिन पाया तो जाता है, लेकिन रासायनिक दृष्टि से विभिन्न फल-तरकारियों में एक-सा पैक्टिन नहीं होता। चुकन्दर में पाया जाने वाला पैक्टिन ऐसिटेल ग्रुप में आता है। फल वर्ग के पैक्टिन के मिथोआक्सिल मात्रा में भी अन्तर होता है। पैक्टिन एक उत्क्रमणीय (Colloid) कोलाइड है। पैक्टिन की जलाटिनीकरण शक्ति को बिना भंग किये उसके जलीय घोल में मद्यसार प्रयोग कर अवक्षेपित (Precipitated) कर प्राप्त पैक्टिन को सुखाकर चूर्ण बनाया जा सकता है। यह पैक्टिन पुनः जल में घुलनशील होगा। कुछ विशेष पैक्टिन भी पाये गये हैं, जो मिथोआक्सिल वर्ग के होते हैं। ये अल्पमात्रा में शर्करा मिलाकर या बिना शर्करा मिलाये पकाने से जलाटनीकृत हो जायेंगे। ... पहले भी कहा जा चुका है, वनस्पति के फल तथा अन्य रसदार भागों में पै... जाता है।

पैक्टिन का निष्यन्दन (Filteration of Pectin)

जैसे कि पहले चर्चा की गई है, उचित समय देकर उबाले गये, कतरे हुए फल तथा जल-मिश्रण से उसके पैक्टिन-युक्त रस को उचित तरीके से छानकर प्राप्त करने की क्रिया को ही फिल्ट्रेशन अथवा निष्यन्दन कहा जाता है। साधारणतया घरेलू स्तर पर तथा छोटी-मोटी प्रयोगशालाओं में मलमल के कपड़े को दो-तीन परत में रखकर रस छान लेते हैं। इसको तुरन्त शर्करा-अम्ल मिलाकर पुनः पकाया जाता है, ताकि जैली बनाई जा सके, परन्तु छोटे-मोटे कारखानों में कपड़े के बजाय जैली-बैग, जो ऊन से बने होते हैं, काम में लिए जाते हैं। साधारणतया कारखानों में उपर्युक्त विधि से बड़े पैमाने पर उबालकर तैयार किये हुए मिश्रण को जैली-बैग द्वारा छानने के बाद बचे हुए मिश्रण को बास्केट प्रैस, हाइड्रोलिक-प्रैस इत्यादि किसी एक प्रैस की सहायता से पैक्टिन को अधिकाधिक निचोड़ लिया जाता है। अब दोनों प्रकार के प्राप्त पैक्टिन-निचोड़ को 24 घण्टे तक बिना छेड़े रखा जाता है। प्रैस की सहायता से पैक्टिन-निचोड़ने के बाद प्राप्त अवशेष खल की भाँति रहेगा। लेकिन छोटे-मोटे कारखानों में या प्रयोगशाला में बिना प्रैस पूरी तरह पैक्टिन निचोड़ लेना असम्भव-सा है। पैक्टिन-निचोड़ को रखा जाता है, ताकि साइफन द्वारा ऊपर तैरते हुए पैक्टिन-निचोड़ को 24 घण्टे बाद अलग किया जा सके।

पैक्टिन मात्रा

उपर्युक्त विधि से तैयार किये हुए पैक्टिन-निचोड़ के लिए यदि आप अमरूद, सेब, आँवला इत्यादि में से एक को काम में लेते हैं तो उसमें 0.5 से 1.5 प्रतिशत पैक्टिन हो सकता है। अगर 1 प्रतिशत से अधिक पैक्टिन-निचोड़ में पाई जायेगी तो जैली-निर्माण प्रक्रिया शीघ्र सम्पन्न होगी और उससे कम हो तो समय अधिक लगेगा। 0.5 प्रतिशत से कम मात्रा में पैक्टिन-निचोड़ से जैली-निर्माण असम्भव होगा अथवा बन भी जाये तो उसमें मानकीकृत जैली के गुण नहीं पाये जायेंगे।

इसलिए यह जानना अनिवार्य हो जाता है कि तैयार किये गये पैक्टिन-निचोड़ में पैक्टिन की मात्रा कितनी है। यह साधारणतया 3 विभिन्न विधियों की सहायता से मालूम किया जा सकता है—

(1) नमूना जैली-निर्माण विधि द्वारा

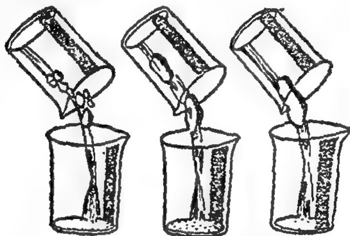
तीन विभिन्न परखनलियों में प्राप्त पैक्टिन-निचोड़ को रख लिया जाता है। प्रत्येक परखनली में 20 सी॰सी॰ पैक्टिन-निचोड़ लिये जाते हैं; इन्हें क, ख, ग अंकित किया जाता है। इस प्रकार लिये हुए पैक्टिन-निचोड़ में आवश्यक अम्लता पाई जायेगी। इसमें क्रमशः 20, 15, 10 ग्राम शर्करा प्रत्येक परखनली में मिलाकर गैस की सहायता से पकाकर जैली बनाई जाती है। जैली जमने के बाद इन तीनों में किसी एक परखनली की जैली परिभाषा के अनुसार गुणयुक्त होगी। इसके आधार पर शेष पैक्टिन-निचोड़ में शर्करा मिलाकर जैली-निर्माण किया जाता है, लेकिन यह उतना प्रायोगिक नहीं माना जाता, इसलिए कुछ वैज्ञानिकों ने ऐल्कोहल विधि अपनायी है।

(2) ऐल्कोहल या मद्यसार विधि द्वारा

एक बीकर में पैक्टिन-निचोड़ का नमूना लीजिये। उस नमूने की मात्रा की दुगुनी या तिगुनी मिथिलेटेट स्प्रिट या रेक्टीफाइड स्प्रिट मिलाइये। ध्यान रखें कि मिलाते समय

बीकर के किनारे से बीकर के निचोड़ में ऐल्कोहल या स्प्रिट पहुँचाया जाये तथा बीकर को धीरे-धीरे गोलाकृति में घुमाकर बिना छेड़े कुछ समय रख दिया जाये। अब इसको दूसरे बीकर में धीरे से डाला जाये तो अधिक पैक्टिन वाले में से एक मोटा-सा, सफेद-सा जलाटिनीकृत पदार्थ एक टुकड़े की भाँति गिरता नजर आयेगा। इससे यह मानना चाहिये कि पैक्टिन-निचोड़ में काफी मात्रा में पैक्टिन है। अगर मध्य-वर्ग की मात्रा का निचोड़ हो तो उसके नमूने में यथासार प्रयोग करने से गोंद की भाँति कई टुकड़े जलाटिनीकृत पैक्टिन गिरता नजर आयेगा। अगर मलाई-सा गिरता है तो तैयार किये हुए पैक्टिन-निचोड़ में पैक्टिन की मात्रा बहुत कम आँकी जानी चाहिये। (चित्र संख्या 53) अर्थात् जैसा पहले कहा जा चुका है, उसके अनुसार शर्करा मिलाई जा सकती है। अर्थात् पहली श्रेणी के पैक्टिन-निचोड़ में बराबर मात्रा में, दूसरी श्रेणी में 1 किलो पैक्टिन-निचोड़ के लिए 757 ग्राम तथा तीसरी श्रेणी के लिए 500 ग्राम के अनुपात से शर्करा मिलायी जानी चाहिये।

टनल ड्रायर



Fair
Pectin Clots
Good
काफी पैक्टिन

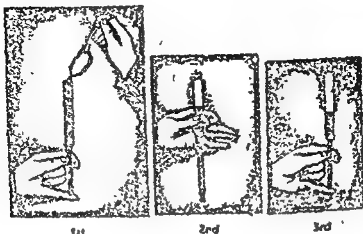
चित्र संख्या 53
पैक्टिन का परीक्षण

अगर पैक्टिन कण-कण-सा हो तो उसमें अधिक गाढ़ा फल-पैक्टिन, जिसमें किसी प्रकार की खुशबू नहीं हो, मिलाकर कमी पूरी की जा सकती है, अथवा पैक्टिन चूर्ण मिलाकर भी कमी पूरी की जा सकती है। व्यावसायिक पैक्टिन के बारे में अधिक जानकारी उपोत्पाद के अध्याय में दी जायेगी।

(3) जल-मीटर विधि द्वारा

जल-मीटर या जल-मापिनी एक विशेष काँच की नली है, (चित्र संख्या 54) जिसकी कुल लम्बाई का आधा भाग चौड़ा तथा नीचे का आधा भाग संकड़ा होता है। चौड़ा भाग अंशांकित होता है, जो ऊपर से $1\frac{1}{4}$, 1, $\frac{3}{4}$, $\frac{1}{2}$ के क्रम में एक निश्चित अं: हिसाब से अंशांकित किया हुआ होता है।

अब तैयार किये हुए पैक्टिन-निचोड़ को एक पिपेट या चम्मच की सहायता से उसके भीतर भरा जाता है। इस समय उसका तापमान 26° से 32° से० ताप वाला होना आवश्यक है। इस समय जल-मीटर को बायें हाथ से पकड़कर छोटी अंगुली को



चित्र संख्या–54
पैक्टिन-युक्त फलरस निचोड़ में पैक्टिन की मात्रा मालूम
करने की विधि जल-मीटर द्वारा आँकना।
इसके आधार पर शर्करा
मिलायी जाती है।

सकड़े भाग के नीचे दबाव देकर पकड़ते हैं, उसके ऊपर तक तैरने के लिए पैक्टिन-निचोड़ से भरा जाता है। इस समय जल-मीटर के भीतर वायु के बुलबुले पाये जायें तो छोटी अंगुली हटाकर उन्हें बाहर निकालना चाहिये। इसके बाद पुन: भरना चाहिये तथा निश्चित कर



चित्र संख्या–55
जल मीटर

लेना चाहिये कि उसमें वायु नहीं है तथा इन्हें बिल्कुल सीधे पकड़ लेना चाहिये तथा अंशांकित भाग अपने सामने की ओर रहे। अब घड़ी देखकर 1 मिनट तक, पैक्टिन को जल-मीटर से छोटी अंगुली हटाकर नीचे की ओर बहने देना चाहिये। एक मिनट पूरा होते ही तुरन्त पुन: छोटी अंगुली लगाकर बन्द कर देना चाहिये। अंशांकन ऊपर से नीचे की ओर चार भिन्न-भिन्न स्थानों पर बराबर दूरी पर अंकित किया हुआ बताया गया है। जल-मीटर में बचा हुआ पैक्टिन आदि $1\frac{1}{4}$ के थोड़ा-सा नीचे हो तो उसमें तैयार किये हुए पैक्टिन-निचोड़ की कुल मात्रा की सवा-गुणा शर्करा मिलाई जा सकती है, क्योंकि यह

निरीक्षण यह बताता है कि उसमें पैक्टिन की मात्रा अधिक है, अर्थात् 1 किलो पैक्टिन मे 1 250 किलो शर्करा मिलायी जा सकती है या एक कप पैक्टिन-निचोड़ के लिए सवा कप शर्करा। इसी प्रकार दूसरी बार जल-मीटर में बचा हुआ पैक्टिन एक अंशांकन (1) के इर्द-गिर्द हो तो उसमें बराबर शर्करा मिलानी चाहिये। अगर जल-मीटर सूचना $\frac{3}{4}$ के समीप आती है तो कुल पैक्टिन-निचोड़ की मात्रा के $\frac{3}{4}$ भाग (एक किलो के लिए 750 ग्राम) शर्करा मिलानी चाहिये। कभी-कभी जल-मीटर सूचना के अशांकनो के बीच मे आते हैं, अर्थात् $\frac{3}{4}$ तथा 1 हो तो 1 लीटर (एक किलो) रस मे 750 ग्राम शर्करा मिलानी चाहिये। अगर आधे से ऊपर 1 की ओर हो तो बराबर मात्रा में शर्करा मिलायी जा सकती है। अगर $\frac{1}{2}$ अंशांकन के नीचे उतर जाये तो मान लेना चाहिए कि पैक्टिन-निचोड़ में पैक्टिन की मात्रा कम है तथा उसमे या तो व्यावसायिक पैक्टिन मिलाना चाहिए या फल-तरकारियों से ताजा प्राप्त गाढ़ा पैक्टिन मिलाना चाहिए और तदनुसार, जल-मीटर परीक्षण के अनुसार शर्करा मिलानी चाहिए। अधिक जानकारी के लिए सारणी संख्या–4 देखें।

सारणी संख्या–4

जल-मीटर सूचना के आधार पर शर्करा मिलाकर तैयार की हुई जैली समाप्त बिन्दु पर आते ही सूचित भार।

जल मीटर सूचना (अशांकित)	निचोड़ में मिलाई जाने वाली शर्करा का भार (किलोग्राम में)	समाप्त बिन्दु पर पहुँचते ही बनी जैली का भार (किलोग्राम में)	कम हुआ भार
$1\frac{1}{4}$	1.250	2.000	500 ग्राम
1	1.000	1.650	350 "
$\frac{3}{4}$	0.750	1.250	250 "
$\frac{1}{2}$	0.500	0.850	150 "

एस० सदाशिवन नायर, 1974

पहले ही कहा जा चुका है कि पैक्टिन को हमेशा 26° सेन्टीग्रेड से 32° से० तापमान में ही जल-मीटर में भरकर निरीक्षण करना चाहिये। भिन्न-भिन्न तापमान के पैक्टिन-निचोड़ प्रयोग से प्राप्त सूचना के आधार पर तैयार की हुई जैली परिभाषा के अनुरूप मानकीकृत नहीं रहेगी। वास्तव में पैक्टिन-युक्त जलीय-घोल में शर्करा कितनी मिलानी चाहिये, यह जल-मीटर ही सूचित करता है। पैक्टिन-निचोड़ की बजाय कोई अन्य व गाढ़ा पदार्थ जल-मीटर की सहायता से निरीक्षण किया जाये तथा उसमें शर्करा मिलायी जाये तो प्राप्त पदार्थ जैली नहीं होगी। इसलिए जल-मीटर में पैक्टिन-युक्त फल-निचोड़ को प्रयोग कर देखने से उसमें रहे पैक्टिन के आधार पर उसमें कितनी शर्करा मिलानी, यही बात जल-मीटर सूचित करेगा। परन्तु पश्चिमी देशों की महिलाएँ तथा शिक्षित महिलाएँ अपने अनुभव के आधार पर ही पैक्टिन-निचोड़ में शर्करा क्योंकि फल चुनते समय वे उन फलों को चुनती है जिनमें अधिक पैक्टिन हों।

प्राप्त पैक्टिन-निचोड़ से वे भली-भाँति समझ लेती हैं कि कितनी शर्करा मिलानी चाहिये, जैसे—दूध को हाथ से देखकर हलवाई भली-भाँति समझ लेते हैं कि उसमें कितना पानी मिलाया हुआ है। इसी प्रकार अधिक पैक्टिन-युक्त निचोड़ में बराबर शर्करा तथा कम पैक्टिन वाले निचोड़ में कम चीनी मिलाई जाती है, परन्तु कारखानों में विपणन के लिए इस प्रकार का अन्दाजा नहीं लगाया जाता, वहाँ उपर्युक्त विधियों में से एक या दो को अपनी सुविधानुसार उपयोग कर अपनाया जाता है।

व्यवसायशालाओं की भाँति प्रयोगशालाओं में भी शर्करा को तौलकर लिया जाता है। उसको पैक्टिन-निचोड़ में डालकर, गर्म कर घोल लेते हैं, तुरन्त चाशनीयुक्त पैक्टिन-निचोड़ को छान लेते है, ताकि शर्करा में पाये जाने वाले अनावश्यक पदार्थों को अलग किया जा सके। ध्यान रखें कि विकसित देशों में इस क्रिया की आवश्यकता नहीं होगी, क्योंकि वहाँ शर्करा अन्य खाद्य-पदार्थों की भाँति सफाई से तैयार कर उचित रूप से पैकिंग कर शुद्धता से परिवहन की जाती है, परन्तु भारत में आज भी अन्य खाद्य-पदार्थों की भाँति शर्करा की भी अवहेलना की जा रही है। फलस्वरूप उसमें कई प्रकार के अनावश्यक पदार्थ मिले हुए होते हैं, इसलिए शर्करा-चाशनी को समय-समय पर छान लेना आवश्यक है। सारणी संख्या-4 से आप भली-भाँति समझ गये होंगे कि पैक्टिन-निचोड़ में अगर पैक्टिन की मात्रा अधिक हो तो शर्करा भी अधिक मिलाई जानी है या कम हो तो कम। अधिक पैक्टिनयुक्त निचोड़ से ऊष्मा प्रयोग द्वारा शीघ्र जैली बनाई जा सकती है, क्योंकि उसमें जल की मात्रा कम होती है, अर्थात् कम मात्रा वाले पैक्टिन-निचोड़ में जल मात्रा अधिक होती है, फलस्वरूप अधिक समय लेकर ही जैली बनायी जा सकती है। इसलिए उत्पादन-खर्च कम करने के लिए यह आवश्यक हो जाता है कि पैक्टिन-निचोड़ में उचित मात्रा में पैक्टिन की मात्रा रहे।

जैली तथा अम्ल

पैक्टिन-निचोड़ में केवल शर्करा मिलाने से जैली तैयार नहीं हो पायेगी, उसमें उचित मात्रा में फल-अम्ल भी होना चाहिये, ताकि तीनों के मिश्रण को ऊष्मा-प्रयोग द्वारा सान्द्रीकरण कर जैली बनायी जा सके। इसके लिए करीब 1 प्रतिशत अम्लता पैक्टिन-निचोड़ में हो तो 60 से 70 प्रतिशत तक शर्करा मिलाकर मानकीकृत गुण-युक्त जैली बनाई जा सकती है। इसी प्रकार 1 प्रतिशत अम्लयुक्त पैक्टिन-निचोड़ में पी० एच० मूल्य (P.H. Value) 3.0, 3.2, 3.4 श्रेणियों में होगा। मानकीकृत जैली बनाने के लिए तैयार किये पैक्टिन-निचोड़ में 3.2 पी०एच० मूल्य होना अनिवार्य है या 3.1 से 3.3 तक भी हो सकता है। इससे अधिक हो जाए तो जलाटिनीकरण शक्ति (जैली की) नष्ट हो जायेगी तथा पी०एच० मान कम हो जाये तो ठोस जैली बनेगी। इससे आपको भली-भाँति मालूम हो गया होगा कि जैली निर्माण में अम्ल की उपस्थिति में पी० एच० मान का प्रभाव अधिक होता है।

फिर भी तैयार की हुई जैली में 1.5 प्रतिशत अम्लता रहनी चाहिये, उसके लिए पैक्टिन घोल में 0.5 प्रतिशत से 1.5 प्रतिशत अम्लता होनी चाहिये। कुछ लोगों का कथन है कि अम्ल का प्रतिशत पैक्टिन-निचोड़ में 0.75 से 1 प्रतिशत भी हो सकता है। इस अम्ल का निर्णय परिमाणात्मक विश्लेषण द्वारा सम्पन्न किया जा सकता है।

एक बीकर में 10 एम०एल० पैक्टिन-निचोड़ लेकर उसमे फिनोफतलीन इण्डीकेटर मिलाकर $\frac{N}{10}$ सोडियम हाइड्रो-ऑक्साइड घोल से अनुमापन करने से उसमे पाई जाने वाली अम्लता का प्रतिशत आंका जा सकता है। अगर पैक्टिन-निचोड मे 1 प्रतिशत अम्लता हो और पी० एच० मीटर की सहायता से हाइड्रोजन आयन सान्द्रता नापी जाये तो पी० एच० मूल्य 3.0, 3.2, 3.4 इत्यादि सूचनाओं मे से एक को सूचित करेगा।

पी० एच० मात्रा बढने से अम्ल मात्रा कम तथा पी० एच० मात्रा कम होने से अम्लता बढ़ती जायेगी। जैलीकरण बिन्दु पैक्टिन-निचोड में उपस्थित अम्ल तथा पैक्टिन की मात्रा पर निर्भर रहता है। जैसे-जैसे अम्ल का प्रतिशत 0.05 से 1.05 की ओर बढता जायेगा, उसी के अनुपात में 100 ग्राम जैली बनाने के लिए आवश्यक शर्करा की मात्रा भी 75 ग्राम से 53.5 ग्राम की ओर कम होती जायेगी, अर्थात् कम अम्लता वाले पैक्टिन-निचोड़ मे शर्करा अधिक तथा अधिक अम्ल वाले पैक्टिन-निचोड़ मे शर्करा मात्रा कम रहेगी।

फल के पैक्टिन-निचोड़ में अम्लता कम हो तो उसकी पूर्ति, घरेलू-स्तर पर कागजी-नींबू का रस मिलाकर पूरी की जा सकती है, परन्तु व्यावसायिक स्तर पर इसके लिए विपणी मे प्राप्त साइट्रिक अम्ल या टार्टरिक अम्ल आवश्यक मात्रा मे मिलाकर मिश्रण को सान्द्रीकृत करने से जैली जम जाती है।

जेली तथा शर्करा

जैसा कि आपको विदित है, जैली बनाने के लिए पैक्टिन, अम्ल, शर्करा तथा जल की आवश्यकता होती है। इसमे पैक्टिन तथा अम्ल के विषय में चर्चा कर चुके हैं। साधारणतया जैली बनाने के लिए सुक्रोस नामक शर्करा जो गन्ने या चुकन्दर से प्राप्त होती है, को काम मे लेते हैं। मिश्रण का ऊष्मोपचार से सान्द्रीकरण किया जाता है तो जल-अपघटन होता है, फलस्वरूप सुक्रोस अपचयनीकरण शर्करा लघु शर्करा (Reducing Sugar) मे बदल जाते हैं। इस प्रकार की अपचयन-शर्करा है डिक्स्ट्रोज तथा लवलोज (Dextro e and Levulose)। इन्हे प्रतीप शर्करा (Invert Sugar) कहा जाता है। उपर्युक्त रूपान्तरण मिश्रण मे किये जाने वाले ऊष्मोपचार की मात्रा उसमें उपलब्ध अम्लता की मात्रा पर निर्भर करती है। उपर्युक्त प्रक्रिया द्वारा सुक्रोज शर्करा, प्रतीप शर्करा में रूपान्तरित हो जाने के कारण ही पुन: क्रिस्टलीय होकर सुक्रोज नही बन पाता। परन्तु जैली बनाने के बाद उसमें सुक्रोज तथा प्रतीप शर्कराओं का अनुपात 60 . 40 के अनुपात मे होना चाहिये। 40 प्रतिशत से कम प्रतीप शर्करा-युक्त जैली पुन. क्रिस्टलीकृत (मणिमय) हो जायेगी। 40 के अनुपात से अधिक प्रतीप शर्करा हो जाये तो उसमे डिक्स्ट्रोज कण निर्माण करेगी। ये दोनो मानकीकृत जैली के लिए उचित नही मानी जाती है। इसलिए उच्च-कोटि के जैली-निर्माण के लिए पैक्टिन-निचोड़ में 65 प्रतिशत शर्करा, एक प्रतिशत पैक्टिन तथा एक प्रतिशत अम्ल तथा उसका पी० एच० मान 3.2 होना चाहिये, शेष 33 प्रतिशत जल होना अनिवार्य बनाया गया है।

जैली तथा लवण

फलों के कोश में साइट्रिक, मलिक, टार्टरिक आदि फल-अम्ल पाये जाते हैं। इन्हें ही फलाम्ल कहा जाता है। इनके अलावा सोडियम साइट्रेट, सोडियम-पोटेशियम टार्टरेट इत्यादि लवण भी पाये जाते हैं। उपर्युक्त लवणों को जैली-निर्माण के समय बाहर से मिला दिया जाये तो वे प्रतिरोधीकारक प्रक्रिया से पी० एच० (हाइड्रोजन आयन सान्द्रता) को आसानी से नियन्त्रित करेंगे। इसलिए जैली निर्माण के समय उसमें मिलाई गई शर्करा के अनुपात में 2 प्रतिशत सोडियम साइट्रेट या सोडियम-पोटेशियम टार्टरेट मिलाया जाता है, अर्थात् 100 पौण्ड चीनी मिलाई गई हो (करीब 45 किलो) तो 3 औंस (85 ग्राम) के अनुपात में सोडियम या पोटेशियम साइट्रेट या टार्टरेट मिलाकर जैली के पूर्व-पक्वीकरण से होने वाली जलाटिनीकरण (जैम बनाने की क्रिया) को रोका जा सकता है।

सन् 1924 में हेलीडे तथा बेली (Halliday and Bailey, 1924) ने शर्करा-पैक्टिन-जल आदि में कैल्शियम क्लोराइड के प्रभाव के बारे में अध्ययन करते हुए यह प्रतिवेदन दिया कि पैक्टिन अम्ल, शर्करा आदि की न्यून सान्द्रता में बहुत ही कम मात्रा में कैल्शियम क्लोराइड मिलाया जाये तो जैली बन सकती है, परन्तु अधिक कैल्शियम लवण मिलाने से वह अम्ल को उदासीन बना देगा। यह प्रतिवेदन सन् 1939 में हिण्डोन ने प्रस्तुत किया था। हिण्डोन ने आगे कहा कि कैल्शियम लवण पी० एच० मान की वृद्धि करता है, फलस्वरूप जैली शक्ति कम हो जाती है। स्पेन्सर (1929) ने पैक्टिन तथा शर्करा से जैली बनाने की प्रक्रिया का अध्ययन करते हुए कहा कि अम्लता की उपस्थिति में सोडियम क्लोराइड जैली-निर्माण प्रक्रिया में रुकावट डालती है, फलस्वरूप उच्च कोटि की जैली-निर्माण के लिए अधिक शर्करा तथा अम्ल की आवश्यकता होती है। इसलिए जैली बनाने के लिए बाहर से अम्ल मिलाने से पूर्व पैक्टिन-निचोड़ के लिए काम में ली गई फल की अम्लता को ध्यान में रखना चाहिए।

जैली निर्माण सिद्धान्त

गिरधारी लाल तथा साथियो (1960) ने कहा कि जैली पैक्टिन अवक्षेपण (Precipitation) के कारण जैली बनती है, पैक्टिन फूलने के कारण नहीं। पैक्टिन, अम्ल, शर्करा तथा जल एक निश्चित अनुपात पर (क्रमश: 1, 1, 67·5 तथा 30·5 प्रतिशत) होने से अवक्षेपण होता है। यह अवक्षेपण निम्नलिखित कारकों से प्रेरित होता है :—

(1) घोल में रहे पैक्टिन की सान्द्रता।
(2) पैक्टिन रचना (Constitution of Pectin)
(3) पैक्टिन घोल की हाइड्रोजन आयान सान्द्रता (पी० एच० मात्रा)
(4) घोल की हाइड्रोजन आयान सान्द्रता।
(5) मिश्रण का तापमान।

कई सिद्धान्तों द्वारा उपर्युक्त जैली निर्माण का विवेचन करने की कोशिश की गई है। वे सिद्धान्त हैं—तन्तुक सिद्धान्त, स्पेन्सर सिद्धान्त, ओल्सन सिद्धान्त तथा हिण्डोन सिद्धान्त (Fibril, Spencer's Olsen's and Hindon's Theories)।

तन्दुक सिद्धान्त (Fibril Theory)

यहाँ हम केवल तन्दुक सिद्धान्त के बारे में चर्चा करेंगे। यह सिद्धान्त क्रुस का है। पैक्टिन-निचोड़ में जब शर्करा मिलायी जाती है, तब पैक्टिन तथा जल की तुलनात्मक परिस्थिति भंग हो जाती है। फलस्वरूप पैक्टिन गोलाकृति धारण कर एक प्रकार की जाल-आकृति में रूपान्तरित हो जाता है। फलस्वरूप अगणित जाल-समूह उत्पन्न होते हैं। इसी प्रकार बने जाल-समूह के भीतरी तन्दुकों मे शर्करा चाशनी भर जाती है, परन्तु जैली शक्ति, तन्दुकों की रचना, उसकी लम्बाई तथा गाढ़ेपन पर निर्भर करती है। अपक्षेपणीकृत पैक्टिन की स्थिरता, निचोड़ मे रही पैक्टिन की मात्रा के आधार पर निर्भर करती है, अर्थात् अधिक पैक्टिन मात्रा हो तो अधिक संख्या मे तन्दुक रूपीकृत हो जाएँगी तथा घना जाल समूह भी होगा। इसी प्रकार के जाल-समूहों की शक्ति दो कारकों पर आधारित है—(1) शर्करा की सान्द्रता (2) अम्ल सान्द्रता।

जैली में शर्करा का प्रभाव

जैली मे शर्करा की मात्रा अधिक हो, तो उसके अनुपात मे जलांश कम होगा। इसी प्रकार शर्करा की मात्रा बढ़ाकर ठोस जैली बना सकते है तथा उसके विपरीत शर्करा मात्रा कम कर मृदुल जैली भी बना सकते हैं, या यह भी कहा जा सकता है कि पैक्टिन अपघटन अम्ल की मात्रा को स्थिर कराता है, जो पैक्टिन घोल मे मिलाया जाता है, इससे जैली पर कोई विपरीत प्रभाव नही पडता। जैली बनाने के लिए आवश्यक न्यूनतम अम्ल पैक्टिन तन्दुको की शक्ति के आधार पर निर्धारित किया जाता है। इसी प्रकार जैली बनाने के लिए आवश्यक शर्करा की मात्रा बनी हुई जैली मे उत्पन्न क्रिस्टलीकृत शर्करा के आधार पर निर्धारित की जाती है। अगर जैली मे पैक्टिन तन्दुकों का जाल समूह पास-पास बना हुआ हो तथा उसकी लम्बाई अधिक हो तो अच्छे परिणाम (उच्च-कोटि की जैली) निकलते हैं।

अम्ल का प्रभाव

अम्ल की उपस्थिति मे पैक्टिन तन्दुके ठोस हो जाती हैं तथा उनके भीतर शर्करा-घोल को अन्दर तन्दुक-जालो मे रोके रखने की शक्ति उत्पन्न हो जाती है। अगर आवश्यकता से अधिक अम्लता हो जाये तो तन्दुकें तथा तन्दुक-जालें बलहीन हो जाती है, फलस्वरूप तन्दुकों का लचीलापन नष्ट हो जाता है, जिसके कारण जैली चाशनी जैसी हो जाती है। अगर अधिक अम्लता हो जाये तो पैक्टिन का जल-अपघटन हो जायेगा। मान लें इस प्रणाली में अम्लता अत्यधिक हो जाये तो सम्पूर्ण रचना क्षतिग्रस्त हो जायेगी। इसके विपरीत बहुत कम अम्लता रह जाये तो शक्तिहीन तन्दुक-समूह होगा, फलस्वरूप शर्करा-घोल को आवश्यकतानुसार ग्रहण करने मे असमर्थ रहेगा। परिणामस्वरूप जैली नर्म और कमजोर रहेगी।

इसलिए उच्च-कोटि की जैली बनाने के लिए पैक्टिन, अम्ल, शर्करा तथा जल का उपयुक्त अनुपात में होना अनिवार्य है। उनके अनुपात में आने वाले अन्तर के आधार पर बनी जैली का स्वभाव भी भिन्न-भिन्न रहेगा। इसलिए एक योगांश की कमी को दूसरे एक या दो योगांशों को बढ़ाकर पूरा किया जा सकता है, अर्थात् शर्करा की कमी को अधिक पैक्टिन या अम्ल दोनो को बढ़ाकर पूरा किया जा सकता है। उदाहरण के लिए मान लें

कि शर्करा 65 प्रतिशत से कम हो तो उच्च-कोटि की जैली बनाने के लिए पैक्टिन तथा अम्ल की मात्रा बढ़ानी चाहिये। अगर शर्करा की मात्रा समुचित है तथा अम्ल कम हो तो पैक्टिन मात्रा बढ़ाकर कमी पूरी की जा सकती है। कुछ सीमा तक अम्ल मिलाने से ठोस जैली बनती है। फलस्वरूप कम पैक्टिन का प्रयोग करना आवश्यक हो जाता है।

जैली शक्ति (Jelly Strength)

अब तक प्राप्त अध्ययनों के आधार पर समुचित अर्थात् उच्चकोटि की जैली बनाने के लिए 1 प्रतिशत पैक्टिन, 1 प्रतिशत अम्ल (3.1, 3.2, 3.3 शृंखला के पी० एच० मान) तथा 67 5 प्रतिशत शर्करा तथा शेष 30.5 जलांश-युक्त पैक्टिन होना आवश्यक है। अगर इसका पी० एच० मान 2 7, 2 8, 2.9 या 3 0 में हो तो ठोस जैली बनेगी तथा पी०एच० मान 3 4, 3.5, 3.6 शृंखलाओं में आ जाये तो जैली नहीं बनेगी।

इसी प्रकार मिश्रण में शर्करा मात्रा 64 प्रतिशत के करीब रह जाये तो निर्मित जैली में शक्ति नहीं रहेगी। इसके विपरीत करीब 71 प्रतिशत शर्करा हो जाये तथा सुक्रोज तथा प्रतीप शर्करा 60 · 40 के अनुपात में नहीं रहे तो क्रिस्टलीकृत (मणिमय) जैली बनेगी। इसलिए परिभाषा के अनुरूप योग्य जैली बनाने लिए 1 प्रतिशत पैक्टिन 1 प्रतिशत अम्ल, 67 5 प्रतिशत शर्करा तथा 30.5 प्रतिशत जलांश होना अनिवार्य है।

मिश्रण का सान्द्रीकरण

अगला कदम मिश्रण का सान्द्रीकरण है, जो शीघ्रातिशीघ्र सम्पन्न कराना चाहिये। जैली बनाने के लिए मिश्रण का ऊष्मीकरण करने से ही जलाटिनीकरण सम्भव होगा। इसलिए गहरे बर्तनों में उतनी ही मात्रा में मिश्रण लेना चाहिये, जो 20 मिनट में तैयार किया जा सके। अन्यथा जैली समापन-बिन्दु पर पहुँचने में अधिक समय लगेगा, फलस्वरूप पैक्टिन जल-अपघटन द्वारा उसका वास्तविक गुण नष्ट हो जायेगा, अर्थात् जैली नहीं बन सकेगी। समापन-बिन्दु को नाजुक-बिन्दु (Critical-Point) भी कहा जा सकता है। दीर्घ समय तक ऊष्मोपचार करने से काम में ली गयी फल की वास्तविक सुगन्ध समाप्त हो जाती है तथा वाष्पीकरण से अम्ल नष्ट होकर चाहे गये वर्ण से भी वंचित होना पड़ता है।

उपर्युक्त दोष से जैली को बचाने के लिए आज रिक्त सान्द्रीकरण द्वारा बड़े-बड़े कारखानों में जैली बनाई जाती है। परन्तु भारतीय परिस्थिति में घरेलू स्तर पर यह सम्भव नहीं। यहाँ यह क्रिया यथाशीघ्र सम्पन्न कराने के लिए स्टीम जेकेटेट केतली व्यावसायिक स्तर पर भी काम में ली जाती है। (चित्र संख्या–68) घरेलू तथा कुटीर उद्योगों में अगोर्न काम में लिये जाते हैं।

झाग (Scum)

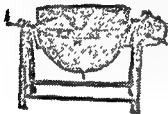
सान्द्रीकरण के समय मिश्रण के ऊपर झाग-सी एक परत उत्पन्न होती है, वह साधारणतया फल में पायी जाने वाली प्रोटीन के स्कन्दन तथा चीनी के मैल इत्यादि से उत्पन्न होती है जो मिश्रण उबलने से सतह पर आ जाती है। इसे समय-समय पर अलग कर लेना चाहिये, अन्यथा तैयार जैली पारदर्शक नहीं रहेगी। कुछ वैज्ञानिकों का अभिप्राय है कि जैली बनने के बाद ऊष्मोपचार बन्द कर 7–8 सैकण्ड छोड़ने से झाग परिपूर्ण रूप से जैली की सतह पर जम जायेंगे, उन्हें आसानी से निकाला जा सकता है। झाग को

निकालने के लिए झरनुमा चम्मच काम मे लेना चाहिये। इसी प्रकार एकत्रित झाग को एक बर्तन मे इकट्ठा किया जाये तो जैम, चीज आदि मे मिलाकर काम मे लिया जा सकता है।

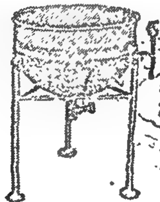
जैली पकाने के समय उबालकर ऊपर उठ सकती है, इसको रोकने के लिए 45 किलो शर्करा के लिए 1 चाय चम्मच खाद्य योग्य तेल उसमे मिलाना चाहिए, ताकि ऊपर न उठ सके। जैली-निर्माण हुआ या नही, इसको भिन्न-भिन्न विधियो से आंका जा सकता है। जैली-निर्माण होते ही पाचकीकरण बन्द करना है, इस बिन्दु को समापन (समाप्त) बिन्दु या नाजुक-क्षण कहा जाता है।

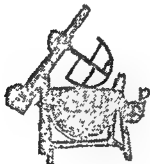
(1) थर्मामीटर की सहायता से समापन-बिन्दु आंकना

मिश्रण को अधिक देर तक पकाते रहें तो रंग व खुशबू बदल जायेगी, साथ ही पैक्टिन की मात्रा भी कम हो जायेगी। इसको रोकने के लिए आजकल वैक्यूम पैन (रिक्तक-केतली) को काम मे लिया जाता है। फिर भी सही समाप्त बिन्दु आंकने के लिए



टिलटिंग टाइप केतली, इसमे थर्मामीटर तथा प्रेशर गेज लगा हुआ होता है, जो दर्शाया गया है





चित्र संख्या–56

स्टेशनरी केतली जो स्थिर रहती है।

यह एक विशेष प्रकार के टिलटिंग टाइप केतली है, जिसमे खाद्य-पदार्थों को उल्टा-पल्टी करने के लिए (स्वचालित) योग्य प्रावधान प्रदान किया हुआ है; जो जैम, जैली, कैंचप इत्यादि बनाने मे सुयोग्य है।

विभिन्न प्रकार तथा क्षमता वाली स्टीम जेकेटेट केतलियाँ

एक विशेष प्रकार का थर्मामीटर काम में लिया जाता है, जिसको जैली थर्मामीटर कहा जाता है। जैली-निर्माण के समापन-बिन्दु पर पहुँचते ही उसका तापमान 219° से 221° फारनहीट (105.5° से०) हो जाता है अर्थात् जल के क्वथनांक से जैली का क्वथनांक करीब 7° से 9° फारनहीट अधिक होगा। जब उपर्युक्त थर्मामीटर का प्रयोग करते हैं, तब यह सावधानी बरतनी चाहिये कि तापमान केतली के भगोने के तल के या बाजुओं के



चित्र संख्या–57

जैली थर्मामीटर से समाप्त-बिन्दु आंका जाता है।

सम्पर्क में न आ जाये, अन्यथा थर्मामीटर टूट जायेगा। साथ ही जैली भी खराब हो जायेगी। जैली थर्मामीटर बर्तन के केन्द्र में लगाकर जैली को अच्छी तरह हिलाते हुए तापमान देखना चाहिये, ताकि जैली का समान तापमान मालूम हो सके। थर्मामीटर-काया का पारा जैली में डूबते ही ऊष्मा के कारण ऊपर की तरफ उठता नजर आयेगा। धीरे-धीरे निश्चित स्थान पर रुक जायेगा। यह अंकित संख्या नोट कर लेनी चाहिये, जो उपरोक्त तापमान (219° से 321° एफ०) के अनुरूप होना चाहिये, अर्थात् इस तापमान पर समझ लेना चाहिये कि मिश्रण समापन-बिन्दु पर पहुँच गया है। इस समय ऊष्मोपचार बन्द कर निर्जलीकृत बोतलों में भरा जाता है। विकसित देशों की व्यवसाय-शालाओं में समापन-बिन्दु मालूम करने के लिए ताप-विद्युत्-युग्म (थर्मोकोपल्स) का प्रयोग किया जाता है, जो जैली थर्मामीटर से अधिक सुगमता से मालूम किया जा सकता है। देश के बड़े-बड़े कारखानों में भी थर्मोकोपल्स का प्रचार हो रहा है।

(2) रिफ्रेक्टोमीटर (Refractometer)

थर्मामीटर की बजाय अधिकांश भारतीय कारखानों में समापन-बिन्दु मालूम करने के लिए रिफ्रेक्टोमीटर का प्रयोग किया जाता है। इसको अपवर्तनांक-मापी भी कहा जा सकता है। यह कई प्रकार के होते हैं—हैण्ड रिफ्रेक्टोमीटर, पॉकेट रिफ्रेक्टोमीटर तथा टेबुल रिफ्रेक्टोमीटर इत्यादि। साधारणतया हैण्ड रिफ्रेक्टोमीटर का प्रयोग किया जाता है। प्रत्येक रिफ्रेक्टोमीटर 0 से 90, 0 से 30, 0 से 60 इन शृंखलाओं में अंकित किये हुए होते हैं। संयुक्त राज्य अमेरिका में तथा भारत की कुछ बड़ी-बड़ी प्रयोगशालाओं में ऐब (Abbe) रिफ्रेक्टोमीटर काम में लिया जाता है। उबलती हुई जैली से जब यह अन्दाजा हो जाता है कि जैली बनने वाली है, तब स्थायीकरण के लिए जैली थर्मामीटर की बजाय रिफ्रेक्टोमीटर में एक बूँद उबलते मिश्रण को 20° से० पर ठण्डा कर उसे प्रिज्म पर रखकर प्रकाश की दिशा में देखकर यह मालूम किया जाता है कि उसकी ब्रिक्स डिग्री अर्थात् कुल घुलनशील ठोस पदार्थ कितना है। अगर 67.5° डिग्री से 70° ब्रिक्स सूचित करता है तो समझ लेना चाहिये कि समाप्त बिन्दु पर मिश्रण पहुँच गया है, अतः तुरन्त ऊष्मोपचार बन्द कर काँच की वाहिकाओं में गर्म-गर्म भरना चाहिये, अन्यथा जब तक समापन-बिन्दु प्राप्त होगा, तब तक ऊष्मोपचार करते रहना चाहिये।

(3) चद्दर निर्माण परीक्षण

उपर्युक्त उपस्कर भारतीय परिस्थिति में घरेलू-स्तर पर प्रयोग करना सम्भव नहीं है। वहाँ चद्दर-निर्माण परीक्षण द्वारा समापन-बिन्दु आँका जा सकता है। इसको शीतल परीक्षण भी कहा जाता है। उबलते हुए मिश्रण पर आशंका होते ही ठण्डे पल्टे से ऊपर उठाकर पुनः डाला जाये तो उसमे एक चद्दरनुमा परत नजर आयेगी, (चित्र संख्या 58) तो समझ लेना चाहिये कि जैली समापन-बिन्दु पर पहुँच चुकी है, यानी जैली-निर्माण हो चुका है। अगर चद्दरनुमा के बजाय मोतीनुमा हो तो पाचकीकरण लगातार करते रहें, जब तक चद्दर-निर्माण न हो जाये।



चित्र संख्या–58

(4) ठण्डा जल-परीक्षण

उबलते हुए मिश्रण मे से एक बूँद जल से भरे सफेद काँच के गिलास के ऊपर डाली जायें तो समापन बिन्दु पर पहुँची हुई जैली की बूँद सीधे पेंदे पर जाकर बैठ जायेगी, अन्यथा चारो तरफ बिखर जायेगी।





चित्र संख्या–59

(5) भार परीक्षण

इसके लिए बर्तन जो जैली पाचकीकरण के लिए काम मे लेते हैं, इन्हे पहले ही तोल लेना चाहिये, ताकि भार मालूम हो सके। उबलते मिश्रण पर आशंका होते ही, उसका भार तोलकर मालूम करें। यदि सारणी संख्या–4 मे बताये गये समापन-बिन्दु पर पहुँचते ही बनी जैली के भार के अनुपात मे हो जाए, तो ऊष्मोपचार बन्द कर पूर्व-निर्जर्मीकृत काँच की बरनियों में भर लें।

साधारणतया कारखानों में हो या घरेलू स्तर पर, उपरोक्त विधियों में से दो या अधिक के प्रयोग से समापन-बिन्दु मालूम किया जाता है, ताकि सतर्कता से जैली बनाई जा सके। फलस्वरूप त्रुटियाँ नहीं रहेंगी।

भराई

मिश्रण समाप्त-बिन्दु पर पहुँचते ही ऊष्मोपचार बन्द कर देते हैं, बाद में उसमें रहे झाग अलग कर देते हैं। इसके लिए 7–8 सेकण्ड समय देना चाहिये। तुरन्त बाद गर्म-गर्म जैली को निर्जर्मीकृत काच की बरनियों (जैली बोतल) में भरा जाता है। विदेशों में जहाँ कैन की कमी नहीं, वहाँ कैनों में भी भरा जाता है। नई वाहिकाएँ बिना निर्जर्मीकरण के साफ धोकर भी काम में ली जा सकती हैं, क्योंकि उबलती जैली प्रायः वाहिकाओं में पाये जाने वाले सूक्ष्मजीवियों को मारने लायक तापमान पर होने से जैली को विकृतिकरण से रोका जाता है। जैली में फफूँद के अलावा अन्य कोई सूक्ष्मजीव प्रजनन कर वृद्धि नहीं कर सकते, क्योंकि उसमें शर्करा अधिक होती है। परन्तु जैली की परत पर प्रायः लगने वाली फफूँद को रोकने के लिए पिघली हुई मोम की पतली परत से रोका जा सकता है। यह क्रिया वाहिका में जैली जमने के बाद की जाती है, जहाँ इसकी आवश्यकता नहीं होती, लेकिन भरने के बाद जैली के जमने तक वाहिकाओं को नहीं छेड़ना चाहिये। काँच की वाहिकाओं को भरने के बाद काष्ठ से बने तख्ते पर या तत्तुल्य वस्तु से बनी मेज या फर्श पर जमने के लिए सजाना चाहिये, अन्यथा बरनी टूटने का भय रहता है। यदि कैन में भरा जाये तो वह इनामल किया हुआ होना चाहिये। कैन में भरते ही तुरन्त वायुरुद्ध अवस्था में सीलबन्द कर देते हैं।

शीतलीकरण

घरेलू तथा कुटीर स्तर पर बनाई गई जैली को बिना छेड़े, उसे ठण्डा होने दिया जाता है, परन्तु ऐसा बताते हैं कि इस विधि से बनी जैली में भविष्य में वर्ण-भेद तथा सुगन्ध की कमी पाई जाती है। इसलिए कुछ कारखानों में जैली से भरी बोतलों को बन्द कर उसके तापमान से मामूली कम तापमान के गर्म जल में डुबोकर, ठण्डा कर तुरन्त उसे मामूली तापमान-और कम तापमान के जल में क्रमशः डुबोते-डुबोते ठण्डा किया जाता है। इसी प्रकार अधिक तापमान से क्रमशः कम तापमान के जल में डुबोकर शीतलीकरण कर सचयन की गई जैली में भविष्य में भी सुगन्ध तथा वर्ण-भेद नहीं हुआ पाया गया। कैनों को भी इसी प्रकार शीतलीकरण किया जाता है।

काँच की बरनियों में भरी हुई जैली जमने के बाद पैरेफिन मोम पिघलाकर पतली परत में डालकर उन्हें तुरन्त वायुरुद्ध अवस्था में बन्द कर देते हैं। इसके लिए काम में लिये जाने वाले पेचदार ढक्कनों के भीतर रबर संयुक्त के वलय लगाये हुए होते हैं, जो वायुरुद्ध अवस्था में बन्द करने में मदद करते हैं। इन्हें गर्म पानी में डुबोये कपड़े से साफ कर, सुखा कर लेबलीकरण कर सचयन किया जाता है।

कुछ विशेष फलों से जैली निर्माण की विधि

जैसा कि पहले ही बताया जा चुका है, पैक्टिन-युक्त उन फलों से जैली बनाई जा सकती है, जिसमें समुचित मात्रा में पैक्टिन की भाँति अम्ल भी हो। वैसे आप चाहें तो किसी भी फल-रस में पैक्टिन या अम्ल नहीं हो या कम हो तो उसमें ऊपर से मिलाकर कमी

पूरी कर जैली बना सकते हैं। जैली साधारणतया अमरूद, सेब, कटहल इत्यादि से बनाई जाती है। अधिक जानकारी सारणी संख्या 1 से की जा सकती है।

अमरूद से जैली बनाने की विधि

पूर्ण विकसित, पका हुआ ठोस और हरे रंग का अमरूद जैली के लिए चुनना चाहिए। इसमें एक या दो परिपूर्ण पके फल भी होने उचित रहेंगे। इन्हें धोकर 1 प्रतिशत हाइड्रोक्लोरिक अम्ल घोल में धोकर पुनः स्वच्छ गर्म पानी से धोना चाहिए।

इन्हें बराबर मोटाई के छोटे-छोटे टुकड़ों मे कतर लें, जिनकी मोटाई तथा लम्बाई 2–3 मिलीमीटर हो। इन्हें एल्युमीनियम या स्टेनलेस स्टील के बर्तनों मे डालकर जल मिलाया जाता है। जल अमरूद के भार के बराबर डालना चाहिए, जो सारणी संख्या 2 मे बताया गया है। साधारणतया कतरे हुए टुकड़ों पर 2–3 सेन्टीमीटर जल तैराना चाहिए। इसमें कतरे हुए फलों के लिए प्रति किलोग्राम मे 1 से 2 ग्राम साइट्रिक या टार्टरिक अम्ल मिलाकर धुँआ रहित अंगीठी की सहायता से पकाना चाहिए। उबाल आते ही समय नोट करें तथा तुरन्त बाद केवल 30 से 35 मिनट [समय प्रदान कर उबालना चाहिए। इसके लिए साधारणतया स्टोव, विद्युत-चूल्हा, गैस-चूल्हा आदि काम मे लिए जा सकते हैं।

उबाले हुए अमरूद के टुकड़ों को जैली-बैग की सहायता से या कपड़े की थैली की सहायता से छाना जाता है। छानने के पहले थैलियों को पानी में भिगोना चाहिए, थैलियों को उसमें लगी हुई कड़ी की सहायता से लटकाकर उसके नीचे भगोना रख दें, उसके बाद उबले हुए अमरूद के टुकड़े-युक्त जल को पहले तथा बाद मे टुकड़ों को भी थैली में डाल दें। पूरा पैक्टिन-निचोड़ नीचे के बर्तन मे पूर्ण रूप से प्राप्त होने मे 2–4 घण्टे का समय लगेगा। यह क्रिया घरेलू तथा कुटीर उद्योगों में की जाती है।

कारखानों मे बास्केट प्रेस की सहायता से, जैसा पहले ही बताया जा चुका है, पैक्टिन निचोड़ निकाला जाता है।

इसी प्रकार प्राप्त पैक्टिन को घरेलू स्तर पर तुरन्त तथा व्यावसायिक स्तर पर 24 घण्टे रखने के बाद, ऊपर तैरते हुए पैक्टिन-युक्त निचोड़ को साइफन द्वारा निकाला जाता है। जैली-निर्माण के पहले दोनों प्रकार से प्राप्त पैक्टिन-निचोड़ मे सर्वप्रथम पैक्टिन मात्रा मालूम की जाती है। इसके अनुसार उसमे शर्करा मिलाकर गर्म किया जाता है ताकि शर्करा मिश्रण मे मिल जाए। शर्करा घुलते ही उन्हें पुनः छान लिया जाता है, ताकि शर्करा मे रहे अनचाहे पदार्थों को अलग किया जा सके। इसके बाद मिश्रण का पाचकीकरण किया जाता है, ताकि 20 मिनट मे जैली समापन बिन्दु पर पहुँच सके। लेकिन 20 मिनट मे जैली कारखानों मे ही, जहाँ स्टीम जैकेटेट केतली में पकाते हैं, सम्भव हो सकेगा। घरेलू स्तर पर यह क्रिया जब भगोने में की जाती है, तब इससे अधिक समय लगना स्वाभाविक है। जैली के लिए तैयार मिश्रण मे थोड़ा तेल (खाद्य योग्य) डाल देना चाहिए, ताकि पाचकीकरण के समय जैली मिश्रण उबलकर बाहर न निकल पाये। इस क्रिया से कुछ हद तक विटामिन 'सी' को ऑक्सीकरण से भी रोका जा सकेगा।

लेकिन 10 किलो पैक्टिन निचोड़, 10 किलो शर्करा तथा उसमे 1 प्रतिशत हो तो 20 मिनट मे जैली निर्माण हो जायेगा। जब उसका वजन 15 किलो रह समझ लेना चाहिए कि जैली निर्मित हो चुकी है।

मिश्रण को पकाते समय तापमान, ब्रिक्स डिग्री (रिफैक्ट्रोमीटर द्वारा) चद्दर-निर्माण परीक्षण, ठण्डा जल-परीक्षण, भार-परीक्षण इत्यादि मे से दो या अधिक परीक्षणों द्वारा मिश्रण का समापन विन्दु मालूम कर (विश्वास होने पर) ऊष्मीकरण बन्द करना चाहिए। साथ ही जैली-निर्माण समय मे उत्पन्न भाग को भी अलग करना चाहिए। तैयार जैली गर्म बोतलों मे भरकर बिना छेड़े ठण्डी होने दी जाए, जैली जमते ही पिघले हुए मोम की परत से सीलकर वायुरुद्ध अवस्था मे ढक्कन लगाकर, गर्म पानी में कपड़ा भिगोकर जैली-बोतलो को पोंछना चाहिए। तत्पश्चात् लेबल लगाकर, सूखे तथा ठण्डे स्थान में संचयन करना चाहिए।

इसी प्रकार सेब, करौदा, आंवले इत्यादि से भी जैली बनाई जा सकती है, लेकिन करौदा तथा आंवले के पैक्टिन-निचोड के लिए अम्ल मिलाने की आवश्यकता नही होती। अमरूद सहित सभी फलों के लिए जल बराबर या उससे अधिक प्रयोग किया जा सकता है, जो अनुभव से ही सम्भव हो सकेगा, क्योंकि एक बार काम मे लिए हुए फल से अधिक या कम पैक्टिन पाया जायेगा। इसलिए पैक्टिन के आधार पर जल की मात्रा भी बढती-घटती रहेगी।

कटहल जैली

कटहल के उस भाग में जिससे पैक्टिन निचोड़ लिया जाता है, अम्ल नही होता। इसीलिए इसमे पूर्व-चर्चित फलो से अधिक अम्ल बाहर से मिलाना पड़ता है। कटहल मे अधिक पैक्टिन पाया जाता है।

पूर्ण विकसित कटहल फलों में से स्कन्द या कोए अलग करने के बाद करीब 75 प्रतिशत भाग अवशेष रह जाता है, जो साधारणतया मनुष्य-आहार के रूप मे काम मे नही लिया जाता, परन्तु पशु आहार के रूप में अवश्य काम में लिया जाता है। यह अवशिष्ट भाग है, बाहरी कांटेदार छिलका, अन्दर का ठोस सफेद छिलका, अविकसित कोए इत्यादि इन भागो मे करीब 2 प्रतिशत पैक्टिन पाई जाती है, जो पीले वर्ण की जैली बनाने के काम मे आ सकती है।

सम्पूर्ण कटहल को ब्रुश की सहायता से रगड़कर, धोकर, काटकर उसके भीतर से कोए अलग कर देते है। बाकी सम्पूर्ण भाग को बारीक कतर लेते है। इन कतरे हुए कटहल (बेकार भाग) मे $1\frac{1}{2}$ गुणा पानी, 0.3 प्रतिशत साइट्रिक अम्ल या टार्टरिक अम्ल मिलाकर 30 मिनट तक उबालकर पैक्टिन निचोड़ प्राप्त करते हैं। जैसे अमरूद की पैक्टिन निकाली जाती है। ध्यान रखें, कटहल के छिलको को उबालते समय उसमे पके हुए सख्त कोए को 5–10 मिनट पहले (उबाल बन्द करने के) डाल दिया जाए तो प्राप्त पैक्टिन-निचोड मे पके कटहल की सुगन्ध भी रहेगी। अगर आवश्यकता हो तो पैक्टिन-निचोड़ लिए हुए अवशेष मे, अमरूद, पपीता, करौदा, आंवला इत्यादि की भाँति पुनः जल मिलाकर, उबालकर पुनः पैक्टिन-निचोड लिया जा सकता है। इसी प्रकार प्राप्त निचोड़ को एक साथ मिलाकर पैक्टिन टैस्ट करना चाहिए। इसके अनुसार शर्करा मिलाकर सान्द्रीकरण करना चाहिए, ताकि जैली प्राप्त हो सके। सान्द्रीकरण के समय प्रति किलो ग्राम शर्करा मे 7 ग्राम

के अनुपात में पुनः साइट्रिक या टार्टरिक अम्ल मिलाना आवश्यक है। जब पूर्व-चर्चित परीक्षणों के आधार पर विश्वास हो जाए कि जैली समापन बिन्दु पर पहुँच गई है, तो ऊष्मीकरण बंद कर देना चाहिए। शेष सब बातें अमरूद की जैली की भाँति हैं।

व्यावसायिक स्तर पर जैली बनाने के लिए अमरूद-निचोड़ की भाँति कटहल-निचोड़ को भी बास्केट प्रेश या हाइड्रोलिक प्रेश की सहायता से प्राप्त करते हैं तथा निचोड़ को 12 घण्टे रखने से प्राप्त निर्मलीकृत पैक्टिन निचोड़ को साइफन द्वारा अलग कर पैक्टिन-परीक्षण विधेयक बनाया जाता है, तदनुसार शर्करा मिलाकर पाचकीकरण किया जाता है।

पैक्टिन रहित फलों से जैली बनाने की विधि

देश में अन्य कई फल ऐसे भी हैं जिनमें पैक्टिन नहीं होता, लेकिन गुण तथा सुगन्ध अधिक होती है। अगर आपको पैक्टिन रहित फलों के रस से जैली बनानी हो तो कटहल जैसे अधिक पैक्टिन वाले फलों के बेकार भागों से प्राप्त गाढ़ी पैक्टिन मिलाकर जैली बनाई जा सकती है। व्यावसायिक स्तर पर बाजार से प्राप्त व्यावसायिक पैक्टिन जो चूर्ण या द्रव के रूप में प्राप्त है, का प्रयोग कर जैली बनाई जाती है।

काजू फल (काजू सेब), रस अनन्नास रस, आम-रस, अनारदाना-रस, इत्यादि में पैक्टिन मिलाकर जैली बनायी जा सकती है। निम्न योगांशों के आधार पर आप फल-रस के व्यावसायिक स्तर पर भी जैली बना सकते हैं।

फल-रस से जैली बनाने के लिए योगांश

योगांश	मात्रा किलोग्राम में
फल-रस	36 400
100-ग्रेड पैक्टिन	0.315
शर्करा	45.000
अम्ल (साइट्रिक या टार्टरिक)	0.227

एस० सदाशिवन नायर, 1974

उपर्युक्त मात्रा के फलरस को स्टीम जैकेटेट केतली में या भगोने में डालकर गर्म करें, गर्म होते ही योगांश में बताई गई पैक्टिन उसमें मिलायी जाये। इसमें पैक्टिन की आठ गुणा शर्करा मिलाकर धीरे-धीरे ऊष्मोपचार किया जाए, ताकि मिश्रण का तापमान 160° से 180° एफ० पहुँच जाए। जब पैक्टिन सम्पूर्ण रूप से घुल जाए तो ऊष्मोपचार तीव्र करना चाहिए। इस समय शेष शर्करा भी मिला दी जाए। मिश्रण की ब्रिक्स डिग्री 65 होते ही या तापमान 220° एफ० होते ही उसमें फल-अम्ल मिलाना चाहिए। 227 ग्राम साइट्रिक अथवा टार्टरिक अम्ल को 284 ग्राम जल में घोल बनाकर मिश्रण में मिलाना चाहिए। प्राप्त जैली का कुल भार 79 किलो होगा, अगर आप उपर्युक्त योगांश के आधार पर जैली बनाते हैं तो कुछ पैक्टिन-चूर्ण ऐसे भी होते हैं, जिन्हें पहले शर्करा के साथ मिश्रण कर फल-रस में या जल में मिलाया जाता है। अन्यथा वह नहीं घुलेगा। प्रयोग करने का तरीका निर्माता स्वयं पैक्टिन के साथ देता है, जिसका पालन करना चाहिए। पैक्टिन जो द्रव के रूप में मिलते हैं, उनको किसी कठिनाई के बिना ही प्रयोग किया जा सकता है।

जैली निर्माण में सम्भावित कठिनाइयाँ

जैली-निर्माण में साधारणतया ये कठिनाइयाँ पाई जाती हैं—जैली न जमना, जमी हुई जैली में धुन्धलापन आ जाना, जैली से पानी निसरना, जैली में सुक्रोज-शर्करा का पुनः क्रिस्टलीकरण होना तथा ठोस जैली बन जाना आदि। इसका मुख्य कारण अनुभव का अभाव या लापरवाही है। अनुभव की कमी एक-दो बार जैली बनाते हुए देखने से तथा बाद में स्वयं बनाने से दूर हो जाती है। इसके अतिरिक्त सावधानी से ही जैली-निर्माण किया जाना चाहिये।

(1) जैली न जमने का कारण

पैक्टिन-निचोड़ के लिए काम में लिये गये फलों में पैक्टिन की मात्रा कम होना या कम पैक्टिन वाले फलों से प्राप्त निचोड़ गाढ़ा होने के कारण, केवल जल-मीटर सूचक से प्राप्त सूचना के अनुसार शर्करा मिलाने से प्राप्त जैली-पैक्टिन की कमी से नहीं जम सकेगी। इसलिए मद्यसार प्रयोग द्वारा पैक्टिन मात्रा का निश्चय कर तदनुसार शर्करा मिलानी चाहिये। इसलिए प्राप्त पैक्टिन-निचोड़ में 1 प्रतिशत पैक्टिन, 1 प्रतिशत जिसका पी० एच० मान 3.1 से 3.3 की शृंखला में हो तथा 65 से 67.5 प्रतिशत शर्करा भी हो तो जैली अवश्य जमेगी।

इसके अलावा अपूर्ण ऊष्मोपचार तथा अधिक मात्रा में मिश्रण को ऊष्मोपचार करने से भी जैली नहीं जमेगी। इसलिए केतलियों में उतना ही मिश्रण लेकर पकाना चाहिये कि 20 दिन में जैली समापन-बिन्दु पर पहुँच जाये तथा उसके अनुसार तापोपचार भी करते रहना चाहिये। साथ ही काम में लिये जाने वाले बर्तन, मिश्रण के अनुरूप गहरे भी होने चाहिये।

(2) जैली में धुन्धलापन

पैक्टिन-निचोड़ के समय गलती और असावधानी से (घरेलू स्तर पर) फल का गूदा फल-रस में घुलकर पैक्टिन के साथ आ जाता है। फलस्वरूप तैयार जैली में धुन्धलापन हो जाता है। इससे बचने के लिए प्राप्त पैक्टिन को 12 घण्टे तक बिना छेड़े रखा जाये तथा ऊपर तैरते हुए पैक्टिन-निचोड़ को केवल छानकर लिया जाये। साधारणतया इस प्रकार का दोष कटहल-जैली में पाया जाता है, जहाँ सुगन्ध के लिए पके स्कन्द (कोए) मिलाये जाते हैं कटहल से पैक्टिन-निचोड़ के समय स्कन्द को करीब 5–10 मिनट पहले डालना चाहिये। पके हुए कोए कम मात्रा में हो तथा ठोस हो।

घरेलू स्तर पर पैक्टिन-निचोड़ निकालते समय फलों को नहीं निचोड़ना चाहिये, अन्यथा पैक्टिन के साथ फल-गूदा आ जायेगा। फलस्वरूप पैक्टिन निचोड़ को 12 घण्टे रखकर ऊपर से निचोड़ को निकालकर जैली बनाना चाहिये, अन्यथा जैली में धुन्धलापन पाया जायेगा।

तैयार हुई जैली को तुरन्त बोतलों में न भरने के कारण जैली जम जाती है, उसके बाद बोतलों में भरने से प्राप्त जैली धुन्धलापन लिये हुए होगी। इसलिए तैयार हुई जैली 8–10 सैकण्ड के भीतर बोतलों में भर लेनी चाहिये।

जैली जिस बर्तन में पकायी जाती है, उसके अनुरूप जैली का मिश्रण नहीं रहे तो पास्चरीकरण के समय वायु मिश्रण अधिक होकर बनी जैली में भी धुन्धलापन रहेगा। इस बर्तन के अनुसार मिश्रण भी होना चाहिये।

(3) रिसती जेली

कुछ जमी हुई जैलियों मे से जल निसरता नजर आयेगा, इसको अंग्रेजी मे वीपिंग जैली (Weeping Jelly) कहा जाता है। पैक्टिन मिश्रण मे अगर आवश्यकता से अधिक अम्ल मात्रा हो तो प्राप्त जैली रिसती जैली होगी। इस जैली मे पुनः आवश्यकतानुसार शर्करा पैक्टिन या दोनों मिलाकर ऊष्मोपचार कर उपर्युक्त दोष को दूर किया जा सकता है। इससे उत्पादन-खर्च बढ़ेगा, किन्तु जैली विपणन योग्य हो जायेगी। इस दोष को दूर करने के लिए जैली निर्माण के पूर्व यह निश्चित कर लेना चाहिये कि जैली-मिश्रण मे अम्ल उचित मात्रा मे रहे।

जैली वायुरुद्ध अवस्था मे पैक नही की जाती तो उसमे किण्वन क्रिया चालू हो जाती है, इसको किण्वनीकृत जैली भी कहा जाता है। अगर जैली जल निसरने वाली न होते हुए भी वायुरुद्ध अवस्था मे पैक नही की जाती है तो उसमें फफूंद-बाधा हो जाती है। इसलिए जैली बोतलों मे जमते ही तुरन्त पिघली हुई मोम की परत से सीलकर, ढक्कन लगा देना चाहिये।

(4) जैली में सुक्रोज शर्करा क्रिस्टलीकरण

पैक्टिन-युक्त मिश्रण मे शर्करा आवश्यकता से अधिक मिलायी जाये तथा पर्याप्त मात्रा में सुक्रोज शर्करा, प्रतीप शर्करा मे परिवर्तित कराने के लिए योग्य अम्ल परिस्थिति नही हो तो भी निर्मित जैली में सुक्रोज शर्करा पुनः क्रिस्टलीकृत हो जायेगी। लेकिन अंगूर से बनी जैली मे उत्पन्न शर्करा-क्रिस्टलीकरण का कारण अंगूर से प्राप्त पैक्टिन-निचोड मे पाये गये टार्टार पदार्थ भी हो सकते हैं। इसलिए अंगूर से प्राप्त पैक्टिन-निचोड़ को भी 12 घण्टे रखकर प्राप्त निर्मलीकृत पैक्टिन-निचोड़ को जैली बनाने के लिए काम मे लेना चाहिये।

(5) जैली ठोस होने का कारण

यदि तैयार किये हुए पैक्टिन-निचोड मे मान लें कि 1 प्रतिशत पैक्टिन तथा 67.5 प्रतिशत शर्करा मिलायी हुई है, लेकिन उसका पी० एच० 3.0, 2 9, 2.8 तथा 2.7 शृंखला में हो तो ठोस जैली बनेगी। इसलिए पैक्टिन-मिश्रण मे 1 प्रतिशत पैक्टिन 67.5 प्रतिशत शर्करा तथा 1 प्रतिशत अम्ल तथा पी० एच० मान भी 3 1, 3.2 तथा 3.3 शृंखला के मध्य होना भी आवश्यक है। इसलिए अम्ल प्रतिशत से जैली-निर्माण मे पी० एच० मान का बहुत महत्व है।

मार्मलेड
(Marmalads)

जैली तथा मार्मलेड में कोई विशेष अन्तर नहीं है। जैली समापन-बिन्दु पर पहुँचते ही उसमे किसी विशेष फल के कतरे हुए टुकड़ो को या सन्तरे के छिलके को सुचारु रूप से कतरकर उसमे मिलाया जाता है, ताकि जमते समय वे जैली मे निलम्बित रहें। इसी प्रकार निलम्बित कतरे हुए फल या नीबूवर्गीय फल-छिलके से युक्त जैली को मार्मलेड कहा जाता

है। मिलाये गये फल या छिलके के आधार पर बनी मार्मलेड जैली के स्वाद में ही नहीं, बल्कि सुगन्ध तथा गुण में भी अन्तर होता है। साधारणतया पश्चिमी देशों में मार्मलेड नींबूवर्गीय फल से बनाया जाता है। फलस्वरूप इसमें कड़वापन पाया जाता है, किन्तु यह उनकी पसन्द के अनुकूल है। लेकिन भारत में इसका प्रचार उतना नहीं है। यहाँ जैली में कतरे हुए फल या सन्तरे के छिलके निलम्बित किये जाते है। इसमें कड़वापन नहीं पाया जाता। कुछ विशेष मार्मलेडो का वर्गीकरण इस प्रकार है—

(1) विलायती मार्मलेड

स्पेन में उत्पादित एक विशेष किस्म के सन्तरे में पैक्टिन तथा अम्ल अधिक पाया जाता है। इस फल से बने मार्मलेड को विलायती मार्मलेड कहा जाता है। यह ठोस मार्मलेड बनाने में अधिक उपयोगी है।

(2) अमेरिकन मार्मलेड

कैलिफोर्निया, फ्लोरिडा इत्यादि प्रदेशों में सन्तरों को पेड़ पर ही पूर्ण विकास कराकर पकाया जाता है। इनमें पैक्टिन तथा अम्ल उतना नहीं पाया जाता, जितना विलायती सन्तरों में पाया जाता है। फलों को यन्त्र से कतरकर, छिलका अलग कर, शेष में से बीजों को अलग किया जाता है। इसके बाद उसे रस सहित पकाकर पैक्टिन-युक्त रस को निचोड़ लिया जाता है, जिसमें आवश्यकतानुसार शर्करा मिलायी जाती है। शर्करा की मात्रा मद्यसार-विधि तथा जल-मीटर द्वारा निश्चित की जाती है। समापन बिन्दु में पहुँचते ही उसमें उसी फल के छिलके को आवश्यकतानुसार आकार में कतरकर, मिलाकर, पुनः पकाकर दुबारा समापन-बिन्दु पर लाकर जैली की भाँति बोतलों में भरा जाता है।

(3) जैम मार्मलेड

पूर्ण विकसित फलों में से अनावश्यक बीज तथा छिलका अलग कर सम्पूर्ण फलों से बनाये गये पदार्थ को जैम कहते हैं, जिसमें फल के कतरे हुए टुकड़े या सन्तरे के कतरे हुए छिलके निलम्बित किये हुए हों तो उन्हें जैम मार्मलेड कहा जायेगा।

(4) वास्तविक मार्मलेड

समापन-बिन्दु पर पहुँची हुई जैली में अगर कतरे हुए फल-टुकड़े या उपचार किये हुए नींबूवर्गीय फलों के टुकड़े मिलाये गये हों तो इन्हें वास्तविक मार्मलेड कहा जाता है।

विलायती मार्मलेड का निर्माण

नींबूवर्गीय फलों में से उनका तेल, काँटों के गुच्छे के ऊपर धीरे-धीरे दबाकर चलाने से बाहर निकल आता है जो काँटों के गुच्छों के नीचे रखी हुई प्लेटों में एकत्र होता रहता है। इससे फलों के भीतर कोई हानि नहीं होती। इसी प्रकार तेल निकाले गये सन्तरों को यन्त्र की सहायता से कतरा जाता है, जिसकी मोटाई 0.8 मिलीमीटर होती है। कतरने के पहले नींबूवर्गीय फलों के ऊपरी छिलके को उतार लेते हैं, लेकिन अलबेडो (सफेद भाग) फल में ही रहने दिया जाता है। कतरे हुए फलों में से केवल छिलका अलग कर लेते है। इन्हें 0.1 प्रतिशत अमोनिया या 0.2 प्रतिशत सोडियम कार्बोनेट मिलाये हुए जलीय घोल में डालकर उबालते हैं, ताकि छिलके नर्म हो जायें। कुछ व्यवसाय-शालाओं में भापोपचार से भी छिलकों को नर्म किया जाता है।

इन कतरे हुए फलों के साथ पुनः तैयार किया हुआ छिलका मिलाकर पैक्टिन-निचोड़ निकाला जाता है। इसके लिए कतरे हुए फल का करीब दो गुणा पानी मिलाया जाता है। उबलते समय इसमे से थोड़ा-सा रस निकालकर पैक्टिन-मात्रा, परीक्षण-विधेयक बनाकर मालूम की जाती है, इसके लिए मद्यसार परीक्षण अधिक उत्तम रहेगा। काफी मात्रा मे पैक्टिन, रस मे आते ही उबालना बन्द कर छानते हैं। उबाल आने के बाद करीब 55 मिनट समय देना चाहिये ताकि अधिकाधिक पैक्टिन प्राप्त हो सके।

उपर्युक्त तरीके से तैयार हुए, कतरे हुए फलयुक्त पैक्टिन-निचोड़ में जैली की भाँति पैक्टिन-मात्रा के आधार पर शर्करा मिलाकर तैयार किये पदार्थ को विलायती मार्मलेड कहा जाता है।

अमेरिकन मार्मलेड निर्माण

यह मार्मलेड दो प्रकार से बनाया जाता है। फलो को धोकर दो भागो मे कतरा जाता है, उनका तुरन्त रस निकाला जाता है। रस निकाले हुए छिलके को कतरा जाता है। कारखानों मे उपर्युक्त क्रियाएँ यन्त्र की सहायता से सम्पन्न की जाती हैं। कतरे हुए छिलके को नर्म किया जाता है। इसके बाद छने हुए रस में नर्म किया हुआ छिलका मिला दिया जाता है। इन्हें उष्मोपचार विधेयक बनाकर गर्म होते ही उसमें बाहर से आवश्यकतानुसार पैक्टिन, शर्करा मिलाकर जैली की भाँति पकाया जाता है।

दूसरी विधि मे फलों को बारीक कतरा जाता है, इसमे से बीज अलग कर, 30 मिनट उबालते हैं। उबले हुए रस से प्रेस की सहायता से पैक्टिन-निचोड़ लिया जाता है। इसमे 1 प्रतिशत अम्ल तथा आवश्यकतानुसार पैक्टिन होना चाहिये। इसके अनुसार शर्करा मिलाकर सान्द्रीकरण किया जाता है। कतरे हुए फलो में 2 से 3 गुणा पानी मिलाना चाहिये। यह क्रुस का कथन है। इसमें सन्तरा तथा कागजी नीबू बराबर मात्रा मे (1 सन्तरे के लिए 1 कागजी नीबू के अनुपात मे) काम मे लिया जाता है। इन्हें जैली की भाँति तैयार कर उनमें नरम किये हुए छिलके निलम्बित किये जाते है।

वास्तविक मार्मलेड निर्माण

वास्तविक मार्मलेड निर्माण-विधि बिल्कुल जैली-निर्माण की भाँति है। कटहल, पपीता, अमरूद, सेब से जैली बनाते समय सान्द्रीकरण कर समापन-बिन्दु की ओर पहुँचते ही उसमे जिस फल से जैली बनायी जा रही है, उसी फल को बारीक, सुन्दर रूप मे कतरकर उबलती हुई जैली में मिलाकर पुन. सान्द्रीकरण कर समापन-बिन्दु पर लाकर जमाया जाता है। कुछ लोग सन्तरे के छिलके को नरम कर काम में लेते हैं, जो अधिक स्वादिष्ट होता है। कुछ लोग कतरे हुए अनन्नास टुकडों को भी काम मे लेते हैं।

जैम मार्मलेड निर्माण

फलों को धोकर, अनचाहे भागों को अलग कर बारीक कतरा जाता है। इसमे जैली की भाँति फलों के गुणावगुण के आधार पर जल मिलाकर उबाला जाता है, ताकि उसमे मे अधिकाधिक पैक्टिन जल मे घुलकर बाहर आ जाये। फलो के आधार पर समय देकर उबालना चाहिये, ताकि पैक्टिन अपनी स्वाभाविक अवस्था मे प्राप्त हो सके। उबाल बन्द करते ही उसमे से थोड़ी पैक्टिन निकालकर परीक्षण विधेयक बनाकर पैक्टिन की मात्रा मालूम की जाती है। इसके आधार पर शर्करा मिलायी जाती है। उबाले हुए फलों का

गूदा बना दिया जाता है, ताकि गूदा और पेक्टिन-युक्त रस एक-समान हो जायें। इसमें साधारणतया शर्करा बराबर मात्रा में मिलाकर जैम बनाया जाता है।

सन्तरों का छिलका निकालकर उन्हें कतरकर उपचार कर, नरम किया जाता है। इसके लिए सोडियम कार्बोनेट 0.25 प्रतिशत मिलाया जाता है। समाप्त बिन्दु पर पहुँचते ही नर्म किया हुआ छिलका मिलाकर, पुनः उबालकर समाप्त बिन्दु पर पहुँचाकर बोतलों में भर दिया जाता है। कुछ लोग ऑरेन्ज ऑयल भी समापन बिन्दु के तुरन्त बाद मिलाकर उसके स्वाद तथा सुगन्ध को बढाते हैं। इसी प्रकार तैयार किये हुए जैम मार्मलेड में 65 प्रतिशत शर्करा होगी।

इन्हें कैन में भी भरा जा सकता है। कैनों में भरकर उन्हें तुरन्त सीलकर उल्टा रखा जाता है, ताकि ऊपर लगे ढक्कन (कैनरी एण्ड) निर्जलीकृत हो सकें। साधारणतया घरेलू स्तर पर या कुटीर उद्योगों में इन कैनों का पुनः ऊष्मोपचार नहीं किया जाता, परन्तु बड़े-बड़े कारखानों में नम्बर ए० $2\frac{1}{2}$ कैनों को जल-ऊष्मक में (उबलते पानी में) डालकर 30 मिनट तक ऊष्मोपचार कर, ठण्डा कर संचयन किया जाता है।

सन्तरा मार्मलेड

सन्तरा मार्मलेड के लिए खट्टा माल्टा, सातकुड़ी इन्हीं में से कोई सन्तरा वर्ग का फल काम में लिया जा सकता है। पूर्ण विकसित पके हुए फल चुनने चाहिएँ। इसके लिए निम्नलिखित अनुपात में फलों को लिया जा सकता है, जो वजन के अनुसार होने चाहिएँ—

(1) सन्तरा तथा कागजी नींबू 2 : 1 के अनुपात में।
(2) माल्टा तथा खट्टा 2 : 1 के अनुपात में।
(3) सन्तरा तथा खट्टा 2 : 1 के अनुपात में।

उपर्युक्त किसी भी योग में आप सन्तरा-मार्मलेड बना सकते हैं। फलों को यथाविधि धोकर लेते हैं। पहले सन्तरे को दो भागों में कतर लेते हैं तथा गूदा अलग कर छिलके को कटोरीनुमा ही रखा जाता है। माल्टा, खट्टा इनमें से पहले ही ऊपर के रंगीन छिलके को अलग कर लिया जाता है, ताकि उसमें केवल सफेद छिलका ही रहे। ध्यान रखना चाहिये कि सफेद छिलके की क्षति न हो।

सन्तरे के कटोरीनुमा छिलके को आवश्यकतानुसार आकार में कतरकर नर्म किया जाता है, जो पहले ही चर्चित है। कतरे हुए सन्तरे, माल्टे, कागजी नींबू इत्यादि में से बीज अलग कर एक बर्तन में डालकर बराबर जल मिलाकर 30 मिनट उबालते हैं। इसमें से पेक्टिन-निचोड़ अलग किया जाता है। शेष अवशिष्ट में 30 से 60 प्रतिशत जल मिलाकर 15 मिनट पुनः उबालकर पेक्टिन निचोड़ा जाता है। अगर अवशिष्ट में पेक्टिन रह जाये तो पुनः जल मिलाकर पूर्व की भाँति तैयार कर निचोड़ा जा सकता है। चाहे कितनी ही बार पेक्टिन निचोड़ निकाला हो, उन्हें मिलाकर रात-भर रखा जाये तथा दूसरे दिन ऊपर तैरे हुए पेक्टिन-निचोड़ को साइफनीकरण द्वारा अलग करें, ताकि नीचे जमा हुआ कीट उसमें न मिल सके। इसमें पेक्टिन की मात्रा मालूम कर उसके अनुपात में शर्करा मिलाई जाती है तथा जैली की भाँति सान्द्रीकरण किया जाता है। समाप्त बिन्दु पर पहुँचते ही या उससे थोड़े पहले तैयार हुए सन्तरे के छिलके को डालकर पुनः समाप्त बिन्दु पर लाकर तैयार किया जाता है।

मार्मलेड में होने वाली विकृतियाँ

साधारणतया जैली में पाई जाने वाली खराबियाँ मार्मलेड में भी पायी जा सकती हैं। इसलिए जैली-निर्माण में बरती जाने वाली सावधानियाँ मार्मलेड निर्माण में भी बरती जानी चाहिएँ।

लालसिंह तथा गिरधारीलाल ने यह देखा कि मार्मलेड-निर्माण के बाद जब संचयन किया गया तो उसमे वर्ण-भेद होता है। इसको रोकने के लिए 45.40 किलो मार्मलेड के लिए 4 ग्राम पोटेशियम मैटाबाई सल्फाइट मिलाया जाये। मार्मलेड मे मिलाने से पहले उन्हें जल में घोल बनाकर मार्मलेड में अच्छी तरह मिला देना चाहिये। लेकिन ध्यान रखने योग्य बात है कि कांच की बरनी में भरते समय मोमलेपन द्वारा मार्मलेड को सीलबन्द करना चाहिये तथा पोटेशियम मैटाबाई सल्फाइट मिलाया गया मार्मलेड अन्य उत्पादों की भाँति कैनों मे नही भरना चाहिये, अन्यथा मार्मलेड मे मिलायी गयी पोटैशियम मैटाबाई सल्फाइट कैनों की काया मे प्रक्रिया कर सल्फरडाई ऑक्साइड बनाकर खराबी कर सकती है, जिसके बारे मे कैनीकरण अध्याय मे चर्चा की गई है।

जैम
(Jam)

जैली के लिए फलो मे से केवल पैक्टिन-निचोड़ ही काम मे आता है, परन्तु जैम बनाने के लिए सम्पूर्ण फल लिया जाता है, जिसमे से केवल अनचाहे ठोस तथा मोटे बीज तथा छिलके इत्यादि को ही अलग किया जाता है। अमरूद, अंगूर, रसबरी इत्यादि का छिलका, गूदा तथा कुछ लोग बीज को भी सम्मिलित कर लेते है। परन्तु आम, चीकू, पपीता इत्यादि के छिलके तथा बीजो को अलग कर काम मे लेते हैं। जैली के लिए पूर्ण विकसित, लेकिन अपूर्ण रूप से पके हुए फलों को चुना जाता है तो जैम के लिए पूर्ण विकसित तथा पूर्णरूप से पके हुए फल ही उचित माने जाते हैं।

फल के गूदे में शर्करा मिलाकर ऊष्मोपचार द्वारा सान्द्रीकृत पदार्थ मे 45 प्रतिशत से कम फल तथा 55 प्रतिशत से कम शर्करा नही होनी चाहिये। भारत सरकार के अनुसार इसमे 68 प्रतिशत घुलनशील ठोस पदार्थ पाया जाना चाहिये। अगर जैम सरसफलो (बेरी फ्रूट्स) से बनाया गया हो तो 25 प्रतिशत घुलनशील ठोस पदार्थ होना काफी माना जाता है।

जैम योग्य फल

साधारणतया जो फल जैली बनाने के लिए काम में लिये जाते हैं, उन्हें जैम बनाने के लिए भी काम मे लिया जाता है। वैसे तो पैक्टिन अम्ल-युक्त कोई भी फल जैम के लिए उपयुक्त है। अगर पैक्टिन नहीं तो अधिक पैक्टिन-युक्त फल, जिसमें किसी प्रकार की सुगन्ध न हो, मिलाया जा सकता है या बाहर से व्यावसायिक पैक्टिन चूर्ण भी मिलाकर जैम बनाया जा सकता है। गाजर तथा चुकन्दर से भी कुछ लोग घरेलू-स्तर पर जैम बनाते हैं, लेकिन इन्हें फल जैम मे नहीं माना जाता। अधिक पैक्टिन-युक्त फल में अन्य फल, चाहे उसमें पैक्टिन हो या न हो, मिलाकर मिश्रित जैम भी बनाया जाता है।

साधारणतया समय-समय पर प्राप्त फलों से जैम बनाया जाता है, तो कुछ विशेष कारखानों में सूखे तथा कैनीकृत फलों से भी जैम बनाने की प्रथा है। यह प्रथा विशेषतौर से संयुक्त राज्य अमेरिका तथा अन्य पश्चिमी देशों में प्रचलित है। कुछ व्यवसायी लोग आजकल हिमीकृत फलों से भी जैम बनाते हैं। वैसे तो शीत गोदामों में रखे हुए फलों से जैम बनाना कोई नई बात नहीं है।

सूखे फलों से जैम बनाते समय उन्हें उबालकर अधिकाधिक मात्रा में उसमें पाये जाने वाले गन्धक अंश को अलग करना अनिवार्य है। सूखे फलों से बनाये गये जैम में 40 पी० पी० एम० से अधिक गन्धकांश नहीं पाया जाना चाहिये। द्वितीय विश्व महायुद्ध के समय में सूखे फलों से ही अधिकाधिक जैम बनाकर प्रतिरक्षा सेना की आवश्यकता को पूरा किया गया था।

यहाँ हम ताजे फलों से जैम बनाने की विधियों से आपको अवगत करा रहे हैं, अन्य परिरक्षणों की भाँति जैम बनाने के लिए भी फलों को सर्वप्रथम सुचारु रूप से धोया जाता है। उसके बाद जिन फलों का छिलका तथा बीज निकालना है, उन्हें अलग कर कतरा जाता है। इसके लिए कारखानों में यन्त्र की सहायता ली जाती है। इन्हें घरेलू-स्तर पर फलों के गुणावगुण के आधार पर जल मिलाकर, पैक्टिन मात्रा मालूम कर उसके अनुसार शर्करा मिलाकर जैम बनाया जाता है। साधारणतया जिन फलों को नर्म करना है, उन्हें नर्म कर गूदे को महीन बनाया जाता है, ताकि गूदा मलाईनुमा हो सके। इसके लिए यन्त्र की सहायता ली जाती है। घरेलू-स्तर पर यह क्रिया छोटे उपस्करों की सहायता से सम्पन्न की जाती है। इसके लिए हाथ से चलने वाले छलनीनुमा कपार, मिक्सी, किचन मास्टर इत्यादि को काम में लिया जाता है। इसमें पैक्टिन की मात्रा के आधार पर शर्करा मिलाकर ऊष्मोपचार द्वारा सान्द्रीकरण कर, बनाया जाता है। अगर पैक्टिन-रहित फलों से जैम बनाना है, जैसे अनन्नास, काफलफल इत्यादि, तो ऊपर से पैक्टिन चूर्ण आवश्यकतानुसार मिलाना होगा या अधिक पैक्टिन-युक्त फलों से प्राप्त पैक्टिन मिलाया जा सकता है। उदाहरण के लिए कटहल की पैक्टिन का प्रयोग किया जा सकता है।

फल-गूदे में साधारणतया 45 किलो के लिए 55 किलो शर्करा मिलाकर जैम बनाया जाये तो समापन बिन्दु में पहुँचते ही उसमें 68 प्रतिशत शर्करा पायी जायेगी। इसी प्रकार तैयार किये गये जैम में 35 से 50 प्रतिशत प्रतीप शर्करा होना अनिवार्य है, अन्यथा सञ्चयन के समय सुक्रोज शर्करा पुनः क्रिस्टलीकृत हो जायेगी। इसलिए उपर्युक्त फल-गूदा तथा शर्करा-मिश्रण में 1 प्रतिशत अम्ल मिलाया गया हो तो उसका पी. एच. 3.3 के करीब पाया जाना चाहिए। लेकिन भिन्न-भिन्न फलों में उसका पी. एच. मान भी भिन्न-भिन्न रहेगा, जो निम्नलिखित सारणी से मालूम किया जा सकता है :—

सारणी संख्या–5

विभिन्न फलों से प्राप्त जैम में उपस्थित पी. एच. का अनुकूलतम पी. एच. मान

जैम का नाम	पी. एच. शृखला	अनुकूलतम पी. एच. मान
खूबानी या प्लम	3.2 से 3.5	3.35
सेब, रसबरी	3.4 से 3.5	3.40
सेब, प्लम	3.2 से 3.5	3.35

सन्तरा मारमलेट	3.4 से 3 5	3.40
विलायती ग्रांवला	3.4 से 3.5	3.40
रसबरी	3.5 से 3.7	3.60
स्ट्रावरी	3.70	3 70

एस० सदाशिवन नायर, 1974

अगर प्रतीप शर्करा 50 प्रतिशत से अधिक हो जाय तो जैम की जलाटिनीकरण शक्ति कम हो जायेगी। समाप्त बिन्दु में पहुँचे हुए जैम में अगर अम्लता कम हो, तो उसमे 1 से 1.5 प्रतिशत फलाम्ल मिलाना अनिवार्य हैं। साइट्रिक अम्ल या टार्टारिक अम्ल प्रयोग मे लाया जा सकता है।

जैम भी उन्ही बर्तनो या यन्त्रो मे तैयार किया जाता है जिनमे जैली तैयार की जाती है। साधारणतया जैम का क्वथनांक 219° से 222° एफ० होता है, जो समुद्र-तट के आधार पर 7° से 12° फारनहीट अधिक हो सकता है।

जैम का समापन बिन्दु आंकना

जैली तथा मारमलेट की भाँति ही जैम का भी समाप्त-बिन्दु आंका जाता है। रिफैक्टोमीटर प्रयोग से देखा जाये तो उसमें 65° से 68° ब्रिक्स सूचित करते हैं। इसके अलावा यदि शीतजल-युक्त कांच के गिलास मे थोड़े-से उबलते हुए जैम की बूंद डाली जाये और वह सीधी पैंदे पर जाकर बैठ जाय तो मान लेना चाहिए कि जैम समापन-बिन्दु पर पहुँच गया है। इसके विपरीत यदि जैम ग्लास के जल मे ऊपर ही बिखर जाता है, तो ऊष्मोपचार तब तक करते रहना चाहिए जब तक जैम समापन-बिन्दु पर नहीं पहुँच जाये।

उपर्युक्त विधि से तैयार किये गये जैम को जैली-बोतलो मे ही भरा जाता है। इसमे भी ठण्डा होने के बाद जैम के ऊपर बोतलों को पिघले हुए मोम से सीलबन्द किया जाता है। इसके बाद तुरन्त ढक्कन लगाकर सीलबन्द कर देना चाहिए। जैम को कैनों मे भी भरा जा सकता है। इन्हे भरकर, सीलबन्द कर, कैनों को उल्टा रखा जाता है, बाद मे व्यवसाय-शालाओं मे विशेषतौर से जल-ऊष्मक मे पास्तुरीकरण किया जाता है, जिसकी मार्मलेट मे भी चर्चा की जा चुकी है।

कुछ विशेष फलों से जैम निर्माण

(1) अमरूद जैम

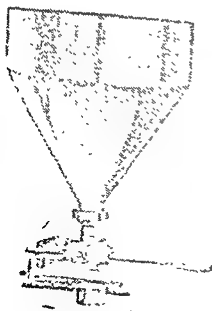
भारत में जैली की भाँति जैम भी अमरूद से अधिकाधिक बनाया जाता है, क्योंकि अमरूद जैम अधिक सुगन्ध-युक्त तथा स्वादिष्ट होता है। यह जैम कच्चे फल से भी अधिक लोकप्रिय है।

इसके लिए पूर्ण विकसित परिपूर्ण पके हुए पीले छिलके वाले फल चुने जाते हैं। इन्हें सुचारु रूप से धोकर अनचाहे भागों को अलगकर चार टुकड़ो मे कतर दिया जाता है।

अगर बीज नहीं रखना चाहें तो पिटिंग नाइफ (चम्मचनुमा चाकू) या स्टील-चद्दर से बनी चाय-चम्मच से भी बीज-कक्ष को अलग किया जाता है। फलों के बीज निकालने के बाद उसमें थोड़ा पानी मिलाकर, उबालकर, सुपर क्रशर नामक छलनी से उसका गूदा निकाल लेते हैं। बीज को फेंक दिया जाता है तथा गूदे को, बिना बीज के कतरे हुए टुकड़ों में मिलाया जाता है। अगर फल ठोस हो तो उसमें बराबर मात्रा में या कम मात्रा में आवश्यकतानुसार पानी मिलाकर जैली की भाँति उबालकर उसमें से थोड़ा-सा पैक्टिन-रस निकालकर यह पता लगाते है कि उसमें कितनी पैक्टिन है। उसके अनुसार शर्करा तोलकर लेते हैं। यह आवश्यक है कि उसमें किसी प्रकार की गन्दगी न हो। उबले हुए टुकड़ों को, किसी मशीन की सहायता से महीन बना देना चाहिए, इसके लिए व्यावसायिक-स्तर पर पल्पिंग मशीन काम में लेते हैं। घरेलू-स्तर पर सुपर क्रशर छलनी या तत्तुल्य किसी उपस्कर की सहायता से उक्त क्रिया सम्पन्न की जा सकती है। इसके लिए मिक्सी, किचन मास्टर इत्यादि विद्युत उपस्कर काम में लिये जा सकते हैं।

अगर अमरूद अधिक पका हुआ हो तो धोकर, फलों को बारीक कतरकर सीधे गूदा बनाकर छलनी की सहायता से बीज अलग कर उसकी बराबर मात्रा में शर्करा तथा साइट्रिक अम्ल मिलाकर थोड़ी देर रख दिया जाए।

उपर्युक्त दोनों विधि से तैयार किये गये गूदे के भार के अनुसार 0.2 प्रतिशत साइट्रिक या टार्टरिक अम्ल मिलाना चाहिए। इन्हें ऊष्मोपचार द्वारा सान्द्रीकरण करें। समाप्त-बिन्दु पर आते ही ऊष्मोपचार बन्द कर बोतलों में भर लें (चित्र संख्या 68)। शेष जैली, मारमलेट इत्यादि की भाँति सम्पन्न किया जाता है।



चित्र संख्या–60

फल-तरकारी क्रीम तथा जैम भरने का यन्त्र जिसे फिल्लर कहते हैं।

(2) अनन्नास जैम

अनन्नास भी पेड़ में पूर्ण विकसित तथा पके हुए होने चाहिएँ। इन्हें धोकर कैनीकरण की भाँति तैयार कर (काँटेदार भाग को अलग कर) पल्पिंग मशीन की सहायता से गूदा बनाकर, उसमे बराबर मात्रा मे शर्करा मिलायें तथा 1 घण्टे रख दीजिये। जब पूरी शर्करा घुल जाये तो उसे ऊष्मोपचार द्वारा सान्द्रीकरण किया जाये। व्यवसायशालाओं मे इसमे पैक्टिन पाउडर सुचारु रूप से मिलाये जाते हैं, ताकि उसमे 1 प्रतिशत पैक्टिन रहे। घरेलू-स्तर के लिए कटहल-पैक्टिन या तत्तुल्य कोई अन्य पैक्टिन, जिसमे कोई सुगन्ध न हो, मिलाया जा सकता है, ताकि अनन्नास की स्वाभाविक सुगन्ध बनी रहे। समाप्त-बिन्दु पर पहुँचे जैम को अमरूद की भाँति भरकर, मोम से वायुरुद्ध अवस्था मे सीलबन्द कर, ढक्कन लगाकर सीलबन्द कर दिया जाये।

(3) कटहल जैम

कटहल जैम उसके स्कन्द (कोए) से बनाया जाता है। कटहरा से स्कन्द को अलग कर बीज तथा बीजकक्ष को दूर कर कतरा जाता है। टुकड़ों को भापोपचार कर, नर्म कर गूदा बनाया जाता है। इसमे भी जैली की भाँति कटहल के बेकार भागों से प्राप्त पैक्टिन या पैक्टिन पाउडर निकालकर मिलाया जाता है। कटहल मे अम्लता नही होती, इसलिए इसमे 0.6 से 0.8 प्रतिशत तक अम्ल मिलाना आवश्यक है। इसे भी अमरूद तथा अन्य फलों के जैम की भाँति पैकिंग किया जाता है।

(4) आम जैम

आम जैम बनाने के लिए पूर्ण विकसित तथा पके आम होने चाहिएँ। कम रसदार तथा अधिक गूदे-युक्त बिना रेशों के आम जैम के लिए अधिक अच्छे माने जाते हैं। व्यावसायिक स्तर पर साधारणतया तोतापुरी या तत्तुल्य अन्य किस्म के आम काम मे लिये जा सकते हैं, तोतापुरी दक्षिण भारत की एक किस्म है। उत्तर भारत मे लंगड़ा, चौसा आदि आसानी से प्राप्त होते है, लेकिन मूल्य मे तोतापुरी से ये महँगे होते है। जैम बनाने के लिए इन्हें भी उपयुक्त माना जाता है।

चुने हुए आमो को यथाविधि धोकर, छिलका उतारकर, कतरकर यन्त्र की सहायता से गूदा बना दिया जाता है। इसको भी घरेलू-स्तर पर गूदा बनाकर (सुपर शगर छलनी मे) फिर उसमे बराबर मात्रा मे शर्करा मिलाकर 15–20 मिनट रखा जाता है तथा उसके बाद ऊष्मोपचार से सान्द्रीकरण कर समाप्त-बिन्दु की ओर पहुँचते ही, अन्य फलों के जैम की भाँति आवश्यकतानुसार अम्ल मिलाया जाता है। अधिक अम्ल वाले आमो के लिए 0.2 प्रतिशत तथा चौसा जैसे कम अम्ल वाले आमो के लिए 0.4 प्रतिशत अम्ल मिलाया जाता है। अन्य सारी क्रियाएँ अन्य फल जैम बनाने की भाँति सम्पन्न की जाती हैं।

(5) सेब जैम

पश्चिमी देशवासियों का प्रिय जैम है—सेब जैम। इसके लिए कम रसदार सेबों को चुना जाता है। यथाविधि धोकर, छिलका उतारा जाता है। इस समय सेबों को तुरन्त दो प्रतिशत लवण-युक्त घोल मे डाल देना चाहिए, ताकि सेब मे वर्ण-भेद न हो सके। चाहें तो सेबों का लवण-घोल के भीतर ही छिलका उतारा जाए तो अधिक उत्तम रहेगा

छिलका उतारने के बाद फलों को शुद्ध पानी में धोकर निकालकर, फल की बराबर मात्रा में जल मिलाकर उसमें कतरकर डालना चाहिए तथा बीज-कक्ष को अलग कर देना चाहिए। कतरे हुए छिलके तथा बीज-कक्ष को एक साथ डालकर थोड़े पानी में जैली की भाँति उबाल लें। इन्हें सुपर क्रशर की सहायता से अमरूद की भाँति कसकर गूदा-युक्त पैक्टिन निकाल लें।

अब कतरे हुए फल के टुकड़े तथा बराबर जल वाले भगोने में या स्टीम जैकेट केतलों में गूदेयुक्त पैक्टिन को मिलाकर अमरूद के कतरे हुए फलों की भाँति उबालकर सेब के रस में पायी जाने वाली पैक्टिन की मात्रा मालूम कर, तदनुसार शर्करा मिलानी चाहिए।

अब उबले हुए फलों का गूदा बनाकर उसके ही पैक्टिन-युक्त घोल में मिलावें तथा शर्करा मिलाकर जैम बनावें। ऊष्मोपचार द्वारा सांद्रीकरण कर समापन-बिन्दु पर पहुँचते ही उसमें 0.15 से 0.2 प्रतिशत साइट्रिक या टार्टारिक अम्ल मिलाकर अमरूद के जैम की भाँति वाहिकाओं में भरा जाता है। इसी प्रकार ऐप्रीकाट, पीच (आड़ूफल), नासपाती, काजू सेब, खरबूजा, शहतूत तथा टमाटर से भी जैम बनाया जा सकता है, ध्यान रखें कि जिस फल में पैक्टिन की कमी हो उसमें पैक्टिन तथा जिसमें अम्ल की कमी हो उसमें अम्ल मिलाना न भूलें।

(7) टमाटर जैम

टमाटर को फल तथा तरकारियों के बीच की कड़ी माना जाता है, क्योंकि तरकारी में केवल टमाटर में ही अम्लता पाई जाती है। इसलिए इसके उत्पादों का परिरक्षण भी फलों की भाँति होता है।

जैम बनाने के लिए टमाटर कम रसयुक्त तथा अधिक गूदे वाले तथा सुर्ख लाल ठोस होने अति आवश्यक हैं। इसके लिए पंजाब, छुआरा अधिक उपयुक्त माना जाता है। इन्हें धोकर अनावश्यक भाग अलग कर, कतरकर उसके ही रस में पकाते हैं। इसमें मामूली शर्करा मिलायी जाती है, ताकि ऊष्मोपचार से लाल वर्ण फीका न पड़ जाए। जब टमाटर काफी गाढ़ा हो जाए तब बीज और छिलका अलग करने के लिए एक उचित यन्त्र (सुपर क्रशर) की सहायता ली जाती है। बड़े कारखानों में इसके लिए पल्पर काम में लिया जाता है। बीज तथा छिलके-रहित टमाटर के गूदेयुक्त रस में टमाटर के कुल भार के बराबर मात्रा में शर्करा मिलाकर पुनः सान्द्रीकरण किया जाता है। इसमें पैक्टिन मिलाना चाहिए तथा आवश्यकता हो तो मामूली अम्ल भी मिलाना चाहिए।

कुछ व्यावसायी मटरों का ऊष्मोपचार द्वारा छिलका उतारकर बीज सहित सांद्रीकरण कर भी शर्करा मिलाते हैं, ताकि जैम बनाया जा सके। इनमें टमाटर के बीज रह जाते हैं। अन्य सब क्रियाएँ अन्य फलों के जैम की भाँति ही हैं।

(8) मिश्रित जैम

मिश्रित जैम बनाते समय यह ध्यान रखना चाहिए कि पैक्टिन-रहित फलों के गूदेयुक्त रस में पैक्टिन-युक्त फल भी 2 : 3 के अनुपात में रहें। साधारणतया सन्तरा, सेब, अमरूद, पपीता, आम, प्लम, चेरी, करौंदा इत्यादि में से दो या दो से अधिक फलों से मिश्रित

जैम बनाया जाता है। इसके अलावा आजकल केला, पपीता, अनन्नास, अमरूद, आम, स्ट्रावरी आदि से भी मिश्रित जैम बनाया जाता है।

कैनीकरण की भाँति जैम के समय बचे हुए काँटेदार गूदेयुक्त अनन्नास के टुकड़ो को अनन्नास-रस बनाने के काम मे लिया जाना चाहिए। क्योंकि कटक-युक्त भीतरी अनन्नास-गूदा जैम मे नही मिलाया जाता।

कुछ लोग गाजर, चुकन्दर इत्यादि को धोकर, उबालकर, गूदा बनाकर उसमे प्रति किलो गूदे के बराबर शर्करा मिलाकर जैम बनाते हैं। अगर इसमे पेक्टिन-युक्त फलों का भी समावेश कराया जाए तो जैम अधिक स्वादिष्ट होगा। इस प्रकार की अम्लरहित तरकारियो मे 2 के 2.5 प्रतिशत अम्ल मिलाना न भूलें।

फल मक्खन

फ्रूट बटर (Fruit Butter)

कुछ कम रसदार तथा गूदायुक्त फलो का गूदा बनाकर, छानकर उसमे शर्करा या बिना शर्करा के या फलरस तथा मसाले मिलाकर ऊष्मीकरण द्वारा सान्द्रीकरण कर बनाये हुए एक अर्द्ध ठोस पदार्थ को ही फल मक्खन या फ्रूट बटर कहा जाता है। इसके लिए सेब, पीच (आड़ूफल), ऐप्रीकाट, खुबानी, नासपाती, अमरूद, आम तथा तत्तुल्य फल भी काम मे लिये जा सकते हैं,

फल मक्खन बनाने की विधि

फलों को यथाविधि धोकर गूदा बना लिया जाता है। प्रतिकिलो फल गूदा के लिये 500 ग्राम शर्करा मिलाकर ऊष्मोपचार द्वारा सान्द्रीकरण कर उसमे 0.1 प्रतिशत गर्म मसाला मिला दिया जाता है। अर्थात् 45 किलो फल गूदा के लिए 45 ग्राम गर्म मसाला (दाल चीनी, लौंग, कालीमिर्च, तेजपात इत्यादि) मिलाया जाता है। तैयार हुए फल मक्खन मे किसी प्रकार का कण नही पाया जायेगा तथा तैयार उत्पाद मक्खन की भाँति सान्द्रीकृत होगा। इसके लिए 211° से 218° फारनहीट पर पकाना होगा।

तैयार किये हुए उपर्युक्त फल उत्पाद को मक्खन की भाँति टिकिया बनाकर, बटर पेपर मे पैक कर, (रेफ्रिजरेटर मे) मक्खन की भाँति सचयन किया जाता है। व्यावसायिक स्तर पर यन्त्र की सहायता से तैयार कर शीतगोदामो मे सचयन किया जाता है। व्यावसायिक स्तर पर तैयार होते ही फल मक्खन को जैली की भाँति जैली-बोतलो मे इस प्रकार भरते है, कि उसमे वायु न रह जाए। इसके लिए थोड़ी-थोड़ी मात्रा मे भरकर धीरे-धीरे रबर के गद्दे मे पीट-पीट कर भरा जाता है। फलस्वरूप उसके भीतर वायु नही रह पायेगी। इसके बाद पिघले हुए मोम मे मक्खन की सतह बन्दकर पुनः चूड़ीदार ढक्कन से वायुरुद्ध अवस्था मे सीलबन्द कर दिया जाता है।

यदि शर्करा के बिना फल मक्खन बनाना हो तो फल-गूदे के बराबर वही फलरस (मक्खन के लिए, लिए गए फल का) या अन्य कोई फलरस काम मे लिया जा सकता है। दोनो को मिलाकर ऊष्मोपचार द्वारा सांद्रीकरण कर, फल-मक्खन बनाया जाता है। फल मक्खन जैम, जैली तथा मारमलेट की भाँति दीर्घकाल तक संचयन नहीं किया जा सकता, क्योंकि इसका परिरक्षण अल्पकालीन होता है।

अमरूद-हलवा (गोआवा चीज) या पनीर

अमरूद को जैम की भाँति तैयार किया जाता है। उसके एक किलो गूदे में 1.500 ग्राम शर्करा मिलाकर सांद्रीकरण किया जाता है। इसमें भी 0.1 से 0.2 प्रतिशत अम्ल मिलाया जाता है, इसके अलावा 5.7 प्रतिशत मक्खन या वनस्पति घी भी। इन्हें ऊष्मोपचार द्वारा सांद्रीकरण कर जैम की भाँति समाप्त-बिन्दु पर पहुँचते ही उसमें आवश्यकतानुसार नमक मिलाया जाता है। समापन-बिन्दु पर आते ही (जैम की भाँति) ट्रे में मक्खन या घी लगाकर उसमें फैला देना चाहिए। इसकी मोटाई करीब 1 सेंटीमीटर रखी जा सकती है। ठण्डा होकर जमने के बाद उसे बरफी की भाँति चकती के रूप में कतरा जा सकता है। इसे भी बटर पेपर्स में पैक कर रखा जा सकता है।

इसी प्रकार कटहल के पके स्कन्ध (कोए) तथा कटहल का पैक्टिन मिलाकर अमरूद के हलवे की भाँति बनाया जा सकता है। इसी प्रकार आम, अंगूर, पपीता इत्यादि से भी चीज बनाया जा सकता है। इसको अमरूद का या काम में लिए गए फल का पनीर कहा जाता है।

मुरब्बा

फलों को सम्पूर्ण रूप में या चाहे गये रूप में कतरकर कुछ विशेष उपचारों के उपरान्त अल्प प्रतिशत शर्करा युक्त घोल में (चाशनी) डालकर धीरे-धीरे उसकी शर्करा मात्रा को 68 या 70 प्रतिशत तक पहुँचाकर परिरक्षित किये गए शर्करा-सांद्रीकृत फल या तरकारी-उत्पाद को मुरब्बा कहा जाता है। अंग्रेजी में इसको प्रिजर्व (*Preserve*) भी कहा जाता है।

गीरचन्दानी (1966) के अनुसार भारत में उस समय तक विभिन्न फलों से 40,000 टन मुरब्बा उत्पादित किया गया। उन्होंने आगे कहा कि इसमें अधिकांश मुरब्बे आँवले, सेब, आम, पपीते, नाशपाती आदि फलों से तथा पेठा, गाजर, अदरक आदि तरकारियों से और नीबूवर्गीय फलों के छिलकों से बने हुए बताये गये हैं। आज परिस्थितियाँ काफी बदल चुकी हैं, तथा विशेषतौर से परिरक्षण में। देश में अधिक उपलब्धियाँ प्राप्त की जा चुकी हैं। इसलिए मुरब्बा-उत्पादन भी काफी मात्रा में बढ़ चुका है, जिसके आँकड़े पेठे के अलावा प्राप्त नहीं हुए हैं। आज अमरूद, आलूबुखारे (रेड्प्लम), कमरख, बेल इत्यादि का भी मुरब्बा बनाया जाता है। भारत में आयुर्वेद के सिद्धान्त पर रोगियों के लिए कई फल तथा पत्ते के मुरब्बे आदिकाल से बनाये जाते रहे हैं। इनमें आँवला, शहतूत, ग्वारपाठे की पत्ती आदि के मुरब्बे उल्लेखनीय हैं।

बनारसी आँवले, हरीधारी (ग्रीन टिंज्ड) आँवले को साधारणतया साबुत गोदकर मुरब्बा बनाया जाता है. इसी प्रकार के कुछ अन्य फलों को, जैसे सेब को भी साबुत गोदकर मुरब्बा बनाया जाता है। लेकिन बड़े आकार के सेब, नासपाती, अनन्नास, आम इत्यादि को कैंडीकरण की भाँति तैयार कर मुरब्बा बनाया जाता है। इसके अलावा पेठा, गाजर, चुकन्दर इत्यादि को भी चाहे गये आकार में कतरकर कुछ विशेष उपचारों (गोदना, विवर्णीकरण करना इत्यादि) के उपरान्त मुरब्बा बनाया जाता है। विवर्णीकरण का उद्देश्य किण्वक क्रिया को रोकना ही नहीं अपितु उसके वर्ण को बनाये रखना भी है, परन्तु अधिक रसयुक्त फलों, जैसे अनन्नास को गोदने तथा विवर्णीकरण करने की आवश्यकता नहीं होती।

सुचारु रूप से विकसित फलों से बने ताजे मुरब्बे पौष्टिक तथा मनमोहक होते हैं, इन्हें दीर्घकाल तक संचयन करने से उनके स्वाभाविक रस तथा सुगन्ध में क्षति आ सकती है, जिसका मुख्य कारण ऑक्सीकरण है। अगर वैज्ञानिक सिद्धान्तों पर बनाने की सुविधा उपलब्ध नहीं हो तो इन्हें दीर्घकाल तक संचयन नहीं करना चाहिए। परन्तु फलों की ऋतु के समय इतना बना लें, कि अगली ऋतु से पहले समाप्त हो जाए। ताजे फलों से बने मुरब्बे से हिमीकृत फलों से बना मुरब्बा अधिक अच्छा बनता है।

प्रारम्भिक क्रियाएँ

सर्वप्रथम फलों को यथाविधि धोया जाता है। आप भली-भाँति जानते है कि आजकल पौध संरक्षण के लिए पर्णीय-पोषण (फोलियेज फीडिंग) के लिए पेड़-पौधों पर किये गए छिड़कावों के कारण ताम्र-सयुक्त तथा अन्य पोषक-रसायनों का अंश फलों पर भी रह जाता है। इन्हें सुचारु रूप से धोकर अलग करना अनिवार्य है, अन्यथा परिरक्षित उत्पादों में भविष्य में विकृतियाँ उत्पन्न हो जाएँगी। साधारणतया मद-हाइड्रोक्लोरिक अम्ल घोल में धोकर गर्म पानी के उपचार से धोये जाने के बाद छिलका उतारने या गोदने की क्रिया सम्पन्न की जाती है। कई फलों को चार टुकड़ों में कतरकर उसका बीज-कक्ष निकाला जाता है। कैनीकरण की भाँति तैयार कर फाँकों को गोदा जाता है। पेठे को कतरकर, छिलका तथा मनचाहे भागों को अलग कर चाहे गये सुन्दर आकारों में कतरकर चूने के पानी में उपचार कर लेते हैं। इसी प्रकार आँवले को बिना कतरे ही गोदकर लवणोपचार या चूना उपचार कराकर विवर्णीकरण के पश्चात् मुरब्बा बनाया जाता है। विवर्णीकरण से तथा गोदने से फल नर्म ही नहीं होता, अपितु उसमें शर्करा-घोल का शोषण करने की क्षमता भी बढ़ती है।

साधारणतया फलों को शर्करा के मन्द घोल में (30 से 33 प्रतिशत शर्करा-युक्त चाशनी) मन्द तापोपचार से फलों में शर्करा समान रूप से धीरे-धीरे पहुँचाकर (प्रतिदिन शर्करा चाशनी में से फलों को अलगकर, उबालकर उसमें पुनः फलों को डालकर 5 मिनट (उबालकर) परिरक्षण सम्पन्न कराया जाता है। अगर अधिक शर्करा-युक्त चाशनी में तैयार करते हैं तो फल सिकुड़ने लगते हैं, क्योंकि उनके भीतर का रस चाशनी में परासरण के कारण बाहर आ जाता है, परन्तु अधिक रस वाले फल की फाँकों को अधिक शर्करा वाले गाढ़े घोल में डालकर मुरब्बा बनाया जाता है।

फलों को तीन भिन्न-भिन्न विधियों से पकाया जाता है—(1) खुली हुई केतली में एक साथ पकाने की विधि जिसको ओपन केतली बन पीरियड प्रोसेस कहा जाता है, (2) ओपन केतली स्लो प्रोसेस तथा (3) वैक्यूम कुकिंग।

(1) खुली हुई केतली में एक साथ पकाने की विधि

तैयार हुए फलों को अल्प शर्करा-युक्त चाशनी में डालकर धीरे-धीरे गर्म करते हैं, ताकि उबल जाए। फलस्वरूप चाशनी गाढ़ी हो जाती है। अगर तीव्रता से ऊष्मोपचार कर उबालेंगे तो उसमें पड़े फल कड़क हो जायेंगे। इसलिए कम गहरे बर्तनों में ऊष्मोपचार किया जाना चाहिए। अधिक चाशनी होना आवश्यक है, ताकि फल ठोस न हो सकें। सेब, नासपाती आड़ू, आँवला, आम इत्यादि के बजाय सरस फलों (स्ट्राबरी, रसभरी इत्यादि) को मामूली गर्म करने की आवश्यकता है। परन्तु सरस फलों को गाढ़े शर्करा-घोल में ही तैयार करना

चाहिए। तैयार हुए फलों के मुरब्बे में 68° ब्रिक्स उस समय प्राप्त हो जायेगा, जब उसका समुद्रतटीय तापमान 222.2° फारनहीट पहुँच जायेगा। उबलती फलयुक्त चाशनी जब 68° ब्रिक्स तथा 222.2° फारनहीट तापमान पर पहुँच जाती है, तो इसे समापन-बिन्दु कहा जाता है, क्योंकि इस अवस्था में ऊष्मोपचार बन्द कर वाहिकाओं में भरा जाता है।

(2) खुली केतली में धीमी गति से पकाने की विधि

पानी में नर्म किये हुए फलो पर शर्करा सीढी पर सीढ़ी के क्रम से, पहले शर्करा उसके ऊपर उपचार की हुई गर्म फाँकें, उसके ऊपर पुनः शर्करा बुरक कर पूरे फलो को एक उपयुक्त बर्तन में भरा जाता है। इसके लिए साधारणतया फलों की फाँकों के बराबर तोल में या उससे आधी शर्करा का प्रयोग किया जाता है। इन्हें बन्द कर 24 घण्टे भवनताप पर रखा जाता है। इसके तुरन्त बाद बर्तन में से फाँकें हटाई जाती हैं, शेष शर्करा अब करीब-करीब चाशनी बन चुकी होगी। इसमें 2 से 3 प्रतिशत फलाम्ल मिलाकर गर्म करें, ताकि उसका ब्रिक्स 20° सें० पर 60° ब्रिक्स हो जाये, इसमें पुनः फाँकों को डालकर 3 से 4 मिनट उबाल लें। इन्हें पुनः 24 घण्टे रखा जाए, तीसरे दिन पुनः फलो को अलग कर चाशनी को गर्मकर 70° ब्रिक्स पर पहुँचाया जाता है। इसमे पुनः फाँकों को डालकर 2–4 मिनट उबालकर 3–4 दिन तक रखा जाए। अगर इसके ब्रिक्स डिग्री में कोई खास परिवर्तन नहीं आता तो उन्हें पुनः गर्म कर वाहिका में भरकर, वायुरुद्ध अवस्था में सीलबन्द कर दें। परन्तु उपर्युक्त विधि से तैयार किये गए फलो में संचयन-काल में सुगन्ध तथा वर्ण में परिवर्तन आ जाता है। इसे रोकने के लिए रिक्तक-पाचकीकरण द्वारा मुरब्बा बनाया जाता है।

(3) रिक्तक पाचकीकरण (वैक्यूम कुकिंग) (*Vacuum Cooking*)

रिक्तावस्था में पकाया हुआ मुरब्बा खुली केतली में तैयार किये गए मुरब्बे से अधिक सुगन्ध तथा उत्तम वर्ण-धारी होता है। इस विधि में फलों को विवर्णीकरण द्वारा नर्म किया जाता है। इसके बाद चाशनी में डाला जाता है। चाशनी की प्रारम्भिक ब्रिक्स डिग्री 30 से 35 होगी। इसमें फलो को डालकर रिक्तक परिस्थिति में पकाकर 70° ब्रिक्स पर पहुँचाया जाता है। ध्यान रखें कि ठोस फलों को धीरे-धीरे उबालना चाहिए, ताकि उसमें समुचित भाग में धीरे-धीरे शर्करा प्रवेश कर सके। इसके विपरीत जैसा कि पहले ही कहा जा चुका है, नर्म फलो को तीव्रता से उबालना चाहिए।

अगर उपर्युक्त विधियों से बनाये गए मुरब्बे अधिक मात्रा में हो तो उन्हें तुरन्त ठण्डा कर लेना चाहिए, ताकि उत्पाद में भविष्य में वर्णभेद न हो सके। यह क्रिया विशेषतौर से ग्रीष्मकाल में अनिवार्य है। इसके लिए तैयार हुए गर्म मुरब्बे को फलपेय बनाने के समय चाशनी ठण्डी करने की भाँति शीतजल में मुरब्बे-युक्त भगोने को ठण्डा किया जा सकता है। कुछ लोग शीघ्र ठण्डा करने के लिए बर्फ के टुकड़ों का भी प्रयोग करते हैं।

बर्तन में से केवल फलो को निकालकर सूखी वाहिकाओं में भरते हैं तथा उसमें ताजी बनायी गयी चाशनी भर देते हैं। इस चाशनी का ब्रिक्स 20° सेन्टीग्रेड पर 68° ब्रिक्स होना चाहिए। साधारणतया घरेलू स्तर पर मुरब्बा काँच की बरनियों में भरा जा सकता है, परन्तु व्यावसायिक स्तर पर कैनों में भरा जाता है। ए 2½ कैनो में भरकर

8 से 10 मिनट समय प्रदान कर निर्वातीकरण कराकर कैनरी सील की जाती है। विवर्णीकरण तापमान 212° एफ० ही है। सीलवन्द करने के बाद इन्हे जल-ऊष्मक मे 25 मिनट समय प्रदान कर, संसाधन किया जाता है।

परन्तु घरेलू स्तर पर सूखी वाहिकाओं मे भरते समय इसकी आवश्यकता नहीं होती। अब प्रश्न उठता है कि मुरब्बा बनाने के समय बची हुई चाशनी का क्या करें? इसे साधारणतया तत्तुल्य फलों से पेय बनाने के लिए या पुन: मुरब्बा बनाने के लिए काम मे लिया जाता है। जैम, जैली, मारमलेट इत्यादि मे भी इसका प्रयोग किया जा सकता है।

फल मिश्री (फ्रूट कैण्डी या पेठा)
(Fruit Candy)

पेठे के नाम से आगरा और आगरे के नाम से पेठा भी ताजमहल की भाँति हर भारतीय के हृदय-पटल पर छाया रहता है। आगरा तथा आस-पास के इलाके मे पेठे की खेती अधिक होती है। यहाँ के पेठे अन्य प्रदेशो की अपेक्षा मोटे-ताजे होते है। इनमे गूदा भी अधिक मोटा होता है। पेठा कद्दूवर्गीय फलो मे एक है—जिसको अंग्रेजी में ऐश गोर्ड (Ash Gourd) कहा जाता है। परन्तु इससे बनी फल-मिश्री को भी पेठे के नाम से ही जाना जाता है।

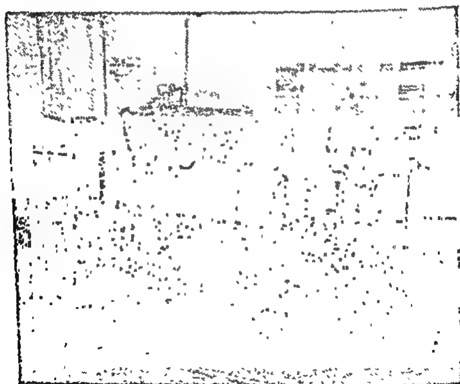
पेठा आगरा मे सर्वप्रथम सन् 1850 मे बनाया गया बताते है। उस समय पेठा बनाने की तकनीक को गुप्त रखने के लिए, ग्राहकों से दूर एक टीबे पर मुरब्बा बनाया करते थे। ग्राहक टीबे के नीचे रखी टोकरी मे पैसा रख देते थे और उसकी रस्सी पकड़कर हिलाते ही पेठे वाले रस्सी खीचकर टोकरी मे रखे हुए दामो के बदले बराबर पेठा वापस टीबे के नीचे रस्सी द्वारा पहुँचाया करते थे। धीरे-धीरे यह विधि लोकप्रिय हुई और आज पेठा बनाने की विधि सार्वजनिक रूप से जो चाहे अपना सकता है। नवीनतम आँकड़ों के आधार पर प्रतिवर्ष आगरा मे 3,60,000 टन पेठा बनाया जाता है। इसका देश मे ही नहीं, अपितु विदेशो मे भी निर्यात किया जाता है। कच्चे पेठे की छिलाई, सफाई, कटाई, कतराई, चूने से घुनाई, जोशन और पकायी आदि क्रियाओ द्वारा पेठा बनाया जाता है। 15 किलो भार के कच्चे पेठे को छीलने और बीज निकालने के बाद करीब 8 से 9 किलो कतराई योग्य (पेठा बनाने योग्य) गूदा प्राप्त होता है।

पेठा अर्थात् फल-मिश्री भी मुरब्बे की भाँति तैयार की जाती है, लेकिन मुरब्बे से अधिक शर्करा प्रतिशत (75° से 80° ब्रिक्स) तक पहुँचाकर, निथराकर, धूप मे या निर्जलीकरणी मे सुखाकर पेठा तैयार किया जाता है।

देश मे फल-मिश्रियों के लिए साधारणतया पेठा, आम, अनन्नास, आलूफल, सेब, नासपाती के अलावा आँवला, बेर, चैरी, कटहल, स्क्वैश (कोए) या गाजर, अदरक तथा नीबूवर्गीय फलो के छिलके भी काम में लिए जाते हैं। नीबूवर्गीय छिलकों से बनी मिश्री तो विकसित देशो मे भी एक अनूठा खाद्य-पदार्थ माना जाता है, जो टॉफी के रूप मे तथा केक इत्यादि बनाने मे साधारणतया काम में ली जाती है।

फल-मिश्री बनाने की विधि

मुरब्बा बनाने की भांति तैयार किये फल या तरकारी को 30° से 35° ब्रिक्स के घोल में डालकर 10–15 मिनट उबालते है। इस चाशनी में 0.1 प्रतिशत अम्ल मिलाना चाहिए। इन्हें 24 घण्टे भवन-ताप में ऊष्मयान किया जाता है। दूसरे दिन फलों को अलग कर ब्रिक्स डिग्री को 40 तक पहुँचाकर, फल डालकर पुन. 5 मिनट उबालकर ऊष्मयान करते हैं। यह प्रक्रिया रोज करते रहें, जब तक 60° ब्रिक्स न हो जाए। इस समय उसमें सुक्रोज तथा प्रतीप-शर्करा 50 : 50 के अनुपात मे होगी। फिर भी इन्हें एक कदम आगे बढाते हैं ताकि उसमे 75° से 80° ब्रिक्स रह सकें, इसके बाद 2 दिन तक ऊष्मयान करके चाशनी से फलो को उचित छलनी की सहायता से छान ले। 30 मिनट बाद फलो से चाशनी का निसरना बन्द हो जायेगा। उस समय सभी फलो की फांको को या फलो को पोंछ-पोंछकर ट्रे मे सजाया जाए। पोंछने के लिए स्पन्ज भी काम में लिया जा सकता है। इसके बाद कुछ लोग गुनगुने पानी की सहायता से भी फलो को पोंछते है, ताकि चिपचिपाहट न रहे। इसी प्रकार निकाले गये कपडे, स्पज इत्यादि में लगी शर्करा पानी में घोलकर पुनः काम मे लेते हैं।



चित्र संख्या–61

ट्रे में सजाये गये फलों को छाया में भवनताप पर सुखाया जाता है, लेकिन यदि निर्जलीकरण की सहायता से सुखाया जाये तो 8 से 10 घण्टे में सूख जायेंगे। यदि उसका तापमान 150° फारनहीट रखा जाए, लेकिन नीबूवर्गीय फल-छिलको को सुखाने के लिए 10–12 घण्टे की आवश्यकता होगी।

फल-मिश्री बनाने के लिए आवश्यक शर्करा-प्रतिशत या ब्रिक्स-डिग्री मुरब्बे से अधिक होती है, यह फल की जाति, उपजाति तथा किस्म के आधार पर भिन्न-भिन्न हो सकती है। गिरधारीलाल तथा जैन (1948) के अनुसार फल-मिश्री बनाने के लिए निम्नलिखित मात्रा में शर्करा की आवश्यकता होगी। कहने का तात्पर्य है कि जितनी शर्करा का एक निश्चित मात्रा के फल के लिए प्रयोग किया जाता है, उतनी शर्करा का वह फल शोषण नही करता। भिन्न-भिन्न फल भिन्न-भिन्न मात्रा में शोषण करता है जो निम्न सारणी में स्पष्ट किया जाता है :

फल का नाम	1 पौण्ड फल के लिए आवश्यक शर्करा		फल शोषण शर्करा की मात्रा
	पौण्ड	औंस	औंस
मस्तरा छिलका	2	$3\frac{3}{4}$	14 3
लेमन छिलका	2	4	13 4
पेठा	1	12	12.5
गाजर	1	6	13.3

गिरधारीलाल तथा जैन, 1948

मिश्री बनाने के पश्चात् बची हुई शर्करा चाशनी मुरब्बे की भाँति, चटनी, सॉस, अचार तथा सिरका बनाने के काम में ली जा सकती है या मन्द चाशनी बनाकर पुनः फल-मिश्री बनाने के काम में भी ली जा सकती है।

ब्रिटेन, फ्रांस, संयुक्त राज्य अमेरिका, जर्मनी इत्यादि देशो में सुक्रोज तथा ग्लुकोज बराबर मात्रा में लेकर चाशनी बनाई जाती है, ताकि उसमें 50 : 50 क्रम में सुक्रोज तथा प्रतीप-शर्करा पाई जाये। परन्तु भारत में सुक्रोज में समुचित मात्रा में फलाम्ल मिलाकर यह क्रिया सम्पन्न की जाती है।

सूखे फलो से जब मिश्री बनाई जाती है तब उन्हें उबालकर उनमें पाये जाने वाले गन्धकांश को दूर किया जाता है, साथ ही फल नर्म भी हो जाते है।

कुछ विशेष मुरब्बे, फल-मिश्री तथा उनका निर्माण

आम का मुरब्बा

मुरब्बा बनाने के लिए पूर्ण विकसित तथा पके हुए फलो को चुनना चाहिए। इसके लिए अधिक गूदेयुक्त पतली गुठली वाले आम उपयुक्त माने जाते हैं। फल ठोस भी होना अनिवार्य है। कुछ लोग पूर्ण विकसित, कम खटास के, जैसे चौसा-आम को भी मुरब्बा बनाने के काम में लेते हैं।

यथाविधि फलों को धोकर चाहे गये सुन्दर आकार में कतर लिया जाता है, इन्हें कतरते ही तुरन्त 2 प्रतिशत लवणघोल में उपचार के लिए डाल दिया जाता है। पूरे कतरने के बाद इन फलो को उबलते पानी में 4 से 6 मिनट फलो के स्वभाव के आधार पर समय प्रदान कर विवर्णीकरण किया जाना चाहिए।

विवर्णीकृत फलों को मेज पर फैलाकर ठण्डा होने दिया जाता है तथा प्रत्येक फाँक को लकड़ी से बने काँटे, कोर्क या स्टेनलैस स्टील सूई की सहायता से एक-एक मिलीमीटर दूरी पर गोद लिया जाता है। इसके लिए करीब 75 प्रतिशत शर्करा की आवश्यकता होती है। इन्हें एक बर्तन में शर्करा फैलाकर उसके ऊपर फल, उसके ऊपर शर्करा के क्रम से भरा जाता है। इन्हें 24 घण्टे रखा जाता है, तब 37° ब्रिक्स का शर्करा घोल उसमें पाया जायेगा।

इनमें से फाँको को अलग कर चाशनी गर्मकर, 58° से 60° ब्रिक्स पर पहुँचाकर उसमें 1.5 से 2 प्रतिशत फलाम्ल मिलाकर उबालते हैं। इसी समय फाँकों को भी डालकर 5 मिनट पुन: उबालकर 24 घण्टे के लिए उष्मायान किया जाता है। इसी प्रकार जैसा पहले बताया जा चुका है, वैसे 68° से 70° ब्रिक्स पर पहुँचाकर उपचार सम्पन्न किया जाता है। इसके अलावा कोई अन्य विधि भी अपनाई जा सकती है, जो पूर्व-चर्चित है। चाशनी में से फाँकों को निकालकर वाहिका में भरकर, 68° ब्रिक्स की ताजा चाशनी में तैराकर सीलबन्द किया जाता है। अन्य परिरक्षणों की भाँति तैयार हुए मुरब्बे को शीतल करना, वाहिका में भरना, सीलबन्द करना, पोंछना, लेबल लगाना, पैकिंग केस में सवेष्टन करना तथा परिवहन के लिए सचयन करने आदि की विधियाँ समान हैं।

आम फल-मिश्री

मुरब्बा बनाने के बाद अगर आप मिश्री बनाना चाहें तो चाशनी को एक कदम और बढ़ाना होगा। अर्थात् 75° से 80° ब्रिक्स तथा इसके पश्चात् एक सप्ताह ऊष्मायन किया जाये, इसके बाद इन्हे निकालकर, पोंछकर ट्रे में सजाकर सुखाया जाये तो आम फल-मिश्री तैयार की जा सकती है। इन्हें कैनों में काँच की बरनियों में, पोलिथलिन कागजों तथा अन्य योग्य साधनों में पैक किया जा सकता है।

अनन्नास-मुरब्बा

पेड़ में पूर्ण विकसित पके फल को ही मुरब्बे के लिए भी चुना जाता है, परन्तु कम रस-युक्त किस्में अधिक उपयुक्त होती हैं। इन्हें कैनीकरण की भाँति 12 से 13 मिलीमीटर मोटाई के वलय-रूप में कतरकर 5 से 8 मिनट समय देकर विवर्णीकरण कर, पहले बताई गई किसी एक विधि को अपनाकर मुरब्बा बनाया जाता है।

अनन्नास-मिश्री

आम की मिश्री की भाँति इन्हें भी 70° से 80° ब्रिक्स पहुँचाकर 1 सप्ताह के पश्चात् यथाविधि ट्रे में सजाकर भवन-ताप में निर्जलीकरणी में रखकर सुखाया जा सकता है। इसका पैकिंग अन्य विधियों की भाँति किया जाता है।

कमरख-मुरब्बा तथा मिश्री

कमरख को धोकर इन्हे गोद लिया जाता है। इन्हे 33° ब्रिक्स का शर्करा-घोल बनाकर उसमें डालकर 15 मिनट उबालते हैं तथा भवन-ताप पर 24 घण्टे तक ऊष्मायन करते हैं, ताकि उसकी ब्रिक्स डिग्री 38 हो सके। इसी प्रकार धीरे-धीरे ब्रिक्स डिग्री 72° पहुँचाने के लिए प्रतिदिन फलों को निकालकर उसमें पुन: शर्करा मिलाकर उसमें पुन: फलों को डालकर ऊष्मोद्धार कर ऊष्मायन करते रहते हैं, ताकि 72° ब्रिक्स प्राप्त हो सके। इसके लिए प्रति किलो कमरख के लिए 1 किलो शर्करा तथा 1 किलो जल की आवश्यकता

होगी। मुरब्बे की ब्रिक्स डिग्री 72° ब्रिक्स पर दो दिन रखने के बाद उसमे से फलों को निकालकर बोतलो (चौड़े मुँह वाली) में भरते हैं तथा 68° ब्रिक्स की ताजा चाशनी बनाकर उसमे डाली जाती है, ताकि फल के ऊपर चाशनी आ जाये या फल चाशनी के अन्दर डूबे रहे।

कमरख के मुरब्बे से एक कदम आगे उसकी ब्रिक्स डिग्री 82° पहुँचाकर एक सप्ताह ऊष्मयान कर अन्य फलों की भाँति सुखाया जाता है।

नासपाती मुरब्बा तथा मिश्री

नासपाती को यथाविधि धोकर, छिलके तथा पित्त (बीज-कक्ष) को हटाकर फाँकें कतरी जाती हैं। इन्हे 2 प्रतिशत लवण-घोल में डालना चाहिये, ताकि वर्ण-भेद न हो सके। याद रखें कि छिलका उतारने के बाद इन्हें लवण-घोल मे ही रखें। इन कतरे हुए नासपाती-टुकड़ो को विवर्णीकरण कर 40° ब्रिक्स तथा 0.2 प्रतिशत अम्ल-युक्त चाशनी में उपचार कर अन्य फलों की भाँति ऊष्मयान कर 70° ब्रिक्स तक पहुँचाते है। इन्हें एक सप्ताह रखकर वाहिकाओं मे भरा जाता है। इसकी फल-मिश्री भी अन्य फलो की भाँति बनाई जाती है।

पपीता-मुरब्बा

पपीता पूर्ण विकसित पेड़ में पका हुआ और ठोस होना चाहिये। पपाइन निकाले हुए फल भी काम मे लिये जा सकते हैं। इन्हे यथाविधि धोकर बीज, छिलके इत्यादि अनावश्यक भागो को अलग कर 7.5 मिलीमीटर मोटाई के चौकोर आकार मे काट लेना चाहिये। शर्करा-घोल मे अम्लता 2 से 3 प्रतिशत रखनी चाहिये।

कतरी हुई फाँको को गोदकर 1.5 प्रतिशत चूने से युक्त घोल मे 3 से 4 घण्टे रखने मे फल और भी अधिक ठोस हो जाते हैं। इन्हे 2–4 बार ताजा पानी मे धोकर अन्य फलो की भाँति मुरब्बा तथा मिश्री बनाया जा सकता है।

बेल का मुरब्बा

बेल-फलो को धोकर, काटकर, उनका गूदा निकाला जाता है। इस समय यह दो भागो मे होगे। इन्हे 4 टुकड़ों मे कतरकर गोद लिया जाता है। 33° ब्रिक्स के शर्करा-घोल मे 5 मिनट उबालकर 12 घण्टे रखा जाता है। इसके बाद फलों को अलग कर चाशनी मे पुन. चीनी डालकर 43° ब्रिक्स मे सान्द्रीकरण कर, पुनः ऊष्मयान किया जाता है। इसी प्रकार प्रतिदिन दोहरा कर 73° ब्रिक्स मे पहुँचाया जाता है। इसके लिए अन्य फलों की भाँति ही फलो के बराबर शर्करा तथा जल की आवश्यकता होगी। अन्य क्रियाएँ उपर्युक्त फलो के मुरब्बे की भाँति ही हैं।

सेब मुरब्बा

मुरब्बा बनाने के लिए मीठा तथा खट्टा सेब काम मे लिया जाता है। कॅनीकरण की भाँति तैयार कर, टुकड़ों मे या वलय-आकार में कतरा जाता है। छिलका उतारने से लेकर विवर्णीकरण तक इन्हे 2 प्रतिशत लवण-घोल तथा 0.05 प्रतिशत पोटैशियम मैटाबाई सल्फाइट-युक्त मिश्रित घोल मे रखना चाहिये अन्यथा सेब मे वर्णकरण द्वारा वर्ण-भेद हो जायेगा।

इन्हें विवर्णीकरण कर (5 से 10 मिनट) 0.1 प्रतिशत पोटैशियम मैटावाई सल्फाइट युक्त जल-घोल की सहायता से ठण्डा कर, गोदकर 25 प्रतिशत शर्करा-युक्त चाशनी में धीरे-धीरे उबालकर उसका तापमान 100° से 101° से० पहुँचने के बाद रात-भर रखें तथा उसके बाद फल निकलकर पुनः उबालें। उबाल आते ही फल डालकर पुनः उबालें तथा तापमान 102° से० होते ही इन्हें उतारकर रात-भर रख दें। इसी प्रकार अगले दिन 103° से०, उसके बाद 104° से० तथा 50° ब्रिक्स में पहुँचाया जाये, तब उसकी अम्लता 0.05 प्रतिशत होगी। सातवें दिन इन्हे 105° से० से 107° से० ताप में पहुँचाकर 5 दिन तक रखें। इस समय इसकी ब्रिक्स डिग्री 70° से कम हो तो ऊष्मोपचार कर उबालें। गुनगुना ताप हो जाये, तब वाहिकाओ में भरकर सीलबन्द कर दें। अन्य फल-मिश्री की भाँति सेब-मुरब्बे को 75° से 80° ब्रिक्स पर पहुँचाकर सेब-मिश्री भी बनाई जा सकती है।

आँवला मुरब्बा

आँवला लगभग सारे देश में पाया जाने वाला एक अमूल्य फल है, जिसके गुणों का भारतीय चिकित्सा सिद्धान्तों में, विशेषकर आयुर्वेद में, भरपूर उल्लेख मिलता है। यह समुद्र-तट से लेकर 1219 मीटर ऊँचाई के पर्वतीय क्षेत्रों में भी पैदा होता है। इसमें पौष्टिक तत्त्वों तथा विटामिन-सी के आधिक्य एवं औषध गुणों के कारण अन.दि-काल से इसका प्रचुर मात्रा में उपयोग होता है।

आँवला भिन्न-भिन्न आकार तथा रंग में पाया जाता है। छोटे आँवले से लेकर बनारसी तथा हरी धारी वाले आँवले भारत में पाये जाते है। अंग्रेजी में इसे इण्डियन गूसबरी कहा जाता है। इनमें बनारसी तथा हरी धारी किस्म के आँवले काफी मोटे तथा मुरब्बा बनाने में अधिक उपयुक्त माने जाते हैं, क्योंकि इसकी गुठली छोटी तथा गूदा अधिक होता है। इन्हें हाथ से गोदने में भी, छोटे आँवलो से अधिक सुविधा रहती है। वैसे तो छोटे तथा बड़े दोनो ही प्रकार के आँवलो का मुरब्बा बनाया जा सकता है।

मुरब्बा बनाने वाले कारखाने उत्तर भारत में उत्तर प्रदेश, पंजाब, हरियाणा, राजस्थान, मध्यप्रदेश, महाराष्ट्र, गुजरात, बिहार तथा दिल्ली में अधिक केन्द्रित है, परन्तु आँवले के मुरब्बे का कितना टन निर्माण प्रतिवर्ष होता है, इसके आँकड़े उपलब्ध नही है। फिर भी पेठे के बराबर प्रतिवर्ष उत्पादन होने का अनुमान है। आँवले के मुरब्बे का ग्रीष्मकाल में रोगी तथा नीरोगी समान रूप से उपयोग करते हैं। मुरब्बा खरीदने में असमर्थ और अनुभवी लोग घर पर ही मुरब्बा बना लेते है। आँवले का मुरब्बा अन्य फल-मुरब्बो से कही अधिक स्वादिष्ट तथा पौष्टिक होता है। इसमें प्रोटीन की कमी अवश्य होती है।

मुरब्बा बनाने के लिए वैसे तो आँवले की समस्त किस्में उचित मानी गयी हैं, परन्तु जितनी बड़ी किस्म होगी, उतनी ही आसानी से उन्हें गोदने में मदद मिलेगी, क्योंकि प्रत्येक आँवले की हाथ से ही गुदाई की जाती है।

पूर्ण विकसित आँवले को चुनकर, सुचारु रूप से धोकर, चारों ओर गोद लेते हैं। गोदने के लिए बाँस की या स्टेनलेस स्टील की सुई या फोर्क काम में लेने चाहिए। प्रत्येक छेद की दूरी कम से कम 1 मिलीमीटर से ½ सेन्टीमीटर रखनी चाहिए। इसकी गहराई

आँवले की गुठली तक होनी चाहिए। गोदे गये आँवलों को 2 प्रतिशत लवण-घोल में डाला जाता है। इन्हें 24 घण्टे तक रखने के बाद उसमें पुनः 2 प्रतिशत लवण डालकर कुल 4 प्रतिशत कर दिया जाता है। यह क्रिया प्रतिदिन दोहराई जाती है, जब तक उसमें 8 प्रतिशत लवण न हो जाये। इस परिस्थिति के 24 घण्टे बाद आँवलों को निकालकर, धोकर, 8 प्रतिशत लवण-युक्त ताजे घोल में डालकर एक सप्ताह रख दिया जाता है। इस लवण-उपचार से आँवले में से खराश निकल जायेगी। इन्हें निकालकर पुनः धो दिया जाता है। ध्यान रखें कि आँवले के सम्पर्क में लोहा, ताँबा न आने पावें, अन्यथा सम्पूर्ण आँवला खराब हो जाने की सम्भावना होती है।

कुछ लोग इन आँवलों को 2 प्रतिशत फिटकरी घोल में डालकर नर्म कराने के लिए विवर्णीकरण करते हैं। ध्यान रखें कि इस प्रक्रिया में आँवले छिन्न-भिन्न न हो जायें।

फिटकरी में उपचार करने से आँवले में पाया जाने वाला अधिकांश विटामिन-सी नष्ट हो जाता है, इसलिए बिना फिटकरी-उपचार से ही विवर्णीकरण करना चाहिये।

उपर्युक्त विधियों से उपचारित आँवले से सेब की भाँति मुरब्बा बनाया जाता है। ध्यान रखें कि अन्य फलों की भाँति सेब तथा आँवले का भी रिक्तक पाचकीकरण द्वारा मुरब्बा बनाया जा सकता है।

चूना-उपचार-विधि

इस विधि में गोदे हुए आँवलों का लवण-घोल की बजाय करीब 6 प्रतिशत चूना-युक्त घोल में उपचार किया जाता है। पूरा आँवला गोदकर चूना-घोल में डालते रहें, इसके बाद 8 से 12 घण्टे रख दें। इसके बाद आँवलों को निकालकर अच्छी तरह बहते पानी में धो लेते हैं। इन आँवलों को उबलते पानी में विवर्णीकरण किया जाता है, ताकि आँवले नर्म और एक-वर्ण हो जायें। ध्यान रखें, इस क्रिया में आँवला छिन्न-भिन्न न हो जाये। इसमें से जल निसरने दिया जाये। इसके बाद अन्य फलों की भाँति पूर्व-वर्णित किसी एक विधि से शर्करा-चाशनी में मुरब्बा बनाया जा सकता है।

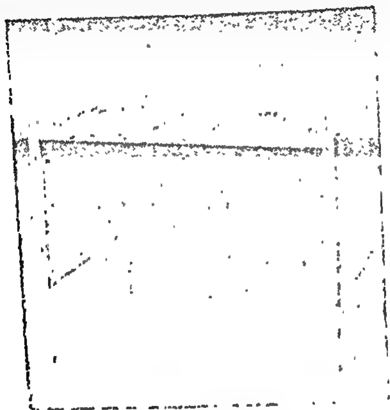
आँवले की चाशनी डिग्री 68° से 70° की बजाय 80° ब्रिक्स बनाकर आँवला मिश्री भी बनाई जा सकती है।

ऐसे प्रतिवेदन मिलते हैं कि उपर्युक्त विधि से गोदकर आँवला मुरब्बा बनाकर सचयन किया गया तो पाया कि मुरब्बे में खराबियाँ उत्पन्न हुई हैं। इनके कारणों का पता लगाने के लिए निरीक्षण-परीक्षण किया तो मालूम हुआ कि आँवले के भीतर बराबर मात्रा में गुठली तक गुदाई नहीं थी। फलस्वरूप समूचे फल में विवर्णीकरण भी समान रूप से सम्भव नहीं हो पाया। इसके अतिरिक्त उपर्युक्त दोनों कमियों की वजह से आँवले की परिरक्षण करने वाली शर्करा-मात्रा भी प्रत्येक आँवले की गुठली तक नहीं पहुँच पाई। फलस्वरूप प्रत्येक कैन में एक या दो फलों ने या सारे फलों ने उपर्युक्त दोष के कारण सड़कर सम्पूर्ण आँवले को खराब कर दिया।

हाथ से गोदते समय प्रत्येक आँवले का प्रत्येक छिद्र गुठली तक जाने-अनजाने पहुँच नहीं पाता तथा इन्हें दूर करना उतना व्यावहारिक भी नहीं पाया गया। यह कमी अनुभवी लोगों में गोदने के बाद भी पाई गई थी।

आंवला-गोदिनी मशीन का आविष्कार

उपर्युक्त कठिनाइयों को दूर करने के लिए सदाशिवन नायर एस० तथा एम० एल० जैन (1977) ने आंवला गोदने के, हाथ से चलने वाले एक यन्त्र का आविष्कार किया (चित्र संख्या 23 का अवलोकन करें)। इस मशीन के सम्बन्ध में लिखे गये निबन्ध को केन्द्रीय



चित्र संख्या–62
आंवले गोदने की मशीन

खाद्य प्रौद्योगिक अनुसंधान संस्थान, मैसूर में हुए प्रथम अखिल भारतीय खाद्य वैज्ञानिक तथा प्रौद्योगिकों के सम्मेलन में प्रस्तुत करते हुए बताया गया कि इस मशीन की सहायता से 1 दिन में (8 घण्टे) 80 किलो आंवले को गोदा जा सकता है। इस मशीन की कीमत 500 रु० होगी। नायर ने हाथ से तथा यन्त्र से गोदने की प्रक्रिया के तुलनात्मक आर्थिक लाभ का अध्ययन करते हुए कहा कि एक टन मुरब्बा बनाने वाले इस मशीन द्वारा करीब 221 रुपये की और अधिक बचत कर सकते हैं। सन् 1982 में सदाशिवन नायर एवं हरिशचन्द्र शर्मा ने इस मशीन की खामियों को दूर कर तीन विभिन्न मॉडलों का रूपाकन किया जो हाथ, पैर एवं स्वचालित है। इनकी क्षमता क्रम 160, 200 एवं 300 किलो आंवला प्रति 8 घण्टे में गोदते हैं (चित्र संख्या 62, 63)।

मशीन से गोदने से समूचे फल में बराबर दूरी पर तथा बराबर गहराई में छिद्र बन जाते हैं। यह प्रक्रिया सारे आंवले में लगभग समान रूप से की जा सकती है। इसके

प्रयोग से अपूर्ण-विवर्णीकरण तथा छेद की त्रुटियाँ, अधिक गहराई से होने वाले शर्करा-शोषण तथा उसकी कमी से आँवला-मुरब्बे में होने वाली सड़न को भी रोका जा सकेगा। इस आँवले-गोदनी की सहायता से आँवले के आकार के समान अन्य फलों को भी मुरब्बा बनाने के लिए गोदा जा सकता है।



चित्र संख्या–63
आँवले गोदने की स्वचालित मशीन

गाजर का मुरब्बा

मुरब्बे के लिए पूर्ण विकसित नर्म गाजर चुनी जाती है। गाजर पीले तथा लाल रंग की अधिक उचित होती है। एक समय एक ही रंग की गाजरों को चुनना चाहिये। इन्हें अच्छी तरह धोकर, ऊपर की बारीक जड़ों तथा पतले छिलके को अलग कर दिया जाता है। इसके लिए आजकल मशीन भी काम में ली जाती है। इन्हें 6 से 8 मिलीमीटर टुकड़ों में कतर लिया जाता है। हाथ से ही इन टुकड़ों को गोद लिया जाता है। गोदी हुई गाजर को विवर्णीकरण कर 30 से 33 प्रतिशत शर्करा-घोल में पकाया जाता है। इसमें 0.5 से 0.6 प्रतिशत गाजर के भार के अनुपात में साइट्रिक अम्ल मिलाया जाता है। 105° से 106° सें० ताप पहुँचते ही उतारकर 48 घण्टे भवन-ताप में ऊष्मयान के लिए रखा जाता है। इसी प्रकार धीरे-धीरे ब्रिक्स डिग्री बढ़ाकर 70° तक पहुँचाकर वाहिका में भरा जाता है तथा 68° ब्रिक्स की ताजा चाशनी द्वारा तैराकर सीलबन्द किया जाता है।

अगर गाजर-मिश्री बनाना हो तो इन्हें 75° से 80° ब्रिक्स तक पहुँचाकर चाशनी से निकालकर, पोछकर सुखा सकते हैं।

सन् 1973 में तिवेटिया, एस०एस० तथा साथियों ने प्रतिवेदन दिया कि देशी एवं नैंट्स किस्म की गाजरों को यथाविधि तैयार कर, विवर्णीकरण के पश्चात् 2.5 प्रतिशत पैक्टिक एन्जाइम के घोल में 4 एवं 8 घण्टे रखने के बाद चाशनी उपचार यथाविधि क्रिया

तो पाया कि गोदकर बनाये गये गाजर के मुरब्बे से अधिक उच्च-कोटि का गाजर मुरब्बा बना।

कुछ विशेष मिथ्रियों की निर्माण-विधि

मिथ्रियो में सर्वप्रथम पेठा है। आयुर्वेदिक औषधि के रूप में पेठा काम में लिया जाता है। इसके लिए मोटे गूदेदार बड़े पेठा-फल को चुना जाता है। इसे कतरकर मोटा छिलका तथा केन्द्र के बीज युक्त कक्ष को अलग कर दिया जाता है। इन्हें भिन्न-भिन्न आकार में कतर लिया जाता है। साधारणतया 5 सेन्टीमीटर लम्बे या 4 × 4 या 4 × 6 सेन्टीमीटर आकार में कतरा जाता है। इसकी मोटाई साधारणतया छिलका तथा पित्त अलग करने के बाद शेष बची हुई ही रहेगी। ध्यान रखें, इसमें हरापन बिल्कुल नहीं रहे। फिर भी जितना हो सके, मोटे गूदे वाले पेठे को ही चुनना चाहिये।

इसी प्रकार कतरे हुए टुकडो को आज भी हाथ से ही गोदा जाता है, लेकिन आँवले से कहीं अधिक तेजी से तथा आसानी से इन्हे गोदा जा सकता है। गोदे हुए टुकड़ो को 2 से 4 प्रतिशत चूना-युक्त घोल में रख कर उपचार किया जाता है। इसके लिए 4 से 6 घण्टे तक चूने के पानी में गोदे हुए टुकडो को रखना होगा। अगर गूदा सख्त नहीं हो तो इन्हें अधिक समय चूने के पानी में रखना चाहिये। यह प्रक्रिया पेठे को ठोस बनाने के लिए की जाती है। इसके बाद टुकड़ो को निकालकर बहते पानी में धोकर 15 से 30 मिनट तक विवर्णीकरण किया जाता है। इन्हे तुरन्त बाद पानी से निकालकर, नमी सोखने देते हैं। इसके बाद 38° ब्रिक्स की उबलती हुई शर्करा चाशनी में अन्य फलो की भाँति पकाया जाता है। इसके लिए फलो के भार की करीब तीन गुणा शर्करा-चाशनी की आवश्यकता होती है। जब चाशनी का तापमान 105° से 107° से० के बीच रहता है या 70° से 75° ब्रिक्स जब तक नही पहुँचती, तब तक पकाकर रात-भर रखा जाता है। दूसरे दिन चाशनी से निकालकर, निसराकर इन्हे पिसी हुई दानेदार चीनी में उलट-पलट कर ट्रे में फैलाकर भवन-ताप में सुखाया जाता है। सूखने के बाद पैकिंग किया जाता है। आजकल निर्यात के लिए कैनों में भी भरा जाता है।

केन्द्रीय खाद्य प्रौद्योगिक अनुसन्धान संस्थान के अनुसार तैयार कर गोदे हुए पेठा-टुकडो को उबलते पानी में नरम किया जाता है, तत्पश्चात् 0.4 प्रतिशत कैल्शियम हाइड्रो-ऑक्साइड घोल में 30 मिनट रखा जाता है। इसके बाद इन्हे निकालकर, अच्छी तरह धोकर जल निथरने देते हैं।

इस बीच में फलों के टुकडो की बराबर मात्रा में शर्करा तोलकर लेते हैं। अब इन टुकड़ो व शर्करा को एक बर्तन में क्रमशः पहले शर्करा बुरकाकर उसके ऊपर तैयार किये हुए पेठे के टुकड़ों को सजाकर तथा फिर शर्करा बुरकाकर रख देते हैं, ताकि सारे टुकड़ों पर शर्करा लग जाये। इसके ऊपर पुनः टुकड़े और उसके ऊपर शर्करा के क्रम में भरकर सबसे ऊपर शर्करा से भर देते हैं।

24 घण्टे बाद टुकडो में शर्करा, लगभग चाशनी के रूप में परिवर्तित हो जायेगी। इसमें से टुकडो को अलग कर चाशनी को उबालते हैं, ताकि 50° ब्रिक्स प्राप्त हो सके। इसके बाद टुकडो को पुनः 50° ब्रिक्स वाली चाशनी में डालकर रात भर रखा जाता है। इसके बाद इस क्रिया को उस समय तक चालू रखते हैं, जब तक चाशनी का ब्रिक्स 70° न हो जाये। इसके लिए करीब 3 दिन की आवश्यकता होती है। अन्य क्रियाएँ पूर्व-चर्चित हैं। इस प्रकार बना पेठा पारदर्शक तथा मनमोहक होता है।

काजूसेब-मिश्री

काजूसेब पूर्ण विकसित तथा पेड़ मे पके हुए होने चाहिये। यह लाल तथा पीले वर्ण के होते हैं। एकत्र करते ही फलो को काम में लेना चाहिये, क्योकि यह सडन-गलन से शीघ्र खराब होने वाले होते है। इन्हे यथाविधि धोकर 2 प्रतिशत लवण-घोल मे डुबोकर रख दें। दूसरे दिन आँवले की भाँति 2 प्रतिशत नमक और मिलाकर लवण-घोल की शक्ति 4 प्रतिशत कर लें। इसी प्रकार प्रतिदिन मिलाने से 10 प्रतिशत होने तक दोहराते रहे। छठे दिन उसमें प्रति किलोग्राम काजूसेब के लिए 625 मिलीग्राम पौटेशियम मैटाबाई सल्फाइट के अनुपात मे मिलाकर 2 से 3 दिन रख दें। इसके पश्चात् शुद्ध जल से धोकर निकालें। इन्हें एल्युमीनियम या तत्तुल्य धातु से बनी छलनी मे रखकर उबलते पानी मे 5 मिनट समय प्रदान कर विवर्णीकरण करें। विवर्णीकृत फलो को प्रेशर कुकर की सहायता से पकावें। इसके लिए कुकर मे 0 35 किलोग्राम दबाव देकर 5 मिनट पकाना चाहिये। भापोपचारित फलो को प्रेशर कुकर में से निकालकर तुरन्त ठण्डे जल मे डाल दें तथा उन्हें एक-एक करके आँवले की भाँति गोद लें।

30° ब्रिक्स की शर्करा-चाशनी बना ले, जिसमे 0 1 प्रतिशत फल-अम्ल हो, फिर इन्हे 10 मिनट उबालें। उचित बर्तन मे रखे हुए फलो पर इस चाशनी को डालकर फलो पर तैरा दें। साधारणतया फल चाशनी मे तैरने लगते हैं, इसको रोकने के लिए एल्युमीनियम तथा तत्तुल्य धातु से बना जालीदार चकला रखने से फल नीचे जायेंगे तथा चाशनी ऊपर तैरती रहेगी। 24 घण्टे रखने के बाद चाशनी अलग कर उसकी ब्रिक्स डिग्री मालूम करें और 35° ब्रिक्स बनाने के लिए आवश्यक शर्करा पुन. मिलाकर उबालें। उबलती चाशनी को पुन फलो मे डालकर 24 घण्टे रखा जाये। इसी प्रकार प्रतिदिन 5° ब्रिक्स बढ़ाकर उन्हें 60° ब्रिक्स पर पहुँच एँ। इसके बाद 3 दिन रख दें, चौथे दिन 75° पाने के लिए 5 डिग्री प्रतिदिन के हिसाब से दोहराकर सम्पन्न करावें। इसके लिए हर तीसरे दिन 5 डिग्री ब्रिक्स के हिसाब से दोहराना होगा। 75° ब्रिक्स प्राप्त होने के बाद 5 से 6 दिन रखिये, ताकि फल आवश्यकतानुसार शर्करा-शोषण कर सके। यदि इसके बीच मे 75 डिग्री ब्रिक्स से कम हो जाये तो गर्म कर ब्रिक्स डिग्री पूरी करनी चाहिये। इसके पश्चात् अन्य फल-मिश्री की भाँति चाशनी को फलो से अलग कर गर्म पानी से पोंछकर, ट्रे मे सजाकर सुखाया जाता है।

अदरक-मिश्री

अदरक फल या तरकारी में नही आती, अपितु अदरक-मिश्री सार्वजनिक रूप से बनाई जाती है। अदरक पौधे का तना होता है, जो भूमि के अन्दर मिट्टी मे बढ़ता है। इसकी खेती केरल, कर्नाटक तथा अन्य पश्चिमी-तट की तराई मे तथा तमिलनाडु और आन्ध्रप्रदेश के कुछ क्षेत्रों मे की जाती है। मुरब्बा तथा मिश्री बनाने के लिए अदरक बिना रेशे वाली या कम रेशे की उचित होती है। जितना हो सके, मोटी गाँठों को ही चुनना चाहिये। इन्हें अच्छी तरह धोकर बाँस की सहायता से छिलका उतारें। छिलका उतरी हुई अदरक को चाहे गये आकार मे कतर लें। कतरे हुए टुकड़ो को 5 प्रतिशत साइट्रिक अम्ल में डालकर 6 घण्टे उबालें या प्रेशर कुकर की सहायता से 1 घण्टे पकाएँ। इसके लिए 0 7 किलोग्राम दाब पर प्रेशर कुकर या तत्तुल्य पाचकीकरणी को 1 घण्टा चलाना होगा। इन टुकड़ो को ठण्डे पानी मे डालकर, ठण्डा होने के बाद चारों तरफ गोद लें।

अब 30° ब्रिक्स की शर्करा चाशनी तैयार कर लें तथा जल उबलने लग जाये, तब तैयार हुए अदरक-टुकडो को उसमे डाल दें। जब चाशनी 15 मिनट अदरक सहित उबल जाये तो निकालकर 24 घण्टे रख दें। इसको ऊष्मयान (Incubation) कहा जाता है। इसके पश्चात् अदरक अलग कर शर्करा-चाशनी की ब्रिक्स डिग्री मालूम कर उसमें उतनी ही शर्करा और मिलायी जाये कि उसकी ब्रिक्स डिग्री 35 हो जाये। इन्हे 10–15 मिनट अदरक सहित उबालकर पुन 24 घण्टे रखें। इसी प्रकार प्रतिदिन 5 डिग्री ब्रिक्स बढ़ाकर 65 डिग्री ब्रिक्स पर पहुँचावें। इस समय इसमें 0.1 प्रतिशत अम्ल होना चाहिये। इसके बाद बिना शर्करा मिलाये ही दूसरे दिन 70 डिग्री तथा उसके अगले दिन 75 डिग्री के क्रम से गर्म कर बढाई जाती है। कुछ लोग 80 डिग्री ब्रिक्स पर भी पहुँचाते हैं, जिसके लिए 1 दिन और लगता है। इसके बाद अदरक को उसमे से अलग कर, पोछकर अन्य फलो की भाँति दानेदार चीनी के चूर्ण मे लपेटकर, ट्रे मे सजाकर सुखाया जाता है। इसके लिए निर्जलीकरणी भी काम में ली जा सकती है। इसको अदरक-मिश्री अर्थात् जिंजर कैण्डी कहा जाता है।

अगर मुरब्बा बनाना हो तो चाशनी 70° ब्रिक्स हो जाये, उसके पश्चात् एक-दो दिन रखें। उसके पश्चात् अदरक के टुकड़ो को अलग कर वाहिकाओं में भरा जाता है। इसमें 68° ब्रिक्स पर तैयार की गई ताजा चाशनी से तैरा दें। बाकी सब क्रियाएँ अन्य मुरब्बो की भाँति ही है।

मुरब्बा तथा मिश्री बनाने की क्रिया के बाद बची चाशनी को अदरक की मीठी गोली बनाने या जिंजर ऐल (अदरक-पेय) बनाने मे या अन्य खाद्य-पदार्थों को सुगन्धित कराने के लिए भी काम मे लिया जा सकता है। सन्तरे के छिलके से गोली या मिश्री बनाने की प्रक्रिया के बारे मे उपोत्पादो मे चर्चा की जायेगी।

धवलीकृत फल
(Glaced Fruit)

फलो से बनी मिश्रियों को सुखाने के पूर्व गाढे शर्करा-घोल मे पुनः तैयार कर सुखाने के बाद, उसके ऊपर हिम तुल्य शर्करा-चूर्ण लिपटा हुआ मिलेगा। इन फलों को धवलीकृत फल कहा जाता है। अंग्रेजी मे ग्लेज्ड फ्रूट (Gl.ced Fruit) कहा जाता है।

शर्करा तथा जल को 2 : 1 अनुपात मे मिलाकर उबालते है, ताकि उसका तापमान 113° से 114° से० हो जाये। इसमे से गन्दगी अलग कर दें। इसे 98° से० मे ठण्डा कर लकड़ी की चम्मच से रगडते जायें तो हिम-तुल्य शर्करा-चूर्ण बनता जायेगा। इस समय तैयार की गई मिश्री को एक-एक करके शर्करा-चाशनी मे डालकर घोल को उस पर लिपटवाकर ट्रे में सजाया जाता है। ट्रे सजाने से पहले गर्म मोम से लेपित किया जाता है। इन्हें गर्म कमरे में या 49° डिग्री से० तापमान पर निर्जलीकरणी मे रखकर भी सुखाया जाता है। सूखने के बाद फल हिम-तुल्य धवलीकृत रहेंगे। इसी प्रकार आँवला धवलीकृत किया जा सकता है।

विदेशों में शर्करा-चाशनी के बजाय मिश्री को चाशनी में से निकालकर 1.5 प्रतिशत पैक्टिन-युक्त जल-घोल में डुबोकर निर्जलीकरणी में सुखाया जाता है। फलस्वरूप फल

धवलीकृत हो जाते हैं। लेकिन शर्करा द्वारा जितना धवलीकरण होता है, उतना पैक्टिन प्रयोग से नहीं होता। फिर भी यह देखने में मनमोहक होता है।

क्रिस्टलीकृत (मणिमय) फल

गहरे बर्तनों में 70° ब्रिक्स की शर्करा-चाशनी तैयार कर ठण्डा करने के लिए रखी जाती है। ठण्डी होने के बाद जालीदार टोकरी में तैयार फल मिश्री को छानकर भरा जाता है। इन भरी हुई टोकरियों को एक अन्य गहरे बर्तन में रखा जाता है, इसके ऊपर ठण्डी की गई 70° ब्रिक्स की चाशनी को डाला जाता है। फलस्वरूप प्रत्येक फल शर्करा-चाशनी के सम्पर्क में आ जाता है। 15 से 18 घण्टे बाद देखा जाये तो इसके ऊपर मलाई की भाँति एक परत जमी हुई दिखाई देगी। यह क्रिया शर्करा-क्रिस्टलीकरण के कारण उत्पन्न होती है। इस समय फलों को चाशनी में से बाहर निकालकर एक अन्य बर्तन में रखा जाता है, ताकि चाशनी निसर जाये। इसके बाद इन्हें 45° तापमान पर निर्जलीकरणी की सहायता से सुखाया जा सकता है।

उपर्युक्त उत्पादों को अगर आवश्यकतानुसार ब्रिक्स डिग्री वाली शर्करा-चाशनी में तैयार नहीं किया जाता तो खराब होने की सम्भावना है, क्योंकि फलों के भीतर शर्करा के अभाव में किण्वन क्रिया सम्पन्न हो सकती है, साथ ही वायुरुद्ध अवस्था में इन्हें पैक करना आवश्यक है, अन्यथा ऑक्सीकरण से भी खराबियाँ उत्पन्न हो सकती हैं।

फ्रूट टॉफी
(Fruit Toffee)

फलों को अच्छी तरह धोकर, इन्हें पुनः 0.1 प्रतिशत पौटेशियम मेटाबाई सल्फाइट घोल में 5 मिनट रखकर निकाल कर धोयें। इन फलों का 5 मिनट विवर्णीकरण करके किण्वकों को निष्क्रिय बनाना चाहिए। इसके बाद इन फलों का गूदा बना दिया जाये। इस गूदे को स्टीम जैकेटेट केतलियों में या जल ऊष्मक की सहायता से वाष्पीकरण करें ताकि यह $\frac{1}{3}$ हो जाये। अगर फल का गूदा 10.6 किलोग्राम या तो इसमें 6 किलो शर्करा, 1 किलो ग्लुकोज, 1.6 किलो मक्खनरहित दूध-चूर्ण (मिल्क पाउडर) 1 किलो मक्खन या वनस्पति घी मिलाकर पकाएँ। ध्यान रखें कि दूध-चूर्ण को मामूली पानी में चटनी-सा बनाकर मिलावें। इन्हें उसमें समान रूप से मिलाने के लिए अच्छी तरह घोट दें। इसमें से एक बूँद जल से भरे ग्लास में डालने से ग्लास के पेंदे में जाकर बैठ जाये तो समझना चाहिए कि टॉफी बन चुकी है। इन्हें प्लेटों में 5 से 5 मिलीमीटर मोटाई में फैला दें। फैलाने के पहले मक्खन या वनस्पति घी से प्लेटों को लेपित कर दें, इन्हें ठंडा होने दिया जाये। 2 घण्टे पश्चात् इसे चाही गई आकृति में कतरकर या चक्की की भाँति काटकर बटर पेपर में लपेटकर पैकिंग किया जाये। यह स्वादिष्ट ही नहीं, अपितु पौष्टिक आहार भी है, जो बालक-बालिकाओं के लिए विशेष आहार माना जाता है।

फ्रूट टॉफी, अमरूद, आम, पपाया, केला, कटहल (फल), इत्यादि अन्य फलों से भी बनाई जा सकती है।

□□□

अध्याय 7

सांद्रीकृत उत्पाद

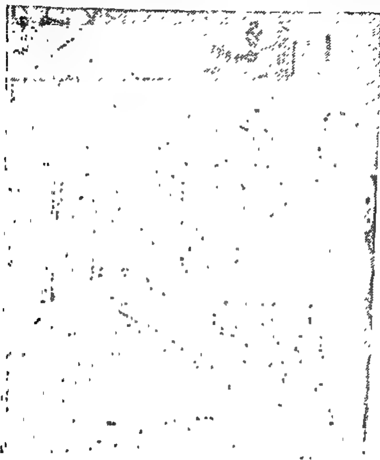
(Concentrated Products)

फल-तरकारी के रसों व रस-युक्त गूदों को हिमीकरण, शर्करा मिलाकर सांद्रीकरण करने की तकनीकी जानकारी, आपको पूर्व अध्यायों में दी जा चुकी है। इस अध्याय में, उन विषयों पर चर्चा करेंगे, जहाँ फल तथा तरकारी-रस का परिरक्षण केवल ऊष्मा द्वारा बिना शर्करा मिलाये ही या अल्प शर्करा से सांद्रीकरण द्वारा किया जाता है।

सूखे फल-तरकारियों की भाँति रस को भी सांद्रीकृत करके पैक करने से परिवहन में होने वाले व्यय को कम किया जा सकता है। इसके लिए समुचित टेक्नोलॉजी का अन्वेषण वैज्ञानिकों द्वारा सन् 1899 में ही आरम्भ किया गया था। फलस्वरूप आज वैक्यूम पैन (रिक्तक-कड़ाही या केतली), जो भापयुक्त हो या भाप-नलियों द्वारा गर्म करने योग्य हो, से फल या तरकारी-रस को या गूदेयुक्त रस को सांद्रीकृत किया जाता है। इसी प्रकार सांद्रीकृत रस को विपणन हेतु पैकिंग करने के पूर्व, आवश्यकतानुसार ताजा रस मिलाकर उसमें ताजगी को पुनर्जीवित कराकर परिरक्षण सम्पन्न किया जाता है, जिसका आगे विस्तार से अध्ययन किया जायेगा। सांद्रीकृत फल-रस में ताजा फल-रस मिलाकर या उसी फल से प्राप्त छिलका सुगन्ध को मिलाकर पुनः ताजेपन लाने की क्रिया को अंग्रेजी में कट-बैक-विधि (Cut-back method) कहा जाता है। मानलें एक फलरस (ताजा) की ब्रिक्स 10 डिग्री है। सांद्रीकरण के पश्चात् उसकी ब्रिक्स डिग्री 65 हो गई हो तो उस रस में पुन: 45° से 55° या चाही गई (पैकिंग के समय) ब्रिक्स पर सांद्रीकृत रस प्राप्त करने के लिए आवश्यकतानुसार ताजा रस मिलाने की क्रिया को कट-बैक विधि कहा जाता है। इस क्रिया से रस में उत्पन्न जले हुए जैसे स्वाद को दूर किया जा सकता है। नीबूवर्गीय फल-रस को सांद्रीकृत किया जाय तो उनकी सुगन्ध ऊष्मा प्रयोग में नष्ट हो जाती है। चाही गई (45°) ब्रिक्स डिग्री पर सांद्रीकरण सम्पन्न कराते हुए भी उसके ताजापन को बनाये रखने के लिए उसी फल के छिलके से प्राप्त सुगन्ध या तेल आवश्यकतानुसार मिलाया जाता है। यह भी कट-बैक विधि में ही आता है।

सांद्रीकरण-क्रिया कुछ हद तक घरेलू स्तर पर भगोने में भी की जा सकती है, जिसकी टमाटर-उत्पादों के सन्दर्भ में चर्चा की जायेगी। परन्तु नीबूवर्गीय फल-रस, अनन्नास रस इत्यादि का सांद्रीकरण घरेलू स्तर पर असम्भव-सा है। लेकिन व्यावसायिक स्तर पर भिन्न-भिन्न यन्त्रों की सहायता से उक्त क्रिया सम्पन्न की जाती है। इसके लिए विभिन्न

वाष्पीकरणियों की सहायता ली जाती है, वे हैं:—(1) बफलोवक अजीटेटेड फिल्म एवैपोरेटर, (Buflovak Agitated film Evaporator), (2) टिपिकल डबल अफेक्ट प्लेट एवैपोरेटर (Typical Double Effect Plate Evaporator) तथा (3) फोर्ज्ड सर्कुलेशन एवैपोरेटर (Forced Circulation Evaporator) इत्यादि।



चित्र संख्या–64

उपर्युक्त वाष्पीकरणियों में फोर्सड् सरकुलेशन एवैपोरेटर अधिकाधिक प्रचलित हैं। इसमें एक पम्प की सहायता से रस का संचरण कराते समय रस एक ट्यूब में बार-बार ऊपर फेंका जाता है, जहां रस के जल को वाष्प रूप में परिवर्तित कर बाहर निकाला जाता है। इसी प्रकार बार-बार संचरण कराकर रस को चाही गई ब्रिक्स डिग्री पर पहुँचाकर सांद्रीकरण सम्पन्न किया जाता है। उपर्युक्त वाष्पीकरणियों का रूपांकन इस प्रकार किया हुआ होता है कि 91 से 550 सेन्टीमीटर (3 से 18 फीट) वेग (वेलोसिटी) के क्रम में ट्यूब में रस को फेंका जाता है। इस वाष्पीकरणी की सहायता से फल तथा तरकारी व्यवसाय-शालाओं में विभिन्न फल तरकारी-रसों को 70° ब्रिक्स तक सांद्रीकृत किया जा सकेगा। सांद्रीकरणी की नली (ट्यूब) को आवश्यकतानुसार गर्म रखने के लिए विद्युत् की सहायता ली जाती है। उपर्युक्त सांद्रीकरणियाँ जटिल (सोफेस्टीकेटेड) यन्त्रों में आती हैं।

वाष्पीकरणी द्वारा सेब-रस का 60° से 65° ब्रिक्स पर, अंगूर तथा टमाटर-रस का 70° ब्रिक्स पर सांद्रीकरण किया जाता है। अधिक जानकारी के लिए इस ग्रन्थ में उल्लिखित संदर्भ ग्रन्थों की ओर, विशेषकर 'फ्रूट एण्ड वेजीटेबल जूस प्रोसेसिंग टेकनोलॉजी नामक ग्रन्थ की ओर ध्यान आकर्षित किया जाता है।

सेब-रस सांद्रीकरण प्रक्रिया

सेब को यथाविधि धोकर, अनचाहे भागों को अलग कर कतरा जाता है तथा पल्पर या क्रेटर की सहायता से उसका गूदा बना लिया जाता है। इस समय उसमें 200 पी० पी० एम० के अनुपात से सल्फरडाई ऑक्साइड मिलानी आवश्यक है, ताकि उसमें बभ्रूकरण नहीं हो सके। इसके बाद 1 प्रतिशत के अनुपात से पैक्टीनोल-ए नामक किण्वक (एन्ज़ाइम) अच्छी तरह मिलाकर 12 घण्टे रखा जाता है। दूसरे दिन अगर रात भर रखा जाता है, तो सेब-गूदे में से रस निकाला जाता है। यह क्रिया सेन्ट्रीफ्यूज यन्त्र की सहायता से सम्पन्न की जाती है। प्राप्त रस का फ्लेश पास्चुराइजर (क्षण पास्तुरीकरणी) की सहायता से 80° से० ताप पर पास्तुरीकरण कर रस को पुनः 40° से० पर लाया जाता है। इस रस को फोर्स्ड सरकुलेशन एवैपोरेटर या तत्तुल्य किसी अन्य वाष्पीकरणी की सहायता से रस का सांद्रीकरण किया जाता है, ताकि उसकी ब्रिक्स डिग्री 60–65 प्राप्त हो सके। सांद्रीकृत रस में पुनः उतना ही फल-रस मिलाया जाता है, ताकि आप चाही गई ब्रिक्स डिग्री (40°, 45°, 50°) पर ला सकें। साधारणतया ताजे सेब-रस में करीब 12° ब्रिक्स पाई जायेगी। इसी प्रकार सांद्रीकृत रस मे पुनः ताजा फल-रस मिलाकर ताजगी लायी जाती है, इसे कट-बैक विधि कहा जाता है।

इसी प्रकार उत्पादित रस को वाहिकाओं में भरकर, संसाधन करके विपणन हेतु भेजा जाता है। इसके बाद उपभोक्ता, बाजार से लाये हुए सांद्रीकृत फल-रस मे पुन. उतनी मात्रा में जल मिलाता है, ताकि ताजे फल-रस के बराबर के ब्रिक्स डिग्री पर (10 से 12) फल-रस प्राप्त हो सके। अन्य फलों से भी रस निकालकर सांद्रीकरण किया जाता है, लेकिन पैक्टिनोल-ए नामक किण्वक केवल उन फलों के गूदे में मिलाये जाते है, जिनमें पैक्टिन हो। अन्य क्रियाएँ समस्त फलों में सेब की भाँति की जाती हैं।

विपरीत परासरण सांद्रीकरण (Reverse Osmosis Concentration)

परासरण क्रिया द्वारा फलों को सुखाने की क्रिया के बारे में पहले ही चर्चा की जा चुकी है। यहाँ फल-रसों का बिना तापोपचार से विपरीत (उल्टा) परासरण क्रिया द्वारा किस प्रकार सांद्रीकरण किया जाता है, इसके बारे मे चर्चा की जा रही है। इस क्रिया से उत्पादित फल-रस मे किसी प्रकार के विपरीत गुण नहीं पाये जाते हैं, जैसे कि ऊष्मोपचार विधि से प्राप्त फल-रस मे पाये जाते हैं। कहने का तात्पर्य यह है कि विपरीत परासरण क्रिया से उत्पादित रस मे जल मिलाने के पश्चात् ताजे फल-रस मे पाये जाने वाले अधिकांश पोषक-गुण ही नहीं, अपितु वर्ण तथा सुगन्ध भी उतनी ही पाई जायेगी।

आप भली-भाँति जानते हैं कि दो विभिन्न घोलों को, जो एक-दूसरे से अधिक गाढ़े हों, एक अर्द्ध-पारगम्य झिल्ली (Semi-permeable Membrate) की सहायता से अलग किया जाय तो साधारण परिस्थिति में परासरण दबाव में उत्पन्न अन्तर के कारण मद

घोल में से गाढ़े घोल की तरफ जल उस समय तक बहता रहेगा, जब तक दोनों घोल बराबर (जलयुक्त) न हो जाएँ। इस क्रिया को परासरण क्रिया कहते हैं।

इसके विपरीत उपर्युक्त परिस्थिति में, हाइड्रोलिक द्वारा उन दोनों के ऊपर दबाव दिया जाये तो मंद घोल मे से जल गाढ़े घोल में बहने की बजाय गाढे घोल में से जल मंद घोल की तरफ बहने लगेगा। फलस्वरूप गाढा घोल और अधिक गाढ़ा होता चला जायेगा। यह क्रिया उस समय तक कराई जा सकती है, जब तक चाहे गये सांद्रीकरण पर घोल नहीं पहुँच जाये। इसको ही विपरीत परासरण क्रिया कहा जाता है।

इस विधि के आधार पर ताजे फल-रस का प्रयोग कर उसमें से जल को अलग कर चाही गई ब्रिक्स डिग्री (40 से 70) पर पहुँचाकर सांद्रीकरण किया जाता है।

यह विधि सर्वप्रथम समुद्री जल से पीने का जल बनाने के लिए सन् 1970 में सोरिया राजन् ने प्रस्तुत की थी, जो आज पेय जल-समस्या को हल करने के लिए उपयुक्त मानी जा रही है।

आज विश्व के विभिन्न देशो में विपरीत परासरण क्रिया से फल तथा तरकारी-रसों के सांद्रीकरण के लिए उपयुक्त विधियों का अनुसन्धान चल रहा है। भारत भी इस विशेष परिरक्षण प्रणाली में पीछे नही है। सन् 1974 में रूसमणी तथा साथियों ने विपरीत परासरण प्रणाली खाद्य-पदार्थों मे किस प्रकार उपयुक्त हो सकेगी, इसके सम्बन्ध में केन्द्रीय खाद्य प्रौद्योगिक अनुसन्धान शाला मे अध्ययन कर बताया कि फल-रसो को इस विधि द्वारा सांद्रीकरण कराया जा सकता है। फलस्वरूप ऊष्मोपचार द्वारा सांद्रीकरण करने मे होने वाले खर्च को भी कम किया जा सकेगा। इसके लिए रस निकालने के उपस्करो तथा यन्त्रों के अलावा विपरीत परासरण क्रिया सम्पन्न कराने वाली हाइड्रोलिक प्रैश युक्त रिवर्ज ओसमोसिस कॉन्सनट्रेटर की आवश्यकता होती है।

टमाटर तथा टमाटर उत्पाद

(Tomatoes and Tomato Products)

सब्जियों में सर्वाधिक परिरक्षण तथा कैनीकरण टमाटर तथा उनके उत्पादों का किया जाता है। सन् 1980 तक 5629 मैट्रिक टन टमाटर उत्पाद तैयार हुआ था। इसमें अधिकांश सांद्रीकृत उत्पादों का कैनीकरण तथा बोतलीकरण किया जाता है। टमाटर आरोग्य-प्रद है। तरकारी उत्पादन मे आलू तथा शकरकन्द के बाद टमाटर का विश्व में तीसरा स्थान है। इसका अन्य सब्जियो की अपेक्षा अधिक कैनीकरण किया जाता है। टमाटर में अधिक स्फूर्तिदायक, पाचनकारक गुणों के अलावा औषधि-गुण भी पाये जाते हैं। टमाटर का गूदा तथा रस शीघ्र पाचनकारी है। साथ ही आमाशय-रस का भी उद्दीपन करता है, रक्त शुद्धिकरण कर आमाशय को साफ रखता है। विशेषकर आमाशय मे फसे विष को बाहर निकालकर टमाटर हमें नीरोग बना देता है। मुँह में होने वाले छाले जैसी व्याधि के लिए भी यह एक औषधि है। यूरिक अम्ल के रोगियों को छोड़कर करीब-करीब सभी के लिए यह उपयोगी है।

यूरोप तथा अमेरिका में ऊपर का दूध पीने वाले शिशुओं को सन्तरा रस के बजाय टमाटर का रस पिलाया जाता है, जो शिशु को सन्तरा-रस के बराबर ही नीरोग रखने में सहायक होता है।

भारत में टमाटर शीत-ऋतु तथा ग्रीष्म-ऋतु में बोये जाते हैं, परन्तु शीत-ऋतु के टमाटर ग्रीष्म-ऋतु के टमाटरों से अधिक उत्तम हैं, क्योंकि उनमें अधिक ठोस पदार्थ पाया जाता है। भारत में मुख्यतया टमाटर की दो किस्में बोई जाती हैं, वे हैं—गोलाकार बड़े टमाटर तथा अण्डाकार छोटे टमाटर। उपर्युक्त दोनों किस्में—अधिक ठोस पदार्थ वाले तथा रस वाले सुर्ख टमाटर—सांद्रीकरण के लिए उपयुक्त होती हैं।

मूर्ति तथा साथियों (1978) ने 10 विभिन्न किस्मों के टमाटरों का कैचप बनाकर अध्ययन किया कि कौनसी किस्म, कैचप के लिए अधिक उपयुक्त है। उनके अनुसार उपयुक्त किस्में हैं—पंजाब केशरी, पूसा, रूबी, केकुत अगेती, सलेक्शन-12, सलेक्शन-120, पंजाब छुंवारा, ग्रोस्टन किस्सकी, पंजाब ट्रोपिक कोल्डस्ट तथा क्रोस वराइटी (एच० एस० 110 × डब्लू वी 700) × (एच०एस० 110 पंजाब केशरी)।

कैचप उत्पादन के लिए केकुत अगेती सबसे उत्तम पाया गया। द्वितीय नम्बर पूसा रूबी तथा क्रोस वराइटी (एच० एस० 110 × डब्लू वी 700) × (एच० एस० 110 × पंजाब केशरी) तथा उसके बाद सलेक्शन-12 यथाक्रम रहा। संचयन के उपरान्त पंजाब छुंवारा, पूसा रूबी तथा सलेक्शन-12 इत्यादि वर्ण तथा सम्पूर्ण गुणों के लिए उत्तम पाये गये।

टमाटर जब परिपक्व नहीं होता, तब हरे रंग का होता है। धीरे-धीरे पीलापन लिए सफेद होते हुए पूर्ण विकसित होते ही वे पीले हो जाते हैं। पीला वर्ण टमाटर में करोटिन उत्पन्न होने के कारण होता है, जो वांछनीय है। परन्तु गहरा लाल होते ही टमाटर के गुण में सम्पूर्णता आ जाती है। लाल वर्ण लिकोमिन की वजह से होता है।

टमाटर से टमाटर-शोरवा (टमाटर प्युअरए (Puree), टमाटर लेई (टमाटो पेस्ट Tomatos Paste), टमाटो कैचप, सॉस, टमाटो सूप, चटनी इत्यादि बनाये जाते हैं। यहाँ टमाटर सांद्रीकरण की ही चर्चा की जायेगी, अन्य उत्पादों के बारे में अन्यत्र चर्चा की जा चुकी है।

1–टमाटर प्युअरए (Tomato Puree)

इसके लिए टमाटर का गूदा-युक्त रस ऊष्म-विधि से निकाला जाता है, जो अन्यत्र चर्चित है। इसके लिए अधिक गूदे तथा कम रस वाले किस्म के टमाटर को चुनना चाहिए। इस प्रकार प्राप्त रस-युक्त गूदे में नमक मिलाकर या बिना मिलाये ऊष्मोपचार द्वारा सांद्रीकरण कर प्राप्त उत्पाद 10·7 से 25 प्रतिशत घन-पदार्थ हो तो इन्हें टमाटर शोरवा या टमाटो प्युअरए कहते हैं। 10·7 से 12 प्रतिशत घन-पदार्थ युक्त शोरबे को मध्यम श्रेणी शोरवा तथा 12 से 25 प्रतिशत घन-पदार्थ युक्त शोरबे को ठोस टमाटर शोरवा कहा जाता है। यह पदार्थ विशेष रूप से पश्चिमी देशवासियों का एक प्रमुख खाद्य पदार्थ है।

2–टमाटो पेस्ट (Tomato Paste)

टमाटर शोरवा को आगे और सांद्रीकरण किया जाय तो टमाटर लेई प्राप्त होगी इसमें कम से कम 26 से 33 प्रतिशत घन-पदार्थ होना चाहिए। टमाटो पेस्ट इटलीवासियों का एक प्रमुख आहार है। भारतीय टमाटरों से बना पेस्ट वहाँ सर्वाधिक लोकप्रिय है, परन्तु इसका उत्पादन आज भी भारत में नगण्य है, क्योंकि इसके उत्पादन के लिए विशेष सांद्रीकरणियों की आवश्यकता होती है, जो भारत में प्राप्त नहीं हैं। प्रयोगशाला स्तर के

एक सांद्रीकरण का विदेश से आयात किया गया है, जिसका केन्द्रीय खाद्य प्रौद्योगिक अनुसंधान संस्थान, मैसूर में प्रयोग किया जाता है। इसके अलावा व्यावसायिक स्तर पर कुछ बडे कारखानों में काम में लिया जाता है, जो विदेशों की मांगों को पूरा नहीं कर पाता।

3–टमाटो कैचप (Tomato Ketchup)

आज सारे विश्व मे, विशेषकर भारत में, फलपेयो की भाँति टमाटो कैचप का सर्वाधिक प्रचार है। गूदायुक्त टमाटर के रस को सांद्रीकरण करने से 25 प्रतिशत कुल घुलनशील घन-पदार्थ कम से कम पाया जाना चाहिए। इसमे चाही गई अम्लता 1·2 प्रतिशत है।

यह पदार्थ भी सांद्रीकृत टमाटो प्युमरए या पेस्ट इत्यादि को पुनः तैयार कर उसमें चाही गई मात्रा मे मसाले तथा गर्म मसाले, शर्करा, नमक तथा सिरका (या तत्‌तुल्य मात्रा में एसिटिक अम्ल) मिलाकर तैयार कर बोतलों में भरकर परिरक्षण किया जाता है।

4–टमाटो सॉस (Tomato Sauce)

टमाटो सॉस भी टमाटो कैचप की भाँति तैयार किया जाता है। कैचप में 25 से 30 प्रतिशत तक कुल घुलनशील घन-पदार्थ होना अनिवार्य है, जबकि टमाटो सॉस मे 16 से 24 प्रतिशत काफी है। कहने का तात्पर्य है कि टमाटो सॉस, कैचप की भाँति गाढ़ा नही होगा। गिरधारीलाल तथा साथियों (1959) ने इसमें मिलाये जाने वाले मसाले तथा गर्म मसालों में भी थोड़ा-बहुत अन्तर दिखाया है।

5–टमाटो सूप (Tomato Soup)

टमाटो सूप एक पाचनकारी पदार्थ के रूप में मुख्य आहार के पहले या बाद में लिया जाता है। इसके लिए पहले गूदायुक्त रस निकालकर उसमें मक्खन, अरारोट का आटा या तत्‌तुल्य अन्य पदार्थ मिलाकर गाढा किया जाता है ताकि उसमे कम से कम कुल घुलनशील घन-पदार्थ 7 प्रतिशत रहे। इसमें मसाले तथा गर्म मसाले मिलाकर तैयार किया जाता है, जिसकी अन्य उत्पादो की भाँति आगे चर्चा की जायेगी। इसके अलावा कुछ अन्य उत्पाद भी टमाटर से बनाये जाते हैं, वे हैं—हॉट टमाटो सॉस (चरपरा टमाटर सॉस), टमाटो चिली सॉस (टमाटर मसाला सॉस), चटनी इत्यादि। इसमे चटनी को छोड़कर अन्य सॉस को भारत में टमाटो कैचप, टमाटो सॉस की भाँति उतना प्रचार नही मिला है। चटनी तो भारत की ही देन है, जो विदेशो द्वारा अपनाई गई है।

टमाटर के अलावा कुकुरमुत्ता, आम, सेब, करौंदे, आंवले इत्यादि से भी सांद्रीकृत उत्पाद बनाये जाते हैं। इनके बारे मे टमाटर उत्पादों की चर्चा के बाद इस अध्याय मे ही चर्चा की जायेगी।

टमाटर सांद्रीकरण तथा उसका संसाधन

तप्त विधि से निकाले गये गूदायुक्त टमाटर-रस का औसतन कुल घन-पदार्थ 5·66 प्रतिशत होगा, अगर उसका तापमान उस समय 68° फारनहीट हो। इस रस का आपेक्षिक गुरुत्व (Specific gravity) उस समय 1·0240 होगा। कुल घन-पदार्थ का प्रतिशत विभिन्न विधियों से मालूम किया जा सकता है, जैसे—एक निश्चित तोल के रस को ओवन (Oven) मे सुखाकर, रिफैक्ट्रोमीटर की सहायता से तथा हाइड्रोमीटर द्वारा उसका

आपेक्षिक गुरुत्व (Specific gravity) मालूम करके। साधारणतया आपेक्षिक गुरुत्व-विधि संतोषजनक मानी जाती है। एक मोटे कपड़े की सहायता से रस को छानकर, छने हुए रस का आपेक्षिक गुरुत्व एक हाइड्रोमीटर की सहायता से मालूम किया जाता है, रस का तापमान 68° फारनहीट होना चाहिए। इसके अलावा छानने के पूर्व भी उसका आपेक्षिक गुरुत्व अवश्य मालूम किया जाता है। अगर आपेक्षिक गुरुत्व मालूम करते समय, रस का तापमान 68° फारनहीट से भिन्न हो तो ताप-शोधन की आवश्यकता होगी। इसके अनुसार मानकीकृत सारणी के आधार पर आपेक्षिक गुरुत्व तथा घन-पदार्थ का प्रतिशत, दोनों के आपसी सम्बन्ध के आधार पर कुल घन-पदार्थ का प्रतिशत निर्धारित किया जाता है। इसके लिए सारणी स० 1 (टमाटो पल्प), नं० 2 (टमाटो पेस्ट), नं० 3 (टमाटो कैचप) तथा ताप-शोधन के लिए सारणी स० 4, 5 एवं सारणी सं० 6 का अलग-अलग सांद्रीकरण डिग्रियों के टमाटो पल्प के परिमाण मालूम करने के लिए अवलोकन करें।

टमाटर-रस का विश्लेषण

उच्चकोटि के टमाटर उत्पादों के लिए एक कारखाने में हमेशा मानकीकृत टमाटर रस का प्रयोग करना चाहिए। इसके लिए वहाँ समय-समय पर प्राप्त टमाटर का विश्लेषण कर कमी दूर कर देनी चाहिए, क्योंकि हमेशा एक ही किस्म के टमाटर को काम में लेते हुए भी समय-समय पर प्राप्त रस में मामूली-सा अन्तर आ सकता है। फलस्वरूप अगर मानकीकृत नहीं किया जाता तो प्राप्त उत्पाद एक-समान (स्वाद इत्यादि) नहीं रहेगा। इसलिए रस का विश्लेषण व्यावसायिक स्तर पर अत्यावश्यक हो जाता है।

लालसिंह एवं गिरधारीलाल (1944) ने भारतीय विपणी से प्राप्त 6 भिन्न-भिन्न टमाटर रस का विश्लेषण किया, जिनमे दो भारतीय निर्माताओं तथा चार विदेशी निर्माताओं के थे। इनके विश्लेषण के आँकड़े निम्न सारणी में दिये जा रहे हैं।

सारणी–7

निर्मित देश	रस का आपेक्षिक गुरुत्व (68° एफ)	निष्पंद रस का आपेक्षिक गुरुत्व (68° एफ)	रस मे रहे घन-पदार्थ का प्रतिशत	100 सीसी रस मे रहे लवण सोडियम क्लोराइड के रूप में	100 सीसी रस में रहे कुल अम्ल, मलिक अम्ल के रूप में
भारतीय–1	1·0387	1 036	9·27	1 74	0 59
„ 2	1·0292	1·027	6·95.	1·11	0·56
विदेशी–1	1·0240	1·022	5·66	0·89	0·38
„ 2	1·0240	1·022	5·66	0·79	0·36
„ 3	1 0334	1 031	7·99	0·84	0·49
„ 4	1·0250	1·023	5·91	0·82	0 38

लालसिंह गिरधारीलाल 1944

परिरक्षण के आरम्भ-काल में टमाटर के गूदायुक्त रस को सांद्रीकरण के लिए काष्ठ से बनी पाचकीकरणी अथवा रांगा-लेपित ताम्र से बनी पाचकीरणी काम में ली जाती रहीं। काष्ठ से बने बर्तनों में शक्तियुक्त वाष्प वाली नलियों की सहायता से टमाटर का पाचकीकरण किया जाता था, आज भी ताम्र से ही नहीं, अपितु पीतल से बने बतनो को उचित चूल्हे मे रखकर सांद्रीकरण करने की प्रथा प्रचलित है। परन्तु यह विशेषता घरेलू स्तर पर ही काम मे ली जाती है। उपर्युक्त बर्तनों मे सांद्रीकरण करने से कुछ खराबियाँ पाई गई, फलस्वरूप आज के लिए एल्युमीनियम या स्टेनलैसस्टील से बने बर्तन अधिक उपयुक्त माने जाते है।

छोटे-मोटे व्यवसायी टमाटर को सांद्रीकृत करने के लिए स्टीम जैकेटेट केतली, जो जैम, जैली इत्यादि बनाने के लिए काम आती है, को काम में लेते हैं। इस पाचकीकरणी को खुली पाचकीकरणी (टॉप ओपन कुकर) कहा जाता है। आवश्यकतानुसार 20 लीटर से 500 लीटर क्षमता वाली स्टीम जैकेटेट केतली भी आज भारत के विभिन्न कारखानो में काम मे ली जा रही है। इनका अपने देश में ही निर्माण किया जाता है। विकसित देशो मे उपर्युक्त क्षमता से कहीं अधिक क्षमता वाली केतलियाँ प्रचलित हैं। इन केतलियो का पैंदा तथा मुँह चौड़ा होने के कारण इनमे अधिक ऊष्मा ग्रहण करने के साथ-साथ वाष्पीकरण क्षमता भी अधिक होती है। इन केतलियों मे भाप-युक्त नलियाँ या तो उसके पैंदे पर बीच मे लगी हुई होती हैं या उसकी दीवारो के चारो तरफ भाप पहुँचाने के योग्य रूप मे रूपांकन की हुई होती हैं। बीच मे लगी हुई भाप-युक्त नलियों का व्यास 7.5 सेन्टीमीटर होता है तथा 1800 लीटर क्षमता वाली केतली हो तो, उसमे भरा हुआ रस 35 से 45 मिनट मे उचित रूप से ऊष्मोपचार करने पर आधा रह जायेगा।

खुली पाचकीकरणियों में दो प्रकार से सांद्रीकरण किया जा सकता है। टमाटर रस केतलियों मे उतना ही डालते हैं, जितना भरने से उसकी भाप-युक्त नलियाँ डूब जायें। रस भरने के पहले केतली में तथा उसकी भाप-युक्त नलियो में स्नेह-लेपन किया जाता है ताकि टमाटर रस उबलकर बाहर न निकल आय तथा विटामिन 'सी' का नाश भी न हो सके। इसके लिये साधारणतया मक्खन, वनस्पति घी या काकडे का तेल काम में लिया जाता है। इसके लिए बर्तनों में रस भरने के पूर्व तथा पश्चात् जैली पाचकीकरणी की भाँति टमाटर के रस के ऊपर भी मामूली तेल डाल दिया जाता है। कुछ व्यवसायी रस उबलकर बाहर आने से रोकने के लिए सिलिकोन का प्रयोग भी करते है।

दूसरी विधि से सांद्रीकरण के लिए थोडी मात्रा मे रस डालकर सांद्रीकरण करते रहते हैं. उसके अनुसार पुनः रस डालकर सांद्रीकरण क्रिया चालू रखते हैं। इस क्रिया से केतली की क्षमता के अनुसार सांद्रीकरण सम्पन्न कराते हैं, अर्थात् यदि एक केतली की क्षमता 100 लीटर है तो उसमें पहले 9 लीटर रस डालकर सांद्रीकरण करते हैं, जब रस 3 लीटर हो जाये तब पुनः 9 लीटर रस डाल दिया जाता है तथा जब कुल सांद्रीकृत रस 6 लीटर हो जाये तो उसमे पुनः 9 लीटर रस डालकर क्रमशः सांद्रीकरण चालू रखते हैं। इसी प्रकार जब 100 लीटर रस को उस केतली में डालकर 33-33 रह जाये तब, कैचप के लिए हो तो तब चाहे गए कुल घुलनशील पदार्थ का परिरक्षण किया जाता है। इसी प्रकार रस को थोड़ी-थोड़ी मात्रा में चाहे गये गाढ़ेपन में पहुँचाकर पुनः ताजा रस डालकर गाढ़ा बनाते जाते हैं, जब तक केतली की क्षमता के अनुसार सांद्रीकरण किया जा सके।

रिक्तक पाचकीकरणी (वैक्यूम कुकर) Vaccum Cooker

यह स्टेनलैसस्टील से बनी दो विशेष नलियां हैं, जो चारों तरफ से दूसरी भाप-युक्त नलियो से ढकी हुई होती हैं। इस प्रकार की पाचकीकरणी चाही गई क्षमता वाली प्राप्त की जा सकती है। इनमे कुछ पाचकीकरणी वायु-दबाव से काम करती हैं, तो कुछ अन्य रिक्तकावस्था से। इन पाचकीकरणियो की भाप-युक्त नलियाँ बॉयलर से आने वाली भाप-नलियो मे जुड़ी हुई होती हैं। आवश्यकतानुसार भाप को पाचकीकरणी में पहुँचाने के लिए उपयुक्त विधि से रूपांकित की हुई होती है। भाप से गर्म होने वाली इस पाचकीकरणी की प्रथम नली के भीतर टमाटर-रस पहुँचा दिया जाता है, तब भापोपचार के कारण नलियो मे रस उबलने लगता है। यह रस उबलते-उबलते ऊपर से नीचे की ओर बहने लगता है, फलस्वरूप नलियों के ऊष्मोपचार के कारण सांद्रीकृत होकर नीचे आता है, वहाँ से दूसरे पम्प द्वारा रस को पुनः द्वितीय नली के ऊपर पहुँचा दिया जाता है और भापोपचार के कारण नलियों में टमाटर पुनः उबलकर सांद्रीकृत हो जाता है। दोनों नलियों में बहने वाले टमाटर के रस के वेग को कम करने से अधिक सांद्रीकृत और वेग बढ़ाने से कम सांद्रीकृत टमाटर-रस प्राप्त हो जायेगा। जिस प्रकार चक्की से निकलने वाले आटे को देखकर परखा जाता है, उसी प्रकार प्रथम बार मिले सांद्रीकृत टमाटर का विश्लेषण करके भी इस क्रिया को मालूम किया जाता है। इसलिए चाहे गये सांद्रीकरण पर प्राप्त होने के योग्य अवस्था में इन पाचकीकरणियों को चलाने तथा नियन्त्रित करने के अनुरूप रूपांकित किया हुआ होता है। इस यन्त्र की एक विशेषता यह है कि इसमें क्वथनांक से कम तापमान मे भी पाचकीकरण किया जा सकेगा, अर्थात् टमाटर का रस 100° से० से अधिक तापमान पर उबलता है तो उपर्युक्त पाचकीकरणी में 71° से० मे भी उबलेगा, फलस्वरूप सांद्रीकृत हो जायेगा। इसकी एक श्रेष्ठता यह भी है कि यह कम ताप-प्रयोग के कारण अन्य फल तरकारी-रसों की भाँति टमाटर-रस की भी सुगन्ध, वर्ण तथा विटामिन 'सी' के उत्पाद में रोके रखने में सहायक होती है। विटामिन-'सी' का नाश वायु के अभाव से नही होता, क्योकि जहाँ वायु सम्पर्क से पाचकीकरण होता है, वहाँ ऑक्सीकरण भी अनिवार्य है। जहाँ ऑक्सीकरण होगा वहाँ विटामिन 'सी' का नाश भी स्वाभाविक है।

टमाटर का रस गूदा-युक्त जब चाहे गये समापन बिन्दु पर पहुँच जाता है, तब पाचकीकरणी की रिक्तावस्था भंग कराकर तापमान को 100° से० पर पहुँचाकर 10 मिनट ऊष्मोपचार कर लेने से उत्पाद निर्जर्मीकृत हो जाता है।

समाप्त बिन्दु (End point) या समापन बिन्दु

समाप्त बिन्दु, चाहे गये सांद्रीकरण के आधार पर भिन्न-भिन्न रहेगा। साधारणतया टमाटर के गूदायुक्त रस का $\frac{2}{3}$ भाग ऊष्मोपचार और वाष्पीकरण द्वारा कम कर दिया जाता है और $\frac{1}{3}$ भाग शेष रहता है। इस समय काम में लिये गये गूदा-युक्त रस मे पाये गये घन-पदार्थ के अनुपात मे कुल घन-पदार्थ भी बढ़ जायेगा। इसके लिए यदि पाचकीकरणी मे, विशेषकर भाप-युक्त केतलियो मे, अंशांकन किया हुआ होगा तो किसी प्रकार की कठिनाई नहीं होगी। प्रारम्भ में केतलियो में डाला गया रस 900 लीटर हो और सांद्रीकरण के पश्चात् यदि टमाटर-उत्पाद केतली के नीचे जहाँ 300 लीटर अंकित है, वहाँ पहुँच जाये तो समझ लेना चाहिए कि उत्पाद समाप्त-बिन्दु पर पहुँच गया है।

सन्दर्भ सारणी–1

टमाटर गूदा (Tomato pulp)

कुल घन-पदार्थ 70° सेंटीग्रेड पर	आपेक्षिक गुरुत्व	रिफ्रैक्ट्रोमीटर		निष्यंद का आपेक्षिक गुरुत्व (20° से० पर)
		अपवर्तनांक	ब्रिक्स मान	
1	2	3	4	5
4.0	1.0162	1.3384	3.7	1.0150
4.1	1.0166	1.3386	3.8	1.0154
4 2	1.0171	1.3387	3.9	1.0158
4.3	1 0175	1 3388	4.0	1 0162
4 4	1.0179	1.3390	4 1	1.0166
4 5	1.0183	1.3391	4.2	1 0170
4 6	1.0188	1.3393	4.3	1 0174
4.7	1.0192	1.3394	4.4	1 0178
4.8	1.0196	1.3396	4.5	1 0182
4 9	1.0200	1.3397	4.6	1 0186
5.0	1.0205	1.3398	4 7	1.0190
5.1	1 0209	1 3400	4.8	1.0194
5 2	1 0213	1.3401	4.9	1.0198
5.3	1 0217	1 3402	5.0	1 0202
5.4	1.0222	1.3404	5.1	1 0207
5.5	1.0226	1.3405	5 2	1 0211
5.6	1.0230	1.3407	5 3	1 0215
5.7	1 0234	1.3408	5 4	1 0219
5 8	1.0239	1.3409	5 5	1.0223
5.9	1.0243	1.3411	5 5	1.0227
6.0	1.0247	1.3412	5 6	1.0231
6.1	1.0255	1.3414	5 7	1.0235
6 2	1.0256	1.3415	5 8	1 0239
6 3	1.0260	1 3416	5.9	1 0243
6.4	1.0264	1.3418	6 0	1 0247
6.5	1.0268	1 3419	6.1	1.0251
6.6	1.0273	1 3420	6 2	1 0255
6.7	1.0277	1.3422	6 3	1.0259
6.8	1 0281	1 3423	6 4	1.0263
6 9	1.0285	1.3425	6.5	1.0267
7.0	1.0290	1.3426	6 6	1.0271
7.1	1.0294	1.3427	6.6	1 0275
7.2	1.0298	1.3429	6.7	1.0279
7.3	1 0302	1.3430	6.8	1 0283

1	2	3	4	5
7.4	1.0307	1.3432	6.9	1.0287
7.5	1.0311	1.3433	7.0	1.0291
7.6	1.0315	1.3434	7.1	1.0295
7.7	1.0319	1.3436	7.2	1.0299
7.8	1.0324	1.3437	7.3	1.0303
7.9	1.0328	1.3439	7.4	1.0307
8.0	1.0332	1.3440	7.5	1.0311
8.1	1.0336	1.3441	7.6	1.0315
8.2	1.0341	1.3443	7.7	1.0319
8.3	1.0345	1.3444	7.8	1.0323
8.4	1.0349	1.3445	7.9	1.0327
8.5	1.0353	1.3447	7.9	1.0331
8.6	1.0358	1.3448	8.0	1.0335
8.7	1.0362	1.3450	8.1	1.0339
8.8	1.0366	1.3451	8.2	1.0343
8.9	1.0370	1.3452	8.3	1.0347
9.0	1.0375	1.3454	8.4	1.0351
9.1	1.0379	1.3455	8.5	1.0355
9.2	1.0383	1.3456	8.6	1.0359
9.3	1.0387	1.3458	8.7	1.0363
9.4	1.0392	1.3459	8.8	1.0367
9.5	1.0396	1.3461	8.9	1.0371
9.6	1.0400	1.3462	9.0	1.0375
9.7	1.0404	1.3463	9.1	1.0379
9.8	1.0409	1.3465	9.2	1.0383
9.9	1.0413	1.3466	9.3	1.0387
10.0	1.0417	1.3468	9.3	1.0391
10.1	1.0421	1.3469	9.4	1.0395
10.2	1.0426	1.3470	9.5	1.0399
10.3	1.0430	1.3472	9.6	1.0403
10.4	1.0434	1.3473	9.7	1.0407
10.5	1.0438	1.3475	9.7	1.0411
10.6	1.0443	1.3476	9.8	1.0415
10.7	1.0447	1.3477	9.9	1.0419
10.8	1.0451	1.3479	10.0	1.0423
10.9	1.0455	1.3480	10.1	1.0428

1	2	3	4	5
11.0	1.0460	1.3481	10.2	1.0432
11.1	1.0464	1.3483	10.3	1.0436
11.2	1.0468	1.3484	10.4	1.0440
11.3	1.0472	1.3486	10.5	1.0444
11.4	1.0477	1.3487	10.6	1.0448
11.5	1.0481	1.3488	10.7	1.0452
11.6	1.0485	1.3490	10.7	1.0456
11.7	1.0489	1.3491	10.8	1.0460
11.8	1.0494	1.3493	10.9	1.0464
11.9	1.0498	1.3494	10.0	1.0468
12.0	1.0502	1.3495	11.1	1.0472
12.1	1.0507	1.3406	11.2	—
12.2	1.0511	1.3498	11.3	—
12.3	1.0515	1.3500	11.4	—
12.4	1.0520	1.3501	11.5	—
12.5	1.0524	1.3502	11.6	—
12.6	1.0529	1.3504	11.6	—
12.7	1.0533	1.3505	11.7	—
12.8	1.0537	1.3506	11.8	—
12.9	1.0542	1.3508	11.9	—
13.0	1.0546	1.3509	12.0	—
13.1	1.0551	1.3511	12.1	—
13.2	1.0555	1.3512	12.2	—
13.3	1.0559	1.3514	12.3	—
13.4	1.0564	1.3515	12.4	—
13.5	1.0568	1.3516	12.5	—
13.6	1.0573	1.3518	12.6	—
13.7	1.0577	1.3519	12.7	—
13.8	1.0582	1.3520	12.7	—
13.9	1.0586	1.3522	12.8	—
14.0	1.0591	1.3523	12.9	—
14.1	1.0595	1.3525	13.0	—
14.2	1.0599	1.3525	13.1	—
14.3	1.0604	1.3528	13.2	—
14.4	1.0608	1.3529	13.3	—
14.5	1.0613	1.3531	13.4	—
14.6	1.0617	1.3532	13.5	—
14.7	1.0621	1.3534	13.5	—
14.8	1.0626	1.3535	13.6	—
14.9	1.0630	1.3537	13.7	—

1	2	3	4	5
15.0	1.0635	1.3538	13.8	—
15.1	1.0639	1.3540	13.9	—
15.2	1.0644	1.3541	14.0	—
15.3	1.0648	1.3543	14.1	—
15.4	1.0652	1.3544	14.2	—
15.5	1.0657	1.3545	14.3	—
15.6	1.0661	1.3547	14.4	—
15.7	1.0666	1.3548	14.5	—
15.8	1.0670	1.3550	14.5	—
15.9	1.0675	1.3551	14.6	—
16.0	1.0679	1.3553	14.7	—
16.1	1.0683	1.3554	14.8	—
16.2	1.0688	1.3556	14.9	—
16.3	1.0692	1.3557	15.0	—
16.4	1.0697	1.3559	15.1	—
16.5	1.0701	1.3560	15.2	—
16.6	1.0706	1.3562	15.3	—
16.7	1.0710	1.3 63	15.4	—
16.8	1.0714	1.3565	15.5	—
16.9	1.0719	1.3566	15.5	—
17.0	1.0723	1.3566	15.6	—
17.1	1.0728	1.3569	15.7	—
17.2	1.0732	1.3570	15.8	—
17.3	1.0737	1.3578	15.9	—
17.4	1.0741	1.3573	16.0	—
17.5	1.0745	1.3575	16.1	—
17.6	1.0750	1.3576	16.2	—
17.7	1.0754	1.3578	16.3	—
17.8	1.0759	1.3579	16.4	—
17.9	1.0763	1.3581	16.5	—
18.0	1.0768	1.3582	16.5	—
18.1	1.0772	1.3584	16.6	—
18.2	1.0776	1.3585	16.7	—
18.3	1.0781	1.3587	16.8	—
18.4	1.0785	1.3588	16.9	—
18.5	1.0790	1.3589	17.0	—
18.6	1.0794	1.3591	17.1	—
18.7	1.0798	1.3592	17.2	—
18.8	1.0803	1.3594	17.3	—
18.9	1.0807	1.3595	17.4	—

1	2	3	4	5
19 0	1.0812	1 3597	17.5	—
19 1	1.0816	1.3598	17 5	—
19 2	1.0821	1 3600	17.6	—
19.3	1.0825	1.3601	17.7	—
19 4	1 0829	1.3603	17 8	—
19.5	1.0836	1 3604	17.9	—
19 6	1.0838	1.3606	18.0	—
19 7	1.0843	1.3607	18 1	—
19.8	1.0847	1 3608	18.2	—
19.9	1 0852	1.3610	18.3	—
20.0	1.0856	1 3611	18.4	—

सन्दर्भ सारणी-2

टोमैटो पेस्ट

कुल घन पदार्थ 70° से० पर	रिफ्रैक्ट्रोमीटर 20° से० पर		आपेक्षिक गुरुत्व 20° से० पर
20.0	1.3611	18.4	1.0856
20 1	1 3613	18.5	1 0860
20.2	1.3614	18.6	1.0865
20 3	1 3616	18.7	1.0869
20.4	1 3617	18.7	1.0873
20.5	1 3619	18 8	1.0878
20.6	1.3620	18.9	1 0882
20 7	1 3622	19 0	1 0886
20.8	1 3624	19.1	1.0891
20.9	1.3625	19.2	1.0895
21.0	1.3627	19 3	1.0899
21.1	1 3628	19 4	1.0904
21.2	1.3630	19.5	1 0908
21.3	1 3632	19.6	1.0912
21.4	1 3633	19.7	1.0916
21.5	1 3635	19 8	1.0921
21.6	1 3636	19 9	1.0925
21.7	1.3638	20.1	1 0930

1	2	3	4
21.8	1 3639	20.1	1 0934
21 9	1 3641	20 [illegible]	1.0938
22 0	1 3643	20 2	1.0943
22.1	1 3644	20.3	1.0947
22 2	1 3646	20.4	1 0951
22 3	1 3647	20 5	1 0956
22.4	1 3649	20 6	1.0960
22 5	1 3651	20 7	1.0965
22 6	1.3652	20 8	1.0969
22 7	1 3654	20.9	1.0973
22 8	1 3655	21.0	1.0978
22.9	1 3657	21.1	1.0982
23 0	1.3658	21.2	1.0986
23 1	1 3660	21 3	1.0991
23 2	1.3 62	21.4	1.0995
23 3	1 3663	21 5	1 0999
23.4	1 3665	21.6	1.1004
23 5	1 3666	21 7	1.1008
23 6	1 3668	21.7	1.1012
23 7	1.3669	21.8	1.1017
23 8	1 3671	21 9	1.1021
23.9	1 3673	22.0	1.1025
24 0	1 3674	22 1	1.1030
24.1	1.3676	22 2	1.1034
24 2	1.3677	22.3	1.1038
24 3	1 3679	22.4	1.1043
24.4	1.3681	22.5	1.1047
24 5	1.3682	22.6	1.1051
24.6	1 3684	22.7	1.1056
24.7	1.3685	22.8	1.1060
24 8	1 3687	22 9	1.1064
24 9	1.3688	23 0	1.1069
25 0	1.3690	23.1	1.1073
25.1	1.3692	23.2	1.1077
25.2	1.3693	23.3	1.1082

1	2	3	4
25.3	1.3695	23.3	1.1086
25.4	1.3697	23 4	1.1090
25 5	1.3698	23.5	1.1095
25.6	1.3700	23 6	1.1099
25.7	1 3701	23.7	1.1103
25 8	1.3703	23.8	1.1108
25.9	1.3705	23.9	1.1112
26.0	1.3706	24.0	1.1116
26 1	1.3708	24 1	1.1121
26 2	1.3710	24.2	1.1125
26.3	1 3711	24 3	1.1129
26.4	1.3713	24.4	1.1134
26 5	1.3715	24 5	1.1138
26 6	1 3716	24.6	1.1142
26.7	1.3718	24.7	1.1147
26 8	1.3720	24.8	1.1151
26 9	1.3721	24.9	1.1155
27 0	1 3723	25.0	1.1160
27.1	1.3724	25.1	1.1164
27.2	1.3726	25.1	1.1168
27.3	1.3728	25.2	1.1173
27.4	1.3729	25.3	1.1177
27.5	1.3731	25.4	1.1182
27.6	1.3733	25.5	1.1186
27.7	1.3734	25.6	1.1190
27 8	1.3736	25 7	1.1195
27.9	1.3738	25.8	1.1199
28.0	1.3739	25.9	1.1200
28.1	1.3741	25.0	1.1208
28.2	1 3742	26.1	1.1212
28.3	1.3744	26.2	1.1216
28.4	1 3746	26 3	1.1221
28.5	1.3747	26.4	1.1225
28.6	1.3749	26.5	1.1229
28.7	1.3751	26.6	1.1234

1	2	3	4
28.8	1.3752	26.7	1.1238
28.9	1.3754	26.8	1.1242
29.0	1.3756	26.9	1.1247
29.1	1.3758	26.9	1.1251
29.2	1.3759	27.0	1.1255
29.3	1.3761	27.1	1.1260
29.4	1.3762	27.2	1.1264
29.5	1.3764	27.3	1.1268
29.6	1.3765	27.4	1.1273
29.7	1.3767	27.5	1.1277
29.8	1.3769	27.6	1.1281
29.9	1.3770	27.7	1.1286
30.0	1.3772	27.8	1.1290
30.1	1.3774	27.9	1.1294
30.2	1.3776	28.0	1.1299
30.3	1.3777	28.1	1.1303
30.4	1.3779	28.2	1.1308
30.5	1.3781	28.3	1.1312
30.6	1.3783	28.4	1.1316
30.7	1.3784	28.5	1.1321
30.8	1.3786	28.6	1.1325
30.9	1.3788	28.7	1.1330
31.0	1.3790	28.8	1.1334
31.1	1.3791	28.9	1.1338
31.2	1.3793	29.0	1.1343
31.3	1.3795	29.1	1.1347
31.4	1.3797	29.2	1.1352
31.5	1.3798	29.3	1.1356
31.6	1.3800	29.4	1.1360
31.7	1.3802	29.5	1.1365
31.8	1.3804	29.6	1.1369
31.9	1.3805	29.7	1.1374
32.0	1.3807	29.8	1.1378
32.1	1.3809	29.9	1.1382

1	2	3	4
32.2	1.3811	30.0	1.1387
32.3	1.3812	30.1	1.1391
32.4	1.3814	30.2	1.1396
32.5	1.3816	30.3	1.1400
32.6	1.3818	30.4	1.1404
32.7	1.3820	30.5	1.1409
32.8	1.3823	30.6	1.1413
32.9	1.3823	30.7	1.1418
33.0	1.3825	30.8	1.1422
33.1	1.3827	30.9	1.1426
33.2	1.3828	31.0	1.1431
33.3	1.3830	31.1	1.1435
33.4	1.3832	31.2	1.1440
33.5	1.3834	31.3	1.1444
33.6	1.3835	31.3	1.1448
33.7	1.3837	31.4	1.1453
33.8	1.3839	31.5	1.1457
33.9	1.3841	31.6	1.1461
34.0	1.3842	31.7	1.1466
34.1	1.3844	31.8	1.1470
34.2	1.3846	31.9	1.1475
34.3	1.3848	32.0	1.1479
34.4	1.3849	32.1	1.1484
34.5	1.3851	32.2	1.1388
34.6	1.3853	32.3	1.1492
34.7	1.3855	32.4	1.1497
34.8	1.3856	32.5	1.1501
34.9	1.3858	32.6	1.1506
35.0	1.3860	32.7	1.1510

सन्दर्भ सारणी-3

टमाटो कैचप

घन पदार्थ प्रतिशत में 1	आपेक्षिक गुरुत्व 20° से० पर 2	ऐब रिफ्रैक्ट्रोमीटर पठन 20° से० पर 3
16.0	1.067	1.3557
16.5	1.069	1.3565
17.0	1.072	1.3573
17.5	1.074	1.3582
18.0	1.077	1.3590
18.5	1.079	1.3598
19.0	1.082	1.3606
19.5	1.084	1.3614
20.0	1.087	1.3622
20.5	1 089	1.3631
21.0	1.091	1.3639
21.5	1.094	1.3647
22.0	1.096	1.3655
22 5	1.099	1.3664
23.0	1.101	1.3672
23.5	1.104	1.3681
24.0	1.106	1.3689
24.5	1.109	1.3698
25.0	1.111	1.3706
25.5	1.113	1.3715
26.0	1.116	1.3723
26.5	1.118	1.3732
27.0	1.121	1.3740
27.5	1.123	1.3749
28.0	1.126	1.3758
28.5	1.128	1.3767
29 0	1.131	1.3775
29.5	1.133	1.3784

1	2	3
30.0	1.136	1 3793
30.5	1.138	1.3802
31.0	1.140	1.3811
31.5	1.143	1.3820
32.0	1.145	1.3829
32.5	1.148	1 3838
33.0	1.150	1.3847
33.5	1.153	1.3856
34.0	1 155	1.3865
34 5	1 158	1.3874
35.0	1.160	1.3883
35.5	1.162	1.3893
36.0	1.165	1.3902
36.5	1 167	1 3911
37.0	1.170	1.3920
37.5	1.172	1.3930
38.0	1.175	1.3939
38 5	1.177	1 3949
39 0	1.180	1.3958
39 5	1 182	1.3968
40.0	1.185	1.3978

सारणी–4 (अ)

20° से० के अलावा अन्य तापमानों पर प्राप्त आपेक्षिक एवं ब्रिक्स पठनों का सशोधन।

तापमान		सशोधन		तापमान		संशोधन	
°फा०	°से०	स्पे० ग्रे०	ब्रिक्स	°फा०	°से०	स्पे० ग्रे०	ब्रिक्स
50	10.0	.0017	.38	59	15 0	.0010	.22
51	10.6	.0016	.36	60	15.6	.0009	.20
52	11.1	.0016	.35	61	16.1	.0009	.18
53	11.7	0015	.33	62	16.7	.0008	.16
54	12.2	.0014	.31	63	17.2	.0007	.13
55	12.8	.0014	.30	64	17.8	.0006	.11
56	13.3	.0013	.28	65	18.3	.0004	.08
57	13.9	.0012	.26	66	18.9	.0003	.05
58	14.4	.0014	.24	67	19.4	.0002	.03

आपेक्षिक गुरुत्व एवं ब्रिक्स से संशोधन के लिए घटाना चाहिए।

सारणी–4 (ब)

आपेक्षिक गुरुत्व या ब्रिक्स डिग्री के साथ सशोधित को जोडना है।

तापमान		सशोधन		तापमान		सशोधन	
°फा०	°से०	स्पे० ग्रे०	ब्रिक्स	°फा०	°से०	स्पे० ग्रे०	ब्रिक्स
69	20.6	.0002	.03	79	26.1	.0017	.35
70	21.1	.0003	.05	80	26.7	.0018	.39
71	21.7	.0004	.08	81	27.2	.0019	.42
72	22.2	.0006	.11	82	27.8	.0021	.46
73	22.8	.0007	.15	83	28.3	.0023	.49
74	23.3	.0009	.18	84	28.9	.0024	.54
75	23.9	.0011	.21	85	29.4	.0026	.58
76	24.4	.0012	.24	86	30.0	.0027	.62
77	25.0	.0013	.28	87	30.6	.0029	.66
78	25.6	.0015	.32	88	31.1	.0031	.70

उपर्युक्त ताप सशोधन 20° से० पर मानकीकृत ब्रिक्स उपस्कर के लिए हैं।

सारणी–5 (क)

20° सेंटीग्रेड के अलावा अन्य तापमानों पर प्राप्त रिफ्रैक्ट्रोमीटर पठन का संशोधन

तापमान		अपवर्तनांक पठन						
°C.	°F.	1.3400	1.3500	1.3600	1.3700	1.3800	1.3900	1.4000
				प्राप्त पठन से घटाना है।				
15	59.0	.0004	.0005	.0005	.0006	.0006	.0007	.0007
16	60.8	.0004	.0004	.0004	.0005	.0005	.0005	.0005
17	62.6	.0003	.0003	.0003	.0003	.0004	.0004	.0004
18	54.4	.0002	.0002	.0002	.0002	.0002	.0003	.0003
19	66.2	.0001	.0001	.0001	.0001	.0001	.0001	.0001
				प्राप्त पठन के साथ जोड़ना है।				
21	69.8	.0001	.0001	.0001	.0001	.0001	.0001	.0001
22	71.6	.0002	.0002	.0002	.0002	.0003	.0003	.0003
23	73.4	.0003	.0003	0003	.0004	0004	.0004	.0004
24	75.2	.0004	.0004	.0005	.0005	0005	0006	.0006
25	77.0	.0005	.0005	.0006	.0006	.0007	.0007	0007
26	78.8	.0006	.0006	.0007	.0008	.0008	.0008	.0009
27	80.6	.0007	.0008	.0008	.0009	.0010	.0010	0010
28	82.4	.0008	.0009	0010	.0010	.0011	.0011	.0012
29	84 5	.0010	.0010	.0011	.0012	0012	.0013	0013
30	86.0	.0011	.0012	0012	0013	0014	.0014	0015

सारणी–5 (ख)

20° सेन्टीग्रेड के अलावा अन्य तापमानों पर प्राप्त रिफ्रैक्ट्रोमीटर ब्रिक्स पठन सशोधन।

तापमान		रिफ्रैक्टोमीटर ब्रिक्स पठन						
°C.	°F	5	10	15	20	25	30	35
				पठन से घटाना है				
15	59.0	0.29	0.31	0.33	0.34	0.34	0.35	0.35
16	60.8	.24	.25	.26	.27	.28	.28	.29
17	62.6	.18	.19	.20	.21	.21	.21	.22
18	64.4	.13	.13	.14	.14	.14	.14	.15
19	66.2	.06	.06	.06	.07	.07	.07	.08
				पठन से जोड़ना है				
21	69.8	0.07	0.07	0.07	0.07	0.08	0.08	0.08
22	71.6	.13	.14	.14	.15	.15	.15	.15
23	73.4	.20	.21	.22	.22	.23	.23	.23
24	75.2	.27	.29	.29	.30	.30	.31	.31
25	77.0	.35	.36	.37	.38	.38	.39	.40
26	78.8	.42	.43	.44	.45	.46	.47	.48
27	80.6	.50	.52	.53	.54	.55	.55	.56
28	82.4	.57	.60	.61	.62	.63	.63	.64
29	84 2	.66	.68	.69	.71	.72	.72	.73
30	86 0	.74	.77	.78	.79	.80	.80	.81

सारणी 6

भिन्न-भिन्न [redacted] (डिग्रियों) में सांद्रीकृत टमाटर-गूदे के तत्तुल्य आयतन

सम्पूर्ण टमाटर गूदा		निष्पंद परीक्षण			वे कारक जिनसे कि दिये गये गूद के आपेक्षिक गुरुत्व के आयतन को गुणा करने पर उस आयतन के गुरुत्व को जाना जा सके।			
आपेक्षिक गुरुत्व 20° से० पर	कुल घन पदार्थ प्रतिशत में	रिफ्रैक्ट्रोमीटर पठन 20° से० पर अपवर्तनांक	रिफ्रैक्ट्रोमीटर पठन 20° से० पर ब्रिक्समान	आपेक्षिक गुरुत्व	1.035	1.040	1.045	1.050
1	2	3	4	5	6	7	8	9
1.015	3.7	1.3381	3.5	1.0139	.433	.378	.335	.301
1.016	4.0	1.3384	3.7	1.0048	.460	.402	.357	.320
1.017	4.2	1.3387	3.9	1.0158	.489	.427	.378	.339
1.018	4.4	1.3390	4.1	1.0167	.516	.451	.400	.359
1.019	4.7	1.3394	4.4	1.0177	.545	.476	.422	.378
1.020	4.9	1.3397	4.6	1.0186	.573	.500	.433	.397
1.021	5.1	1.3400	4.8	1.0196	.601	.525	.465	.417
1.022	5.4	1.3403	5.0	1.0205	.629	.549	.487	.437

1	2	3	4	5	6	7	8	9
1.023	5.6	1.3407	5.2	1.0215	.658	.574	.509	.456
1.024	5.8	1.3410	5.5	1.0224	.685	.598	.531	.476
1.025	6.1	1.3413	5.7	1.0233	.714	.623	.553	.496
1.026	6.3	1.3416	5.9	1 0243	.741	.647	575	.516
1.027	6.5	1.3420	6.1	1.0252	.771	.673	.597	.536
1.028	6.8	1.3423	6.3	1.0262	.800	.698	.619	.555
1.029	7.0	1.3426	6.6	1.0271	.827	.722	.641	.575
1.030	7.3	1.3429	6.8	1.0281	.857	.748	.663	.595
1.031	7.5	1.3433	7.0	1.0290	.885	.772	685	.615
1.032	7.7	1.3436	7.2	1.0300	.915	.798	.707	635
1.033	8.0	1.3439	7.4	1.0309	.942	.822	.730	.654
1.034	8.2	1.3442	7.6	1.0318	.972	.848	.752	.674
1.035	8.4	1 3446	7.9	1.0328	1.000	.873	.774	.694
1.036	8.7	1.3449	8.1	1.0337	1.029	.899	.797	.714
1.037	8.9	1.3452	8.3	1.0347	1.058	.924	.819	.735
1.038	9.1	1.3455	8.5	1.0356	1.088	.949	.842	.755

1	2	3	4	5	6	7	8	9
1.039	9.4	1.3459	8.7	1.0366	1.116	.975	.864	.776
1.040	9.6	1.3462	8.9	1.0375	1.145	1.000	.887	.796
1.041	9.8	1.3465	9.1	1.0385	1.174	1.025	.909	.816
1.042	10.1	1.3468	9.4	1.0394	1.204	1.051	.932	.836
1.043	10.3	1.3472	9.6	1.0404	1.232	1.076	.955	.857
1.044	10.5	1.3475	9.8	1.0413	1.262	1.102	.977	.877
1.045	11.8	1.3478	10.0	1.0422	1.292	1.128	1.000	.897
1.046	11.0	1.3481	10.2	1.0432	1.320	1.154	1.023	.918
1.047	11.2	1.3485	10.4	1.0441	1.351	1.179	1.045	.938
1.048	11.5	1.3488	10.6	1.0451	1.380	1.205	1.068	.959
1.049	11.7	1.3491	10.8	1.0460	1.409	1.231	1.091	.979
1.050	12.0	1.3494	11.0	1.0470	1.440	1.257	1.114	1.000
1.051	12.2	1.3498	11.3	—	1.469	1.282	1.136	1.020
1.052	12.4	1.3501	11.5	—	1.499	1.308	1.159	1.040

1	2	3	4	5	6	7	8	9
1.053	12.6	1.3504	11.7	—	1.526	1.333	1.182	1 060
1.054	12 9	1.3508	11.9	—	1.555	1.358	1.204	1.081
1.055	13.1	1.3511	12.1	—	1.585	1.383	1.227	1.101
1.056	13.3	1.3514	12.3	—	1.613	1.408	1.250	1.121
1.057	13.5	1.3518	12.5	—	1.642	1.434	1.272	1.141
1.058	13.8	1.3521	12.7	—	1.671	1.459	1.295	1.161
1.059	14.0	1.3524	12.9	—	1.700	1.484	1.317	1.181
1.060	14.2	1.3527	13.2	—	1.730	1.510	1.340	1.201
1.061	14.4	1.3531	13.4	—	1.758	1.535	1.363	1.221
1.062	14.7	1.3534	13.6	—	1.788	1.560	1.385	1.242
1.063	14.9	1.3537	13.8	—	1.816	1.586	1.407	1.263
1.064	15.1	1.3541	14.0	—	1.846	1.611	1.430	1.283
1.065	15.4	1.3544	14.2	—	1.876	1.637	1.453	1.303
1.066	15.6	1.3547	14.4	—	1.905	1.662	1.476	1.323

1	2	3	4	5	6	7	8	9
1.067	15.8	1.3550	14.6	—	1.935	1.689	1.499	1.344
1.068	16.0	1.3554	14.8	—	1.963	1.714	1.522	1.364
1.069	16.3	1.3557	15.0	—	1.993	1.740	1.545	1.385
1.070	16.5	1.3560	15.2	—	2.024	1.766	1.568	1.405
1.071	16.7	1.3564	15.4	—	2.052	1.791	1.590	1.426
1.072	16.9	1.3567	15.6	—	2.083	1.818	1.613	1.447
1.073	17.2	1.3570	15.8	—	2.113	1.844	1.636	1.467
1.074	17.4	1.3574	16.0	—	2.142	1.870	1.659	1.488
1.075	17.6	1.3577	16.2	—	2.172	1.896	1.682	1.509
1.076	17.8	1.3580	16.4	—	2.201	1.922	1.705	1.530
1.077	18.1	1.3583	16.7	—	2.232	1.948	1.729	1.551
1.078	18.3	1.3587	16.9	—	2 263	1.975	1.752	1.571
1.079	18.5	1.3590	17.1	—	2.292	2 000	1.776	1.592
1.080	18.7	1.3593	17.3	—	2.322	2.027	1.799	1.613

1	2	3	4	5	6	7	8	9
1.081	19.0	1.3597	17.5	—	2.352	2.053	1.822	1.634
1.082	19.2	1.3600	17.7	—	2.383	2.080	1.846	1.655
1.083	19.4	1.3603	17.9	—	2 413	2 107	1 869	1.676
1.084	19.6	1.3606	18,1	—	2.443	2.132	1.893	1.697
1.085	19.9	1.3610	18,3	—	2.474	2.159	1.916	1.718
1.086	20.1	1.3613	18.5	—	2.504	2.185	1.938	1.739
1.087	20.3	1.3616	18.7	—	2.535	2.212	1 963	1.760
1,088	20.6	1.3620	18.9	—	2.566	2.239	1.987	1.782
1.089	20.8	1.3523	19.1	—	2.596	2.266	2.010	1.803

घरेलू स्तर पर बर्तनों से सान्द्रीकरण-क्रिया सम्पन्न कराते हैं तो आवश्यकतानुसार (क्षमतानुसार) रस भरकर अशांकन किये हुए डण्डे को रस मे तथा सान्द्रीकरण के पश्चात् प्रयोग कर यह मालूम किया जा सकता हैं कि कुल भरे गए रस का $\frac{2}{3}$ भाग कम हुआ कि नहीं।

तीसरी विधि आपेक्षिक गुरुत्व के आधार पर है। चौथी विधि मे रिफ्रैक्टोमीटर की सहायता से यह मालूम किया जा सकेगा कि चाहा गया कुल घुलनशील ठोस पदार्थ उसमे उत्पन्न हुआ कि नहीं। आपेक्षिक गुरुत्व-दूध की भाँति हाइड्रोमीटर की सहायता से मालूम किया जा सकता है, अर्थात् कुल घुलनशील पदार्थ, रिफ्रैक्टोमीटर की सहायता से मालूम कर सकते हैं। मान लें कि वह 16 प्रतिशत हो तो तत्तुल्य आपेक्षिक गुरुत्व 68° फारनहीट (20° से०) पर 1.067 रहेगा, जिसको पुनः 20° से० तापमान पर ऐब रिफ्रैक्टोमीटर की सहायता से मालूम किया जाये तो प्राप्त सूचना 1.3557 होगी। (अधिक जानकारी के लिए सारणी संख्या 1 से 6 देखें)

उपर्युक्त सान्द्रीकरण में अगर प्युअरए तैयार करना है तो 10.7 से 16 प्रतिशत घुलनशील घनपदार्थ की शृंखला के बीच मे सान्द्रीकरण कर वाहिका मे भरा जाता है।

इसी प्रकार टमाटो-पेस्ट हो तो 26 से 33 प्रतिशत घुलनशील घन पदार्थ शृंखला मे चाहे गये समाप्त बिन्दु पर लाकर ऊष्मोपचार बन्द किया जाता है तथा इसके तुरन्त बाद वाहिका मे भरा जाता है।

टमाटो कैचप बनाते समय उसे केवल 25 प्रतिशत कुल घुलनशील ठोस पदार्थ पर पहुँचाकर वाहिका मे भरा जाता है। इसमे मसाले तथा गर्म मसाले इत्यादि पहले ही मिला कर चाहे गये कुल घुलनशील ठोस पदार्थ पर पहुँचाया जाता है, जिसके बारे में आगे चर्चा की जायेगी।

टमाटो सॉस हो तो उसमें कुल घुलनशील घनपदार्थ 15 प्रतिशत कम से कम चाहिए। टमाटो-सूप मे 7 प्रतिशत होता है।

भराई

उपर्युक्त उत्पाद तैयार होते ही साधारणतया नम्बर 1, 2, 10 इत्यादि कैनों में इसकी भराई की जाती है। परन्तु भविष्य मे टमाटो-कैचप आदि बनाने के लिए तैयार किया जाने वाला टमाटो प्युअरए भरने हेतु बड़ी-बड़ी कैनो को काम मे लिया जा सकता है।

बड़े कारखानों में, जैसा पहले ही कहा जा चुका है, बड़े यन्त्रो की सहायता से टमाटर का गूदायुक्त रस निकालना, सान्द्रीकरण करना उत्पाद के अनुसार नमक, मसाला, गर्म मसाला इत्यादि मिलाकर अथवा बिना मिलाये सान्द्रीकरण कर वाहिका में भरना आदि काम यन्त्र की सहायता से ही धारावाहिक रूप से सम्पन्न किया जाता है। इसके लिए कैनों को धोना, उन्हें यथाविधि भरने की मशीन तक पहुँचाने का काम भी यन्त्र की सहायता से ही सम्पन्न होता है। घरेलू स्तर पर तथा कुटीर उद्योगो में उपर्युक्त समस्त क्रियाएँ अर्द्ध-स्वचालित यन्त्रों की सहायता से या सम्पूर्ण रूप से छोटे उबालकर तथा भगोने की सहायता

से मानव अपने हाथ से पूरा करता है। यह क्रिया भारत जैसे विकासशील तथा एशिया के अन्य अविकसित देशों में घरेलू तथा कुटीर उद्योगो मे भी अपनाई गई है।

किसी भी तरीके से उत्पादों को भरें, परन्तु भरते समय उत्पाद का तापमान 77° से 85° सेंटीग्रेड अवश्य होना चाहिए। कैनीकरण के बाद इन्हे 100° से० मे अल्प समय के लिए जल-ऊष्मक मे फलो की भाँति ससाधन, शीतलीकरण इत्यादि के बाद सचयन किया जाता है।

अगर भरी हुई कैन मे पूर्व से ही लेबल, प्रिंट किया हुआ नहीं हो तो कागज के लेबल लगाकर संचयन कर, विपणन के लिए रखा जाता है।

टमाटो कैचप

(Tomato Ketchup.)

टमाटो-कैचप बनाने के लिए टमाटर किस किस्म के होने चाहिएँ? उसका गूदायुक्त रस कैसे निकाला जाता है? इन प्रश्नों पर पहले ही चर्चा की जा चुकी है। इसके अलावा पहले से परिरक्षित किये गए (स्वयं या अन्य कम्पनी द्वारा) टमाटो प्युअरए या पेस्ट से भी कैचप बनाया जाता है।

इसके लिए भिन्न-भिन्न किस्म के उपयुक्त टमाटरो को भिन्न-भिन्न प्रोसेसिंग (संसाधन) कम्पनियो द्वारा विकसित किया गया है, परन्तु भारत मे इस स्तर पर, अनुसधान पूरा नहीं हुआ है, ताकि प्रत्येक कम्पनी अपने-अपने क्षेत्र के लिए योग्य टमाटर-किस्म को अपना सके। प्रति तथा साथियो ने (1978) पजाब मे (कृषि महाविद्यालय) विकसित 10 भिन्न-भिन्न किस्मों का अध्ययन कर देखा कि कौन-कौनसी किस्में टमाटर कैचप बनाने के लिए उपयुक्त है। इस अध्ययन से उन्होने प्रतिवेदन दिया कि कैचप उत्पादन के लिए केकुत अगेती अधिक उपयुक्त है। इसके बारे म पहले ही चर्चा की जा चुकी है।

मानकीकृत टमाटो-रस

प्रत्येक व्यवसाय-शाला मे बनाया जाने वाला टमाटो-कैचप हमेशा एक ही रंग, स्वाद, गाढापन, अम्लता तथा कुल घुलनशील ठोस पदार्थ लिए हुए होगा, जो ग्राहक के स्वाद पर निर्भर रहता है। इसम भिन्नता आने से ग्राहक टूट जाते हैं। इसके साथ सरकारी एजेंसियो द्वारा निर्धारित घन-पदार्थ तथा अम्लता भी बनाये रखना आवश्यक है। इसके विषय मे पहले ही चर्चा की जा चुकी है।

टमाटर-रस मे घनत्व, अम्ल-मात्रा, ब्रिक्स-डिग्री, इत्यादि मे होने वाले अन्तर को दूर कर (विश्लेषण द्वारा मालूम कर) हमेशा एक-समान टमाटो-रस को बनाए रखा जाए तो उस टमाटर-रस को मानकीकृत टमाटर-रस कहा जाता है, अन्यथा समय-समय पर भिन्न-भिन्न किस्मो से उत्पादित टमाटो कैचप एक-समान नहीं रहेगा। फलस्वरूप एक ही कम्पनी के कैचप मे समय-समय पर गुण और स्वाद मे परिवर्तन होगा। इसलिए व्यावसायिक स्तर पर टमाटो-कैचप, सॉस, सूप इत्यादि बनाने समय टमाटर रस पहले ही मानकीकृत किया हुआ होना अनिवार्य है। इसी प्रकार गिरधारी लाल तथा साथियो द्वारा निर्देशित योग पर आधारित कुछ योगांको की आगे चर्चा की जायेगी। इसके रस प्राप्त करते ही उसके

आपेक्षिक गुरुत्व इत्यादि के सम्बन्ध मे पहले ही चर्चा की जा चुकी है। अगर प्राप्त टमाटर रस अधिक गाढा हो तो टमाटर का पतला रस मिलाकर ढीला करना चाहिए या पतला हो तो उसमे टमाटर-गूदा मिलाकर गाढा बनाना चाहिए। इसी प्रकार कुल घुलनशील घन-पदार्थ, अम्लता इत्यादि को यथाविधि नियन्त्रित रखना चाहिए।

मसाले तथा गर्म मसाले

मसाले तथा गर्म मसाले सुगन्धित तथा विशेष स्वादयुक्त वनस्पति-उत्पाद हैं। इन्हें मिलाने से खाद्य-पदार्थों में सुगन्ध, स्वाद, वर्ण तथा गुण की वृद्धि होती है, परन्तु अधिकांश मसालो तथा गर्म मसालो में पोषक पदार्थ काफी कम होते हैं, इनमे से कुछ अवश्य पाचन-शक्ति को बढाते हैं, कुछ औषधि गुण-युक्त होते हैं। जावित्री, कालीमिर्च, इलायची, अदरक, जीरा इत्यादि इस वर्ग मे आते हैं। सिरका भी मसाले तथा गर्म मसाले में माना जाता है। इन्हें कैचप, सॉस इत्यादि में मिलाते समय ध्यान रखना चाहिए कि उसमें किसी एक मसाले का स्वाद तीव्र नही हो। अर्थात् सारे मसालो की सयुक्त सुगन्ध तथा स्वाद उभरा हुआ होना चाहिए। कुछ लोग यह विश्वास करते थे कि मसाले तथा गर्म मसालों में सूक्ष्मजीव-रोधक (निर्जर्मीकरण) शक्ति होती है। दालचीनी, लौंग इत्यादि में सूक्ष्मजीव-रोधक शक्ति तो है, परन्तु यह शक्ति कैचप का परिरक्षण करने की स्थिति में नहीं है। यह तथ्य बिटिंग ने अदरक, जावित्री, लालमिर्च, कालीमिर्च इत्यादि का अध्ययन करके प्रस्तुत किया। आपको ज्ञात ही है कि राई भी एक मसाला है, जिसका मदिरा किण्वनकाल मे मदिरा पुष्प रोधक (सूक्ष्मजीव-रोधक) के रूप मे आदिकाल से प्रयोग किया जाता रहा है। भारत मे अचार बनाते समय राई पीसकर डालने का उद्देश्य भी यही है। परन्तु कुछ लोग यह समझते हैं कि अचार में राई इसलिए डालते हैं कि उसमे खटास आ जाए, यह धारणा गलत है, क्योंकि बिना राई डाले ही अचार मे खटास तो उत्पन्न होती ही है। उपर्युक्त मसालों तथा गर्म मसालो को तीन भिन्न-भिन्न विधि से कैचप में मिलाया जा सकता है।

(1) पोटली विधि

योगाशो में बताये गए मसालो तथा गर्म मसालो मे सिरका, शर्करा तथा नमक को छोड़कर बाकी सबको यथाविधि कतरकर, पीसकर, एक पोटली में ढीला बाँधकर उबलते हुए गूदायुक्त टमाटर-रस मे निलम्बित कराते हैं। ताकि पोटली बर्तन के पेंदे मे या बाजू मे नही लगे। जैसे-जैसे रस सान्द्रीकृत हो, वैसे ही पोटली को ऊपर आने से रोके रखना चाहिए। इस विधि मे थोडी असावधानी के कारण पोटली खुल जाए या पेंदे पर लगने से कपड़ा (घरेलू स्तर पर स्टोव, अंगीठी इत्यादि मे पकाते समय) जल जाए तो सारा मसाला कैचप मे मिल सकता है। इसके अलावा सुचारु रूप से पोटली को नही निचोडा जाता तो उत्पाद मे मसाले की कमी अनुभव होगी। इसलिए व्यावसायिक स्तर पर कुछ लोग इसके रस को अलग तैयार कर, निचोड़ कर, सान्द्रीकृत टमाटर रस मे मिलाते हैं।

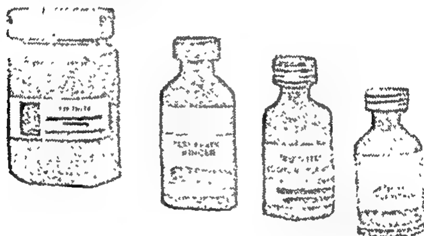
(2) मसाला निचोड़ विधि

सारे मसालों तथा गर्म मसालो को एक बर्तन मे डालकर पानी मे उबालकर उनका अर्क छानकर रख लिया जाता है। यह अर्क गाढ़ा होता है। इसे सान्द्रीकृत टमाटर-रस मे

मिलाया जाता है। इस विधि से प्राप्त अर्क मिलाने से, पोटली-विधि की भाँति उत्पादित कैंचप, सॉस सञ्चयन-काल में काली होने की खराबी या बोतलों में ब्लैक नैक (नीलकण्ठ) नामक खराबी होती हुई देखी गई। इसको रोकने के लिए कुछ अन्य व्यवसायी, विशेषकर बड़े-बड़े कारखानों में मसालों से प्राप्त तेल का प्रयोग भी करते हैं।

(3) मसाला तेल

अदरक, लौंग, इलायची, कालीमिर्च इत्यादि का तेल भी विपणी में प्राप्त है, जिसकी चर्चा सुगन्ध, वर्ण इत्यादि के अध्ययन में पहले ही की जा चुकी है। इस प्रकार के तेल में टैनिन नहीं होता जो साधारणतया लौंग के छाते (शीर्ष) में पाया जाता है। यह जल में घुलनशील होता है। करीब 90 किलोग्राम दालचीनी में से 0 450 किलोग्राम, लौंग में से 1 362 किलोग्राम, जावित्री में से 2.180 किलोग्राम, कालीमिर्च से 0 908 किलोग्राम तथा इलायची में से 2 720 किलोग्राम तेल प्राप्त होता है।



चित्र संख्या–65

कैंचप निर्माण

कैंचप बनाने के लिए भिन्न-भिन्न देशों में भिन्न-भिन्न योगांश अपनाये जाते हैं, जो उनके स्वाद, सुगन्ध इत्यादि पर निर्भर करते हैं। भारत जैसे बड़े देश में प्रदेश के लोगों का स्वाद भी अन्य प्रदेशों के लोगों से भिन्न होता है। इसलिए व्यवसायियों द्वारा उपभोक्ताओं के स्वाद तथा माँग को दृष्टि में रखते हुए, योगांशों का निर्धारण किया जाता है अथवा ऐसा योगांश प्रयोग में लाया जाना चाहिए, जो लगभग सभी देशवासियों को स्वीकृत हो। इस अध्याय में बताये जाने वाले योगों में कुछ विदेशी हैं, तो कुछ देशी भी, जो यथास्थान पर दिये जायेंगे।

जब गूदायुक्त रस सान्द्रीकरण के लिए लिया जाता है, तब उपभोक्ता के पहले योगांश में बताई गई शर्करा मात्रा का $\frac{1}{4}$ भाग मिलाकर सान्द्रीकरण किया जाता है। यह क्रिया (रस शर्करा में) टमाटर के लाल वर्ण को कैंचप में बनाये रखने के लिए ही नहीं, परन्तु टमाटर-रस के विटामिन 'सी' को रोके रखने में भी सहायक होगी। आपको याद

दिलायें कि टमाटर से रस निकालने के समय भी थोड़ी शर्करा मिलायी जाती है। इसका भी उद्देश्य वही है।

यदि पोटली-विधि नहीं अपनाई गयी हो तो वाष्पीकरण द्वारा चाहे गए कुल घुलनशील घनपदार्थ पर (26 से 28 प्रतिशत) पहुँचने से पूर्व (16–18 प्रतिशत पहुँचते) ही उसमें मसाला-निचोड़ या तेल मिलाया जाता है, इसके बाद शेष शर्करा तथा योगांश में बताया गया नमक मिलाकर थोड़ी देर पकाया जाता है तथा तुरन्त योगांश के अनुसार सिरका मिलाकर शीघ्र ही कैंचप को ऊष्मोपचार से अलग कर देते हैं। इस समय उसमें चाहा गया कुल घुलनशील पदार्थ अवश्य होना चाहिए। जब कैंचप में करीब 20 प्रतिशत कुल घुलनशील पदार्थ दिखाई दे, तभी शेष ($\frac{2}{3}$) शर्करा तथा नमक मिलाना चाहिए। तुरन्त बाद रिफ्रैक्टोमीटर द्वारा पुनः कुल घुलनशील पदार्थ मालूम करना चाहिए। इस समय सतर्कता बरतनी आवश्यक है, क्योंकि चाहे गए समाप्त बिन्दु की ओर कैंचप शीघ्र ही पहुँचता है।

इसी प्रकार तैयार कैंचप को निर्जलीकृत बोतलों में भरते समय उसका तापमान 77° से 85° से० होना चाहिए। इन बोतलों को जल ऊष्मक में सीलबन्द (क्राउन कार्किंग या कैप सीलिंग) करने के बाद ससाधन किया जाता है। यहाँ परिरक्षक वर्जित है। अगर जल-ऊष्मक में संसाधन नहीं किया जाता तो भरने के पहले 750 मिलीग्राम प्रतिकिलो कैंचप के अनुपात में सोडियम बैंजोएट मिलाकर बोतलों में भरना चाहिए। आपको याद दिलायें कि परिरक्षक को मामूली पानी में अच्छी तरह घोलकर कैंचप के तापमान को बनाये रखते हुए मिलाकर बोतलों में भरा जाता है। संयुक्त राज्य अमेरिका में कैंचप में सोडियम बैंजोएट मिलाने की प्रथा आज उतनी प्रचलित नहीं है। वहाँ इसका परिरक्षण सिरके, मसाले तथा गर्म मसाले की शक्ति पर ही आश्रित है। यह बात अवश्य है कि उन्हें जल-ऊष्मक में समाधन किया जाता है। कैंचप में पोटेशियम मैटाबाई सल्फाइट नहीं मिलाई जाती, क्योंकि यह परिरक्षक टमाटर के (अन्य फलों की भाँति) प्राकृतिक रंग को फीका कर देते हैं। इसलिए जहाँ बाहर से रंग नहीं मिलाये जाते हैं, वहाँ सोडियम बैंजोएट को ही परिरक्षक के रूप में प्रयोग किया जाता है। इसी प्रकार उत्पादित टमाटो-कैंचप का ठण्डे तथा सूखे स्थानों में संचयन किया जाता है।

इसी प्रकार उत्पादित टमाटो-कैंचप में फफूँदी, प्रकिण्व तथा उसके बीजाणु तथा बैक्टीरिया (जीवाणु) पाये जाने स्वाभाविक है, परन्तु इसका गणन परीक्षण किये गये (माइक्रोस्कोप पर) क्षेत्र के अनुसार 40 प्रतिशत से अधिक फफूँदी की संख्या नहीं होनी चाहिए। इसी प्रकार प्रकिण्व तथा उसके बीजाणु की संख्या भी 125 प्रति 1,60 सी एम. एम. से अधिक नहीं होनी चाहिए। इसके विपरीत जीवाणु-संख्या उसके प्रत्येक सी० सी० में 10 करोड़ से अधिक भी नहीं होनी चाहिए।

टमाटो-कैंचप पूर्णरूप से स्वच्छ टमाटरों से ही बनायी जानी चाहिए, इसमें वर्ण मिलाना वर्जित है। इसी प्रकार तैयार की गई टमाटो-कैंचप को अगर 28° से 30° से० पर या 37° से० पर ऊष्मायन कराने से (रखने से) उसमें किसी प्रकार की विघटन-क्रिया की झलक नहीं दिखाई देनी चाहिए, अर्थात् उत्पादित टमाटो-कैंचप में से नमूना निकालकर उपर्युक्त तापमान में यानी 28, 29, 30, 31, 32, 33, 34, 35 36, 37° से० के बीच

की श्रृंखलाओं के विभिन्न तापमान पर ऊष्मायन कर मालूम किया जा सकता है कि भविष्य मे गोदामों मे या विपणन के लिए भेजी जाने वाली टमाटो-कैंचप किण्वनीकृत होगी या नही। अगर परीक्षण से यह पता लगता है कि कैंचप खराब हो गयी है तो तैयार की गयी अन्य कैंचपो को तुरन्त उचित उपाय द्वारा सम्भालना चाहिए। विशेषतौर से व्यवसायियों के लिए यह एक उपयोगी परीक्षण है।

आंशिक शर्करा मिलाने का कारण

योगाश मे बतायी गयी शर्करा की पूरी मात्रा एक साथ मिलाकर गूदायुक्त टमाटर रस को पकाया जाये तो उसके यथार्थ गुणों, वर्ण और शोभा का नाश हो जायेगा। इसका मुख्य कारण अधिक शर्करा की उपस्थिति मे दीर्घ समय तक ऊष्मोपचार है। इसलिए कुल शर्करा मात्रा की ½ आरम्भ मे तथा शेष अन्त में (कुल घुलनशील घन-पदार्थ 20 प्रतिशत के आसपास पहुँचते ही) मिलाई जाती है। फलस्वरूप टमाटर का वर्ण तथा विटामिन 'सी' की क्षति कम होती है। इसके साथ अगर ऑक्सीकरण क्रिया भी दूर की जाय तो विटामिन 'सी' की हानि और भी कम होगी।

समाप्त बिन्दु पर लवण मिलाने का कारण

अगर प्रारम्भ मे ही नमक मिलाया जाय तो टमाटर की वर्णक्षति हो जायेगी। इसके साथ अगर टमाटर का सान्द्रीकरण रांगालेपित ताम्र-बर्तन मे किया जाता है तो कैंचप मे (टमाटर सान्द्रीकरण काल मे) ताम्र का अश घुलने मे नमक सहायक होता है, परन्तु आज स्टेनलैसस्टील से बने बर्तनो मे, चाहे वह बर्तन हो या यान्त्रिक पाचकीकरणी, टमाटर-सान्द्रीकरण के समय नमक समाप्त बिन्दु पर ही मिलाया जाता है। आज बाजार मे प्राप्त विभिन्न कम्पनियों के कैंचप मे 1.3 से 3.5 प्रतिशत लवण पाया जाता है।

समाप्त बिन्दु पर सिरका मिलाने का कारण

सिरके को मसाले मे माना जाता है, परन्तु इसको भी समाप्त-बिन्दु पर ही मिलाते हैं, क्योंकि अधिक तापोपचार से सिरका शीघ्र वाष्पीकृत हो जाता है। सिरका मिलाते ही तुरन्त ऊष्मोपचार बन्द कर देते हैं। कैंचप मे हमेशा रंगहीन सिरका अधिक उपयुक्त माना जाता है। आजकल सिरके की बजाय ऐसिटिक अम्ल भी मिलाते हैं।

कैंचप के लिए उपयुक्त सिरका

सिरका विपणी मे विभिन्न किस्मो मे प्राप्त होता है। एक को कृत्रिम सिरका कहते है, जो गाढ़े ऐसिटिक अम्ल को पानी मे घोलकर, रंग मिलाकर बेचा जाता है। जामुनी वर्ण के सिरके को जामुन सिन्थेटिक (कृत्रिम) सिरका तथा अगूरी वर्ण के सिरके को अगूर सिन्थेटिक सिरका कहा जाता है। इसी प्रकार विविध फलो के नामों के सिरके बाजार मे उपलब्ध है। इन सिरकों को सिरका न कहकर डाइल्यूट ऐसिटिक ऐसिड (मन्द ऐसिटिक अम्ल) नाम देकर उपभोक्ताओं को धोखा-धड़ी से बचाने के लिए कार्यवाही करनी चाहिए। उपर्युक्त सिरके मे 5 से 5.5 प्रतिशत ऐसिटिक अम्ल होना अनिवार्य है।

दूसरा सिरका यव (जौ), गन्ने के रस, जामुन के फल, चुकन्दर के रस, काजू-सेब के रस, कच्चे नारियल के पानी, ताड़ी इत्यादि से उत्पादित होता है, जिसको प्राकृतिक सिरका

सिरका कहा जाता है। यह कृत्रिम सिरके से अधिक गुणकारी तथा पौष्टिक होता है। इसमें भी किण्वन क्रिया से उत्पादित ऐसिटिक अम्ल की मात्रा 5.1 से 5.6 प्रतिशत होनी चाहिए।

कैंचप के लिए उपयुक्त सिरका यव (जौ) सिरका माना गया है, जो टमाटर के रंग को किसी प्रकार की हानि नहीं पहुँचाता है। इसी गुण के अन्य सिरके भी काम मे लिये जा सकते हैं। व्यावसायिक स्तर पर साधारणतया सफेद सिरका या मद ऐसिटिक अम्ल या तत्तुल्य मात्रा के ऐसिटिक अम्ल (शुद्ध) मिलाये जाते हैं, अर्थात् किसी कैंचप या सॉस मे अगर हमे 1000 एम० एल० सिरका मिलाना है तो समाप्त बिन्दु पर पहुँचते समय 50 से 55 सी० सी० ऐसिटिक अम्ल (ग्लेसियल) मिलाते हैं, क्योंकि अनुमान करते हैं कि सिरके में 5 प्रतिशत ऐसिटिक अम्ल होगा तो 1000 एम० एल० सिरके की बजाय 50 या 55 एम० एल० ऐसिटिक अम्ल पर्याप्त रहेगा।

चाहे प्राकृतिक सिरका मिलावें या कृत्रिम, व्यावसायिक स्तर पर हमेशा एक कारखाने में एक ही किस्म के सिरके का प्रयोग करना उचित रहेगा। अगर कैंचप या सॉस में भिन्न-भिन्न सिरके भिन्न-भिन्न समय मे मिलाये जाते हैं तो उत्पादन मानकीकृत नही रहेगा। इसलिए कैंचप निर्माण मे व्यावसायिक स्तर पर एक ही किस्म के सिरके का प्रयोग महत्वपूर्ण है, परन्तु घरेलू-स्तर पर अधिकांश प्राकृतिक सिरके को ही अधिक उपयुक्त मानते हैं।

कुछ व्यवसायी, सिरके मे मसाले तथा गर्म मसाले मिलाकर मद ऊष्मोपचार द्वारा उनका अर्क निकालकर कैंचप मे मिलाते हैं, परन्तु ऊष्मोपचार के समय यह ध्यान रखना पड़ेगा कि सिरके युक्त गर्म मसाले उबल न पावें। साथ ही जिस बर्तन मे गर्म किया जाता है, उसे ढक्कन से बन्द रखना चाहिये।

सिरके मे किसी प्रकार का मालिन्य (गन्दगी) नही होना चाहिये। कैंचप के भार के हिसाब से 1.25 प्रतिशत ऐसिटिक अम्ल कैंचप में मिलाया जाये तो भविष्य मे कैंचप को विकृति से बचाया जा सकता है।

संयोजी-पदार्थ तथा कैंचप में उसका प्रभाव

कैंचप बनने के बाद थोडी-सी लेकर एक ब्लाटिंग पेपर मे रखकर देखें तो उसमें से जल कागज पर फैलता नजर आयेगा। कैंचप मे यह अवांछनीय है। इसको रोकने के लिए 0.1 से 0.2 प्रतिशत पैक्टिन पाउडर मिलाया जाता है। यह दोष हमेशा नहीं पाया जाता। इसका मुख्य कारण टमाटर मे समुचित मात्रा मे पैक्टिन का नही होना है। इसलिए कैंचप में स्वतन्त्र-जल नहीं पाया जाना चाहिये। पैक्टिन मिलाने से पैक्टिन स्वतन्त्र जल का शोषण कर लेता है, फलस्वरूप कैंचप गाढा हो जाता है।

घरेलू-स्तर पर कैंचप के लिए टमाटर से गूदा-युक्त रस निकालते समय दीर्घ समय में बीज के साथ ऊष्मोपचार करने से पैक्टिन की मात्रा बढ़ने की सम्भावना है। यह अनुभवों से आँका गया है।

अभी आपको कुछ कैंचप बनाने के योगाशों से अवगत करायेंगे।

योग संख्या-1

क्रम संख्या	योगांश	मात्रा
1.	टमाटर रस (आपेक्षिक गुरुत्व 1.022 से 1.027)	320 लीटर
2.	कतरा हुआ प्याज	3.750 किलोग्राम
3.	कतरा हुआ लहसुन	0.250 ,,
4.	पिसी हुई लाल मिर्च	0.125 ,,
5.	शीर्ष रहित लौंग	0 100 ,,
6.	इलायची (बड़ी)	0.040 ,,
7.	काली मिर्च (चूर्ण)	0.040 ,,
8.	जीरा	0 040 ,,
9	जावित्री साबुत	0.025 ,,
10.	दाल चीनी	0.175 ,,
11.	सिरका	11.350 लीटर
12.	शर्करा	9.100 किलोग्राम
13.	नमक	3.120 ,,

योग संख्या-2

क्रम संख्या	योगांश	मात्रा
1.	टमाटर गूदा (आपेक्षिक गुरुत्व 1.020)	1518 लीटर
2.	प्याज/लहसुन (कतरा हुआ)	746/142 किलोग्राम
3.	लाल मिर्च पिसी हुई	142 ग्राम
4.	जावित्री	28.4 ,,
5.	दालचीनी	426 ,,
6.	लौंग शीर्ष रहित	426 ,,
7	शर्करा	44.500 किलोग्राम
8.	नमक	12.260 ,,
9.	सिरका (100 ग्रेन)	32 लीटर

उपर्युक्त योगांश के आधार पर बनाई गई कैचप 576 लीटर होगी। यह एक विदेशी योग पर आधारित है।

योग संख्या–3

क्रम संख्या	योगांश	मात्रा	
1.	गूदायुक्त टमाटर रस (आपेक्षिक गुरुत्व 1.022)	2760	लीटर
2.	लाल मिर्च पिसी हुई	6.832	किलोग्राम
3.	प्याज कतरा हुआ	4.540	,,
4.	लहसुन कतरा हुआ	0.908	,,
5.	जावित्री (साबुत)	0.640	,,
6.	दालचीनी-टूटी हुई	0.284	,,
7.	लौंग शीर्ष रहित	0.341	,,
8.	शर्करा	136.200	,,
9.	नमक	22.700	,,
10.	सिरका	736	लीटर

उपर्युक्त योगांशों को यथाविधि सान्द्रीकरण करने के पश्चात् 920 लीटर होते ही कैचप तैयार हो जायेगी। यह भी एक विदेशी योग है।

योग संख्या–4

क्रम संख्या	योगांश	मात्रा	
1.	टमाटर हैवी प्युअरए (आपेक्षिक गुरुत्व 1.60)	460	लीटर
2.	लालमिर्च पिसी हुई (अगर चाहें तो)	1.000	किलोग्राम
3.	लहसुन कतरा हुआ	0.114	,,
4.	जमाइका (आल स्पाइसेस)	0.426	,,
5.	लौंग शीर्ष रहित	0.426	,,
6.	जावित्री	0.099	,,
7.	दालचीनी टूटी हुई	0.710	,,
8.	कतरा हुआ प्याज	11.350	,,
9.	शर्करा	56.750	,,
10.	नमक	12.712	,,
11.	सिरका (10 प्रतिशत एसिटिक अम्ल-युक्त कृत्रिम)	552	लीटर

उपर्युक्त सारे योगांशों में टमाटर प्युअरए को छोड़कर अन्य सारे मसालों को एक साथ मिलाकर सिरका में 2 घण्टे ऊष्मोपचार किया जाता है। ध्यान रखें कि उबले नहीं। इसमें शर्करा तथा नमक मिलाकर छान लेते हैं। इस अर्क को उपर्युक्त मात्रा के टमाटर प्युअरए मिलाकर कैचप बनाया जाता है। महीन पिसी हुई मिर्च को अन्त में मि जाता है। प्राप्त कैचप 760 लीटर होगा।

योग सख्या-5

क्रम संख्या	योगांश	मात्रा	
1.	गूदायुक्त टमाटर रस	300	किलोग्राम
2.	प्याज कतरा हुआ	3.750	,,
3	लहसुन कतरा हुआ	0.250	,,
4.	लौंग शीर्ष रहित	0.100	,,
5.	गर्म मसाले (काली मिर्च, इलायची, जीरा इत्यादि बराबर मात्रा में)	0.120	,,
6.	जाविश्री साबुत	0.025	,,
7.	दालचीनी टूटी हुई	0.175	,,
8	लाल मिर्च पिसी हुई	0.125	,,
9.	नमक	3.120	,,
10.	शर्करा	10 000	,,
11	सिरका बढ़िया	15	लीटर

उपर्युक्त योगांश केन्द्रीय खाद्य प्रौद्योगिक अनुसन्धान शाला से प्राप्त योगांश पर आधारित है। इससे 100 लीटर कैचप प्राप्त होगा। प्रति लीटर के हिसाब से 750 मिली-ग्राम सोडियम बैन्ज़ोएट परिरक्षक के रूप में मिलाया जा सकता है, अन्यथा जल-ऊष्मक में समाधन करना चाहिये। यह योगांश अखिल भारतीय दृष्टिकोण से उत्तम माना जाता है।

टमाटो सॉस

टमाटो सॉस कैचप से पतला होता है, क्योंकि कैचप में कुल घुलनशील घन-पदार्थ 26 से 28 प्रतिशत है तो सॉस में 16 से 24 है। मिलाये जाने वाले मसालों तथा गर्म मसालों में भी मामूली अन्तर आ सकता है, जो योग सख्या–6 से मालूम होता है। यह अन्य योगांशों की भाँति गिरधारीलाल तथा साथियों के निर्देश पर आधारित है।

योग संख्या-6

क्रम संख्या	योगांश	मात्रा	
1.	गूदायुक्त टमाटर रस (ब्रिक्स 6°)	295.000	किलोग्राम
2	इलायची, काली मिर्च, जीरा बराबर मात्रा में	0.090	,,
3.	दालचीनी चूर्ण	0.100	,,
4.	जाविश्री	0 060	,,
5.	कतरा हुआ प्याज	1.560	,,
6.	नमक	6.810	,,
7.	कतरा हुआ लहसुन	0.180	,,
8.	सिरका	5800	मिलीलीटर
9.	लाल मिर्च पिसी हुई	0.150	किलोग्राम

उपर्युक्त योगांश से सॉस बनायेंगे तो कुल टमाटर गूदा-युक्त रस आधा सान्द्रीकृत हो जाये या 26 से 28 प्रतिशत ब्रिक्स डिग्री हो जाये तो मान लेना चाहिये, सॉस बन चुकी है। कैचप की भाँति सॉस में भी मसाले तथा गर्म मसाले चाही गई विधि के अनुसार मिलाये जा सकते हैं। इन्हें कैनों में भरकर (A 2½) जल-ऊष्मक में 45 मिनट संसाधन कर, भवन-ताप पर शीतलीकरण कर संचयन करते हैं।

बोतलीकरण के लिए कैचप की भाँति 750 मिलीग्राम प्रति किलोग्राम या लीटर के अनुपात में सोडियम बेन्जोएट भी मिलाकर भरा जा सकता है, अन्यथा संसाधन करना होगा।

चरपरा टमाटो सॉस (हॉट टमाटो सॉस)

इस सॉस में मिर्चों अधिक होती है, इसलिए इसको चरपरा टमाटो सॉस या मसाला टमाटो सॉस कहा जाता है। इसकी एक विशेषता यह है कि इसमें सिरका नहीं मिलाया जाता। योग संख्या–7 के अनुसार सामग्री एकत्र करें। इन योगांशों को "क" और "ख" में विभाजित किया गया है। 'क' योगांशों को एक साथ मिलाकर 60 प्रतिशत तक वाष्पीकरण द्वारा सान्द्रीकरण किया जाता है। जब 40 प्रतिशत शेष रह जाये तब 'ख' भाग को इसके ऊपर बुरकाकर उसमें मिला दिया जाता है। इसके बाद एक उचित छननीयुक्त यन्त्र (सुपर-प्रेशर छननी) की सहायता से छान लिया जाता है, ताकि उसमें किसी प्रकार के कण (प्याज, लहसुन इत्यादि के) न रह सकें। इन्हें पुनः गर्मकर कैनों में भरकर, संसाधन किया जाता है। अन्य टमाटो उत्पाद की भाँति चरपरा टमाटो सॉस भविष्य में शाक-सब्जी में मिलाकर खाया जाता है। यह उत्पाद भी विदेशों में अधिक प्रचलित है।

टमाटो मसाला सॉस

चरपरे टमाटो सॉस में किसी प्रकार के कण नहीं पाये जाते, परन्तु टमाटो मसाला सॉस में टमाटर का छिलका छोड़कर, बाकी समूचे टमाटर को बीज सहित काम में लिया जाता है।

टमाटर को कैनीकरण की भाँति तैयार कर छिलका उतारकर तथा मथकर सान्द्रीकरण कर उसमें मसाले मिलाये जाते हैं। इसमें गर्म मसाले नहीं मिलाये जाते, परन्तु सिरका अवश्य मिलाया जाता है। इसमें भी मिर्च अधिक होती है। यह भी सब्जी के मसाले की भाँति भविष्य में शाक-तरकारी में मिलाया जाता है। भारतीय परिस्थिति-योग्य एक विधि योगांश संख्या–8 में बताई गई है।

छिलका उतरे हुए लाल टमाटर को पाचकीकरणी में डालकर, मथकर सान्द्रीकरण किया जाता है, साथ ही अन्य मसालों को भी मिलाया जाता है, ताकि कैचप जैसा हो जावे। जब $\frac{1}{3}$ भाग रह जाता है, तब उसमें सिरका मिलाते हैं। सिरका पूर्णरूप से उसमें तरह मिलाकर यथाशीघ्र ऊष्मोपचार बन्द कर देते हैं। इन्हें जैम जैसी इत्यादि बरनियों या कैनों में भरकर सीलबन्द कर जल-ऊष्मक में 30 मिनट म करते हैं। अगर 85° से० में उत्पाद वाहिका में भरा जाये तो मंना नहीं होगी।

योग संख्या-7

योगांश		मात्रा	
(क)	टमाटर गूदा-युक्त रस	252	लीटर
	हरी मिर्च कतरी हुई	4.500	किलोग्राम
	कतरी हुई प्याज	3.400	"
	कतरा हुआ लहसुन	0.140	"
(ख)	लाल मिर्च पिसी हुई	0.140	"
	नमक	3.200	"

योग संख्या-8

क्रम संख्या	योगांश	मात्रा	
1.	छिलका-रहित टमाटर	22.700	किलोग्राम
2	शर्करा	2.550	"
3.	लाल मिर्च पिसी हुई	0.043	"
4.	कतरा हुआ प्याज	0.104	"
5.	कतरा हुआ लहसुन	0.256	"
6.	नमक	0.256	"
7.	सिरका (5 प्रतिशत ऐसिटिक अम्ल)	8.626	"

टण्डन जी० एल० द्वारा निर्देशित योगांश पर आधारित।

कुछ अन्य सान्द्रीकृत उत्पाद

कुकुरमुत्ता कैचप

कुकुरमुत्ते को कैनीकरण की भांति तैयार कर उसे छोटे-छोटे टुकड़ों में कतर लिया जाये। स्टेनलेसस्टील या एल्युमीनियम से बने गहरे बर्तन में शुद्ध नमक बुरका दें। इसके उपर कतरे हुए कुकुरमुत्ते को बिछा दें, इसके ऊपर पुनः नमक बुरकावें, इसी क्रम से भर दें और सबसे ऊपर नमक रहे। इन्हें 12 घण्टे बाद अच्छी तरह मिला दें। पुनः 12 घण्टे बाद इस क्रिया को दोहरायें। इसी प्रकार चार दिन तक आठ बार उपर्युक्त क्रिया को दोहराते रहें। इसके पश्चात् 45 मिनट पकाकर रस निचोड़ लें। इस रस की मात्रा 46 लीटर हो तो योग संख्या-9 में बताये गये भागों को मिलाकर कैचप बनायी जा सकती है।

योग संख्या-9

क्रम संख्या	योगांश	मात्रा	
1.	कुकुरमुत्ता निचोड़	46	लीटर
2.	जीरा, दालचीनी, इलायची इत्यादि समान रूप से (पिसी हुई)	0.240	किलोग्राम
3.	काली मिर्च पिसी हुई	0.120	,,
4.	अदरक पिसी हुई	0.120	,,
5.	जावित्री	0.120	,,
6.	लौंग	0.020	,,

ऊष्मोपचार द्वारा टमाटर-सान्द्रीकरण की भाँति सान्द्रीकरण सम्पन्न करावें, उसकी मात्रा $\frac{1}{2}$ शेष रहनी चाहिये। इसमे योगांशों में निर्देशित मसालों को निचोड़ मिलाकर गर्म-गर्म बोतलों मे यथाविधि भर दिया जाता है।

सोया सॉस

सोयाबीन तथा गेहूँ को पकाकर किण्वन क्रिया विधेयक (फफूंदी द्वारा) बनाकर सोया-सॉस बनाया जाता है। इसके लिए 3 से 4 दिन किण्वन क्रिया विधेयक बनाना आवश्यक है। इस किण्वनोत्पाद मे 15 से 20 प्रतिशत लवण (नमक) घोल मिलाकर काष्ठ से बने पीपों मे भरकर रखा जाता है, ताकि उसमें जीवाणु तथा रासायनिक परिवर्तन हो सके (बैक्टिरोलोजिकल तथा कैमिकल परिवर्तन)। यह भविष्य मे भूरे रंग का एक गाढ़ा द्रव हो जायेगा। इसे उबालकर छान लिया जाता है। छने हुए द्रव मे शर्करा या तत्तुल्य पदार्थ मिलाकर स्वादिष्ट बनाते हैं। यह सॉस नमकीन होता है।

चटनी

यह एक भारतीय सान्द्रीकृत पदार्थ है, जिसे पश्चिमी लोगों ने भी अपनाया है। चटनी का निर्माण स्वादिष्ट तथा पाचन-शक्ति को बढ़ाने योग्य होना चाहिये। टमाटर, आम, सेब, नाशपाती, खुबानी, पीच (आड़ूफल), पलम (आलू बुखारा), इत्यादि चटनी बनाने के लिए काम मे लिये जाते हैं।

इन्हें यथाविधि धोकर मनचाहे भाग को अलग कर कतर लें। इन्हें पकाकर नर्म कर लें, परन्तु ध्यान रहे कि उबलें नहीं। प्याज, अदरक इत्यादि को पहले नहीं मिलाना चाहिये, अन्यथा दीर्घ समय तक ऊष्मोपचार से उनकी सुगन्ध तथा गुण मे कमी आ सकती है। इसलिए अच्छी तरह इन्हें पीसकर नमक मिलाने से पहले चटनी मे मिला देना चाहिये। मसाले का चूर्ण के रूप में प्रयोग करना उचित रहेगा। उपर्युक्त पदार्थों को सान्द्रीकरण कर, जब वे जैम समान हो जायें तो 85° से० तापमान पर वाहिका में भरना चाहिये, किन्तु उसमे वायु प्रवेश नहीं होना चाहिये। अगर 85° से० से कम तापमान पर भरा गया हो तो सीलबन्द वाहिकाओं को संसाधन करना आवश्यक होगा।

केन्द्रीय खाद्य प्रौद्योगिक अनुसंधान द्वारा प्रस्तुत एक योगांश (संख्या 10) इस प्रकार है—

योग संख्या–10

क्रम संख्या	योगांश	मात्रा
1	छिलका-रहित लाल टमाटर	300.000 किलोग्राम
2.	कतरी हुई प्याज	200 000 ,,
3.	अदरक पिसी हुई	1.500 ,,
4.	लाल मिर्च	1.000 ,,
5.	शर्करा	200.000 ,,
6.	नमक	10.000 ,,
7.	सिरका (4 प्रतिशत एसिटिक अम्ल-युक्त)	100 लीटर
8.	ग्लेशियल एसिटिक अम्ल (100 प्रतिशत शुद्ध)	4000 मिलीलीटर

उपर्युक्त योगांश में से 130 किलोग्राम शर्करा, पूरा नमक, सिरका इत्यादि के अलावा अन्य सम्पूर्ण पदार्थों को एक-साथ पाचकीकरणी में डालकर सान्द्रीकरण कर जैम जैसा बना लें। जब जैम की भाँति हो जाये तब शेष शर्करा और नमक मिलावें। शर्करा तथा नमक चटनी में पूरा मिलने के बाद सिरका मिलाएँ। 5–10 मिनट ऊष्मोपचार के साथ खूब मिलाते रहें। इसे गर्म-गर्म जैमी की भाँति वाहिकाओं में भर लें। ठण्डा होने के बाद गर्म पानी से पोछकर, सुखाकर सेवनीकरण करें।

आम चटनी

पूर्ण विकसित कच्चे आम चटनी के लिए चुने जाते हैं। इन्हें पीयाकस में या तदतुल्य अन्य यन्त्र की सहायता से कस लिया जाता है। इसी प्रकार कतरे हुए आमों में मामूली जल मिलाकर पकाया जाता है, ताकि नर्म हो जाये। इसमें सिरका छोड़कर बाकी अन्य सारे पदार्थों को (जो योग संख्या–11 में बताये गये हैं) मिलाकर पकाया जाता है, ताकि जैम जैसा हो जाये। इसमें सिरका मिलाकर वाहिकाओं में भर लें।

योग संख्या–11

क्रम संख्या	योगांश	मात्रा
1.	कतरे हुए आम	100.000 किलोग्राम
2.	शर्करा	100.000 ,,
3.	नमक	5.000 ,,
4.	मसाला (दाल चीनी, इलायची)	3.000 ,,
5.	लाल मिर्च पिसी हुई	1.500 ,,
6.	अदरक पिसी हुई	1.500 ,,
7.	प्याज कतरी हुई	6 000 ,,
8.	लहसुन कतरा हुआ	1.500 ,,
9.	शुद्ध सिरका (बढ़िया किस्म)	11.800 ,,

आम फांकों की चटनी

इसके लिए तोतापुरी या तत्तुल्य किस्म के पके हुए आम अच्छे होते हैं। उत्तर भारत के चौसा आम भी चुने जा सकते हैं, लेकिन ठोस होना आवश्यक है। इन्हें यथाविधि धोकर, छिलका उतारकर 5 सेमी० लम्बी फांकों में कतर लें। कतरी हुई फांकों को लवण-घोल में 30 मिनट उपचार कर पानी से धोकर उन्हें निसार लें। सारणी संख्या–12 में बताये योगांशों को पहले से ही एकत्र कर लें। यह योगांश रंगण्णा द्वारा निर्देशित योगांश पर आधारित है।

योग संख्या–12

क्रम संख्या	योगांश	मात्रा
1.	आम की फाकें	150.000 किलोग्राम
2.	अदरक	0.500 ,,
3	लहसुन पिसा हुआ	0.270 ,,
4.	किशमिश	0.270 ,,
5.	शर्करा	15.000 ,,
6.	बीज-रहित लम्बाई में कतरी हुई लाल मिर्चें	0 050 ,,
7.	लाल मिर्च पिसी हुई	0.050 ,,
8.	नमक	0.150 ,,
9.	ऐसिटिक अम्ल	270 मिलीलीटर

अब 70° ब्रिक्स की चाशनी बनाई जाये। योगांश में बताये गये ऐसिटिक अम्ल को 50 प्रतिशत चाशनी में मिलाकर छान लिया जाता है। ऐसिटिक अम्ल चाशनी उबलते समय मिलाना चाहिये। किशमिश को पानी में भिगोकर पहले से ही तैयार कर लें, ताकि किशमिश फूल जाये। इसमें से अनचाहे भागों को अलग कर दें। योगांश में बताई गई अदरक का आधा भाग कतर लें तथा आधे भाग को पीस लें। इसी प्रकार लाल मिर्च को भी लम्बी-लम्बी कतर लें तथा लहसुन को महीन पीस लें।

तैयार की हुई फांकों को छनी हुई चाशनी में डाल दें तथा अन्य योगांशों को भी डाल दें। ध्यान रखें कि नमक तथा ऐसिटिक अम्ल को अभी नहीं मिलाना है। शेष को एक-साथ पकावें ताकि शर्करा ब्रिक्स 55° हो जाये। इस समय शेष ऐसिटिक अम्ल को मिलाकर ऊष्मोपचार बन्द कर नमक मिलावें। आम की फाकें कतरने के बाद शेष रहे आम के टुकड़ों को गूदा बनाकर पहले में मिलाया जा सकता है। लेकिन पकाते समय ध्यान रखें कि आम की फाँकें टूट न जायें। यह चटनी एक स्वादिष्ट होने के अतिरिक्त देखने में भी आकर्षक होती है। रंगण्णा के अनुसार व्यावसायिक स्तर पर इसका बहुत महत्त्व है, विदेशों के लिए भी इसकी विपणी प्राप्त हो सकती है।

सेब-चटनी

सेबों को कैनीकरण की भाँति तैयार कर कतर लें। इसके लिए हरा तथा विपणन के अयोग्य विरूपी फल (यदि सड़ा-गला न हो) ले सकते हैं। इन्हें यथाविधि धोकर छिलका, बीज-कक्ष इत्यादि अलग कर उन्हें उबालकर उसका केवल गूदा निकालकर चटनी में मिलाई जाती है। व्यावसायिक स्तर पर सेब के छिलके तथा बीज-कक्ष से पैक्टिन बनाया जाता है। सेब की चटनी बनाने के लिए सुयोग्य योगांश योग संख्या–13 में बताये गये हैं।

योग संख्या–13

क्रम संख्या	योगांश	मात्रा
1.	कतरा हुआ सेब	180.000 किलोग्राम.
2.	अंगूर	90.000 "
3.	प्याज कतरा हुआ	40.000 "
4.	शर्करा	125.000 "
5	नमक	13.500 "
6.	दालचीनी चूर्ण	0.300 "
7.	लाल मिर्च पिसी हुई	0.300 "
8.	जायफल चूर्ण	0.150 "
9.	वर्ण (करामल) शर्करा से निर्मित	2.800 "
10.	ऐसिटिक अम्ल	100 मिलीलीटर
11.	यव सिरका	108 "

सेबों को कतरते ही जल में रखा जाये, अन्यथा सेब काले पड़ जायेंगे। अन्य चटनियों की भाँति नमक तथा यव-सिरका आदि छोड़कर बाकी अन्य पदार्थों को एक-साथ मिलाकर पकायें। जब जैम जैसा हो जाये तो नमक, ऐसिटिक अम्ल, सिरका इत्यादि मिलाकर पात्रिकाओं में भर लें तथा सचयन करें।

बाँस की मीठी चटनी

ऐसे बाँस के अंकुरों को चुना जाता है, जो भविष्य में बढ़िया किस्म के बाँस नहीं होने वाले हों। इन अंकुरों को एकत्र कर उनके अनचाहे भागों को अलगकर बारीक कतर लिया जाता है। इसके लिए मोटे मिक्सर या किचन मास्टर काम में लिया जा सकता है। पंचिंग-बोर्ड पर चाकू से भी कतरा जाता है, जैसे कि कीमा बनाते हैं। योगांश संख्या–14 में बताये गये पदार्थों को एकत्र करें।

योग संख्या-14

क्रम संख्या	योगांश	मात्रा
1.	कतरे हुए बांस के अकुर	200.000 किलोग्राम
2.	गर्म मसाले (दालचीनी, इलायची, जीरा इत्यादि बराबर मात्रा में)	6 000 ,,
3	लाल मिर्च पिसी हुई	3.000 ,,
4.	प्याज कतरी हुई	3 000 ,,
5.	लहसुन कतरा हुआ	3.000 ,,
6.	शर्करा	200.000 ,,
7.	नमक	9 500 ,,
8.	सिरका बढ़िया	9.500 लीटर

कतरे हुए बांस के अकुरों को योगांश में बताई गई शर्करा तथा थोड़ा पानी मिलाकर उबालें। इस समय नमक भी मिलाया जा सकता है। जब सान्द्रीकृत हो जाये तब अन्य मसालों का निचोड़ निकालकर मिलावें। जब जैम जैसा हो जाये तो अन्य चटनी की भाँति पात्रिकाओं में भर लें।

आंवले की चटनी

पूर्ण विकसित आंवला चुनें। इन्हें यथाविधि धोकर भाप में पकावें। इनमें से गुठली अलग कर दें। गुठली अलग किये हुए आंवलों को मलाईनुमा बनावें तथा उनका रेशा दूर कर दें। इसके लिए पिसे हुए गूदे को कपड़े से दबाकर, घरेलू-स्तर पर छाना जा सकता है। व्यावसायिक स्तर पर योग्य यन्त्रों की सहायता लेनी चाहिये।

आवले का गूदा यदि 100 किलो हो तो योग संख्या-15 में बताये गये योगांशों को एकत्र कर लें।

योग संख्या-15

क्रम संख्या	योगांश	मात्रा
1.	आवले की मलाई	100 000 किलोग्राम
2.	चुनी हुई मेथी का चूर्ण	10.000 ,,
3.	जीरा भुना हुआ (चूर्ण)	1.000 ,,
4.	नमक	10 000 ,,
5.	हल्दी-चूर्ण	3 000 ,,
6.	लाल मिर्च पिसी हुई	2.000
7.	अदरक पिसी हुई	2.00
8.	लहसुन पिसा हुआ	10.0

9.	काली मिर्च पिसी हुई	2.000	;;
10.	राई-चूर्ण भुना हुआ	0.500	,,
11.	शर्करा	100.000	,,
12.	सिरका	4.750	लीटर

आंवला-मलाई को स्टेनलैसस्टील या एल्युमीनियम बर्तन में अथवा स्टीम जैकेटेड केतली में डालकर ऊष्मोपचार करें तथा उसमे शर्करा मिला दें। ध्यान रखें शर्करा में अनचाहे पदार्थ न रहे। जब शर्करा-चाशनी हो जाये, तब हल्दी, लाल मिर्च, काली मिर्च इत्यादि मिलाकर पकावें। जब चटनी जैसा होने लगे तब मेथी-चूर्ण, पिसी हुई अदरक, लहसुन, जीरा-चूर्ण, राई-चूर्ण इत्यादि मिलाएँ। जैम जैसा होने पर चटनी का ऊष्मोपचार बन्द करें। उसमें सिरका मिलाकर अच्छी तरह घोट दें। इसे यथाविधि वाहिकाओं में भरकर अन्य खाद्य-पदार्थों की भांति वायुरुद्ध अवस्था में सीलबन्द करके, लेबल आदि लगाने के पश्चात् ठण्डे व शुष्क स्थान में सचयन करें।

□□□

भाग–4

अध्याय 1

उपोत्पाद

(By Products)

फल तथा तरकारी के परिरक्षण तथा संसाधन के समय कुछ अवशिष्ट बच जाते है, जैसे—फलो के छिलके, बीज, बीज-कक्ष तथा फलो मे से सड़े-गले भागों के अलावा बचे हुए भाग। इनसे भी विभिन्न उत्पाद बनाये जा सकते हैं, फलस्वरूप व्यवसाय में कुछ और मुनाफा कमाने मे मदद मिल सकती है। सन् 1976 तक के आंकड़ो के अनुसार देश के 1340 फल-तरकारी संसाधन कारखानो मे उत्पादित भिन्न-भिन्न प्रकार के अवशिष्ट सारणी मे दिये गये हैं, जिसका अवलोकन करें।

सन् 1976 तक देश के 1340 फल-संसाधन कारखानो मे उत्पन्न अवशिष्ट

सारणी

क्रम संख्या	अवशिष्ट का नाम	टन में
1.	आम छिलका व गुठली	10,000
2.	अनन्नास छिलका व फल-शेष	2,500
3.	सन्तरा छिलका व फल-शेष	2,500
4.	सेब छिलका व फल-शेष	1,500
5.	फल-तरकारियो के अन्य अवशिष्ट	10,000
6.	टमाटर अवशिष्ट	2,000
	कुल अवशिष्ट	28,500

गेरा, ओ० पी० 1980

उस समय देश मे (1976) 57,603 मैट्रिक टन फल-तरकारी संसाधन होता था, अब (1982) 1,00,000 मैट्रिक टन फल-तरकारी संसाधित होती है। इससे आप भली-भाँति समझ सकते हैं कि 2624 कारखानो में कितना अवशिष्ट उत्पन्न हो रहा होगा। घरेलू-स्तर पर जब उपर्युक्त पदार्थ बनाये जाते हैं, तब उन्हें या तो फेंका जाता है या उनके साथ साबुत फलों का प्रयोग कर जैम, चीज (पनीर) इत्यादि बनाये जाते हैं।

नींबूवर्गीय फलों से उपोत्पाद

नींबूवर्गीय फलोत्पाद के समय प्राप्त बीजों को पौधा बनाने के काम में लिया जाता है, परन्तु छिलकों में से व्यावसायिक स्तर पर उनका तेल बनाया जाता है। एक विस्तृत

सन्तरे के छिलके से करीब 1 किलो ऑरेन्ज पील ऑयल प्राप्त होता है, इसका दाम प्रति किलो 2000/–रुपये है। शेष छिलका उतारकर व्यावसायिक पैक्टिन बनाने के काम में लिया जाता है, जिसके बारे में पैक्टिन निर्माण के समय चर्चा की जायेगी। घरेलू तथा कुटीर उद्योगों में सन्तरे के छिलके को फल-मिश्री बनाने के काम में लिया जाता है, इसकी चर्चा अन्यत्र की गई है। पैक्टिन निकालने के बाद शेष छिलके को पशु-आहार के रूप में, अन्य पदार्थों के साथ मिलाकर काम में लिया जाता है।

सन्तरे का रस निकालते समय शेष फल-मैल (पोमेस) सिरका बनाने के लिए उपयोगी है। नींबूवर्गीय मधु-पेय (कोर्डियल) बनाते समय बोतलों में या काष्ठ के पीपे के नीचे जमी हुई अवमल (स्लज) साइट्रिक अम्ल निर्माण के काम आती है।

साइट्रिक अम्ल निर्माण

साइट्रिक अम्ल साधारणतया अवमत, विपणन के अयोग्य नींबू या लट्टा इत्यादि नींबूवर्गीय फलों से बनाया जाता है। इसके लिए फलों का रस तैयार करके, किण्वन क्रिया विघेयक बनाकर, उसमें पाई जाने वाली गोंद, पैक्टिन, शर्करा इत्यादि को दूर किया जाता है। इसी प्रकार उत्पन्न किण्वनीकृत नींबूवर्गीय रस में एक योग्य निष्यन्दक सहायी (Filter Acid) मिलाकर 140° से 150° फारनहीट तापमान पर छाना जाता है, तथा प्राप्त रस में कैल्शियम कार्बोनेट मिलाने से कैल्शियम साइट्रेट अवक्षेपण हो जाता है। इसे तुरन्त निष्यन्दन कर सुखाया जाता है। अगर साइट्रिक ऐसिड घोल रूप में चाहते हैं तो उसे बिना सुखाये ही लेई के रूप में रखा जाता है। इसे समुचित मात्रा में गाढ़े सल्फरिक (गन्धक) अम्ल से उपचार करने से साइट्रेट, साइट्रिक अम्ल में बदल जायेगा। कैल्शियम सल्फेट अवक्षेपण को अलग कर उसे क्रिस्टलीकृत (मणिमय) साइट्रिक अम्ल बनाने के लिए सान्द्रीकरण किया जाता है। बिना किण्वन क्रिया ही रस को कैल्शियम साइट्रेट बनाया जा सकता है तथा उन्हें सोडियम कार्बोनेट के गाढ़े घोल का उपचार कर सोडियम साइट्रेट में रूपान्तरित किया जाता है। सोडियम कार्बोनेट के अवक्षेपण को छानकर उस घोल को वाष्पीकरण द्वारा क्रिस्टलीकृत सोडियम साइट्रेट बना सकते हैं। परन्तु व्यावसायिक-स्तर पर फलों में से साइट्रिक एसिड बनाना लाभदायक नहीं है, कारण कि फल महँगा होता है, लेकिन अवशेषों से बनाया तो लाभदायक है ही। इसलिए व्यावसायिक-स्तर पर साइट्रिक एसिड का निर्माण शर्करा-निर्माण के समय बचे हुए अवशिष्टों को किण्वन क्रिया विघेयक बनाकर किया जाता है।

नींबूवर्गीय फलों से तेल

नींबूवर्गीय फलों को कतरने के पहले उन्हें लोहे के काँटेदार गुच्छों से एक थाली में रखकर उसके ऊपर फलों को हल्का-सा दबाकर दौड़ाया जाता है, किन्तु भीतर चोट नहीं लगनी चाहिए। इस समय फल के छिलकों में उपस्थित तेल, कोशों को फाड़कर तेल निसर-निसर कर बाहर आता है। यह तेल प्लेट में धीरे-धीरे एकत्र हो जाता है। प्रत्येक किस्म के फलों को पृथक्-पृथक् प्रयोग कर तेल निकालना चाहिए। सन्तरे के छिलके में से लगभग 0.54 प्रतिशत तेल प्राप्त हो सकता है, जिसको विपणी में ऑरेन्ज पील ऑयल के नाम से जाना जाता है। इस तेल को ताम्र बोतलों में भरा जाता है। स्पंज की सहायता से काँटों तथा प्लेट को अच्छी तरह पोंछकर सम्पूर्ण तेल को स्पंज द्वारा शोषण कराकर, स्पंज को निचोड़ कर तेल बोतलों में भरा जाता है।

इसके अलावा अन्य नीबूवर्गीय फलो से भी तेल प्राप्त किया जा सकता है। परन्तु व्यावसायिक स्तर पर ऐसी मशीन की सहायता से सन्तरे के छिलके से तेल निकाला जाता है जो गन्ने से रस निकालने के यन्त्र की भाँति होती है। परन्तु इस यन्त्र का रोलर तथा अन्य भाग, जो छिलके तथा तेल के सम्पर्क मे आते है, वे ताम्र से बने होते है। कुछ अन्य यन्त्र ऐसे भी है जो रस तथा तेल साथ-साथ अलग कर देते है। लेकिन यह मशीन स्टेनलैस-स्टील से बनी होनी चाहिए। इसी प्रकार प्राप्त नीबूवर्गीय छिलके के तेल को ताम्र से बनी बोतलो मे भरा जाता है। भरने के पहले तेल मे से उसमे प्रायः पाये जाने वाले जल को अलग किया जाता है। इसके लिए सेपरेटिंग फनल (पृथक्कारी कीप) को काम में लिया जाता है। इस प्रकार प्राप्त नीबूवर्गीय फल-तेलो को कोल्ड प्रोसेस द्वारा प्राप्त माना जाता है।

इसके अलावा नीबूवर्गीय फल-छिलको का तेल आसवन (डिस्टिलेशन) द्वारा भी बनाया जाता है, जिसको हॉट प्रोसेस (तप्त विधि) कहा जाता है। लेकिन यह कोल्ड प्रोसेस की भाँति उच्चकोटि का तेल नही माना जाता।

इसके अलावा केन्द्रीय खाद्य प्रौद्योगिक अनुसन्धान संस्थान मे एक नई कोल्ड ऐक्सट्रैक्शन टेकनीक (शीतल निचोड़ तकनीक) विकसित की गई है, इसके अनुसार छिलकों को चूने या कैल्शियम क्लोराइड से उपचार कराकर तेल को आसानी से निकाला जाता है।

ताजे छिलको के आसवन द्वारा तेल प्राप्त करते हैं। कुछ लोग छिलकों को पहले सुखाते हैं, बाद में उन्हे आसवन कराते हैं। अगर छिलको को बारीक-बारीक कतर लिया जावे और बाद मे उन्हें आसवन कराया जाए तो शीघ्र तेल प्राप्त होगा। प्रूथि तथा गिरधारीलाल ने कोल्ड प्रोसेस द्वारा प्राप्त नागपुर मण्डरिन पील ऑयल का विश्लेषण करने पर पाया कि इटालियन उत्पाद से नागपुर ऑरेञ्ज पील ऑयल मे ईस्टर (Ester) की मात्रा कम पायी गयी, परन्तु फ्लोरिडा मे प्राप्त तेल से अधिक थी। नागपुर सन्तरा तेल संयुक्त राज्य अमेरिका के कृषि विभाग द्वारा टम्परेन तेल के बताये गए विवरणों के बराबर, नागपुर सन्तरा तेल मेल खाता है।

अनन्नास अवशेषों से उपोत्पाद

अनन्नास के विभिन्न फलोत्पाद बनाने के पश्चात् गूदायुक्त छिलके तथा बीच के पित्त (कोर) इत्यादि से यन्त्र की सहायता से रस निकालकर, यथाविधि छानकर फलपेय बनाने में या किण्वन क्रिया विधेयक बनाकर प्राप्त अल्कोहॉल को आटोमोबाइल के काम मे लिया जाता है। आप भली-भाँति जानते हैं कि आजकल पेट्रोलियम उत्पाद की महँगाई को देखते हुए पेट्रोल के स्थान पर एल्कोहॉल मे कार तथा अन्य आटोमोबाइल वाहनों को चलाने का प्रयोग चल रहा है। इसलिए एल्कोहॉल का स्थान प्रमुख होता जा रहा है। वैसे तो फलों मे प्राप्त एल्कोहॉल (मद्यसार) अन्य पदार्थों से बने मद्यसार मे उच्च-कोटि का होता है। अनन्नास अवलेप मे प्राप्त रस को कैल्शियम कार्बोनेट (Calcium Carbonate) मे उपचार कर प्राप्त कैल्शियम साइट्रेट को साइट्रिक अम्ल मे परिवर्तित किया जाता है, जिसकी पहले ही चर्चा की जा चुकी है।

अनन्नास के बीच के पित्त को सुन्दर टुकड़ों में कतरकर फल मिश्री बनाई जाती है। इसकी चर्चा भी पहले की जा चुकी है, लेकिन अनन्नास पित्त नर्म तथा मिठास-युक्त होना चाहिए, क्योंकि अनन्नास की सभी किस्मों के पित्त इसके लिए उपयुक्त नहीं होते। पित्त से रस भी प्राप्त किया जा सकता है। अनन्नास के छिलके, पित्त आदि से रस निकालने के बाद शेष फल-मेष को सुखाकर पशु-आहार के रूप में काम में लिया जाता है। फल तथा तरकारी परिरक्षण में इस प्रकार प्राप्त विभिन्न फल-तरकारी के अवशेषों को सुचारु रूप से तैयार कर उच्चकोटि का पशु-आहार बनाकर मुनाफा कमाया जा सकता है।

इसके अलावा केवल फलरस निकालने के बाद शेष फलमेष को जैम बनाने में भी काम में लिया जा सकता है, लेकिन यह घरेलू स्तर पर या निम्न स्तर के कारखानों में ही सम्भव होगा, जहाँ यन्त्र की सहायता से रस निकाला जाता है, परन्तु कंटक-युक्त भाग को अनन्नास से पहले ही अलग कर देना चाहिए।

टमाटर अवशेष

टमाटर उत्पाद के समय छिलका तथा बीज निकलता है। साधारणतया घरेलू स्तर पर या छोटे कारखानों में अन्य उत्पादों के अवशेषों की भाँति उपोत्पाद नहीं बन पाता, परन्तु बड़े-बड़े कारखानों में टनों अवशेष निकलते हैं, इन्हीं में से बीज को अलग कर तेल निकाला जाता है, जो खाने योग्य होता है। छिलका तथा अन्य अवशेषों को पशु आहार के रूप में काम में लिया जाता है। अगर टमाटर का गूदायुक्त-रस कोल्ड प्रोसेस (बिना ऊष्मोपचार से) द्वारा निकाला जाता है तो प्राप्त बीजों को पौधे बनाने के लिए काम में लिया जा सकता है।

इसके अलावा टमाटरों के हरे-पीले भागों को रस निकालने के पूर्व अलग किया जाता है, क्योंकि यह हरे-पीले भाग टमाटर में रह जाएँ तो उससे उत्पादित टमाटर उत्पाद में वर्णभेद आ सकता है। इसलिए इन्हें भी पशु आहार के रूप में तथा उसमें से प्राप्त बीजों को बोने के लिए काम में लिया जा सकता है।

अमरूद अवशेष

अमरूद के कैनीकरण के समय अगर छिलका उतार दिया जाता है, तो छिलके तथा बीजकक्ष इत्यादि से जैली या जैम बनाया जा सकता है, लेकिन जैम-जैली बनाते समय अमरूद बीज अलग कर देना चाहिए। जैली के लिए फलों का पैक्टिन-युक्त रस ही काम में आता है। शेष फलमेष बीज यानी अमरूद का हलवा (पनीर) बनाने के काम में आता है। अमरूद अवशेषों से पनीर बनाने की एक विधि निम्न प्रकार है :—

पनीर बनाने की विधि

1. अमरूद का गूदा	10 किलो
2. शर्करा	15 किलो
3. साइट्रिक अम्ल	15 से 20 ग्राम
4. मक्खन या वनस्पति घी	1.250 कि०ग्रा०
5. नमक	50 ग्राम

गूदे तथा शर्करा को एक साथ मिलाकर पकावें, ताकि जैम समान हो जाये, या इसे 221° फारनहीट पर पहुँचाया जाये। इसमे साइट्रिक अम्ल मिलाकर पुनः गाढ़ा करें। साथ ही इसमें मक्खन या वनस्पति घी मिला दें। एक बूंद पानी से भरे कांच के गिलास मे डाल कर देखना चाहिए कि यदि वह पैंदे मे बैठ जाये तो मालूम होना चाहिए कि पनीर बन चुका है। इसे फिर वनस्पति या मक्खन-लेपित तश्तरियो मे 8 मिलीमीटर मोटाई मे फैलावें। ठण्डा होने के बाद इसे चक्की की भाँति या चाहे गए अन्य रूप में कतरकर बटर पेपर मे पैक कर लें। इस प्रकार प्राप्त उत्पाद में करीब 36 प्रतिशत शर्करा होनी अनिवार्य है। इसका वर्ण हल्का-भूरा होगा। इसकी सुगन्ध भी अच्छी होगी।

उच्चकोटि के अमरूद से प्राप्त बीज को पौधा बनाने के काम मे लिया जा सकता है, इससे पर्याप्त मुनाफा हो सकता है।

अंगूर अवशेष

अंगूर से मदिरा (वाइन), सिरका, पानक (स्क्वैश) तथा झटपट पेय (आर० टी० एस० बिवरेज) इत्यादि बनाते समय छिलका तथा बीज अवशेष के रूप मे प्राप्त होते है। इनके साथ अंगूर के डण्ठल भी रह जाते है। डण्ठल मे से टारटार क्रीम प्राप्त होती है, बीज से खाने योग्य तेल प्राप्त किया जाता है। अंगूरों को सुखाने से पहले इस तेल में उपचार कर सुखाया जाए तो चमक आ जाती है। शेष खल को पशु-आहार के रूप मे लिया जाता है। फलमेष को पानी डालकर, घोलकर उसमे कैल्शियम हाइड्रोऑक्साइड तथा कैल्शियम क्लोराइड का उपचार कर कैल्शियम टार्ट्रेट अवक्षेपण करा दिया जाता है। इस अवक्षेपण को मंद सल्फ्युरिक अम्ल से उपचार कराकर कैल्शियम को सल्फेट के रूप मे अवक्षेपण कराते हैं। शेष मे से क्रिस्टलीकरण द्वारा साइट्रिक अम्ल प्राप्त करते हैं।

पपीता तेल

पपीते से प्राप्त विशेष अवशेष उसके बीज हैं। यह सफेद तथा काले रंग के होते हैं। उच्च किस्म मे से प्राप्त बीज बोने के लिए उत्तम माने जाते हैं।

गुरुवेकंडेम तथा राव के अनुसार पपीता-बीज मे तेल प्राप्त किया जा सकता है। यह तेल निम्न प्रकार के आपेक्षिक गुरुत्व (30° से० पर) के होते हैं। उनके अनुसार पपीता तेल का आपेक्षिक गुरुत्व 0.9149, 0.9072, 1.4640 तथा 1.4615 एवं अम्ल मूल्य 23 9,6.1 और सफोनिफिकेशन मूल्य 187.9, 1.5615 तथा उनका आयोडिन मूल्य 73.5,74.7 है, परन्तु अनसफोनिफिकेशन पदार्थ 2.7 प्रतिशत, 1.90 प्रतिशत क्रमशः देखा गया। इस तेल में ओलिक 76.50, लिनोलिक 2.13, पामिटिक 11.38, स्टेयरिक 5 25 तथा अरकटिक अम्ल 0.31 प्रतिशत के क्रम मे पाया गया।

इसके अलावा पपीते को पकने के पहले पेड़ पर रहते समय ही इसमें से पपाइन (कच्चे पपीते का दूध) प्राप्त कर अधिक लाभ उठा सकते हैं। कच्चे पपीते पर पतले तेज चाकू से केवल छिलका फाड़कर पपाइन प्राप्त करते हैं। ऐसा करने मे फल मे किसी प्रकार का विपरीत असर नहीं पड़ता, परन्तु इस प्रकार का पपीता विपणन योग्य नहीं रहता, क्योंकि वह विरूप हो जाता है। परन्तु इन पपीतों को पकाकर विभिन्न उत्पाद बनाने के लिए श्रेष्ठ माना जाता है।

फैशनफल अवशेष

फैशनफल से विभिन्न उत्पाद बनाने के पश्चात् कुल फल का करीब 50 प्रतिशत भाग अवशेष रह जाता है। प्रूति (1960) ने प्रतिवेदन दिया कि, इसमें से कार्बोहाइड्रेट अधिक मात्रा में प्राप्त की जा सकती है। इसके अवशेष से अस्कार्बिक अम्ल प्रति 100 ग्राम के अनुपात में 78 से 166 मिलीग्राम, प्रोटीन 12 से 15 प्रतिशत तथा पेक्टिन 9 से 15 प्रतिशत प्राप्त की जा सकती है। फैशनफल से प्राप्त पेक्टिन 175 से 200 जेलीग्रेड श्रेणी की बनाई जा सकती है। इसी प्रकार उपर्युक्त पदार्थों के शेष अवशेषों को खाद के रूप में काम में लिया जाता है।

खूबानी तेल

खूबानी का बीज बादाम की भाँति होता है, मीठी खूबानी के बीजों को बादाम की गिरी के साथ मिलावट करने में असामाजिक व्यापारी चूकते नहीं है। खूबानी (एप्रीकाट) से जैम बनाते समय खूबानी बीज को तोड़कर उसकी गिरि जैम में मिलाने से जैम का स्वाद तथा गुण बढ़ जाता है। कुछ व्यवसायी इससे तेल भी निकालते हैं, जो बादाम के तेल निर्माण की भाँति है। इस तेल को भी निर्मलीकरण करने की आवश्यकता होती है। खूबानी खल को पशु-आहार के रूप में काम में लिया जा सकता है।

आम अवशेष

आम कैनीकरण, अचार विभिन्न पेय बनाने के पश्चात् छिलके तथा गुठली अवशेष रह जाते हैं। पके हुए आम की गुठली तथा छिलके में रहे गूदे को पानी में घोलकर उस रस का सिरका बनाने के काम में लिया जाता है।

गुठली को तोडकर, उसकी गिरी पीसकर, पानी में घोलकर छान लिया जाता है। इस पानी को 24 घण्टे रखने से आटा नीचे बैठ जायेगा। ऊपर तैरता पानी निसराकर आटे को मोटे कपड़े में पोटली बाँधकर लटका देते है। पूरा पानी निसरने के बाद आटे को धूप में सुखाकर मैदा तैयार की जा सकती है, जो भिन्न-भिन्न रूप में खाने के लिए ली जा सकती है। सफेद आटा प्राप्त करने के लिए गुठली-गिरी पीसते समय पोटेशियम मैटाबाई सल्फाइट भी मिलायी जा सकती है।

सन्तरा छिलके से मिश्री

इसके लिए सन्तरे का हरा छिलका काम में नहीं लिया जाता। लाल तथा पीले रंग के छिलके उपयुक्त माने जाते हैं। इन्हे इच्छित आकार में कतर लिया जाता है।

(1) इन कतरे हुए टुकड़ो को 2 प्रतिशत सोडियम बाई कार्बोनेट घोल में 30 मिनट उबालकर छान लिया जाता है। पुनः पानी में धो लिया जाता है।

(2) इसमे 3500 पी० पी० एम० के अनुपात में पोटेशियम मैटाबाई सल्फाइट में उपचार करने से उनका वर्ण तथा सुगन्ध बनाये रखने में भी मदद मिलती है।

(3) सन्तरो को दो भागों में बराबर कतरकर उसमें से फल को अलग कर प्राप्त कटोरीनुमा छिलके को 2 प्रतिशत लवण-घोल में 24 घण्टे रखते है। इसमे प्रतिदिन 2 प्रतिशत लवण और मिला दिया जाता है। इसी प्रकार 8 प्रतिशत बनाने में 4 दिन लगेंगे। पांचवें दिन छिलकों को अलग कर 8 प्रतिशत ताजा लवण तथा 0.2 प्रतिशत सोडियम या पोटेशियम मैटाबाई सल्फाइट तथा 1 प्रतिशत कैल्शियम क्लोराइड घोल में

1 से 3 महीने तक रखा जाता है। फलस्वरूप छिलका ठोस हो जाता है। इन्हें कतर लिया जाता है।

उपर्युक्त विधियों में से किसी एक विधि से तैयार किये हुए छिलकों को मिश्री बनाने के काम में लेते हैं। पहले 30 प्रतिशत शर्करा-घोल की चाशनी में उपचार कर 48 घण्टे रखा जाता है, तीसरे दिन छिलके को अलगकर चाशनी को 40° ब्रिक्स पर लाने के लिए पुनः शर्करा मिलायी जाती है। उबलती चाशनी में छिलका डालकर 5 मिनट उबाल कर रखा जाता है। इसी प्रकार 50°, 60° क्रम में चाशनी गाढ़ी की जाती है। इस समय चाशनी में 0.1 से 0.2 प्रतिशत कोई एक फल-अम्ल मिलाया जाता है। फल-अम्ल छिलके के भार के अनुपात में मिलाते हैं। कुल मिलायी गयी शर्करा की 50 प्रतिशत ग्लुकोज पुनः मिलाते हैं, ताकि 2 से 3 दिन के बाद उसका ब्रिक्स 75° से 80° हो जाये। इस समय छिलके को उसमें से अलगकर, निसारकर, भवन ताप में या निर्जलीकरणी की सहायता से 50° सेन्टीग्रेड तापमान पर सुखाया जाता है।

इस प्रक्रिया में शेष शर्करा-चाशनी अन्य फल-मिश्रियों से प्राप्त चाशनी की भांति पुनः फल-मिश्री बनाने, जैम, जैली, मार्मलेट बनाने या फल-पेयों में सुगन्ध लाने के लिए प्रयुक्त की जा सकती है।

एल्कोहॉल उत्पाद

सन् 1949 में ऐंडमस ने प्रतिवेदन दिया कि कैनीकरण-शाला के अवशेषों से विशेषतौर से नासपाती, सेब इत्यादि के अवशेषों से व्यावसायिक मद्यसार बनाया जा सकता है। इसके लिए उन्होंने भ्रमणशील आसव सयन्त्रों के उपयोग पर जोर दिया, क्योंकि प्रत्येक कैनीकरण-शाला में एक-एक संयन्त्र लगाना सम्भव नहीं था।

सन् 1942 में नोल्ट तथा साथियों ने बताया कि नीबूवर्गीय फल-अवशेषों से मद्यसार बनाया जा सकता है और यह आर्थिक रूप से लाभकारी होगा। इसके आधार पर आज संयुक्त राज्य अमेरिका के कैलिफोर्निया तथा फ्लोरिडा में मद्यसार बनाया जा रहा है, जो वहाँ के कुल मद्यसार उत्पादन का करीब 0.5 प्रतिशत है। एक गैलन 190 प्रूफ एल्कोहल निर्माण के लिए करीब 3 से 3.5 गैलन नीबूवर्गीय शीरा (साइट्रस मुलासस) की आवश्यकता होती है। इसी प्रकार भारत में भी कैनीकरण-शाला के अवशेषों से मद्यसार बनाया जा सकता है।

खाद्य प्रकिण्व

परिरक्षण व्यवसाय में बचे हुए फल अवशेषों से टोरुलोप्सिस यूटिलिस (Torulopsis Utilis) नामक प्रकिण्व बनाया जा सकता है, जो पशु-आहार के रूप में तथा उसके निर्मलीकरण, शुद्धिकरण आदि के पश्चात् मानव-आहार को पौष्टिक बनाने के लिए भी काम में लिया जा सकता है। इससे अविकसित तथा विकासशील देशों की प्रोटीन-कुपोषण की समस्या को काफी हद तक दूर किया जा सकता है। भारत में विशेषकर देश के केरल, लक्ष्य-द्वीप, अण्डमान तथा अन्य दक्षिण-पश्चिम तथा दक्षिण-पूर्वी समुद्र-तटीय प्रदेशों में नारियल से खोपरा बनाते समय शेष नारियल के पानी से भी पर्याप्त टोरुलोप्सिस यूटिलिस प्रकिण्व निर्माण किया जा सकता है।

सन् 1944 में स्टप्स तथा साथियों ने प्रतिवेदन दिया कि सेब, नासपाती तथा पाइनएप्पल के अवशिष्ट रस में से उपर्युक्त प्रकिण्व का उत्पादन किया गया था। प्रयोगशाला स्तर पर 100 ग्राम शर्करा में से उन्होंने 42 से 58 ग्राम सूखे प्रकिण्व का निर्माण किया

बड़े पैमाने पर तो इससे कहीं अधिक निर्माण हो सकेगा, लेकिन सन् 1942 मे ही नोरटे तथा साथियो ने नीबूवर्गीय फल-रस से प्रकिण्व उत्पादन कर रहस्योद्घाटन किया था। आज मात्र सयुक्त राज्य अमेरिका मे ही करीब 10,303,0 से 12,000,000 किलोग्राम सूखे प्रकिण्वो का उत्पादन किया जाता है।

पैक्टिन, पैक्टिन रसायन तथा निर्माण

पैक्टिन एक पोलीसेकाइड (Polysaccharide) पदार्थ है, जो साधारणतया पौधों की अन्तर-कोशिकीय भित्तियो (Intercellular Walls) तथा प्राथमिक कोश-भित्तियो (Primary Cell Walls) मे पाया जाता है। पैक्टिन पौधों में प्रोटोपैक्टिन (Protopectin) के रूप में पाया जाता है। यह प्रोटोपैक्टिन पौधो के फल, पत्तों तथा गूदेदार मूलो में अधिक मात्रा में पाया जाता है। फल पकते समय प्रोटोपैक्टिन, पैक्टिन के रूप मे परिवर्तित हो जाता है। इस परिवर्तन के लिए किण्वक सहायक होते हैं। ये किण्वक फल मे स्वतः उत्पन्न हो जाते हैं तथा इस क्रिया को चालू रखते हैं। यह प्रोटोपैक्टिन साधारणतया जल मे घुलनशील नही होता, परन्तु पैक्टिन में परिवर्तन होते ही जल विलेय हो जाता है। इस ग्रन्थ के पूर्व पृष्ठों मे की गई चर्चा से आप भली-भांति समझ चुके हैं कि पैक्टिन फल तथा तरकारी परिरक्षण में एक सयोजी के रूप मे प्रयोग किया जाता है, जो जैम, जैली, मार्मलेट, कैचप, सॉस इत्यादि को गाढा बनाने के लिए तथा जमाने के लिए अनिवार्य पदार्थ है। आपने यह भी जान लिया है कि पैक्टिन-रहित फलो मे से जैम, जैली, मार्मलेट इत्यादि बनाने के लिए तथा कैचप इत्यादि मे सयोजी के रूप मे मिलाने के लिए व्यावसायिक पैक्टिन काम मे लिया जाता है। यहाँ व्यावसायिक पैक्टिन एक उपोत्पाद के रूप मे किस प्रकार बनाया जाता है, इसके बारे मे चर्चा की जा रही है।

पैक्टिन निर्माण

आपको ज्ञात होगा कि पैक्टिन पौधे मे पाया जाता है, परन्तु प्रत्येक पौधा तथा उसका उत्पाद व्यावसायिक पैक्टिन निर्माण का स्रोत नही होता। इसके लिए कुछ विशेष फल तथा उनके अवशिष्ट ही काम मे लिये जाते हैं। भारत मे पैक्टिन का विदेशो की भांति नीबूवर्गीय फलो के छिलके तथा फैक्ट्री में अवशिष्ट सेब फल-मेवो से निर्माण किया जाता है। इसके अलावा कटहल के कोए (स्कन्द) अलगकर बचे हुए अन्य सभी अवशिष्ट पैक्टिन निर्माण के लिए अधिक उपयोगी सिद्ध हुए हैं।

इसके अलावा मटर के छिलके, अंगूर रस बनाने के पश्चात् प्राप्त अवशिष्ट तथा चुकन्दर भी पैक्टिन के स्रोत हैं।

सन् 1925 मे विलसन ने निम्नलिखित सारणी के पदार्थों मे पायी गयी पैक्टिन की मात्रा की रिपोर्ट की थी।

सारणी

फल-तरकारी का नाम	ताजा फल-तरकारी मे रहे पैक्टिन का प्रतिशत	सूखे फल-तरकारी मे रहे पैक्टिन का प्रतिशत
सेब फल मेव	1.5 से 2.5	15 से 18
लेमन गूदा	3.5 से 4.0	30 से 35
सन्तरा गूदा	3.5 से 5.5	30 से 40
चुकन्दर गूदा	1.0	25 से 30
गाजर	0 62	7 से 14

यन्त्र तथा सामग्री

व्यावसायिक स्तर पर पैक्टिन निर्माण के लिए अधिक पूँजी की आवश्यकता होती है, क्योंकि इसका निर्माण एक जटिल प्रक्रिया है। पैक्टिन निर्माण का तरीका लगभग एक-सा होते हुए भी भिन्न-भिन्न निर्माता पृथक्-पृथक् यन्त्रों का प्रयोग करते है। संयन्त्र तथा उपस्कर, साधारणतया विशेष संयोजन के स्टेनलैसस्टील, माइल्ड स्टील, काष्ठ तथा रबर के अस्तर आदि से बने हुए होते हैं। पैक्टिन निर्माण मे निम्नलिखित प्रक्रियाएँ की जाती हैं—

(1) कच्चा माल तथा उसका उपचार।
(2) निचोड़ तथा निर्मलीकरण।
(3) पैक्टिन को अलग कर शुद्ध करना।
(4) सुखाकर चूर्ण करना।
(5) मानकीकरण करना।

(1) कच्चा माल तथा उसका उपचार

नींबूवर्गीय फलों के अवशेष तथा छिलको मे 0.6 से 5 प्रतिशत पैक्टिन पाया जाता है, परन्तु छिलकों को सुखाने के बाद पैक्टिन की मात्रा करीब 25 से 30 प्रतिशत हो जाती है। देश मे पैक्टिन निर्माण (नींबूवर्गीय फल छिलकों तथा अवशेषों से) अधिकांशत: उन क्षेत्रो मे केन्द्रित है, जहाँ सन्तरा अधिक पैदा होता है। इनमे प्रमुख स्थान महाराष्ट्र (जलगांव) का है। व्यावसायिक स्तर पर पैक्टिन निर्माण के लिए नींबूवर्गीय फलो के छिलको को पहले छोटे टुकडो मे कतर लिया जाता है तथा उसके बाद उन्हें बहते पानी मे धोकर सुखाया जाता है। सुखाने के लिए निर्जलीकरणी काम मे ली जाती है। इसी प्रकार सेब फल-मेप इत्यादि को भी सुखाने के बाद पैक्टिन-निर्माण के लिए काम मे लिया जा सकता है।

(2) पैक्टिन निचोड़ तथा उसका निर्मलीकरण

पैक्टिन निर्माण मे मुख्य काम उसका पैक्टिन-युक्त निचोड़ निकालना है, जो उसके पी० एच० या अम्लता, जल-मात्रा, समय तथा तापमान इत्यादि पर निर्भर करता है। व्यावसायिक रूप मे पैक्टिन निचोड़ के समय पैक्टिन माध्यम का पी० एच० 1 मे 1.5 तथा उसका तापमान 70° से 100° तथा उसके लिए दिया गया समय 1 घण्टे से अधिक हो सकता है।

अगर ताजा फलो मे पैक्टिन निर्माण किया जाता है, तो उसमे जल तथा कच्चे माल का अनुपात 3 : 1 और सूखे पदार्थों के लिए 25 : 1 होता है। पैक्टिन निर्माण के लिए हाइड्रोक्लोरिक अम्ल या सल्फ्यूरिक अम्ल काम मे लिया जाता है, परन्तु जैम-जैली इत्यादि बनाते समय उपर्युक्त धातु अम्लों की बजाय फल-अम्ल (साइट्रिक तथा टार्टरिक अम्ल) काम मे लिये जाते हैं, जिनको जैविक अम्ल भी कहते हैं।

उपर्युक्त सूखा फल पदार्थ जल तथा जैविक अम्ल मिश्रणों को एक निश्चित समय मे (1 घण्टे या अधिक) 70° से 100° सेन्टीग्रेड पर ऊष्मोपचार कर उन्हें छानकर निचोड़

प्राप्त किया जाता है। कुछ व्यवसायशालाओं में अपकेन्द्रीकरण (सेन्ट्रीफ्यूज में) क्रिया द्वारा भी निचोड़ निकाला जाता है। छानने के लिए साधारणतः बास्केट प्रेस या हाइड्रोलिक प्रेस काम में ली जाती है। प्राप्त निचोड को शीघ्रातिशीघ्र 35° से 40° से० पर पहुँचाते हैं। इस समय निचोड़ धुन्धलापन लिये हुए होता है तथा उसमें कई कण निलम्बित होते हैं। इस निचोड को निस्यन्दन सहायकों द्वारा पुनः छान लिया जाता है। इसमें उस समय 0.3 से 0.5 प्रतिशत पैक्टिन होगा। इस निचोड़ को आवश्यकतानुसार द्रव पैक्टिन में या पैक्टिन-चूर्ण के रूप में परिवर्तित किया जाता है।

द्रव पैक्टिन निर्माण

इसके लिए पैक्टिन निचोड को वैक्यूम कॉन्सन्ट्रेशन (रिक्तक-सान्द्रीकरण) द्वारा गाढा बना दिया जाता है। इसमें से पैक्टिन अलग करने के लिए फल-अम्ल (जैव अम्ल) काम में लिया जाता है, जबकि पैक्टिन चूर्ण बनाने के लिए धातु अम्ल अधिक उपयोगी माने जाते हैं।

परन्तु द्रव पैक्टिन का परिवहन-खर्च तथा उसमें होने वाली कठिनाइयों को दृष्टि में रखते हुए यह देखा गया कि उत्पादन-खर्च अधिक हो जाता है, जबकि पैक्टिन-चूर्ण का खर्च बहुत कम रहता है। इसलिए द्रव पैक्टिन-निर्माण अव्यावहारिक माना जाता है, परन्तु प्रत्येक व्यवसायशाला में आवश्यक पैक्टिन द्रव के रूप में, परिसर में प्राप्त सस्ते फलों से प्राप्त कर संचयन किया जा सकता है, जो भविष्य में काम में लिया जा सके।

(3) पैक्टिन को अलग करना

पैक्टिन-निचोड़ को रिक्तक सान्द्रीकरणी में 40° से 50° से० पर गाढा बनाकर उसमें आवश्यकतानुसार इथयल अल्कोहल (इथयल-मद्यसार) या आइसो प्रोपेल एल्कोहल मिलाकर उसमें पाये जाने वाले अधिकांश पैक्टिन का अवक्षेपण कराया जा सकता है। इस अवक्षेपण को निष्यन्दनीकरण (छानकर) द्वारा अलग कर, उस पैक्टिन को यन्त्र की सहायता से दबाकर उसमें पाये जाने वाले विलायक को अलग कर देते हैं। इस अवक्षेपित पैक्टिन को मन्द एल्कोहल घोल में पुनः निलम्बित कर दिया जाता है, जिसमें 60 से 70 प्रतिशत एल्कोहल होता है। इस पैक्टिन को पुनः दबाकर विलायक को अलग कर देते हैं। इस प्रकार प्राप्त शुष्क पैक्टिन टिकियों को पुनः एबसोल्यूट एल्कोहल में उपचार कर पुनः दबाव देकर निकालते हैं। इसी प्रकार एल्कोहल उपचार की हुई पैक्टिन-टिकियों को यन्त्र द्वारा कतर लिया जाता है, इन्हें वैक्यूम ड्रायर की सहायता से इतना सुखा लेते है कि उसमें 5 से 10 प्रतिशत नमी रह सके। इस सूखे पैक्टिन को यन्त्र द्वारा पीसकर चूर्ण बनाया जाता है तथा फिर मानकीकरण किया जाता है।

पैक्टिन अलग करने की एक अन्य विधि

पैक्टिन-निचोड़ को बिना सान्द्रीकरण किये ही उसमें आवश्यकतानुसार एल्युमीनियम सल्फेट या एल्युमीनियम क्लोराइड मिलाकर पैक्टिन का अवक्षेपण कराया जाता है। इस समय उसकी चाही गई पी० एच० मात्रा होना अनिवार्य है। साधारणतया 4 से 4.5 पी० एच० शृंखला के पी० एच० मान निचोड़ में 1 से 2 प्रतिशत एल्युमीनियम सल्फेट मिलाया जाता है, ताकि अधिकाधिक पैक्टिन अवक्षेपित कराया जा सके।

इसी प्रकार अवक्षेपित पैक्टिन को निष्यन्दन क्रिया द्वारा अलग कर उसको अम्लीकृत इथयल एल्कोहल उपचार द्वारा एल्युमीनियम लवण को अलग किया जाता है। बार-बार उपर्युक्त उपचार द्वारा धोकर, निचोडकर एल्युमीनियम लवण को सम्पूर्ण रूप से अलग किया जाता है। एल्कोहल तथा अम्ल से उपचार करने से पैक्टिन, एल्युमीनियम लवण रहित हो जाती है।

इस पैक्टिन को ताजा इथयल एल्कोहल मे निलम्बित कर बची हुई अम्लता को भी दूर किया जाता है। इन क्रियाओ में काम मे लिये गये एल्कोहल को पुनः काम मे लिया जा सकता है।

(4) सुखाकर चूर्ण बनाना

उपर्युक्त क्रिया द्वारा प्राप्त गीले पैक्टिन में करीब 60 से 70 प्रतिशत नमी होगी। इसको वैक्यूम ड्रायर की सहायता से सुखाया जाता है, ताकि 5 से 10 प्रतिशत ही नमी रह सके। यन्त्र की सहायता से इसका चूर्ण बनाया जाता है।

उपर्युक्त दोनो विधियो से तैयार किये गये पैक्टिन का मानकीकरण किया जाता है, ताकि उपभोक्ता को एक ही श्रेणी के उत्पाद प्राप्त हो सकें। पैक्टिन का मानकीकरण जैली ग्रेड के आधार पर किया जाता है। रासायनिक विधि द्वारा या जैली बनाकर जैली ग्रेड निर्धारित किया जाता है। रासायनिक विधि कैल्शियम पैक्टिनेट बनाकर निर्धारित की जाती है, लेकिन केवल रासायनिक विधियों द्वारा पैक्टिन की जैली-स्ट्रैंथ (जैली-शक्ति) का यथार्थ मूल्य नही आका जा सकता, क्योंकि शुद्धिकृत पैक्टिन का संयोजन भिन्न-भिन्न होता है। इसलिए नमूने की जैली बनाकर ही जैली-ग्रेड निर्धारित किया जाना सम्भव होगा।

श्रेणीकरण विधि

कर्ट्ज (Kertez) के अनुसार निम्न विधि द्वारा पैक्टिन का श्रेणीकरण जैली बनाकर निर्धारित किया जा सकता है। उसके अनुसार जैली बनाने के लिए साधारणतया 65 प्रतिशत शर्करा, जैली का पी० एच० 3.00 ± 0.05 होना चाहिये तथा जैली बनाने के 18 घण्टे बाद जैली-शक्ति को नापना चाहिये।

एक कांच के बर्तन तथा एक कांच दण्ड को पहले तोल लें। उसमें 320 एम० एल० (M L) आसवित ठण्डा जल, 500 ग्राम शर्करा तथा एक व्यावसायिक पैक्टिन, जिसका ग्रेड मालूम करना हो, उसको पहले ही निर्धारित (मानकीकृत) पैक्टिन से बनी जैली से तुलनात्मक अध्ययन द्वारा निर्धारित किया जा सकता है। इसके लिए पैक्टिन [illegible] आवश्यकतानुसार उसमें मिला दें। मिलाने से पूर्व पैक्टिन में उसके [illegible] 5 गुणा चीनी मिला लें। ध्यान रखें कि 500 ग्राम शर्करा, जो पहले ही बताई गई मे से ही पैक्टिन मे मिलाने के लिए लेनी चाहिये। इस पैक्टिन शर्करा [illegible] बर्तन मे भरे जल मे मिलाया जाये। इसमें करीब 0.5 एम० एल० [illegible]
मिलावें (100 एम० एल० जल मे 50 ग्राम साइट्रिक अम्ल [illegible]
तथा 1 एम० एल० सोडियम एसिटेट (10 एम० एल० जल मे 50 [illegible]
एसिटेट मिलाये हुए घोल में से) मिलावें। [illegible]
प्रत्येक [illegible] में (जार मे) 2 एम० एल० साइट्रिक [illegible] 0.5 एम० [illegible]

घोल डाला जाये। पैक्टिन शर्करा मिश्रण को पानी में घोलकर मिलावें। इस मिश्रण को ऊष्मोपचार द्वारा पकाया जाये। इस समय धारावाहिक तरीके से मिलाते रहें। इसके लिए कांच का दण्ड काम में लिया जा सकता है। उबलने में करीब 30 सेकण्ड समय लगेगा। इस समय शेष रही शर्करा को उसमें मिलाया जाये। मिश्रण को पुनः ऊष्मोपचार द्वारा उबाल दे, ताकि 770 ग्राम भार रह जाये। इसके लिए कांच के बर्तनों को आंच से हटाकर बार-बार तोलकर निश्चित करना चाहिये कि 770 ग्राम भार में पहुँचा या नहीं। जब 770 ग्राम पर पहुंच जाता है, तब ऊष्मोपचार बन्द कर उसे जमने के लिए रख दिया जाता है। जैली बनते समय निर्मित झाग को अलग कर देना चाहिये। इसके लिए करीब 30 सेकण्ड रखने के बाद अलग किया जा सकता है। इसके तुरन्त बाद जैली बरनियों में भरकर कांच के दण्ड से खूब हिला दिया जाता है। इस जैली को 18 घण्टे रख दिया जाता है, ताकि जैली जम जाये। इसके लिए भवन-ताप 26° सेन्टीग्रेड होना चाहिये। ठण्डा होने के बाद बरनियों में से जैली को साबुत निकालकर एक समतल स्थान पर रखते हैं। इस जैली को इस दौरान बनायी गयी मानकीकृत जैली के साथ तुलनात्मक अध्ययन द्वारा जैली का मानकीकरण निर्धारित किया जाता है। साधारणतया प्रत्येक जैली पीस को कतरकर अंगूठे तथा अंगुली के बीच में रखकर, दबाकर, निचोड़कर देखते हैं, ताकि जैली टूट जाये। इसी प्रकार दो जैलियों के तुलनात्मक अध्ययन द्वारा अमानकीकृत पैक्टिन से बनी जैली का मानकीकरण (ग्रेड) मालूम करने के लिए काफी अनुभव की आवश्यकता होती है।

जैन तथा गिरधारीलाल द्वारा पपीता, बेल-फल तथा कटहल के अवशेषों से प्राप्त पैक्टिन का भी मानकीकरण किया गया था। सिद्दप्पा तथा भाटिया के अनुसार कटहल के अवशेषों में 2 प्रतिशत पैक्टिन होती है। एक व्यावसायिक पैक्टिन में अधिक जैलीकरण-शक्ति (जमने की शक्ति) अधिक होनी चाहिये। इसी प्रकार प्राप्त व्यावसायिक पैक्टिन उसके स्रोत के आधार पर भिन्न-भिन्न जैलीकरण-शक्ति की होती है, जिसके आधार पर पैक्टिन निर्माता उसके उत्पाद पर मानकीकृत नम्बर दे देते हैं। इन नम्बरों के आधार पर पहले ही अनुमान लगाया जा सकता है कि अमुक श्रेणी (ग्रेड) के पैक्टिन से निर्मित जैली कितने समय में जम जायेगी तथा कितनी शर्करा मिलानी होगी। इसको ही पैक्टिन का मानकीकरण या श्रेणीकरण कहा जाता है।

इसी प्रकार पैक्टिन को 100 ग्रेड (श्रेणी), 110 ग्रेड इत्यादि सूचना दी जाती है। 100 ग्रेड पैक्टिन चूर्ण का मतलब है, 1 किलो पैक्टिन में 100 किलो शर्करा मिलाई जाये तथा उसमें आवश्यक पी० एच० परिस्थिति, फल-अम्ल द्वारा उत्पन्न की जाये तो जैली बन जायेगी। इसी प्रकार व्यावसायिक पैक्टिन के ग्रेड के आधार पर उसकी कीमत आंकी जाती है, अर्थात् अधिक संख्या के ग्रेड-युक्त पैक्टिन की कीमत अधिक होगी।

□□□

शब्दावली

(Glossary)

A

1. Acetic Acid	ऐसिटिक ऐसिड, ऐसिटिक अम्ल
2. Acedity	अम्लता
3. Additive	संयोजी, योगात्मक
4. Aerobic	वायुजीवी
5. Ageing	काल-प्रभावन
6. Agitating cooker	विलोडीकरणी
7. Air Circulation	वायु परिसंचरण
8. Alcohol	एल्कोहल, मद्यसार
9. Amino Compounds	ऐमिनो संयुक्त
10. Amino Acid ring structure	ऐमिनो एसिड या ऐमिनो अम्ल वलय संरचना
11. Anaerobic	अवायुजीवी
12. Apicultatus	ऐपीकुलेटस
13. Appertizing	अपर्टीकरण
14 Apricot	खुबानी
15. Ash Gourd	पेठा
16. Asepsis	अरोगावता अपूति
17. Aspergillus	ऐस्पर्जिलस
18. Autoclave	ऑटोक्लेव

B

1. Bacillus	बैसिलस
2. B. subtillis	बै० सब्टिलिस
3. B. cereus	बै० सीरियस
4. Bacteria	बैक्टीरिया, जीवाणु
5. Boume Hydrometer	बाउमी हाइड्रोमीटर
6. Barley Water	यव जल (जौ जल)
7. Barrier property	रोधक गुण
8. Barry fruits	बरी-फल, सरस-फल
9. Biological causes	जैविक कारण

10. Black Neck	नील-कण्ठ
11. Blanching	विवर्णीकरण
12. Boiling point	क्वथनांक बिन्दु
13. Breathing	श्वसन
14. Brine	लवण
15. Brining	लवणीकरण
16. Brine gravitation flow	लवण गुरुत्वाकर्षण प्रवाह
17. British Thermel Unit (B. th. u.)	ब्रिटिश थर्मल यूनिट, ब्रिटिश ऊष्मा मात्रक
18. Browning	बभ्रूकरण
19. Brussels sprouts	ब्रुसल्ज स्प्राउट (ब्रुसल्ज अंकुर)
20. Bulging	फुल्लन, फूलना
21. Busting	फटना
22. By-products	उपोत्पाद

C

1. Cabbage	पत्तागोभी, बन्दगोभी, करमकल्ला
2.Canning	कैनीकरण
3 Cans swells	कैन फुल्लन (सूजन)
4. Cannery End	कैनरी बन्धन (कैनरी अंतिम)
5. Cayenne paper	कैयेन मिर्च
6. Carbonated Beverage	कार्बनीकृत पेय
7. Carrot	गाजर
8. Casein	केसीन
9. Catalizing agent	उत्प्रेरक सहायी
10. Centigrades	सेन्टीग्रेड
11. Cherry	चेरी (गिलास)
12. Chemical organic sub-stance	रासायनिक जैविक पदार्थ
13. Chili sauce	चिलि सॉस, मसाला सॉस
14 Chutneys	चटनी
15. Cider	सेब मदिरा
16. Climacteric	प्रतिसधी-युक्त, संकटकालीन युक्त
17 Clavage products	विदलित उत्पादन
18 Cold Storage	शीतगोदाम, शीतसंग्रहगार
19. Colloid	कोलाइड
20. Commercial Canning	व्यावसायिक कैनीकरण

21. Commercial Sterlization	व्यावसायिक निर्जर्मीकरण
22. Commercial Yeast	व्यावसायिक यीस्ट, व्यावसायिक प्रकिण्व
23. Concentrated product	सान्द्रीकृत उत्पाद, सान्द्रित उत्पाद
24. Concentric circular ridge	संकेन्द्री वर्तुल मेंड
25. Conidia former	कोनिडिया उत्पाद
26. Condiments	मसाला
27. Conduction Heating	चालन ऊष्मीकरण, चालन तापन
28. Continuous Agitating Cookers	निरन्तर विलोडीकरण पाचकीकरणी
29. Container	वाहिका
30. Cordial	मधुपेय
31. Convectiyn heating	संवहन तापन, संवहन ऊष्मीकरण
32. Copper Coils	ताम्र कुण्डली
33. Cordial	मधुपेय, कोरडियल
34. Coreing knife	क्रोड चाकू या क्रोडीकरणी चाकू
35. Crystalized fruits	क्रिस्टलीकृत फल, मणिमय फल
36. Cucumber	खीरा
37. Curried Vegetable	पकी-पकाई तरकारी
38. Curing	तराई करना, उपचार करना
39. Correction	शोधन, संशोधन

D

1. D te fruits	पिण्ड खजूर
2. Deaeration	निर्वायु मिश्रण, निर्वायुकरण
3. Dehydration	निर्जलीकरण
4. Dehydrator	निर्जलीकरणी
5. Dehydro-freezing	निर्जलीकरण-हिमीकरण
6. Defects in cans	कैन त्रुटियाँ
7. Discontinuos	अधारावाहिक
8. Double seaming	द्वि-संतरण
9. Dry ice	शुष्क हिम, घन कार्बनडाई ऑक्साइड
10. Decomposition	अपघटन
11. Dextrose	डेक्सट्रोस

E

1. Easters	ईस्टर्ज
2. Eddible colours	खाद्यवर्ण (रंग)
3. Egg albumen	अण्डश्वेती

4. Electron	इलेक्ट्रॉन
5. End point	समाप्त या समापन विन्दु
6. Enzyme	एन्जाइम, किण्वक
7. Equation	समीकरण
8. Exhausting	निर्वातीकरण
9. Exhausting box	निर्वातीकरण कक्ष
10. Explosive	विस्फोटक
11. Extraction	निष्कर्षण, निचोड़

F

1. Facultative anaerobic	विकल्पी अवायुजीवी
2. Factor	कारक
3. Fahrenhiet	फारेनहीट
4. Fermentation	किण्वन
5. Fermented Beverages	किण्वनीकृत पेय
6. Fibrillar theory	तंतुक सिद्धान्त
7. Field heat	क्षेत्रीय या स्थानीय ऊष्मा
8. Filtration	निष्यंदन
9. Fig	अंजीर
10. Firssion product	विस्फोटनोत्पाद
11. Flank	पार्श्व
12. Flash	क्षण
13. Flavour	सुगन्ध
14. Flat sour	खट्टी बदबू
15. Flexible containers	नम्य वाहिका
16. Foaming	फेनीकरण या झाग उत्पन्न होना
17. Food poisoining	खाद्य विपाक्तन
18. Freezer	हिमीकरणी (फ्रिजर)
19. Freeze-Dehydration	हिमीकरण-निर्जलीकरण
20. Fruit candy	फल मिश्री
21. Fruit toffee	फल टॉफी

G

1. Gang slitter	गॅग स्लिटर
2. Gelatin	जिलेटिन, श्लेष
3. Ginaca Machine	जिनाका मशीन
4. Germproof-filter	सूक्ष्मजीव रोधक निष्यंदक
5. Glacing	धवलीकरण

H

1. Hansenula	हैंसेनुला
2. Hard Water	दुष्फेनक जल
3. Head space	शीर्ष स्थान
4. Head processing	ऊष्मा संसाधन
5. Hermatically sealing	निर्वात संस्तरण या द्वि-संस्तरण
6. Horizontal Retort	अनुप्रस्थ रिटोर्ट
7. Hot	ऊष्म
8. Hot Brake Method	तप्त विधि
9. Hot sauce	तीखी सॉस या चरपरी सॉस
10. Humidity	आर्द्रता
11. Hydrolization	जल अपघटन
12. Hydrozen swell	हाइड्रोजन सूजन
13. Hydro cooling	जल शीतलीकरण
14. Hydrolytic enzyme	जलीय किण्वक

I

1. Ice Bunker method	हिमकोष्ठ विधि
2. Incubation	ऊष्मायन
3. Ionization	अयोनीकरण
4. Ionizing radiation	अयोनीकरण विकिरण
5. Invert sugar	प्रतीप शर्करा
6. Iron sulphide	लोह सल्फाइड
7. Iron pickling	लोह अम्लीकरण
8. Isotope	आइसोटोप
9. Isinglass	ईसनग्लास

J

1. Jam	जैम
2. Jelly	जैली
3. Jelmeter	जल मीटर
4. Jell thermameter	जैली थर्मामीटर

K

1. Kiln Drier	किन ड्रायर
2. Ketchup	कैचप

L

1. Lactic acid	लैक्टिक अम्ल
2. Latent heat of vaporization	जलगुप्त ऊष्मा

3. Lactic acid bacteria	लैक्टिक अम्ल जीवाणु
4. Lacquering	लाकीकरण
5. Leak	लीक, रिसना
6. Lemon	लेमन (लवण)
7. Lime	कागजी नीबू
8. Lima beans	लिमा सेम
9. Lock seaming	सस्तर बन्धन
10. Loquat	लोकाट (जापान फल)

M

1. Maintenance	अनुरक्षण
2. Magnifying lens	आवर्धक लेन्स
3. Maltose	माल्टोज, यवशु
4. Maturing	परिपक्वीकरण
5. Mechanical Refrigeration	यान्त्रिक प्रशीतन
6. Metabolic product	उपापचयी पदार्थ
7. Mesophilic	पर्णमध्योतक, अल्प ऊष्णप्रिय
8. Micro-organism	सूक्ष्मजीव
9. Metal condomination	धातु मालिन्य
10. Mould	फफूंद
11. Multicellular	बहुकोषी
12. Mulberry	शहतूत
13. Mushroom	छत्रक, कुक्कुरमुत्ता
14. Muskmelon	खरबूजा
15. Mycoderma	माइकोडर्मा

N

1. Neutron	न्यूट्रॉन

O

1. Obligate thermophile	अविकल्पी तापरागिता
2. Obligate thermophilic	अविकल्पी तापरागी
3. Open cooker	खुला पाचकीकरणी (भगोना या स्टीम जैकटेट केतली
4. Organic catalyst	जैव उत्प्रेरक
5. Osmosis	परासरण
6. Oval shaped	अण्डाकार
7. Oxigen	प्राणवायु, ऑक्सीजन
8. Oxidation	ऑक्सीकरण, प्राणवायु क्रिया

P

1. Packing	पैकिंग संवेष्टन
2. Pad	गद्दी
3. Parasitic	परजीवी
4. Pasteurization	पास्तुरीकरण
5. Peaches	आड़ू
6. Penicillium	पेनिसिलियम
7. Pectine	पैक्टिन, माश्लेरि
8. Pectinase	पेक्टिनेस
9. ph.	पी० एच०
10. Pichia	पिचिया
11. Pigments	वर्णक
12. Ponceau	पोनस्य
13. Potassium Metabisulphite	पोटेशियम मैटाबाई सल्फाइट
14. Potential of hydrogen ions	हाइड्रोजन आयन सान्द्रण
15. Precipitation	अवक्षेपण
16. Principles of preservation	परिरक्षण सिद्धान्त
17. Pre-treatment	पूर्व क्रिया
18 Preservative	परिरक्षक
19. Preserve (Mango)	मुरब्बा (आम)
20. Pressure cooker	प्रैशर कुकर, दाब पाचकीकरणी
21. Precursor	पूर्वगामी
22. Processing	संसाधन
23. Protein	प्रोटीन
24. Proton	प्रोटोन
25. Pulping machiné	पल्पिंग मशीन, लुगदीकरणी
26. Pseudo yeast	आभासी प्रकिण्व, स्यूडो यीस्ट
27. Puree	प्युरण

Q

1. Quality	गुण, विशेषता
2. Quick freezing	शीघ्र हिमीकरण

R

1. Rate of Evolution	विकास अनुपात
2. Rod	रॉड, दण्ड
3. Recipe	योग
4. Radiation	विकिरण

5. Radio-active decay	रेडियो-एक्टिव क्षय
6. Rancidity	विकृत गन्धिता
7. Ready to serve Beverage	तुरन्त, झटपट पेय
8. Reducing sugar	अपचयनीकरण शर्करा, लघुकारक शर्करा
9. Reading	पठन, पाठ, सूचना
10 Reference	संदर्भ
11. Reduced Pressure	लघु दाब
12. Refregerants	प्रशीतक, रिफ्रिजरेन्ट
13. *Refrigeration Load*	*प्रशीतन भार*
14. Relative humudity	सापेक्ष आर्द्रता
15. Refrigeration	प्रशीतन
16. Retention	धारण
17. Rhizobium	राइजोबियम
18. Rhizopus Stolonifer	राइजोपस स्टोलोनिफर
19. Rhodhoturula ruba	रोडोटूरुला रूबा
20. Rigid container	दृढ़ वाहिका, कठोर वाहिका
21. Rod shaped	दण्डाकार
22. Roller	रोलर
23. Room temperature	भवन ताप

S

1. **Sachharomyces ellipsoideus**	सैकेरोमाइसीज इलीपसोइडियस
2. **S. Cervisiae**	सै० सेरेविसी
3. **S. ludwigii**	सै० लुडविगाई
4. **S. Fyriformis**	सै० फिरिफोरमिस
5. ***S. Pyriformis***	*सै० पाइरोफोर्मिस*
6. Salometer	सालोमीटर
7. Saprophite	मृतजीवी
8. Sauerkraut	सौरेक्राट (पत्तागोभी अचार)
9. Scroll shears	स्क्रोल शीयर
10. Scum	झाग, मलफेन
11. Sea weeds	सागर खरपतवार
12. Semi permeable membrane	अर्द्ध पारगम्य झिल्ली
13. Sensible heat	संवेद्य ऊष्मा
14. Sodium Benzoate	सोडियम बैन्जोयेट
15. Soft water	मृदुजल, कोमलजल
16. Spore former	बीजाणु उत्पादक, स्पोर फारमर

17. Storage	गोदाम
18. Store	संचित
19. Sporangium	बीजाणुधानी, स्पोरेन्जियम
20. Specific gravity	आपेक्षिक गुरुत्व
21. Spinach	पालक
22. Spinger	फूटन
23. Spices	गर्म मसाले
24. Spherical	वृत्ताकार
25. Standard	मानक
26. Standardization	मानकीकरण
27. Starch	वनस्पति मण्ड
28. Steam flow closure	भाप प्रवाह बन्धन
29. Stewed	सीफ्नीकृत, मापदत्त
30. Sterlization	निर्जर्मीकरण
31. Streptococcus faeclis	स्ट्रेप्टोकोकस फिकलिस
32. Sulphuring Chamber	गन्धकीकरण कक्ष
33. Sulphur dioxide	सल्फरडाई ऑक्साइड
34. Syrup	सीरप, शर्बत
35. Subract	घटाना
36. Sweating	स्वेदीकरण

T

1. Temperature Constants	ताप स्थिरता
2. Temperature metabolism	ताप उपापचय
3. Thawing	थाविंग, निहिमीकरण
4. Thermo couple	थर्मोकपल, ऊष्मा विद्युत् युग्म
5. Thermophilic organism	तापरागी सूक्ष्मजीव
6. Thermal Processing	ऊष्मा संसाधन
7. Tin	टिन, रांगा
8. Tin can	टिन कैन
9. Tin plate	टिन प्लेट, टिन चद्दर
10. Tin less tin container	टिन रहित रांगा पात्रिका
11. Torulopsis utilis	टॉरूलोप्सिस यूटिलिस

U

1. Ultra violet	अल्ट्रा वायलेट

V

1. Value	मूल्य
2. Vaccum	निर्वात, रिक्त

3. Vaccum gauge	रिक्तकमापी
4. Vacuum tester	रिक्तक शोधिनी
5. Vaccumizing chamber	निर्वातीकरणी
6. Vegetative cell	वनस्पति कोशिका
7. Vertical retort	खड़ा रिटॉर्ट
8. Viscosity	विसकासिता, श्यानता
9. Vinegar	सिरका
10. Vitamins	विटामिन
11. Vital heat	जैव ऊष्मा
12. Volume	परिमाण, आयतन

W

1. Water content	जलांश, जलधारिता
2. Washing	प्रक्षालन, धोना
3. Waxing	मोमलेपन
4. Weeping jelly	निसरक जैली
5. Wine	मदिरा

X

1. X-Ray	एक्सरे, रश्मि

Y

1. Yeast	प्रकिण्व, यीस्ट, खमीर



Bibliography

A.

1. AFST/CFTRI "Proceedings of the First Indian Convention of Food Scients and Technologists" held on 23–24 Jan., 1978 at Mysore.
2. Anand, J. C. and et al (1958) "Effectiveness of some of the chemical food preservatives in controlling fungal spoilage in mango squesh." Food Science.
3. Amin, H. D. and Bhatia, B. S. (1962). "Studies on dehydration of some tropical fruits. II. Drying rates as affected by various factors, "Food Science.
4. American Chemical Society, "Radiation preservation of Food : a Symposium, Atlantic City, N. J. 1965." Food Technology, 21 : 1382, Oct. 1967.
5. AFST (India) Northern Zone–1977. "A symposium on Dehydrated Foods Industry in India" December 10 & 11, 1977. New Delhi.
6. Ayers, S. H. (1937), Recent Development in Canning Fruit Juices, Fruit Products Journal 17, 41–42, 55.

B.

7. Bhatia, B. S. & Kuppuswamy, S. (1961). "Scope for the development of fruits and vegetable dehydration industry in India," Food Science.
8. Bhatia, B. S. et al (1959). "Dehydration of Fruits and Vegetables." Food Science.
9. Bhatia, B. S. et al (1955). "Black Neck of tomato ketchup." Bull. 1955, C. F. T. R. I. Mysore.
10. Bhatia, B. S. et al (1958). "Retention of ascorbic acid in tomato ketchup and guava jelly during storage.' Food Science. 1958.
11. Bhatia, B. S. et al (1962). "Studies on dehydration of some tropical fruits—Absorption and tension of sulphur dioxide during sulphuring and sulphiting" Food Science. 1962.
12. Benink, J. C. (1974). "Cleaning in the food industry." C. S. I. R. O. F. D., Res. Qurt. Vol. 34. No. 3 Sept. 1974.
13. Bhatia, D. S. (1951). "Packing in food industries : 1-Packing materials." Bull. C. F. T. R. I., 1951, 156.
14. Bhatia, A. K. (1977). "A simple Solar Fruit Dryer for the rural Areas." Symposium on Dehydrated Foods Industry in India." December 10 & 11, 1977, A. F. S. T. (N.Z.) India. New Delhi.

15. Birdseye, C. (1930). "Ice and Refrigeration" 78., 549, 1930. J. Franklin Inst. 215, 411.
16. Bhatt, P. H. (1930). "Home Preservation of Fruits." Farm Information Unit- Ministry of Food and Agriculture, New Delhi.
17. Butiani, R. C. (1956). "Role of additives and preservatives in Food Products. Fruit and Vegetable Industry in India." C. F. T. R. I. Mysore.

C.

18. Can manufactures Institute, Inc. Canned food in Nutritional Spot light, New York.
19. C. F. T. R. I. (1977). Home-Scale Processing and Preservation of Fruits and Vegetables. C.F.T.R.I. Mysore-3.
20 Casimer, (1973). Production of Pear Puree and concentrated product. C. S. I. R. O., Food Res. Quarterly 33, 3, 1973.
21. Chenoweth, W. W. (1944). "Food Preservation." John Wiley & Sons, Inc. Newyork.
22. Cox, H. E. (1946). "The chemical analysis of Foods." J & A Churchill Ltd., London.
23. Cruess, W. V. (1958). "Commercial Fruits and Vegetable Products." Mc-Graw Hill Book Co. Inc. Newyork.
24. Cassarett, A. P. (1968). "Radiation Biology." Prentice-Hall. Englewood, Cliffs Jersey.
25. C.S.I.R.O. (1978). "Fitting Thermo Couples into Cans." Fd. Res. Quarterly. Vol. 38, No. 2, June, 1978.
26. C.S.I.R.O. (1974). "Sulphur dioxide and foods." Food Res. Quarterly Vol. 34, No. 4, December, 1974.
27. Chandran, T.C. (1977). "A Solar Pre-Heater for Spray Drying of Milk." Symposium on Dehydrated Food Industry in India. December 10 & 11, 1977. A.F.S.T. (India) N.Z. New Delhi.

D.

28. Das. D. P. and Jain, N. L. (1955). "Loss of Ascorbic Acid and Carotene during the preparation and storage of dried mango pulp." The Bull. C.F.T.R.I. Mysore. Vol. 4 (7).
29. Das. D. P. et al (1958). "Stability of some Synthetic Colours in orange squash during storage." Indian Journal of Agric. Science.
30. Das. C. S. et al (1956). "Role of antioxidants in the preservation of Fruits and Vegetables." Bull. Cent. Fd. Technol. Res. Inst. Mysore.

31. Davis, M. B. (1942). "Factors affecting the quality of dehydrated vegetables." Food Technologist.

32. Dharkar, S. D. & Sreenivasan, A. (1966). "Irradiation of tropical Fruits and Vegetables." Food Irradiation, International Atomic Energy Agency, Vienna.

33. Dharkar, S. D. et al "Irradiation of mangoes, Rādiation undried delay in Repening of Alphonso Mangoes," Atomic Energy Commission Bombay.

34; Dharkar, S. D. et. al. Development of a Radiation, Process of some India Fruits, Mango and Sapodillas," Atomic Energy Establishment Bombay.

35. Dharkar, S. D. (1964). "Radiation Sterilization of orange juice," India Journal C. Technology, 1964 Vol. 2, No. 1 : pp. 24–26.

36. Donald K. Tressler (edited) (1968). "The Freezzing preservation of Foods." The Avi Publishing Co., West Part Connecticut.

37. Deb, J. C. and Chandra Sekhara (1960). "Ascorbic acid concentration from Aonla" Food Science.

38. Dhar, A K. and Roy, B. R. (1977). "Standards of quality of debydrated Foods Symposium on Dehydrated Foods Industry in India." December 10 & 11, 1977. A.F.S.T. (N.Z.). New Delhi.

39. Dowling (M. J.) Blast freezing and food quality. Food Process Industry. 44 (529). 1975 : 15–20.

E.

40. Fruit Product order (1955). (As amended as to 18.2.1972). Govt. of India, Ministry of Food and Agriculture, New Delhi.

41. Farkus, J., Dharkar, S. D. and Sreeniwasan A. (1972). "Transportation and storage studies on Irrediated Alphonso Mango." Act a Alimentaria. Vol. 1 (3-4), pp. 401-410 (1972).

G.

42. Girdhari Lal (1944). Vitamin C. (Ascorbic Acid) content of Citrus Fruit Squashes. Ind. J. Agri. Sci. 14 (11).

43. Girdhari Lal and Pruthi. J. S. (1955). Ascorbic Acid retention in Pineapple products. Indian Journal of Horticulture. 1955.

44. Girdhari Lal and Pruthi. J. S. (1950). Preservation of pure Citrus juice. Ind. Food packer.

45. Grahan, M. N. "Nutritive value of Frozen Foods" Fruit Prod. 1942.

46. Girdhari Lal and Das, D. P. (1956). "Studies on jelly making from Papaya, India J. Hort

47. Girdhari Lal et al (1960). Preservation of Fruits and Vegetables I. C. A. R., New Delhi.

H,

48. Haris, J. J. (1947). Chlorination in Food Plant. Continental Can. Co., Res. Department Bull.

49. Hall, E. G. (1972). Pre-cooling and container shipping of citrus fruits. C. S. I. R. O., Food Research Quarterly, Vol. 32, Number-1, March, 1972, Sydney.

I,

50. Irish, J. H. (1928). Fruit juice and fruit juice Beverages, Univ. Calif , Expt. Station.

51. Iyengar, N. V. R. and Sankaran, A. N. "Labelling of Foodstuffs." Fruit and Vegetable preservation, Industry in India, *C. F. T. R. I., Mysore.*

J.

52. Jan, N. L. et al (1951). Casheu apple products, J. Sci. Industry. Res. 10A (5).

53. Jacobs, M. B. (1951). The Chemistry and Technology of Food additives, Food Technology, Chicago.

54. Johar, D. S. (1951) Enzyme Clarification of fruit juice, Bull. C. F. T. R. I.

55 Johar, D. S. and Anand, J. C. Nature and Preservation of spoilage in Amla Preserve India Food Packer,

56 Jain, N. L. et al. (1958). Preparation of Guava choose, Chem. Agric. India, 1954 , 9–88.

57. Jain, N. L. et al. (1958) "Preparation of fruit toffees, Food Science, 1958. 7, 325.

K.

58. Khanna, S. K. and Singh, G. B., Coloured Foods or Poisons, Science Reporter, January, 1975. C. S. I. R., New Delhi.

59. King, K. C. and Clif-corn, L. E. (1951). "The Nutritive value of Canned foods, Basic approach, (ii) Review of Research Paper Oct., 1951.

60. Kefford, J. F. (1965). Citrus Fruits and apples for processing C. S. I. R O. Food Preservation Quarterly Vol. 25 No. 3, Sept. 1965.

61. Kefford, J. F. (1979). Impact of climate variability on food processing C. S. I. R. O., Vol. 39, No. 1, March, 1979.

62. Kelly and Hita, (1958). Microbiology Appleton Century Croftss, Newyork.

L.

63. Lall Girdhari et al (1960) "Preservation of Fruits and Vegetables" I. C. A. R , New Delhi.

64. Lalla, B. S. and Johar, D. S. (1953). 'Penicillium notatum as a source of fungal pectinace Current Science."

65. Larrick, G. P. and Lehman, A J. (1957). Chemical food additives. Food Technology, Chicago.

66. Last, J. H. (1970). Transport and handling of Frozen Foods, C.S.I.R.O., Food Preservation Quarterly, Vol. 30, No. 4, December, 1970.

67. Lewis, N. F. and Mathur, P. B. (1963). "Extension of storage lives of potatoes and onion by Cobalt–60–X-Rays, International Journal of Applied Radiation and Isotopes, 1963." Vol. 14, pp. 447–453. Pergamon Ponzt Ltd., Ireland.

M.

68. Mahanta, K. C., Fundamentals of Agricultural Microbiology. Oxford and IBH, Publishing Co.

69. Meller, J. D. (1966). A small Freeze Drayer for Industry. C. S. I. R. O. Food Preservation Quarterly Vol. 26, No. 2–4, December, 1966. Sydney.

70. Miller, M. W. (1965). The drying of fruits in Australia and California, C. S. I. R. O., Food Preservation Quarterly, Sydney.

71. Morris, T.N. (1951), "Principles of Fruit Preservation.' Chamman & Hall Ltd., 37 Essex Street W. C. L. London.

72. Merse, R. E. (1951). Mode of action of sodium Benzoate. Food Research.

73. Mark, E. N. Teaching Sanitation in connection with food technology, Food Technol.

74. McG Mc-Bean D. (1969). Improved dried Pears C. S. I. R. O. Food Preservation Quarterly, Sydney.

75. McG Mc-Bean D. (1971). Recent Advances in Dehydration Process C. S. I. R. O, Food Preservation Quarterly Sydney.

77. Nair, S. Sadasivan and M. L. Jain (1977). Low cost mechanical device for pricking of Indian gooseberry (Amla) for making Indian preserve (Murabba). Proceedings of the First Indian Convention of Food Scientists and Technologists, AFST/CFTRI 23rd-24th June, 1978.
78 Nair, S. Sadasivan and Sharma Harish Chandra (1982), "Economy Oriented Further Developments on Indian Gooseberry Periclear" Presented at the First International Food Conference (Abstracts of Technical Papers) Section 6, S. No. 14 under Food Engineering. Full Paper Seen. held in Bangalore May 23–26, 1982.
79. Nair, S. Sadasivan et al (1984), "Futuristic projections, Consumption pattern of Fresh Fruits, vegetables and their products in India by the year 2,000 AD" presented at the 4th Indian Convention of Food Scientists and Technologists 7–9 June, 1984, Mysore, Souvenir Page No. 59.

P.

80. Pruthi, J. S. (1977), Quality Control, Packing and Storage Requirements of Dehydrated Foods. Symposium on dehydrated Foods Industry in India. AFST (N.Z.) December 10–11–1977.
81. Pruthi, J. S. et al. (1978). Studies on varietal suitability of tomatoes for ketchup manufacture. Proceedings of the First Indian Convention of F. S. T, organised by AFST/CFTRI on 23rd & 24th June, 1978, pp. 18.
82. Pruthi, J. S. (1959). Keeping quality of citrus juice during storage. Indian Food Packer.
83. Pruthi, J. S (1977). Colour deterioration in processed grape fruit juice during Storage. Bull CFTRI.
84. Prescott and Proctor (1937) Food Technology McGraw & Hill Book Co. N. Y.
85. Paul, Thomas and Sreenivasan, A. Effect of Gamma Irradiation on Post Harvest Physiology of fruits. Bhabha Atomic Res. Centre, Bombay.
86. Pitt, J. I. and Richardson (1973). Spoilage by preservative resistant yeasts. CSIRO, Food Res. Quarterly., Vol. 33, No. 4, Dec., 1973.
87. Personal Communication with Shri N. R. Seshadri, Processed Food Export Promotion Council, New Delhi dated 7th May, 1985.

R.

88. Ramchandra, B. S and Ramanathan, P. K. (1977) Production Technology of Dehydrated Foods. Symposium on Dehydrated Focds Industry in India, December 11 & 11, 1977. AFST (NZ),India, New Delhi.

89. Richardson K. C. (1977). The assessment of Food additives in Australia CSIRO Fd. Res. Qrtly. Vol. 37, No. 2, June, 1977.

90. Ramamurthy, M. S. et al. (1977). Osmotic dehydration of fruits : Possible alternatives to freeze drying. Symposium on Dehydrated Foods. Industry in India. Dec. 10 & 11, 1977. AFST (India) N.Z., New Delhi.

91. Ranganna, S. Tandon, G. L. (1956). What it needs to develop a good label. Fruit and Vegetable Industry in India. CFTRI, Mysore. p. 405.

92. Radhakrishnaiah, G. et al. (1977) Recent development in Dehydration techniques with special reference to fruits and vegetables. Symposium on Dehydrated Food Indu try in India. AFST (India) N.Z., New Delhi.

93. Ryan, W. J. (1946). Water Treatment of Purification. McGraw & Hill book C., N. Y.

94. Richardson, K. C. (1973). Some aspects of the Microbiology of packed foods. CSIRO Res. Quarterly, Vol. 33, No. 3, Sept. 1973.

95. Ratnam, C. and Srinivasan, M. (1959). Behaviour of ascorbic acid in Indian Gooseberry to heat treatment. J.Sc. Indust. Res. 1959.

96. Richardson, K. C. (1975). Microbiological quality control in Food. Vol. 35, No. 1, March, 1975.

97. Ranganna, S. and Lakshminarayan Setty. Food Preservation. CFTRI, Mysore.

S.

98. Seter, E. and Settlemeger, J. T. (1949). Spray drying of food. Advances in Food Res.

99. Singhagajen, S & McG. Mc. Bean (168). Toamat drying of Banana. CSIRO, Food Preservation Quarterly, Dec., 1968.

100. Siddappa, G. S. and Sastry, M. V. (1959). Indian Preserve (Murabas). Food Science. 1959, 8, 212.

101. Siddappa, G S. and Beert, O. P. (1960). Crude Fibre Content as an Index of Adulteration in Tomato Ketchup. J.Sc. Industry Res. 19 c, 129.

102. Siddappa, G. S and Nanjundaswami, A. M. (1959). Chutneys. Food Science, 1959. 8. 218.

103. Singh Sham, et al (1953). Fruit Culture in India. ICAR, New Delhi.

104. Sharma, H.C. (1937) Chemistry of Food and Nutrition., N. Y.

105. Siddappa, G. S. and Bhatia, B S. (1956). `Vitamin–C in Caned Oranges. CFTRI, Mysore.

T.

106 Tandon, G. L. (1950). Preserves and their manufacture. Indian Food Packer, 1950, 4 (5). 9.

107. Tandon, G. L. (1950). Classification of Fruit juice. Indian Food Packer.

108 Tandon, G.L. (1951). Fruit juice and squashes. Indian Food Packer.

109. Tandon, G. L. (1952). Fruit Jellies and Marmalades. Indian Food Packer, 1952. 6 (3) : 7.

110. Tandon, G. L. (1952). Manufacture of Jams. Indian Food Packer. 1952. 6 (8 & 9), 9.

111. Tandon, G. L. et al. (1960). Composition of Indian Mango. Chutney. Indian Food Packer, 1960. 14 (5), 6.

112. Tandon, G. L. (1951). Tin and Glass Containers. Indian Food Packer, 1951. 5, 7.

113. Teotia S. S. et al (1973) "Studies on the Simplification of preserve making—1 carrot" Progressive Horticulture Vol. 5, No. 3, 1973. pp 51–61.

114. Tressler, (1939). Technology of Fruit and Vegetable juice Preservation. AVI Publication, N. Y.

115. Thomas, P. L. (1974) Fly control in Food Industry. CSIRO Fd. Res. Quarterly, Vol. 34, No. 4, Dec., 1974.

116. Tressler, D. K. (1956). New Developments in the dehydration of fruit and vegetables. Food Technology 10, 119/124.

117. Tiemann, H. D (1917). The Theory of Drying and its application to the new dry Kiln. U. S. Deptt. Agri. Bull. 509, 1917.

U.

118. USDA (1971). Home freezing of fruits and vegetables. Home and Garden Bulletin, No. 10. U. S Deptt. of Agri.

119. USDA (1968) The Commercial Storage of Fruits, Vegetables and Florish and Nursery Products. Agriculture Hand Book, No. 66, US Deptt. of Agriculture

120. USDA Home Caning. Agricultural Hand Book, No US Deptt. of Agriculture.

V.

121. Vishnu Swarup (1977). Some problems in production of onian and peas for dehydration Symposium on Dehydrate foods Industry in India. AFST (NZ), December 10 & 11, 1977, New Delhi.

□□□

शुद्धि-पत्र

क्र.सं.	पृष्ठ	पंक्ति संख्या	अशुद्ध	शुद्ध
1	2	3	4	5
1.	17	2	मिक्षण	मिश्रण
2.	20	20	निर्जलीकृत बनाना	निर्जर्मीकृत बनाना
3.	22	30	inhibitions	inhibitory
4.	32	7	Sporan Geospore	Sporangeospore
5.	35	23	(Clostridium Botulinum)	(Clostridium botalinum)
6.	46	नीचे से 5	फट हुए	कटे हुए
7.	47	19	115–5°से. (240° एफ)	115·5° से. (240° एफ)
8.	49	नीचे से 4	Frezee-Dehydration	Freeze-Dehydration
9.	50	सारणी 6	an influenced	as influenced
10.	51	11	यह निश्चित मात्रा	एक निश्चित मात्रा
11.	60	5	64–3	64 3
12.	62	नीचे से 2	परिरक्षकण	परिरक्षक
13.	66	7	यह अकिण्वनीय बभ्रुकरण (Enzymic Browning)	यह अकिण्वनीय बभ्रुकरण (Non enzymic Browning
14.	72	नीचे से 12	6–7 atm o pheric pressure	6–7 atmospheric pressure
15.	76	3	जिसका प्रयोग फल-रस में सफल रहा है मेक्रोसयटलिन तथा पाण्डुलीन	जिसका प्रयोग फल-रस मे सफल रहा है, व हैं मेक्रोसवटोलिन तथा पाण्डुलीन
16	77	सारणी सख्या 13	वर्णों को खाद्य पदार्थों को	वर्णों को खाद्य-पदार्थों मे
17.	79	सारणी संख्या 16	(मा) चिह्नित थी वर्ण इस बात का	(मा) चिह्न इस बात का
18.	86	11	फल पेनों मे	फल पेयो मे
19.	87	7	यह पदर्थ के विटामिन की वृद्धि करती है।	यह पदार्थ विटामिन की वृद्धि करती है।
20.	111	चित्र संख्या 14	ब्लाक	ब्लाक गराह, बेकार है दिया है।
21.	154	नीचे से पहला	सांद्रता-मंधारण-रोधक	सांद्रता-समायन-रोधक
22.	156	18, 20, 22	सामुद्रीकरण, सामुद्रिन	समुद्रिकरण, समुद्रिन

1	2	3	4	5
23.	158	16	क्योंकि	विशेषकर
24	164	नीचे से 5	केलिच अध-पका	के लिये अध-पक
25	166	चित्र संख्या 19	अनचाहे स्थान पर दिया है	पृष्ठ संख्या 392 में दिया गया है । चित्र संख्या-50
26.	178	नीचे से 11	प्रतिवेनन	प्रतिवेतन
27.	181	10	Polyner	Polymer
28	188	19	मासालस तेल	मसाले एवं तेल
29.	194	नीचे से 4	रोकने के 3 प्रतिशत लवण	रोकने के लिए 3 प्रतिशत लवण
30.	199	नीचे से 3	स्याज	प्याज
31.	200	नीचे से 11	निर्जलीकरण करना चाहिए	विवर्णीकरण करना चाहिए
32.	216	नीचे से 13	एक-एक द्वारा	एक-एक द्वार
33.	219	नीचे से 15	जसाटिन	जलाटिन
34.	225	नीचे से 5	फ्रूट बेस्ट	फ्रूट बेसेंड
35	228	5	सहायता वे रस	सहायता से रस
36	229	नीचे से 5	कष्ट से	काष्ट से
37	232	चित्र	चित्र संख्या 24	सीधा नहीं
38.	238	नीचे से 5	इसके लिए लिदेशों पर	इसके लिए विदेशों पर
39.	240	नीचे से 10	छा कर	छान कर
40.	243	10	पेसक्टन किण्वकों के प्रयोग से	पैक्टिक किण्वकों के प्रयोग से
41.	252	15	फिल्टरप्रूफ	फिल्फर प्रूफ
42.	275	नीचे से 4	अति घुलनशील	आदि घुलनशील
43.	294	चित्र	चित्र संख्या 31(a),31(b)	सीधा नहीं
44.	305	13	दबाव 165 इंच है	16 5 इंच है,
45.	306	9	ताकि निर्वातीकरण के	ताकि निर्वातीकरणी के
46.	309	6	Hermetical Seeling	Hermetical Sealing
47	318	चित्र	चित्र संख्या 45	चित्र संख्या–36
48.	319	नीचे से 8	इसके पुर्जे कुछ तो भाप से चलते हैं।	रिटॉर्ट कुछ तो भाप से चलते हैं।
49.	323	3	बोतलीकृत चलता है	जहाँ बोतलीकरण चलता है
50.	327	4	परहन	परिवहन
51.	361	3	फलरस को 185° सेन्टीग्रेड से 210° फारनहीट तक	फलरस को 185° से 210° फारनहीट तक
52.	369	1	खोलने के लिए	तोलने के लिए
53.	369	4	इस फलनी द्वारा	इस छलनी द्वारा
54.	370	ब्लाक	चित्र	चित्र (ब्लाक बेकार)

1	2	3	4	5
55.	385	नीचे से 13	ड्राइयर्णनुमा	ड्रायरनुमा
56.	386	नीचे से 6	क्षारीय अभिकिया	क्षारीय अभिक्रिया
57.	391	नीचे से 16	होम-मेड ड्राइंग	फोममेट ड्राइंग
58.	397	नीचे से 2	कमरे मे फुलाते हैं	कमर मे फैलाते हैं
59.	401	16	चनानाशक (पत्ता)	चना शाक
60.	401	नीचे से 1	शाको को 0·8 प्रतिशत मैग्नीशिम ग्रोक्साइड	शाकों को 0·1 प्रतिशत मैग्नीशिम ऑक्साइड
61.	402	पहला दूसरा	आदि मे से किसी एक से मिश्रित जल मे या विवर्णीकरण के बाद जिस जल मे उन्हें ठण्डा किया जाता है उसमे मिलाकर उपचार करने से भी उसका	आदि से मिश्रित जल में उपचार करने से भी उसका
62.	402	ब्लाक (चित्र संख्या 51)	मटर श्रेणीकरण यन्त्र जो बड़े कारखाने के योग्य है	नि-हिमीकृत फल (स्ट्रावरीज)
63.	421	नीचे से 6	अवक्षेपित (Precipitated) कर प्राप्त पैक्टिन	अवक्षेपित (Precipitated पैक्टिन
64.	423	ब्लाक	चित्र संख्या–53 के ऊपर टनल ड्रायर	टनल ड्रायर गलती से लिखा गया है।
65.	430	8	30·5 जलांशयुक्त पेक्टिन होना आवश्यक	30·5 जल होना आवश्यक
66.	438	13	1 प्रतिशत जिसका पी.एच. *मान* 3·1 से 3·3 की शृंखला	1 प्रतिशत अम्ल जिसका पी.एच. *मान* 3 1 से 3·3 की शृंखला
67.	449	9	2 के 2·5 प्रतिशत	2 से 2·5 प्रतिशत
68.	454	ब्लाक	चित्र संख्या–61	बेकार
69	456	2	कोर्क	फोर्क
70	505	2	या 26 से 28 प्रतिशत	या 16 से 24 प्रतिशत
71.	516	15	Filter Acid	Filter Aid
72.	516	नीचे से 13	कारण कि फल महँगा होता है	क्योंकि फल महँगा होता है
73.	529	C. 31	Convectiyn	Convection
74.	529	D. 1	Dte	Date
75.	530	F. 10	Firssion product	Fixssion product
76.	531	H. 1	हैसेनूजा	हैसेनुला
77.	533	P. 26	स्यूडो यीस्ट	स्यूडो यीस्ट
78.	535	S. 35	Subract	Substract